कबीरपंथी शब्दावली

सत्य

कबीरपंथी-शब्दावली



सत्यनाम ।

कबीरपंथी-शब्दावली

कबीराश्रमाचार्य्य परमार्थी वैद्य भारत पथिक

स्वामी श्री. युगलानन्द
विहारी निर्मित ।

★

मुद्रक एवं प्रकाशक:
खेमराज श्रीकृष्णदास™,
अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग, मुंबई - ४०० ००४.

संस्करण : सितंबर २०१६, संवत् २०७३

मूल्य ७००रुपये मात्र।

मुद्रक एवं प्रकाशक:
खेमराज श्रीकृष्णदास,™
अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
मुंबई - ४०० ००४.

Printers & Publishers :
Khemraj Shrikrishnadass,
Prop: Shri Venkateshwar Press,
Khemraj Shrikrishnadass Marg, 7th Khetwadi,
Mumbai - 400 004.

Web Site : http://www.Khe-shri.com
Email : khemraj@vsnl.com

Printed by Sanjay Bajaj For M/s. Khemraj Shrikrishnadass Proprietors Shri Venkateshwar Press, Mumbai - 400 004, at their Shri Venkateshwar Press, 66 Hadapsar Industrial Estate, Pune 411 013.

सत्यनाम

सतसुकृत आदि अदली अजर अचिंत पुरुष मुनीन्द्र
करुणामय कवीर सुरतियोगसंतायन धनी, धर्मदासकी
दया वचन वंश प्रतापी आचार्य्य–

१ चूरामणिनाम, २ सुदर्शननाम, ३ कुलपतिनाम, ४ परमोघ
गुरु वालापीरनाम, ५ कमलनाम, ६ अमोलनाम,
७ सुरतिसनेहीनाम, ८ हक्कनाम, ९ पाकनाम,
१० प्रगट नाम, ११ धीरजनाम, १२ उग्र-
नाम, १३ दयानाम साहबकी दया.

वर्तमान वचन वंश प्रतापी आचार्य्य कवीर साहबके
अधिकारी आचार्य शिरोमणि १०८
श्रीमहंत काशीदासजी साहबकी
तथा सर्व संत महंतोंकी दयासे
कवीरपंथी शब्दावली
प्रारंभः।

धर्मरक्षक सिद्धान्त।

शब्द कहै सो कीजिये, गुरुवा बडे लबार।
अपने अपने स्वार्थको, ठौर ठौर बटमार॥

अथ भूमिका प्रारम्भः ।

★

सत्यलोकके सत्यपुरुष, ज्ञानी सोइ अनूप ।
जोगजीत प्रभु आप हैं, आदिरूप अनुरूप ।। १ ।।
सत्यनाम सतसुकृत्य विभु, अदली आदि अकाम ।
अजर अचिन्त पुरुष अहै, नाम मुनीन्द्र अनाम ।। २ ।।
करुणामय कवीर गुरू, धर्मदासके पीर ।
देह धरि आय जगतमें, साइ विदेह शरीर ।। ३ ।।
पच्छा पच्छमें जग फँसी, भूले सत्यकी राह ।
दोउ दीनके जीवको, आय लगावन थाह ।। ४ ।।
सत्य पंथ परगटकरी, स्वसम्वेदकी रीति ।
भूल पाखण्ड छुडाइके, सत्यलखायीनीति ।। ५ ।।
नीति लखायी सत्यकी, वचन वंश परकाश ।
वचन मानु सो वंश है, प्रगट कहा अविनाश ।। ६ ।
नाशमान सब जगत है, जहँ लग दृष्टि-विकास ।
वचन वंशकी शरणते, होय सत्यको भास ।। ७ ।।
सत्य भासे जब जीवको, सत्य नाम आधार ।
काल भासे तब छूटई, आवे सत्य विचार ।। ८ ।।
सत विचार परतापते, परखे काल दयाल ।
बिना परख न मुक्ति है, बन्धन सदा विशाल ।। ९ ।।
जड चैतन दो दृश्य हैं, जामे अटके जीव ।
वचन वंश निज गुरु अहै, देइ बताई पीव ।। १० ।।
मूल लखे जब जगतको, परखे मान गुमान ।
भूल मिटे तब जीवको, पावे सत्य अमान ।। ११ ।।
सत्य ज्ञानकी चाह जिहिं, धर्मदास तिहिं नाम ।
बोधे सो गुरु देव है, सत्य कवीर अकाम ।। १२ ।।
बोध पाई गुरु पद गहे, धर्मदास निज रूप ।
इन्द्री ब्यालिस बोधिके, वंश ब्यालिस भूप ।। १३ ।।
वचन गहे सो वंश है, विना वचन नहिं वंश ।
वंश अंश सब वचन है, विना वचन विध्वंश ।। १४ ।।
प्रकट कही गुरु कवीरने, वचन लखायो आप ।
विना वचन कस होवई, सत्य असत्यको माप ।। १५ ।।

सत्य असत्यके मापको, शब्दकीन आधार ।
मुकतामनि सोई अहै, जाने जाननहार ।। १६ ।।
विना शब्द अन्धे भये, सूझ घाट ना बाट ।
काल जाल अरुझाइके, पडे जगतके ठाट ।। १७ ।।
ठाट वाटमें जगतके, भूले सत्य सुराह ।
गुरू छाडि गुरुवा गहै, कौन कहै अवगाह ।। १८ ।।
गुरुवा रूप जगत धरी, काल फँसावे जीव ।
पक्षबादमें डालिके, सत्य छुडावे पीव ।। १९ ।।
सत्य छाडि असत गहि, सत औगुनकी खान ।
शब्द विना परखे नहीं, पावे दुक्ख निदान ।। २० ।।
दुक्ख मिटावन कारने, सत कवीर कहि दीन ।
शब्द रूप मैं जगतमें, डोलों सदा परवीन ।। २१ ।।
शब्द शब्द बहु अंतरा, सार शब्द मथि लेहु ।
सार शब्द गरहन करी, त्याग असारको देहु ।। २२ ।।
शब्द विनु सुरति आंधरी, कहू कहाँ को जाय ।
द्वार न पावे शब्द को, फिरि फिरि भटका खाय ।। २३ ।।
शब्द हमारा आदिका, सुनि मति जाहु सरखि ।
जो चाहो निज तत्वको, शब्दे लेहु परखि ।। २४ ।।
शब्दे मारा गिरपडा, शब्दे छाडा राज ।
जिन जिन शब्द विवेकिया, तिनका सँवँरा काज ।। २५ ।।
शब्द कहे सो कीजिये, गुरुवा बडे लबार ।
अपने अपने स्वार्थको, ठौर ठौर बटमार ।। २६ ।।

ताते धर्मनि कर परचारा । विना शब्द नहीं जीव उवारा ।
शब्द गहे सो पंथ चलावे । विना शब्द नहिं सत्य लखावे ।।
शब्द गहे सो भवजल पारा । विना शब्द बूडे मँझधारा ।।
ताते वंशन देहु चिताई । जो चाहें निज हित वह भाई ।।
शब्द हुकुम नहिं टारें कबहीं । आनन्द राज सुख विलसें तबहीं ।।
कहँ लगि कहों सुनो धर्मदासा । आगम भेद कियो परगासा ।।

(आगम संदेश)

इसी प्रकार सद्गुरु कवीर, आदिसे अंत तक, जीवोंको कालसे वचनेके लिये, शब्दकी पारख करनेकी शिक्षा देते हैं । संसारमें शब्द जालही ऐसा जाल है जिसमें फँसकर जीव सुखदुख आवागमन जन्म मरण आदि द्वंद्वजमें पडकर अनन्त कष्ट भोगा करते हैं । इसी लिये सद्गुरुने उन शब्दजालोंको काटनेके लिये सत्य शब्द प्रकट कर जीवोंको दुखसे छूटनेका मार्ग बतलाया है । जिस प्रकार लोहेको काटनेके लिये लोहे की ही छेनी हथोड़ा और निहायकी आवश्यकता होती है, उसी प्रकार शब्दोंसे ही शब्दकी परख कर, उसकी कोर कसर को निकाल हंसके समान सारवस्तु को ग्रहण करनेका आदेश सद्गुरुने दिया है । किन्तु काल और कर्मके प्रतापसे, सत्यकी ओर बहुत कम लोगोंका झुकाव होता है और मायिक संसारमें लोग विशेष प्रवृत्त होकर काल कर्म कोही सत्य मानकर यथार्थ सत्यकी उपेक्षा करते हैं । यद्यपि यह दशा देखकर, उत्साह भंग हो जाता है, वृत्ति इस ओर जानेसे अटकती है, तथापि सद्गुरुके आदेश "धर्मदास मैं–तोहि सुनावा । कै कै बार जिवन पर आवा ।। जीवनकाज फिरौं मैं जाई । जे चीन्हे तेहि लोक पठाई ।। तुम क्यों चिन्ता मनमें आनो । आपन काज करो मन मानों ।।" के अनुसार उसने जो कार्य्य सौंपा है सो करना प्रत्येक का कर्तव्य है । सद्गुरुने जन्मसेही मुझे कवीरपंथी वाणीके प्रकाशन और ग्रन्थोंके जीर्णोद्धारका कार्य्य सौंपा है । उसीकी आज्ञा और सहायता से आजतक मैंने निष्काम वृत्तिसे अनेक ग्रन्थोंका प्रकाशन किया कराया है, इस ग्रन्थके भी प्रकाशनमें सद्गुरुकी दयाकाही हाथ है । विशेष प्रस्तावनामें देखना चाहिये ।

कवीराश्रम खरसिया स्टेशन
जि० विलासपुर सी० पी०
हाल
कुबेरभवन राष्ट्रियशाला रोड
विले पारले, बंबई.
ता० २७–१०–३१

भवदीय
श्रीयुगलानन्द बिहारी
(आचार्य्य कवीराश्रम)

प्रस्तावना

मंगलाचरण ।

सत सुकृत सतयुग किये, सत्यनाम परचार ।
अगनित चिताय जीव जग, रहे काल झखमार ।। १ ।।
नामसुनीन्द्र सुविदित है, त्रेता युगके माहिं ।
दुआपरमें करुनामय, कलियुग कबीर कहाँहि ।। २ ।।
जासुचरण वन्दन करी, पाइ शब्द निशान ।
धर्मदास निजवंश सह, जगत गुरू परमान ।। ३ ।।
ता कबीरके चरणमें, युगल दास शिरनाय ।
बार बार वन्दन करै, सतगुरु होहु सहाय ।। ४ ।।
युगलदास के माथपर, सतगुरु दीना हाथ ।
युगल आनन्द पाइके, भये अनाथ सनाथ ।। ५ ।।
वचन वंशहिं परगटकरी, दीना सत्य लखाय ।
शब्द लखे सो पारखी, पारख माहिं समाय ।। ६ ।।
पारख पाई जगतमें, हंस रूप होय आप ।
आपन पौ सन्मुख रखै, मिटै सकल संताप ।। ७ ।।
संताप मिटै तब जीवका, हंस रूप जब होय ।।
षटकी रेखा तब मिटै, निज स्वरूप लखि जोय ।। ८ ।।
निज स्वरूपके लखतही, मिटै आस अरु भास ।
आसा बासा कल्पना, सब ही होय विनास ।। ९ ।।
माया ब्रह्म अरु जीवलों, ईश जगत परमान ।
सबही कल्पना छिनकमें, मेटे होय अमान ।। १० ।।
मान मिटै जब जीवका, प्रत्यक्ष गुरु दरसाय ।
सत्य लोक सोइ जानिये, कह्यो कबीर समझाय ।। ११ ।।

सद्‌गुरु कबीर अमर अविनाशी अजन्मा और विदेही होनेपरभी, करुणा-स्वरूप होनेके कारण, सदा करुणाकर जगतमें जीवोंको चेताने और काल जालसे छुडानेके लिये, विचार और मननका उपदेश दे सत्यसुकृतमें लगा, स्वकृत सत्यनामको प्राप्त करा, कर सुखी किया करता है और गुप्त रूपसे सर्व कालमें सबके

---

१ षटकी रेषाको जाननेके लिये, "पंचदेहकानिर्णय" इसी ग्रन्थके पृष्ठ ५६० से ५६४ तक देखो ।। और शरीरके अस्ति जायते आदि षट विकार ।।

संग रहकर, गुरू रूपसें प्रकट हो, उपदेश देता रहता है। तथापि विशेष रूपसे सम्वत १४५६ वि० के जेठ पूर्निमा को काशीमें प्रकट होकर सत्यका डंका बजा, जीवोंको चेताना आरम्भ किया और अपने उपदेश और कथनको विशेष रूपसे, निज श्रद्धालुओंके हृदयमें दृढीभूत करानेके हेतु, अन्तिम लीला करनेके लिये, सम्वत १५७५ में मगहरको गमन किया था ।

उस समय समस्त भारतवर्षमें आपकाही डंका बज रहाथा, इस हेतु आपके काशी छोडतेही वर्तमान कालके समान रेल तार और डाक आदिका प्रबन्ध न रहते हुए भी, आपके मगहर जानेका समाचार समस्त भारतवर्षमें तत्कालही फैल गया और देश देशान्तरोंसे संत महात्मा सिद्ध साधुओंके झुन्डके झुंड मगहरमें इकट्ठे होने लगे और वहां बहुत बडा भारी मेला लग गया । यद्यपि बिजलीखां नवाब, राजा बीरसिंह बघेल आदि बडे बडे राजा महाराजा तथा बडे बडे धनाढय साहुकार लोग,जो आपके श्रद्धालु सेवक थे, वे संत महंतोंकी सेवामें सब प्रकारसे तत्पर थे तथापि, मगहरमें पानीका इतना अभाव था कि, बहुत उपाय करनेपरभी पानीकी कमीसे सबको बडा कष्ट होने लगा । उस समय नवाब विजलीखाँ आदिकी प्रार्थनापर सद्‌गुरु कवीरकी दया दृष्टिसे आमी नदी प्रकट हुइ, जिससे सबका कष्ट निवारन हुआ और अबतक होता है ।

उसी समय लेखक के पुरुषा श्री दक्ष नाम साहबभी, जो गोरखपुरमें रहकर परमार्थ प्राप्तिके लिये, योगका साधन कर रहे थे, मगहर गये और सद्‌गुरु कवीरके दर्शन और उपदेशसे कृतार्थ हो आपको गुरु धारणकर लिया । तबहीसे बराबर आजतक, कवीर पंथकाही धारण, लेखकके वंशमें चला आता है । उसी सिलसिले में, गोरखपुरके घासी कटरे, देवरिया, नव तन, मलहपुरवा, हातामठिया, मरवट-टोला, आदि स्थान इस समयभी वर्तमान है । इसीसे पाठक समझ सकते हैं कि, कवीर साहबके सिद्धान्त और वाणी वचन, वंश परंम्परासे सीने पसीने चले आनेके कारण, कितना, और किस रूपमें लेखकसे सम्बद्ध है। इतना होनेपर भी, लेखकके पुरुषाओंने कोई विशेष पंथ नहीं चलाया, न विशेष अपना कोई अलग वेष बनाया। इसका कारण यही है कि, पंथ चलानेका अधिकार तो केवल धर्मदासजीको ही है । धर्मदासजीके समानही जो सद्‌गुरुके वचनमें पूर्ण श्रद्धा रखकर कमाई करे वह वचन वंश कहला सकता है किन्तु पंथके अधिकारी तो धर्मदासजी ही हैं । इसका प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि, आज भारतमें क्या संसार भरमें कवीरके नामसे जितने वचन वाणी प्रचलित हैं सबका सम्बन्ध धर्मदासजीसे जरूर है । सबसे पहले धर्मदासजीनेही सद्‌गुरुकी वाणीको संग्रहकर उसकी व्याख्या आरम्भ की और उसी

क्रममें सैकडों ग्रन्थोंकी रचना हो गयी । आपकी आत्मिक शक्ति और गुरु भक्ति तथा गुरु वचनमें दृढताका ही प्रताप है कि, आजतक भी प्रायः जो वाणी वचन बनते हैं सबमें कबीरके साथ धर्मदासजीका नाम किसी न किसी रूपमें अवश्य आता है ।

धर्मदासजीके लिखे भविष्य कथन भी, चाहे वह किसीके लिये क्यों न हो, ऐसा अटल है कि, तिल प्रमाण भी फरक नहीं पडता । और तो और आपने अपने वंशोंके विषयमें भी कबीर मुखसे जितनी भविष्य वाणी लिखी है, वह भी अक्षर अक्षर सत्य उतरा है और आगे भी सत्य उतरेगा । इसके प्रमाणके लिये ग्रन्थ "आगम संदेश" कबीराश्रम खरसिया से मंगाकर देखना चाहिये ।

एक तो मेरे पुरुषा स्वतः कबीर साहबके शिष्य हुए थे, दूसरे वह पंथ पंथाइयोंके झगडेसे अलग रहकर सदा सत्यका आश्रय करके, आत्म तत्वके विचारमें मग्न रहा करते थे । इसका परिणाम यह हुआ कि, सहस्त्रोंग्रंथोंका संग्रह हो गया जो, मेरे पिता श्री १०८ गोस्वामी बख्शी गोपाललालजीके पुस्तकालयसे मुझे प्राप्त हुआ ।

इसके अतिरिक्त सम्वत् १९४६ में जब मेरी आयु केवल १६ वर्षकी थी तबहीं मैं वंशप्रतापी बेलबतियाके महंत श्री १०८ श्रीमान गोस्वामी श्याम बिहारी दासजी साहबकीशरणमें प्राप्त हुआ, तबसे और भी सहायता मिली और छीत्तीसगढसे विशेष सम्बन्ध जुटा । फिर तो थोडेही दिनोंके पश्चात् श्री १०८ पंश्रीउग्रनाम साहबका दर्शन रेगनिया स्थानमें हुआ ।

उसके थोडे दिनोंके पश्चातही मुझे सद्गुरुके आदेशसे, सद्गुरुके समान पिताश्रीकी आज्ञा लेकर, देश भ्रमणको निकलना पडा । जिसका संक्षेप वृत्तांत "सत्य कबीर की साखी" की प्रस्तावना में दिया है, जिसको देखना हो श्री वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई" से मंगाकर देख सकता है ।

देश भ्रमणसे लौटने पर सबसे प्रथम वाणियों के प्रकाशनका कार्य्य मैंने सम्वत् १९५३ में लखनऊसे आरम्भ किया था—उस समय मूलरमैनीकबीरसंग्रह, (१०८ अंगकी साखी) आदि प्रकाशित करके जो निवेदन निकाला था सो यह है ।

निवेदन जो सबसे पहले ग्रन्थ प्रकाशनके पश्चात् निकाला ।

।। सत्गुरु कबीरसाहबकी दया ।।

वारों तन मन धन सबै, पद परखावन हार ।
युग अनन्त जो पचिमरे, बिनगुरु नहि निस्तार ।।

महाशय !

जबसे कलियुग ने अपना राज्य पाया, तब से भारत वर्ष से सत्य धर्म और विचार विद्याका लोप होने लगा और अनेक प्रकारके हिंसा और दम्भ युक्त स्वार्थ साधक मत फैलने लगे, जिससे सत्यपुरुष, सच्चिदानन्द सद्‌गुरुकी सेवाको छोड़, बहुतसे हिंसक देवताओंकी कल्पना कर, उनके बहानेसे नित्य प्रति करोडों जीवोंकी हिंसा होने लगी, जिससे लोगोंकी बुद्धि तमोगुणी हो, सत्य धर्मके समझनेमें असमर्थ हो गयी ।। बेद शास्त्रका पढना विचारना जाता रहा, सत्यमार्गका लोप होने लगा और उसकी यहां तक वृद्धी हुई कि, भारत वर्षके लाखों आदमी अपने पवित्र सनातनधर्मको छोड (अपने धर्मके प्रभावको न जाननेके कारण) परमधर्म को स्वीकार करने लगे ।।

परन्तु इस प्रवाहको रोकनेवाला, बादशाह सिकन्दर लोदीके पहिले तक, कोई खडा नहीं हुआ सिकन्दरके समयमें सद्‌गुरु सत्यकवीर साहेब प्रकट हुए और इतने प्रसिद्ध हुये कि, भारत वर्षका एक बच्चा भी आज कल उनके नामको जानता और उनके पदोंको गाय गायकर आनन्द प्राप्त करता है बडे बूढोंका तो कहनाही क्या है । उन्होंने उस समय उन नानाप्रकारके, पाखण्ड हिंसा युक्त धर्मोंमें पडे जीवोंको, सत्य विचार हीन हो दुःख भोगते देख, करुणाकर सर्वके हितका शोच किया ।

संसारी पारख बिना कैसे पावें ठाँर ।
विविध युक्ति अर्नमिल सबे भोगवहिं और के और ।।

और सत्यका उपदेश देना आरम्भ कर दिया ।

और सरल देश भाषामें वेद शास्त्रोंके सिद्धांत तथा लोक परलोकमें सुख देनेवाले अनेक ग्रन्थ तथा सहस्रशः शब्द पर भजन आदिकी रचनाकर लोगोंको सत्य मार्ग सुझाया और पाखण्डको दूर किया ।

जिसका फल यह हुआ कि, सहस्रों मनुष्योंने फिर अपने पवित्र धर्मकी तरफ लौट कर पर धर्मको छोड अपने हिन्दू धर्मको ग्रहण किया ।

जिसका सबूत यद्यपि उपस्थित है कि, सहस्रशः मुसलमान कवीर पंथी, जिनका व्यवहार वर्तमान है, चाल-चलन, आचार-विचार सब हिन्दू के समान और अहिंसक, मद्यमांस त्यागी तो ऐसे हैं कि, मद्य मांसाहारियोंके साथ भोजन तक नही करते ।

और इसी प्रभावके ऊपरसे कवीरपंथकी भी स्थापना हुई और तबसे सन्तों ने बहुतसे ग्रंथ आदि रचना किया, जिस्से हिन्दू धर्मका बहुत बड़ा उपकार हुआ ।

इन सब उपकार तथा दयाको न विचार, आज कल बहुतसे महाशयोंने, विना तहकीक किये बिना शोचे अनेक कपोल कल्पित बातें गढंत कर, उन ग्रन्थों तथा वचनोंका निरादर तथा निन्दा करना आरम्भ कर दिया है।

परन्तु ये लोग ऐसा क्यों करते हैं ? इसका कारण क्या है ? क्या वे जान कर निन्दा करते हैं ? इन प्रश्नोंके उत्तरको यदि हम विचार कर देखें तो केवल यही उत्तर देंगे कि, नहीं वे जानकर निन्दा नहीं करते, परन्तु सुनी सुनाई बातों के ऊपर आक्षेप करते हैं, जिनमें प्राय: वही बातें होती हैं। कि, जो कोई २ बुद्धि-हीन असारग्राही पक्षपाती अपने स्वभावानुसार एक दूसरेकी निन्दामें कहा करते हैं। और इसी तरह से सब धर्मों के विषय में कहा जा सकता है। और उन्होंने सुनी सुनाई बातोंके ऊपर न जाकरके सच्चे दिल से पक्ष छोड़ बिचार किया है, वे कभी निन्दा का नाम नहीं लेते जैसा नाभा जी अपने भक्तमाल में लिखते हैं।।

छप्पय।

भक्ति बिमुख धर्म सब अधर्म करि गायो।
योग यज्ञ व्रत दान भजन बिनु तुच्छ बतायो।।
हिन्दू तुरुक परमाण रमैनी शब्दे साखी।
पक्षपात नहीं करी सबनके हितकी भाखी।।
आरुढ दशा होय जगतमें मुख देखी नाहि न भनी।
कबीर कानि राखी नहीं वर्ण आश्रम षट दर्शनी।।

अब इसका विचार करना कि, क्या कारण है कि, आज कलके लोग कबीर साहेब के आशयको न समझ कर, निन्दा पर कमर बांधके खड़े होते हैं ? इसका कारण सिवाय इसके कि, उन्होंने ग्रन्थ तथा सद्‌गुरु कबीर साहेबकी वाणी का विचार नहीं किया है, दूसरा कुछ नहीं हो सकता।।

परन्तु मैं उनका भी इसमें दोष नहीं देता क्योंकि, आज कल प्रेस होजानेसे लोगोंको छापा पुस्तकें कि, जो थोड़ेही परिश्रममें प्राप्त होती हैं देखनेको स्वभाव पड गया है, किन्तु आजतक कबीर साहेबके ग्रन्थ छपे नहीं हैं जिस्से सर्व साधारण उन्हें देख, उनके आशयको समझ मिथ्या पक्षको छोड निन्दा विरक्त होवें।।

इस हेतु, ग्रन्थके मिलनेके अभावको दूर करनेके लिये, मैंने अत्यंत परिश्रम से ग्रन्थोंको इकट्ठा किया है और छपवानेको भी आरम्भ कर दिया है, जिनमेंसे कई एक पुस्तकें छपकर तैयार हो गई हैं और सब छापी जारही हैं और क्रमश: छपती रहेंगी।।

अब सर्व महशयोंसे केवल इतना कहना चाहता हूं कि, यदि आप सच्चे

धर्मके खोजी हैं, अपने सरल देश भाषामें तत्त्व ज्ञान(Philosophy)जानना चाहते है, हिन्दी भाषाके प्रेमी हैं, सर्व साधारणकी सरलदेशभाषा–(ठेठ हिन्दी) में हृदय बेधक भक्ति, ज्ञान, वैराग्य, नीति, आदिके शब्दोंको चाहते हैं तो, जैसे और पुस्तकों में बहुत कुछ खर्च करते है, वैसे इस में भी थोड़ा लगाकर इसे भी देखिये ।।

और दो पैसे के कार्ड द्वारा अपने पता ठिकाने नाम जिला प्रांत के नाम (स्पष्ट साफ, हिन्दी, उर्दू, अंगरेजी, गुजराती, किसी अक्षरोंमें) नीचे लिखे पतेसे भेज दीजिये कि, जिसके द्वारा जब जब पुस्तक छपे तब तब उसका विज्ञापन (इश्तहार, जाहिरखबर समाचार) आपके पास रवाना किया करूं।

यदि आप सत्यगुरु कबीर साहेबके मतानुयायी हैं तो विशेष कहनेकी क्या आवश्यकता ? आप स्वयमही समझ लीजियेगा, सब धर्मवाले अपने २ गीत गारहे हैं और एक पक्ष तथा सोसाइटीको लेकर रिफारमर बनते हैं परन्तु, यह तो आपका पक्षरहित निर्पक्ष भावसे सर्वके उपकारार्थ कार्य्य है। उठिये, जागिये और उन्नति कीजिये, आप सुधरिये, और दुखी जीवोंको जो पाखण्डमें फंसे दुख पारहे हैं, सत्य-पथ लखाइये, पारख प्राप्त कराइये, अपने सच्चे दयालपदकी इस परोपकार द्वारा रक्षा कीजिये, अधिक क्या कहूँ। पुस्तकोंका सूचीपत्रभी साथ लगा है, उसमें लिखे पतेसे पुस्तक मंगाइये।

इसके पश्चात सम्वत १९५७ में जब कि, मैं अहमदाबादमें साबरमतीके किनारे, भीमनाथ पर, श्रीसंतदासजी साहबकी सहायतासे, सत्यपंथका प्रचार कर रहा था, उस समय कबीरमन्शूरके हिन्दी भाषामें छपनेका समाचार पहुँचा, किसी श्रद्धालुके द्वारा एक फार्म भी देखनेको मिला। जिसे देखकर और मूल उर्दू ग्रन्थसे अनेक अंशोंमें विपरीत जानकर मुझे बडा कष्ट हुआ, तब फार्म लाने वालोंसे मैंने अपना विचार प्रकटकर मनो वेदना बाहर की। जिसका समाचार हिन्दी कबीरमन्शूरके आदि प्रकाशक श्रद्धालु कबीरपंथी मकनजी कुबेर पेंटर तथा उसके छापनेवाले श्रीवेंकटेश्वर प्रेसके मालिक परम वैष्णव महान सज्जन धर्म धुरन्धर श्रीसेठ खेमराज जी को भी मिली। इन लोगोंने मुझे अहमदाबाद से बुलानेका आयोजन किया, किन्तु, उस समय विशेष नियम पालन करते हुए, विशे, अवस्थामें रहनेके कारण, मैं शीघ्र बम्बई नहीं आसका, इसलिये कबीर मन्शूर छपनेका काम कुछ दिनतक बन्द रहा। पश्चात् मेरे नियम अनुष्ठानका समय पूरा हुआ और मैं बम्बई आकर घाटकोपर पर ठहरा, । तब श्रीयुत मकनजी कुबेर पेंटर और श्रीयुत सेठ खेमराजजी क्रमशः मुझसे मिले तथा अनुरोधकर मुझे

बम्बई ले आये और कबीरमन्शूरकी छपाई आगे चली । जो कुछ पीछे छप चुका था, वह एक ऐसे सज्जनद्वारा अनुवाद कराया गया था जिसको धर्मकी गन्धभी नहीं लगी थी । इसलिये आवश्यकता तो इस बात की थी कि, सब फिरसे शुद्ध करके दुबारा छपाया जाय, किन्तु, इसमें सेठजीको बहुत बडी हानि उठानी पडती थी, इस कारण मकनजीको समझा बुझाकर विशेष २ फार्म जिनमें बहुतही अशुद्धियाँ थीं छपवाकर शेष वैसेही रखना पडा । जो आजतक वैसेही हैं इस भेदको न जाननेवाले कतिपय महात्माओंने, मेरे ऊपर कटाक्षकर पत्रोंमें लेख भी छपवाये हैं किन्तु, मैंने उन्हें अनजान जानकर उत्तर तक नहीं दिया है ।अब मैंने फिरसे कबीरमन्शूरको हाथमें लिया है और मूलसे बराबर मिलाकर, टीका टिप्पणी और प्रमाणोंसहित तैय्यार किया है, सद्‌गुरुकी कृपा होगी तो थोडे दिनोंमें प्रकाशित भी हो जायगा ।

कबीरमन्शूरके पश्चातही "कबीरोपासनापद्धति" मकनजी कुबेर पेन्टरके अनुरोधसे लिखना पडा था । उस समय श्री १०८ पंथी उग्रनाम साहबकी सेवामें कुदरमाल जानेकी जल्दी थी, क्योंकि इन्दौर कबीरमन्दिरके भूत पूर्व आचार्य सद्‌गुरु श्रीमहंत शम्भु दासजी साहबने वहां चलनेकी सूचना दीथी और भुसावलमें मिलनेकी बात निश्चित होगयी थी । इस लिये कबीरोपासनाके छापनेमें इतनी जल्दी की गयी कि, केवल आठ दिनोंमेंही ग्रन्थकी लिखाई छपाई सब. होगयी और मैं कुदरमालको रवाना हो गया । पंश्री उग्रनाम साहबका दर्शन तो दश बारह वर्ष पेश्तर रेंगनिया मठपर हो चुका था किन्तु महंत श्री शम्भु दासजी साहबका दर्शन सबसे पहले कुदरमालमेंही हुआ । फिर तो पंश्रीकी आज्ञा और श्रीयुत महंत साहबकी सम्मतिसे, इस अनुचर द्वारा १५६० के कबीरपंथी संतसमागमका आयोजन हुआ । कबीरपंथमें यह समागम ऐसा था जो न भूतो न भविष्यति ।

कुदरमालकी महा संतसमागमसे लौटकर श्रीवेंकटेश्वर प्रेसमें कबीरपंथी ग्रन्थोंका प्रकाशन आरम्भ हुआ । जिसके परिणाम स्वरूप श्रीवेंकटेश्वर प्रेसकी सूचीमें, कबीरपंथी ग्रन्थोंका विभागही अलग हुआ । इतनेही नहीं कबीर पंथी ग्रन्थोंका प्रकाशन और उठाव देखकर बनारस, पटना, दर्भङ्गा, इलाहाबाद, कानपुर, नरसिंघपुर, लाहौर, स्यालकोट, अहमदाबाद, भावनगर, बडोदा, सूरत-आदि स्थानोंसेभी कबीरपंथी ग्रन्थोंका प्रकाशन आरम्भ होगया, जिसके परिणाम स्वरूप सैकडों कबीरपंथी ग्रन्थ आज बुकसेलरोंकी दूकानोंमें हाथोहाथ बिकते देखे जाते हैं ।

उस समय पहले पहल जब ग्रन्थ प्रकाशित होने लगे, कबीरपंथी समाजमें

बडा भारी आन्दोलन मच गया, साधारण कबीरपंथी तो ग्रन्थोंको पाकर आनन्द मग्न होने लगे और स्वार्थी जो ग्रन्थोंको सेवक सतियोंको दिखाना भी पाप समझते थे, बडे घबराये, मुझपर उनको इतना क्रोध हुआ कि, मुझे पहले तो अदालत तक घसीटा और वहाँ जब कुछ वश नहीं चला तब, पंश्री उग्रनाम साहबको समझा बुझाकर,मुझे ग्रन्थोंके छपानेसे रोकनेके हेतु, दामाखेडा बुलवा लिया, और देखा वे के लिये प्रेस भी लिया गया और प्रथम मेरे देख रेखमें रखा गया। जब मैंने ग्रन्थों के छपानेकी बात चलायी तब बडे बडे प्रपंचों द्वारा ग्रन्थ छपायी की बात तो क्या प्रेससेही सम्बन्ध छोडना पडा. यद्यपि प्रेसमें ग्रन्थ छपानेकेही लोभसे मैंने अपनी गांठके भी बहुत रुपये प्रेसमें लगादिया था तथापि महान अन्यायसे सब गबन कर लिया गया । बदलेमें दीवान हंस दास द्वारा मेरी झूठी निन्दा और बदनामी का खूब प्रचार किया गया । दीवान हंस दासकी कारवाई पूर्वके संत महंतोंमें तो चली नहीं, क्योंकि, उन्हें दामाखेडेवालोंका सब हाल मालूम था किन्तु, गुजरातके कतिपय, लोगोंने उनकी बातोंको सत्यमानकर द्वेषका बीज अपने अन्तः करणोंमें बोलिया जिसका अंश आजतकभी दृष्टिगोचर होता है। अस्तु यह भी एक कालकी बाजीही थी नहीं तो साठ वासठ हजारकी लागतका प्रेस पंश्री दयानाम साहब द्वारा, कुछ मूर्खोंके कहनेसे, नौ सौमें एक विधर्मीको क्यों दे दिया जाता ?

अस्तु काल भगवानकी कृपासे ग्रंथ और वाणी वचनके प्रकाशनमें सद विघ्न होता चला आताहै और सद्‌गुरु दयालकी दयासे मैं यथा शक्ति प्रयत्नमें लगाही हूँ । कई वर्षोंके अथक परिश्रमसे, इस वर्ष कबीरपंथी शब्दावलीका यह ग्रन्थ छपने पाया है । कबीरमन्शूरमें भी हाथ लग गया है किन्तु, काल निरंजनकी दृष्टि उसकी ओर भी पडी है, अनेक विघ्न आकर उपस्थित हैं देखें क्या परिणाम होता है ?

यद्यपि मेरे पास इस समय चालीस हजारसे भी ऐसी वाणीका संग्रह है जिसमें "कहैं कबीर" की छाप लगी है। इच्छा तो ऐसी होती है कि सबही छपकर प्रकाशित हो जाय किन्तु, सद्‌गुरुने मुझे केवल ग्रन्थ और वाणियोंके संग्रहकी योग्यता दी है जिनके पास साधन है, वह इस ओर ध्यान नहीं देते, मेरे पास साधन नहीं है तबभी बडी बडी महत्वाकांक्षा लिये बैठा हूँ । यद्यपि इच्छानुसार कार्य्य नहीं होता तथापि लगे रहनेसे कुछ न कुछ तो होताही है । जिन कबीरपन्थियोंके पास धन है उन्हें इसका संस्कारही नहीं, नहीं तो उन्हें यदि धनही जमा करना है तो उपस्थित धनकी वृद्धिका, यह ग्रन्थोंका प्रकाशन कितना अच्छा मार्ग है । कुछ ग्रन्थोंको छपाकरही लोगोंने लाखों रुपये कमाये हैं यदि कोई कबीरपंथी इसी

कामको करता तो ये रुपये उसीके घर तो जाते। किन्तु काल भगवानके जाल, संसारी मान पान राग भोगसे उन्हें फुरसत ही कब है कि, इस ओर ध्यान देने। काल निरञ्जनने कवीर साहवसे कहाही था कि,।

विनती एक करौं तुहि ताता। दिढ करि मानो हमरी बाता।। कहा तुम्हार जीव नहिं मनि हैं। हमरी ओर होय बादबखनिहैं।। दिढ बन्धन मैं रचा बनाई। जामें जीव रहै उरझाई।। जो ज्ञानी जैहो संसारा। जीव न माने बचन तुम्हारा।। पंथ एक तुम आप चलाऊ। जीवन लै सतलोक पठाऊ।। द्वादश पंथ करौ मैं साजा। नाम तुम्हारा ले करों अवाजा।। द्वादश जम संसार पठैहों। नाम तुम्हार ले पंथ चलैहों।। यहि विधि जीवनको भरमाऊँ। पुरुष नाम जीवन समझाऊँ।। द्वादश पंथ जीव जो ऐहैं। सो हमरे मुख आन समैहैं।।

मुझे तो, ऐसे नाममात्रके कवीरपंथी, जो काल और मायामें फंस कर, केवल सांसारिक स्वार्थके लिये मर रहे हैं, उनसे वे लोग अच्छे जान पडते हैं जो कवीर पंथी न कहलाने पर भी चाहे व्यापारिक लाभ की ही कामना से क्यों न हो कवीरपंथी ग्रन्थोंका प्रकाशन करके, कवीर धर्मका प्रचार कर रहे हैं। मैं तो विशेष रूपसे श्रीवेंकटेश्वर प्रेसके मालिकोंको हृदयसे धन्यवाद देता हूँ जिन्होंने दर्जनों ग्रन्थ प्रकाशित कर, तीस वर्षोंसे लाखों प्रति कवीरपन्थियों तक पहुँचाया है।

इस ग्रन्थके छापनेके लिये यद्यपि मुझे तीन वर्षतक प्रतीक्षापूर्वक बम्बई सेवन करना पडा है, तथापि ज्यों त्यों करके इतना भी छप गया है। आशा तो थी कि, कवीरमन्शूर, कवीरभानुप्रकाश, कवीरकौमुदी, तालीम कबीर कलियुग आदि सहित, संग्रहित चालीसहजार शब्दोंको छपवा देता और श्रीवेंकटेश्वर प्रेसके स्वामी खुशीसे छापते जिससे उनको व्यापारिक लाभ था किन्तुवर्तमान काल और वस्तु स्थितिको देखते हुए कुछ कहा नहीं जा सकता।

कुछ भी हो मैंने आरम्भसेही अपना जीवन इसी कार्य्यके लिये अर्पण कर दिया है तब "जब तक जीना तबतक सीना" वाली कहावतके अनुसार, प्रयत्नसे न रुकूँगा और एक जगह नहीं दूसरी नहीं तीसरी जहां होगा जमीन आस्मान एक करके ग्रन्थोंको, जहांतक हो सकेगा, छपवा करही छोडूँगा क्योंकि इस समय

सद्गुरुकी कृपासे कबीरपंथी ग्रंथ छापनेको बडे २ प्रेसवाले तय्यार हैं किन्तु मेरी इच्छा है कि, जबतक श्रीवेंकटेश्वर प्रेसमें मेरे ग्रंथ छपचुकें तबतक दूसरेको न दूं और अंत तक यही कार्य्य करते हुए संसार लीलाको समाप्त करनेका दृढ निश्चय कर लिया है। इसी उद्देश्यसे "कबीरधर्मदर्शनग्रन्थमाला" छपवानेका आयोजन । किया है। यह ग्रन्थ उसी ग्रन्थमालाका दूसरा भाग-समझना चाहिये। प्रथम भागमें नौ मणिक और इसमें शेष मणिका रखा है। जिसमें सुमेरस्थानी मूलरमैनी जानना चाहिये, जो पृष्ठ ४८७ से ५०२ तक है। आगे आगे जैसे और और ग्रन्थ छपते जाएँगे सूचना बाहर पडती जायगी ।

अब मैं उन महानुभावोंको हृदयसे धन्यवाद देता हूँ जिनसे मुझे मेरे इस काममें विशेष सहायता ग्रन्थोंद्वारा मिली है।

(१) सद्गुरु श्री. १०८ सत्यलोकवासी महन्त श्री शम्भुदासजी साहबके संशोधित और टिप्पणीवाले शब्द आदि वर्तमान महन्त श्री. लक्ष्मण-दासजी द्वारा प्राप्त हुए हैं, इतनेही नहीं आपने सद्गुरुसाहबके कुल ग्रन्थोंके छपवानेका अधिकार भी मुझे देकर सर्व साधारण तथा मेरा बहुत उपकार किया है इसलिये आपको कोटिशः धन्यवाद है ।

(२) श्री १०८ महंत श्री तुरंतदासजी साहबने हस्तलिखित ग्रन्थोंद्वारा सहायताकी है इसलिये आप भी विशेष धन्यवादके पात्र है ।

(३) श्री १०८ महंत श्री सुखलालदासजी साहब खारी वावली-दिल्ली ।

(४) श्रीयुत महंत मंगलदासजी साहब मु० हैदर कुली दिल्ली ।

(५) श्री महंत गुरुसरनदासजी गोंदौरा जि० फतेहपुर ।

(६) श्री महंत अमर दासजी साहब जोधपुर ।

(७) श्रीयुत राम रूपदासजी साहब रोसडा ।

(८) श्रीयुत परमहंस मित्तुदासजी साहब रोसडा ।

(९) श्री महंत चंचलदासजी साहब मौजी ।

(१०) श्रीमहंत सुन्दरदासजी साहब मुदारघाट ।

(११) श्रीयुत पण्डित वसंत दासजी साहब विथान गढी ।

(१२) श्रीमहन्त विशुनदासजी साहब नलाबाजार अजमेर ।
इत्यादि अनेक संत महंतोंने मेरे इस कार्य्यमें ग्रन्थ और वाणी आदि भेजकर सहायताकी है, सबको अत्यन्त नम्रता पूर्वक बन्दगी सहित धन्यवाद ।

इस संग्रहमें क्या क्या संग्रहित है उसका संक्षेपमें तो सूचीपत्रसे पता लग जायगा और विस्तार ग्रन्थ देखनेसे पता लगेगा । ग्रन्थ बहुत बढ जानेसे बडा सूची-पत्र नहीं छप सका तथापि इतना तो यहां आवश्यक कहना होगा कि, इस ग्रंथ में लगभग सात हजारसे भी अधिक वाणियोंका संग्रह है ।

इस ग्रन्थका नाम कबीरपंथीशब्दावली इसलिये रखा है कि, इसमें कबीर साहबके अतिरिक्त धर्मदासजीसे लेकर अनेक कबीरपंथी महात्माओंकी वाणी भी आयी है.

इस ग्रन्थमें कई चित्रभी दिये गये हैं ।

(१) चित्र सद्गुरु कबीरके जिन्दा वेषका है इसी रूपसे आपने धर्मदासजीको चेताया था, क्योंकि, आप मिथ्या सांसारिक जालसे जीवोंको छुडाकर निर्पक्ष सत्यमार्गका उपदेश देनेको प्रकट हुए थे । यह चित्र उस समयका है जिस समय आप मगहरकी लीला करके गुप्त हो उसी शरीरसे, बांधोगढमें प्रगट होकर, धर्मदासजी और बघेलवंशके, उस समयके वर्तमान. राजा महाराजा रामसिंहको उपदेश देकर कृतार्थ किया था । उसी समय राजारामने आपका यह चित्र उतरवाया था जो अद्यापि उस रीवाँ के तोशाखानामें उपस्थित है । यद्यपि उस चित्रमें कफनी, नाना रंगोंके छोटे छोटे कपडोंके टुकडोंकी बनी हुई है, किन्तु फोटोमें नाना रंग न आकर काला रंग आगया है इसलिये यहाँ भी काला देख पडता है ।

(२) दूसरा चित्र कबीरपंथी वचनवंशी विन्दवंशके बारहवें आचार्य्य श्री १०८ पंथी उग्रनामसाहबका है ।

(३) तीसरा चित्र श्री १०८ पंथीदयानाम साहबका है । जिनसे, ग्रन्थोंकी भविष्यत वाणीके अनुसार वचन वंशी त्रिन्द वंशकी समाप्ति होगयी है ।

(४) कोदरमालके कबीरपंथी महासभाका है, जो पंथी दयानाम साहबके सत्यलोक वास होनेके पश्चात, सम्वत १९८४ वि० के चैत मासमें हुई थी, उन्हींमेंके कुछ उपस्थित संतमहंतोंकी मण्डलीका फोटो लिया गया था ।

(५) श्री १०८ कबीरसाहबके अधिकारी वचन वंशके नादवंशीय प्रथम आचार्य्य श्रीमहंत श्रीकाशीदासजी साहबका वह चित्र है जो भागलपुर के सेवकोंने उतरवाया था.

अब मैं इस प्रस्तावनाको यहांही समाप्त करते हुए सर्व संतमहंत तथा सत्य मार्गियोंसे प्रार्थना करता हूं कि, इस ग्रन्थकी यह पहली आवृत्ति है और भिन्न स्थानोंसे शब्दादिकोंका संग्रह किया गया है, इससे कई शब्द दुबारा आगये हैं। कई शब्द तो आरंभ एक प्रकारसे होनेपरभी मध्यमें फेरफार होनेसे दुबारा दिये गये हैं; तथा कितनी अशुद्धियाँ भी रहगयी हैं सो सब क्षमा करके आप इसे ग्रहण करेंगे और जिन जिन सुधारोंकी आवश्यकता हो उसकी सूचना इस परमार्थी अनुचरको देंगे तो, धन्यवाद पूर्वक दूसरी आवृत्तिमें आपके नाम सहित सुधारा कर दिया जायगा हाँ—गतवर्ष इसकी, भिन्न २ ग्रन्थोंसे, कापी लिखनेमें—मुंगेर जिलेके मौजे बिहट टोले मकशशपुर निवासी कबीरपंथी सेवक भूमिहार ब्राह्मण बाबू रामखेलावनसिंहने कई महीनोंतक मेरा साथ दिया था, इसलिये वह भी मुझ सहित सर्व पाठकोंके धन्यवाद और दयाभावके पात्र हैं ।

कवीर आश्रम पो० खरसिया
जि० विलासपुर सी. पी.
हाल
श्रीवेंकटेश्वर धर्मादा बिल्डिंग
"खेतवाडी, बम्बई नं० ४"

सर्व संतों और जिज्ञासुओंका
परमार्थी अनुचर
कवीराआचार्य्य आत्मनिष्ठ
श्री. युगलानन्द विहारी.

सत्यनाम

ज़िन्दा वेषमें सत्यकबीर

सतयुग सत्सुकृत सतनामा । त्रेता मुनींद्र ज्ञान कर धामा ।।



द्वापर करुणामय कहाया । कलियुग नाम कबीर धराया ।।

इसी वेषमें सद्गुरुने धर्मदासजीको चेताया था ।

कबीरपंथी शब्दावलीकी साधारण अनुक्रमणिका ।

×इस हेडिंगमें पृष्ठ २८१ पर "चौका विधान के पद" के बदले "चौकी विधानकी पद" छप गया है सो पाठक सुधार लेंगे ।

इति श्रीकबीरपंथी शब्दावलीकी संक्षिप्त अनुक्रमणिका समाप्त शुभम् ।

सत्यनाम ।

ध्यान देकर पढो ।

कबीर पंथियो !

उठो ! जागो ! और चेतो यह समय तुम्हारे पंथके लिये बडा कठिन आया हुआ है । इस समय तुम्हारे पंथकी दशा डावांडोल हो रही है । तुम्हारे वचन वंश गद्दीके विन्द वंशकी समाप्ति होगयी है. नाद वंशकी गद्दी स्थापित होने पर भी, धर्म ग्रन्थोंको भली प्रकार नहीं जाननेके कारण, सेवक सती, साधु संत, महंत और गुसाईं सब कल्पनाकी हवाई जहाज़में उडते फिरते हैं । किसीको भी स्थिरता नहीं मिलती है । सेवकोंमें जो माननीय हैं वह अपनीही चलाना चाहते हैं, भेष उनकी दृष्टिमें निर्माल्य जैसे दीख पडती है; भेषों में कुसम्प होनेके कारणसे उनका बल दबसा गया है । अपने सत्य सिद्धान्तको दृढतासे पकडकर चलानेके बदले, नाना मति और भिन्न २ विचारके कारण, मनमतके जालमें फँस गये हैं जिसके मन में जो आता है उसी को वह सिद्धान्त समझकर, सत्यगुरुमत का अनादर कर रहा है । यह सब क्यों हो रहा है ? केवल सद्गुरु कबीरकी वाणियों और कवीरपंथके ग्रन्थोंपर ध्यान नहीं देनेसे । अब अपना समय व्यर्थ पक्षपातमें पडकर नष्ट मत करो–क्योंकि, सद्गुरु कवीरका वचन है ।

"पछापछीके कारने, सब जग गया भुलान ।
निर्पच्छ होइके हरिभजे, सोई संत सुजान ।।"

इसलिये मिथ्या पक्षपातको छोडकर सत्य गुरु कबीरके शब्दोंके आश्रय अपना कल्याण ढूँढो–क्योंकि.

"गुरु सीढीते ऊतरे, शब्द विहूना होय ।
ताको काल घसीटिहै, राखि सकै नहिं कोय ।।"

इसी, लिये आगम संदेशमें, सद्गुरु कबीरने कहा है–

"शब्दहिं गहै सो पंथ चलावे ।
विना शब्द नहिं मारग पावे ।।"

देखो इस समय कबीरपंथी मात्र कबीर की वाणी वचन और शब्दोंको छोड़कर अपना पंथ खो बैठे हैं–क्योंकि, –जब आगम वाणीमें कहा है –

"तेरहें पीढी ज्ञान रजधानी, चूरामरन औतारा हो ।
उनके अंग छाया नहिं होई, देह विदेह अपारा हो ।।
उनके आगे जोग मत चलिहें, राजनीति उठजाई हो ।।
पांचस्वादकी इच्छा नाहीं, सो मति सब उन आई हो"

देखो इस वाणीमें स्पष्ट लिखा है–तेरहें पीढीके समाप्त होनेपर–ज्ञानका दौरा आयेगा और चूरामनका औतार होगा–उस चूरामनके अंगमें छाया नहीं होगी क्योंकि, उसकी देह विदेह होगी ।

आगम संदेशमें "चूरामन" का भाव यों दर्शाया है–"परगटे वचन चूरामन अंसू । शब्दरूप सब जगत प्रसंसू ।। शब्दे पुरुष शब्दे गुरुराई । बिना शब्द नहिं जिव मुकताई ।। जाते जीव मुक्त हो भाई । मुकतामन सोइ नाम कहाई ।।"

इस समय शब्दकी ओर ध्यान न देने वाले और अपने अपने मनपरही चलने वाले, प्रायः सेवक सती संत महंतों की मानता होरही है कि, चूरामन कोई देह धारी पुरुष प्रकट होकर पंथ चलायेगा । इसी कल्पना और संशयमें डोला खाते हुए अधिकांश लोग कबीर पंथसे वेपंथ जाकर, कालके फन्देमें पडकर, अपना किया कराया सब नष्ट कर रहे हैं । उन्हें इतनी समझ नहीं है कि, वचन चूरामन कोई देहधारी पुरुष नहीं है। वह तो कवीर, सद्‌गुरु कवीरका ज्ञान विचार और वाणी-है । ऊपरके वचनमें स्पष्ट कहा है–"शब्दरूप सब जगत प्रसंसू" प्रत्यक्ष देखो–कबीरकी वाणीका संसार भरमें कितना आदर है और तो और संसारभर को काफिर कहने वाले मुसलमान भी कबीरके साखी शब्द और वाणी वचन को मुर्शिद बरहक्क (सद्‌गरु) की वाणी कहकर मानते और आद्रर देते हैं । आर्य्य समाजियों को ही ले लो, उन्हें, स्वामीदयानन्दकी उटपटांग अर्थहीन लिखी बातों को भुलाकर, कवीर की वाणी और सिद्धान्तको झखमारके आदर देना पडता है वर्तमान के आर्य्य समाजियोंके ग्रन्थोंमें तुम्हें प्रायः कबीरकी वाणीके प्रमाण मिलेंगे–

कितने ऐसे कबीरपंथी हैं जो फिरसे पिछले राज्यकी स्थापना करना चाहते हैं । उनको इतनी स्पष्ट बात भी नहीं समझ पडती है कि, जब स्वतः कबीर मुख वचन है कि, तेरहीं पीढीके पश्चात् उसीके अमलमें, राजनीति उठजायगी और ज्ञान राजधानी चलेगी, तब भी वे राज्य स्थापना करनेके लिये–वर्तमान राज्य शासनका आश्रय लेकर अपना मन माना करना चाहते हैं । इसका परिणाम यही है कि, कबीर वचनके अनुसार स्थापना तो ज्ञानकी ही होगी और उस ज्ञानको प्रगट करनेवाले कबीरके वे शब्द जो मनको चुरा करके सत्यपंथमें लगावेंगे

उसी चूरामनका प्रकाश अब विशेष होगा। किन्तु काल निरञ्जनके वहकावटमें पडे मिथ्या मान गुमानको लिये, वे भूले हुए जीव, भ्रमके आश्रय. सन्तमहंत भेष और कबीर धर्मदासके विरुद्ध, अपना राज्य स्थापित करनेमें लगे हैं और राज-कचहरियोंमें मारे मारे फिरते हैं। उनको न तो अपनी समझ है, न किसी जानकार का वचन सुनना चाहते हैं कि, यह सब कालकी बाजी है, इससे सत्य धर्मका कोई सरोकार नहीं है। कबीर प्रत्यक्ष रूपसे कहते हैं –

"राजद्वार जावे नहिं कबहीं। कैसो कष्ट आवे पुनि जबहीं ।। महिमा वंश तबै मिटजाई। राजद्वारे द्रव्य लुटाई ।। होवे वैर नगरमेंभारी। कलिजुग राज करै सुख छारी ।। कलिजुग होय मलेच्छ सो राजा। जो बिगरे तो होय अकाजा ।।"

इसका प्रत्यक्ष प्रमाण, कबीर कौंसिल और उसके संचालकोंका परस्पर का झगडा है।

कहांतक कहाजाय मनमतका पार नहीं है। इस मनमतके वश पडकर लोभ वश कितने साधु संत महंत नामधारी जीव भी, उसी घसीटनमें पडकर अपना अमूल्य जीवन व्यर्थ नष्ट कर रहे हैं।

इसी लिये हे प्यारे सत्य धर्मके खोजी कबीरपंथियो! मिथ्या अभिमान और मनमतको त्यागकर, कबीर धर्मदासके ग्रन्थ और वाणीका विचार करके, वर्तमानके उलझनोंको सुलझाओ और अपना अमूल्य जीवन सफल करो–

श्री वेंकटेश्वर और लक्ष्मीवेंकटेश्वर प्रेसने आपहीके पंथकी रक्षाके लिये कबीरपंथी ग्रन्थोंका प्रकाशन किया है।

सत्य

मंगला चरण ।

यस्योपदेशमाराध्य नरो मोक्षमवाप्नुयात् ।
तं कबीरमहं वन्दे मनोवाक्कायकर्मभिः ।

सत्सुकृत आदि अदली अजर अचिन्त पुरुष
मुनीन्द्र करुणामय कबीर सुरतयोग
संतायन धनी धर्मदासकी दया
सर्व संत महंतोंकी दया—

अथ शब्दावलीकी उत्थानिका—

सद्गुरु कवीरने संसारी जीवोंके चितानेके लिये अनंत शब्दोंका प्रकाश करके, भवसागरसे पार करनेका प्रशस्त मार्ग तय्यार कर दिया है. तथापि बलिहारी है,कालभगवानकी कि, अपना राज्य बना रखनेके लिये सत्यमें भी असत्यकी मिलौनी कर कुछ का कुछ कर दिखाता है ।

जहां सद्गुरुका वचन है कि—

पच्छा पच्छी कारने, सब जग गया भुलान ।
निर्पछ होइके हरिभजे, सोई सन्त सुजान ।।

वहां सद्गुरुका नाम रखकर कालने सत्यशब्दमें इतनी मिलौनी करदी है कि, संसारी जीवोंको निर्पक्ष वाणीकी पहचान ही नहीं होती, उलटा वे कालकी वाणीको ही सिद्धान्त वाणी समझकर उन्हींमें भूलकर साम्प्रदायिक गर्तमें गिर पडे हैं और जवतक सद्गुरुके बताये संकेतके अनुसार सत्यशब्दको जाननेका प्रयत्न नहीं किया जायगा तबतक वे भवसागरमें गोता खातेही रहेंगे ।

सद्गुरु कालवाणीसे सत्यवाणीको अलग करनेकी कैसी सरल युक्ति बता रहे हैं ।

अनवनि वानी चार प्रकार । काल सन्धि[२] झाईं[३] औ सार[४] ।।

अब इनकी पहचान बतलाते हैं—

कालशब्द ।

अक्षर पूजा सेवा जाप । और महातम जेते थाप ।।
यही कहावत अक्षर काल । जाय गडी उर होयके भाल ।।

सन्धिशब्द ।

ओहं सोहं आतमाराम । माया मंत्रादिक सब काम ।।
यहि सब अक्षर संधिक कहे । जेहिमा निशिवासर जिव रहे ।।

झाईंशब्द ।

निर्गुण अलख अकह निरवान । मन बुधि इन्द्रीय जाय न जान ।।
विधिनिशेध जहँ बनत न दोय । कह कबीरपद झाईं सोय ।।

– इनमेंसे –

भरमिक संधि झाईं औ काल । सारशब्द काटै भ्रमजाल ।।

– इस लिये –

परे जीव तेहि जमकी धार । जौलौं पावे शब्द न सार ।।

– इसहेतु –

जीव दुसह दुख देखि दयाल । तब प्रेरी प्रभु परख रिसाल ।।

शब्दकुंजी.

विशेष जाननेके लिये इसी ग्रन्थमें छपे हुए शब्द कुंजी (अथवामूलरमैनी जिसको बहुधा लोग सताइस रमैनी भी कहते हैं–) को गुरुमुख द्वारा विचारना चाहिये । क्योंकि.

वेद उदधि विनु गुरु लखे, लागत लौन समान ।
बादर गुरुमुख द्वार ह्वै, अमृत सूं अधिकान ।।

आजकल छापा होने और ग्रन्थोंके सहजमें मिलनेके कारण और स्कूलोंकी बाहुल्यतासे, लोग अक्षर पढना सीखकर ग्रन्थोंको आपही आप पढ़कर, बिना समझे बूझे ही स्वतः गुरु बन बैठें हैं । इसीलिये जहां देखिये वहां नास्तिकताका प्रचार होकर प्रायः सब पंथ और सम्प्रदायवाले, भवसागरमें उबडुब कर रहे हैं ।

यथार्थ भावको समझे विनाही, मिथ्या पक्ष धारण कर लोग मनमती बन गये हैं; उनको इतनी समझ ही नहीं है कि, पक्षपातके सिवाय भवसागर दूसरा है ही नहीं ।

पक्षहि भवकर जानिये, दूसर भव है नाहि ।
जन्म मरण सुख दुख सुभाव, तिन्हें अभावहि काहि ।।

कवीरके नाम, उनके नामसे वाणीका प्रचार भारतके कोने कोने पाया जाता है । यह नहीं कि, बहुत दिन बीतने अथवा वर्तमान कालके रेल डाक और प्रेसके सुभीता के कारण इसका प्रचार हो गया हो, वरन कबीरकी वाणीका प्रभाव ही ऐसा है कबीरका उपदेशही ऐसा सार्वजनिक और निर्पक्ष था कि, उनके वर्तमान रहते ही,

साखी और शब्दोंका इतना प्रचार हो गया था कि, मारवाड और गुजरात आदि देशोंमें,उसी समय पद और वाणियों तथा साखियोंका संग्रह कर लोगोंने ग्रन्थरूप में बना लिया था.

थोडे दिन हुए हैं ऐसाही एक ग्रन्थ, रायबहादुर बाबू श्याम सुन्दर दासजीने नागरी प्रचारिणी सभाकी ओरसे छपाकर प्रकाशित कराया है–जिसका नाम कबीर ग्रन्थावली रखा है–बाबू साहबकी सम्मतिसे वह ग्रन्थ कबीर साहबके मगहरमें गुप्त होनेकी लीलाके पश्चात् केवल पचास वर्षकाही है. यद्यपि बाबू साहबकी दृष्टिमें उस समय कबीर साहबका अवसान हो गया था तथापि कबीर-पंथी और अन्यलेखकोंके प्रमाण से–कबीर साहबने मगहरमें अन्तिम लीला करके भी शरीर नहीं छोडा था. यों तो जब आप अपनेको शब्दरूपही कहते हैं तब आपके शरीर छोडनेकी बात ही क्या है.

क्योंकि,

पांच तत्त्वसे है नहीं, स्वासा नाहि शरीर ।
अन्न अहार करता नहीं, ताका नाम कबीर ।।

तथापि अपने हिन्दू मुसलमान शिष्योंकी परीक्षा करनेके लिये, आपने मगहर में लीला दिखाई थी और शिष्योंको जो उपदेश देना चाहा सो दे चुकनेपर तत्कालही आप उसी शरीरसे मथुरामें प्रकट हुए और वहांसे अमर कंटक आदि स्थानोंमें अपना अमर चिह्न छोडते हुए चांधोगढ पहुँचे और धर्मदासजीको उपदेश दे जगन्नाथकी ओर चले गये ।

इससे यह सिद्ध होता है कि, बाबू साहबने जो ग्रन्थ छपवाया है वह जिस सम्वतका लिखा हुआ है उस समयमें कबीर साहब उसी काशीवाले शरीरसेही वर्तमान थे और कबीर साहबके इतने निकट समय या वर्तमानमें ही ग्रन्थ लिखे जानेके कारण, बाबू साहब कबीर साहबकी वाणीकी भाषाको भी वैसी ही समझते हैं जैसी उस ग्रन्थमें लिखी है और इसी दृष्टिसे आपने उसे वैसीही छपवाया है ।

किन्तु यह किसीसे छिपी नहीं है कि, कबीर साहब अपना केंद्र काशी ही बनाकर वहांही प्रकट हुए और वहांकीही प्रचलित हिन्दी भाषामें आपने वाणीका भी प्रकाश किया था. तथापि मारवाड देशमें जाकर वाणी मारवाडी मिश्रित क्यों हो गयी ? इसका कारण यह हो सकता है :–

(१) कबीर साहबका उपदेश इतना सर्व प्रिय था कि, आपके वर्तमान रहतेही देश देशान्तरोंके लोग, उपदेश और वाणी सुनकर लिख लेते और बडे प्रेम से रखते थे और अपने स्वाभाविक उच्चारणके अनुसार उसे गाते और बोलते

भी थे जिससे उसी उसी देशके उच्चारणके अनुसार लिखनेमें वाणीका रूपभी वैसाही बनता गया । जैसे आजकल भी गुजरात या महाराष्ट्र प्रान्तमें हिन्दी भाषा या हिन्दी भाषाकी कविताकी दशा है. और गुजराती या मराठीभाषावाले अपने स्वाभाविक उच्चारणके कारण विशेष नामोंको भी अपने उच्चारणके अनुसारही लिखते और बोलते हैं. दृष्टान्तके लिये संयुक्त प्रान्तके "मेरठको लिजिये आजकल प्रसिद्ध मेरठ केसके कारण वर्तमानपत्रोंमें मेरठका नाम बारम्बार आता है इतना प्रसिद्ध नामहोनेपर भी गुजराती पत्रवाले मेरठको "मीरत" ही लिखते हैं ।

इसी प्रकारसे यदि कबीरसाहबकी वाणी उस समय मारवाड आदि देशोंमें जाकर मारवाडी आदि उच्चारणोंवाली होगयी हो तो कौन आश्चर्यकी बात है ।

मैंने मारवाड, पञ्जाब, सिन्ध, गुजरात, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, उडीसा बंगाल, आसाम, भूटान, नेपाल और बिहार आदि प्रान्तोंके भ्रमण कालमें देखा है, हिन्दीमें और शुद्ध हिन्दीभाषामें छपे हुए ग्रन्थोंको जिस जिस प्रान्तके लोग पढ़ते हैं, उस प्रान्तके टोन (स्वर) का प्रभाव उन ग्रन्थ और वाणियों पर ऐसा पडता है कि, सुननेवालोंको वह उसी देशकी भाषामें लिखा जान पडता है ।

गत वर्ष जब मैं वंशधरकी गद्दीके सर्वमेष समस्त आचार्य्य श्री १०८ पं श्रीकाशी दास साहबजीके साथ तिरहुतके कतिपय स्थानोंमें भ्रमणको गया था, तब वहांके भावुक सेवक सती और साधुओंके, प्रेम मग्न भजन कीरतन को देखकर अत्यन्त प्रसन्नता और प्रभावका अनुभव करता था. किन्तु शुद्ध हिन्दी भाषामें छपे हुए शब्दोंको भी जब वे गाने लगते थे तब, उनका उच्चारण ठीक तिरहुतिया भाषाके समान सुन पडता था, इतनेही नहीं शब्दोंके क्रियापद आदिको भी वे अपने प्रांतिक रूपमें बदलकर बोलते थे कारण मात्र यही है कि, वे थोडे पढे लिखे लोग अपने स्वभाव और आदत तथा प्रेमके वश होकर शुद्धि अशुद्धिका विचार किये बिनाही प्रेममें मग्न होकर भजनमें लीन होते और लिखते भी हैं ।

इसी प्रकार मारवाड और पंजाबवाले पानीको पाणी आदि उच्चारणके अभ्यासके कारण शब्दोंको अपने प्रांतिक टोनमें बदल लेते हैं । गुजराती और काठियावाड वालों का कहनाही क्या, जिस समय वे तम्बूरा और मजीरेकी गगन भेदी झंकारमें मस्त होते हैं—"कहत कबीरा सुनोभाई साधो" के गानमें ऐसे

लीन होजाते हैं कि, जो कुछ वह गाते हैं चाहे वह किसी भाषाका हो सब उन्हें काठियावाडी या गुजरातीही जान पडती है ।

इसी प्रकार दक्षिणी मराठी भाषाभाषी जिस समय "कबीरांचे दोहरे" और पदे" की हांक लगाते हैं, उस समय कबीर उन्हें खास मराठी भाषाभाषीही जान पडते हैं, और कबीरके शब्दोंका उच्चारण ठीक मराठी जैसा जान पडता है, इसी प्रकार महाराष्ट्रके पढे लिखे लोग भी जब कभी अपने ग्रन्थ या भाषण आदिमें कबीरकी साखी आदि कोट करते हैं वहाँ उसमें इतना मराठीपन आजाता है कि, फिर उसे हिन्दीभाषाभाषी कबीरकी वाणी कहनेसे हिचकते हैं इत्यादि । (२) यदि उपर्युक्त विवेचनके विरुद्ध कोई ऐसा समझता हो कि, कबीर जिस जिस देशमें गये, उस उस देशकी भाषामें ही, उन्होंने वहांके लोगोंको उपदेश दिया, तो यह बात भी उनका महत्त्वही प्रकट करती है–

किन्तु मेरा निश्चय है कि, कबीरसाहबने जो कुछ कहा है वह सब उससमय की प्रचलित हिन्दीमेंही कहा है

इसी विचारको लेकर मैंने भारतके अनेक प्रान्तोंमें घूमकर सहस्रों कबीर-पंथी ग्रन्थोंका संग्रह किया है–जिसमें एकही नामके ग्रन्थकी भिन्न भिन्न प्रान्तोंमें लिखी अनेक प्रतियाँ मिली हैं. अब जब मैं उनका मिलान करने बैठता हूँ तब वाणी एक होनेपरभी लिखावट और उच्चारणमें बहुत अन्तर जान पडता है और जिस समय उस उस प्रान्तके लोग अपने अपने प्रान्तके लिखे ग्रन्थोंको पढ़ते हैं, उस समय सुननेसे औरही भाव अन्तःकरणमें उदय होता है ।

इस प्रकारके कई दृष्टांन्त इस ग्रन्थके बीच बीचमें या अन्तमें लिखकर पाठकोंका मनोरंजन करूंगा,

लिखते लिखते मैं कहींका कहीं चला गया–इसलिये अब प्रकृत विषय पर आता हूँ ।

शब्दावली ।

यों तो–कबीरकी शब्दावली–कबीर साहबना भजन, कबीरांचे पदे और दोहरे आदि नामसे सैकडों पुस्तकें लाखोंकी संख्यामें हरसाल छपती और छोटे २ जंगली देहातों बाजारों और बडे २ शहरोंतक बिकती रहती हैं और हिन्दू मुसल-मान ईसाई इत्यादि सभी धर्मके लोगोंकी जबानपर कबीरकी साखी मसले वर्त-मानही रहते हैं, किन्तु "शब्दावली" के नामसे बडी पुस्तक एकही छपी है–जिसकी दो आवृत्ति आजतक होचुकी है ।

उस शब्दावलीमें केवल कबीर साहबही नहीं वरन बहुतसे लोगोंकी वाणीका

संग्रह है—जिसे कवरदहके एक वैरागीने संग्रह किया था और अपने हाथसे लिख लिखकर, वहां जानेवाले संत महंतोंके हाथसे बेचा करता था. यद्यपि वह उसकी कीमत लोगोंसे २०, २५, रुपया लिया करता था। तथापि पैसेवाले महंत संत लोग जो वहां जाते थे, वह अपने स्वार्थके मारे लेलिया करते थे. क्योंकि, महंतोंके सबसे अधिक स्वार्थ, चौका आरतीकी रमैनी आदि उसमें दियी हुई होती थी. इसी बातको दृष्टिमें रखकर ग्रन्थ लेनेवालोंको केवल स्वार्थ लोलुप समझकर वह लिखने वालाभी पहले चौका आरतीकेही पद और रमैनी लिखता था । उसकी लेखन शैली और ग्रंथका प्रबन्ध देखकर तो जान पड़ता है कि, उसे भी इस ग्रन्थसे सिवाय द्रव्य प्राप्तिके दूसरा कोई सरोकारही नहीं था. इसी लिये उसने उस ग्रन्थका क्रम-बांधनेका प्रयत्न नहीं किया, वरन उसके उलटा जो कुछ उसे जहांसे मिला चाहे वह किसीका शब्द या पद भजन रहा हो "कहें कबीर" करके उसे लिख दिया ।

जब तक वंशघरकी गद्दी कवँरदह रही तबतक तो उसका व्यापार चलता रहा किन्तु, वंशघरकी गद्दीके लिये विरोध चला और गद्दीका कारबार कवँर-दहसे कोदरमाल चला आया और वंशघरके सन्त महंतोंने उग्रनाम साहबको अपना आचार्य मान लिया, और लोगोंका कवरदह जाना आना छूट गया, तब उस शब्दावली लिखनेवालेका रोजगार मरा और सन्तमहंत्रोंको शब्दावलीका सहज में, २०, २५, खर्च करके भी मिलना बन्द हुआ. तब नये बननेवाले महन्तोंको शब्दा-वलीकी आवश्यकता पडनेपर न मिलनेसे अडचन पडने लगी, महंतोंके उस अडचन को उग्रनाम साहबने अनुभव किया और शब्दावलीको छपानेकी आवश्यकता समझी, किन्तु उस समय उनकी आर्थिक दशा ऐसी नहीं थी कि, वे इसमें अपनी ओरसे कुछ कर सकते, इसलिये उन्हींके इशारेसे उसी शब्दावलीकी एक कापी बम्बई पहुंची और विना शुद्ध या क्रमबद्धकिये ज्यों की त्यों छापदी गयी इतना भी विचार नहीं किया गया कि, किस विषयके शब्द पहले आने चाहिये और किस विषयके पीछे, इसमें कबीर साहबके शब्द कितने हैं और इतरोंके कितने, इन बातोंके विचार किये विनाही आंख मूंदकर ग्रन्थ छपकर तय्यार होगया, उसपर तुर्रा यह हुआ कि, ग्रन्थके मुख्यपत्र (टायटल) पर "महात्मा श्री कबीरजी साहब कृत " "अपूर्व ग्रन्थ " छापा गया.

इस बातको देखकर समझदार कबीर पंथियोंको बडा कष्ट हुआ क्योंकि, उक्त ग्रन्थमें कितने शब्द ऐसे हैं जो कवीर साहब तो क्या कवीरपन्थियों के भी नहीं हैं. कितने शब्द ऐसे हैं कि, दूसरोंके होनेपर और उसमें कर्ताका नाम वर्तमान

रहनेपरभी अन्तमें कहँ कबीरका छाप लगाकर कबीर साहबको बदनाम किया गया है इत्यादि.

इसके पश्चात् ही श्रीउग्रनाम साहबकी इच्छा और इन्दौरके प्रसिद्ध विद्वान् महोपदेशक सद्गुरु श्रीमहंत शम्भुदासजीके उत्साह और मेरे प्रयत्नसे सम्वत् १९६० वि. का कवीरपंथी महासंत समागम कोदरमालमें हुआ, जिसमें श्रीमहंत शम्भुदासजीकी सम्मतिसे अथाह परिश्रम करके मैंने भारत वर्षका दौरा कर सर्व देशोंके संत महंतोंको एकत्रित किया और वंशगद्दीके झगडेके कारण जो पार्टी बंध गयी थी उसे तुडवाकर, वंशघरके सर्व संतमहंतोंको एकही सूत्रमें बाँधनेके लिये सबमें उग्रनाम साहबकेही पंजेका प्रचार करवाया । इस कार्य्यके करनेमें यद्यपि मुझे अनन्त कष्ट और दुःख उठाना पडा, यहांतक कि, अदालतोंमें भी घसीटा गया तथापि सद्गुरु श्रीमहंत शम्भुदासजीके उत्साहसे, सब अडचनोंको दूर करके कार्य्य पूरा करकेही विश्राम लिया उस उक्त महा सभामें तीन लाखसे भी अधिक कबीर पंथी इकट्ठे हुए थे ।

महासभाके पश्चात् जब पं श्री० उग्रनाम साहबकी गद्दी दामा खेडामें स्थापित हुई, तब उन्हें स्वतंत्रता मिलनेमें निजधर्म और नामकी उन्नति करनेकी भी अभिलाषा उत्पन्न हुई । उन्हीं अभिलाषाओंमें "ग्रन्थ छापनेके" लिये प्रेस खोलनेकी भी एक अभिलाषा थी.

दामाखेडेमें प्रेस खुला और, अन्यकामोंके साथ शब्दावलीको छापनेकी भी चर्चा आरम्भ हुई, उस समय मैंने अपना मन्तव्य प्रकट करके चाहा कि, शब्दावली इस रूपमें छापाजाय कि, जिसमें दूसरोंको आक्षेप करनेका अवसर न मिले. किन्तु उग्रनाम दब्बू स्वभाव और उनके परिवारवालोंका द्वेष के कारण मेरी प्रत्येक बातोंके विरोध करने और प्रेसके मैनेजर दीवान हंसदासके रहनेके कारण, मेरा वश नहीं चला. ग्रन्थके सम्पादक बने बाबा साहब और छपानेवाले मैनेजर और प्रिंटर दीवान हंसदास ।

यहांपर यह जता देना अनुचित न होगा कि, दामाखेडेमें प्रेस खोलनेमें प्रबल और मुख्य कारण मेराही प्रयत्न था किंतु उग्रनाम साहबके परिवारवालोंको द्वेष और प्रायः खुशामदी लोगोंके कारण मुझे उससे अलगही रहना पडा और प्रेसके प्रुफोंको देख देनेके सिवाय मेरा उससे कोई संबन्ध नहीं रहा यहां तक कि, मैंने उसमें जो कुछ छपवाया सो भी मूल्य देकर.

इस प्रकार ग्रन्थ छपना आरम्भ हुआ और लगभग आधे तक छप गया कि, दामाखेडेमें शादी विवाह आमद रफ्त उलट फेरकी तूफान चली और प्रेस बन्द हो गया. शादी विवाह हो गया बिछडे मिले खूब धमाचौकडी मची और उसीमें मुझे वहां से दामाखेडा हमेशेके लिये छोडना पडा. पश्चात् उग्रनाम साहबका देहान्त हुआ. राज्य पलटा और फ्रान्स जर्मनीकी लडाई शुरू हुई, देशमें सब प्रकारकी वस्तुएं महंगी हो गयीं, खास तौरसे प्रेसकी वस्तुओंकी कीमत चौगुणी हो गयी. उसी समय असली साढे उन्नीस हजारकी लागतका प्रेस जिसकी कीमत लडाईके समय, साठ सत्तर हजारसे कम नहीं थी, तीन चार हजार तक दाम मिलते हुए भी, केवल नौ सौमें एक मुसलमानको, दया नाम साहब और उनके निकट वर्तियों द्वारा दे दिया गया. शब्दावली लगभग आधा छपकर अधूरी रह गयी। कई वर्षोंके पश्चात् एक टेकधारी सज्जनने बम्बईवाली प्रतिके ऊपरसे छपे हुए फार्मोंको साथ लेकर उसी विके हुए प्रेसमें छपाकर बारह रुपया मूल्यसे प्रसिद्ध किया और मजा यह कि, आपने भी कवीर साहबके ऊपर कृपा करके उन्हें ग्रन्थकर्ता करके प्रसिद्ध किया "यजमान जावे नर्कमें या स्वर्गमें पुरोहितको तो हलुए मांडेसे गर्ज" के अनुसार—कवीरके नाम पर धब्बा आता हो या कुछ हमें तो नाम और रुपया चाहिये।

इन्हीं बातोंको देखकर कतिपय स्वधर्मी और इतर सज्जनोंके अनुरोधसे मुझे ग्रन्थ प्रकाशनकी ओर लौटना और जन्म भरके परिश्रम स्वरूप हजारों कवीरपंथी ग्रन्थोंमेंसे जहां तक छप सके उनके छपवानेके प्रयत्नके लिये फिर बम्बई आना पड़ा है।

प्रथमवार बम्बई छोडते समय, हस्त लिखित और छपे ग्रन्थोंकी कई पेटियाँ बम्बईमेंही छोड गया था किन्तु, १०।१२ वर्षतक उनकी खोज खबर न लेनेके कारण वे सब दीमकके गालमें चले गये। उन पेटियोंमें हाथके लिखे कितने ग्रन्थ थे—केवल शब्दावलीकेही भिन्न भिन्न स्थानों और प्रान्तोंकी लिखी हुई १५–२० प्रतियाँ थीं. ऐसी दशामें संतोष करके कलेजा मसोसके रहना पडा है।

इतना होनेपर भी शब्दावलीकी २० । २५ प्रति मेरे पास इस समय भी उपस्थित है. जिनमेंसे ५ । ७ प्रतियां तो इन्दौर उज्जैन मारवाड कानपुर आदि स्थानोंसे २ ।३ महीनेके अन्दरही संग्रह किया है. जिन २ लोगोंने अपनी अपनी

प्रतियां दी हैं, उन लोगोंने छपी हुई १ । २ प्रतिके साथ अपनी हस्त लिखित प्रतिभी वापस पाने के इरादेसेही दिये हैं ।

इसके अतिरिक्त धर्ममें व्यापारके प्रवेशके कारण एकही कवीरके नाम लेनेवालोंमें निजनिज शाखाओंकी श्रेष्ठता दिखानेके लिये लोभ और तृष्णा द्वारा इतनी स्वार्थ परता और विचारशून्यता आ गयी है कि, जिस प्रकार बंश-घरवालोंने प्रत्येक ग्रन्थोंमें मिलौनी कर, अपनी श्रेष्ठता मानता वढानेके लिये, सबको कालदूत कहना आरंभ कर दिया था, उसी प्रकार अपने को सर्व श्रेष्ठ बतलानेवाली एक शाखाके कुछ अदूरदर्शी व्यक्तियोंने प्रत्येक वाणी–जिनमें धर्मदास साहबका नाम आया है–उसमेंसे धर्मदास शब्दको निकालकर, उसके बदले कुछ और ही रखना आरंभकर दिया है । पुरानी वाणियों मेंसे धर्मदास-जीका नाम उनने निकाला तो निकाला, किन्तु थोडे दिनोंकी बनी गुरुमहिमामेंसेभी अंतिम साखी जिसमें धर्मदासजीका नाम आता है, निकालकर छपवाया है । यह गुरु महिमा श्रीमहंत शंभुदासजी कृत है ।

इस प्रकार धर्मदासके नामको लुप्त करनेका प्रयत्न सूर्य्यपर धूल डालने के समान है, इससे उनकी शाखाका गौरव नहीं बढ़ता है किन्तु उलटा उनकी निन्दा होती है. भला वह कहां तक धर्मदासका नाम मिटानेका प्रयत्न करेंगे. कवीरके साथही साथ धर्मदासका नाम तो इतना अटल अविनाशी हो गया है कि, इन थोडेसे धर्मदास द्वेषियोंके सिवाय सब पंथवाले धर्मदासकी श्रेष्ठताको स्वीकार करते हैं और कवीर धर्मदासके सम्वादवाले ग्रंथोंको पढकर अपना कल्याण चाहते हैं.

ऐसेही सब बातोंको विचारकर इस "कवीरपंथी शब्दावली" के सम्पादनमें मुझे प्रवृत्त होना पडा है.

इस संग्रहमें कई विभाग करके अलग अलग विषयोंको संक्षेपमें दर्शानेका प्रयत्न किया है । जो वाणी प्रत्यक्षमें दूसरोंकी है । उन्हें अगले विभागोंमें रखा है और जिन वाणियोंमें कवीरकेही नाम आते हैं वे सब इकट्ठा संग्रह किया है. इस वाणी जंगलमेंसे खास कवीरकी वाणीको परखनेकी कुंजीभी इसीमें छाप दी है। तथापि पाठकोंको अधिकार है अपने ज्ञान पहुंच और रुचिके अनुसार लाभ उठा सकते हैं ।

इस ग्रन्थमें कई चित्रभी दिये गये हैं। अपने स्वभाव और सदाके नियमके अनुसार जैसी वाणी मिली है वैसेही इस संग्रहमें रख दिया है जैसे पहले मैंने बहुतसे ग्रन्थ छपवाये हैं। वैसेहीशब्दावलीमें भी मैंने अपनी बुद्धी लगाकर विशेष सुधार नहीं किया है। मेरा कामतो जीर्णोद्धार करके डूबतेको बचाना है, अब आगे विद्वान् लोग उसे जैसा चाहें सुधार करें।

कई वर्षोंसे इस कामसे उदासीन रहने पर फिर मुझे इस काममें प्रवृत्त होनेकी आवश्यकता नहीं थी तथापि यह देखकर कि कवीर पंथियोंमें जो विद्वान् कहलाते हैं, उनकी दृष्टिमें तो ये ग्रन्थ और वाणी महान् तुच्छही हैं और साधारण पंथायी लोगोंको धर्म व्यापारके कारण परस्पर तू तू मैं मैं सेही फुरसत नहीं. धनी मानी महन्तोंको अपनी नामवरी और ऐशोआरामसे अवकाश नहीं. सभा सुसाइटी और कौंसिलोंको अपने निरर्थक ध्येयकी दौड धूपसेही फुरसत नहीं.

फिर इन नष्ट प्राय: होनेवाले ग्रन्थ और वाणियोंको जब कोई धनी धोरी नहीं तो मुझसे ही जहां तक बन सके इसमें कुछ कर डालूं. इसी विचार को लेकर मैं इसमें फिर प्रवृत्त हुआ हूं :

यद्यपि उपर्युक्त पंक्तियोंकी बातें कुछ लोगोंको कडवी लगेगी तथापि सत्यके अनुरोधसे कहना पडा है. आशा है इस उत्थानिकाके पाठकमुझे क्षमा करते हुए इसके यथार्थ आशयकी ओर ध्यान देंगे।

अन्तमें मुझे कवीरपन्थके माननेवाले और कवीर साहबके वचनपर श्रद्धा रखनेवाले—सबही लोगोंसे—वे चाहे पंथकी किसी शाखाके अनुयायी हों—कहना है कि, ये सीधी साधी भाषामें लिखे, हुए ग्रन्थ और वाणी उपेक्षाके योग्य नहीं हैं. कालके प्रभावसे इनमें धर्मव्यापारके कारण जो मिलौनी हुई है, श्रावणके अन्धोंके समान सदा चैन ही चैन देखनेवालोंकी, अदूरदर्शिताके कारण ग्रन्थोंमें सांप्रदायिकता घुस गयी है, यदि उन पक्षपातमय वाणियोंको इन ग्रन्थोंमेंसे निकालकर बाहर कर दिया जाय, तो ये अमूल्य रत्नोंके भण्डार बहुत ही मूल्यवान प्रमाणित होंगे.

यद्यपि "बीजक" सब कवीरपंथियोंका सर्वस्व है तथापि उसमें भी भी सांप्रदायिकताने अपना अधिकार जमा लिया है. मूलकी ओर तो किसीका ध्यान ही नहीं है, टीकाका ही बीजकका सिद्धांत समझकर, साधारणमें पक्षपातका इतना बडा आडम्बर फैला हुआ है कि, जो पंथकी जिस शाखाका माननेवाला

है, उसी शाखाके किसी पुरुषकी की हुई टीकाको सर्व श्रेष्ठ कहकर, चाहे वह किसी दूसरी टीकाकी नकलही क्यों नहो, उसीको यह पढ़ेगा. और ठीक उसी प्रकारकी दूसरी टीकाको बुरा बतलायगा इस प्रकारकी बात, श्रद्धेय पूर्णसाहबकी टीका तथा मेहीदास और प्रागदासकी टीकावालोंसे मिलनेसे साफ २ प्रगट हो जाती है। यद्यपि मेहीदासजी और प्रागदासजीकी टीका पूर्ण साहबकी टीकासेही वनायीं गयीं हैं और रद्दीके भाव विककर पंसारीकी दूकान पर पुडिया बांधी गयी है तथापि जिनके पास वे टीकाएँ हैं वे पूर्ण साहबकी भी भूल निकाल कर अपनी मानी हुई टीकाको सर्व श्रेष्ठ बतलाते हैं।

इसके अतिरिक्त पाठके उलट फेरने भी खासा साम्प्रदायिकताका तांडव नाच नचवा दिया है। साम्प्रदायिक नशामें चूर सब अपनी अपनी शाखाकेही पाठ को सर्व श्रेष्ठ बतलाकर दूसरोंकी सत्यताकी भी उपेक्षा करते हैं इसका कारण मिथ्या पक्षपात ही है। आज कवीर साहबके उपदेशोंका-आश्रय लेकर दूसरे लोग संसारमें बहुत कुछ कर रहे हैं और उनके कामोंको देखकर कुछ समझ-बूझवाले कवीरपंथियोंके मुंहमें पानी भर आता है किंतु ऐसा होनेपर भी उनको अपने घरकी पवित्र वस्तुका ध्यान नहीं है और दूसरोंके जूठनको देखकर ललचा ललचा मरते हैं।

प्यारे भाइयो ? सद्गुरुके इस वचन पर जरा गौर करो फिर आपको पता लग जायगा कि, आपके घरमें कैसे २ अमूल्य रत्न भरे पडे हैं—

सद्गुरु कहते हैं—

"सब सँग रसिये सबसँग बसिये, सबका लीजे नाम।
हांजी हांजी सबकी कीजे, रहिये अपने ठाम।।"

अर्थात्——

"वेद आदि विद्या सबै, बोध हेत हिय धार।"

अथवा——

"सब मत महरम करू, तब देखू निज सैन"

सब कुछ पढ़ो, सब कुछ देखो सब सुनो, सबके साथ प्रीतिके साथ बरतावा करो, किसीके दिलको मत दुखाओ "आत्मवत्सर्वभूतेषु" के न्यायसे, सबकी सहायता करो किंतु "रहिये अपने ठौर" को मत भूलो; यही गुरुकी

आज्ञा है, यही अपने आत्माको प्रवंचानेसे बचानेका मार्ग है; इस आदर्शको ही सामने रख कर, अपने मानव जन्मको सफल कर सकते हो, यही आदर्श तुम्हें सब प्रकारकी गुलामीकी परतंत्रतासे छुडाकर मुक्ति और स्वतंत्रता अर्थात् जीवन मुक्तिका मार्ग दिखा सकता है। सद्‌गुरु कहते हैं––

अपने अपने धर्ममें, सब सुखलह सब काल।
निज धर्म जिन अपनो गह्यो, सहजे भये निहाल ।।

भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं–

"स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः"

इस लिये प्यारो ! आपकी विद्या और सब दौड धूपकी सफलता इसीमें है कि, आप वर्तमान कालका ध्यान रखते हुए अपने धर्मके भोलेभाले सांप्रदायिक पक्षमें डूबे हुओंको–सत्य कवीरके सच्चे उपदेशके द्वारा बाहर निकालने का प्रयत्न कीजिये. क्योंकि, यह सांप्रदायिक पक्षपात ऐसा बुरा है कि, इसमें पडे हुए बडी कठिनाईसे सीधे रस्ते पर लाये जा सकते हैं.

उत्थानिका का कलेवर बहुत बडाहो गया है. इसलिये विशेष न लिखकर मैं इसे यहांही समाप्त करता हूँ और आशा करता हूँ कि, सत्य धर्मके अनुयायी महात्मागण इस शब्दावलीको अपनाकर और इसके गुण दोषका विवेचन कर अपना कर्तव्य निबाहेंगे और मुझपर अनुग्रह करेंगे।

सर्व सज्जनोंका परमार्थी–कृपाकांक्षी––

बम्बई.
मिति आषाढवदी
१४ सम्वत १९८६. वि
ता० ५।७।२९.

श्रीयुगलानन्दविहारी.
कबीराश्रमाचार्य्य–
कबीराश्रम (खरसिया.)
बिलासपुर

सत्य

सतसुकृत आदि अदली अजर अचिंत पुरुष मुनीन्द्र करुणामय कबीर सुरतियोगसंतायन धनी धर्मदासकी दया वंश एकोत्तर की दया।
कबीर साहब के अधिकारी वर्तमान आचार्य्य शिरोमणि
श्री १०८ श्रीमहंत काशी दासजी साहब की दया सर्व महंत संतनकी दया।

अथ कबीर पंथमें प्रचलित—

शब्दावली

मंगलाचरण

(संग्रह कर्ता का)

सतगुरु चरण सरोज रज; बार बार शिर नाय।
शब्दावलि संग्रह करूं; सतगुरु होहिं सहाय ॥ १ ॥

इससे लाभ क्या—

धर्म, पंथ सब जगतके, ईश ब्रह्मलो जोय।
शब्द प्रताप ते जानिये, सतगुरुके बल होय ॥ २ ॥

(सत्गुरुका स्वरूप शब्दकी महिमा)

सत्यगुरु सत्य कबीर सो, शब्द रूप जगमान।
धर्मदास सो शिष्य है, शब्द करे पहिचान ॥ ३ ॥

शब्द क्या बतलाता है ?

पापपुण्य अरु धर्म अधर्म, बन्ध मोक्ष लों जोय।
शब्द प्रकाश ते जानिये, सूझ परत सब कोय ॥ ४ ॥

चार वेद अरु किताब पुनि, शास्त्र हदीस पुरान ।
भुगोल खगोल विज्ञान सब, शब्द प्रमाण ते जान ॥ ५ ॥

विना शब्द जगमें कहूँ, अहै न होवन हार ।
सतगुरु वचन प्रमाण है, मनमें लेहु विचार ॥ ६ ॥

शब्दे मारा गिर पड़ा, शब्दे छोडा राज ।
जिन जिन शब्द विवेकिया, तिनका सँबरा काज ॥७॥

इसलिये-

काज संवारे आपनो, वचन गुरूको मान । ८ ॥
"माने वचन सो वंश है" सत्गुरु शब्द प्रमान ॥

परन्तु-

शब्द हमारा आदि का, सुनि मत जाहु सरख ।
जो चाहो निज तत्व को, शब्दे लेहु परख ॥ ९ ॥

क्योंकि-

शब्द विना सुरति आँधरी, कहो कहाँको जाय।
द्वार न पावे शब्द का, फिर फिर भटका खाय ॥ १० ॥

किन्तु-

शब्द शब्द बहुअन्तरा, सार शब्द मथि लीजे ।
कहँ कबीर जहँ सार शब्द नहीं, धिग जीवन सोजीजे ॥११॥

सार शब्द पाये बिना, जीवहिं चैन न होय ।
फन्द काल जेहि लखि पडे, सार शब्द कहि सोय ॥ १२ ॥

सतगुरु शब्द प्रमान है, कह्यो सो बारम्बार ।
धर्मनिते सतगुरु कहे, नहिं बिनु शब्द उबार ॥ १३ ॥

सतगुरु वचन

(आगम संदेश)

धर्मनि सार भेद अब खोलौं। शब्दस्वरूपी घटघट बोलौं॥
शब्दहिं गहे सो पंथ चलावै। बिना शब्द नहिं मारग पावै॥
प्रगटे वचन चूरामनि अंशू। शब्द रूप सब जगत प्रशंसू॥
शब्दे पुरुष शब्द गुरुराई। विना शब्द नहिं जिवमुकताई॥
जेहिते मुक्त जीव हो भाई। मुकतामनि सो नाम कहाई॥

इसलिये–

शब्द कहै सो कीजिये, गुरुवा बडे लबार।
अपने अपने स्वार्थको, ठौर ठौर बटमार॥

ताते धर्मनिकर परचारा। विना शब्द नहिं जीव उबारा॥
शब्द गहे सो पंथ चलावे। बिना शब्द नहिं सत्य लखावे॥
शब्द गहेसो भौ जलपारा। बिना शब्द नहिं जीव उबारा॥
याते शब्द सनेही कीजै। जीवन जन्म सुफल करिलीजै॥

ताते संग्रह कीन्ह यह, शब्दावलि धरि नाम।
गुरु संतनको वन्दगी, बारबार परनाम॥

॥ इति मङ्गलाचरण ॥

आगम संदेश जिसको चाहिये. इस पतेसे मंगा सकता है. इसमें पंथका भविष्य पूरापूरा वर्णन है. मिलनेका पत्ता–स्वामी श्रीयुगलानन्द विहारी, कबीराश्रम पो खरसिया स्टेशन जि० बिलासपुर. सी. पी.॥

सत्यसुकृत आदि अदली अजर अचिन्त पुरुष
मुनीन्द्र करुणामय कबीर सुरति योग
सन्तायन धनी धर्मदासकी दया
सर्व सन्त महन्तोंकी दया।

अथ कबीरपंथी-शब्दावली

प्रथम खण्ड-प्रथम विभाग:

संझा सुमिरन-प्रारम्भ:

साखी

गुरुको कीजे दण्डवत, कोटि कोटि परनाम।
कीट न जाने भृंगको, वह करले आप समान॥

संझा गौरी (समय सूर्यास्त)

गुरुसों लगन कठिन है भाई॥
लगत लगे बिनु काज न सरिहै, जिय परलेतर जाई॥
मृगा नाद शब्दका भेदी, शब्द सुनन को जाई॥
सो शब्द सुनि प्राण दान दे, नेक न तन को डराई॥
तजि गृहबार सती एक निकसी, सत्त करन को जाई॥
पावक देख डरै नहिं मनमों, कूदपरै सर माई॥
पपिहा स्वाति-बुन्द के कारण, पिया पिया रट लाई॥
प्यासे प्राण जांय क्यों न अबहीं, और नीर नहिं भाई॥

दोय दल आनि जुरे जब सनमुख, सूरा लेत लड़ाई ॥
टूक टूक ह्वै गिरे धरणि में, खेत छाड़ि नहिं जाई ॥
छाडे अपने तन की आशा, निरभय ह्वै गुण गाई ॥
कहें कबीर ऐसी लव लावे, सहज मिलें गुरु आई ॥ १ ॥

साखी

काल खडा शिर ऊपरे, जागु विराने मीत ।
जाका घर है गैलमें, सोव कस सोव निचिंत॥

॥ गौरी ॥ २ ॥

॥ सकल तजि नाम सुमिर रे भाई ॥
माटी के सँग माटी मिलिहै, पवन में पवन समाई ॥
जतन जतन कर सुत को पाले, काचा दूध पिलाई ॥
सो बेटा रे काल ह्वै बैठे, बाबा कहत लजाई ॥
जो तिरिया मुख बिरिया खवाती, सोवत अंग लगाई ॥
सो तिरिया मुख मोरके बैठी, टूटिगयी सगम सगाई ॥
जो देहिया पर नीर पखारे, चोवा चँदन लगाई ॥
सो देहिया पर काग उड़त हैं, देखत लोग घिनाई ॥
झूठी काया झूठी माया, झूठी लोग लुगाई ॥
कहें कबीर सुनो भाइ साधू, झूठ जगत पतियाई ॥ २ ॥

साखी

साधु हमारे आतमा, हम साधुनके जीव ।
साधुन मध्ये यों रमूँ, ज्यों पय मध्ये घीव ॥

गौरी ॥ ३ ॥

॥ दासपर नाम ध्वजा फहराई ॥
काल जंञ्जाल निकट नहिं आवै, माया देखि डराई ॥
जो कोई दाससे द्रोह विचारे, प्रभु को नाहिं सोहाई ॥
हिरणाकुश की वा गति हो गई, रावण धूर उडाई ॥

दुरयोधन परीच्छित राजा, फिर पाछे पछताई॥
सुर पण्डित औ नृपति बादशाह, ऊंची पदवी पाई॥
भक्ति बिना सब तुच्छ बराबर, बांधे यमपुर जाई॥
का भये वेद पुराण गुन गाये, सत्य दया नहिं आई॥
अहंकारमें सबहिं भुलाने, अजगर जनम सो पाई॥
हम तो कान राखी नहिं भाई, ज्यों का त्यों ठहराई॥
भावे कोई दुख सुख करि माने, भक्ति के पंथ चलाई॥
योग, यज्ञ, तीरथ, व्रत, संयम, करनी कोटि कराई॥
नाम बिना सबही है खाली, कहें कबीर समुझाई॥ ३॥

संगीतरत्नमालामें यही पद इस प्रकार है-

ध्वनी गौरी वृन्दावनी (समय सूर्यास्त)

॥ दास पर नाम ध्वजा फहराई॥ काल जाल निकट नहिं आवे, माया देखि डराई॥ जो कोई दाससो द्रोह विचारे, प्रभुको नाहिं सुहाई॥ हरनाकुशकी वह गति हो गई, रावण धूर उडाई॥ सुर ब्रह्मा नृप अरु इन्द्रकी, ऊंची पदवी पाई। भक्ति विना सब तुच्छ बराबर, बांधे यमपुर जाई॥ कहँ भयो वेद पुरान पढ़े से, घट महँ दया न आई। अहंकारसे भवमें डूबे, अजगर तन धरि भाई॥ हमनहिं कान करी काहू की, ज्यों को त्यों दरशाई। चाहे कोइ सुख कोइ दुःख मानो, सत्य कहौं गोहराई॥ योग यज्ञ तीरथ व्रत संयम, साधन कोटि कराई। विनु गुरु सफल होत नहिं कबहूँ, कहे कबीर समुझाई॥

साखी।

नाम लिया तिन सब लिया, सकल वेदका भेद।
बिना नाम नरके गये, पढि पढि चारों वेद॥

गौरी ४।

॥ बंदे नाम साहेब का ले रे॥ एक लख पूत सवा लख नाती, संपति थिर ना रहे रे॥ लंका ऐसे कोट बिनशि गये, छिन

में ऐसो बाव बहे रे ॥ न कोई तेरा तू ना किसी का, पैंडोई खलक बहे रे ॥ नदी नाव संयोग जुरो है, ऐसो मिलना है रे ॥ मातु पिता सुत बंधू तिरिया, कोई न संग चले रे ॥ ये सब हैं स्वारथ के संगी, गुरु बिन सुख न लहे रे ॥ छिनकमाहिं तन विनशि जायगा, फिर कछु करिना सके रे ॥ ताते बेग सम्हार अपनपौ, साहेब कबीर कहे रे ॥ ४ ॥

साखी।

साहब से सब होता है, बन्दे से कछु नाहिं ॥
राई सो परवत करे, परवत राई माहिं ॥

* गौरी ५।

॥ अवधू कुदरत की गति न्यारी ॥ रंक निवाज करै वह राजा, भूपति करै भिखारी ॥ एते लौंग फल नहि लागै, चंदन फूल न फूला ॥ मच्छ शिकारी रमे जँगल में, सिंह समुद्रहिं झूला ॥ रेंड-रूख भयो मलयागिर, चहुँदिशि फूटी बासा ॥ तीन लोक ब्रह्मण्ड खण्डमें, अंधा देख तमासा ॥ पंगुल मेरु सुमेरु उलंघे, त्रिभुवन मुक्ता डोले ॥ गुंगा ज्ञान विज्ञान प्रकासे, अनहद बानी बोले ॥ अकाशहिं बांधि पताल पठावै, शेष स्वर्ग पर राजे ॥ कहें कबीर राम हैं राजा, जो कछु करे सो छाजे ॥५॥

आरती प्रारम्भ।

आरती ॥ १ ॥

जय जय सत्य कबीर। सत्यनाम सत सुकृत; सत रत सत कामी। विगत क्लेश सत धामी, त्रिभुवनपति स्वामी ॥ टेक ॥ जयति जय कब्बीरम्, नाशक भव भीरम्। धरयो मनुज शरीरम्, शिशु वर सरतीरम् ॥ जय २ ॥ कमल पत्र पर शोभित, शोभाजित कैसे। नीलाचल पर राजित, मुक्तामनि जैसे

* नोट -और बहुतसी गौरी आगे दिया है सो देखना चाहिये सूचीमें देखनेसे पता मिलेगा।

॥ जय २ ॥ परम मनोहर रूपम्, प्रमुदित सुखरासी । अति अभिनव अविनाशी, काशी पुर वासी ॥ जय २ ॥ हंस उबारन कारन, प्रगटे तन धारी । पारखरूपविहारी, अबिचल अधिकारी ॥ जय २ ॥ साहब कबीर की आरति, अगनित अघहारी । धर्मदास बलिहारी, मुद मंगल कारी ॥ जय २ ॥

आरति ।। २ ।।

जय जय श्रीगुरुदेव ।

पारख रूप कृपालम्, मुदमय त्रैकालम् । मानस साधु मरालम्, नाशक भव जालम् ॥ जय २ ॥ कुन्द इन्दु वर सुन्दर, सन्तन हितकारी । शान्ताकार शरीरम्, श्वेताम्बर धारी ॥ जय २ ॥ शुभ्र मुकुट चक्रांकित, मस्तक पर सोहै । विमल तिलक युत भृकुटी, लखि मुनिमन मोहै ॥ जय २ ॥ हीरा मणि मुक्तादिक, भूषित उर देशम् । पद्मासन सिंहासन, स्थित मंगल वेषम् ॥ जय २ ॥ तरुण अरुण कञ्जांघ्रि, त्रिभुवन वश कारी । तम अज्ञान प्रहारी, नख द्युति अति भारी ॥ जय २ ॥ सत्य कबीर की आरति, जो कोइ गावै । मुक्ति पदारथ पावै, भवमें नहिं आवै ॥जय २॥

आरती ।। ३ ।।

संझा आरती नाम तुम्हारे । अनहद ध्वनि गुरुज्ञान विचारे ॥
ततकर तेल दयाकर दीपा । ब्रह्मअग्नि मन पवन समीपा ॥
पांचो बाती निरमल बारो । सुरति चँवर ले सनमुख ढारो ॥
प्रेमकर पुहुप धूप धर ध्याना । चित चंदन घसि आगे आना ॥
अविगतरूप अधर परकासा । आरति गावे कविर धर्मदासा ॥

आरती ।। ४ ।।

संझा आरति करे गुरुसेवा । संपुट खोल मिले गुरुदेवा ॥
तेजपुंजकी ज्योति उजियारा । घंटा झाँझ बजे अधिकारा ॥

अनहद शब्द अखंडित होई । अग्रवासमें रहे समोई ॥
सुकृत अंश पुरुष को ध्यावे । सतगुरु चीन्ह चरण चितलावे ॥
मन बच कर्म जो आरति गावे । कहे कबीर सतलोक सिधावे ॥

आरती ॥ ५ ॥

संझाआरति सुकृत कीन्हा । हंस उबारि अपन करलीन्हा ॥
गगनमंडलबिचफुलयकफूला । तर भौ डार उपर भौ मूला ॥
गगनमंडलबिच आरति साजे । सोहं हंसा आन बिराजे ॥
तत निहतत में जाय समाना । देखहु दीप अधर अस्थाना ॥
कहें कबीर सुनु साधो भाई । अजर अमर घर रहो समाई ॥

आरती ॥ ६ ॥

संझा आरति करो बिचारी । कालदूत जम रहे झखमारी ॥
खुलगइ सुषमन कूंचीतारा । अनहदशब्द उठे झनकारा ॥
सुरत निरत दोय उलटिसमावे । मकरतार जिहिं डोर लगावे ॥
उनमुन शब्द अगम घर होई । अचाह कँवलमें रहे समोई ॥
बिगसित कमल होय परगासा । आरतिगावें कबिर धर्मदासा ॥

आरती ॥ ७ ॥

संझाआरति सुकृति सँजोई । चरणकमल चित राखु समोई ॥
तिरगुन तेल तत्वकी बाती । ज्योति प्रकाश भरे दिनराती ॥
शून्य शिखर पर झाझर बाजे । महापुरुष घर राज बिराजे ॥
शब्दसरूपी आप बिराजे । दर्शन होत सकलभ्रम भाजे ॥
प्रेमप्रीति कै सेवा लावै । गुरुगम हो परम पद पावै ॥
सुख अनंद ह्वै आरति गावै । कहें कबीर सतलोक सिधावै ॥

संझासाखी

'कबीर' संझासुमिरन आरती, भजन भरोसे दास ।
मनसा बाचा कर्मना, जबलग घटमें श्वास ॥ १ ॥
श्वास श्वास में नाम ले, बृथा श्वास जनि खोय ।
ना जानो यहि श्वास को, आवन होय न होय ॥ २ ॥

श्वासा की कर सुमिरनी, कर अजपा को जाप ।
परम तत्त्व को ध्यान धर, सोऽहं आपे आप ॥ ३ ॥
सोऽहं पोषा पवन में, बांधा मेरु सुमेर ।
ब्रह्मगांठ हिरदय धरो, यहि विधि माला फेर ॥ ४ ॥
माला है निज श्वास का, फेरेंगे कोइ दास ।
चौरासी भरमें नहीं, कटे करमकी फांस ॥ ५ ॥
सद्‌गुरु मोहिं निवाजिये, दीजे अम्मर बोल ।
शीतल शब्द कबीर का, हंसा करें कलोल ॥ ६ ॥
'हंसा' मत डरपो काल से कर मेरी परतीत ।
अमरलोक पहुँचाइहौं, चलो सो भौजल जीत ॥ ७ ॥
भौजल में बहु काग हैं, कोइ कोइ हंस हमार ।
कहे कबीर धर्मदास सो, खेइ उतारो पार ॥ ८ ॥
अविनासी की आरती, गावें सत्य कवीर ।
कहें कवीर सुर नर मुनी, कोइ न लागे तीर ॥ ९ ॥
सांझ भये दिन आथवे, चकई दीन्हीं रोय ।
चल चकवा तहँ जाइये, रैन दिवस ना होय ॥ १० ॥
रैन की बिछुरी चाकई, आन मिली परभात ।
जो जन बिछुरे नाम से, दिवस मिले नहिं रात ॥११॥
हौं कबीर विचलों नहीं, शब्द मोर समरत्थ ।
ताहि लोक पहुँचाइहौं, चढै शब्द के रत्थ ॥ १२ ॥
तर ऊपर धर्मदास है, जती सती को रेख ।
रहता पुरुष कवीर है, चलता है सब भेष ॥ १३ ॥
भेष बरोबर भेष है, भेद बरोबर नाहिं ।
तौल बरोबर घूँघची, मोल बरोबर नाहिं ॥ १४ ॥

निर्विकार निर्भय तुही, और सकल भय माहिं ।
सबपर तेरी साहिबी, तुझ पर साहेब नाहिं ॥ १५ ॥
भय भञ्जन दुख परिहरन, अम्मर करन शरीर ।
आदि युगादि आप हो, अदली अदल कबीर ॥ १६ ॥
बिनवतहों कर जोरि के सुनु गुरु कृपानिधान ।
संतन का सुख दीजिये, दया गरीबी जान ॥ १७ ॥
दया गरीबी वन्दगी, समिता शील सुभाव ।
इतने लक्षण साधुके, कहें कवीर विभाव ॥ १८ ॥
बहुत दिननसे जोहता, बाट तुम्हारी राम ।
जिव तरसे तुव मिलनको, मन नाहीं विश्राम ॥ १९ ॥
सो दिन कैसा होगा, गुरु गहोगे बांह ।
अपना कर बैठावगे, चरण कमल की छांह ॥ २० ॥
क्या मुखले विन्ती करूँ, लाज आवत है मोहि ।
हमतो औगुन बहु किये, कैसे भावो तोहि ॥ २१ ॥
सुरति करु मोरि साइयां, हम हैं भव जल माहिं ।
आपेही बहिजायँगे जो नहिं पकडो बांहि ॥ २२ ॥
मैं अपराधी जनम का, नख सिख भरा विकार ।
तुम दाता दुख भंजना, मेरी करो उबार ॥ २३ ॥
औगुन मेरे बापजी, बखशो गरीब निवाज ।
जो हौं पूत कपूत हौं, तोहु पिताको लाज ॥ २४ ॥
साहब तुम जनि वीसरो, लाख लोग लगि जाहिं ।
हम सन तुम्हरे बहुत हैं, तुम सन हमरे नाहिं ॥ २५ ॥
कर जोरे विन्ती करूँ, भवसागर आपार ।
बन्दा ऊपर मिहर करी, आवागमन निवार ॥ २६ ॥

अन्तरजामी एक तू, आतम के आधार।
जो तू छाडे साथको, कौन उतारे पार ॥ २७ ॥
अबकी जो सांई मिले, सब दुख आंखों रोय।
चरनों ऊपर शिर धरूँ, कहूँ जो कहना होय ॥ २८ ॥
साहब तुमहिं दयाल हो, तुम लग मेरी दौर।
जैसे काग जहाज को, सूझे और न ठौर ॥ २९ ॥
मुझमें अवगुन तुझहि गुन, तुझगुन अवगुन मुज्झ।
जो मैं विसरूँ तुझको, तू नहिं विसरे मुझ्झ ॥ ३० ॥
तेरे विसरे क्यों बने, मैं किस शरने जाँव।
शिवविरंचि मुनि नारदा, तिन हृदय न समाव॥ ३१ ॥
मैं तो भूल बिगारिया, जनिकर मैला चित्त।
साहब गरुवा चाहिये, नफर विगारे नित्त ॥ ३२ ॥
औगुन किया तो बहु किया, करत न मानी हार।
भावें बन्दा बखशिये, भावे गर्दन मार ॥ ३३ ॥
साईं केरा बहुत गुन, औगुन एको नाहिं।
जो दिल खोजा आपना, सब अवगुन मुझ माहिं ॥ ३४ ॥
मुझमें गुन एको नहीं, जान राय शिर मौर।
तेरे नाम प्रतापसे, पाऊँ आदर ठौर ॥ ३५ ॥
मैं खोटा साईं खरा, मैं गादा मैं गारि ॥
मैं अपराधी आत्मा, साईं सरन उबारि ॥ ३६ ॥
और पतित तो कूप हैं मैं हूँ समुद्र समान।
मोहि टेक तोहि नामकी, सुनियो कृपानिधान॥ ३७ ॥
अवसर बीता अलप तन, पीव रहा परदेश।
कलंक उतारो रामजी, भानो भरम संदेस ॥ ३८ ॥

साईं मोर सावध अहै, मैंही भया अचेत ।
मन बच कर्म न हरि भजा, ताते निरफल खेत ॥ ३९ ॥
मन परतीत न प्रेमरस, ना कोइ तनमें ढंग ।
ना जानो वा पीवसो, क्योंकर रहसी रंग ॥ ४० ॥
साईं तो जब मिलेंगे, पूछेंगे कुशलात ।
आदि अन्तकी सब कहूँ, उरअन्तरकी बात ॥ ४१ ॥
अब सागर तो भारी भया, गहरा अगम अथाह ।
तुम दयाल दयाकरो, तब पाऊँ कछुथाह ॥ ४२ ॥
सतगुरु बडे दयाल हैं, संतनके आधार ।
भव सागर अथाहसो, खेइ उतारें पार ॥ ४३ ॥

विज्ञानरतोत्र

सत्य सत्यके नामसों सत्य सागर भरा, सत्यके नाम तिहुँ लोक छाजा ॥ सन्तजन आरति करें प्रेमतारी भरें, ढोलनिश्शान मिरदंग बाजा ॥ भक्ति सांची किया नाम निश्चैलिया, शून्यकी शिखर ब्रह्माण्ड गाजा ॥ सत्य कवीर सर्वज्ञ साहब मिले; भजो सत्यनामका रंक राजा ॥ कबीर, हम दीन दुनी दरवेशा । हम किया सकल परवेशा ॥ हम दुवा सलामत लेखा । हम शब्द सरूपी पेखा ॥ हम रुंध मुंड में फीरा । हम फाका फकर फकीरा ॥ हम रमे कौन की नाल । हम चलैं कौन की चाल ॥ हम सरबज्ञी सहजे रमे, हमरी वार न पार ॥ वार भी हमही पार भी हमही, नाना दरिया तीर ॥ सकल निरंतर हम रमें, हम गहिरे गहर गंभीर ॥ खाली खलक खलक के मांही, यों गुरु कहैं कबीर ॥ सत्यनाम की आरती, निरमल भया शरीर ॥ सत सुकृत लौलीन है, ज्ञान ध्यान लो थीर । "धर्मदास लोके गये गुरु बहियां मिले कबीर" धर्म्मदास लोके गये, छाडि सकल

संसार ॥ हंसन पार उतारहीं, गुरु धर्मदास परिवार ॥ अजावन से जावन भया, जावन से भयै मूल ॥ चहुँ दिशि फूटी बासना रही कली में फूल ॥ जब फूले तब गिरि पडे, चरन कमल की धूर ॥ कली फावरी हो रही साहब हाल हजूर ॥ कबीर मिले धर्मदासको, लिख परवाना दीन्ह ॥ आदि अन्त की बीनती, यही लोक को चीन्ह ॥

"बिना देह साहब निरालम्ब जानी"

अति लौलीन चीन्हन्त ज्ञानी । शब्देसरूपी सुनाकाशवानी ॥ जानेजनावैकहावैन देवा । ऐसातत्वपुजेपुजावैंलगावै न सेवा ॥ सदाध्यानधारी अखंडेनिरासा । सदासिंधुपीवे न जावेपियासा ॥ प्रेमधामधीरा उदासी अकेला । लौलीन योगी गुरु ज्ञान मेला॥ मिलन्ताचलन्तारहन्ता अपारी । ऐसीदृष्टिदेखोअनंतोविचारी ॥ सदा चेत चेतंत चितवंत सूरा । ऐसा ख्याल खेलतं बूझंत पूरा न ज्ञानो न ध्यानो न मान मानों। नहीं चंद्र तारा ऊगे न भानो॥ आगे न पीछे न मध्ये न कोई । ज्यों काजला ब्रह्म त्यों तत सोई ॥ डारो न मूलो न वृक्षो न छाया । जीवो न शीवो न कालो न काया ॥ दृष्टी न मुष्टी न देवी न देवा । जापो न थापो न पूजा न सेवा ॥ नहीं पौन पानी न चंदे न सूरा । अखंडित ब्रह्म सोई सिद्धपूरा । हमनाहीं तुमनाहीं बंधू न भाई । निराधार आधार रंको न राई ॥ गावै न ध्यावै न हेली न हेला। नारी न पुरुषो न खेली न खेला ॥ नहीं पेट पृष्ट न पावों न माथा । न जीवो न शीवो न नाथो अनाथा ॥ शेषो महेशो गनेशो न ग्वालं । गोपी न ग्वाले न कंसे न कालं ॥ आसे न पासे न दासे न देवा । आवे न जावे लगावे न सेवा॥ नहीं वार पारे न नियरे हजूरा । ज्योंका त्यों तत्त गहिरे गंभीरा ॥ यंत्रे न मंत्रे न दरदे

न धोका। नरके न सरगे न संसे शोका ॥ सेते न पीते न सब्जे न लालं। गोरे न सँवरे न वृद्धे न बालं ॥ भेदा अभेदा न खेदा न कोई। सदा सुरति सोहंग एके न दोई ॥ जाने जनावे जनावे न शूरा। वारे न पारे न नियरे हजूरा ॥ नादे न विंदे न जिंदे न जीवा। निरंतर ब्रह्म एके शक्ती न शीवा ॥ नहींयोगयोगी न भोगी न भुक्ता। सच्चिदानंदसाहब बंधो न मुक्ता ॥ खेले खेलावै खेलावे औ खेले। चेते चेतावे चेतावे औ चेते ॥

"एके अनेके अनेके सो एके"

चितगुण चित विलास दास सो अंतर नाहीं। आदि अंत में मध्य गोसाईं अगह गहन में नाहीं ॥ गहनीगहिए सो कैसा, सोहं शब्दसमानआदिब्रह्मजैसेका तैसा ॥ "कहैं कबीर हम खेलैं सहज सुभावा" अकह अडोल अबोल सोहं समिता। तामो आन बसा एकरमिता ॥ वा रमता को लखे जो कोई। ता को आवागमन न होई ॥ "ओऽहं सोऽहं सोहं सोई।"

ओहम्म कीलक सोहम्म वाला। ओऽहंसोऽहम्म बोले रिसाला ॥ किलक कमत कंमोद कंकवत, ये चारों गुरु पीर ॥ धर्मदास को शब्द सुनायो, सतगुरु सत्य कवीर ॥ बाजा नाद भया पर तीत। सतगुरु आये भौजल जीत ॥ बाजबाज साहब का राज मारा कूटा दगाबाज ॥ हाजिरको हजूर गाफिलको दूर हिंदूका गुरुमुसलमानका पीर "सात द्वीत नौखंड में, सोहं सत्यकबीर"

इति श्रीविज्ञानस्तोत्र समाप्तः।।

दयासागरस्तुति।

गुरु दयासागर ज्ञान आगर, शब्दरूपी सतगुरं। तासु चरण मरोज बंदों, सुखदायक सुखसागरं ॥ योगजीत अजीत अम्मर,

भाषते सत सुकृतं। दयापाल दयाल स्वामी, ज्ञानदाता इस्थितं। क्षमाशील संतोष समिता, आनंदरूपी हिरदयं। सहजभाव विवेक इस्थिर, निरमाया निहसंशयं॥ निरमोही निरवैर निरभै, अकथ कथिता अविगतं॥ उपकार औ उपदेशदाता, मुक्तिमारग सतगुरं॥ दास भाव की प्रीति बिनती, भक्ति करन करावनं। चौरासी बन्धन कर्म्म खण्डन, बन्दीछोर कहावनं॥ त्रिगुणरहिता सत्य बकता, सत्तलोक निवासितं। सतपुरुष जहां सत्तसाहब, तहां आप विराजितं॥ युगन युगन सतपुरुष आज्ञा, जीवन कारण पगुधरं। दीन लीन अचान ह्वैके, जगतमें डोलत फिरं॥ करुणामय कवीर केवल, सुखदायक सर्व लायकं। जम भयंकर मान मरदन, दुखित जीव सहायकं॥

जीवके उद्धारका मार्ग

धर्मदास करजोर बिनवे, दया करो मन बसकरं। कहूंसेवा गुरुभक्ति अबिचल, निसदिनअराधोंसुमिरणं॥ सद्गुरु की अधिक महिमा, ज्ञान कुण्ड नहाइये। भ्रमति मन तब होय स्थिर, बहुरि न भौजल आइये॥ साधुसन्त की अधिक महिमा, रहनि कुण्ड नहाइये॥ काम क्रोध विकार परिहरि बहुरि न भौजल आइये। दासातनकी अधिक महिमा, सेवाकुण्ड नहाइये॥ प्रेमभक्ति पति व्रत दृढकरि, बहुरि न भौजल आइये। योगीजन की अधिक महिमा, युक्तिकुण्ड नहाइये। चन्दसूर मन गगन थिरकरि, बहुरि न भौजल आइये॥ श्रोता बक्ता की अधिक महिमा, बिचारकुण्ड नहाइये। सारशब्दनिर्वेरि लीजे, बहुरि न भौजल आइये। गुरु साधुसन्त समाज मध्ये, भक्ति मुक्ति दृढाइये। सुरतिकर सतलोक पहुँचे, बहुरि न भौजल आइये॥ धर्म्मदास प्रकाश कीन्हो, अकह कुण्ड नहाइये। सकल कलिविष धोय

निर्मल, बहुरि न भौजल आइये ॥ साहब कबीर प्रकाश सद्गुरु, भली सुमति दिढाइये । सार में ततसार दरसे, सोई अकल कहाइये । धर्म्मदास पट खोलि देखो, तत्त्व में निहतत्त्व है । कहें कबीर निहतत्त्व दरसे, आवागमन निवारिये ॥

इति श्रीदयासागरस्तुति समाप्तः

चेतावनी

नमो ! नमो धर्मनि पातक, पूर रहो मद काम । जिनको लोक बासा दिया, अधम उधारण नाम ॥ अनेक बन्धनते बाँधिया; एक बिचारा जीव । अपने बल छूटे नहीं, तुमहिं छुडावहु पीव ॥ मैं अपराधी जनमका, नख शिख भरा विकार । तुम दाता दुख भञ्जना, मेरी करो उबार ॥ अवगुण मेरे बापजी बकसो गरीब निवाज । मैं तो पूत कुपूत हों, तुम्ही पिता को लाज ॥ बिनती है निज दास की, सुनिये दीनदयाल । दास आपनो जानिके, सतगुरु होहु कृपाल ॥ 'कबीर' जम्मन जाय पुकारिया, धर्मराय दरबार । हंस मवासी है रहा, लगे न फांस हमार ॥ हमरी शंका ना करे, तुम्हरी धरै न धीर । सतगुरु के बल गाजहीं, कहें कबीर कबीर ॥ कबीर कहंता जानदे, मेरी दसी न जाय । खेवटिया के नाव पर, चढ़े घनेरे आय ॥ बाजा बाजा रहित का, परा नगर में शोर ॥ सद्गुरु खसम कबीर है नजर न आवै और ॥

सत्यका शब्द

सत्तका शब्द सुन भाई फकीरी अदल बादशाही ॥ साधो बन्दगी दीदार । सहज उतर सायर पार ॥ सोहं शब्दसे कर प्रीति । अनभय अखण्ड घरको जीत ॥ तन में खबर कर भाई जा में नाम रुशनाई ॥ सुरतिनगरमें वस्ती खूब । बेहद उलट चढ महबूब ॥ सूरति नगरामें कर सैल । जामें आतमा को महेल ॥

अमरी मूलसन्धि मिलाव । जापर रखो बाँयाँ पांव ॥ दहिना मध्यमें धरना । आसन अमर यों करना ॥ द्वादश पवन भर पीजे । शशिघर उलट चढलीजे ॥ तन मन वारना कीजे । उलट निज नामरस पीजे ॥ तन मन सहित राखो श्वास ॥ इस बिध करो बेहद बास ॥ दोनों नैन के कर बान । भौंरा उलटि कस कमान ॥ परबत छके दरिया जान । करले तिरकुटी अस्नान ॥ सहज परस पद निर्बान । तेरा मिटे आवाजान ॥ जा में गैब का बाजार । सरबर दोइ दीसे पार ॥ जा बिच खडीकुदरत झार । शोभा कोटि अगम अपार ॥ लागे नौलख तारा फूल । करनी कोटि जरिया मूल ॥ ताको देखना मत भूल । रमता राम आप रसूल ॥ माया भरम की कांची । देखु दिल अन्दरकी सांची ॥ वरषे नूर बिन मोती । चन्दा सूर की जोती ॥ झलके झिलमिला नारी । ताबिच अलप है क्यारी मानो प्रेम की झारी । खुलगई अगम किंवारी ॥ बेडा भरम का खोया । दीपक नामका जोया ॥ जोगी जुगतसे जीवे । प्याला प्रेम का पीवे ॥ मौला पीव को दीजे । तनमनकुरबान करलीजे ॥ परी है प्रेम की फांसी । मनुवां गगनका बासी ॥ बाजे बिना तन्ती तूर । सहजे ऊगे पछिम सूर ॥ भौंरा सुगंध का प्यासा । किया है कमलमें बासा ॥ रमता हंस है राजा । सहजे पलक आवाजा ॥ सुन्दर श्याम घन लाया । बादल गगनमें छाया ॥ अमृत बूंद झर लाया । देखि दोइ नैन ललचाया ॥ अजब दीदार को पाया । दरिया सहजमें न्हाया । दरिया उलट उमगे नीर । ता बिच चले चौंसठ छीर ॥ हंसा आन बैठे तीर । सहज चुगे मुक्ता हीर ॥ मिला है प्रेम का प्यारा ॥ नहीं है नैन सों न्यारा ॥ जीवनमृत न व्यापेकाला । जो त्रिकुटीसे पलक न

टाला ॥ पल जब पीव से लागा । धोखा तब दिलों का भागा ॥ चेतावनी चित विलास । जबलग रहे पिंजर श्वास ॥ सोहंशब्द अजपाजाप । साहब कबीरसो आपहिंआप ॥

साखी ।

चेतावनि चितलागि रहे, यह गति लखै न कोय । अगम पन्थ के महल में, अनहद बानी होय ॥ नाम नैन में रमि रहा, जाने बिरला कोय । जाको सतगुरु मीलिया, ताको मालुम होय ॥ झण्डा रोपा गैब का, दोय परवत के सन्ध । साधु पहिचाने शब्द को, दृष्टि कमल कर बन्ध ॥ झलके जोती झिलमिला, बिन बाती विन तेल ॥ चहुँदिशि सूरज ऊगिया, ऐसा अदभुत खेल ॥ जागृत रूपी रहत है, सतमत गहिर गंभीर । अजरनाम बिनसे नहीं, सोऽहं सत्य कबीर ॥

॥ इति चेतावनी ॥

ज्ञानगुदरी ।

अलखपुरुष जब किया बिचारा । लख चौरासी धागा डारा ॥ पांच पत्त्व की गुदरी बीनी । तीन गुणनसे ठाढी कीनी ॥ ता में जीव ब्रह्म औ माया । समरथ ऐसा खेल बनाया ॥ सीवन पांच पचीसो लागे । काम क्रोध मोह मद पागे ॥ काया गुदरी का बिस्तारा । देखो सन्तो अमर सिंगरा ॥ चांद सूर दोइ पैवँद लागे । गुरु प्रताप से सोवत जागे ॥ शब्दकी सुई सुरतिकाडोरा । ज्ञानके टोभन सिरजनडोरा ॥ अबगुदरीकी करु हुशियारी । दाग न लागे देखुबिचारी ॥ सुमतकी साबुन सिरजनधोई । कुमत मैलको डारो खोई ॥ जिनगुदरीका कियाविचारा ॥ सोजन भेटे सिरजन हारा ॥ धीरजधुनीध्यान धर आसन । सतकी कोपीनसहज सिंगासन ॥ जुगतकमंडल कर गहि लीन्हा । प्रेम पावडी मुरशद

चीन्हा ॥ सेलीशील बिबेककी माला । दयाकी टोपी तनधर्म-शाला ॥ मिहर मतंगा मन वैशाखी । मृगछाला मनहीको राखी॥ निहचे धोती पवन जनेउ । अजपा जपे सो जाने भेऊ॥ रहे निरन्तर सतगुरु दाया । साधु सँगतकर सबकछु पाया ॥ लौकी लकुटी हिरदया झोरी । क्षमा खड़ाऊँ पहिर बहोरी ॥ मुक्ति मेखला सुकृत सुमिरनी । प्रेम पियाला पीवे मौनी ॥ उदास कूबरी कलह निवारी । ममता कुत्तीको ललकारी ॥ जुगतजंजी-रबांधजब लीन्हा । अगम अगोचरखिरकी चीन्हा ॥ बिराग-त्याग बिज्ञान निधाना । तत्ततिलकदीन्होनिरबाना ॥ गुरुगम चकमकमनसमतूला । ब्रह्म अगिनपरगटकरमूला ॥ संशय शोक सकल भ्रम जारा । पांच पचीसो परगटमारा ॥ दिलका दरपन दुबिधा खोई । सो बैरागी पक्का होई ॥ शून्य महल में फेरीदेई। अमृतरसकी भिच्छा लेई ॥ दुखसुख मेला जगका भाऊ। तिर-बेनीके घाट नहाऊं ॥ तनमनशोधि भयाजेहि ज्ञाना । सोलखि पावे पद निर्बाना ॥ अष्ट कमलदल चक्कर सोधे । जोगी आप आपमें बोधे ॥ इँगला पिंगलाके घर जाई । सुषमन नीर रहा ठहराई ॥ वोहं सोहं तत्त्व बिचारा । बंकनालमें किया सँभारा ॥ मनको मार गगन चढिजाई । मानसरोवर पैठि नहाई ॥ अनह-दनाद नामका पूजा । ब्रह्म बैराग देव नहिं दूजा ॥ छुटगइ कश-मल कर्मजलेखा । यहि नैनन साहबको देखा ॥ अहंकार अभिमान बिडारा । घटका चौकाकर उजियारा ॥ चितकर चंदन मनसा फूला । हितकर संपुट करले मूला ॥ शरधा चँवर प्रीति कर धूपा । नौतम नाम साहबका रूपा ॥ गुदरी पहिरे आप अलेखा । जिन यह प्रगट चलाई भेखा ॥ साहबकबीरब ख्शिजबदीन्हा । सुरनरमुनिसबगुदरी लीन्हा ॥ ज्ञानगूदरी पढे-

प्रभाता । जनम २ के पातक जाता ॥ ज्ञानगुदरी पढे मध्याना सो लखि पावे पद निर्बाना ॥ संझा सुमिरण जो नर करई । जरा मरण भौसागर तरई ॥ कहें कवीरा सुनो धर्म्मदासा । ज्ञानगुदरी करचो प्रगासा ॥

साखी

माला टोपी सुमिरनी, सद्गुरु दिया बखशीश । पल २ गुरु को बंदगी, चरण नवाऊँ शीश ॥ भौ भंजन दुख परिहरन, अम्मर करन शरीर । आदियुगादि आप हो, चारो युग कव्वीर ॥ बंदीछोर कहाइया, बलख शहर मंझार । छूटे बंद सब भेष के, धन धन कहे संसार ॥

॥ इति श्रीज्ञानगुदरी सम्पूर्णम् ॥

रतनास्तुति

गुरुध्यानसार भजबारबार ।

सब तजबिकार सतनामसार सों कर यारी ॥ जय जय गुरुपीरं सत्यकबीरं, अमरशरीरं अधिकारी ॥ निर्गुण निज मूलं धरि अस्थूलं, काटं शूलं भवभारी ॥ सूरति निज सोहं कलिमलखोहं, जन मनमोहं छबिभारी ॥ अम्मरपुरबासी सब सुखरासी, सदा बिलासी बलिहारी ॥ पीरनके पीरा मतिके धीरा, अलख फकीरा ब्रह्मचारी ॥ हंसन हितकारी जग पगुधारी, गरभप्रहारी उपकारी ॥ काशी आये दास कहाये, हंस बचाये प्रणधारी ॥ रामानँदस्वामी अन्तरयामी, हैं बड़नामी संसारी ॥ उनको गुरुकीन्हा मतबुधलीन्हा, उनहुन चीन्हा करतारी ॥ ब्राह्मणसन्यासी कीन्हीहांसी, तब अविनाशी पगुधारी ॥ मगहर स्थाना किया पयाना, दे परवाना जन तारी ॥ तहँ बलबीरा तजे शरीरा,

काटन पीरा भव भारी॥ बिरसिंघदेवराजा, सुनबलगाजा सबदल साजा संभारी॥ उत पीर पठाना है बलवाना, लाय कमाना कर डारी॥सनमुख नियराना छूटे बाना, भै घमसाना रण भारी॥ तब गुरुज्ञानी मनकी जानी, अधरहिं बानी उच्चारी॥ खोलोपरदा है नहिं मुरदा, जूझ अवस्था करडारी॥ सुनिके यह बानी अचर जमानी, देख निशानी सिरमारी॥ रोये परवीना हम मतिहीना, तुमहिं न चीन्हा करतारी॥ मगहर तजि बासा किया प्रकाशा, जहँ धर्मदासा व्रतधारी॥ तिनको शिष कीन्हा सर्वस दीन्हा, दुख हरलीन्हा यमभारी॥ सतपन्थ चलाये भ्रम मिटाये, शब्द दिढाये संसारी॥ रतनाजन तेरो करत निहेरो, हमतन हेरो बलिहारी॥

अष्टक।

साहब गुरुज्ञानी समरथध्यानी, अचल स्थानीस्थीरं॥ अविगतवानी मुक्तिनिशानी, जगमें आनी कब्बीरं॥ शीशबिराजे तिलक अखण्डित, मुख सतसुकृत गम्भीरं॥ ज्ञान प्रचण्डित पाखंड खण्डित, समता मंडित कब्बीरं॥ भेष रिसाला श्रवनी माला, प्रेम उजाला किर्पा गहिरं॥ दीनदयालं जन प्रतिपालं, सदा कृपालं कब्बीरं॥ संकट टारन कष्ट निवारन, शीश विदारन यम धीरं॥ हंस उबारन जिव निस्तारन, भर्म बिदारन कब्बीरं॥ सतयुग, त्रेता, द्वापर बीता, रमता तीता पर पीरं॥ कलयुग कीता सबसों जीता, परम पुनीत कब्बीरं॥ काशी छोड उडीसा आये, आसा गाडे सिन्ध तीरं॥ ठाकुर पंडो गर्ब बिहंडो, पाखंड खंडो कब्बीरं॥ पुरुष विदेही अविचल देही, नाम सनेही मन थीरं॥ जो जन जाने भेंटे तेही, दर्शन दे गुरु कब्बीरं॥ कबीरं अष्टक टारन कष्टक, भौजल नष्टक कर थीरं॥ धर्मनिदासं नित अभ्यासं, प्रापत तासं कब्बीरं॥

स्तुति ।

गुरु दुखित तुम बिन रटत द्वारे, प्रगट दरशन दीजिये ॥ गुरुसामियांसुनु बिनतिमोरी, बलिजाउँ बिलंव न कीजिये ॥ गुरु नैन भरभर रहत हेरो, निमिख नेह न छाडिये ॥ गुरु बांह दीजे बन्दिछोर, सो अबकी बन्द छुड़ाइये ॥
बिबिध विधि तन भयेउ व्याकुल, बिन देखे अब ना रहों ॥ तपत तनमन उठत ज्वाला, कठिन दुख कैसे सहों ॥ गुन औगुम अपराध छमाकरि, अब न पतित बिसारिये ॥ यह विनती धर्मदास जनकी, सतपुरुष अवमानिये ॥

विनय ।

दरस दीजै गुरु परम स्नेही । तुम विनु दुख पावे मोर देही ॥ अन्न न भावै नींद नहिं आवै । बारबार मोहि विरह सतावै ॥ घर आंगनमोहि कछू न सुहावे । वज्र भयो यहविरह नजावे ॥ नैनानीर बहे जलधारा । निसिदिन पंथ निहारूं तुम्हारा ॥ जैसे निजधन जातहिराई । ऐसे तुम विनु कछु न सुहाई ॥ जैसे मनि विनु फानि बेकरारा । ऐसे तुम विनु हाल हमारा ॥ हे कर्ता तुम अपरम्पारा । केहि कारन गुरु मोहि विसारा ॥ जैसे मीन मरै विनु नीरा । ऐसे तुम विनु दुखित शरीरा ॥ छन्द ॥ दुखित तुम विनु रटत द्वार, प्रगट दरशन दीजिये ॥ विनति सुनु स्वामिया वलि जावँ विलंब न कीजिये ॥ विविध विधि हम भय हैं व्याकुल, बिनदेखे जिव ना रहै ॥ तपत तन मन उठत ज्वाला, कठिन दुख अब को सहे ॥ गुन औगुन अपराध छिमाकरि औगुन कछु न विचारिये ॥ पतित पावन राखलाज, अब न पतित विसारिये ॥ वंदीछोर अब वांह दीजे, अब की बन्द छुडाइये ॥ नैन भरि भरि रहूँ निरखत, निमिख नेह न तोरिये ॥ दासधर्मनि करत

विन्ती महापुरुष गुरु मानिये ॥ दया कीजे दरस दीजे अपनो कर जानिये ॥

स्तोत्र (विदेहं स्वरूप)

नमोशब्दरूपी सो है जक्तकरता । दयापालस्वामी सर्बकष्ट हरता ॥ बिशालं कृपालं धनी अन्तर्यामी बिदेहं स्वरूपं कबीरं नमामी ॥ अखंडं अकर्म अनिच्छा अदेही । जपैशेषजाको लहै-नाहि तेही ॥ लगी शंभुतारी गहो अर्धनामी। विदेहं सरूपं कबीरं-नमामी ॥ तकोजीवशरनासो भवसिंधुतरना । अघै खान टरना गहो बेग चरना ॥ अभय रूपजाको महापरमधामी । बिदेहं स्वरूपं कबीरंनमामी जहां जिव पुकारे तहांको सिधारे । भये दीन जेते सो तेते उबारे ॥ लखै कौन जाको अनामीसनामी । विदेहंसरूपं कबीरंननामी । परे सिंधुभारे सो साहब पुकारे । करी आय रक्षा सु ताको उबारे ॥ अभयमुक्तिदाता मिलेआय स्वामी। विदेहंसरूपं कबीरं नमामी ॥ तुही सृष्टिकरता तुही आप हरता । तुही सोखसिंधू तुही फेर भरता॥ तुहा सर्व कामी तुही है अकर्मी। विदेहं सरूपं कबीरं नमामी ॥ तुही बीनबीनानबीना बजावै । तुही आप रीझै तुही आप गावै । भये दीन डोलै मोहै ऐस कामी। विदेहं सरूपं कबीरं नमामी ॥ तुही रामरावन तुही कंसकृष्णा । तुही ब्रह्मरुद्रा तुही देव विष्णा । तुही शेष ब्रह्मा तुही भूमि थामी। विदेहं सरूपं कबीरं नमामी ॥ तुही सर्वजीवनके रक्षकारी । तुही चारखानी सो बानी सुधारी ॥ तुही आप जीवन् दे सत्यनामी। विदेहं सरूपं कबीरं नमामी ॥ तुही आप खेलै खेलावे अकेला । तुही आप स्वामी तुही आप चेला ॥ तुही खेत भागे लडे धार सामी । विदेहं सरूपं कबीरं नमानी ॥ उभय मेषधारी धरै भेष भारी । तुही भोग भोगी तुही ब्रह्म चारी ॥ कहे को कहांलों

अपारं अनामी ॥ विदेहं सरूपं कबीरं नमामी । दई काल पीरा जबै जिव सताये । लिये नाम लाहा जोलाहा हो आये ॥ लखोरे लखोरे कृपासिंधु स्वामी । विदेहं सरूपं कबीरं नमामी ॥ अघे-खान जेते कियो हानि तेते । गहो सत्यपंथै उहै संत हेते ॥ बसो देश जाको जहां है अरामी ॥ विदेहं सरूपं कबीरं नमामी॥जपो नाम नीको सदा ये कबीरं । मिले लोक बासा हरे काल पीरं ॥ अभीरं अपीरं सो है तासु नामी । विदेहं सरूपं कबीरं नमामी॥ हरे मत्त मंदा करै सो अनंदा ॥ उबारो उबारो महाकाल फंदा॥ अभय बास जाको सो है अंतर्यामी। विदेहं सरूपं कबीरंनमामी॥ कबीर अष्टक जो पढै औ पढावै । महाप्रेमबानी सुनै औ सुनावै॥ कहे दीनबंदा सो फंदा न आनी । बिदेहं सरूपं कबीरं नमामी॥

स्तोत्र (जय जय कबीर) कवित्त

जय जय कबीर धीर, हरन सकल काल पीर, निर्गुण अवि-नाशी, ब्रह्म शब्दरूप सांई ॥ चर अचर भूत ब्याल, ब्योम मृत्यु औ पताल, सुर नर मुनि यक्ष गंधर्व, सकल में समाई ॥ अम-रलोक के निवास, पुहुप दीप को सुवास, शब्द कोट अति हुलास, विविधविध बनाई ॥ जहां हंसन को निवास, षोडश रविको प्रकास, अमृतफल चुगे सुपास, सर्व क्षुधा जाई ॥ जग मगात हंस अंग, शब्द को भयो प्रसंग, अकह वृक्ष सांई संग, सुराजत समुदाई ॥ बंदीछोर प्रभु दयाल, भंजन भवसिंधु जाल, सतगुरु साहब कृपाल, सुमिरत अघ जाई ॥ जहां सद्गुरुको निवास, कोटिन शशिको प्रकास, छाड लोक हंस पास, भौजल में आई ॥ कठिन काल को संहार, लीन्हो हंसन उबार, कीन्हो भवसिंधु पार, सकल भ्रम मिटाई ॥ माया मद मोह हरन, काम क्रोध गर्भ दलन, चिन्तामणि हंस रमन, संतन सुखदाई ॥ जे

नर भये भक्तिहीन, सो भये यम के अधीन, अटके भवसिंध तिन, नहीं पार पाई ॥ जो नर गुरुशरण आय, लीन्हो तिनको बचाय, कालजाल सों छुडाय, अमर घर पठाई ॥ निरंजन निरकार, ब्रह्मा विष्णु शिव विचार, आदिशक्ति मायाजार, नहीं पार पाई॥ निगम वेद कर पुकार, तेहू नहिं पाये पार, गुरु कवीर शरन अपार, सुमिरत अघ जाई ॥

अथ नाभाजीकृत छप्पय ॥

अनन्त कोट निज भक्त हैं, तामें एक करोर बिचारी । ताहू में ते चुनलिये, लाखलख नेजा धारी ॥ तामें समरथ एक सहस सहस में सौ अधिकारी ॥ पचास भक्त प्रसिद्ध, पचीस परम उजागर । द्वादश भक्त प्रधान, षट रस गुन के आगर ॥ चतुर नाम गोविन्द वपु, उभय भक्त तारन तरन । तामें मुख्य कवीर हैं, ता पद रज नाभा शरन ॥१॥ गिरा गंग अनुहार, चाल सनकादिक जैसे । ज्ञान मुनि शुकदेव, ध्यान शिव शंकर तैसे॥ जती ज्यों गोरख सती, हरिचन्द बखानो । प्रतिज्ञा प्रह्लाद, सांख्यमें कपिले जानो ॥ हेम जेम शीतल सदा, परकाशी दिवाकर मानो । कवीर सदा गंभीर हैं, निज अविनाशी जानो॥ कर कलजुग ऊपर कट करी सो संत फौज नीकाचढी ।

नाम महानिज मंत्र नामहि सेवा पूजा । जपतप तीरथ नाम नाम विनु और न दूजा ॥ नाम प्रीति नाम बैर नाम कहि नामी बोलै ॥ नाम अजामिल साख नाम बन्धनते खोले ॥ नाम अधिक रघुनाथ ते, रामनिकट हनुमत कह्यो । कवीर कृपाते

1 यद्यपि आजकलके छपे हुवे जितने नाभाजीकृत भक्तमाल हैं उनमें "कबीर कानि राखी नहीं वरण आश्रम षट दर्शनी" के सिवाय इस प्रकार वाणी नहीं मिलती है तथापि कवीरपंथियोंके यहां इसी रूपमें बहुत दिनोंसे प्रचलित है, और प्रायः कवीरपंथी इसे नित्य पाठमें गाया करते हैं । इस लिये यहां दिया गया है । 'श्रीयुगलानन्द बिहारी'

परमतत्व पदुमनाभ, परिचय लह्यो ॥ ३ ॥ नौ करोर प्रह्लाद अष्टध्रुव लक्षमन हनुमाना । मोरध्वज हरिचन्द, सातले संत-स्याना ॥ रुक्मांगद अम्बरीष पंच, निज पहुँचे दासा । दोय अर्जुन गंगदेव, दोय वृजमंडल वासा ॥ तेतीस कोट तिंहु जुगमें हरि सेवत निरभय भयो । कलियुग नाम कवीर हैं, अनन्त कोट जिवले निस्तर्‍यो ॥ ४ ॥

छप्पय (भक्तमालका)

कबीर कानि राखी नहीं, वरन आश्रम षट दर्शनी ॥ भक्ति विमुख जो धर्म सब, अधर्म करि गायो । जोग जग्य व्रतदान, भजन विनु तुच्छ दिखायो ॥ हिंदू तुरुक प्रमान, रमैनी शब्दे साखी । पक्षपात नहिं करी, सबनके हितकी भाखी ॥ आरूढ दशा होय जगतमें, मुख देखी नाहि न भनी । कवीरकानराखी नहीं, वरन आश्रम षट दर्शनी ॥५॥ राखी नहीं जगतकी, भाखी सत्य कबीर । देदे शब्द निराटका, तोरे भ्रम जंजीर ॥ बानी अरबो खरब है, ग्रन्थां कोटि हजार । करता पुरुष कबीर है, नाभा किया विचार ॥ ६ ॥

इति छप्पय

(सूचना—यहांतक तो नाभाजीके नामसे है जिसमेंसे केवल एक छप्पय "कवीर कानि राखी नहीं" वाला शुद्धभी है और भक्तमालमें पाया भी जाता है । शेष छन्दोभंग आदि अशुद्धि-योंसे ऐसा पूर्ण है कि, इसे इस रूपमें नाभाजीकी कविता कहना महा अन्याय होगा । यह तो यह इन्ही छप्पयोंके आगे एक दोहा है—

जनक विदेही नानका, ऊधो स्याम शरीर । वालमीक तुलसी भये, शुकदेव भये कवीर ॥

नोट- ३२ पेजमें, नाभाजीकृत छप्पय में 'अधिकारी' के आगे एक चरण ग्रन्थ पात है.

विचार-पाठक ! इन छप्पयोंसे देखिये जिनमें कवीर साहब-को किन किनकी ऊपमा दी गयी है। अस्तु उन्हें रहने दीजिये वे तो उपमा मात्र हैं, अंतिम साखी को देखिये-इसमें कवीर साहबको शुकदेवका अवतार बतलाया गया है, अब बिचारिये कवीर साहबका यह वचन-"अमर लोकसे हम चलि आये, आये जगत मझाँराहो" कहां-यह बात। तिसपरभी ऐसीही बातोंसे भरी पुस्तकको लोगोंने "सद्‌गुरु कवीर साहब कृत" छापकर पब्लिकको धोकामें डाला है और कवीर साहबके नाम पर धब्बा लगाया है। इस विषयमें विशेष किसीको जानना हो तो वह, कवीर चन्द्रोदयमें छपे "निष्कलंकमें कलंक" नामक लेखको पढकर खातरी कर सकते हैं ! यहां विशेष लिखनेका अवकाश नहीं हैं। और मैंने इसमें इन वाणियोंको कबीरपंथियों-को सचेत करनेके लिये रक्खा है ॥]

।। स्तोत्र अष्टक ।।

(मंगल रूप अनूपम् पूरण)

मंगल रूप अनूपम् पूरण, नाम कवीर सो आप उदारा। मो पर दृष्टिदया करि हेरहु, हौं अति बालक दास तुम्हारा ॥ काम अपार महा बल भारत, देखतही मम चित्त डरावे। कीजे कृपा उर अन्तर्यामिसु, संकटसे बहु जीव दुखावे ॥ १ ॥ लोभ महा मद क्रोध उपावत, होत अधीर बहू चितमेरो। मोह गया ममता रजनीवत, बारम्बार रहे नित घेरो ॥ एक उपाय यही बचवे अब, होहु दयाल दया करि हेरो। कहा कहौं कछु आप छिपे नहिं, हौ प्रभुनाथ अनाथन केरो ॥ २ ॥ मो कहँ तात तुही पितु मातु सु, और उपाय नहीं कछु मोहीं। जो सुत मातु पिता ढिगआवत,

तौ वहि मातुज्ञ दृष्टिन जोई । तौपुनि लोटत पोटत अंग में, तब लेत उठाय दया करि ओही । हे गुरु देव कवीर कृपाल त्यों, है इक आश शरनागत तोही ॥ ३ ॥ दासको संकट देखि दया-निधि, हो करुणा करि आतुर धायो । इन्दुमती जब टेर कियो प्रभु, जाय तहां वहि पीर मिटायो । बांधत सेत सहाय कियो प्रभु, रामहु केर उपाय बनायो । कौन सु संकट मोहि गरीबको, जो तुमसे नहिं जात छुडायो ॥ ४ ॥ जाय पुरी पुरुषोत्तम के प्रभु, देकर दण्ड समुद्र हटायो । विप्रनको अभिमान महाप्रभु, तोडनको बहुरूप दिखायो । अभय दीन पड्यो चरणों जब, चारिउ जात सो एक मिलायो । दास जहां जहां कोऊ टेरत, ताकहँ होहु तुम वेगि सहायो ॥ ५ ॥ मो कह काहि विसारत समरथ, दीन दयाल कवीर उदारा । आनन्द आप अजीत गुसाईं सु, मोहमया सबते प्रभु पारा ॥ साक्षि सरूप अनूपम शोभित, पारखरूप अकार तुम्हारा। मैं अति दीन अधीन दुखी बहु, मेटहु मोर अघोर अंधारा ॥ ६ ॥ यह वर मांगहुँ देहु दया करि, अन्तर्यामीसु ज्ञान परकासा । बोध सरूप सदा निरनय गुरु, मममें तुम होहु उजासा ॥ वेद कुरान पुरान जु गावहिं, पार न पावहिं होहिं उदासा । जापर मौज करौ तुम साहब, सो पुनि हंस मिले तुम पासा ॥ ७ ॥ ये गुरु अष्टक पाठ करे नर, आप सुने अरु ध्यान धरेंगे । होय शरधा अति प्रेमउ पावत, मारग चाल सुचाल चलेंगे ॥ ते नर पावहिं मुक्ति पदारथ, पाखंड रूप विकार तजैंगे । होंहिं सुखी लहि आनन्दको पद, सो भवसागर पार तरैंगे ॥ ८ ॥

कवित्त--

अजर अखंण्ड रूप मरम परकाशी देखों, सूरसे उजासी देखों

अतिहीं सुहायो है । ब्रह्म जगत भरम मेंटे, झाईं सन्धि काल नाशे, संशय सब चूर करि धूरसे उड़ायो है ॥ वेदहू प्रमाण और वाणीहूके मत जेते, औरहु सिद्धान्त सो तो सर्वहुँ दिखायो है । सर्वहुको जाने सो तो सर्वहुसे न्यारे रहे, सोई गुरु "रूप निज" पारख लखायो है ॥ ९ ॥

साखी—

वारों तनमन धन सबै, पद परखावनहार । जुग अनन्त जो पचिमरै, विन गुरु नहिं निस्तार ॥ १ ॥ बन्दनीय गुरु परखको, बारबार कर जोरि । दया करन संशय हरन, संतरूप प्रभु तोरि ॥ २ ॥ बन्दीछोर दयाल प्रभु, विघ्न विनाशक नाम । अशरण-शरण बन्दौं चरण, सब विधि मंगलधाम ॥३॥ साहब दीन दयाल गुरु, तुम पर और न कोय । शरण आय जमसो बचे, आवा गमन न होय ॥४॥ विनय करौं कर जोरिकै, सुनु गुरु कृपानिधान । सन्तनका सुख दीजिये, दया गरीबीदान॥५॥ दया गरीबी बन्दगी, जो गुण होय शरीर । अंग व्याधि व्यापे नहीं, सतगुरु मिलहिं कबीर ॥ ६ ॥ कबिर मिले धर्मदासको, लिखि परवाना दीन । आदि अन्तकी वार्ता, शब्दहिं में कहि लीन्ह ॥ ७ ॥ शब्दे मारे गिरपडे, शब्दे छाडे राज । जिन जिन शब्द विवेकिया, तिनका सरिया काज ॥ ८ ॥ शब्द विना सुरति आंधरी, कहो कहो कहांको जाय । द्वार न पावे शब्दका, फिरि फिरि भटका खाय ॥ ९ ॥

छन्द—

धर्मदास विनय करि, विहंसि गुरु पद कंज गहे । हो प्रभु होहु दयाल, दास चित अतिहिं दहे ॥ आदिनाम सरूप शोभा, प्रगट भाष सुनाइये । काल दारुण अति भयंकर, कीट भृंग बनाइये ॥ १ ॥ आदि नाम निअच्छर, अखिलपति कारनू ।

सो प्रगटे गुरु रूप, सो हंस उबारनू ॥ सतगुरु चरण सरोज, जे जन मन ध्यावहीं । जरा मरण दुख नाशि, अचल घर पावहीं ॥ २ ॥

दया गुरुकी ।

अथ संझापाठ ।

गुरुस्तुति (बुरहान पुरी)

दोहा–नमो नमो गुरु देवजू, साधु स्वरूपी देव । आदि अंत गुण कालके, जाननहारे भेव ॥ १ ॥

सोरठा–मेटेउ कालको जाल, ताते गुरु तुव नाम यह । बन्दी-छोर दयाल, अशरण शरण उदार अति ॥ २ ॥

गुरुशतक सार नाम ॥ चौपाई ।

दीनबंधु करुणामयसागर। हंस उधारण तारण आगर ॥ दीना-नाथ शरण सुख दाई। अभय तासु पद गुरुसम राई ॥ बन्दीछोर बिरद अति तासू । हंसरूप परगट जगजासू ॥ अधमउधारण-तारणस्वामी । परवरदिगार मालिक अनुगामी ॥ काल जालके मेटनहारे । बिरद लाज राखन पति प्यारे ॥ धीरज दया तत्व संयुक्ता । राम भूमिका बासक युक्ता ॥ चिंता रहित अचिंत गोसाईं । परमरूप परकाशक सांई ॥ अखिल ब्रह्मांडके जानन-हारे । कर्ता नाम प्रगट विस्तारे ॥ निष्कामी माया परचंडा । ताको नासक पूरण ब्रह्मंडा ॥ मंगल रूप गोसांई आपू । जगत विदित पूरण परितापू ॥ साहेब निर्भय पद दातारा । कर्ता पुरुष सबनके पारा ॥ महा मोह दलनाशक स्वामी । हंसन नाह अपार अगामी ॥ आनंद सिंधु अहंतातीता । रामरूपमें परम पुनीता ॥ सत्य यथारथ अतिप्रिय साधू । मन मायाको मेटेउ व्याधू ॥ पूजनीय अनुमान विनासिक । सत्यसुकृत प्रकाश प्रकाशिक ॥

नाम मुनिंद्र सबन सुखदाई । बारम्बार कहों गोहराई ॥ सत्य-सिंधुप्रभुदीनदयाला । नाशक अनुमय सहज कृपाला ॥ आपु जीवनिःकर्मनिधाना । शब्दीअजर अकाल समजाना ॥ साधुरूप पूरण परमाना । गरीब निवाज गहहु गुरुज्ञाना ॥ झाईं शब्द परखावनहारे । तारण तरण बिगत सम्भारे ॥ मन अनुमान गुमान विनाशक । मोद प्रत्यक्ष दाननिजदासक ॥ वेदकुरान बुझाय यथारथ । मन क्रम वचन साधुमें स्वारथ । इतिसतनाम-गुरूगनिआई । सबवृत्तांतगुरुमुखजो बुझाई ॥ साधुगुरु कवीर गोसांई । बन्दीछोर नाम जपु गाई ॥ ३ ॥

दोहा--

गुरुके अमृत वचन सुनि, शिष्य श्रवण मन देइ ॥ झांईसंधि औ काल गुण, तुरित मिटे नहिं लेइ ॥ ४ ॥

छन्द--

तुम होहु जाहि दयाल सकलोजाल ताकर नासि हो ॥ तुम बिना न मिटि है काल सुकृतपालपरखप्रकाशि हो ॥ का करो मैं अस्तुतिआजसतगुरु कियो बहुत उपकार हो ॥ तुम बन्दीछोर कवीर साहेब मेटिया भव भार हो ॥ सब करों निछावर तो परम गुरु तन मन धन सबखेह हो ॥ मम सुरति राखो चरणमें यह नाशमान है देह हो ॥ परख पदको पाय साहेब मेटि गयोसब भास हो ॥ ब्रह्मजगत अनेक बानी रही न काहूकी आस हो ॥ ५ ॥

सोरठा--

शरण ! शरण ! गुरुराय, बहुत सुखी मोको कियो ॥ पूरन बंदत पाय, सब अपराध छिमा करो ॥ ६ ॥

दोहा--

मैं नालायक प्रश्न कियो, तुम समुझायउ मोहि ॥ मोसे बोलत ना बन्यो, छिमा करो प्रभु सोहि ॥ ७ ॥

छन्द–समुझि देखु चित त्यागि, नास्ति सुखजो अनित्य पाग, गुरु चरणन करु संगति, संत साधुकी ॥ हो मिस्कीन, राखु निश्चय याकीन, तू तो जमापद बाकी खर्च काहे आबादकी ॥ मनमनसा दोऊ लौंडि निकारिडारो, मारो हंकारतृष्णाकुबुद्धि कुबादकी ॥ रूप हंस धार, ठहरि कीजिये विचार, यार बफादार दीनानाथ, दीनबंधु गुरु साधुकी ॥ ८ ॥

॥ शब्द अष्टपदी ॥

प्रभुजी तुम विन कौन छुडावे ॥

महा कठिन यमजाल फांस है तासों कौन बचावे ॥१॥ नाना फाँस फँसाय जीवको, अपनो रूप छिपावे ॥ पंच कोश है परगट ग्रासे, तेहिको कौन लखावे ॥ २ ॥ आपुहि एक अनेक कहावे, त्रिविधि रूप बनावे ॥ सन्निपात होय दुष्ट नष्ट सो, परलय अंत दिखावे ॥३॥ विषय विकार जगत अरुझावे, जहाँ तहाँ भटकावे ॥ योग ध्यान विग्रुचंन भारी, ताहि सुरति अटकावे ॥ ४ ॥ आस नाम नौका बैठावे, भवकी धार बहावे ॥ तत्त्वमसी कहि ताहि डुबावे, अंत कोइ नहिं पावे ॥ ५ ॥ चारि मुक्ति जोइन चौरासी, तेहि मिलि हेतु बढावे ॥ नेम धर्म पूजा औ संजम, बहुविधि लागि लगावे ॥६॥ भेष अलेख करे को पावै, जीवहिं चैन न आवे ॥ चार वेद षट अष्टदशों लों, शून्यहि शून्य समावे ॥ ७ ॥ काल चक्र बसि उत्पत्ति परलय, जीव दुसह दुख पावे ॥ साहेब दया कीन्ह परखाये, रामरहस गुण गावे ॥८॥९॥

दोहा ।

सुख साहेब सुखरूप जो, हरन कालके पीर ॥ जो जन आवे शरणमें, परखि लगायउ तीर ॥१०॥ करुणार्णव कृपाल गुरु, सुखनिधान दुखभूर ॥ बन्दीछोर अशरण शरण, परख प्रकाश निजमूर ॥११॥ जीवनके दुख मेटिया, परखाये सब जाल ॥ ताते गुरु तुव नाम

यह, बन्दीछोर दयाल ॥ १२ ॥ अशरण शरण नाम तुव, बरणत हैं सब संत ॥ ताते गुरु न विसारिये, परखायो जीव भ्रांत ॥ १३ ॥ जो गुरु बसे बनारसी, शिष्य समुन्दर तीर ॥ बिसराये बिसरै नहीं, जो गुण होय शरीर ॥ १४ ॥ गुरु उपमा क्या दीजिये, पटतर नाहीं कोय ॥ पलक पलक करूँ बंदगी, छिन छिन निरखों सोय ॥ १५ ॥ जो तू चाहे मुझको, छोड सकलकी आस॥ मुझही ऐसा है रहो, सब सुख तेरे पास॥१६॥ साहेब दीनदयाल गुरु, सो पर और न कोय ॥ शरण आय यमसे बचे, आवा-गवन न होय॥१७॥ दयाकरन अवगुण हरण, तारण तरण उदार ॥ अशरण शरण बन्दों चरण, तुम विन नहिं निस्तार ॥१८॥ देखि अधमता आपनी, परवश यमके हाथ ॥ त्रसित गहेऊँ साहेब शरण, भवभय हारि सनाथ॥ १९ ॥ प्रभु सब लायक पारखी, हौं भर्मिक अज्ञान॥ लोह कनक पारस करे, साहेब शरण समान ॥ २० ॥ बन्दों चरण सब दुख हरण, प्रभु प्रसाद दुख भूरि॥ दयाकरी सब दुख हरी, संसृति शूल भौ दूरि ॥ २१ ॥ बहे बहाये जात थे, भव सागरके माँहिं ॥ दयाकरी परखाय सब, शरणाये गहिं बाँहि ॥ २२ ॥ संतत अभय गुरुकी शरण, सदा परख परकास ॥ शमन सबै भव जाल तम, रामरहस सुखबास ॥२३॥ सर्वोपरि गुरुके चरण, जो हारी भव खेद ॥ परम उदार सागर दया, थाह न पावे वेद ॥ २४ ॥ चारि वेद जग विदित हैं, ब्रह्मा कीन्ह प्रकास ॥ चारि रूपसो जानिये, चारि अवस्था भास॥२५॥ भास मिटावे जीवको, काटे यमके फंद ॥ साहेब दीनदयाल गुरु, संशय खंडे द्वंद ॥ २६ ॥

छन्द.

साहेब स्वतः प्रकाश पारख, त्रास नहीं यम दंडके ॥ बास शरण बिलास तजि, सब आस पिंड ब्रह्मांडके॥ गांस फांस मिटाय दास, हुलास ज्ञान अखंडके ॥ नहि नाश ते इतिहास सुनि, सो आदि अंत प्रचंडके ॥ यम हंत एक अनंत, तेहिके फांस बहु वर्णतके ॥ बहु जंत गाई हरंत, कूप पतंत बहुते गनंतके ॥ सब दास होई रहंत, दुष्ट परंत चीन्ह न कंतके ॥ आदि अंत जे सुनहि संत, नहिं धावहि सो बेअंतके॥ जीव हाल कीन्ह बेहाल, काल कराल सुनि अवजालके ॥ डरसाल अनेकन्हि भाल, सो बाचाल कवितन गालके ॥ तेहि टाल डाल प्रचंड होहु, निहाल नाल कृपालके ॥ लहू परख माला माल भेटि, भव जाल शरण दयालके ॥ यह बुदबुदा जो शरीर, नीर न थीर झूठाहीरके ॥ परपंच बहु ततबीर, तेहिके बीर डबरे हीरके ॥ तजु ललनि कीर फकीर, जेहि डर नहिं वजीर अमीरके ॥ गुरु पीर हरे भवभीर, अभय गंभीर शरण कबीरके ॥ नारदादि शुकादि लै, ब्रह्मादि सब जेहि गावहीं ॥ गाइ धाइ हेराइ, बारम्बार मन पछतावहीं ॥ जस जस जतन छूटन करहीं, भव बूड़े थाह न पावहीं ॥ सोई धार कठिन अंधार, ते गहि पार पारख लावहीं ॥ २७ ॥

दोहा —

संतत सुख है परखमें, साधन जतन बिनास ।
भूलि भटकि मति जाहु जिय, विविध कर्मके फांस ॥

अर्जनामा अष्टक -

हौं सेवक अज्ञान मोपर दया दृष्टि निहारिये ॥ बाल जानि कृपालु मोको सुरतिमें नहिं टारिये ॥ हौं निपट बुद्धि मलीन जगत आधीन मै ताते भयो ॥ जो होय तुव पद लीन सोई विपिन मन काहे न रह्यो ॥ १ ॥ यह जगत जाल कराल मोह

विशाल मोहि अछो लग्यो ॥ यह कनक कामिनि नाल देखि बैराग सब चित्तसे भग्यो ॥ नहिं काम हैं धन धाम सब बेकाम सपनासो दिखे ॥ पर चित छाडत नाहिं आसा काह भये बहु पढ लिखे ॥२॥ अब करत दास पुकार बारम्बार गुरु सुन लीजिये ॥ तुम सकल राग छुडाय दृढ बैराग मोको दीजिये ॥ तुव नाम पतित उधार मोते न पार कोइ दीन है ॥ अब बन्यो है जुग यार तुव आधार ताते कीन्ह है ॥३॥ बाने की लाज तुम्हारि परख विहारि सुख साहेब धनी ॥ मैं पतित हौं लाचार दास तुम्हार गुरु साहेब गनी ॥ अब दास पूरण कीन्ह बिनती सुनहु दीन उधारणा॥ मैं परचो हौं जग जंजाल माहीं मोहिं साहब तारणा ॥४॥

अष्टक–

सुख साहेब सुखरूप सुखघन दुसह दुख निवारणं ॥ पारखके प्रकाश कर्ता दीन जीव तारणं ॥ १ ॥ यह ब्रह्म जगको शोक सकलो धोक धर्म बिडारणं ॥ महा मोह कराल नाशक सकल भव भय हारणं ॥ २ ॥ यह वेद शास्त्र पुराण एक अनेक जालहि खंडनं ॥ झांई संधि औ काल भासिक दया धीरज मंडनं ॥३॥ एक जीवको अनुमान सब तोफान जग तामें फँसो ॥ सोई गाँस फाँस छुडाय निज पद पाय पारख दृढ ठसो ॥ ४ ॥ नहिं कल्पना अनुमान सो परमाण अब को कहि सके ॥ न प्रत्यक्ष पारख छोडिके यह वेद नाहक मरि बके ॥५॥ सुधि लेहु आप कृपाल तब सब जाल जीवन छूटिहै ॥ निज दास होय हुलास तबहीं भास सकलो टूटिहै ॥ ६ ॥ मैं चरण सेवक दीन तुम परवीण दाया कीन्ह हो ॥ मैं हीन छीन मलीन प्रभुजी बाँह गहिकी लीन्ह हो ॥७॥ बाँह गहेकी लाज पूरन शरन तुमको आज है ॥ नहिं औरसे कछु काज गुरुपद सकल सुखको साज है ॥ ८ ॥

अष्टक–भो दयाल जगत पाल कालजाल खंडनं॥ पाप ताप दहनहार दिव्य ज्ञान मंडनं॥ भवअपार कर्णधार पाकनाम अंकजं॥ चरण शरण देहि मे नमामि पाद पंकजं॥ १॥ सत्त प्रकाश चिदाभास नाम रूप अक्षकं॥ जगत ब्रह्म आत्म सर्व साक्षी आदि लक्षकं॥ दयाधीर युक्तयोग विशुद्ध नाम अंकजं॥ चरण शरण हि मे नमामि पाद पंकजं॥ २॥ हंसभूप परमरूप भुक्ति मुक्ति दायकं॥ दक्ष मक्ष रक्ष प्रभु सर्व संत नायकं॥ परीक्ष अक्ष निर्मलं विशुद्ध नाम अंकजं॥ चरण शरण देहि मे नमामि पाद पंकजं॥३॥ बिरह कलोल ब्रह्म गोल तत्त्वमसि छेदिकं॥ वेद विद्यातीत त्वं चतुर स्थान भेदिकं॥ त्वयंअक्षि साधु पक्षि शुद्धनाम अंकजं॥ चरण शरण देहि मे नमामि पाद पंकजं॥ ४॥ परख भान संत ध्यान षड पुटी विनाशिकं॥ आदि अंत मध्य नाना नेति भास भासिकं॥ कृपासिंधु शील इन्दु विशुद्ध नाम अंकजं॥ चरण शरण देहि मे नमामि पाद पंकजं॥ ५॥ विश्व चित्र तासु मित्र तत्पवित्र शासनं॥ शुचि पवित्र त्वं विचित्र सार शब्द भाषनं॥ करुणामय कवीर औ विशुद्धनाम अंकजं॥ चरण शरण देहि मे नमामि पाद पंकजं॥ ६॥ जोगजीत भौ अजीत न्याय नीति कारणं॥ ऋद्धि सिद्धि निद्धि दाता बिरद हस्त धारणं॥ सुखाब्धि दीनपालकं विशुद्धनाम अंकजं॥ चरण शरण देहि मे नमामि पाद पंकजं॥ ७॥ बुद्धि अंध ज्ञान मंद हीन छंद स्वष्टकं॥ पूरन दास भाषिते सु पाकनाम अष्टकं॥ त्वंप्रसादसुगमसर्व विशुद्ध नाम अंकजम्॥ चरण शरण देहि मे नमामि पाद पंकजं॥८॥

अष्टक–

मंगलरूप अनुपमपूरन नाम कवीर सो आप उदारा॥ मोपर दृष्टि दयाकरि हरेहु हौं अति बालक दास तुम्हारा॥ काम अपार महाबल भारथ देखतके मम चित्त डेरावे॥ कीजे कृपा उर

अंतरजामि सु संकटसे बहु जीव दुखावे ॥ १ ॥ लोभ महामद क्रोध उपावत होत अधीर बहू चित मेरो ॥ मोह महा ममता रजनीवत बारम्बार रहे नित घेरो ॥ एक उपाय अहै बचवे अब होहु दयाल दयाकरि हेरो ॥ काह कहूँ कछु आप छिप्यो कहँ हो प्रभु नाथ अनाथन केरो ॥ मो कह तात तुही पितु मात सु और उपाय नहीं कछु मोही ॥ जो सुत मातुपिता ढिग आवत तो वह मातु सो दृष्टि न जोई ॥ तो पुनि लोटतपोटत अंगनलेत उठाय दयाकरि वोही ॥ त्यों गुरुदेव कबीर कृपाल सु हौं एक आश शरणगति तोही ॥३॥ दासको संकट देखि दयानिधि ह्वै करुणाकर आतुर धायो ॥ इन्द्रमती जब टेर कियो प्रभु जाय तहां वह पीर मिटायो ॥ बांधत सेतु सहाय कियो प्रभु रामहु केर उपाय बनायो ॥ कौन सो संकट मोहि गरीबको जो तुमसे नहिं जात छुड़ायो ॥४॥ जाय पुरी पुरुषोत्तमके प्रभु देकर दंड समुद्र हटायो॥ विप्रनके अभिमान महाप्रभु तोरनको बहु रूप दिखायो ॥ वे भये दीन परे चरणों तब चारिहुँ जाति सो एक मिलायो ॥ दास जहां जहां जो कछु टेरत ताकर होहु तुम बेगि सहायो ॥५॥ मो कह काहे बिसारत सामर्थ दीनदयाल कबीर उदारा ॥ आनँदरूप अजीत गोसाईं सु मोहमया सबसे प्रभु पारा॥ साक्षिस्वरूप अनूपम शोभित पारखरूप अकार तुम्हारा ॥ हौं अति दीन अधीन दुखी बहु मेटहु मोर अघोर अँधारा ॥६॥ यह बर माँगहु देहु दयाकरि अंतरजामि सुज्ञान प्रकासा ॥ बोध स्वरूप सदा निर्णय गुरु सो मनमें तुम होहु उजासा ॥ वेद पुराण कुराण जो गावहिं पार न पावहिं होहिं उदासा ॥ जापर मौज करो तुम साहेब सो पुनि हंस मिले तुम पासा ॥७॥ ये गुरु अष्टक पाठ करे नर आप सुने अरु ध्यान धरेंगे ॥ ह्वै सरधा अति प्रेमहुं पावत मारग चाल सुचाल चलेंगे ॥ ते नर पावहिं मुक्ति पदारथ

पाखँडरूप विकार तजेंगे ॥ होय सुखी लहि आनँदको पद सो भवसागर पार लगेंगे ॥ ८ ॥ ३२ ॥

घनाक्षरी:-

अजर अखंडरूपि, परम प्रकाशी देखो, सूर्यसे उजासी लेखो अतिहि सोहायो है ॥ ब्रह्म जग भर्म मिटि, झांई संधि काल नाशी, संशय सब चूर करी, धूरसी उड़ायो है ॥ वेदहु प्रमाण और बानीनके मत जेते, औरहु सिद्धांत सोतो, सर्व ले देखायो है ॥ सबहु जाने सोतो, सर्वहुसे न्यारो रहे सोई गुरुरूप निज, पारख लखायो है ॥ ३३ ॥

दोहा-बारों तन मन धन सबै, पद परखावनहार ।
युग अनंत जो पचि मरे, बिन गुरु नहिं निस्तार ॥३४॥

श्लोक-ध्यातं सतगुरुश्वेतरूपममलं श्वेतांबरं शोभितं ॥ कर्णैः कुण्डल श्वेतशुभ्रमुकुटं हीरामणिर्मंडितं ॥ नाना माल मुक्तादि शोभित गला पद्मासने संस्थितं ॥ दयाब्धि धीर सुप्रसन्न वदनं सतगुरु तन्नमामि ॥ ३५ ॥ द्वै पदं द्वै भुजं प्रसन्न वदनं द्वै नेत्रं दयालं ॥ सेली कंठमाल ऊर्ध्व तिलकं श्वेतांबरी मेखला ॥ चक्रांकित शिर टोप रत्न खचितं द्वै पंच तारा धरे ॥ वंदे सतगुरु योगदण्ड सहितं कबीरं करुणामयम् ॥ ३६ ॥

दोहा-बंदनीये गुरु परखको, बारबार कर जोर ।
दयाकरण संशय हरण, संतरूप प्रभु तोर ॥३७॥
बंदीछोर कृपालु प्रभु, विघ्न विनाशक नाम ।
बंदे सन्मुख पारखी, शीस भेंट धरु हाथ ॥३८॥
अशरण शरण बंदौं चरण, सब बिधि मंगल धाम ।
बचन उचारो बंदगी, सत्य प्रेमके साथ ॥ ३९ ॥

(सब सेवक तथा साधु मिलके महंतोंकी बंदगी करनेके पश्चात् सब मिलके महंतोंकी आरती करना)

आरती शब्द ॥ आरती हो गुरु आरती हो ॥ आरती गरीब निवाज, साहेब आरती हो ॥ टेक ॥ ज्ञान अधार विवेककी बाती,

सुरती ज्योति जहँ जाग ॥१॥ आरती करूँ सतगुरु साहेबकी, जहां सब सन्त समाज ॥२॥ अरस परस बहु आनँद भयो, टूटि गये सब यमके जाल ॥३॥ साहेब कबीर संतन कृपासे भयो परखपरकाश ॥४॥

उपरान्त सब साधु तथा सेवक खड़े होकर सतगुरुकी प्रार्थना स्तुति करना। दोहा-

दास जानि निज आपना, विनती सुनिये मोर। बिनवतहौं कर जोरिके, गुरु शरणागत तोर ॥१॥ काम क्रोध मद लोभमें, निज मैं रहों भुलाय। दीन दास प्रभु जानिके, लीजे बन्दि छुड़ाय ॥२॥ मम दृष्टि महा मलिन है, खानि बानिके बीच। दया करी गुरु बोधिये, मोहि अधम अति नीच ॥३॥ काल जाल बहु फेरमें, परचो मैं निपट गँवार। शरण आयकी लाज है, साहिब लेहु उबार ॥४॥ मन बच कर्म सु साधुसे, टूटे ना मम नेह। बन्दीछोर यहि दीजिये, वरदान सदा अछेह ॥५॥ साहेबके दरबारमें, कमी काहुकी नाहिं। बन्दा मौज पावै नहीं, चूक चाकरी मांहि ॥६॥

गुरु स्तुति। छन्द।

गुरु दुखित तुम बिनु रटहु द्वारा, प्रगट दरशन दीजिये ॥ गुरु स्वामी या सुनु विनती मोरी, बलि जाउं बिलम्ब न कीजिये॥ गुरु नैन भरी रहत हेरों, निमिष नेह न छांड़िये॥ गुरु बांह दीजे बन्दिछोरसो, अबकी बंद छुड़ाइये॥ विविध विधि तन भयेउ व्याकुल, बिन देखे अब ना रहौं॥ तपत तनमें उठत ज्वाला, कठिन दुख कैसे सहौं॥ गुण अवगुण अपराध छिमा करि, अब न पतित विसारिये॥ यह विनती धर्मदास जनकी, सत्य पुरुष अब मानिये ॥ ७ ॥

श्लोक-न गुरोरधिकं तत्त्वं न गुरोरधिकं तपः॥
गुरुज्ञानात्परं नास्ति तस्मै श्रीगुरुवे नमः ॥ ८ ॥

इति बुरहानपुरी संज्ञासुमिरन।

इतिश्री कबीराश्रमाचार्य परमार्थी वैद्य भारत पथिक स्वामी श्रीयुगलानन्द विहारी निर्मित कबीरपंथी शब्दावली अन्तर्गत संज्ञा-सुमिरन समाप्त शुभम्॥

सत्य

सत्यसुकृत आदि अदली अजर अचिन्त पुरुष
मुनीन्द्र करुणामय कबीर सुरति योग
सन्तायन धनी धर्मदास की दया
सर्व सन्त महन्तोंकी दया।

कबीरपंथी शब्दावली।

दूसरा खण्ड-स्तोत्र दर्शन।

अथ सन्ध्यावन्दन स्तुति।

(कबीरभानु प्रकाशसे छन्द शिखरणी।)

कबीरं भानं भाकर निकर ज्ञानं विधि मयम्। परस्थाने थीरं जगत गुरु पीरं निधिनयम्॥ महातेजो राशं वदन वदनाशं नृप नृपा। प्रतापं तापं ता दनुज दल दापं तव कृपा॥ १॥

तरंतं तारंतं लहत जन सारं वसुमति। महत्त्वं पारंतं अकथित अनन्तं पशुपतिं॥ सुराधीशाधीशं हिय तिमिरि पीसं जगजगे। भवं भावं भङ्गं रतिर करुणामयं पगपगे॥ २॥

जनं कंजं रंजं दरस भ्रम भंजं सतहितं। निहारं हारं हा तिमिर हर पारं गत छितं॥ सती सूतं सातं बिलग बिलगातं दिनकरा। यती भोगं भागं गत विगत भागं किंकरा॥ ३॥

प्रजा पीडा ब्रीडा धन तिमिर क्रीडा महिमहा। हतं मुद्रा निद्रा शम दम न क्षुद्रा गति महा॥ सतो संगं रंगं बसतव प्रसंग भसकरा। उमंगं अंगं एक समय अनंगं बसकरा॥ ४॥

नमस्कारं कारं क्रमर क्रम कारं ककक्रुते। बंबं बंदे बंदे भनत भव फन्दे बब बृते॥ रमं रामं रम्यम् रटत रर कल्याण करनम्। परणम्यं तौ पीष्ठे परं परमीष्टे त्रय वर्णम्॥५॥ इति शिखरणी छन्द।

अथ कबीर भानु वियोग सवैया ।

सतनाम ब्रतीवर संत सती, दिन अन्त भयो भगवन्त पयाना। युगनैन महासुख दैन दुरे, धरि धीर धरो पद पंकज ध्याना ॥ दृढ़ इन्द्रिन दौनते मौन गहो, थिर आसन हो अनुसासत माना। यह संधि सचेत सतो गुणते, सतधार हिये सतरूप समाना ॥१॥

तुमरो जन तू चकई चकवा, गहि शोक वलंभ वियोग भयेते। सजनी रजनी दुर जीव डरै, हरिके हरिके हरिके अथयेते॥ बृषभाल कराल सुखेन फिरे, भय भूरि भई प्रभु दूर गये ते। वन वारिज सन्त यकन्त गहे, सकुचे मिलि हेरि जो घेरि लियेते ॥ २॥

सम सम्पति सौच करी रकरी, दम कम्पत भये जब तूट करी है। गुण ज्ञान थने बन बाग बने, फल फूल भरे तरु तोर धरी है॥ घन घोर निशा मति भर्म कियो, शुभ धर्म लिये दुर्बुद्धि भरी है। जग जीवहि आलस निन्द गही, सबही कहँ लागि मसान मरी है ॥ ३ ॥

कोइ शीलवती युवती जगमें, जिन पीठपिछार पिया व्रत पाला। जिहिं धर्म अडोल अदाग सदा, गिरिनिश्चल सो न सुमेरु सो हाला। निजु पीय सो पीय पतिव्रतके, जगमें सब और नपुंसक माला। जिमि पीठ दिखाई चले जनको, इमि आइ तु दीठ दिखाव दयाला ॥ ४ ॥

पल नैन ढका जब पावत है, तब डंसत है यह नागिन कारी। दृग झंपन होय सचेत रहौ, सुचि सन्त स्थान समाधि सम्हारी॥ पलके पल गाफिल पावत ज्यों, यह डंक तुरन्त तेही पल मारी। शुभकर्म क्रिया सब भ्रष्ट करे, भवसागर माहिं डुबावन हारी ॥५॥

यदि कज्जल गेह न उज्ज्वलता, विनु दाग बचे कोई नाम सनेही। जेहि ओर कबीर कृपाल दुरे, तिहि काल निहाल भये

कछु तेही ॥ तम त्रासक ध्यान धरो उधरो, सुधरे सुधि बुद्धि दया दृग जेही । गुरु देव बिना निशि नाश नहीं, विश्वास करो एक युक्ति है एही ॥ ६ ॥

यह नींद सही है महा ठगनी, छनमें धन जोबन वृन्द बुहारी। गहि गोड जती नहिं छोड मती, छलि साधुकी सम्पति लूटन हारी । सजि कण्ठको वेष न देखि परे, इमि आई है ओढ़िके कामरि कारी। यह है न नहीं कमरी पसरी, गठरी धनकी बांधि सँवारी ॥ ७॥

हरि नाम चरित्र पवित्र महा, मुक्तामणिके वन देत दवारी। घन घोर घरै नहिं सूरि परै, धरि वज्र कपाट सुज्ञानकी द्वारी॥ रिधि सिद्धि जहां लगि लाभ कहै, इन सर्व गहे ठगनी छल कारी। नहिं कूछ रहा इन छूछ कियो, यहि कान भये ऋषिराज भिखारी ॥८॥

मनते भुख भूख अहार गहै, व अहार ते नींद सो कालकी फांसी। यम दण्ड प्रचण्ड यही है यही, करसो सतखण्ड सो ज्ञान की रासी ॥ नहिं शुद्ध स्वरूप लखे हरिके, धरि अन्ध कियो धर्मरायकी दासी। यदि जाल फँसायके काल हते, सब जीव बने भवसागर वासी ॥ ९ ॥

नहिं चेत रहा दुख देत महा, हरि हेत कहा दुर्बुद्धि बड़ी है। पिय आगु खड़े नहिं चीन्हि पड़े, दृग सन्मुख कन्धकी सन्ध पडी है॥ तजि राम हरामके काम लगे, चुहडी फुहडी जब आन अडी है। सुमती हरिगै कुमती भरिगै, यम सेल हिये बिच ठेलि गडी है ॥ १० ॥

मन रौन जो भौनते गौन कियो, तमसी तमसी तमसी तम ठोने। अति प्राण अधार अधार विना, विलपात अधीर धराधर कोने॥ यहि बैरिन पैरिन संग लिये, पहुँची विरहा विष बेलको पोने। सुख साच बिहाय अकाज भयो, नियरानि सुभाग सुभागि निधोने ११॥

उह डोलत संग पिछार सखे, ढिल अंग लखी गठरी गहि भाजी। हुशियार हो संत सुजान सुनो, पलही भरमें वह मारत बाजी ॥ गठि कण्ठ लिये फँसरी करमें, सिद्ध साधुनके गल डारत पाजी। सत धर्म नशाय खँसाय लियो, तब नेक डुबावनको सज साजी १२

जबलों तन प्यार न प्यार पिया, तन आस तजे पिय खास सही है। नहिं मैं तब तू जब मैं नहिं तू, रह एक विवेककी टेक सही है ॥ जहँ राम न दूसर काम तहां, रवि रैन यकत्र न होत कही है। जब प्रीति गही तहिये गहिरी, कुल कानि कहां सुलतान वही है ॥ १३ ॥

जिमि चुम्बक लोहसे मोह करे, जलहीन भई जस मीन दुखारी। अलि अम्बुज प्रीति न बीति कभी, पपिहा लपिहा सुख स्वातिकी बारी। जिमि चन्द चकोर यकोर लखे, सिख दीपक रंग पतंग निहारी। यहि राह न नाहसे नेह लगी, नहिं आशिक है वह फाँसिक यारी ॥ १४ ॥

दृगपूरति नींद हराम भई, धनि लेत उसासहि बारहिं बारा। तन पीत भयो कृश गात भयो तृस बात भयो लघु भोजन धारा॥ अधरा पट सूख तृषा हियमें, नहिं जो पिय रूप पियूष निहारा॥ गुन गान सदा हिय ध्यान धरे, बिरहिनके यह दश चिह्न उचारा १५

पथ देव अकाश नहीं जन है, असमान लियो निज पाग उतारी। पसराय दियो सगरे दुगरे, गुरु खाट निहारत पांव दे डारी ॥ बिखराय सबै मणि माणिकको, विरती बलि बैठि यती व्रत धारी। दिन भूषण ध्यान धरे मुनिहा, दुख दूखन पूषन पेखन टारी ॥ १६ ॥

कहुँ चोर चकोर रु चन्द बधू, विगसात अनन्द उलूक लही है। कहुँ बादुर बीर बहादुर भय, दुख दायक जंतु अनंत मही

है ॥ कहुँ जोत खद्योत उद्दोत भई, मनमें अपने अभिमान गही है । निसि डाट कहे मम तेज लखो, रविते हमरो कछु घाट नहीं है ॥ १७ ॥

सखि काह करो पिय दूरि गये, हिय पूरि गये विरहानल कैसे । मन भावन जासु विदेश गये, धृक जीवन है तिनको जग तैसे ॥ प्रभु वेगि कृपाकरिके सुधि लो, तुम दीनदयाल कहावत जैसे । पतिया पहुँचाव बसीट मेरी, अरु बांचि गुनावहु पिया ढिग ऐसे ॥ १८ ॥

विनय पत्रिका ।

दनुजा मनुजा महराज महा, सुर संत सती सिरताज कहाओ । जन दीनबन्धु हौ सिन्धु दया, हृदय थलको मलको श्रुति गाओ ॥ सब मूल सोई नहिं तूल (तुल्य) कोई, गुण-सागर नागर कौन थहाओ । हमरी करनी सुधि ना करनी, दुःख द्वन्द विदार दिदार दिखाओ ॥ १९ ॥

सुरती दूती प्रति ॥

मम पायक शोक सहायक तू, सुरती कुरती पिय पाहँ पधारो । करजोरिके पा गहियो प्रभु को, कहियो तेहि कोटि प्रणाम हमारो । जब कंत दुरंत संदेशे सुनो, निज प्राण निछावर ताछन कारो । इमि ले अर्जी कर दूति चली, वरजी विरहा वर ध्यान को धारो ॥ २० ॥

पिछली रातका विरह । दोहा-

यहि निश्चय कै नखत गण, अपने अपने ढंग । भय भ्रम हटै न दुख मिटै, होय न तिमिर विभंग ॥ १ ॥ करुणामय करुणु निरखि, हरखि चितोनन ओर । सुखपावे मुख देखि हरि, होय विरह निसि भोर ॥ २ ॥ आवन आवन कहिगये, अजहुँ न आये लाल । धावन फिरा न पिउ फिरे, भामिनि हाल विहाल ॥ ३ ॥

सवैया–

दृग मानसरोवर नन्दननिमें बिबि मीन फिरै कहि कारनते। जबते रतिनाथ विछोह भयो, मनके विरहानल जारनते॥ प्रभु दीन दयाल दया करिये, विन्ती सुनि लाख हजारनते। करुणाधर धार हिये करुण, पति या पतिपाह सकारनते॥ १॥

उनमाद उचाट भये मनमां, उदवेग न चाट सिंगारनते। नित लेत उसांस है आस लगी; तन छीन भयो मन मारनते॥ गुण गान प्रलाप कलापनते, तन तापत ताहि विचारनते। पलना विसरे ललना सुरती, मूरति हरि हीय सँभारन ते॥ २॥

जग जान जहान उधारन हो, कलि कायर कूर उधारन ते॥ गनिका मनिका कह फेरत है, मोहिं सों कपटी भव तारनते॥ प्रभु नाम जहाज तरी लदके, छनमें जगती जिव भारनते। न मिले पिय नेह कवीर विना, विधि मीन फिरे यहि कारनते॥ ३॥

सोरठा।

निशिदिन साले घाव, नींद मोहिं आवे नहीं।
पीय मिलनकी चाव, सो नैहर भावै नहीं॥ १॥

सवैया।

उर सालत घाव दिना रतिया, धरके छतिया नहिं चैन लई है॥ सुख भूरि भरा तृण तोरि धरा, भल भोग सबै दुख रोग गई है॥ पिय आजइ काल कहे परसों, बरसों बरसों नहिं भेंट भई है। मन मोहन मोहन मोह दई, विन दर्द दई दिन सर्द दई है॥ ४॥

जिनके चित चिन्त खचिन्त भयो, उर अन्तर ज्वाल निरंतर जारी। तन टट्ट रहे मन भट्ट दहें नित सोचन पोखन खोचन भारी॥ तिय साधु मती निमती विधिको, झुखै पुखे किमि आस हमारी। यहि औसर चौसर खेलहुँगी, तनहू मनहू धन दावपै धारी॥ ५॥

हरि नेरे अहों किधौं दूर कहूँ, भरि पूर हजूर हो नैनन मेरे। हिय ठाहर हौ किधौं बाहर हौ; धरती अस्मान तुही तुहि टेरे ॥ गलि गोरिनने तरुतोरिनमें जड़ साखन फूलन पातन हेरे। मोहिं समाय लखाय नहीं, कहु कौन उपाय गहौं पद तेरे ॥ ६ ॥

हमसूं किधो भिन्न किधो यक है, तू मुहिमें किधो मैं तुहि मांही। सब पूरन देखत तूहि तुही, किधु एक अहो धो अनेकन आही ॥ किधो स्वर्ग बसौ अपवर्ग किधो, निसिवासर वास किधो मोहिं पाही ॥ पिय आपै आप जो व्याप सही, किहि कारन तेदु विधा दरसाही ॥ ७ ॥

कहँ गोय रहे विष बोय रहे, नित मो मन मन्दिर माहि विहारी। विनु लालन बाल विहालपरी, वह कौन घरी जो हरी पग धारी ॥ सुखको नहीं लेश कलेश भयो कर, काह पिया परदेश पधारी। सपने अपने हरि भेंट भई, मुँह खोल लखे हग लोल लबारी ॥ ८ ॥

कबहूँ न पिया अपमान किया, किमि कै विधि बाम बिछोह करी है। लकुटी कर ले मोहिं मार कहूँ जनु, कांटकी मारहु फूल छरी है॥ दुर दूरि कह्यो दबि दूरि दुरा, जब टेर हरी तब पांय परी है। जिहि भांति से राखि रही त्योंहि त्यों, कछु भोग धरी तिहिं पेट भरी है ॥ ९ ॥

कह वीर करो तन पीर परो, किमि धीर धरो नहिं प्रीतम आयो। दिन रात कराहि कराहि उठे, विरहा दव दाहि जो ताहि न पायो ॥ हिय हूक परी कह चूक परी, विधना सिधना मम काम पुरायो। सुन हेरि भटू अब ठाट टटू, मति धूसर दूसर वेष बनायो ॥ १० ॥

सब भूषण भू छटकाय दियो, सतसङ्ग विभूतिले अङ्गन मेली।

शिर टोप दया है कोपीन हया, जपमाल कथा सतनामकी सेली॥
करमण्डल कर्म गहे करमें, चलि खोज पिया परिवारहिं पेली।
बनि योगिन वेष विरागिनसों, सुख दुःख सबै अपने तन झेली ११॥

हरिद्वार गया नहिं मेल भया, न बनारस माहिं बनारस पीना।
मथुरा न अवध न द्वारदरी, ददरी बदरीवन मक्का मदीना। न
प्रयाग न पुष्कर थान जिया, भलछान किया सो पिया है कहीना।
सब अरसठ भर्मत भर्म भरी, कछु हाथ नरी निज नाथ न चीना १२॥

गिरिनारन पैठि पहारनपै, ऋषिराय अखारन जायके जोही।
सुनसान परो चवगान थरो, दुख दून करो तिहिं जूनमें ओही। केहि
पूछों अबै लखि छूछौ सबै, कोय पीय बतावहु बाट बटोही। सब
खोज थकी पिय प्रेम छकी टरी, काहू जो नाट मिले अब मोही १३॥

तब पैठि गुहा हरि ध्यान गहा, दम संयम नेम तपोधन भारी॥
जप योग अचार विचार घने, हठ योग ठने दृढ़ लावहिं तारी॥
नभ जायके देखत ज्योति जगे, छबि छाई है मोतिनकी लर झारी॥
तनको कसिकै मनको वसिकै, षट चक्रको बेध चढी है अटारी॥ १४॥

चढ जाइ अटा गढ छाय छटा, नहिं चित्त उठा निजहित्त न हेरो।
जब और न दौर रही कतहूँ, मतहू पतहू गतहू गतगेरो॥ परि पाप
विनय सतभाय करो, शरणागत माँगत हौं प्रभु तेरो। अब आन
उपाय उपाय कहा, नहिं पायहिं पाय थका इहि मेरो॥ १५॥

हाहरि पान शरीरमें बेधत, सीर समीरहु तीर सो लागे। हे हरि!
चन्द्र समी शर मारत, मानहु आगि लुकारन दागे॥ हे हरि
धन्य सुभाव सुभागिन, सोच रही बिरही नित जागे। हे हरि सो
सुखसे किमि सोवत, दुःख सोहागिनि जो पति त्यागे॥ १६॥

हे हरि आजु कन्हाई नहीं ग्रह, ग्रीषम ताप सो लाग जु न्हाये॥
हे हरि ई निसि नागिन डंसत, पीव विना जीव कौन बनाये। हे हरि

नैन तृषा जल पूरित, सिन्धु स्वरूप बिना न अघाये। हे हरि पातहुको खरका सुनि, जानि परे हमरो हरि आये॥ १७॥

विलपात बिते दिन रात सबै, ढिलगात अनेक जो आँख झपाई। कोइ स्वप्नमें द्वार पुकार कहै, सुनु बाल लला तब द्वारपे आई॥ जब आंखि उघारनको करके, करके शुभ अङ्ग सगून लहाई। हरषे दुख दोसरके विरहा, हरिके हरिके सुनि आगम पाई॥ १८॥

अब आवन आवन होय रह्यो जिहि, बार विलम्ब मेरे घर ऐहैं। सुख सम्पति दम्पति देखतके, सुर नायकहू मनमाँह सिहै हैं॥ हरि छूत विभूत भरी लभरी, कन धूलहु धूम न दूसर सैहैं। तिहुँ लोक पलोक विलोकन सो, धन धान्य न धाम धन दुर पैहैं॥ १९॥

अजहूँ नहिं दूति सँदेश दियो, मनै माहिं अँदेश यही खटको। इतने महँ धावन आइ गयो, अब साज सिंगार सबै ठटको॥ कछुवारमें आनि पहूँच पिया, धनि और नहीं मनमें भटको। सुनिके पिय आगम मोद महा, मग जोह सँताप घटा घटको॥ २०॥

कवित्त-

नैन मनि प्रवाह, सरितावलि अगाह, सागर सरूप हरि मिलन ललकमें। ठहरे कौन कौन विधि, पाये विनवार निधि, मिलनि निहाल भई पलकि पलकमें॥ चरनामृत परचो आनि, सुख घन भरी ज्ञान, गुन छन बुन्दकी छलकमें। प्रीतम प्यारे पग लागि, पड़े भागजागि, पदरज सज निज आंखिन अलकमें॥ १॥ इति।

ध्वनि इमन (समय ८ बजे रात्रि.)

अब दुख दीनानाथ निवारो। तव पद तजि त्रिलोकमें दीसत, मोहि न और संहारो॥ टे०॥ थाह रहित अपार भववारिध, अगम अगाध किनारो। मध्य धारमें नैया अटकी, खेयके पार उतारो॥ जहँ २ परति विपति सन्तनको, तहँ २ आप सिधारो।

१ नाश करो. २ अवलम्ब. ३ अपार. ४ अड़गई. ५ संकट. ६ पधारे.

ऐसे कौन ? मोर पातक हैं, जो तुम पांव पसारो। यह नहिं नई रीति प्रभु जो एक, मोहिं अधमको तारो[1]। युगन २ से अधम उधारन, विदित है नाम तुम्हारो॥ धर्मदास विनवैं[2] करजोरी, तुम निज बिरंद[3] विचारो। मेरे अवगुन[4] त्यागि दयानिधि, अपनी ओर निहारो[5] ॥ ३२ ॥

देश ताल त्योरा।

(समय १० बजे रात्रि)

मायामोहनी मनहरन। भोगिया सब पीसंडारे[6] योगिया वशकरन ॥ टे० ॥ चञ्चल चाल[7] विशाल लोचन[8], सबल[9] शायक[10] धरन। कामबान बिलोकि मारचो, रूप नाना वरन[11]॥ भृकुटि भंङ्ग[12] प्रसङ्ग[13] चहुँदिश, अनल लागी झरन[14]। ज्वाल झाल करालमें[15], सब जीव लागे जरन॥ सुर असुर[16] नर[17] नाग किन्नर[18], त्रसित लागे डरन। मझे[19] धार झकोर[20] बोरै[21] देत नाहीं तरन॥ काम क्रोध कठोर तृष्णा, शोक सागर भरन। कहैं कवीर कोइ भागि बाचे, अभय सतगुरु शरण ॥ ३३ ॥

गुरुसम और कौन? कृपाल। परखपद परखाय मेटचो, सकल भव भ्रम जाल ॥ टे० ॥ जरत जेहि वश सुर असुर सब, प्रबल माया ज्वाल। वरषि अमृत ज्ञानघन प्रभु, शमन कीन्ही झाल॥ द्रोह मोह अपार तृष्णा, धार अति विकराल। बहत जीवन पार कीन्ह्यो, मेटि सब जंजाल॥ दलन दल दारुण दुसह दुख, दीनबन्धु दयाल। चरण रज अज गरुडध्वजहर, तिलक कीन्ह्यो भाल॥ ध्यान सुन्दर मृदुल मुदमय, अघहरण ततकाल। भवसमुद्र कवीर तारण, गुरु सेतु विशाल ॥ ३४ ॥

---

१ पार करो. २ प्रार्थना करते हैं. ३ कीरती. ४ अपराध. ५ देखो. ६ चूर्ण किया. ७ गति. ८ नेत्र ९ बलवान्. १० बान. ११ प्रकार. १२ प्रहार. १३ प्रभाव. १४ वर्षा होना. १५ भयंकर. १६ राक्षस १७ श्रेष्ठ मनुष्य. १८ एक प्रकारके देवता. १९ वीच. २० हिलोरा देकर. २१ डुबोवे.

मोरि मान कही मूरख गँवार। है मनुष जन्म नहिं बारबार॥ तजु काम क्रोध तृष्णा अपार। भजु निर्विकार सतनामसार॥टे०॥

(१) अपारे संसारे कथमपि समसाद्य नृभवम्। न धर्मं यः कुर्याद्विषयसुखतृष्णातरलितः ॥ व्रजन् पारावारे प्रवरमपहाय प्रवहणम् । स मुख्यो मूर्खाणामुपलमुपलब्धुं प्रयतते ॥ १॥ रे ! मूढ तोहिं नहिं तनक लाज। गहे विषय उपल तजि गुरु जहाज॥ तेहिपर चढि उतरन चहत पार। भजुनिर्वि० (२) आयुर्वर्षशतं नृणां परिमितं रात्रौ तदर्धं गतं ।

तस्यार्धस्य परस्य चार्धमपरं बालत्ववृद्धत्वयोः ॥ शेषं व्याधिवियोगदुःखसहितं सेवादिभिर्नीयते । जीवे वारितरङ्गचञ्चलतरे सौख्यंकुतः प्राणिनाम् ॥ २ ॥ दुखरूप सकल यह है प्रपंच। नहिं तीन काल सुख जानु रञ्च ॥ ताते तजु यह सब लखि असार । भजुनिर्विकार सतनामसार ॥ (३) आदित्यस्य गतागतैरहरहः संक्षीयते जीवतं व्यापारैर्बहुकार्यभारगुरुभिः कालो न विज्ञायते । दृष्ट्वा जन्मजराविपत्तिमरणं त्रासश्च नोत्पद्यते पीत्वा मोहमयीं प्रमादमदिरां उन्मत्तभूतं जगत् ॥ ३ ॥ वरणाश्रमको अभिमान धार । नहिं करत आतमाको विचार ॥ यह मूल

१ विष्णु (१) अर्थ–अपार संसार में किसी प्रकार से मनुष्यजन्मको पाकर, जो पुरुष धर्म नहीं करता और विषयसुखकी इच्छामें तत्पर है, वह पुरुष जैसे समुद्रके पार (किनारेपर) जानेवाले श्रेष्ठ नावको त्याग कर पत्थरको पकड़ने का प्रयत्न करता है सो महा मूर्ख है ॥

(२) अर्थ–प्रथम तो मनुष्यकी आयुष्ठ काही प्रमाण सौ वर्षका है, सो–तिसमेंसे आधे पचास वर्ष रात्रिके सोनेमें व्यतीत होते हैं. अब शेष जो बचे पचास वर्ष, तिसके आधे पचीस वर्ष रहे. जिसमेंसे कुछ तो प्रथम बालपनके अज्ञानमें और कुछ पीछे वृद्धावस्थामें बीत जाते हैं, अब बाकी रहे पचीस वर्ष, तिसमें व्याधि वियोग, दुःख, पराई सेवामें लग जाते हं. बस ! यह व्यवस्था तो यदि सौ वर्षका जीवन हो तिसकी है किन्तु मनुष्यका जीवन तो केवल जलतरंगवत् अनियमित है, अब कहिये प्राणियोंको सुख कहां ? ॥

(३) अर्थ–सूर्यके उदय अस्त होनेसे आयुष्य दिन प्रति दिन घटती जाती है, तथा अनेक बडे २ व्यापार समुदायके कार्यमें लगे रहनेसे, यह भी नहीं ज्ञात होता कि मेरे आयुष्यका कितना काल व्यतीत हो गया है और जन्म, वृद्धत्व, विपत्ति और मरणको भी देखकर नहीं डरता इससे यह निश्चय है कि, संसारमोहरूपी प्रमाद मंदिराको पीकर बावला हो रहा है ॥

अविद्याको विकार । भजुनिर्विकार ॥ (४) स्नातं तेन समस्ततीर्थसलिले दत्तापि सर्वावनिर्यज्ञानाञ्च कृतं सहस्रमखिलाः देवाश्च संपूजिताः ॥ संसाराच्च समुद्धृताः स्वपितरस्त्रैलोक्यपूज्योप्यसौ। यस्य ब्रह्मविचारणे क्षणमपि स्थैर्यं मनः प्राप्नुयात् ॥ ४ ॥ यह लोकलाज मर्याद फन्द । करि कर्म धर्म सब ह्वो स्वच्छन्द ॥ एक नित्य अनित्यको करुविचार । भजुनिर्वि० (५) यावत स्वस्थमिदं शरीरमरुजं यावज्जरा दूरतो । यावच्चेन्द्रियशक्तिरप्रतिहता यावत्क्षयो नायुषः ॥ आत्मश्रेयसि तावदेव महतां कार्यः प्रयत्नो महान् ॥ संदीप्ते भवने तु कूपखनन प्रत्युद्यमस्तादृशः ॥ ५ ॥ जिमि रङ्ग पतङ्गको नाशमान। त्यों यौवनको मद झूठ जान॥ नहिं बिगरत लागत तनक वार। भजुनिर्वि० (६) वृक्षं क्षीणफलं त्यजन्ति विहगाः शुष्कं सरः सारसाः । निर्द्रव्यं पुरुषं त्यजन्ति गणिका भ्रष्टं नृपं मंत्रिणः ॥ पुष्पं पर्युषितं त्यजन्ति मधुपा दग्धं वनान्तं मृगाः । सर्वं कार्यवशाज्जनोऽभिरमते कस्यास्ति को वल्लभः ॥ सुत मात पिता तिरिया अनूप । अति होत सुखी लखि मूढ भूप ॥ ये स्वारथके हैं दिना चार । भजु निर्वि० ॥ (७) विदलयति कुबोधं बोधयत्यागमार्थम् । सुगतिकुगतिमार्गौ पुण्यपापं व्यनक्ति । अवगमयति कृत्याकृत्यभेदं गुरुर्यो।

(४) अर्थ-जिसका मन क्षणमात्रभी आत्मविचारमें स्थिरताको प्राप्त हुआ है, उसने मानों संपूर्ण तीर्थोंमें स्नान कर लिया, समस्त पृथ्वीका दान कर चुका, अनेक यज्ञकर चुका, तथा सर्वदेवताओंका पूजन कर चुका, अपने माता पिताओंको संसारसे उद्धार कर चुका और वही त्रैलोक्यके पूजने योग्य है ॥

(५) अर्थ-जबतक यह शरीर पुष्ट और आरोग्य है, तथा वृद्धावस्था दूर है और इन्द्रियोंकी शक्ति न्यून नहीं हुई, तथा जबतक आयुष्य क्षीण नहीं हुआ तबतक बुद्धिमान् पुरुषको उचित है कि,अपने कल्याणका यत्न अच्छी-तरह कर ले, नहीं तो जब घर जलने लगे तब कूप खोदनेके उद्योगसे क्या होता है ? ॥

(६) अर्थ-वृक्षको फलहीन होनेसे पक्षी त्याग देते हैं, सरोवर सूख जानेसे सारस, निर्द्रव्य पुरुषको वेश्या भ्रष्ट राजाको मंत्री, फूल झड जानेपर भ्रमर और वनको भस्म हो जानेसे मृग त्याग देते हैं, अतएव सब प्राणी अपने २ स्वार्थके कारणसे पास आते हैं, नहीं तो कौन किसका मित्र है ? ॥

(७) अर्थ-जो अज्ञानका नाश करि शास्त्रके अर्थका ज्ञान करता है सद्-असद् मार्ग तथा पुण्य पापको

भवजलनिधिपोतस्तं विना नास्ति कश्चित् ॥

सतगुरु कबीर गुणगण गँभीर । दुखहरण हेतु धारचो शरीर अति धीर वीर मति गति उदार। भजु निर्विकार सतनाम सार ॥ ७ ॥

सोरठ–समय १२ बजे रात्रि

बनँडो भलो रिझाँयोरी । मोरि सुरँति सोहाँगिन नवलँ बनी, साँहिब वर पायोरी। टे० ॥ लख चौरासी भटकत २ यह दिन आयोरी । ऐसो अवसर पाय गँमायो, तिन पछितायोरी ॥ ज्ञान को मंडप छाय युक्तिसे, श्रद्धा कलश भरायोरी। सार शब्द अनबेधे मोतियन, चौक पुरायोरी ॥ सत्यनामको मौर बँधायो, पँडलो प्रेम लगायोरी । पाँचपचीस सहेँली हिलमिल, मङ्गल गायोरी ॥ सतगुरुसे हँथलेवो जोडचो, भक्तिकी भाँवर खायोरी। सुर तैतिस बराती, ब्रह्मा वेद सुनायोरी ॥ भवसागरको फेरो मेटचो; परनिपाँति घर लायोरी ॥ प्रेमसहित एकचित हो, दुविधा दूरि बहायोरी । सत्यलोकमें अद्भुत मन्दिर, तामें पलंग बिछायोरी। धर्मिनको सतगुरु कबीर मिलि; तपन बुझायोरी २६॥

ननदी ! जावोरी महलमें, आपनो विरँन जगाव ॥ टेक० ॥ बिरन जगायो ना जगे, करौ मैं कौन? उपाव । घट अँधियारो हो रह्यो, लागि सकत नहिं दाव ॥ भरमके तालेमें सखी कुंजी सुमति लगाव। कपट किवीँरया खोलिकै, ज्ञानको दियँना जराव। ततको तेल लगायकै, तृष्णा केश गुथाव। भूषण पहिरि विवे-कके, निज शृङ्गार बनाव॥ शीलके रँग रँगवायकै, अँगियँा अङ्ग

बताता है, करने योग्य कर्म और नहीं करने योग्य कर्मको समझाता है सो गुरु है तिस गुरु विना संसार सागरसे पार करनेवाली कोई दूसरी नवका नहीं है.

१ दूल्हा. २ वश किया. ३ सुन्दर प्रीति. ४ सधवा. ५ सुन्दर दुलहन. ६ प्रभु.

१ विवाहके समय जो वस्त्र लाडी (दुलहन) को उढ़ाया जाता है २ सखी ३ पाणि ग्रहण ४ फेरा. ५ विवाह करके. ६ भाईको । ७ कूंची, ८ किवाड. ९ दीपक, दीवा. १० चोली.

कसाव । भक्ति चुनरिया ओढ़िकै यहि विध पियको रिझाव ॥ हृदय महलबिच सुन्दरी, प्रीतिको पलँग बिछाव । श्रद्धा सेज सँवारिकै, प्रियतमको बैठाव ॥ विनय बीजना[1] हाथलै, सनमुख पियके ढुराव । एकचित होय अभिमान तजि, चरणन शीश नवाव ॥ भलो बन्यो संयोग है, अवसर मती गँवाव । कहै कवीर कमालसे उठि मेरे ढिग[2] आव ॥

बिहाग । (समय २ बजे रात्रि)

देखो दुरमति यह संसारकी । हरिसो हीरा त्यागि हाथसे, बांधत मोट विकार[3]की ॥ टे० ॥ कोइ खेती कोइ बनिज करत है, कहूँ हौसं[4] हथियारकी । बहु धन्धेमें जन्म गमायो, सुधि[5] बिसारि करतारकी । देवी देव आराधत डोलैं, सुनि २ विप्र लबार[6]की । निज आतमको चीन्हत नाहीं, फूटी आंखि गँवारकी ॥ चलत कुमारग लाज न आवे, कहँ गयि बुद्धि विचारकी । अपने करसे निज गल फांसी, डारत मायाजारकी ॥ वारम्वार पुकार कहत हों, मोहिं सौ शिरजनँहार[7]की कहैं कवीर यह विनश जायगी, क्षणमें काया क्षार[8]की ॥ ३ ॥

कालिंगडा । (समय ४ बजे रात्रि)

सन्तकी महिमा[9] अपरम्पार[10] । सन्त और भगवन्त[11]में अन्तर[12], तनिक न देखु विचार ॥ टे० ॥ वेद पुराण भागवत गीता, कहत सकल निरधार[13] । सन्तसमान और कोइ नाहीं, अधम उधारनहार ॥ सन्तसमागम[14] सम कोइ तीरथ, और नहीं संसार । मज्जन[15] करत जन्मके पातक, कटत न लागै वार ॥ काम क्रोध मद मोह द्रोह तजि, गुरुपदके आधार[16]। रहत सदा सन्तोष धारि उर, परखिकै सार असार । महामलीन हीन मति पामर, अघ अव-

१ पंखा. २ पास. निकट. ३ प्रपंचकी गठरी. ४ उत्साह. ५ स्मृति. ६ झूठा. ७ परमात्मा. ८ धूल, मृतका. ९ माहात्म्य. १० अपार. ११ परमात्मा. १२ बीच. १३ निश्चय. १४ सतसंग. १५ स्नान. १६ आश्रय.

गुन आगार[1]। होत प्रवीन नीतियुत तिनके, सुनि उपदेश उदार ॥ जाघर सन्त दया करि जनि पर, आवत लेन अहार । ताघर दुख दारिद्र नाश होय, भरत अटलभण्डार[2] ॥ जो नहिं होते सन्त जगत्में, को अस करि उपकार ॥ डूबत आय करत जीवनको, भवसागरके पार ॥ कहि न सकत कवि कोविद[3] कोऊ, सन्तनको व्यवहार । निशि वासर गुण गावत मान्यो, शेष सहस मुखहार ॥ रवि नहिं होत मलीन[4] दुष्टके, लाय उड़ाये छार । कहैं कबीर सन्तकी निन्दा, करै ताहि धिक्कार ॥ ३९ ॥

जपु मन सत्य नाम सुखदाई । जो तूं चाहै आय जगतमें अपनी मूढ भलाई ॥ टे० ॥ गर्भवासमें भक्ति कबूल्यो, सो सब सुधि बिसराई । आय परचो मायाके फन्दे, मोह जाल अरुझाई । मातुपिता सुत भाइ बन्धु तिय, बहिन भुवा भौजाई । अपने २ स्वारथ कारण प्रीति करत सब आई ॥ भवसागरमें भटकत २, यह मानुष तन पाई । खोवे वृथा भक्ति बिन प्रभुकी, धिक ऐसी चतुराई ॥ कहैं कबीर चेतु अबहूँ नहिं, फिरि चौरासी जाई । पाय जन्म शूकर कूकरको भोगेगा दुख भाई ॥ ४० ॥

प्रभाती (समय प्रातःकाल)

(श्री १०८ युक्त महंत शम्भूदास साहेब विरचित)

जयति जय धर्मधुर[5] धीर[6] कब्बीरगुरु, जयति जय वीर[7] वर ब्रह्मचारी । दहनवनमोह[8] गुणगहन[9] भूषित[10] विभो[11], भक्त भवशूल[12] निर्मूलकारी[13] ॥ टे० ॥ अच्युतानन्द[14] मुदकन्द[15] स्वच्छंद[16] दलि[17], दोषदुखद्वन्द[18] लीलाऽवतारी[19] । कम्बुकर्पूर[20] मदचूर[21] अतिधवलवपु[22],

१ घर. २ अक्षय कोठार. ३ पण्डित. ४ मैला. ५ धर्मके चलानेवाले. ६ धैर्यवान्. ७ श्रेष्ठबलवान्. ८ मोहरूपी वनको भस्म करानेवाले. ९ अनन्त गुण. १० शोभित. ११ प्रभू. १२ भक्तोंका जन्ममरणादिक दुःख १३ नाशकर्ता. १४ अखण्डसुख. १५ आनन्दमूल १६ बन्धनरहित. १७ नाश करके. १८ उत्पात. १९ कौतुकसे प्रगट भये. २० शंख और कपूर. २१ निरादर करके २२ परम शुभ्ररूप.

सकल[1]सुखगेह नरदेहधारी[2] ॥ अमित[3]सौन्दर्य सुखधाम अभिराम[4] अति कोटिशतकाम[5]गर्वापहारी । तरुणकञ्जारुणं[6] हरण, शोभा-चरण, दीनविश्राम[7] परमोपकारी[8] ॥ सत्यपद[9]पुष्ट दलि दुष्ट दुर्वासना[10] सदा संतुष्ट सन्तोषधारी । अमल[11] अनवद्य[12] अव्यक्त[13] अविचल[14] अजित[15] अनघ[16] अद्वैत[17] अज[18] निर्विकारी[19] ॥ जगद्विख्यात[20] तव चरित सुरसरितसम[21] पतितपावन[22] परमपापहारी[23] । साधुजन वृन्द[24] अरविन्द दिनकरनिकर[25], उदय जय जयति सर्वैरुचारी[26] ॥ येन चरणामृतं पानकृत्[27] सर्वदा तस्य परिचारिका[28] मुक्तिचारी[29] । सर्वसत्रास[30] नाशक धर्मदास प्रभो[31], राजराजेन्द्र[32] पारख विहारी१॥

जयति जय कञ्जपर्णज[33] परीक्षक[34] प्रभो, प्रौढगूढार्थ[35]विद वेदासा[36]-रम् । भक्तवत्सल[37] दयासिन्धु[38] करुणायतन[39], राजराजेन्द्र लीलाऽवतारम् । पतिततारणतरण[40] दीन अशरण[41] शरण, मोद[42] मङ्गल[43]-करण अतिउदारम्[44] । क्षमा वैराग्य सन्तोष समता दया, आदियुत शील धीरज विचारम् ॥ परम कल्याणमय[45] ध्यान[46] निर्वाण[47]-प्रद, रहित अनुमान मायाविकारम्[48] । विगत[49] अज्ञान प्रज्ञान[50] विज्ञान घन, मोह मद मान कानन[51] कुठारम्[52] ॥ लोभवन दहन अति-प्रबल[53]दावानलं कामक्रोधादि कैरव[54]तुषारम्[55] । सर्वतोभद्र[56]वर प्रखर[57]

१ संपूर्ण सुखके स्थान. २ मनुष्यशरीर धारण किये. ३ अपार सुन्दरता. ४ अति रमणीय. ५ अनंत कामदेवके मानको नाश करनेवाले. ६ नवीन लाल कमल. ७ दु.खी जीवोंके आरामका स्थान. ८ अत्यंत उपकारी. ९ त्रिकालबाध्य पदपूर्ण प्राप्त. १० दुराशा. ११ स्वच्छ. १२ अनिंद्य. १३ गूढ. १४ स्थिररूप १५ नहीं जीतने योग्य. १६ पापरहित. १७ एक. १८ जन्मरहित. १९ दुःखसुखादि विकाररहित. २० संसारप्रसिद्ध. २१ आपके गंगासमानचरित्र. २२ पापियोंको पवित्र करनेवाले. २३ महान् पातक करने वाले. २४ समूह. २५ कमल. २६ सूर्यपुंज. २७ पान किया. २८ उसकी दासी. २९ सालोक्य सामीप्य सारूप्य और सायुज्य. ३० दुःख. ३१ स्वामी. ३२ सार्वभौम प्रभु. ३३ कमलपत्रसे उत्पन्न. ३४ पारखी. ३५ पूर्ग रहस्यज्ञाता. ३६ ज्ञानके सार परमात्मा. ३७ भक्तोंकी रक्षा करनेवाले ३८ दयासागर ३९ कृपास्वरूप. ४० पापियोंको पार उतारनेकी नौका. ४१ शरणरहित. ४२ आनंद. ४३ कल्याण. ४४ अत्यंत दानी. ४५ मंडलरूप. ४६ आकार. ४७ मोक्षदायक. ४८ प्रपंच. ४९ अज्ञान रहित ५० उत्कृष्टबोध सहित विशेष विज्ञानस्वरूप. ५१ वन, जंगल. ५२ कुल्हाडी. ५३ अत्यन्त बलवान् दावाग्नि. ५४ रात्रिविकाशी कमल. ५५ हिम. ५६ बडा भवन. ५७ तेज.

दिनकरनिकर; उदय हरणाय[1] जगदन्धकारम् । यस्य[2] प्रत्यक्ष[3]हित योग जप यजन[4] मुनि, यत्न कुर्वन्ति[5] नानाप्रकारम्[6] । तस्य[7] विग्रह[8] विदित[9] साधुगुरुरूपधृत[10]; अखिल अघओघ[11]हत निर्विकारम् ॥ विविध[12]गुण गणत[13] श्रुति[14] शारदा[15] शेष, निशिदिवस[16] यदि तदपि[17] नहिं लहत पार[18]म् । नौ[19]मि कब्बीरगुरु नौमि कब्बीरगुरु, वदंति[20] धर्मदास इति[21] वारवारम् ॥ २ ॥

जयति गुरुज्ञान रक्षक[22] परीक्षक प्रभो, छद्म[23]चूर्णार्थ पूर्णाऽवतारम् । अखिल पाखण्ड[24]गर्वघ्न बीजक[25]तिलक, निर्मित[26] हरण जगदन्धकारम् ॥ टे० ॥ शुद्ध[27] सर्वेश सर्वज्ञ[28] सेवक सुखद[29], सर्वदा[30] शान्त[31] सन्तोषधारी[32] । नित्य[33] निर्वाण[34] निर्मोह मत्सररहित[35], निर्भरानन्द[36] स्वच्छन्द[37]चारी ॥ दोष दुर्वासना मान दम्भापहन[38], धर्म व्रत[39] शीलरत[40] निर्विकारी । ब्रह्मगुरु[41] जीवमायोक्ति परस्व[42]मत[43]गति भनित[44] सिद्धान्त मुखचारु[45]चारी ॥ विगत मैल[46] आवरण[47] सहित अन्यग्र[48]चित, अमितमाया[49]दितत्त्वात्मज्ञानी । परम पावन[50] प्रवर[51] मोदप्रद[52] यस्य पद, परख प्रत्यक्ष[53] निज राजधानी ॥ जीव निजकर्मवश भ्रमत भवचक्र[54] अति, सहत दुख दुसह[55]दारुण अनेकम्॥

---

१ हरण करनेके लिये. २ जिसके. ३ दर्शके लिये. ४ यज्ञ. ५ उपाय करते हैं. ६ बहुत प्रकारके. ७ उसकी. ८ मूर्ति. ९ प्रसिद्ध १० धारण कीहुई. ११ पापसमूहके नाशक. १२ अनेक प्रकारके गुण १३ गणना करते. १४ वेद. १५ सरस्वती १६ रात्रिदिन. १७ तौभी १८ पूर्णताको प्राप्त होना. १९ नमस्कार करता हूं. २० कहते हैं. २१ इसप्रकारसे २२ सहायक. २३ कपट, जाल. २४ नास्तिकोंका माननाशक. २५ बीजककी टीका. २६ रचा, बनाया २७ निर्विकार सर्वके प्रभु. २८ संपूर्ण जाननेवाले. २९ आनन्ददायक ३० सदाकाल. ३१ सुखी. ३२ आनन्द धारण किये. ३३ अखण्ड. ३४ मोक्ष रूप. ३५ अभिमान रहित. ३६ अतिसुखरूप. ३७ स्वेच्छासे विचरनेवाले. ३८ पाखण्डनाशक ३९ नियम, ४० सचरित्रधारी. ४१ ब्रह्ममुख गुरुमुख जीवमुख और मायामुख. ४२ निज और अन्यका. ४३ ज्ञान. ४४ कहा हुआ निर्णय. ४५ सुन्दर चतुर्मुख. ४६ पाप. ४७ अज्ञान. ४८ शांतचित्त. ५९ अनेक प्रकारके मायादि तत्त्व (जड पदार्थ) और चेतनके ज्ञाता ५० अत्यन्त पवित्र. ५१ उत्कृष्ट ५२ सुखदायक. ५३ दृष्टिगोचर ५४ चौरासी. ५५ कठिन असह्य.

व्याथा[1] अवलोकि[2] करुणाअयन[3] ज्ञानघन, वदति बाधाशमन[4]
यत्नमेकम्[5] ॥ हेतु कैवल्यप्रद[6] साधुगुरु २, श्रद्धया[7] मूढ भज्जु[8] वार-
वारम् । निखिल[9] निर्णीतं[10] सिद्धान्तमिति निश्चितं, नीरनिधि
निगमनिर्मथितसारम्[11] ॥ आदिमध्यान्त नहिं दुःख त्रैकाल[12] इति
वदति वेदान्तविद्[13] ब्रह्मवादी । सकल तंत्रार्थ उद्धृत[14]परीक्षाकृतं,
आत्मानात्म[15] सुख दुख अनादी[16] ॥ जनित अज्ञान[17] त्रैताप[18]दावाऽ-
नलम् शमन गुरुबोध[19]वर मेघमाला[20] ॥ शोक सन्ताप[21] भवदाप[22]
नाशक कवच[23], विश्ववारीश[24] सेतू[25] विशाला ॥ सामवेदादिगो[26]तीत
यं गीयते[27], शम्भु अज अमल अद्वय[28] अनूपम्[29] ॥ तज्जगद्विदित[30]
सुरवृन्द[31] वन्दित[32]पदम्, वेष मङ्गल धृतं साधुरूपम ॥ ३ ॥

जय धीर वीर कबीर, भवजल[33] पीर[34] भीर[35] विनाशनम् । सर[36]-
तीर मनुजशरीर धृत गम्भीर[37] ज्ञान प्रकाशनम् ॥ टे० ॥ झाँई[38]
सन्धि[39] विकार करि, निरवार[40] भौर[41] विदारणम्[42] । विविध विधि[43]
टकसार[44], गुरुमुख द्वार सार[45] विचारणम् ॥ मारतण्ड[46] प्रचण्ड[47] तम[48]
पाखण्ड खण्डन[49] कारणम्[50] योगदण्ड[51] अखण्डताप[52], प्रताप[53] पाप
प्रहारणम्[54] ॥ जय कल्पपादप[55] पर्ण[56] सम मृदु[57] चरण हरण भवार्ण-
वम्[58] प्रद मोद मङ्गल करण अशरण शरण दीन उधारणम् ॥
आनन्दकन्द स्वच्छन्द दलि, दुख द्वंद्व फन्द निकन्दनम्[59] । इति

१ दुःख. २ देखकर. ३ दयाके स्थान. ४ दुःखनाशक. ५ उपाय. ६ मोक्षदायक कारण. ७ विश्वाससे
८ भजन कर. ९ सर्व. १० निर्णय किया हुआ. ११ शास्त्ररूप समुद्रको मंथनकर सार निकाला हुआ.
१२ भूत, भविष्य और वर्तमान. १३ अद्वैतवादी १४ सर्व सिद्धान्तसंमत. १५ जड चेतन. १६ आदिरहित
१७ अज्ञानसे उत्पन्न. १८ आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक ऐसे तीन प्रकारके दुःखरूप दावाग्नि
१९ गुरुका ज्ञान २० बादलोंकी पांति. २१ दुःख २२ जन्म, मरण. २३ बखतर. २४ संसारसागर. २५ पुल.
२६ अगोचर. २७ गान करते हैं. २८ एक. २९ उपमारहित. ३० संसारमें प्रसिद्ध. ३१ देव समूह.
३२ वन्दना किये. ३३ संसारसागर. ३४ दुःख. ३५ समूह. ३६ सरोवरके किनारे. ३७ अथाह.
३८ प्रतिबिंब. ३९ माया ४० निर्णय करके. ४१ समूह ४२ नष्ट करना. ४३ यथाशास्त्र. ४४ सिद्धांत.
४५ तत्व. ४६ सूर्य. ४७ तेजवान्. ४८ अन्धकार. ४९ तोडना. ५० हेतु. ५१ आसा. ५२ अबाधित
तेज. ५३ प्रभाव. ५४ नाशकर्ता. ५५ कल्पवृक्ष. ५६ पत्र. ५७ कोमल. ५८ संसारसागर. ५९ निर्मूल.

अन्तरहित अनन्त सन्त महन्त तन गुण वन्दनम् ॥ धर्मदास जास विलास[1] त्रास[2], कराल[3] जाल विभञ्जनम्[4] । दलिशाल[5] दीन दयाल कीन्ह, निहाल मुनि मन रञ्जनम्[6] ॥ ४ ॥

जय उग्रनाम अकाम[7], मङ्गल धाम नित्य निरामयम्[8] । भव श्रमित[9] शुभविश्राम अति अभिराम पदप्रद निर्भयम् ॥ टे० ॥ मोह माया मान दम्भ मदादि मत्सर दूषणम्[10] । रहित नानारंग[11] परम विराग[12]सहित विभूषणम्[13] ॥ सानुरोध[14] विरोध हरण, प्रबोधमय कारण परम् । विगत द्वन्द स्वछन्द, परमानन्दकन्द विनिर्भरम्[15] ॥ कालशेष[16] खगेश[17] भवदुपदेश[18], भो ! करुणाकरम्[19] । भव्यवर[20] वरदेश अखिल, अशेष[21] श्रेय[22] मुदावरम्[23] ॥ भुक्तकञ्जदिनेश[24] ज्ञान धनेश[25], क्लेशजगद्भवम् ॥ शमन सकल अहेतु प्रभु, वृषकेतु[26] सेतुभवार्णवम् शंभु यस्य पदारविन्द[27], पराग[28] सञ्चितकर्मजम्[29] । व्याधिप्रबलभूत[30], अति अनुभूत[31] पावन भेषजम्[32] ॥ ५ ॥

भजु सुखद परम प्रबोधप्रद[33], प्रत्यूह[34] हरण कृपालके । पारिजातक[35]पर्णनवसम, चरण साहिबलालके ॥ टे० ॥ अरुण नख[36] द्युति दिपति[37], दिव्य दिगन्त[38] तमदल[39]मालके । जनित[40] विविध विकार कीन प्रहार भवभ्रम जालके ॥ मृदुल[41] मञ्जु[42] पराग पावन, तिलक कृत[43] निज[44]भालके । नशत सकल कुअंक[45] विधिकर[46]लिखित कर्म्म कपाल[47]के ॥ प्रगट[48] मन्त्र प्रत्यक्ष शामक, दक्ष[49] विष अहि[50]

---

१ खेल. २ डर. ३ भयंकर. ४ नष्टकर्ता. ५ दुःखनाशकारि ६ आनंदित करना. ७ कामनारहित ८ रोगरहित. ९ थके हुए. १० दोष. ११ अनेक प्रकारकी शक्ति. १२ त्याग. १३ विशेष भूषित. १४ हठ करके. १५ अत्यंत. १६ सर्प्प. १७ गरुडपक्षी. १८ आपका उपदेश. १९ कृपालु. २० श्रेष्ठफल. वरदायक प्रभु. २१ संपूर्ण. २२ कल्याण. २३ उत्तम सुखरूप. भक्त २४ कमल सूर्य २५ कुबेर. २६ महादेव. २७ चरणकमल. २८ धूलि. २९ पूर्वकृतकर्मजन्य. ३० अत्यन्त बढाहुआ रोग. ३१ अनुभव की हुई ३२ पवित्र औषधी. ३३ ज्ञानदायक. ३४ विघ्न. ३५ कल्प वृक्षके नवीन पत्रसमान. ३६ कांति. ३७ प्रकाशित. ३८ दिशाओंके अन्तपर्यंत. ३९ अन्धकार समूहमाला. ४० उत्पन्न हुआ. ४१ कोमल. ४२ सुन्दर. ४३ किये. ४४ अपने मस्तक. ४५ दुःखकी रेखा. ४६ ब्रह्मदेवके हाथकी लिखी. ४७ मस्तक. ४८ प्रसिद्ध. ४९ योग्य. कुशल. ५० सर्प.

कालके नहिं । अन्य रक्षक पक्ष तजि पदलक्ष दीनदयालके ॥ जेहि हेतु शंभु शुकादि निशदिन, ध्यान धरत त्रिकालके । सोई प्रवरपद परखाय मेट्यो, शाल जगजंजालके ॥ ६ ॥

जय कबीर धीर वीर हरण पीपरे । देखि काम क्रोध आदि प्रबल रिपुं डरे ॥ टे० ॥ अति अपार भवविकार धारमें परे । हीनं दीनं छीनं जीव पार बहु करे । जासु वचन ज्ञानभानु लखि विकाशरे । उदय भोर जानि चोर मानमद टरे ॥ जागे शम दम विराग आदि योगरे । परम धरम जानि जाहि साधु आंदरे ॥ दीनबन्धु दयासिन्धु जासु नाम रे । मोदधाम विगत काम सन्त वंदंत रे ॥ धर्मदास जास त्रास काल विकल रे । ऐसो श्रीगुरु प्रताप मंगलांचरे ॥ ७ ॥

जय जय सतगुरु कबीर, सन्तन सुखकारी ॥ टे० ॥ कमलपत्रपर अनूप, लीला करि धारि रूप, प्रगटे जग हंसभूप, अजर निर्विकारी ॥ मङ्गलमय सिद्धिसदन, दिव्य शर्वरीशं वदंन, वांरों लखि कोटि मदन, बाल ब्रह्मचारी ॥ शोभित मुद्रा विशाल, शुभ्र सरल तिलक भाल, भूषित उर रत्नमाल, शीश मुकुटधारी ॥ गावत गुणसुर अशेष, नारद शारद गणेश, कमलासंन अरु महेशं, दै दै कर तारी ॥ पारिजात तरुण परण, के समान अरुण चरण, शरण आय धर्म्मदास, तन मन धन वारी ॥८॥

जय जय साहिब कबीर, काशीपुरवासी ॥ टे० ॥ बूडत भवसिन्धु धार, भक्तन कीन्हीं पुकार कीजे सत गुरु उबार, अखिल स्वप्रकाशी ॥ दुखित जीवलखि दयाल, सर्वेश्वर प्रभु

१ दूसरा रक्षा करनेवाला. २ सहाय. ३ चरण कमल का ध्यान. ४ दुःख. ५ शत्रु ६ त्यागा हुआ. ७ दरिद्री. ८ दुर्बल. ९ प्रकाश. १० सत्कार किया. ११ कहते हैं. १२ कल्याण करे १३ सिद्धिका स्थान. १४ चन्द्र. १५ मुख. १६ निछावर करना. १७ श्वेत. १८ सीधा. १९ सरस्वति. २० ब्रह्मा. २१ महादेव २२ बचाव

कृपाल, दलन निखिल कालजाल, प्रगटे अविनाशी[1] ॥ कुन्दु इन्दु[2]के समान, विमल वपुं[3] प्रकाशमान, मंगलमय सुभगध्यान, तेजपुञ्ज[4]राशी ॥ लीला एक करी नाथ, गनिकाँ[5]को पकरि हाथ, फिरे लिये साथसाथ, कीन्ही जगहाँसी ॥ माया मन धारि टेक, कीन्हों छल बल अनेक, हारी नहिं चल्यो एक, कम्पित है त्रासी ॥ प्रवर पूज्य परमपितृ[6], दयासिन्धु दीनमित्र, पतितन कीन्हों पवित्र, परखपद प्रकाशी ॥ कुपँथ[7] कुटिल[8] कर्म[9] कोहं, दम्भदोष मान द्रोह, काम क्रोध लोभ मोह अखिल शत्रुनाशी ॥ जाप जपत नसत पाप, जासु नामके प्रताप, शरण सुखद हरण ताप, अमरपुर[10]निवासी ॥ गावत गुण[11] धरि विश्वास[12], नित्य[13]प्रति वसिष्ठ व्यास, धर्मिनि तजि सकल आस, चरणनकी दासी[14] ॥९॥

मिथ्या मायाजाल जगत मन, क्यों तू देख भुलाया है? ॥ टेक ॥ सुमन[15] सुहावन सुन्दर फल लखि, सेमर सुवा लुभाया है। मारी चोंच रुई निकरी जब, तब मनमें पछताया है ॥ धूमसमूह[16] जानि घन[17] चात्रिक[18], तृषा[19] विवश हो धाया[20] है। मिटी न प्यास भयो दुख दारुण[21], नयनहीन अकुलाया[22] है ॥ सुत[23] वनिता[24] इत्यादि सकल निज; स्वारथ प्रीति लगाया है। यह मन मूढ मूढता[25]के वश, मोहजाल उरझाया है। प्रबल अविद्या[26]के प्रताप शठ; फिरि चौरासी आया है। कहें कबीर चेत नर अजहू, मानुष योनी[27] पाया है ॥ १० ॥

१ नाशरहित. २ चन्द्रमा. ३ शरीर. ४ प्रकाशका समूह. ५ वेश्या. ६ पिता. ७ कुमार्ग. ८ टेढा. ९ कल्पना. १० सत्यलोकके रहनेवाले. ११ चरित्र १२ श्रद्धा धारण करि १३ सदाकाल. १४ परिचारिका. १५ फूल. १६ धुआँका पुंज. १७ बादर. १८ पपीहा. १९ प्यास. २० दौडा. २१ भयंकर. २२ व्याकुल हुआ. २३ पुत्र. २४ स्त्री. २५ मूर्खता. २६ अज्ञान. २७ खानि.

मानुषको तन पाय जन्म क्यों, मूरख वृथा[1] गमाँवै है ॥टे०॥ अति अमोल कंचनघटमें[2] शठ[3], हठ[4] करि विष भरवावै है। पाय पियूष[5] पखारनें[6] पद हित, मन्दमती[7] ढरकावै[8] है॥ ऐरावत[9] गजराजपै मूरख, ईंधन[10] भार लदावै है। बहुश्रमकरि[11] लेहि[12] चिन्तामणि[13] तेहि फेंकिकै काग उडावै है॥ आक रुईके हेत खेत कंचन के हर जोतवावै है॥ कल्पतरूको[14] काट धतूरा, आँगन माहिं लगावै है॥ कहें कबीर मूढता कहाँलग कहूँ, कही नहिं जावै है। तजि गुरुज्ञान वारि सुरसरिता[15], मृगजल[16] प्यास बुझावै है ॥ ११ ॥

रागिनी भैरवी समय सूर्योदय ।

अब मोहिं दरशन दीजे कबीर। तुम्हरे दरशसे पाप कटत हैं, निरमल[17] होत शरीर ॥ टे० ॥ त्रिविधताप भोगत चौरासी, अति जिव भयो अधीर[18]। अब तो कृपासिन्धु दुख मेटो, यमसे कागदचीर ॥ भवसागरमें नैया अटकी, वशपरि विषय समीर[19]। डूबत आय उबारो प्रभुजी, खेय लगावो तीर[20] ॥ कोई ध्यावत गौरी शंकर, कोइ सिया रघुवीर। मेरे तो एक तुमहीं धनी हो, क्यों न हरो यह पीर॥ धर्मदास विनवे करजोरी, प्रभु तुम गुण गंभीर। मैं अति हीन दीन शठ पामर[21], क्षमा करो तकसीर[22]॥१२॥

सत गुरु हो! मोहिं उतारो भवपार। तुमबिन और सुनैको मेरी, आरतनाद[23] पुकार ॥ टे० ॥ गहरी नदिया नाव पुरानी-आय परी मझ[24] धार। विषय बयार[25] प्रबल चहुँदिशसे, तापर करत प्रहार[26] ॥ तात[27] मात सुत भाई बन्धु तिय, लोक कुटुम परि-वार। अपने अपने स्वारथके हित; राखत सब व्यवहार ॥ नेम

१ निष्फल. २ सुवर्णका घडा. ३ मूर्ख. ४ आग्रह. ५ अमृत. ६ पावधोनेके लिये. ७ मूर्ख. ८ घडेमेंसे बाहर बाहर गिरता है. ९ इन्द्रका हाथी. १० जलानेकी लकडीका बोझा. ११ बडे परिश्रमसे. १२ पाया. १३ रत्न विशेष. जो चिंतन मात्रसे सब कुछ दे देता है. १४ कल्पवृक्ष. १५ गंगाजल. १६ मृगतृष्णाका जल. १७ शुद्ध १८ धैर्यरहित. कायर. १९ वायु. २० किनारे. २१ अधम. २२ अपराध. २३ दुःखित चिलाहट. २४ बीच. २५ वायु. २६ ताडना. २७ पिता.

धर्म व्रत यज्ञ दान तप, संयम नेम अचार। इनके फलसे स्वर्ग भोगकरी, फिर जन्मे संसार॥ कृमी कीट पशु पक्षी आदिक, योनिनमें बहुवार। भ्रमि भ्रमि भटक्यो चौरासी, दुख सहि अगम अपार॥ धर्मदास विनवे कर[1]जोरी है अति निरआ[2]धार। शरणागतकी लाज तुम्हे प्रभु, अधम उधा[3]रन हार॥ १३॥

गुरुसम और कहो को दानी। अति मतिहीन दीन शठ तारे विरद[4]लाज उर आनी॥ टे०॥ वालमीक नारद अगस्तमुनि, आदि और बहुज्ञानी। गुरुप्रसा[5]दसे नीच ऊंचभये, वेदपुराण बखानी॥ जप तप आदि करैं संय[6]म व्रत; सुनि सुनि नाना बानी। तदपि न मिटै बिना सतगुरुके, चौरासीकी खानी॥ लोकवेदकी कर्मधारमें बहे जात अभिमानी। त्रिविध[7] दुसह दुख देखि दयानिधि, प्रे[8]र्‍यो परख निशानी॥ को कबीर गुरु इव करु[9]णालय वेद वदति इति जानी। तद्वि[10]ज्ञान हेतु शरणागत, गच्छ सकल भ्रम भा[11]नी॥ १४॥

गुरुसम को जगमें हितकारी। कलिमं[12]लग्रसित अधम शठ पामर, बहु तारे नर नारी॥ टे०॥ हरिमाया करि त्रिभुव[13]न फैल्यो, भवदुख महाविकारी। रविकर निक[14]र समान ज्ञानघन, गुरु अज्ञान प्रहा[15]री॥ हरिके कृत जिव जात र[16]सातल; गुरु तेहि लेत उबा[17]री। हरिसे गुण हैं अधिक गुरूके, देखो हृदय विचारी॥ नारदमुख गुरुनिन्दा सुनि हरि, को[18]प कियो अति भारी। गुरु करुणा[19]निधान एक पलमें, चौराशी भ[20]य टारी॥ कहि न जात उपकार अनेकन,

---

१ हाथ जोड प्रार्थना करते हैं. २ अवलम्बरहित. ३ पापियोंको तारनेवाले. ४ महात्म्यकी लज्जा. ५ गुरुकी प्रसन्नतासे. ६ साधन. ७ तीन प्रकारके. ८ परीक्षाके लक्षणकी. योजना की. ९ दयाके भवन. १० मुण्डक उपनिषद्के खण्ड २ के मंत्र २१ में कहा है कि "तद्विज्ञानार्थं स गुरुमेवाभिगच्छेत्, समित्पाणिः श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठम्" अर्थात् जिस परमात्माके विशेष ज्ञानके अर्थ पूजनकी सामग्री हाथमेंलेकर ज्ञानी और ब्रह्मनिष्ठ गुरुकी शरण जावे ११ भ्रांति छोडकर. १२ पापमें फँसे. १३ तीनों लोकमें १४ सूर्यसमूह। १५ नाशकर्ता। १६ पाताल १७ बचालेना। १८ क्रोध १९ दयाल २० डरमेटना.

श्रुति गावत गुणहारी । हरिविरञ्चिशंकर मुख वरणत, गुरुपदकी अधिकारी ॥ झाईं सन्धिकालको चहुं दिश, फैल्यो फन्दा भारी। सारशब्दसे सब परखायो, गुरु कबीर बलिहारी ॥ १५॥

रागिनी आसावरी. (समय १० बजे दिन.)

अवधू ! देखो ज्ञान विचारी । यह कौन पुरुषकी है नारी ॥ टे० ॥ कहति न व्याही ना मैं कुमारी, पुत्रजनत मैं हारी । कारी मुड़ीको एक न छोड्यो, तोहूपति वरतारी ॥ पिताकी कही एक नहिं मानी, समुझायो महतारी । पारपरोसिन पठंवन आई तहुँ न गई ससुँरारी ॥ ससुर हमारा है अति भोरा, सासु हमारी बारी। पीव हमारा झूले पालने, हमहीं झुलावनहारी ॥ मेरो रूप देखि मुनि मोहे, बड़े बड़े तपधारी । मैं वशमें नहिं काहुके आई रहगये सब झखमारी॥ कोइ कोइ सन्त निकट मोहिं आवत, दूरहिसे ललकारी। कहें कबीर जिन झूठी जानी, तिनको है बलिहारी॥ १६॥

सन्तो ! सन्त बिलंग किन कीन्हा । लोकलाज कुलकी मरयादा, सबहि त्यागि जिन दीन्हा ॥ टे० ॥ जाति पांतिके भर्म भुलाने, सो नर काल अधीना । निजस्वरूप चीन्हो नहिं मूरख ताते दुबिधा कीन्हा ॥ तुलसी ब्राह्मण अति कुलीन जग, सब कोइ कहै प्रवीना । नाभाजी भङ्गीके बालक, तासु प्रसादी लीना॥ ना मानो तो साक्षि बताऊँ, और सुनहु मतिहीना । सुपच भक्त रैदाससे अन्तर, प्रभुने कऱ्यौ कवीना ॥ शिवरी कौन कुलीन हती जिन, चाखि चाखि फल बीना ॥ सो प्रसाद पावन हरि मनमें, शंका तनक करीना ॥ कहें कवीर (अवधू) सोई उत्तम जो भूले भक्ति घरीना । जिनके भाव भक्ति उरमें नहिं, सो नर नीच मलीना ॥ १७॥

सन्तो ! निरञ्जन[१०] जाल पसारा । स्वर्ग पताल मर्त्यु मण्डल

---

१ ब्रह्मा, विष्णु औरमहादेव २ श्रेष्ठता । ३ जाल. ४ विरक्त । ५ माता । ६ भेजनेको । ७ सासरा । ८ बालक । ९ न्यारा. १० काल ईश्वर.

रचि[1], तीन लोक विस्तारा ॥ टे० ॥ हरिहरब्रह्माको प्रगटायो, तिन्है दियो शिरभारा । ठांव ठांव तीरथ रचि रोप्यो, ठगवेको संसारा ॥ चौराशी बिच जीव फँसावे, कबहु न होय उबारा[2] । जारि[3] बारि भस्मी[4] करि डारे, फिरि देवे औतारा[5] ॥ आवागमन[6] रहे उरझावे, बोरे[7] भवकी धारा । सतगुरु शब्द विना नर चीन्हे, कैसे उतरे पारा । मायाफांस[8] फँसाय जीव सब, आप बनै करतारा । सत्य पुरुषका अमरलोक है, ताको मूंद्यो द्वारा[9] ॥ नेम धर्म आचार यज्ञ तप, ये उरले[10] व्यवहारा । जासे मिलै अखण्ड मोक्ष सुख, सो मारग[11] है न्यारा ॥ कालजालसे बांचा चाहो, गहा[12] शब्द ततसारा (टकसारा)* । कहै कबीर अमर करि राखों, जो निज होय हमारा ॥ १८ ॥

सन्तो ! सतगुरु अलेख[13] लखाया । परम प्रकाशक पुंज[14] ज्ञान घन; घट भीतर दरशाया[15] ॥ टे० ॥ मन बुधि बानी जाहि न जानत, वेद कहत सकुचाया[16] । अगम अपार अथाह[17] अगोचर, नेति[18] नेति जेहि गाया ॥ शिव सनकादि आदि ब्रह्माके, वह प्रभु हाथ न आया । व्यास वशिष्ठ विचारत हारे, कोई पार न पाया ॥ तिलमें तेल काष्ठमें अग्नि घृत[19] पय[20] माँहि समाया । शब्दमें अर्थ पदारथ[21] पदमें, स्वरमें राग सुनाया ॥ बीजमाँहिं अंकुर तरु[22] शाखा[23], पत्र[24] फूल फल छाया । त्यों आतममें है परमातम, ब्रह्मजीव अरु माया । कहैं कबीर कृपाल कृपा करि, निज स्वरूप परखाया । जप तप योग यज्ञ व्रत पूजा, सब जञ्जाल छुड़ाया ॥ १९ ॥

सन्तो ! सो निज देश हमारा । जहां जाय फिर हंस[25] न आवे,

---

१ बनाके स्थिर किया. २ निस्तार. ३ जलाकर. ४ राख. ५ जन्म. ६ आना जाना ७ डुबावे. ८ कपटका जाल. ९ दरवाजा. १० इधरके जगतके. ११ पन्थ.रस्ता. १२ धारणकरो. १३ अगोचर. १४ समूह. १५ दिखाया. १६ संकोच किया. * कहीं कही ऐसा भी आया और इससे भी शुद्ध ही भाव निकलता है। १७ गहरा. १८ ऐसा नहीं ऐसा नहीं गान किया. १९ घी २० दूध. २१ वस्तु, २२ पदका अर्थ. वृक्ष. २३ डाली २४ पत्ते. २५ आत्मा.

भवसागर की धारा ॥ टे० ॥ सूर्य चन्द्र नहिं तहां प्रकाशत, नहिं नभ[1] मंडल तारा । उदय[2] न अस्त[3] दिवस[4] नहिं रजनी[5], विना ज्योति उजियारा ॥ पाँचतत्व[6] गुणतीन[7] तहां नहिं, नहिं तहँ सृष्टि पसारा । तहां न मायाकृत प्रपंच यह, लोक कुटुम परिवारा ॥ क्षुधा[8] तृषा नहिं शीत उष्ण तहाँ, सुखदुखको संचारा[9] । आंधि[10] न व्याधि[11] उपाधि[12] कछू तहाँ, पाप पुण्य विस्तारा ॥ ऊँच नीच कुलकी मर्यादा, आश्रम[13] वर्ण[14] विचारा । धर्म अधर्म तहाँ कछु नाहीं, संयम नियम अचारा ॥ अति अभिराम धाम सर्वोपर, शोभा जासु अपारा ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधो, तीन लोक से न्यारा ॥२०॥

सन्तो ! माया तजी न जाई । सदा एकसंग रहत है जैसे, वेल वृक्ष लपटाई ॥ टे० ॥ काम तजे तो क्रोध न छूटै, क्रोध तजे तो लोभा । लोभ तजे उर आशा बाढै, मान बडाई शोभा ॥ गृह त्यागे फिरि मढी[15] बनावे, उदय अस्त दे फेरी । कुटुम्ब छोड शिष साखा मूड़ै, ममता बढै घनेरी ॥ देखनको पैसा नहिं छूवे, कौड़ी मिली न छोडे । गुरुभंडारा हेतु नाम लै, मांगि २ धन जोड़े ॥ कर्म सँयोग मिलै नहिं जबलों, तबलों महा विरागी[16] । मिले न करि सन्तोष रहै मन, तृष्णा पीछे लागी ॥ शिष्य समीप पुजावनके हित, सौ योजन चलि जावे हमे छोड़ मति औरको मानो, यह उपदेश दृढावे[17] ॥ सोइ त्यागी जो करे न इच्छा, मिले द्वेष नहिं मानै। कहैं कबीर सुनो भाई साधो, माया झूठी जानै ॥ २१ ॥

सन्तो ! समुझेकी मति न्यारी । निज दुख सुख सम सबको जानै, आतम तत्त्व विचारी ॥ टे० ॥ औरनको उपदेश दृढावे,

१ आकाश. २ प्रभात. ३ संध्या. ४ दिन. ५ रात्रि. ६ पृथ्वी. जल. अग्नि वायु, और आकाश. ७ सत्व, रज और तम । ८ भूख । ९ प्रवेश १० मानसिक दुःख. ११ शारीरिक रोग १२ उपद्रव. १३ ब्रह्मचारी गृहस्थ, वानप्रस्थ. सन्यासी. १४ ब्राह्मण. क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र । १५ १ कुटी. १६ त्यागी । १७ निश्चय करावे ।

आप स्वतः नहिं मानैं । मुख कुछ और हृदय कुछ औरहि, कैसे रामहि जानै ॥ औरसे कहै मोह नहिं कीजे, जो चाहो सुख भाई । माया मोह आप उरझाने, धिक् ऐसी चतुराई ॥ जग-प्रपञ्च है अति दुखदाई, कहि औरहीं समुझावे । आप रहत निशदिन प्रपञ्चमें, मिथ्या साधु कहावे ॥ बैरागी बनि पर वैभव[1] लखि; हँसिकै नाक सिकोडै ॥ परी अपावन[2] फूटी कौडी, तेहि देखी नहिं छोडे ॥ निज स्वारथको कथा सुनावे, बहुविध करि बकवादा । सो जगमें पण्डित कहवावे, है मूरखके दादा ॥ राग द्वेष जबलग घटभीतर, क्या भयो वेष बनाये । खर नहिं होत केशरी[3] कबहूं, सिंहकी खाल[4] उढाये ॥ जो चेतन तेरे उर अन्दर[5], सोई सब घट[6]माहीं । कहैं कबीर राम किमि दर्शै, मैं तू छूटत नाहीं ॥ २२ ॥

सन्तो ! सहजसमाधि[7] भली है । जबसे कृपा भई सतगुरुकी कितहुँ न वृत्ति[8] चली है ॥ टे० ॥ जहँ २ जाऊं सोइ परिकरमा[9], जो कुछ करूं सो पूजा । गृह उद्यान[10] एकसम लेखों, भाव[11] मेटि उरदूजा ॥ सोहं हंसः से मनराता, मलिन वासना[12] त्यागी । सोवत जागत ऊठत बैठत, निशदिन तारी[13] लागी ॥ श्रवण[14] नाशिका[15] मुख निरोध[16]करि हठसे[17] स्वास न रोकों । खुले नयन प्रत्यक्ष निरन्तर[18], परमातम अवलोकों[19] ॥ कहैं कबीर योगकी रहनी, सुगम[20] प्रगट करि गाई । आसन प्राणायाम धारणाध्यानरहित सुखदाई ॥ २३ ॥

सन्तो ! मोहिं कौन समुझावै । जीव ब्रह्म दोऊ एक कि न्यारे, याको भेद बतावै ॥ टे० ॥ एक कहे बहु शंका होवै, दो कहते सकुचावै । कहुं २ एक कहूं दो वर्णय[21], शास्त्र उभय[22] विधि गावै ॥

---

१ ऐश्वर्य. २ अपवित्र. ३ सिंह. ४ चर्म. ५ भीतर. ६ शरीर. ७ चित्तकी एकाग्रता. ८ अंतःकरणका परिणाम, सुरति. ९ परिक्रमा. १० वन, जंगल. ११ भावना. १२ इच्छा. १३ ध्यान. १४ कान. १५ नाक, १६ बंदकर. १७ बलकरके सदा. १८ सर्वदा. १९ देखूं. २० सहज २१ वर्णन करता है. २२ दोनों.

ब्रह्म अखण्ड अनादि निरन्तर, इमि श्रुति कहि गोहरावै[१]। जीव सदा उपजै[२] पुनि विनशै[३], सो किमि ब्रह्म कहावै ॥ सर्व शक्तियुत वह अरु यह जिव, अल्प[४]से काम चलावै। वह सर्वज्ञ त्रिकालको दर्शी, यह कछु लखि नहिं पावै ॥ अस वितर्क[५] सतगुरु विन दूजा, को करि कृपा मिटावै। ब्रह्म स्वच्छन्द जीव माया वश, प्रगट कवा दिखावै ॥ २४ ॥

सन्तो! को जगको समुझावै। तजि प्रत्यक्ष सतगुरु परमेश्वर, जडको पूजन जावै ॥ टे० ॥ जडपूजाके फल अदृष्ट हैं, कालान्तरसे पावै। दृष्ट अदृष्ट उभय फलदायक, सो पूजा नहिं भावै॥ लै पाषाण[६] मूर्ति करसे गढि, बहुविधि रूप बनावै। विष्णू शंकर सूर्य गणपती, जो कुछ मनमें आवै ॥ दधि[७] घृत पय मधु[८] लै प्रमाणसे, तामें खांड मिलावै। यहि विधिसे करि पञ्चामृत तेहि, मूरतिपर ढरकावै। पुनि लै विमल[९] वारि सुरसरिको, शुद्ध स्नान करावै। धोय पोछि चन्दन लगायकै, पट[१०] भूषण[११] पहिरावै ॥ करी प्रतिष्ठा वेदमंत्रसे, तामें प्राण बुलावै। जौ वहि मन्त्र सत्य करि मानै, निज पितु क्यों न जिवावै॥ भोग थार धरि ताके सन्मुख, घण्टा नाद बजावै। भोजन कौन करैं बिन चेतन, उलटि आपही खावै॥ यहि विधि करत करत जड पूजा, आपहु जड बनि जावै। कहैं कवीर ज्ञान सतगुरुका, कैसे हृदय समावै ॥ २९ ॥

ध्वनि पिलू (समय ३–३॥ बजे दिन)

विवेकी, सन्त बसैं जेहि देश। ऋद्धि[१२] सिद्धि[१३] तहँ टहल करत हैं, धरि दासी का वेष ॥ टे० ॥ मन्दाकिनी[१४] गोदावरि गंगा, सरस्वति बहत हमेस। धन्य सो ग्राम[१५] रुचिर[१६] अति पावन, अघ न रहत लवलेस[१७] ॥ दख दारिद्र दूर सब भागै, नाश होत भव क्लेश। अर्थ

१ पुकारे. २ उत्पन्न होवे. ३ नाश होवे, ४ थोडा. ५ विविध प्रकार की तर्कना. ६ पत्थर. ७ दही. ८ मधु, शहद. ९ पवित्र. १० वस्त्र. कपडा. ११ गहना. १२ समृद्धि. १३ आणिमादिक अष्ट प्रकारकी. १४ भागीरथी गंगा. १५ नगर १६ शोभावान. १७ किञ्चित्.

धर्म अरु काम मोक्ष जन, पावत सुनि उपदेस ॥ काम क्रोध मद मोह द्रोह तहँ, कबहुँ न होत प्रवेस। सदा अनन्द बधावा घर २, मँगलाचार विशेष ॥ दुरंत दोष अज्ञान अँधेरो, लखि शुचि ज्ञान दिनेश। कहैं कबीर सन्तकी महिमा, कहि न सकत श्रुतिशेष॥२७॥

यहि तन धनकी कौन बड़ाई। देखत नयन चलो जग जाई ॥ ८० ॥ कङ्कर चुनि २ महल बनाया, गहरी नीव खुदाय भराई। तासे तोहि निकारि धरैंगे, जङ्गल बिच परिवारके आई ॥ मात पिता सुत नारि कुटुंबके, मोहजाल फन्दे उरझाई। बहु धन्धेमें जन्म गँमायो, प्रभुकी सुधि मूरख विसराई ॥ कबहुँ न कियो एक क्षण संगति, साधु सन्तसे प्रीति लगाई। रह्यो अधीन सदा दुरमतिके, अपने मनमें करि चतुराई ॥ कहैं कबीर चेतु नर अजेंहू, कहों तोंहिं बहु विधि समुझाई। गहु गुरु शरण हरण भवसंकट, जामें मिले मुक्ति सुखदाई ॥ २८ ॥

अथ प्रातःसन्ध्या – साखी।

नमो नमो गुरुदेव जू, सत्य स्वरूपी देव। आदि अन्त गुणकालके, मेटन हारे भेव॥१॥ नमो नमो तुव चरणको, सतगुरु दीन दयाल। तुम्हरी कृपा कटाक्षसे, कटें सकल भ्रमजाल॥२॥ प्रणमों श्रीगुरुदेवको, सोहै सदा दयाल। काम क्रोध मद लोभको, क्षणमें देवे टाल ॥ ३ ॥ प्रकट वाणी निर्मल करी, बुद्धि निर्मल करिदेउ। मैं मूरख अज्ञान हूं, नहिं आवत कछु भेउ ॥ ४ ॥ मैं अधीन बन्दन करूं, सुनियो श्रीगुरुराय। मारग सिर्जनहारका, दीजे मोहिं बताय ॥ ५ ॥ भवसागर भारी भया, गहरा अगम अथाह। तुम दयाल दाया करो, तब पाऊं कछु थाह ॥ ६ ॥

ठाढे हौं कर जोरिके, अरज करौं गुरु देव। तुमहीं दीनदयाल

१ छिपते हैं. २ अब भी.

हौ, बांह गहीके लेव ॥ ७॥ नमो नमो गुरु देवजू, प्रणाम करौं अनन्त । तव कृपाते पाइहौं, भवसागरको अन्त ॥ ८ ॥ तुम सत्य पुरुष परमात्मा, पूरण त्रिश्वा बीस। गुरू सत्य अविचल तुही, काहि नवाऊँ सीस ॥९॥ बन्दौं श्रीगुरुदेवजी, तुमही दीनदयाल। मैं अधीन विनती करूं, काटो यह भवजाल ॥१०॥ बन्दों गुरु तव चरणको, मांगूं निर्मल बुद्धि। कालजालका भय बहु, लीजे मेरी शुद्धि ॥ ११ ॥ काल फँसायो जालमें, हरी ज्ञान अरु ध्यान। विनु कृपा सतगुरु तेरी, कैसे पाऊँ ज्ञान ॥१२॥ बहु दुख अब भवमें सह्यो, भटक्यो बहु जग आश । तुमहीं प्रभु दुःख हरन, दीजे ज्ञान विलास ॥१३॥ आदिगुरु अदली तुही, तो विनु नहिं कछु ठौर। बहुविधि काल सताइया, सुनो हंस शिरमौर ॥१४॥ आदिपुरुष अविचल तुही, चलाचली संसार ॥१५॥ तुम विनु कैसे होइ हौं, चिन्ता रहित अचिन्त। अमर पदारथ दीजिये, अमर नाम निश्चिन्त ॥१६॥ कालक नगर विनाश है, क्षणमें जाइ नशाय। गुरू पुरुष कृपा करो, सार पदारथ पाय ॥१७॥ जाते भवबन्धन कटे, दीजो ज्ञान मुनींद्र । सत्य सुकृत कृपा करी, काटो कर्मकी बिन्द ॥१८॥ करुणामय करुणा करि, दीजै सत्य सुकाम । बन्दतहौं तव चरण प्रभु, सत्य गुरू सत्तनाम ॥ १९ ॥ तुम दाता हम मांगता, सत्य कबीर दयाल । पारख दे व्याधा हरो, मेटो यमको जाल ॥२०॥ किसी कामका हूँ नहीं, रहित ज्ञान अरु ध्यान। सत्य कबीर तुम कृपा करि, दीजो पारख ज्ञान ॥ २१ ॥ को हमको जगत यह, रंच न जानों भेव । सत्य कबीर दुख परहरू, पावों आतम सेव ॥ २२ ॥ काल संधि झाई अहै, त्रय विधि कालक जाल । भेदवाक्य दीजे बता, सत्य कबीर दयाल ॥२३॥ सत्य कबीरका बालका, पारख बिन

कङ्गाल। हँसी तुम्हारी होत है, वेगहि लेहु सँभाल ॥ २४ ॥ हंसन नायक सद्गुरु, सत्य लोक जिहि वास। जिनके शिशुको जगतमें, काल देत है त्रास ॥ २५ ॥ औगुण पूरति बाल बुधि, तदपि पिता गुणवंत। नाम हँसावत पितहिंको, सुनु कवीर महमंत ॥२६॥ हंस उधारण सत्य गुरु, अधम उधारण नाम। बन्दीछोर कृपाल प्रभु, सत्यलोक तव धाम ॥२७॥ हंस उधारण तारण गुरु, तोर नाम जम माहिं। मैं दुखिया भवमें रहौं, बिरद तुम्हार लजाहिं ॥२८॥ कहँ लगि कहुँ अशरण शरण, गुरु निर्भय दातार। मैं अनाथ तुव शरण हौं, वेगि उतारो पार ॥ २९ ॥ जो तुम सुधि नहिं लेव तो, दूसर कौन सहाय। काल जालको मेटिके, देवे पार लगाय ॥ ३० ॥

प्रभाती स्तुति (भुजंगप्रयास छन्द)

कवीरं रविं ज्ञान गो मुक्ति हस्तं। उदे ब्योस नाथा सनाथा समस्तं॥ जनं रंजनं भंजनं भौ विषादं। अनन्तं अनादं स्वसम्वेद वादं॥ निरीहं निराधार ज्ञानं गंभीरम्। शरीरं मनो वाक वंदे कवीरं १॥

भयं भाननं काननं कर्म दहतं। दुखं दारिदं दालकं कालगहतं॥ मुनीशं ऋषीशं अहीशं अभेवं। जगन्नायकं पावकं सेव्य सेवं॥ वली केल गर्व दली बांह वीरं। शरीरं मनो वाक बन्दे कवीरं॥२॥

जनं पातकं घातकं सर्व दोषं। ग्रहंतं परे पार भौ काल कोषं॥ नभौ भूजनं पूजनं पादकंजं॥ कृतांतं कृतं निर्वृतं भम भंजं॥ दूरे चौर सोहं परे पौर थीरं। शरीरं मनो वाक बन्दे कवीरं ॥ ३ ॥

स्वसम्वेद वक्ता विरक्ता विहारं। गुणं निर्गुणं सर्गुणं सर्वसारं॥ अखंडं अदंडं प्रभुं निर्विकारं। महत्त्वं गुणं पंचतत्वं तु पारं॥ तरं तारनं कारनं तार तीरं। शरीरं मनो वाक बन्दे कवीरं ॥४॥

निराकार अंकार हंकार हन्ता। विषय वासना सासना शंक

अन्ता॥ अछेदं अभेदं अकोहं अमोहं। गुणं ज्ञान गेहं अदेहं अद्रोहं॥ कृपा लोचनं मोचनं मृत्यु पीरं। शरीरं मनो वाक बन्दे कबीरं॥५॥

क्षरंपार पुरुषोत्तमं अक्षरादिं। अलेखं अभेदं निरच्छरं अनादिं॥ गहंतं महाव्याल कालं करालं। दहंतं भवं संभवं दुःखजालं॥ नलेशं कलेशं न माया समीरं। शरीरं मनो वाक बन्दे कबीरं॥ ६ ॥

गुणानन्तधामं निकामं अयोनी। अविद्या परम हे क्षमा हेत छोनी ॥ उपायं पुनःपोष पालं कृपालं। दहादौर्महा भैरवी भैरु-कालं॥ धरा धारधै धर्मधी ध्यानधीरं। शरीरं मनो वाक बन्दे कबीरं ७

कृती सुकृति सुकृतो चिंत चीते। प्रभा ज्ञान गम्यं पदाम्भोज प्रीते। कबीराष्टकं ये पठंते प्रभातं। भने भूरिभै भर्म कर्म निपातं॥ लहे लाभ हिरम्बरं रम्य चीरं। शरीरं मनो वाक बन्दे कबीरं॥८॥

कबीर भानु उदय-सवैया

रवि आगम साख समागमको; घरियाल पुकार लगी जब लोही। सुनि शब्द निसान पिसान भये, सठ सेन सहायक दुर्जन द्रोही॥ नरनाग सुरासुर सीस नवै, उदयाचल पै रवि मंडल सोही। धन्य धन्य प्रभाकर धाम प्रभा, खलबाम बहे तुम्हरो मुख जोही ॥ १ ॥

कुलकंटक वक्त्र बिलाय गये; रथ चक्र लखे रवि चक्रवर्तीके। गुनज्ञान गँभीर हिये सरसे, दरसे परसे प्रिय प्राणपतीके। बडभाग सुभाग सुभागिनको, सुख साज समाज हे आज सतीके। विरहातप ताप सँतापवितै, भ्रम भये चलिगये गलि ज्ञान गतीके॥ २ ॥

यह रैन भयँकर घोर महा, तब तेज दहा तिहुँ लोकन स्वामी। अब सूझि परे कछु बूझि परे, सत्त नाम चरित्र पवित्र प्रनामी॥

१ नोट-भुजंगप्रयात छन्द चार भगणका होता है यथा-यचौं मैं प्रभूतं यह हाथ जोरी। फिरे आपुते न कबो बुद्धि मोरी। भुजंग प्रयातोपमा चित्त जाको। जरै ना कदा भूलिके संग ताको। छन्दप्रभाकर।

दुख दायक चोर चकोर चकार सब भाग अभाग कुमारग गामी। दृग दृष्टि खरी गुणज्ञान भरी, जगसीस करी तम पीस नमामी ॥३॥

सत्य कबीरको सत्य और मन राजाको झूठ ! दोनोंका युद्ध वर्णन ।

पढि सत्य अगार नगार दियो, निज सत्य व शुद्ध स्वरूप समेते। छबि पुञ्ज महा सुख भुञ्ज भले, धन धर्म रु धीरज ध्यान सचेते ॥ मल सोधन राग विराग जिन्हँ, नहिं क्रोध कषाय जहाँ लगि पेते। सुखदायक है सब लायक है, जन शोक सहायक दर्शन देते ४॥

असि मूठले झूठ उठे तिहिपै, जिनके हियमें सतते दुख भारी। एक ठौर कियो सजि सैन सबै, निज दौर जहाँ लगि ठानत रारी॥ तिहि संग अनी भल ढंग बनी, तब अग्र चला समुहे ललकारी। दलदम्भ ठटे खल है निपटे, गहि मान मलान जुरे सब छारी ॥५॥

रनशूर महाबल शूर सबै, नहिं नूर कहूँ लखिये तन कारे। सब अङ्गन वस्त्रन श्याम सजे, चलिये सब सत्यके युद्ध विचारे॥ अभिमानके कुञ्जर झूठ चढ़ा, निज फौज पराक्रम पुञ्ज सुधारे। मारनको सबही, अपनो अपनो बल वीर्य सकारे ॥ ६ ॥

तहँ सत्य अकेल सहाय नहीं, रिपु भै नहिं सो मनमें कछु मानी। इतने मह झूठ निशान बजो, अरु श्याम ध्वजा तहवाँ लहरानी॥ ध्वज टूटि गयो रिपु फूटि गयो, सत ताक पताक दिशा दृग तानी। तिहि तेज प्रतापहुते बहुते, सब भागि चले विथुनी विहरानी ॥७॥

कोई शूर सपूत बड़ो तिनमें, जो गुमान गहे पग डारत आगे। विनमें सबही निज मान गही, नहिं तेज सही मरिगे कछु भागे॥ दहिगो सब बाहन राहनमें, रहिगो यक झूठ अजौं जिय जागे। जग पेलि बढाय चढाय कियो, सत सन्मुख होकर युद्ध जो मांगे॥८॥

जिमि श्याम घटा रन आनि डटा, निज मत्त मतंग चलावत सोई। अति रूप भयानक धावन कै, जग जीव डरावन जालिम जोई॥

ज्योहि ज्यों सत्त समीप गयो, बलछीन भयो सब शस्त्रन खोई। नियरान गयन्दहि प्राण तबै जरि, छार भयो तब खाक मिलोई॥९॥

वैराग विवेक विचार बढे, अरु ज्ञान चढै है निशान बजाई। इन चारिहु युत्थप संग अनी, चतुरंग धनी दम संयम ताई॥ शुचि साधन मौन अरु दान दया, है आचार तपोधन कौन गनाई। दल साजिकै सत्य कवीर चढै; रिपु धीर कहा जो सके समुहाई॥१०॥

दुसरी दिशिते मनराव अनी, नहिं जात गनी अगनी गहि धाई। तह काम रु क्रोध है मोह महा, अरु लोभ रहा सरदार लडाई॥ निरदाय असत्त अशौच लिये, सब आय सहाय भये यक ठाई। चवगान समाज जुरे दल दो, घमसान परे तहँ लोह चलाई॥११॥

दिननायक सायक छूटि चले, महि खेसघनी ध्वजनी ध्वज टूटे। तमके दमके द्युति दामिनि ज्यों, दसहूँ दिशि घेरि लियो खल फूटे॥ करको सर कोटि दिवाकरको, सब देश विदेशनमें जब टूटे। नहिं शूर कोई भजि दूर गये, रिपुसेन सहाय सबे गहि कूटे॥१२॥

हरि श्वेत ध्वजा फहरान लगे, घहरान लगे हैं अनाहत ढंका। यम युत्थ अपार खभार परे, जितही तितही सब सोच ससंका॥ बल बीर कवीर के सन्मुख हो, नहिं धीर धरे तिरछा अरु बंका। गण तीर शरीर समाय गये, छनमांह भये सब कालको फंका॥१३॥

मद मार महामतवार चले, समुहाय बजावत ढोल दमामा। गहि शस्त्र अनेक चमू चमकी, पहिरे गहिरे रंग जामिन जामा॥ दुरबुद्धि दगा छल छिद्र पगा तहँ; कपट अखंड सगा सठ तामा। भय भर्म भयावन भूत चले, बहु दूत कपूत रले अघधामा॥१४॥

क्रमही क्रम ज्यों नियराय चले सियराय चले अगिले भट भोरे॥ हरुए हरुए बिचले बिचले, पछिले पछिपलि रहे कुछु थोरे॥ थिरता पद हानि डटे कितने, अभिमान ते बात सटे बरजोरे। जब पेलि अगार लगार चले, गहि गूर्जसों सुर्ज हडावरि फोरे॥१५॥

शर शब्द सरासर छूटि चले, यहि ओरते शत्रुके सेनमें छाई।
सब घायल भूमि परे छनमें, अरिचंड प्रचंड अनी विचलाई॥
गहि ज्ञानके गोलन सर्द कियो, महि मर्द गनी महि गर्द मिलाई।
रनमें मन राडको हाड गडे, वैराग विवेककी टेक रहाई ॥१६॥

बलवान विराग रु ज्ञान भये, रिपु सेन दिये सबही विचलाई।
जय शंख निशान रु घंट बजे, शहनाइ अनाहत केरि सुहाई ॥
चहुँओरते घेरि लियो गलियो, निज बन्धन बाँधि लियो मनराई।
गढमें पहरा बिठलाय दियो, अरु नग्र फिरी सतनाम दुहाई॥१७॥

प्रभु दीन प्रकाश जो उग्रनको, सोई सूपच छुद्र चमार चंडारो।
नहि तारत बार खला वृखला, अघओघ नसाय कसाय उबारो ॥
सम भाव दुराव नहीं जिनके, यवनादिकहू सुखधाम सिधारो।
कर्म नासहि देव सरी सभके, खल पावन सत्त हैं नाम तुमारो॥१८॥

प्रभु देखि सतोगुन व्यापि गयो, कलिमें धृत है कृतकी वृत बाना। महि भीतरको डर गाड घने, तम घोर न उझ्झ सभी उस थाना॥ निजु सेन समेत समाय तहाँ, तुमरे डरते कलि जाय छिपाना। चकचोंधरिचोचमगादरके, प्रभुनिन्दक ताहि न काहि ठिकाना॥ १९॥

रथ धर्म अरूढ अगार बढे, गहि ज्ञानन गूढ निसा मदहारी।
मुख सप्त तुरङ्ग सुरङ्ग सजे, प्रभु अंश प्रशंस पुरान पुकारी॥
सत नाम सही रथवाहक तौ, रथ चक्र जो वेद स्वसम्म उचारी।
गुरुचार सोई गुनचार वने, तप तेज अभै कर दुष्ट संहारी॥२०॥

कवित्त।

जम ज्वाल जरत जगतपति जोहि जग, जीवन जियावत जुडाव जगजरनी। भाग भल भक्त भगवन्त भजु भोर भोर, भंजत भरम भय भीर भय भरनी। वारिनिधि वोहित वदव बुध

बेदबर, वेद वरदानन बखान बर बरनी। कलि कलमख कुल कंटक कटक कोटि; कीर्तन कबीर करतारकर करनी ॥

कबीर भानुप्रकाशपृष्ठ २४१.

इति कबीर भानु उदय सवैया और कवित्त।

मध्याह्न संध्या-साखी।

साहब दीनदयाल गुरु, सो पर और न कोय। शरण आय यम सो बचे, आवागमन न होय ॥ १ ॥ दया करन अवगुण हरण तारण तरण उदार। अशरण शरण, वन्दू चरण तुम बिनु नहिं निस्तार ॥ २ ॥ देखि अधमता आपनी, परवश यमके हाथ। त्रसित गह्यो साहिब शरण, भव भय हारि सनाथ ॥३॥ प्रभु सब लायक पारखी, हौं भर्मिक अज्ञान। लोह कनक पारस करे, साहब शरण समान ॥ ४ ॥ वन्दों चरण सब दुखहरन, प्रभु प्रसाद दुख भूरि। दया करी सब दुखहरी, संसृत शूल भो दूरि ॥५॥ बहे बहाये जात थे, भौसागरके माँहि। दयाकरी पर्वाय सब, शरण आय गहि बांह ॥६॥ संतत अभय गुरुके चरण, सदा परख प्रकाश। समन सबे भवजालतम, राम रहस सुख वास ॥७॥ सर्वोपरि गुरुके चरण, जो हारी भवखेद। परम उदार सागर दया, थाह न पावे वेद ॥८॥ वारों तन मन धन सबे, पद परखावन हार। युग अनन्त जो पचिमरे, बिनु गुरु नहिं निरतार ॥ ९ ॥ संधि परखावे जीवकी, काटे यमको फन्द। साहब दीन दयाल सो, संशय खंडे द्वन्द्व ॥ १० ॥ द्वन्द्वज सत्य असत्यको, जहाँ नहीं कुछ लेश। सो प्रकाशक गुरु परख है, मेटत सकल कलेश ॥ ११ ॥ जाहि दया गुरु परखलहि, मेटे सब भव जाल। रक्षक बन्दी छोर सो, साहब दीन दयाल ॥ १२ ॥ भेष अमङ्गल नष्ट गुण जेते त्रयविधि फांस। अदल चलाई कालपर, सो त्रिदोषहिं नाश ॥ १३ ॥ अदल चलाई सत्यका, साहब बन्दी छोर।

पारख छोरे जीवको, यमका हाथ मरोर ॥ १४ ॥ दया दयाल पारखलहि, सुधरे सब भ्रमजाल । अदल चले तब सत्यका, शिर धुनि रोवे काल ॥ १५ ॥ प्रथम शब्द सुधारिके, टारे त्रयबिधि जाल। झायीं मेटत संधिको, ऐसो शरण दयाल ॥१६॥ पारख गुरु सुख बास है; जहां न फन्दा काल। सो विनु जीव विनाश है, चौरासीके जाल ॥ १७ ॥ जो रहस युत पारखी, साहब साँचा सोय । तरे तारे भव जालसे, काल देखि रहे रोय ॥१८॥ पारख तोडे भ्रम गढ, खीजे काल कराल । करि न सके प्रभुता कछू, ऐसो शरण दयाल ॥१९॥ सत्य शरण प्रभु पायते, टूटे मोहक डोर। अभय भक्ति पारख सदा; काल न लागे चोर॥२०॥ प्रभुकी शरण सहाय बिन, कैसे होय उबार । अधमकाल ग्रासे सबे, अपनी जाल पसार ॥ २१ ॥ परवश जियरा कालके, दुख पावे संसार। बिनु पारख भटकत फिरे, थके विचार विचार॥२२॥ चारि वेद षष्ट अंससो, प्रगट भये जग आय । अर्थ विचारत जिव थके, झगरा बहुत मचाय ॥२३॥ षट षट षटकी जानहीं, ते न परैं भव फंद। गुरु पारख प्रतापसो, सदा रहे आनन्द॥२४॥ महासागर संसार है, जाके संशय धार। सुर नर मुनि सब बहि गये, पारखि उतरे पार ॥२५॥ पारख अचल अखंड है, ताहि परे नहिं और । विनु तेहि भटकि जग रहे, जहां नहीं तिथि ठौर ॥ २६ ॥ राम रहस साहब शरण, अभय अशंक उदोत । आवागमनकी गम नहीं, भोर सांझ नहिं होत ॥ २७ ॥ नाशक के सब रूप हैं, रहे तेहि मध्य समाय। कष्ट विविधि विधि पावते, पारखलीन छुडाय ॥ २८ ॥ प्रभु शरणागत परख दृढ़, सत्य-लोक प्रणाम। सन्तत जीव बिलास है, टूटा काल गुमान ॥२९॥ जो जीव परख बिलासमें, लहे सदा सुख चैन । तिनके त्रास न

कालके, और कहेको बैन ॥ ३० ॥ परख विलासी जीवजे, धनी सोई संसार । और सबे निर्धन रहे, यम के हाथ खुबार ॥३१॥ संतत सुख है परखमें, साधन यतन विनास । भूलि भटक मति जाहु जिव, विविध कर्मके फाँस ॥३२॥ धन्य धन्य तारण तरण, जिन परखा संसार । तेई बन्दी छोर हैं, तारणतरण उदार ॥३३॥

अथ माध्याह्न दिनकी स्तुति

कबीरभानु प्रकाश पृष्ठ ५२८ (नराच छन्द)

प्रभुं परे पारायणं समस्त ज्ञानसागरं । विश्वंभरं धराधरं कृपा-करं उजागरं ॥ कलिकलंक नाशनं कबीर नाम नागरं । कृतान्त तीख त्रासनं कृपानिधे नमोस्तुते ॥ १ ॥

कृपा सुवारि तोषकं सुसन्तशालि पालकं । कृपा सुभक्ति-पोषकं पराग पापघालकं ॥ समस्तशोकशोषकं दरिद्रदोषदालकं। सुकृत्त सर्व सार कृत्त कारकं नमोस्तुते ॥ २ ॥

निजं निरीह निर्गुणं अनन्तलोकनायकं । अनादिदेवपायकं॥ करालकालदालकं तौ संकटं सहायकं । निरंजनं नारायणं नरो-त्तमं नमोस्तुते ॥ ३ ॥

गणेश शेष शारदं गुणानि नित्यगावनं । अजादि देव नारदं सुकृत्त नाम ध्यावनं ॥ शरीरभै नशावनं कबीर जक्तपावनं । सुभक्त चित्तभावनं सोहावनं नमोस्तुते ॥ ४ ॥

चकोर चित्त चौरकं चचारु चन्द शोभितं । सुनिन्द पादपं-कजं अलिन्द सन्त लोभितं ॥ विज्ञाननैन जोहिनं सुकण्ठ नाम पोहितं । निचिन्त निर्विकल्पकं सकल्पकं नमोस्तुते ॥ ५ ॥

क्रमं वनं सहारणं सुबारणं कुमारकं । विनीति प्रीति पालनं सुबुद्धि निद्धिधारकं । दुःख तरु कुठारकं भव भयविदारकं ॥ कबीर नाम तारकं विहारकं नमोस्तुते ॥ ६ ॥

अगोचरं अछेदनं अभेदनं अखण्डनं। सुभक्तचित्त मण्डनं शुभं भवं तरंडनं ॥ यशं भनन्त अखण्डनं प्रताप तो प्रचण्डनं। कृत्तांत दण्ड दण्डनं विहण्डनं नमोस्तुते ॥ ७ ॥

तव नाम ब्रह्मबीजकं शरीरवृक्ष मूलकं। द्विजार अष्ट फूलकं अनन्त लोक थूलकं॥ त्व सक्ति प्रक्तिसागरं द्विलोक वेद कूलकं। हनं शोक शूलकं ॥ अतूलकं नमोस्तुते ॥ ८ ॥

स्नेहवारि पूरितं विषै कुजन्तु भूरितं। चरितमुक्ति माणिकं विकारवासदूरितं ॥ पदार्थ अष्ट षष्टकं त्वभक्ति रत्न सूरितं। रमन्त योगिनानि राम नाम तो नमोस्तुते ॥ ९ ॥

मथतं शोकसिन्धु तो मुनीन्द्र नाम मन्दरं। धरा च वेद उद्धरन्त मच्छ कच्छ सुन्दरं। हिरण्य अक्षघालनं अनूपरूप भूधरं। निकाम काम दायकं सहायकं नमोस्तुते ॥ १० ॥

तो नारसिंह वामन द्विजाति राम पावनं। ब्रजैक वल्लभं नरेशकं सदावनं ॥ बउद्ध निष्कलंक गुणतो गुणनि गाथ गावनं। पदाम्बुजैक भक्त भौर भावनं नमोस्तुते ॥ ११ ॥

त्रयलोक लोक पालकं त्रयदेव देव यक्षकम् ॥ उपायकं च रक्षकं पुनः समस्त भक्षकम् ॥ त्व सर्व मय अक्षकं प्रतापतो प्रत्यक्षकम्। वसन्त वासुदेवकं अभेवकं नमोस्तुते ॥ १२ ॥

त्रयशूल पाणि दीन दानि कत्रशूल नाशनं। त्रय काल पाप त्रै पुरं तो दाहकं हुतासनम् ॥ समाधि तव अखण्डितं प्रचण्ड योग आसनं। शुभं करोति शंकरं भयंकरं नमोस्तुते ॥ १३ ॥

कवीर नाम आदितं सुभक्त चित्त राजितं। विमोह यामिनी गतं प्रकाश ज्ञान भ्राजितं। कलिमलं अपबंलं उलूक लेखभाजितं कवीर कारणं वरं कृपाकरं नमोस्तुते ॥ १४ ॥

जलं सुस्वाति नाम तौ सुभक्त चित्त चातकं। ककार ब्रह्म

राजसं वकार विष्णु सात्विकं ॥ रकार शम्भु तामसं उपाय पोष घातकं । समस्त दोष पातकं निपातकं नमोस्तुते ॥ १५ ॥

कबीर पाद पंकजं सनेम प्रेम ध्यायकं । गुणानि नाम कीर्तनं सुधाम काम दायकं ॥ विराग त्याग लभ्यते इदं पदं गहायकं। तरंत तारनं भयं विदारनं नमोस्तुते ॥ १६ ॥

अथ मध्याह्न-सवैया ।

कबीर भानुप्रकाश पृष्ठ ५३०.

तन भंग पतंग उतंग भये, बट पार जुबारकी खोजन पाई । बरते नव खण्डमें तेज महा, ब्रह्माण्डमें आनि रह्यो ठहराई ॥ पहरी अरु स्वान सुखी सबही, पथिको निर्भय श्रम पन्थ बिहाई । तुमरे परताप सन्ताप गयो, मम दंड प्रणाम तुम्हें रविराई ॥ १ ॥

गिरि कन्दर अन्दर दुष्ट दुरे, रवि तेजप्रवाह सभी तम भंजे। यम काल सकाल विहाल पडे, नहिं आय कोई धर्मराजके पंजे ॥ दृग दृष्टि प्रचंड ते अंड सुझै, जन रञ्जन पायनके रज अंजे। गुरु नाम चरित्र पवित्र लखे, खल चोर निशान निसाचर गंजे ॥२॥

तम वंश विध्वंस न संशकहूं, दशहूं दिशि हंस सभा सरसाई। मृत्यु नाथ अनाथ बेहाथ भये, बल वीरज धीरज तेज गवाई ॥ रमि राम चले पर धाम सबे, चहुँ ओर फिरी सत नाम दुहाई। भ्रम भंड करे न विहंडकने, यम दंडक दंडन मारि भजाई॥३॥

नहिं खोट है ओट उलूक लुके, सुचि सेत सती विरती वर गाजे। सब झार कबीर कबीर कहै, छल छिद्रपै भ्रम संशय भाजे॥ तिहुँ काल है सत्य कबीर सुखी, गुण गाव सभी सुखको सज साजे । यह बारह पंथ कला रविको, प्रभु पूरण ब्रह्म हो व्योम विराजे ॥ ४ ॥

हिमजार जुबार खुबार धने, निज शृङ्ग शिलापै किला घर छाई। बड वृद्धि भई खगरे वगरे, फिर स्वर्ग दिशा शिर ऊंच उठाई ॥

हरषे नहिं धर्म रखे करखे, दम संयम भक्ति कृषी दुख दाई।
जब सूर्ज तेज तपै तिनपै, तेहि बूर्जते धरि धूर्ज मिलाई ॥ ५ ॥

कहु सूर्जमुखी यक पाय खडा, चितवै चित चाहते सील नवावे।
जेहि प्रीति अभंग पतंग पिया, पदनीरजको धरि धीरज ध्यावे ॥
भ्रम भंजकहू वन कंज खिले, दिन भूप स्वरूप अनूप दिखावे।
गिरि निश्चल आसन ध्यान धरे, करुणा प्रभु लाल अमोलक पावे।६॥

प्रभु तीक्षण तेज तपै महिपै, बन लोल लवारन आगिते पूरी।
नव खण्डमें पवन प्रचंड चले, भरिमारन मूठिन ता दृग धूरी।
तम ग्रीषम झार अपार तपै, प्रभुनाम जपै जनभक्त अँकूरी। दिन-नाथ दयाल भये तबहीं, जनको सबही दुख कीनेहु दूरी ॥ ७ ॥
गुण खान पियाकी हिया हरषा, करि तोष तिया वर्षा झरि लायो। धरती भई गर्भवती तबही चहुँ खानिके जिन्सको वंश उपायो ॥ तप कीन महीननलों भलसों, अबतो सबको फल पूरण पायो। बडि वृद्धि भई पुत्र पौत्रनको, बहु रंगमें स्थावर जंगम जायो ॥ ८ ॥

फुलबागन फूल अनन्त फुले, धनवंत यथा यशवंत सुहाई।
जनु सम्पति पाय सती गिरही, श्रद्धा युत द्विज साधु बुलाई ॥
कहु वेल चमेलिन फैलि रहीं, हरि भक्तनकी जिमि कीरति छाई।
फल पूरित शाख नवे कितहू, मन अर्थ लहै जो गहे नमराई॥९॥

लहरी तृणपात भरी धरती, तपसिद्ध तपी ऋधि ज्ञान ज्यों पूरे। कहुँ ऊपर घास न फूस रहे, गम्म गुन्न विना हिय सून्य ज्यों कूरे ॥ जल कीच है भूरि न धूरि कहूँ, सतसंगतिसो जिमि दुर्जन दूरे। पर त्यागलो पंजन खंजनहू, भ्रम भंजन दरशते ज्ञान ज्यों फूरे ॥ १० ॥

कहूँ भूख सँहारक ऊँख भई, पर हेत सहैं दुख जो अधिकारा। कहूँ स्वेत कपास विकास कियो। पर छिद्र छुपावन जो तन धारा॥ कहूँ अन्न रु साग व पात उगे, तरकारि वनस्पति चौदह भारा। सुख साज सभी सब घेर मही, यह केवल भानु प्रताप तुम्हारा॥ ११॥

कक आदिपिता कथि वादि निता, खख सुन्न निरंजन ताहिते हेरा॥ खखते प्रगट भये खंड सबै, खख ज्योति अखंड दिशों दिशि हेरा॥ वसुदेव बकार विश्वम्भर है, बर बीज चराचर चीजचितेरा। रचनाके भंडारको धारकसो, धर ओष्ठन द्वारके ऊपर डेरा॥१२॥

भवसागर जालको काल बने, ररकार बडे सरकार कहायो। तिन खोलि केवाडि लियो, बितको तेहि ठाहर ते गहि बाहर आयो॥ तप घोर करे यक पाय खडे, भव बारिध जारिध राज लिखायो। तरनी-कक-है कडि हार-बबा रर-दंड तिहूँ जगको उधरायो॥ १३॥

ररकार धरे शिर बिन्दु जबै, इमि नाद रु बिंद है जिन्द यती सो। सो कृशान रु भान ससांक भये, नहिं पावत पार अपार गतीसो॥ ररबिन्दके बीच अकारछपै, कहँ रामको नाम विरंच मतीसो। रररेफ गफेलमें भेद सही, नहीं जात कही वह बात रती सो॥ १४॥

रर पूरण ब्रह्म निरंजन है, वह भाँतिके भाजन भञ्जन कीन्हों। बब बीज विना कछु चीज नहीं, दोउ एक भये रचना चित दीनों॥ कक कायक कर्म क्रिया सबही, फबही तबही जबही मिले तीनों। ककही बबही ररही ररही, सरही सब काम कबीर जो चीन्हो॥ १५॥

कक कंठपै बैठिके चेतनदे, जिव संठ उदार सुधारत वानी। बब अग्र गयो जहँ नग्र नयो, सरहद्द पै लद्द जमा सब आनी॥

ररवीर बली तब पील चली, कर क्रोध बिरुद्ध हो युद्ध जो ठानी। ककहू बबहू दबही रहिगे, ररको धरको थरको जगजानी ॥१६॥

कक केवल ब्रह्म है देवलमें, बबदीन कपाट सुपाट दुवारी। तहँ जाय जो कोय सो होय अभय, दरसै दरपै परब्रह्म पुजारी॥ कोई जान नहीं भ्रम भान नहीं, शक खोलकी टोल लगी तहँ तारी॥ रर रारकरी पट टार धरी, गहि भार भरी भव जार सँवारी ॥१७॥

करुणामय कंत कबीर कहो, कवि कोविद को कुल कर्म कटैगो। मन मोहन भीत मुनीन्द्र मिली, मद मोह मनोज सु मौज मिलैगो ॥ सत सुकृत सत्य स्वरूप सदा, सतनाम सँभाल सुधाम सटैगो। घन घोर घटा घट घाट गिरे, घटि घालत घूमर घेर घटैगो ॥ १८ ॥

रस पाय सुधा यस गाय बुधा, मम लेखनि पै सुर वृक्षकी शाखा। मुखते यहि अमृत धार स्रवे, न मरे न परे भव जो सब चाखा ॥ न लगे कहु भूख पियूष पिये, न हिये कछु और रही अभिलाषा। सब स्वारथको परमारथको, फल चार पदारथ हाथ न राखा ॥ १९ ॥

युग आदिहु मध्यमें अन्त विषे कलिहू कृतमें अरु द्वापर त्रेता। गुरु देव दयालहि चीन्हत जो, चरनों चित्त लाइके होत सचेता ॥ तिन सार लहा पुनि हार कहा, भवपार गये परिवार समेता। कर कोरिके जोटि प्रणाम तिन्हें, तिहुँ काल जो, जीवन को सुधि लेता ॥ २० ॥

छन्द मधुकर

सर्कार बडा। सर्कार बडा। विश्वास करो हो आन खडा॥ वैपार कडा वैपार कडा। जो तौल सबै गहि ज्ञान धडा ॥ जो डाल दियो सो डाल महा। कत्ताल समय पत्ताल गहा॥ जय जक्त पिता जगदीश यजो। कव्वीर कव्वीर कव्वीर भजो ॥१॥

साखी ।

हरि गुरु पीर कवीर लख, अलख पुरुष रुख जोय । हजरतको पहिचान जब, बजरत काल न कोय ॥ १ ॥

इति श्रीमध्याह्न स्तुति ॥

स्तोत्र ।

(छोटी एकोत्तरी नित्य पाठकी)

सतगुरु शरणं पंकज चरणं मनवच कर्म सदा गहियं । जग मरण भयं निवारणं अखिलेश्वर अभय कहियं ॥ भेषज नाम नित प्रति धामं महा काल दारुण गहियं । दीनदयालं जन प्रतिपालं भवसागर तारण कहियं ॥ १ ॥

भव भय भञ्जन अन्तक गंजन सन्त चकार मयंकं लहियं । अनहद नादं दहत विषादं सोहं हंसा निश्चलयं ॥ अजपा जापं हरत सन्तापं आदि नाम जपिये अमियं । सहज समाधं हरत विषादं दयावन्तं सुकृत चहियं ॥ २ ॥

करुणा आदं नाम अनादं मोहित मुनि गेहित वियं । परमानन्दं सचिदानंदं सत्यलोक दृढरोहनियं ॥ दीननबन्धुं करुणासिन्धुं अभयनाम जपिये अभयं । कलिकाल करालं फांसी व्यालं सत्यनाम निश्चय जपियं ॥ ३ ॥

स्थिरं ज्ञानं बीजक ध्यानं अक्षयनाम निज अक्षरयं । नाम उजागरपति सुख सागर अक्षय राज नायक कहियं ॥ अपरं पारं नाम है सारं तासु भजन भौ निस्तरियं । सुखसागर दाता जागृत त्राता अजर अमर सांचो लहियं ॥ ४ ॥

दुर्गंजदानी परम अभिमानी धर्मराय शिर मर्दनियं । कलिकाल करालं फांसी व्यालं तासु भजन भौ निस्तरियं ॥ अजर अविगत जान विश्रामं कृपा विशेषं निःअंशनियं । जय जय स्वामी अंतर्यामी त्राहि त्राहि करुणानिलयं ॥ ५ ॥

सूक्ष्मं स्थूलं सम्बी मूलं अनइच्छा रूप सुजस भनियं। अशौच अशेषी अमृत पियूषी सर्वं मयी अविनाशनियं। सुरति स्नेही अविचर देही आदि ब्रह्म अंचित कहियं। स्वतः प्रकाशं अमरनिवासं पोहपदीप सा मंडनियं ॥ ६ ॥

योग संतायन मुक्ति परायन जासु नाम अघखण्डनियं। सुनु धर्मदासं परम बिलासं सत्त कबीर सुमिरन कहियं ॥ इति ॥

गुरु शतकसागर नाम स्तोत्र।

छन्द चौकडी। गुरुबोधसे-

दीनबन्धु करुणामय सागर। हंस उधारण तारण आगर ॥ दीना नाथ शरण सुखदाई अभय तासु पद गुरु समराई। बन्दीछोर बिरद अति तासू हंस रूप प्रगट जग जासू ॥ अधम उधारण तारण स्वामी। प्रवर दिगार मालिक अनुगामी ॥ काल जालके काटनहारे। बिरद लाज राखन पति प्यारे ॥ धीरज क्षमा-तत्त्व संयुक्ता। राम भूमिका वासक युक्ता ॥ चिन्ता रहित अचिन्त गुसांई। पारख रूप प्रकाशक साईं ॥ अखिल ब्रह्मांडके जाननहारे। कर्ता नाम प्रकट विस्तारे ॥ निःकामी माया परचंडा। ताको नाशक पूरन ब्रह्मण्डा ॥ मंगलरूप गुसाईं आपू। जगत विदित पूरण परतापू ॥ साहब निर्भय पद दातारा। कर्त्ता पुरुष सबनके पारा। महामोह दल नाशक स्वामी। हंसन नाह अपार अगामी ॥ आनंद सिंधु अहंतातीता। रामरूपमें परम पुनीता ॥ सत्य यथारथ अतिप्रिय साधू। मन मायाको मेटेउ व्याधू ॥ पूजनीय अनुमान विनाशक। सत्य सुकृत प्रकाश प्रकाशक ॥ नाम मुनीन्द्र सबन सुखदाई। बारम्बार कहों गोहराई ॥ सत्यसिन्धु प्रभु दीनदयाला। नाशक अनुमय सहज कृपाला ॥ आप जीव निः-कर्म निधाना। शब्दी अजर अकाल सम जाना ॥ साधुरूप पूरन परमाना। गरीब निवाज गहहु गुरु ज्ञाना ॥ साईं शब्द परखावन

हारे। तारण तरण विगत संभारे॥ मन अनुमान गुमान विनाशक। मोद प्रत्यक्ष दान निज दासक ॥ वेद कुरान बुझाय यथारथ। मन कर्म बचन साधुमें स्वारथ॥ इति शत नाम गुरु गनि आयी। सब वृत्तांत गुरु मुख जो बुझायी ॥ साधु गुरु कव्वीर गुसांई। बन्दीछोर नाम जपु गाई ॥

स्तोत्रं । (कवीरं कृपालं)

(महंत मरजाद दास विरचित)

नमो आदि ब्रह्मं अरूपं अनामं । भई आप इच्छा रचे सर्व-धामं ॥ न जानामि कोई करै कौन ख्यालं। नमोहं नमोहं कवीरं कृपालं॥१॥ नहीं वेद ब्रह्मा नहीं विष्णु ईशं। नहीं पंचतत्त्वं नहीं ते अहीशं॥ नहीं जोतरूपा न माया करालं। नमोहं नमोहं कवीरं कृपालं ॥ २ ॥ नहीं देवदेवी न सूर्यं प्रकाशं। नहीं चंदतारा नहीं कोइ आसं ॥ नतो स्वर्गभूलोक नाहीं पतालं। नमोहं नमोहं कवीरं कृपालं ॥ ३ ॥ तहां आप इच्छा महाशब्द गाजं । विदेहं स्वरूपं अनूपं बिराजं ॥ भई शब्दते सर्वलोके विशालं। नमोहं नमोहं कवीरं कृपालं ॥४॥ तहां सच्चिदानंद लोके प्रकाशं। सदा सर्वदा हंस करते विलासं ॥ तहां आपते आप प्रगटे सुकालं। नमोहं नमोहं कवीरं कृपालं ॥५॥ भयो तेजरूपं सबै विश्व कांपो। कवीरं कवीरं सबै सृष्टि जापो ॥ सुनी दीनबानी भये हैं दयालं। नमोहं नमोहं कवीरं कृपालं ॥६॥ तबै नाथ नररूप अवनी सिधारे। धरे कालके फैल तेते उबारे ॥ महादीनदासे सु करते निहालं। नमोहं नमोहं कवीरं कृपालं॥७॥ करे कौन तेरी प्रशंसा सुबाना। थके विष्णु ब्रह्मा महेशो भवानी ॥ थके शेष गणनाथ बाणीवि-शालं। नमोहं नमोहं कवीरं कृपालं ॥ ८ ॥ न काहू कहूँ नाथ तुव पार पायो। अनादे अगम्मे निगम्मे बतायो॥ तुही निर्गुणं सर्गुणं रूपजालं। नमोहं नमोहं कवीरं कृपालं॥९॥ तुही कोटको-

टान ब्रह्मांड कीन्हो। तुही सर्वको सर्वदा सुःख दीन्हो॥ बसे सर्वमें सर्वरूपं दयालं। नमोहं नमोहं कवीरं कृपालं॥१०॥ जुदे सर्वतेहो मिले सर्वजीवं। अमै नाथ सर्वें लहे नाहिं सोवं। भई जोर माया असो चित्तहालं। नमोहं नमोहं कवीरं कृपालं॥११॥ सबे संतकारं सु तोही बतावैं। यही वेद ब्रह्मादि षटशास्त्र गावैं॥ जपै नाम तेरो भजे जो त्रिकालं। नमोहं नमोहं कवीरं कृपालं॥१२॥

लहे ज्ञान विज्ञान कैवल्यपूरं। महामोहमाया रहे ताहि दूरं॥ लखी ताहि डरपे महाचित्त कालं। नमोहं नमोहं कवीरं कृपालं॥१३॥ तजो विषय विस्मादके दुःख भाई। भजो रे कवीरं सदा सुःखदाई॥ विनय हों करों कवीरं धन्य पाप भालं। नमोहं नमोहं कवीरं कृपालं॥१४॥ चहो मोद जो नित्त चित्ते विचारं। कवीरं कवीरं कवीरं पुकारं॥ गहो चरण रहो रत तजो भर्मजालं। नमोहं नमोहं कवीरं कृपालं॥१५॥ सदादासपै तो कृपा जो विचारं। गऊ बच्छ ये तो हृदय प्रीतधारं॥ तजे स्वामि ऐसो जु हैं निष्ट-भालं। नमोहं नमोहं कवीरं कृपालं॥ १६॥ कवीर अष्टक जो सुने औ सुनावे। पढे प्रेम युक्ता सो मुक्ता कहावे॥ धरे संत प्रीते करे कंठमालं। नमोहं नमोहं कवीरं कृपालं। बिनै दास मरयादकी चित्त दीजे॥ १७॥ प्रभू दासको दास तो मोहिं कीजे॥ सदा दीनके तो हरो दुःख जालं। नमोहं नमोहं कवीरं कृपालं॥१८॥

कवीर सृष्टिकारणं अस्थूलसूक्ष्मधारणं, कवीरसंतरंजनं दरिद्रदोषभंजनं। कवीर ब्रह्मद्वयं अखंडव्यापतं स्वयं, प्रणम्य पादपंकजं कवीर सद्गुरुं अजं॥१॥ कवीर सत्तसुकृतं मुनीन्द्रकारुणायतं, कवीरयोगजीतयं अचिंत अच्रअव्ययं॥ कवीरज्ञानवर्धनं दयाल पाल सज्जनं, प्रणम्य पादपंकजं कवीर सद्गुरु अजं॥२॥ कवीर सर्वलायकं सभक्तमुक्तिदायकं, कवीर त्वं भजामि हं विदे-

हपुरुष वं स्वहं। कवीर सत्त सिंधये आद्यंतमध्यहीनये, प्रणम्य पादपंकजं कवीर सद्गुरुं अजं ॥३॥ कवीरचित्तकोमलं करोति हंस निर्मलं, कवीर सुंदरं वरं अनाद त्वं अगोचरं। कवीर त्वं निरंतरं वदंति संत तत्परं, प्रणम्य पादपंकजं कवीर सद्गुरुं अजं ॥ ४ ॥ कवीरतातमातरं स्वदेवमित्रभ्रातरं, कवीरयोगध्यानमे समूलमंत्र प्रानमे। कवीरनाम सर्वदा जपंति ऋद्धिसिद्धिदा, प्रणम्यपादपंकजं कवीरसद्गुरुं अजं ॥१५॥ कवीरनामभेषजं विध्वंस कर्मरोगजं, कवीरशरनचोत्तमं नृदंदमोदसत्यमं॥ कवीर त्वं भवागतं प्रबोधजीव आरतं, प्रणम्य पादपंकजं कवीरसद्गुरुं अजं ॥ ६ ॥ कवीर यह प्रसीदयं सजातिलोकधीरयं, कवीररूप जादृशंत जन्म मरण नाशयेत्। कवीर अस्तुतिर्नितं पठेह श्रेय शोभितं, प्रणम्य पादपंकजं कवीरसद्गुरुं अजं ॥ ७ ॥

स्तोत्र।

सानिर्विकारं गुरुरूप धारं संसारपारं स्वजनप्रियस्त्वं। यथा घटाकाश तथा त्वमेकं, शब्दं सरूपं कवीरं नमामि॥ कवीर नामं पतितं पुनीतं, युगे युगे स्वामि हरंत दुःखं। दातार मुक्ति पुरुषं पुराणं, चरणारविंदं सततं नमामि॥ कवीरब्रह्मा तु विष्णुः शिवस्तु, कवीरत्वं देव दे०्या समस्तु। मातापिता बंधु सखो

नोट–यह स्तोत्र जैसा मिला है वैसाही डालदिया है. संस्कृतके पंडितोंको इसके शुद्धाशुद्धका विचार करना चाहिये. यदि कोई पंडित शुद्धकर भेज देंगे या यह सूचना देंगे कि. सर्वथा अशुद्धही है तो दूसरी आवृत्तिमें रखने न रखनेका विचार किया जायगा.

नत्वा तं पदपंकजं सद्गुरुं प्रनतपालं दयालं। आदिपुरुषं विदेहंसरूपं अमरलोकेसुधीशं॥ भोभोसत्कवीरयोगजीतं मुनीन्द्रं, करुणामयंसर्वव्यापिकेवलं। शृणुतयां बंदीछोरं दयांकुरु, सत्यं चिदानन्द अखंड नामं। अद्वै अलै शब्द निर्वाणरूपं, निहंगमूलं सतसुकृतस्य॥ अजाबनंसप्तसिंधुः कृपालं, निस्तत्त्व-

निष्काम अजाभिनाशी । निग्क्षरंब्रह्मस्वयंप्रकाशी, 'अघखंडनं-त्वंसजीवनंच' पुरुषोत्तमं बंदीछोरं नमस्ते ॥ नमोस्तुते आदि निरक्षरस्यात्, त्वदक्षरं ब्रह्मक्षरस्य माया। समस्तमूलं च जानाति कोवा, भजामित्वंपाद पुरुषं बिदेही ॥ अंतर्बहिर्मन्यते कायवाचं, ध्यानस्मृतं पाद मुखारविंदं। जे नत्वगृह्य चरणंशरण्य, ते सत्य-लोके हंसागमख्यात ॥ मायापरे पुर्षत्वमेक सत्यं, अनाद चैतन्य स्वतंत्र नित्यं।सुखागरं सत्तलोकं अनूपं,सिंहासनं पुष्पदीपं निवासं॥ धनाद्यं, कवीर त्वं पारमतं न शेषं ॥ प्रणम्य त्वं पाद भो धर्मदासं, बंकेज सहतेज चतुर्भुजेषु। भवाब्धि कैवर्त चतुर्गुरूणां, चित्कोमलं सर्वंदुःखं हृतंच॥ चूडामणि नाम सुदर्शनंच,कुलपतेःप्रमोदं तत्कोल नामं । अमोलमाचार्य सुरतः सनेही, तद्दहितं हक्क सुपाकनामं ॥ तुभ्योनमः प्रगटनामंच धीर्य, किमस्तुति स्वामि परं पुराणं। असंख्य चंद्रार्क प्रकाशयुक्तं, पुरुषैकरोमं नच भाव तुल्यं । षष्ठ-हदसह सूर्य हंसह प्रकाशं, करोति ध्यानं चरणं नमस्ते॥ शिक्षा त्वयापुर्षबलवान माया, बिछोह कुरुवांत पदाम्बुजस्य । अपार संसार भो दीनबंधू, जानामि सर्वानि मनंत्तरेषु ॥ पुरुषं च एकं सुतह षोडशानां, भवेभिन्नतामे निराकार अद्या। शिवंशक्तिजायं विधिहविष्णुरुद्रो, कियोचारखानीसुजक्तंसमुद्रो ॥ कूर्म जलारंग विवेकज्ञानं, दया क्षमाशील निःकाम धीर्य। अचिंतमानंद सुभाव प्रेमं, सतोष सहजं निरंजनाद्या ॥ अग्र च भृङ्गं मथह सुर्तिसोहं, सापंचमे योगजीतं अमीयं । मुक्तामनिर्नाम वेहदी विहंगं, कवीर त्वं सर्व बीजम् प्रनामं ॥ नमोस्तुते आदिपुरुषं बिदेह, त्रैलोक वेदान सर्वोपरित्वं। अनंतब्रह्मांड त्वयाश्रितं च, निर्गुणोगुणस्यात् बिस्तारकारं॥ नमोस्तुते स्वामि समर्थ रूपं, संतायनं सत्तनामं च ज्ञानिं। अग्रं अचिंतं पुरुषं मुनींद्रं, करुणामयं योगजीतं अमीयं(१)

हंसो हितार्थाय वंदेगुरूणां, मे देहि मे देहि चरणं शरण्यं ॥ नमो नमो उग्रनामं प्रसिद्धं, दयापाल दृष्टो समग्रं समुद्रो। यथा भानु उदयत्तमोपुंजदहनं, तथास्तु प्रतापस्य चरणं प्रपद्ये ॥ नमोस्तुते वंशबयालिसं च, चरणामृतंपानमहाप्रसादं। गुरोःकृपायस्य सदा शुभस्य, शरणागतं मुक्त भवेतहंसा ऋद्धिचसिद्धिचबुद्धिच दाता, विवर्धनं भक्त त्वमेव त्राता। येभक्तिकुर्वन्तितत्वत्पाद पद्मे, प्रमुच्यते तस्य दुःखस्य राशिः ॥ सर्वांघदहनं च यो जीव मुक्तो, इदं च स्तोत्रं नित्यं भणंते। पुरुषस्यअंशं नमोहंसवंशं, प्रणम्यत्वं दास शीतलं शरण्यं ॥ नमः स्तुतिं स्वामि जानामि को वा, अकथं महत्त्वं परंपुराणं । सदा कृपा हंसदितार्थ रूपं, मे देहि मे देहि चरणं शरण्यं ॥

स्तोत्र ॥

नमामि कलातीत कामादि रहितं, वरिष्ठं बरीयान विज्ञान सहितं। ररंकारमस्मी सदाकाल धन्यं, रमेतिकवीरं न भेदानभिन्नम्॥ स्वयं शाश्वतं केवलं ज्ञेयरूपं, निजानंदमूर्तिं अखंड सरूपं। सुधाशब्दपुंजं चिदामर्कइंदुम्, सदोदित्यनुदेंश तेजारबिंदं ॥ गुणं निर्गुणं वर्णाश्रमं धर्मरहितं, स्थितप्रज्ञगुह्यं समे चित्यसततं। महदादिमेको गुणातीतनित्यं, षष्ठंचतुष्ठादिशब्दादिव्यक्तम्॥ पृथ्वी तेजआकाशतोयं समीरं, निजार्किचिदंतर्व्यापककवीरं। अनामं अनादिं श्रुतिर्यं वदंती, कवीरादिशब्दं गिरा न रंवदंती॥ उदयास्ततीतं परापारमीशं, तुरीयादिमेकं स्फुरंतं अशेषं। दयाआदिदे धर्मसंपन्नज्ञानं; लोभादिरागादितमनाशभानं॥ अव्ययवलं निर्गुणं निर्विकारं, अनादिमव्यक्त गगनोपकारं। पक्षविपक्ष निजदेशकालं, नमामि कव्वीर गिरासूत्रमालं॥ इदं सर्वं जगतं महा इंद्रजालं, मृगावारपश्यं प्रभो प्रभिवालं। प्रभु बरदयालं जनानंदकारी,

पुरुषोत्तमोयं द्विजपादवारं ॥ महारौद्र घोरं नरेशान वंशा, तोयं च बारं च वहिनींद नीशा। मदो दम दमंतं मतंगं च दीशा; मृगादी च पश्यं करीशब्दचीशा ॥ महाभयं च सुलतान सजदापि जाई, कद्मखाखकैवल्य खुदेतं खोदाई। मुरशिद मिहरबान साहब दिगारभ। गुनहगार बन्दा तकसीर वारम् ॥ विनय वेश सततं च करुणा निधानं। सदा सत्य संगादि ध्येयं च ज्ञानम् ॥ रागस्थादि बन्दीछोरं नमामि, सदानन्द रूपं कवीरं भजामि ॥ इति ॥

स्तोत्र ॥

भो कवीर हरन पीर धीर बुद्धि धारणं। सत्यनाम परमधाम सर्वकरण कारणं ॥ हंसभूप परमरूप वेद विद्य छेदक। न्याय नीत अति अजीत ज्ञानवृद्ध धारणं ॥ संतरक्ष साधुपक्ष भक्तमुक्त तारणं। गुणातीत भयाभीत सर्वशिष्ट मंडनं ॥ निराधार सताधार परमपार पारणं। प्रणत पाल अतिदयाल कालजालटारणं ॥ दयासिंधु क्षिमाइंदु श्वेतबिंदु शोभितं। शब्दरूप अति अनूप अमीरूप सारणं। अकहनाम त्वं अकाममानहीन पालनं। पाप ताप दहनकृत्य तिहुँ ताप नाशनं ॥ भवातीत जोगजीत हंसरूप लक्षणं। सत्यरूप गुरुसरूप शरणागत तारणं ॥ प्रगट प्रतक्ष अक्षज्ञान रूप साक्षिनं। सत्यनाम आदिपुर्ष सर्वघट भासनं ॥

सद्‌गुरु पदरत प्रीत अति, सारं सार बिचार।
सत्तनाम हंसा गहे, उतरे भौनिध पार ॥

कवीरचालीसा।

ॐ नमो आदि ब्रह्माय शब्दे सरूपं। नमोजीवजावद्धमय-विश्वरूपं ॥ गहु शरणप्रानी जो सुखसिंधु चहु रे। कव्वीर कव्वीर कव्वीर कहुरे ॥ १ ॥ का रूप करताय निरताय देखो। वा रूपविस्तार नहिं आन पेखो ॥ रा रूप रमताहि सब मांहि रहुरे। कव्वीर

कव्वीर कव्वीर० ॥ २ ॥ का कृष्णरूपं सरूपं अरूपं । वा विष्णु धारी सबे देव भूपं ॥ रा रुद्ररमताहि दमताहि गहुरे । कव्वीर कव्वीर कव्वीर० ॥ ३॥ कहुरे का कुलकुला जो नहीं आन कोई। वा बेलबेली अकेली न दोई । रा रार मेटो समेटो न बहुरे, कव्वीर कव्वीर कव्वीर० ॥ ४ ॥ का काहि कैवल्य करताहि आपे। वा बीजविस्तार हरै तीन तापे । रा रोमरोमाहि नर ताहि गहुरे । कव्वीर कव्वीर कव्वीर० ॥५॥ का काल मरदम् सो हरदम जपोरे। वा बीज जेठरान तप ना तपोरे॥ रा राह निरबाह गुरूबांह गहुरे। कव्वीर कव्वीर कव्वीर० ॥ ६ ॥ का कहि डरपेजु अरपे सिरूको। वा बोलबोलै सो गहुरे गुरूको॥ रा राह एही सो देही न दहुरे। कव्वीर कव्वीर कव्वीर० ॥७॥ का कोउ तेरी सो महिमा पढे है। वा कइय रूपे सरूपे गढे है॥ रा रमताहि सबमाहिं अहुरे। कव्वीर कव्वीर कव्वीर० ॥८॥ जिहि पाय इच्छाय सतलोककीन्हा। उपजाय कंजाय तहां बासलीन्हा। बहुभांति सुखधाम तहां रास रहुरे। कव्वीर कव्वीर कव्वीर० ॥ ९ ॥ तहां एक अंडाय तेजासुभयेऊ। करि लोकन्यारा सु त्रैलोक दयेऊ॥ तिहि आय जगजीव जम दाह दहुरे। कव्वीर कव्वीर कव्वीर० ॥१०॥ जी त्रास जम फांस करुना उचारे। हे पुरुष हे पुरुष बानी पुकारे॥ सुनी श्रवण झनकार रुस्कार बहुरे। कव्वीर कव्वीर कव्वीर० ॥ ११ ॥ नर रूपधर भूप गुरुरूप धाये। जिमि दाढ बाघेसे सुरभी छुडाये॥ तिमि जगत जम जीव गजग्राह गहुरे। कव्वीर कव्वीर कव्वीर० ॥१२॥ दै सत्यशब्दे बिदारी विथा है। जुगन जुगन जीवकी बरनी कथा है॥ कलजुग जिवकाज दुख आप सहुरे। कव्वीर कव्वीर कव्वीर० ॥१३॥ है ब्रह्म आपे सु लीला करी है, न तत्त्वपांचों न देही धरी है सुखदुःखन्यारे है कहबे में अहुरे। कव्वीर कव्वीर कव्वीर

कहुरे ॥ १४ ॥ शाह सिकंदर सु अंदरमें लेखा। कैसा फकीरा य चहिये तो देखा ॥ कर बांध पग बांध बोरे सु दहु रे। कब्बीर कब्बीर कब्बीर कहुरे ॥१५॥ टूटे है जंजीर बैठे हैं तीरा ॥ बोला सो शाह यह सांचा फकीरा ॥ फिर बोल बोले कि गजमस्त अहुरे। कब्बीर कब्बीर कब्बीर० ॥ १६ ॥ मातंग माते न जाते ढिगे हैं। लख रूप सिंधें सु चिक्कार भगे हैं ॥ देशाह अजमत स्वामी सु बहुरे कब्बीर कब्बीरकब्बीर कहुरे॥१७॥ देखो सबे काम करता खिजूका। भर तोप गोला सु रोपा बिजूका ॥ जिम देह गजतूल गोली न लहुरे। कब्बीर कब्बीर कब्बीर०॥१८॥ हे दीनबंधू दया देख अंदर। गत जौन जैसी सो नाचत सु बंदर॥ तिय आप शाह सिकंदर जो चहुरे। कब्बीर कब्बीर कब्बीर० ॥ १९ ॥ फिर शाह बोला य गोला न डरपे। तेगे अनेगे चलाया है गरपे ॥ जल धार जिम सार मझि आय बहुरे। कब्बीर कब्बीर कब्बीर०॥२०॥ कहांलो कहों और केतो कहानी। तजी स्वामि ऐसो भुलानो रे प्रानी॥ निष्काम निष्क्रोध निरलोभ बहुरे। कब्बीर कब्बीर कब्बीर ॥२१॥ हाराहै शाह सो दैऽनेक पीरा ॥ नाहीं फकीरा यह है आप पीरा ॥ जाना सो नरनाह सरनाह गहुरे। कब्बीर कब्बीर कब्बीर० ॥२२॥ खूने अनेक जो शाहूने कीन्हा। जानाजी अपने सु चितमें न दीन्हा ॥ जिमितात सुतकेर औगुण न गहुरे। कब्बीर कब्बीर कब्बीर०॥२३॥ डारे सु सिरपेज ऐंचे जु मूंछे। का लेत। का लेत। बातें सो पूछे ॥ हे स्वामि सबकेर सब माहीं बहुरे। कब्बीर कब्बीर कब्बीर० ॥२४॥ फिर एक औरे सुनोरे गुनोरे। तजि-स्वामि ऐसो न सीसे धुनोरे॥ कही है पुरी आप काशीमें रहुरे। कब्बीर कब्बीर कब्बीर०॥२५॥ गोपालपंडा सो अटका बनायो। फूटा है पटका सु चटका बुझायो॥ काहू न ताको वो भेद लहुरे। कब्बीर कब्बीर

कब्बीर० ॥२६॥ बोधे दोई दीन तहां कीन्ह ऐसो । समुझाय दरसाय जिहि जौन जैसो । तजि देह दोहु और हथियार गहुरे । कब्बीर कब्बीर कब्बीर० ॥२७॥ दोहु ओर क्रोधा सु जोधा बडे हैं। अपने जु अपने सु प्रनपे अडे हैं ॥ तक तास नियरान यह बानगहुरे। कब्बीर कब्बीर कब्बीर० ॥२८॥ देखो उघारी उहां है वो नाहीं । केहि काज लरते सु मरते वृथाही ॥ तब आय दोउ दीन देखा न अहुरे । कब्बीर कब्बीर कब्बीर० ॥२९॥ स्थूल धर फूल अग्रान भारी हे ब्रह्म! हे पीर ! रटना पुकारी ॥ सुनी दीन बानी सु तिहि दर्श बहुरे । कब्बीरकब्बीर कब्बीर० ॥३०॥ पुनि एक औरे सुनो रे सुनाऊं। लखि स्वामि ऐसो सु दिन रैन माँऊँ ॥ तत्वाव जीवा प्रण ऐसो गहुरे । कब्बीर कब्बीर कब्बीर० ॥३१॥ सूखो हतो एक लकडा पुरानो । हरिआय जिहि चरण चरनोद जानो॥ गाडो है सो आय अगनाय बहुरे। कब्बीरकब्बीर कब्बीर० ॥३२॥ जुरि आय बहुभेष द्दग देख लीजे। पानी सो छानी औ गुरुजान कीजे॥....साधू सो है सूर प्रण पूर गहुरे कब्बीर कब्बीर कब्बीर० ॥ ३३ ॥ न्यारे सु न्यारे ले चरना पखारे । जिहिभांत जिहिरीत करप्रीत ढारे ॥ हरियान नाही सो उरदाह दुहुरे । कब्बीर कब्बीर कब्बीर० ॥३४॥ तब जानजन प्रीत प्रण पूर आये। उर दाह लागी सो छिनमें बुझाये ॥ लै चरण चरनोद मनमोद बहुरे। कब्बीर कब्बीर कब्बीर०॥३५॥ डारो है कर प्रीति परतीति आयी । हरियान निरजीव सरजीव भायी ॥ दोऊ बन्धु निरद्वंद सरना सु गहुरे । कब्बीर कब्बीर कब्बीर० ॥ ३६ ॥ सो टूट ना आय जी जगत केरे । जर भक्त अंकूर जमराज पेरे ॥ सो आप गुरुरूप निजरूप बहुरे। कब्बीर कब्बीर कब्बीर० ॥३७॥ चरना दइ मृत्यु समरत्थ केरो । करुनाक्षकी कोर फिर आप हेरो ॥

हरियान सो पान नर ताहि गहुरे । कब्बीर कब्बीर कब्बीर० ३८ नर धाय पदकंज मनमंज कीजे । यह चैन वह चैन सुखबास लीजे ॥ दोऊ ओर कर पच्छ सो स्वच्छ गहुरे । कब्बीर कब्बीर कब्बीर० ॥३९॥ कही ताहिसुखलाल सुखलालबरने । मिटि जात जगतात जन्माद मरने ॥ यह जान मन मान मरना सु गहुरे । कब्बीर कब्बीर कब्बीर कहुरे ॥ ४० ॥

साखी ।

चालिस छंद प्रबंधये, बांचत डरपे काल । साधन प्रेम बढा-वहीं, जम दूतन को साल ॥

इति कबीरचालीसा ।

अथ अरजी नामा ।

करतहों पुकार मेरो तुमही हो अधार, सुनु बेगही गोहार साहेब वार काहे लायेहो ॥ बडे बडे संकटमें संतन सहाय कीन्हों, राखो प्रण जनको निज पैजहू बढायेहो ॥ जनको दुःख दुखित देख संतनको कलाप मेट, दहन दुखदाप सुखसागर देन आयेहो॥ सेतुबंद बांधवेको रामचन्द्र बिकल भये, लिखे सतरेखा जलपा-हन उतरायेहो ॥ द्वापर पगुधारे निस्तारे नृपबधू ब्याल, विषम विडारे जमफंद ते छोडायेहो ॥ पांडोंके कुमार बिकल यज्ञके प्रकार, बहे संसेकी धार हारि सीस भुमि लायेहो ॥ वाको यज्ञ सारो बिडारो दुखदारुणते, सकल भेष भूपन मिली जय जय उचरायहौ ॥ कलउ तन धारे सब भेषनके काज सारे, प्रथमें पुरुषोत्तम पुरि देवल थपाये हौ ॥ सागर हटाय भ्रम भौजल मिटाय, परगटे अनंत रूप चकित द्विज कराय हौ ॥ बलख सिधाये छुड़ाये बहु भेषन दिढाइ, सुलतान भक्ति मारग लगाये हौ ॥ सिंधु वोहित बचाये दाह पंडन को बुझाये, आये नगर

काशी पुरबासी गुण गाये हौ चर्चा भई भारे काजी पंडित पचि-
हारे, इस्मकूँ फेर शाह सिकन्दर समुझाये हौ ॥ शेंख तकी बार
बार कसनी लेके रह्यो हार, कुदरत कमाल सुत मृतक जिवाये
हौ ॥ गोरखपुर मगहर बोधे दोऊ दीन परबोधे, बांधो गढ बघेला
रानाखाना सचुपाये हौ ॥ कौतुक दिखाये नदी आमी बहाये तहां,
धाये नर नारी मन वांछित फल पाये हौ ॥ जीवनके धनी हौ
गुनी प्रभुताके लायक, जैशी जाकी आशा तैसेही ताकोपुराये हौ ॥
बट बीज बोवाये खोजि हटाये, संशय मिटाये, जन ज्ञानी
समुझाये हौ ॥ हेरि तको अपनी ओर कृपा करों चक्षुकोर, निर-
खत हौं तुम्हारी ओर काहे न धाये हौ ॥ हौं सपूत और कपूत
दोउ लाज पिता औ जननीको, अपनो प्रण पक्ष जानि नाहीं
बिलगाये हौ॥ जाको जन बिकल कल कैसों ता साहब को, दास
की हँसाई ठकुराई हँसी जाय हौ ॥ बंदीछोर नाम तेरो बेग बंदी-
छोर मेरो, हौं तो अधीन तेरो चेरो कहा अनेरो ठहरायहौ ॥
तुम्हरो बल जान ठान जीवनको दीन्हो पान, सुनि लीजे बिनती
मान धर्मनि गोहराये हौ ॥ तब प्रगटे सत्यगुरु कबीर धर्मनि
चित्त धारो धीर, तन पुलकी चक्षु नीर धाय पाय लागेहौ ॥
निरखि बदन विकल बोले पग प्रकाश मन मुकुर डोले, हिय
उमंग मन मुदित खोले हौ ॥ पग पैकर गयो छूटि गुफाद्वार गयो
टूट, जमराज घर भयो लूट लखि दुर्जन सब जागे हौ ॥ द्वारपाल
कीन्हों शोर सबे धाये चहुँ ओर, करत कलाप हाय रोर पुत्र
दुखित शाह भागेहौ ॥ दंपति कहे करजोर पुत्र इन मारा मोर,
हमहू कस करब दौर पुत्र बिना अनुरागेहौ ॥ तब बोले सत्यनाम
बेन शाह हृदय राखु चैन, तेरो सुत मिले ऐन तजु कुबुद्धि कागे-
हौ ॥ साजि आरति अनुमान शाहसुतको दीनो पान, तब बालक

गोहरान लोक सोभा अनुरागेहो ॥ धर्मनि चित्त भये अनंद, मिले सकल काल द्वंद्व, छोरेउ सतनाम बन्द, चूक बखशाये हो ॥ धर्मनि दासानुदास, सत्तनाम गह्यो विश्वास, सत्य कबीर आये हुलास प्रेम उमंग पागेहो ॥

इतिश्री अर्जनामा गुरु धर्मदासजीका।

अथ अर्जनामा ॥ २ ॥

गोस्वामी गरीबदासजीका ।

सतगुरु मिहरबान् कीजे सहाय । जल थल सकल संग मौले मलाय ॥ जलबुंदसे साज कीन्हा निशान । जठरा अग्नि बिच राखे अमान ॥१॥ जठरा अग्नि बिच राखे सही । अमृत अमि खीर प्याया मही ॥ नापैदसे पैद कीन्हा है पिण्ड । जामे भँवर अर्श कुर्सी है अंड ॥ २ ॥ स्वासा सहस धुनि शरीकत सरार । वह कौल बिसरा जो कीन्हे करार ॥ कुर्बान कुर्बान कुर्बान जाँह। भयकी दरिया बीच पकडी है बाँह ॥ ३ ॥ निश्चल निराकार निर्गुन अनूप। स्थिर अनाहद सलाहद सरूप॥ रहता है अर्श पै जो पर्दे अदेख। है बेचगूनं नमूनं अलेख ॥ ४ ॥ खालिक खलक बीच हाजिर हुजूर। बाजे सुहगम विहंगम जो तूर॥ मौले मुरारी अटारी जलाल। ता बीच साहब सुबहाँ विशाल ॥ ५ ॥ खाने चरवादार बाँदीका जाम। लटका करूँ मेरी लीजो सलाम॥ मौला साहब मेरी मटो न शंख। मोसे पतित तैं उधारे असंख॥६॥ साहिब चितानंद सतगुरु अलेख। मोसे पतित तैं उधारे अशेख॥ अगह अगम दीप ऊँचा सुमेर। कैसे चढौं जु फिरंगी है फेर ॥७॥ तुही है तुही है तुही है सुभान। नापैदसे पैद कीन्हा जहान ॥ तुही है तुही है तुही है अखोज। नापैदसे पैद कीन्हा है लोक ॥ ८ ॥ तुही है तुही है तुही है हकीम। नापैदसे पैद कीन्हा मुकीम ॥ दुनिया दिवानी बिगानी बिकार। समझे न बूझे

अनारी गवाँर ॥ ९ ॥ साहब दयावंत अविगत अपार । सोऽहं सोऽहं भँवर गुँजार ॥ दुनिया विलोमान होती हनोज । कीजो बे यारो परम हंस खोज ॥१०॥ फना है फना है फना है लगार। माटी मिलेगा जो करता सिगाँर ॥ हस्ती रु घोडे रु जोडा जहान । फना दीन दुनिया जमीं आसमान ॥ ११ ॥ राजा न रैयत रहेगा न कोय । रहेगा चिदानंद उपजा न सोय ॥ भाई भतीजे रु जोरू जमाल । देखैंगे लडके जो होगा हवाल ॥१२॥ दादीरु फूफी बहिन रोवैंगी रूह । जम आनि पकड़ेगा जब दू बदूह ॥ मौसी रु मामा अलामा जहान । शुकदेको पूछो जो विरकत परवान ॥ १३ ॥ हजार बार तोबा जो खैंचे हदीस। कहो कौन मेटेगा जमकी कशीस ॥ काफिर करद बाँधि खाते बकरीद । जमकी । तलब कैसे होगी रसीद ॥ १४ ॥ मुरगी रु बकरी ढँढा रु ढोर । खूनी भखैंहैं शरअ के जो चोर ॥ चाकर चरवाहा रु देखैं खवास । जब आन बीतैंगी जमकी त्रास॥१५॥ करियो बे यारो कुछ चलनेका सूल । दरगह न पहुँचे नबी ओ रसूल ॥ मुहम्मद नबींकूं न पाया है राह । अर्श पंथ बाँका है अगमो अगाह ॥१६॥ शरेकी शरीकत तजा है न दीन । उलटा अपूठा परा है जमीन ॥ दोजख विहिश्तका जो देखा हैं अंत। जा बीच जमराय तोडे है दंत ॥१७॥ दोजख विहिश्तको देखा जो उनमा न । जा बिच जमराय काटे जुबान ॥ दोजख विहिश्त हैं जो बाँकी उजाड । जा बिच जमराय तोडे है जाड॥१८॥ करियो बे यारो खजाना खरीद । संग ना चलै देखो दीद बरदीद ॥ संग ना चलेगा सूई रु सुमेर । काफर कुटन करते घेराहि घेर ॥ १९ ॥ झूठा करम कूर काफिर कूँ जान । अहरनकी चोरी सुईका जु दान । मूजी मुजावर व पापी प्रेत ।

सूमका ससुरा न सांईसे हेत ॥ २० ॥ सद्गुरु चिदानन्द अविगत अपार । पाजी खानेजाद तुम्हरे अघार ॥ सतोगुनका सामां जमैयत जमाल । देखे तमाशः सब कुदरत कमाल ॥ २१ ॥ शीलके सरोवरमें नहाना हमेश । प्रेमपद पारसका दीजे उपदेश॥ बुद्धिका बखतर औ पाखर प्रतीत । सोहं जपमाला भज अविगत अतीत ॥ २२ ॥ बुद्धिकी बन्दूक और दृढकी दे ढाल । चित्तका चकमक भर दारू दर हाल ॥ पवनका पलीता व गोला गुलजार । दोदलकी खिडकीसे उतरोगे पार ॥ २३ ॥ ज्ञानकी गादी समाधी गलतान । दयाकी दुलीचेपे धरमका निशान ॥ द्वादश दल जीतनको तत्तकी तलवार । अर्ध उर्ध तकिय बिच दुर्जनको मार ॥२४॥ नामकी नवकी कर मनकूं मलाह । चित्तका चंपु ले सुरतसे चलाह ॥ अर्शमें आसन सिंहासन समोय । उदित भानु चन्द्र ओ कला संख जोय ॥ २५ ॥ तत्त्वका तिलक करले गायत्री लाप । शून्य सिखर गढमें जप अजपा तु जप ॥ अरसठका न्हाना त्रिवेणीके तीर । सर्वज्ञ साहब भज कायम कबीर ॥ २६ ॥ मानसरवर दरिया जहाँ चुगते हैं हंस । लगे गैबगोता जहाँ भेटे परमहंस ॥ अछय वृछ अर्श बीच फूला गुलजार । अर्थ धर्म काम मोक्ष पाये दीदार ॥ २७ ॥ पात पात विष्णु बैठे शिव विरंचि शेष । सतगुरु कुर्बान जाऊं ऐसे उपदेश ॥ सद्गुरु चिदानन्द माया न मोह । निर्गुन निरालम्ब जाना है तोह ॥ २८ ॥ कासे कहूं भेव परवरदिगार । जाना हम जाना है अविगत अपार ॥ अर्श बीच बैठा जो मारे गिलोल। देखो वे यारों कुछ नहि तोल मोल ॥ २९ ॥ पीताम्बर पटमें हैं सूक्ष्म सा रूप । सुरति नाल चलती है छाया अनुरूप । सतगुरु आवाजी निवाजीलिलाट । सुनो अर्ज नामा पढनके जो

घाट ॥ ३० ॥ ब्रह्म तेजताली हमाली हुजूर । अग्रपंथ पाया समाया जहूर ॥ सतगुरु शरीकत हकीकत जवाब । कहो कौन लेगा शरेमें हिसाब ॥ ३१ ॥ मौले मिहरबान मालिक मुरारि । हीरा हिरम्बर तुही वारपार ॥ सतगुरु दिगम्बर विश्वम्भर दयाल। पलमें निवाजे जो नजरे निहाल ॥ ३२ ॥ अगम ज्ञान लासा खुलासा जो सैल । पपीली न पहुँचे जो लादे है बैल ॥ गरीबदास छाना है नीर खीर । कुर्बान कुर्बान कायम कवीर ॥ ३३ ॥

इति अर्जनामा गरीबदासजीका ।

अथ अर्ज नामा ॥ ३ ॥

सतगुरु मिहरबान कीजे करम । गाफिल खुदी दूर दिलका भरम ॥ १ ॥ बहुत रोज बीते मैं तेरी शरन । स्याही गई अब सफेदी बरन ॥ २ ॥ मुझे बहुत अंदेशा किया मैं जो फेल । बदी बहुत कीता ओ नेकी निसेल ॥ ३ ॥ क्या मैं करूं संगी बुरे सोहबती । किया चाहते ये मुझे बे हुरमती ॥ ४ ॥ आजिज मैं तनहा दुसमन जबर । अर्जी करूं मैं मेरी लीजे खबर ॥ ५ ॥ सतोगुनकी चौकी व अपनी भगत । इतनी नाथ कीजे सो मेरी मदत ॥ ६ ॥ काया कोट माहिं मैं निशिदिन लडूँ । दुशमनकी लशकरसे नाहीं डरूं ॥ ७ ॥ नवे मोरचा खूब कायम करूं । देशमें जमैयतसे लगाकर रहूँ ॥ ८ ॥ तुम्हारी तवज्जुहसे दुशमन डरे । हटा अपना माने न मुश्किल करे ॥ ९ ॥ निर्भय हरष होय संशय मिटे । सबे रोज दिल बीच रटना रटे ॥ १० ॥ अन्तःकरन प्रेम नैना पगे । जगत कर सब स्वाद फीका लगे ॥ ११ ॥ तुम्हारी विरह अग्निमें निशिदिन जरूँ । चौथी अवस्थाको हासिल करूँ ॥ १२ ॥ मेरी अरज होवे दरगह कबूल । दिलकी मुराद

दाद कीजे रसूल ॥ १३ ॥ सदगार सकल सन्त रोशन जमीर सेवक तलबदार दाया कबीर ॥ १४ ॥

इति अर्जनामा गरीबदासजीका ॥ ३ ॥

विनय अष्टपदी ।

प्रभुजी तुम बिनु कौन छुडावे ।

महा कठिन यम जाल फाँस है, तासो कौन बचावे ॥ १ ॥ नाना फाँस फँसाय जीवको, आपन रूप छिपावे । पंच कोश होय प्रगट ग्रासे, तेहिको कौन लखावे ॥ २ ॥ आपहि एक अनेक कहाई, त्रिविधि रूप बनावे । सन्निपात होय दुष्ट नष्ट सो, परलय अंत दिखावे ॥ ३ ॥ विषय विकार जगत् अरुझावे, जहाँ तहाँ भटकावे । योग ध्यान विगुर्चन भारी, ताहि सुरति अटकावे ॥ ४ ॥ आशा नाम नौका बैठावे, भौकी धार वहावे । तत्त्वमसि कहि ताहि डुबावे, अन्त कोइ नहिं पावे ॥ ५ ॥ चारि मुक्ति योनि चौरासी, तेहि मिलि हेतु बढावे । नेम धर्म पूजा औ संयम, बहु विधि लाग लगावे ॥ ६ ॥ भेष अलेख करे को पावे, जीवहिं चैन न आवे । चारि वेद षट अष्टदशोले, शून्यहिं शून्य समावे ॥७॥ काल चक्र बसि उतपति परलय, जीव दुसह दुख पावे । साहब दया कीन्ह परखाये, रामरहस गुण गावे ॥८॥

दशाष्टक स्तोत्र ।

नमामि सर्व संत जिनको मनाऊं । चरण रेणु जिनकी मैं शिर-पर चढाऊं ॥ चरण रेणु प्रताप भ्रम नाश जालं सुसंतन कृपाते मिले गुरु दयालं ॥ १ ॥

गुरु चरण शोभा सकेको वर्णं । तरेऽनन्त जीवा गुरु चर्ण शरणं ॥ गुरु चर्ण रेणु धरो मोर भालं । नमो गुरु दयालं कवीरं कृपालं ॥ २ ॥

रविचन्द्रऽनंतं गुरु अंगरूपं। गुरु देव देवं शिरो भूप भूपं ॥ कृतं पार भव सिन्धु यमधार तालं। नमो गुरु दयालं कवीरं कृपालं ॥ ३ ॥

तीर्थ सर्व गंगापि गुरु चर्ण माहीं। गुरु कामधेनु कल्पवृक्ष छांहीं ॥ भक्ति ज्ञान वैराग्य फलफूल डालं। नमो गुरु दयालं कवीरं कृपालं ॥ ४ ॥

गुरु चर्ण तोयं कटे पाप घोरं। लिये गुरु प्रसादं हटे यम्म जोरं ॥ मिटे ताप भवसिन्धु अमृतं रसालं। नमो गुरु दयालं कवीरं कृपालं ॥ ५ ॥

गुरु शम्भु ब्रह्मा गुरु विष्णु रूपं। गुरु आदि ब्रह्मं अनादी अनूपं ॥ गुरुकी कृपा होय व्यापे न कालं। नमो गुरु दयालं कवीरं कृपालं ॥ ६ ॥

सत्यलोकवासी गुरु सुखविलासी। सो परगटे काशी निर्गुण उपासी ॥ नहीं गर्भ जन्म भये चन्द्रतालं। नमो गुरु दयालं कवीरं कृपालं ॥ ७ ॥

गुरु काशी सिधाये पंडित हराये। भक्ति भाव बोध पथ जगमें चलाये ॥ नरपति पाय लागे खुले अनेक भालं। नमो गुरु दयालं कवीरं कृपालं ॥ ८ ॥

बादशाह पीर परचा लेन काजे। जडे गुरु जंजीरा सो तीरा विराजे ॥ मृतक सुत जिलाये कमाली कमालं। नमो गुरु दयालं कवीरं कृपालं ॥ ९ ॥

पुरुषोत्तम पुरीमें जलत पण्डा बुझाये। सुने सिद्ध बन्धासो फन्दा छुडाये ॥ बलख ज्ञान करके चिताये नृपालं। नमो गुरु दयालं कवीरं कृपालं ॥ १० ॥

थीर किये आसा सिन्धु नीरं हटाये। गुरु दरस दे ज्ञान

संशय मिटाये ॥ वृक्ष बट प्रगट कर दिखाये विशालं । नमो गुरु दयालं कवीरं कृपालं ॥ ११ ॥

सुरनर मुनि नाग सबही गुरु मनावें । नारद मुनि शुकदेव गुरुहीकी ध्यावें ॥ गुरु वोइ मित्रं पिता रक्षपालं । नमो गुरु दयालं कवीरं कृपालं ॥ १२ ॥

गुरु योग योग्यं तपस्यासुरवतं । सो भवं रोग भग्यं गुरु ध्यान धरतं ॥ गुरुकी कृपा होय व्यापे न कालं । नमो गुरु दयालं कवीरं कृपालं ॥ १३ ॥

गुरु लोक प्रकाशं शसि कोटि भानं । पुरुष रूप कांति कहो को बखानं ॥ गुरु लोक पहुँचे हंस चालं । नमो गुरु दयालं कवीरं कृपालं ॥ १४ ॥

गुरु मोरि कर्म बहु हंस कीन्हें । सुनो तोहि जाने तबही शर्ण-लीन्हें । दीजे मोहि दीदार लेहु सँभालं । नमो गुरु दयालं कवीरं कृपालं ॥ १५ ॥

गुरुऽनन्त तारे सकेको बखानी । समावे चिंटी पेट सागरको पानी ॥ निगमनेति भाषे तो मैं कौन वालं । नमो गुरु दयालं कवीरं कृपालं ॥ १६ ॥

अहो गुरु मैं हूँ सदा दास तेरे । हृदय वास कीजे गुरु आन मेरे ॥ भक्ति ज्ञान दीजे सुनो प्रणतपालं । नमो गुरु दयालं कवीरं कृपालं ॥ १७ ॥

गुरुकी जो महिमा पढे नित्यनेमा । गुरु है कवीरं सो ताहिसो प्रेमा ॥ हरे पाप सब कहे शास्त्र मालं। नमो गुरु दयालं कवीरं कृपालं ॥ १८ ॥

---

१ लं माला–समूह अर्थात् सब शास्त्र ।

स्तोत्रदशक ।

नमस्कार बार बार सुन हमार सतगुरुं । तिमिर हरण तमसू दलत शरन पाल सुरवरं ॥ प्रकाशवान् तेज भानु भक्त भूप सख्यतं । युगन युगन हो कबीर चरण शरण रख्यतं ॥ १ ॥

अमर लोक अरु अशोक सर्व दुःख नाशतं । तुव निवास सुख विलास, बहु प्रकाश शास्वतं ॥ आदि पुरुष आप हैं, जहाँ अलेख अक्षतं । युगन युगन हो कबीर चरण शरण रख्यतं ॥२॥

सर्व गुननिधान कृपासिन्धु नागरं । सो प्रगटे अवनि आय ज्ञान गम्य उजागरं ॥ अनंत रूप उपमा सके सो कौन अख्यतं। युगन युगन हो कबीर जरण शरण रख्यतं ॥ ३ ॥।

सर्वाजित विद्या रीति सर्व देश जीतियं । तोहि निहार गयो हार गात हंकार वीतियं॥काशी वासी पंडित भये निराश झख्यतं। युगन युगन हो कबीर चरण शरण ॥ ४ ॥

पादशाद दगा चाह गयन्द लाय गर्जनं। तुम दयाल हो विलास सिंहनाद तर्जनं । तोरि जर्ज्जर भये तीर रहे सर्व थक्यतं । युगन युगन हो कबीर चरण शरण रख्यतं ॥ ५ ॥

रंक राव बलख आदि सकल जीव तारनं । तजि अमीर हो फकीर ज्ञान गम्य धारनं ॥ भक्ति पक्ष शुद्ध लक्ष थके जो स्वाद थक्यतं । युगन युगन हो कबीर चरण शरण रख्यतं ॥ ६ ॥

पतित बहु परे पाय शरण भक्त वत्सलं । जानि दास मेटि त्रास दीन बास अविचलं ॥ सदा सुख नाहिं दुःख हंस शब्द परसि छक्यतं । युगन युगन हो कबीर चरण शरण रख्यतं॥७॥

विरद रावरो संभारु हो दयाल दुखहरं । ले उबार विघ्न टार अघ निवार सुख करं ॥ मेटो त्रास करत काल सब जिव भख्यतं॥ युगन युगन हो कबीर चरण शरण रख्यतं ॥ ८ ॥

गंग बारि करे पुकार सुन हमार समरतं ॥ त्राहि त्राहि शरण पाहि सखमाया अत्रतं ॥ अगाध महिमा साधु जाने मुनि देव यख्यतं । युगन युगन हो कबीर चरण शरण रख्यतं ॥ ९ ॥

सांझ सवार नेम धार गुण तुम्हार उच्चरं । तुम कबीर हरण पीर करण तीर भव परं ॥ मैं अज्ञान शरण आयो, राख शर्म सख्यतं । युगन युगन हो कबीर चरण शरण रख्यतं ॥ १० ॥

स्तोत्र ।

जय दीन दयाल कृपाल हितं । मद लोभ रु मोह सदा रहितं ॥
अनवद्य अखण्ड अनादि अजं । सुर सन्त कविंद्र मुनिन्द्र भजं ॥ १ ॥
वगियान वरेष्ट सु ब्रह्म वरं । छर अच्छर आतम पारपरं ॥
सत्यनाम कबीर गंभीर धयं । अणिमा महिमा लघिमा सिधयं ॥ २ ॥
शिव सिद्ध सुरेश मुनीश अबे । मिलि माधव संत बंदे जो सबे ॥
गुण ज्ञान निधान विज्ञान अयं । निर्भय निर्मल सुःख ब्रह्म स्वयं ॥ ३ ॥
उदयाचल ऊपर सूर दसा । वचनामृत पोषन चन्द्र जसा ॥ अक्ष-पाल कृपाल हमेश वरं । हनुमन्त सुधारन काज परं ॥ ४ ॥
सनकादित ज्ञान जैसे गहिरे । सर्वलोकमें नारद ज्यों बिहरे । सर्व योगिन गोरख धीर यती । सत्य धारणसो हरिचन्द सती ॥ ५ ॥
गिरजापति नित ज्यों ध्यान धरं । अचलं गिरि सिंधु समं समरं ॥
शुकदेव जैसे गुरु ज्ञान गनं । सब दासन पार परं समनं ॥ ६ ॥
वचनं किरनं जन कञ्ज खिलेतव नाम लिये सत्तलोक मिले ।
वर्णाश्रम गायन वेद धुनी । सबके पर आप बिराज मुनी ॥ ७ ॥
नव खण्ड विहंडन काल कले । ब्रह्मण्ड इकीस जु आप गले ॥
भय टारन हारसो आप आजे । तेहि कारन आतम राम भजे ॥ ८ ॥
उस कारण आप सदा अजयं । जग काम रु क्रोध सबै तजयं ॥
गजराज प्रचंण्ड मतंग गजा । जहँ केहरि सावक आप सजा ॥ ९ ॥

असुरं मद मत्सर जो गजिहैं । तुव सींह आवाज सुनी भजिहैं॥ मन लोलुपता बहु दादुर जे । तेहि भक्षक पन्नग हो अँकजे १०॥

अब दीन दयाल कवीर गुरू । नित्य दीजिये प्रेम जो प्रीति करूं ॥ गुरु सागर नागर आप असे । परकाशक सो जग सूर जसे ॥ ११ ॥

गत रोग न दोष न मान मदं । अचलं अमलं सुखदं शुभदं। सिद्ध साधक हार रहे सगरे । पक्ष धुन्ध धरे चकरार गरे॥१२॥

सुलतान नरेश अडे चरचा । बहुवार अनेक दिये परचा ॥ त्रिय रूप भये दृग देखतही। उघरचो हियरा गुरु पेखतही१३॥

नृप साधु गये जग जानत हैं। गुरु ब्रह्म कवीरहि मानत हैं ॥ पवनं नभ तेज पृथ्वी रु जलं। सब खंडि आप सदा अचलं१४

शब्दादिक पंच विषय सबही । तेहि व्यापत नाहिं कदी कबही ॥ शरणागत पालक आप सुनो । अदमाँ पद दायन मान गुनो ॥ १५ ॥

महिमा बहु एक रसाय समं। वरणो कहि बात गुनी बचनं॥ कविता शुद्ध आप कृपा चरणं। जन आतमराम सो है शरणं१६

स्तोत्र सप्तक।

जै जै भवतारण भर्म निवारण हंस उबारण तव शरणं । शब्द विलासी अकह अविनाशी सत्य प्रकाशी भय हरणं ॥ १ ॥

निर्मल दयालं सार कृपालं आप विशालं अभय करणं । सतचित भावन रूप अजावन आतम पावन तेहि शरणं ॥२॥

यह जिव अविनाशी ब्रह्म विलासी जगत प्रकाशी आप भये। आपहिं कीन्हा मति नहिं चीन्हा पंचमभिन्न सुरूप लगे ॥ ३॥

गुण आकर संगे चित मन रंगे चाल विहंगे भूल परे। विन रूप गुसांई अदल चलाई शून्य बसाई न्यार भये ॥ ४ ॥

ते पहुचारी निगम पुकारी गाफिल धारी ख्वार परे निराधार चहचलना वाके शरना भारजु धरनाभार परे ॥ ५ ॥

विनु निज पहिचाने हठ मत ठाने श्वान समाने मुदित फिरे। गुरु दीनो मति धीरा पायो चित थीरा आशा रतधीरा असर सरे ॥ ६ ॥

जो हंस पद न्यारा है निर्धारा अपरम्पारा आप रहे ॥ सोई दीजै स्वामी निरभय नामी अनुभव गामी सुरतलहे ॥ ७ ॥

स्तोत्र अष्टक।

भो कवीर हरण पीर धीर बुद्धि धारणं। सत्य नाम परम धाम सर्व कर्न कारणं ॥१॥ हंस रूप परम भूप वेद विद्या सारनं। ज्ञान नीति अति अजीत ज्ञान बुद्धि धारणं ॥ २ ॥ सन्त रक्ष साधु पक्ष भक्ति मुक्ति तारनं। गुणातीत भयाभीत सर्व सृष्टि पारणं ॥३॥ निराधार सत्याधार परम पार पारणं। प्रणतपाल अति दयाल काल जाल टारणं ॥ ४ ॥ दया सिन्धु क्षमा इन्दु श्वेत बिन्दु शोभितं। शब्द रूप अति अनूप अमितरूप सारणं ॥ ५ ॥ अकह नाम त्वं अकाम मान हीन पालनं। पाप ताप दहन कृत तिहुँ ताप नाशनं ॥६॥ भावअतीत योग जीत हंसरूप कारणं। सत्यरूप गुरु स्वरूप शरणआगत तारणं ॥ ७ ॥ प्रगट प्रत्यक्ष अक्ष ज्ञानरूप साखिनं। सत्यनाम आदि पुरुष सर्वघट भाखिनं ॥ ८ ॥

साखी।

सदगुरु पर जु प्रीति अति, सारासार विचार। सत्यनाम हंसा गहे, उतरे भवनिधि पार ॥

स्तोत्र। छन्द शिखरणी।

विभुं सिन्धुं बुद्धेर्विमलवचसां शान्ति वरदं। निजानंद स्वामिन् भवभयहरं स्वस्तिपददम् ॥ कवीरज्ञानां भू सुखदचरणं

भ्रांतिदलनं । समीडेऽजं त्वाहं बहुजडमतिस्सर्वसुखदम् ॥ १ ॥ प्रभुं निष्ठं शोकं कठिनजनुषो मोहवहता । जनानां मृत्योश्च प्रचुरसुगुणं नष्टकुहकम् ॥ मनोमायादूरं सरल हृदयं भक्ति सुलभं । सतां कर्तुं प्रीतिं धृतनरतनुं मूर्ति सदयम् ॥ २ ॥ स्वयं सिन्धुं नित्यं कलहरहितं मानप्रददं । प्रभो द्वे कंजाक्षं जलजवदनं वारिजपदम् ॥ कृपासिन्धुं श्रीदं मुनिवरवरं निर्बलबलं । सदा शिष्यैरुग्रैर्जगति बहुभिः सेवित इह ॥ ३ ॥ बुधैर्वन्द्यानिन्द्यं कुजनपुरुषैश्चातिविमुखं । गुरुं गर्भातीतं प्रतियुगभवं भक्तिसरमि ॥ महामोहं हर्तुं रविमिव भवे धर्मवपुषां । बहुग्रन्थैस्तीव्रैः परिहृतमनस्संशयरिपुम् ॥ ४ ॥ त्रयस्तापं हन्तुं विधुमिव जनानां च सबलं । निरीहं गंभीर सदयपुरुषस्थानपरमम् ॥ शुभासक्त्या युक्तं प्रकटयशसे सत्यसुकृतं । महातेजःपुंजं प्रसुलभपदं शुद्धमनसैः ॥ ५ ॥ चिदाकारं शुद्धं मुचिमुचिदुखपारखविभो।अजाकाशं शांतं किल भवजयं निर्भयपदम् ॥ महाकायं धीरं कलुषदहनं चारुवचनं । मनश्चिताया यास्तत्तव पदगतानां च सुमते ॥६॥ परं शुद्धं धीरं स्वचितमहतां पादरजसो । मुद्रामेत्यं रम्यां परमपदवीलब्धिकरणम् ॥ मुनीन्द्र त्वं त्रातु चरण सुगतान् वन्द्यसकलं । समर्थः सर्वज्ञो भवजलनिधेर्हीनमनसः ॥ ७ ॥ स्तुतिर्दिव्या साध्वी भवतु महतां चित्तरमणी । सदेयं वा प्रीत्यै कलुषदहिनी मोहदमनी ॥ कबीराख्या वाताहतकलिमलानाहिविमला । खलूत्कृष्टा रम्या जनहितकरी कण्ठमधुरा ॥ ८ ॥

नाराच छन्द ।

नमामि सर्व लायकं, सुभक्ति मुक्ति दायकं । गुरूजी सन्त भायकं, सुशुद्ध ज्ञान नायकं ॥१॥ निःकाम आप सुन्दरं, अकाम नाम मन्दरं । विभुं प्रकाश मासिकं, कामादि दुःखनाशिकं॥२॥

भय प्रवाह वारणं, आपर पार तारणं। पुरान वेद गावितं, सो पार नाहिं पावितं ॥ ३ ॥ सुज्ञान सन्त रूपही, परख प्रकाश भूपही। मुनीश ईश ईशही, हटाये काल पीसही ॥ ४ ॥ यही हमार वीनती, करिये आप गीनती। हुआ बहान जालही, कराल कालकालही ॥५॥ जन्मादि दुःखते अति, अधीर मोर चित्तही। सह्यो न जात मोहिसो, हिये जू पीर होतही ॥६॥ न कोई मोह जक्त मैं, न आश धन्यते कही। सुआश एक आपके, न दूसरी सहाइके ॥७॥ तूही सुजान आपही, मिटाइ देहु तापही। प्रभुजी तोहि छाडिकै, दुजा न कोइ साथही ॥८॥ गुरुं कवीर रंजनं, नमामि दुःख भंजनं। करो सनाथ मोह आज्ञु, शिशु तुम्हार जानिकै ॥९॥

स्तोत्र।

कृपालं चित्त नंदनं, अज्ञान भेद खंडनं। सुश्रेष्ठ धर्म मण्डनं, दुःखीत जीव देखिकै ॥ १ ॥ अपार ज्ञान सागरं, प्रशांत चित्त आगरं। न राग द्वेष पासही, सुमुक्ति रूप राजही ॥ २ ॥ अनाथसा विचारिकै, कृपा जु मोहि कीजिये। अज्ञान मोह दाहिकै, चरण वास दीजिये ॥ ३ ॥ अनन्त बन्धनों करि, संयुक्त मोर चित्तही। छूटयो न जात मोहिसो, अनेक दुःख देतही ॥ ४ ॥ महा भवाब्धि धारमें, विषै तरङ्ग मध्यमें। झकोरि मोरि चित्तको, बूडत हौं ना शुद्धमें ॥५॥ महान मोहि वेगमें, बहतहों जू नाथ मैं। स्वशिष्य बाल जानिकै, जू बाँह झालि लीजिये ॥६॥ आपै जू ऐसी कीजिये, सो पीर मोरि छीजिये। ना आप त्यागि और मैं, शरण चाहि लीजिये ॥७॥ दयाल गुरु आपही, पखाय भवतापही। करो निहाल पालि, तव दास दीन जनही ॥ ८ ॥

स्तोत्र–छन्द तोटक।

परमं सदयं भवताप हरं, जन पीन महासुख वृन्द ददं। शरणागत पारंपार प्रभुं, गुरुदेवमजं विमलं च भजे ॥ १ ॥

मुनि केशव वेष गणेशनुतं, सुरराज विराज नरींद्रनुतं। सनकादि फणीन्द्र कवीन्द्रनुतं, गुरुदेवमजं विमलं० ॥ २ ॥

करुणामय रूपमनंत कलं, पदपंकजरेणु विशुद्धं जनं। अघ पुंज हरं मति शुद्ध करं, गुरुदेवमजं विमलं० ॥ ३ ॥

श्रुति सार विचार इति बिमुकं, हरिचन्द्रकला संभा विपुलं। कवि वंदित पाद सरोजयुगं. गुरुदेवमजं० ॥ ४ ॥

निज रूप मदं फल मोक्ष ददं, सरलं वरदं सुख सिंधु तरं। कलि काल विकार सो मोह दहं, गुरुदेवमजं विमलं० ॥ ५ ॥

यमभीत हरं पर हेत तनुं, कलु साफ हकं रिपु काम दहं। शिव जीव विचार मनो विरतं, गुरुदेवमजं विमलं० ॥ ६ ॥

मद मोह विभंजन सूरपटं, द्विपदं द्विभुजं नररूप शुद्धं। विदुषाहृद मोदकरं वचसा, गुरुदेवमजं विमलं० ॥ ७ ॥

सम दृष्टि सुवाद मनो विरतं, भ्रम जालकवाद वितर्क मतिं। शुभदं पद सार कवीर वरं, गुरुदेव मजं विमलं० ॥ ८ ॥

स्तोत्र अष्टक।

विभुं व्यापकं शुद्ध धीरं गंभीरं। सदाशिवरूपं प्रकासी निरीहं ॥ अमोल्यं अडोल्यं अशोच्यं प्रखामि जपेहं भजेहं कवीरं नमामि ॥ १ ॥

निहीसो निराकार निर्वाण रूपं। चिदाकाशमाकाश साक्षि-स्वरूपं ॥ अभेद्यं अछेद्यं धनी अंत्रजामि। जपेऽहं भजेऽहं कवीरं नमामि ॥ २ ॥

विषयपंच कोशादिव्यापे न तेही। मदादिक माहि नहिं शोक जेही ॥ ऐसा सु प्रिये गुरु हे मोहि स्वामी ॥ जपेऽहं भजेऽहं कवीरं नमामि ॥ ३ ॥

स्वयं सिंधुराशि क्षमाके प्रकाशी। दयानिधिवासी सबे सुख रासी ॥ सोई धर्मदास गोसांई सुपासी। जपेऽहं भजेऽहं कवीरं नमामि ॥ ४ ॥

त्रिकालदर्शी घटोज्ञानवर्शी । बडानन्दकर्शी मिटावर्त तर्शी॥ अखण्डं निर्द्वन्द्वं अय पद्दगामी। जपेऽहं भजेऽहं कवीरं नमामि॥५॥

पंचक्लेश इहितं षटो ऊर्मिदहितं । वेदोक्तं कुवानी परखी सर्वं वहितं ॥ यथा सु उतोत्कृष्टहे गुरुनामी । जपेऽहं भजेऽहं कवीरं नमामि ॥ ६ ॥

निजानन्द आपे देखी काल कांपे । माया नहीं व्यापे जपे मूनि जापे ॥ सोई शरणोंमें टरु ठाम ठामी । जपेऽहं भजेऽहं कवीरं नमामि ॥ ७ ॥

अजन्मं अमरणं सदा सिन्धुकर्णं । भवाब्धि महाकाल ताहि सुतर्णं ॥ सोई तवदास धरे ध्यान सामी । जपेऽहं भजेऽहं कवीरं नमामि ॥ ८ ॥

श्लोक ।

इदं स्तोत्रं पठेन्नित्यं श्रद्धाभावेन संस्थितम् ।
यस्य सर्वफलं भुक्त्वा तस्य मुक्तिर्न संशयः ॥
नमोस्तु ते कव्वीर साधु वृंद नमोस्तु ते ।
गोस्वामी धर्मदासं च वन्दनं मे पुनः पुनः ॥

अथ कवीरसाम्राज्यस्तोत्र ।

सत्यकवीराय नमः ।

शार्दूलविक्रीडितवृत्तम् ।

नित्यानन्दसदात्मबोलरसितं चन्द्रावदातप्रभम् लोकातीतमहोदयं निजजनोद्धारावतारोदयम् ॥ सारासारविवेकपारग इति परीक्षको यो मतस्तस्मै सद्गुरुरूपिणे कुरु नमः श्रीमत्कवीराय भो ॥१॥
प्रत्यक्षा प्रमितिर्न चागतिगती; चत्वारि भूतानि च संधिर्भावगतं च कार्य्यमपरो देहान्न जीवस्तु हि ॥ चार्वाकैर्विरुतं परीक्षयति यो भावं स्वभावात्पृथक् । तस्मै सद्गुरुरूपिणे कुरु नमः श्रीमत्क-

वीराय भो ॥२॥ जैनः प्राह जयं न जीवमितरं पुण्यञ्च पापं तथा द्रव्यं पुद्गलकञ्च कालमितियत्स्वातन्त्र्यता कर्मणि ॥ तद्युक्त्यानुभवैः परीक्षयति यः किं तन्त्रता कर्म्मणस्तस्मै सद्गुरुरूपिणे कुरु नमः श्रीमत्कवीराय भो ॥३॥ गोरक्षप्रमुखा वदन्ति वपुषः श्वासस्य संशोधनैरात्मानन्दकरोऽत्र भैरवनये सिद्धिः समुज्जृम्भते॥ तच्चेदं नटवत्परीक्षयति यः कृत्या किमिष्टायुषा तस्मै सद्गुरुरूपिणे कुरु नमः श्रीमत्कवीराय भो ॥ ४ ॥

शून्याज्जातमशून्यमेतदमुतः शून्यं भविष्यज्जगद्बाह्याभ्यन्तरभेदतः परिणता चिद्वासना भासते ॥ इत्थं बौद्धरुतं परीक्षयति यः शून्यस्य साक्षी सकस्तस्मै सद्गुरु० ॥ ५ ॥ योगी प्राह यमादिभिर्बहुविधैः स्याच्चेतसो निग्रहस्तेनात्मा प्रभुतामुपैति भणितो लोहः सुवर्णायते ॥ इत्युक्तं किमृतं परीक्षयति यो जातः क्वचित्तामियात्तस्मै स० ॥६॥ स्वच्छान्धे इव कर्तृभोक्तृकलिते नित्ये अजाजे रते मृत्युः कुम्भवदेव सा परिणता मुक्तस्तया यः करी ॥ इत्युक्तं क्रियते परीक्षयति यः का भोक्तृकर्त्रोर्भिदा तस्मै स० ॥७॥ मीमांसा सु मिते श्रुतिर्विधिगतासूयाकृतिः स्यान्मुदे आत्मज्ञान गुणेश्वरे च परमं देवाश्च मन्त्रात्मकाः॥ इत्युक्तं प्रकटं परीक्षयति यः कर्त्ता कथञ्चित्क्रियास्तस्मै सद्गुरुरूपिणे कुरु नमः श्रीमत्कवीराय भो ॥८॥ आत्मानौ च विभू स्वतन्त्रपरतन्त्राभ्यां भिदा संक्षयाद्भूम्यादेः परमाणवः कृतनयाः कार्यस्य चारंभकाः ॥ काणादेः कथितं परीक्षयति यः कालश्च किं वा विभोस्तस्मै सद्गुरुरूपिणे कुरु नमः श्रीमत्कवीराय भो ॥ ९ ॥ प्रामाण्यादिवसुद्वयार्थविदुषोऽमी संजगौ गौतमं दुःख ध्वंसकृतं दृशाद्दशमथो ज्ञानोपमर्दादिति ॥ तत्किं तथ्यमिदं परीक्षयति यो दुःखात्यये किं सुखं तस्मै स० ॥१०॥ सत्यं ब्रह्म न चान्यदस्ति

किमपि ब्रह्मैव चाहं ममाज्ञानाद्भाति ह्यनादितो जगदिदं रज्जौ भुजङ्गाकृति ॥ इत्थं दण्डिमत परीक्षयति यः खण्डिव्यतण्डात्मकं तस्मै सद्गुरुरूपिणे कुरु नमः श्रीमत्कवीराय भो ॥ ११ ॥ नानामूर्तिधरः पृथक्पृथगयं पूज्यश्च पौराणिकाः प्राहुः शंकरशांकरीशिवसुतः सूर्यो हरिर्वा विधिः ॥ इत्याख्यानभरं परीक्षयति यः कोऽसावमूर्तिः परस्तस्मै सद्गुरुरूपिणे कुरु नमः श्रीमत्कवीराय भो ॥१२॥ शाक्तानां भणितं सुखात्मकघनं शक्तिः स्वधर्मात्मिका तस्या व्यक्तिरिहास्ति कौलकृतयश्चीर्णैः प्रकारैः स्वतः ॥ एतत्कामकृतं परीक्षयति यो लोकस्य वाचाजुषंस्तस्मै सद्गुरुरूपिणे कुरु नमः श्रीमत्कवीराय भोः ॥१३॥ यच्चोक्तं यवनैर्जगज्जनिककरोऽल्हेयास्ति सोऽल्हा परः जीवा नित्यनवाः क्रियाफलजुषः कस्मिंश्चिदेवान्तरे ॥ तच्च नेकतय परीक्षयति यः स्वात्मानबोधोदयात्तस्मै सद्गुरुरूपिणे कुरु नमः श्रीमत्कवीराय भो ॥ १४ ॥ द्वैताद्वैतविभेदकनिराकारप्रकारादिवल्लक्ष्यालक्ष्यप्रकाश्यकाशप्रतिभूप्येवापशेषातिगः ॥ यः कश्चिद्दृदता भवेद्धि विरतौ साम्राज्यलक्ष्म्या स्थिरस्तस्मै स० ॥१५॥ एकोऽनेकसुशक्तिरादिपुरुषो जन्मावसानार्जिते बीजं विश्वतरोर्विभुर्विहरतां यः पक्षिणां सन्मुदे ॥ भव्यं स्वानुभवं फलव्यतिरितं यस्मै समभ्यर्पयत्तस्मै स० ॥१६॥

अमरपुरनिवासी पूरुषो योगदक्षश्चरणकमलमस्याभ्यंचतामार्घ्यवर्य्यः ॥ य इह गुरुकवीरं तस्य साम्राज्यकीर्तिस्तवमखिलकलाढ्यं पूर्णमभ्यस्य पूर्णः ॥ १७ ॥

इति कवीरसाम्राज्यस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

गुरुस्तुतिः

ध्यानात्मानं परमात्मानं दानं ध्यानं योगं ज्ञानम् ॥ तीर्थस्नानं इष्टध्यानं न गुरोरधिकं न गुरोरधिकम् ॥१॥ प्राणा देहं गेहं राज्यं

स्वर्गं भोग्यं मोक्षं भक्तिम् ॥ पुत्रं पित्र्यं वित्तकलत्रं न गुरोरधिकं न गुरोरधिकम् ॥ २ ॥ वानप्रस्थं पतिविधिधर्मं पारमहंस्यं भिक्षोश्चरितम् ॥ साधोः सेवा भूसुरभक्ति न गुरोरधिकं न गुरोरधिकम् ॥ ३ ॥ विष्णोर्भक्ति पूजनचरितं वैष्णवसेवा मातरि भक्तिम् ॥ विष्णोः पित्रोः सेवनयोग्यं न गुरोरधिकं न गुरोरधिकम् ॥ ४ ॥ प्रत्याहारं चेन्द्रियजयतां प्राणायामं न्यासविधानम् ॥ इष्टः पूजा जपतपभक्ति न गुरोरधिकं न गुरोरधिकम् ॥ ५ ॥ मत्स्यः कूर्मः श्रीवाराहो नरहरिरूपो वामनदेवः ॥ त्रिभुवनसारो महिमापारो न गुरोरधिको न गुरोरधिकः ॥ ६ ॥ श्रीभृगुदेवः श्रीरघुनाथः श्रीयदुनाथो बौद्धसुकल्की ॥ अवतारा दश वेदे प्रोक्ता न गुरोरधिका न गुरोरधिकाः ॥ ७ ॥ गंगा काशी काञ्ची द्वारा मायाऽयोध्याऽवन्ती मथुरा ॥ यमुना रेवापुष्करतीर्थं न गुरोरधिकं न गुरोरधिकम् ॥८॥ गोकुलगमनं गोपुरमथनं श्रीवृन्दावन मधुपूरटनम् ॥ एतत् सर्वं सुमहत्पुण्यं न गुरोरधिकं न गुरोरधिकम् ९॥ तुलसीसेवा हरिहरभक्तिर्गङ्गासागरसंगममुक्तिः ॥ किमपरमधिकं रामे भक्तिर्न गुरोरधिकं न गुरोरधिकम् ॥१०॥ काली दुर्गा भुवना बगला श्रीमातंगी धूमा तारा । छिन्ना त्रिपुरा भैरवि कमला न गुरोरधिका न गुरोरधिकाः ॥ एतत् स्तोत्रं पठति च नित्यं मोक्षज्ञानं सोप्यतिधन्यः ॥ ब्रह्माण्डांतर्यद्यद्देवं न गुरोरधिकं न गुरोरधिकम् ॥ १२ ॥

स्तोत्र सवैया ।

भूतल काल काल मन पेखि, अभय पद ब्रह्म लखावत कोतो ।
देखि प्रपंच अनेक लुभावन, जो फिरतो मन ठावन टोतो ॥
आप धनी निर्धार कियो, इतने दिन नाहक ऊसर जोतो । को
भवसिन्धु उबारत जीवन, जो कलिनाम कबीर न होतो ॥ १ ॥

बूडत जो अघ कुंडनमें, यम फन्दन फूँक समूह बधोतो। कर्म अकर्मनके गजरा, शिर पायतलोधर आन खगोतो॥ ठावन ठान कुठान सबै तजि, कंचन कांच उठाय लयोतो। को भवसिन्धु उबारत जीवन, जो कलि नाम कबीर न हो तो॥ २॥

जो प्रभु स्वर्ग पताल करे सब, जो प्रभु लोक अखंडित छाये॥ जो प्रभु खान रचे पर चार, वही प्रभु वेद सुवेद बनाये॥ सो सर्वज्ञ कहे सुखलाल, रमो सबही नर भेद न पाये। सो प्रभु नाम कबीर कहाये, उबारन जीवनको जग आये॥ ३॥

दै निज नाम लखाय हिये, सत शब्द गहे सत लोक सिधाये। जीवनको अपनो करिकै, गुरु ज्ञान अखंडित सो दरसाये॥ हे प्रभु ब्रह्म अपार अगोचर, को बरने गुरुके गुन पाये। सो प्रभु नाम कबीर कहाये, उबारन जीवनको जग आये॥ ४॥

कवित्त—काशी है सुवश नगर प्रभुको निवास जहां, सन्तन शिरताज वास देखो दृग मीरको। भारी अघ पुंज कँपें देखि दयाको सिन्धु, वरने को लोक शोभा गुनके गँभीरको॥ कहे सुखलाल शुक्ल शोभित प्रकाश जाको, ताहिको निशान शुक्ल अति सुख हीरको। कहे सुने शम्भु गौरा जागे नर नाहिं बौरा, भागे यम जौरा चौरा परसे कबीरको॥ ५॥

सद्गुरु ब्रह्म कबीरको, जप मन बारम्बार।
विना तपे फल मिले, परै न यमकी धार॥

अथ कबीरपञ्चाशिकाप्रारम्भ।

(कबीरभानुप्रकाश पृ० २८०)

तोटक छन्द।

जय सत्य कबीर कृपाल घनं। दल दुष्ट हनं पय पुष्ट जनं।
योगजीत अतीत पुनीत प्रभु। बपु धारन कारण तारन भू॥१॥

सत सुकृत सत्य स्वरूप सदा। जन ध्यावत पावत मुक्ति-पदा ॥ मुक्तामनि ते जिव जो जुगता। मृत्यु लोक ससोक न भव जुगता ॥ २ ॥

हम दीन दुखी किमि त्याग चहौं। करुणामय हो करुणामयहो॥ करुणा तन धारि करी करुणा। करुणामय धौं करुणा वरुणा॥३॥

सुर सिद्ध बखानत खान दया। जिव देखि अनाथ सनाथ किया ॥ जेहि ज्वाल जला यम भक्ष करे। विनु देव दयाल को रक्ष करे ॥ ४ ॥

यम जालिम जीवन जेर कियो। सुधि लेन दयानिधि देर कियो॥ सुख लेश न केत क्लेश भरे। जगदीश परे जगदीस परे॥५॥

जिव काल करालके ज्वाल दहे। तर ऊपर भूपर धाय गहे॥ हम जानि दयाल जो काल भजे। गुण ग्राम प्रनाम सो नाम तजे॥६॥

घटवाह मलाह सलाह कहो। फिरि कैलकी गैलकी सैल न हो ॥ वह सिंह समान शिकार करे। पिय पीव विना कहँ जीव तरे ॥ ७ ॥

हरि केहरि देहरि पार करो। सरकार बडे वर कार करो ॥ भय भंजन रंजन दासनको। खल डाटत काटत कासनको ॥८॥

भवसागर झागर काल बली। तहँ जीवकी उक्ति न युक्ति चली ॥ नहिं एक उपाय बनाय बनी। करु काज गरीब निवा-जगनी ॥ ९ ॥

प्रभु पेखतही जिव शीतल है। क्षणमें भवसिन्धुको पार लहे॥ करुणा दृग कोटिन कालहने। खुर सिन्धु कणा गिरि बिन्दु बने॥ १०॥

मति धीर कबीर कबीर भजो। हित नाम प्रिया वित वाम तजो ॥ तपखान किरसान शिलादहके। जरते जिव प्रभु मार-गते वहके ॥ ११ ॥

तलफै तपतीख सभी तलमें। विनु नाथक नेह नहीं पलमें ॥
निज शिष्ट निवाज सुदृष्टि लखो। शिरपै समरत्थ जो हत्थ रखो ॥ १२ ॥

नर बाल बिहाल निहाल मही। दुख द्वन्द्व दवारि न देह वही॥ मन भौ मद मोचन लोचन हैं।जन रक्षक भक्षक पोचन हैं॥ १३॥

सब लायक नायक हंसनके। जिव मोषक पोषक अंशनके ॥
सर्वोपर साहब शीवनके। तुम जीवन नाथ हो जीवनके ॥ १४ ॥

प्रभुके भ्रमते जमते बजरे। यहि तप्त शिलापर आनि जरे ॥
तपिया जपिता न पिया परखे। विधि वेदनते हरखे ॥ १५ ॥

जिव काज चले शिरताज सभी। महराज मया सुख साज लभी ॥ भव भार हनो करतार धनी। धरम राय न पाय दुखाय दुनी ॥ १६ ॥

करि नेह विदेह जो देह धृतम्। शब्दामृत जीव भये कृतकृत्तम् ॥
मृत नायक सायक तीख हते। पद प्रीति प्रतीति सहीत गते ॥ १७॥

परमारथि भारथि नाथ सदा। गहते लहते भव पाथ हदा ॥
जन जाय समाय अमान पदा।शुभ ज्ञान कुरान नसान मदा ॥ १८॥

मुनि मानस हंस मुनीन्द्र मता।समता लह पाय पता रमता॥
तव नाम सुधा वसुधा जो पिया। न क्षुधा युगही युग जीव जिया। १९॥

दुखिया हित आय महासुखिया। लखि पीवहि जीव भये सुखिया ॥ कहुँ और न दौर तो पौर परे। शरनी परनी करनी न खरे ॥ २० ॥

पद तीर कवीर शरीर जिते। लहसार भै ब्रह्म अकार तिते ॥
जग योनि जहान महान महा। गुरु देवको भेव न तेब लहा ॥२१॥

कमलापति क्यों कमलापति हो। पद कीरति कीरति कीरति

हो ॥ मृगव्याध समाध अगाध गहे । कलयान सिरान न ध्यान लहे ॥ २२ ॥

गुण गाय फणीगणराय निति। नहिं पावत पार अपार गति ॥ लवलीन प्रवीण नवीन जसे। कलि पंक कलंक निशंक नसे॥२३॥

विषया बन राय भुलाय परे। दुख दौन बिनाकर कौन धरे। कह कौन संदेश अंदेश बडा। मग भूलि गई ठग आनि अडा॥२४॥

जिन शोककी झोकमें भूलि रहा । करता भरता भ्रम भूलि रहा ॥ तिहुँलोक विलोक लगी अगिनी। यह जामिनि है यमकी भगिनी ॥ २५ ॥

तक सूरको नूर जहूर हुआ । ममता रजनी दुख दूर हुआ ॥ सगरे पमरे झगरे बगरे । पशुज्ञान गहे डगरे डगरे ॥ २६ ॥

बक चाल सभी न मराल मती। बिन एकरतीव न एक रती॥ जब गर्भमें अर्भक अर्जक करे। तिहि गाढते साहब गाढि धरे॥२७॥

इत औरहि ढालको ख्याल खिला । बुद्धि स्वस्त परे यहि तप्त शिला ॥ बह औध अचेत सुषोपति सो। कह पाय पराग बनारसको ॥ २८ ॥

निज धामते राम पयान लिया । जगती भगती पद पाय पिया ॥ कितहो झलकी मनसा मलकी । अरु अन्ध अचेतकी भय टलकी ॥ २९ ॥

द्रुगदानि कि बानि बिहानि इते । मकरन्दको फन्दको जीव जिते॥ मृत सृंगन बिग बिहार करे। कर्म रेख विशेष न देख परे॥ ३०॥

नहिं क्रोधित अन्धकी गन्ध मिले ॥ जीव दंडक भंडक भीर हिले ॥ गुरु पीर कबीर उजागर है। भव बोहित सो हित सागर है ॥ ३१ ॥

जग बन्दन भर्म निकन्दन है। शरनी शतलोककी सन्दन है॥
सतनाम सनेह सुधाम चढे। कलिमां कलिमां कलिमांह पढे॥३२॥

गुण ग्राम निकाम कवीर कवी। यश गावत पावत कोटि छबी॥
धुरधर्मधरा धर धारक हो। भवतारक पंथ प्रचारक हो॥ ३३॥

नर पामर धामर बुद्धि बिना। यम ज्योति पतंगके ढंग बना॥ जग व्याधि रु आधि असाध करे। चरणाम्बुज चूरण चारु हरे॥ ३४॥

भवतारण हेत निकेत कृपा। पयगाम लियो सुखधाम नृपा॥ सुर भूप स्वरूप अनूप छिपा। रवि सोम जो कोटिक रोम दिपा॥ ३५॥

गुरु गुप्त कियो धुरको बरनन। भव भौंर भया बन तौ शरनन॥
हमरे उसके पुरवास करो। निज दासनको अब दास करो॥३६॥

बिन कन्तके भवजल जन्त घने। दुःख द्वन्दक फन्दक फन्द फने॥ जग नाहकी बाँह निबाह लहे। भ्रम भोडर में भेडर भीर बहे॥ ३७॥

दनुजात बलात निपात भये। रणधीर वहीर गहीर गये॥
जिहि जानत जाम सुधार धरे। मुनिके मन मंदिरमें बिहरे॥३८॥

मन मत्त मतंग मते यहि गौं। तुहि रावत होय महाउत जौं।
चित चञ्चर वञ्चर वञ्चक है। सम सञ्च विरञ्च न रञ्चक है॥३९॥

यम वंकर संकट जीव महा। दमको गमको रमको न रहा॥
भव सेत अभै पद देत तुही। कलि कण्टक कोटिन कर्म दही॥४०॥

चढि सेत पपीलन ढील। तहां लंघेदीन पयोनिधि पीन महा। न वज्रको हाड न चाड रहो। मन वाक शरीर कवीर कहो॥ ४१॥

गुरु नेइ नदी सन दीस जिन्हैं। सुख वास न आस है त्रास

तिन्हैं ॥ तुम दीनन बन्धु न पीननके । नित पास हो दास अधीननके ॥ ४२ ॥

मद मान भला न हिये अर भौ। नर नागर सागर भौ गरभौ॥ करि पाप कलाप करे दुनिया। विष बीज अभी फलको लुनिया॥४३॥

हरिमें हरिमें हमही बरषे । लहरी भव भक्ति हरी हरषे ॥ दुख दारिद वारिद ज्ञान घनं । निर्भय करि भय समनं समनं ॥४४॥

जिव कालके जाल परे बपुरे । सतनाम निकाम सदा जपुरे ॥ गुरु भक्ति निनार किनार गहे । चतुरे लुतरे भवधार बहे ॥४५॥

भ्रम भूलते भूलते जात भगे। बुध बालन डालन पात लगे॥ मन वाचक जाचक हौं दरको। तुम छोड अजोड सभी घरको ॥४६॥

प्रभु नामको दान निदान चहौं। कोइ आस रु बास विकासन हो॥ तरनी बरनी तव नाम जहाँ। गहिये लहिये विश्राम तहाँ॥४७॥

रसना रस रास रसै रस सो। जस तो वस और सबै कस सो॥ चढ नाम रथा गइ बीत बिथा। रसना रस ना विन कीर्ति कथा॥४८॥

पद पंकज प्यार जो छूटि गया। अरु सूत सनेहको टूटि गया॥ ठग ठाकुर आनिके जूटिगया। जग जीवनकी बुधि टूटिगया॥४९॥

रहगीर मते बडी भीर भई। सतपंथ बिहाय कुपंथ लई ॥ गुरु भक्ति विना भव भूलि पडे । शरणागत पाहि कवीर हरे ॥ ५० ॥

दोहा-यह कवीरपंचाशिका, पढि सप्रीति परतीति ।
परम पुरुष पद पावई, काल कष्टको जीति ॥

इति श्रीकवीरमानुप्रकाशांतर्गत श्रीकवीरपचाशिका स्तुतिः समाप्ता ।

गुरु स्तोत्र ॥

गुरु दीनदयालं जन-प्रतिपालं, मेट विशालं जमजालं संतन रक्षपालं वचन रसालं, अतिहि कृपालं अतिकालं ॥ अति दुस्तर चालं पंथ करालं, अलमस्त हवालं सुख सालं। जय परमानंदं

पुरुष अखंडं, आनंदकंदं जनपालं ॥ १ ॥ गुरु ब्रह्मस्वरूपं पुरुष अनूपं, सदा समीपं दिव्य सरूपं । इच्छा जब कीन्हा जग पग दीन्हा, भगत प्रवीना संतनभूपं ॥ वैराग निधाना ज्ञान विज्ञाना, धुन ध्यान अनूपं उर मालं । जय परमानंदं पुरुष अखंडं आनंदकंदं जनपालं ॥ २ ॥ चारों युग आये संत कहाये, भर्म मिटाये जन केरा । जे जन मन भाये ते अपनाये, सत शब्द दृढाये जल बेरा ॥ न पाखंड पूजा देव न दूजा, दिल आतम हेरा लख लालं । जयपरमानंदं पुरुष अखंडं आनंदकंदं जनपालं ॥ ३ ॥ बंकेज बचाये सहतेजी पाये, चतुरभुज गाये मतभारी । धरमन बुद्ध आगर सबगुण सागर, पंथ उजागर कुलतारी ॥ द्वादश शिष्य सारे पंथ पियारे, सत शब्द बिचारे सुन आलं । जय परमानंदं पुरुष अखंडं आनंदकंदं जनपालं ॥ ४ ॥ गनिका संग लीना ता रंग भीना, करमें कर दीना हंसि डारी । काशी पुर बासी भये उदासी, देख खबासी मति ख्वारी ॥ सब बोल अबोला राव अडोला, पगपर जल डारी बुझि झालं । जय परमानंदं पुरुष अखंडं, आनंदकंदं जनपालं ॥ ५ ॥

पातशाह रिसाना अहमक कुँफराना, बेपीर हराना कर डारी। पग डार जंजीरा बोरे नीरा, गंगा तीरा फंद टारी ॥ गयंद झुकाये सिंह दिखाये, बासंद्रजाली चंद तालं । जय परमानंदं पुरुष अखंडं, आनंदकंदं जनपालं ॥ ६ ॥ सिकंदर पीरा भयो अधीरा कह गुरु पीरा बल जाऊँ । तेहि नाम तमाली कही कमाली, मन भई खुश्याली सुधमानू ॥ कमाल जिवाये मुरदार उठाये, सत-

शब्द सुनाये हद ख्यालं। जय परमानंदं पुरुष अखंडं, आनंद-कंदं जनपालं ॥ ७ ॥ जग जीवन तारे रतन उबारे, जग पग धारे हितकारी। युग युग चलि आये हंस चेताये, भरम मिटाये गुरु चारी ॥ अलमस्त दिवाना सब जग जाना, दे परवाना लिख भालं। जय परमानंदं पुरुष अखंडं, आनंदकंदं जनपालं ॥ ८ ॥ शिव राम अयाना सब जग जाना, नहीं सयाना लघु-बारं। मैं अपत अपावन गुरु पद पावन, अघपुंज जरवन कर छारं ॥ बड धीरज दीना निर्भय कीना, जग किंकर मारं कर ढालं। जय परमानंदं पुरुष अखंडं, आनन्दकंदं जनपालं ॥९॥

(कवीर महिमासे)

साखी।

गुरु अष्टककूं नित जपै, धरे निरन्तर ध्यान। भक्ति शरी-रहि ऊपजे, ज्ञान विज्ञानसूं जान ॥

॥ गुरु अष्टक ॥

सत सुकृतं सीरं सत कवीरं, अमर शरीरं स्थीरं। अजरम चितं रहे निचितं, त्रिगुण अतीतं गुरु पीरं ॥ अवगत अविकारी विषम विडारी, भ्रमतमहारी परकाशी प्रेम प्रकाशी, काशावासी सुखराशी ॥ १ ॥ माया गो पारं तजत असारं, धारत सारं संसारं। करुणा सुखसागर सब गुण आगर, भेष उजागर जग-तारं ॥ सत नाम सनेहा पुरुष विदेहा, करुणागेहा दुखनाशी। जय जय अविनाशी प्रेमप्रकाशी काशीवासी सुखराशी ॥ २ ॥ उद बुद जग मूलं माया फूलं, सब जग भूलं त्रिय झूलं। संसारं पारं दुख सुख धारं, सदा असारं जग भूलं ॥ सत गुरु सुख सिन्धो दीननबन्धो, माया द्वन्दु तजनाशी। जय जय अवि-

नाशी प्रेमप्रकाशी, काशी-वासी सुखराशी ॥ ३ ॥ तन मन गत जीतं बचन अभीतं माया अतीतं गत क्रोधं । ममता मद लोभं रहित अछोभं, समता शोभं शुध बोधं ॥ गुरु दीन दयाला जन प्रतिपाला, मेट विशाला चतुराशी । जय जय अविनाशी प्रेम-प्रकाशी, काशीवाशी सुखराशी ॥४॥ अनवद्य अखंड सब जग मंडं, अतिहि प्रचंडं गुरु धरमं । सब वर्णाश्रमं भूले भ्रमं पावन मरमं कर सरमं ॥ थक चारू वेदं न भेदं, ज्योति अछेदं तम-नाशी । जय जय अविनाशी प्रेमप्रकाशी, काशी-वासी सुख-राशी ॥ ५ ॥ चारों जुगआये हंस चेताये, शब्द लखाये सुख-दाई । मधुबन पग धारे रतन उबारे, चौका सारे गति पाई ॥ धरमनि मन भाये वचन सुहाये, पंथ चलाये तज फांसी । जय जय अविनाशी प्रेम प्रकाशी, काशी-वासी सुखराशी ॥ ६ ॥ सुलतान चपेरू डार जंजीरुं गंगातीरुं भय पारं ॥ महमंत गयंदा मारत अंघा, गर्जत सिंघा मद डारं ॥ पग पर जल डारे पण्ड उबारे, अचरज सारे नृप काशी । जय जय अविनाशी प्रेमप्र-काशी काशीबासी सुखराशी ॥ ७ ॥ मगहर स्थाना भई घम-साना, विरसिंघ पठाना दल साजी । सत गुरु अलसाना चादर ताना, दोउ दीन भुलाना मनराजी ॥ घटका दोय भेहा खोलो तेहा, भूल विदेहा सुख राशी । जय जय अविनाशी प्रेम प्रकाशी, काशी-वासी सुखराशी ॥ ८ ॥ आत्म सुख धामं लिख शिव-रामं, सदा अरामं गुरु पासं । अघपुंज नसावन गुरु पद पावन परसत जावन सत्य भासं ॥ विनती सुनि लीजै दरसन दीजै, अपना कीजै अघनाशी । जय जय अविनाशी प्रेमप्रकाशी, काशीवासी सुखराशी ॥ ९ ॥ (कबीरमहिमासे)

सत्य

"कवीर" नाम माहात्म्य।

श्रीपार्वत्युवाच।

कवित्त-अहो महादेव तीन अक्षरको एक नाम, कहैं कवीर तासो कहो यह को है जू। देव उपदेव है कि लोक लोकपाल है कि, यतिकि तपी कि सिद्धि साधक लो सोहै जू। योगी योगध्यानी है कि व्रत है कि संयम है, यंत्र है कि मंत्र किधों तंत्र मन मोहै जू। किधों धाम क्षेत्र कोई तीरथको नाम हैं; कहो कृपाकरि जग योग यज्ञ जो है जू ? ॥ १ ॥

श्रीमहादेव उवाच।

कहत ककार जासो केवल सो ब्रह्म जानो, मानो वी-शेष बीज अक्षर जगतको। जेते ब्रह्माण्ड पिण्ड आदि अंत-मध्य तहां सो, रमत रकार झनकार है भगतिको। भावी भूत भवितव्य तीनों अक्षरते न्यारो, नाही सो यही बात प्रमाण वेदमतिको ॥ ताहिते कहत है कवीर तीन अंकजोरी, मोरि मोरि औरही कहैंगे ते अगतिको ॥ १ ॥

जलमें कवीर और थलमें कवीर पांच, तत्वमें कवीर तीन गुणमें कवीर है। विद्यमान जानो यों विशेष अवशेष नाहीं, रहै कैसे निशि दिन ज्यो दृगन नीर है ॥ स्थावर औ जंगमके जेते जीव जगत मांझ, रह्यो भरपूर जैसे जडित जंजीर है। ताही ते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, मोरि २ और ही लगावे सो अधीर है ॥ २ ॥

कहत ककार सुखसागर दातारपति, ध्यानके साजन गुरु-ज्ञान बीज बानी है। रटत रकार सो रहित आदि अंत मध्य, कहत चाहत जाकी अकथ कहानी है। गुंगेके सो गुड जोई खाय



श्री १०८ पं० श्री उग्रनाम साहब

सत्यनाम



कबीरमन्दिर इन्दौरके भूतपूर्व
आचार्य महोपदेशक श्री १०८ महंत शम्भुदासजी
साहब सत्यलोकवासी

सोई स्वाद जानै, चुप चाप ह्वैके कछु बात न बखानी है। ताहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, मोरि मोरि और ही कहेंगे ते अज्ञानी है ॥ ३ ॥

थलचर अस्थावर जंगम जगतमांझ, कबीर सबके कायाको अधीश है। विविध विलास हास ममता जपाय यश, छाजत अकाश छाया दृगकी कशीस है॥ राजत रकार रति राग अनुराग सदा, जगत विभाग केहु तनक न ईश है। ताहिते कहत हैं कबीर तीन अंक जोरि, मोरि मोरि और भाषे सो तो मूढ विस्वेबीस है ॥ ४ ॥

कंज जैसो फूल्यो इंगला पिंगलाके मांझ पैठि, अज है पवन सो आकाश वाही अंक है। विविध प्रकार ज्ञानी गावत ज्ञान वाही, ध्यानी धरे ध्यान भृकुटिके बीच बंक है॥ वाही रंकार झनकार करे आठो याम, रसना रटेते नाम कटत कलंक है। ताहिते कहत हैं कबीर तीन अंक जोरि, मोरि मोरि औरही कहे ते यमशंक है ॥ ५ ॥

कहत पियूषरस सागर अधीश वाही, सुखकी लहरि लहरत आठो याम है। वाहि जो विहारी विहरत बंकनाल बीच, तृष्णा मोह जाल ताको अमि निज नाम है॥ भूआदि लोक पाल-अतल आदि अंक जेते, तेते मांझ रक्षक प्रदक्षक सो धाम है। ताहिते कहत हैं कबीर तीन अंक जोरि, मोरि २ और भाषे ताने जान्यो नहिं राम है ॥ ६ ॥

करुणाको सुख सागर अगाध राजे गाजे, दिन रात बाजे दुंदुभी अपार है। विविध प्रकार जो विचारे तृकुटीके मांझ, मनसा विस्तार ताने दीसे कर्तार है॥ वाही जो रकार योग रण

संग्राम सदा, कामादिक बैरिनको करत प्रहार है। ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, मोरि २ और भाषे ताने जान्यो नहि सार है ॥ ७ ॥

कक्का कामनाको देनहारो है जगत मांझ, वव्वा त्यों विहंग सब इन्द्री जीतवार है। रमत रकार चारों वेदनमें धार धार, बार बार कही सही वाही कर्तार है नाद और विंदक कशिश है जोरि देखो, मोरि देखो घोटिक की घाटी घनसार है। ताही ते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, मोरि मोरि और ही लगावे सो गँवार है ॥८॥

कका कंदर्प जासो वीर्य्य कहत कोऊ, उलटि चढावे जो बढावे यों कपालमें। विविधि विलासके विषयनते विमुख ह्वै, डारे अघघोय खोय लोकलाज हालमें ॥ दया युक्त ह्वैके त्यों निरोगी देह पायके, वही रत्न डर लेके रहै रटत हवालमें। ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, मोरी मोरी कहैं सो तो जाय जम जालमें ॥ ९ ॥

हीरा मोती पन्ना और अक्षर निहारो सर्व, वही जो ककार चिंतामणि को अकार है। विविध प्रकार महिमाके जिते जाल, तिन्हे जानत मराल संत वही जो बकार है। रचित रकार सो जटित सब लोक ओक, वाकी कलानि मांझ रटत रकार है। ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, मोरी मोरी कहे सूझे नहिं वार पार है ॥ १० ॥

वेद निज अंकनको नाम गुने अंक जेते, तेते और वृक्ष यों ककार कल्प-तरु है। विविध विशेष भाव साक्षी है जगत मांहि, अगर रस चोआ माँझ जानियो अतरु है ॥ राजित रकार सब अक्षर रहित जैसे, विद्युत प्रकारके अकाश भास भरु है। ताहिते

कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, मोरी मोरी कहै सो तो महा-नीच नरु है ॥ ११ ॥

घटत घटावत बढावत बढत विधु, क कलासेती त्योंही जगत व्यवहार यो । विवेक संबन्धिनि सुबुद्धि जासो कहैं कवि, रसके लहरिकी समूह सो रकारयो॥ दशो द्वार घेरे पुनि छद्दु द्वार हेरे घनी, पैठि बीच टेरे निरेदूर दरबार यो । ताहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, तोरि तिनुका सो जग होय भवपार यों॥१२॥

कर्म उद्धार जो सो ककार थिर चरमांझ, विधिहुकी मुक्ति सो पंथपार प्रमाण यो । रसनाके मूलमें पियूष सिन्धु राजे गाजे, निशिदिन बाजे विनु तार करता यो ॥ इन्द्री दशो घेरि दशो द्वार एक जोरि करि, त्रिकुटके मांझ हेरि गंगाजीकी धार यो । ताहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, मोरि दे स्वास तब दिसै सिर्जनहार यो ॥ १३ ॥

कलनकी कीर्ति सो कलेश बेलि खंडवेको, विपत्ति बिहंडवेको कहत प्रचंड यो । विविध विलास सत्य लोक आस पास मंद, हांसके प्रकाश कोटि भास करै दण्ड यो ॥ सोइ रसवंत रस रूपको स्वरूप जानै, तानै जब सो कठिन करालको दण्ड यो । ताहिते कहत हैं कबीर तीन अंक जोरी, और और कहै ताको सुकृत बिहंड यो ॥ १४ ॥

करुणाको सागर उजागर है काया माझ, क्यों न धसि देखो अवरेखो दशों द्वार वो। विविध भावको विशारद है आठों याम, तजि धनधाम जो विचारे वार पार वो ॥ रमत रमावत रहत दिन रैनि ऐसे, जैसे परमान हैं झरोखाके मझार वो । ताहिते कहत हैं कबीर तीन अंक जोरि, मोरि और कहै सो तो भूल्यो निज सार वो ॥ १५ ॥

कमल ते भयो जे प्रकाशी विधि नाम जाको, जगत् विलासी तासु कहत कर्तार वो। विविध प्रकारके विकार दुख नाशवेकूं, कामादिक फांसवेकूं करवत कुहाड वो॥ तीनों गुण राजत रकार माझ माया बाद, अति अहलाद रस सागर को सार वो। ताहिते कहत हैं कवीर यह तीन अंक जोरि, मोरि और भाषै सो तो छिति पर भार वो॥ १६॥

कहत ककार कलिमल निस्तार जो पैसो, कामादिक भार छार छार करि डारै जो। दुर्जनके वृक्ष भव कानन विदारवे कूं, ब्रह्महि विचारवेकूं क्षमा उर धारै जो॥ रसना उचारे सत भाव पण पारे हानि, बांधि विदारै काम क्रोधको मेटि डारै जो। ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, हंसि मुख मोरि लोक लाज को विडारै जो॥ १७॥

कक्का कैवर्त भवसागर उतारे पार, विविधि प्रकार अघ जारन वकार तो। केशवको केवल जो नाम सो रकार जाने सो, ताहीको बखानै भव होय वार पार तो। दान व्रत तीरथ विधान योग यज्ञ जेते, ते ते कह्यो श्रुति मांझि नामहीको लार तो। ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, मोरी मोरी और कहै बूडे कारी धार तो॥ १८॥

कहत करार सो कमलको अकार उर, सबही को प्यारो है उजारो ज्ञानी जनको॥ कहत विचित्र इतिहास किते वेद मांझ, रसकी स्मृति सो सुख दाता तन मनको॥ ताहि जो न गावै सुख पावै कहो कौन भांति, मुक्तिको धावै नहिं पावै सो एक कनको। ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, मेरे ऐसेही कहै सो तो सांचे पनको॥ १९॥

कुमोद प्रगट ह्वैके सुमिरत बिधि जाहि, सोइ ककार निरधार

उर धारिये। सुखके समुद्र माझ अचल बिहार जाको, चल न चित्त ताको अचंचल निहारिये॥ रहस्य बताऊँ एक राजत अमरलोक, लखिके रकार तन मन धन वारिये। ताहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, कोरि सो अक्षर निछावर करि डारिये॥२०॥

कक्काको कल्याणको निधान खानि जानि लीजे, बवाते विहंगको स्वरूप उर ध्याइये। रहत निरन्तर निर्मल व्याधि खंडनको, विपत्ति विहंडनेको ररंकार गाइये॥ सोई निज साधु जाने निगम अगाध मतो, याहीको लखेते थिरताको पद पाइये। ताहिते कहत हैं कबीर तीन अंक जोरि, मोरि और कहै ताको मुख न दिखाइये॥२१॥

कलिके जे कर्म तिन्हैं करत विनाश कवि, छविको कमल फूले हियेमें किलक्यो है। विमल सो निर्मल मन है ऐसे जैसे, मीन वारिधिमें चन्दको बलक्यो है। राग अरु द्वेष सो विशोक है रकार मांझ, लखि सो तेज पुंज हृदयमें झलक्यो है। ताहिते कहत है कबीर तीनि अंक जोरि, मोरि तोरि तात बंक नालमें खिलक्यो है॥ २२॥

करुणा समुद्र माझ कहत जहाज जासो, सोई है ककार चढि क्यों न पार हूजिये। सत्त संधानहीको नाम विस्तार उरधारि, विविधि प्रकार धाय धाय वही धूजिये॥ रचित रकार गुण नामको प्रमाण सब, ह्वै के कोकिला सजग बन मांझ कूजिये। ताहिते कहत है कबीर तीनि अंक जोरि, मोरि चित डोरि तोरि जग पगु मूजिये॥ २३॥

कहत कंक मणि सब पावन जासों कवि, ताहि वा ककारमें अनेक छवि छहरै। विगरे प्रपंच वाहि उपमा की आंचनि सो, फिर ढरि आवै रूपसागरकी लहरै। रसको समूह समाधान है

रकार यह, विहर विहर बक नालहि में थहरै । ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, मोरि और कहै परे भव माझ भहरे ॥२४॥

वही गुणवान जासो कहत गुणीले लोग, वही योग भोग जासों कहत ककार है। वही है विजय जग जुरै जैत बारनिमैं, वही पार जाय जाको नाम यो वकार है ॥ वही ररंकार राति द्यौस ध्वनि लागी रहै, जागि रहै ज्योति सोई दीसै वारपार है। ताही ते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, मोरी मोरी कीनो जगकानन कुहार है ॥ २५ ॥

कही निज कर्म तासो कटत विकर्म सब, तब ह्वै अशंक गावै केवल ककारको। विविधि विहार केते रतिके बढायबेको, चाहो उरहार तो विचारो वा वकारको॥ वही सर्व ऊपर विराजे रवि राजे तैसे, निशिदिन बाजे गाजे जान यों रकारको। ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, ऐसेही लगावै ते प्रस्थान करै पारको ॥२६॥

कलि मांझ केवल सुनामही बतायो सार, वही जो ककार धाइ धाइ करि गाइये। आठहुँ प्रकार योग धारण कहत जासो, वही तो वकार श्वास ग्रास गहि लाइये॥ राग अरु द्वेषको विसारि डार वही सोई, विषय निवार एक ररंकार ध्याइये। ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, कोरी कोरी कृपा पूरो गुरू मिलि पाइये ॥ २७ ॥

कमल पर वासी हैं विलासी कर्तार जासो, कहत विरंचि एक कक्काही को नाम है। कुटिल कटाक्ष मृदुमंजुल चितोनि जाकी, विविधि बितौनि विहरत आठों याम है॥ लोक परलोक सामर्थ रस भानको सो, रटत रकार सब करे पूरो काम है। ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, मोरि मोरि स्वास केते गै परम धाम है ॥ २८ ॥

मुकतिको पंथ वही कहत विनोद वाहि, केतेके अमोद रहैं ककाहीकी मांहि वसि। भक्तिको मारग ललाम अति सरल जानो, कहे वकार धरो ध्यान दिन सांझ वसि॥ रसनाके मूलमें रकार वसे सुधा जोपै, नेक न पियो रही माते क्यों न वांझ बसि। ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, कोरि भलो भावै तो चाखो एकै झाँझ वसि ॥ २९ ॥

सबते सिरे है ज्यों प्रसन्न पर कर्णिकाजु, कारण ककार सब यज्ञको निस्तार है॥ कहत वकार सो विचार करो बार बार, जन जगमाहिं जानो मानो सारासार है॥ राम राम रटबो है आठो जाम जोई सोइ, निज नाम ध्यान धाम जानिये रकार है। ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, मोरी मोरी भाषैं और नरक निर्धार है ॥ ३० ॥

ककाही कुमोदिनीको भाव निशि जानि लीजे, वव्वाही विमल मति सूक्ष्म बखानिये। धारना सुलोक शुभ कहत रकार जासो, करि चित्त ध्यान ज्ञान सुरति शर सानिये॥ कहत विचारिके उचारि साधु लक्षणा ये, करि उर स्वास ऊंची दृष्टितर तानिये। ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, मोरि जो लगावै तासो चित दे बखानिये ॥ ३१ ॥

कंटक अटक सो विमुक्त है ककार यह, सांची गति जानो मानो देखेहि सत्याइये। करि विशवास श्वास खैंचिके अकाश धरि, लरि लरि कालसो वकार रस प्याइये॥ रमे सबहीमें आये देखत न नेक कोऊ, दोऊ डोरि एक करि त्रिकुटी लखाइये। ताहीते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, मेरु नाद बिन्दु अरु चन्द सो लगाइये ॥ ३२ ॥

भूरि भूख आदि लोक जेते हैं तल लो, तेई भवसागर कैवर्त

यो ककार है। देह जासो कहत विदेह सब सन्त ताहि, ताहि उर लेके करो गेह घनसार है॥ ररकि ररकि रजनिको है समूह शून्य, मान अवसान को कृशानको दरार है। ताहिते कहत है कबीर तीन अंक जोरि, मोरि क्यों न करो जोई सोइ तो करार है॥ ३३॥

कपट पट छेदा कुबुद्धि अरु काम वेधा, क्रोधको विभेदा खेदा कलिको ककार यो। सहित आचार है विचाररु प्रमारथको, स्वारथको सोदर सहोदर वकार यो॥ राग द्वेष नाशै यमहूको आश पाशै हरै, हरि उर गांसे तन सासे यों रकार यो। ताहिते कहत हैं कबीर तीन अंक जोरि, मोरि मोरि घोरि कोरि कोरी घनसार यो॥ ३४॥

चारहु प्रकारकी मुक्ति जे हैं जगत मांझ, तिनमें सारूप जो का रूप वही जानिले। चौंसठ कला है जेते विद्याको प्रधान आन, कीरति बढावन वकार उर मानिले॥ वही गुरु ज्ञान जामे रहत विवेक प्रण, कीरति गतिमुक्ति रकार छिति छानिले। ताहि ते कहत हैं कबीर तीन अंक जोरि, मोरि त्रिकुटीके छिद्र मांहि शर सांधिले॥ ३५॥

ज्ञानमें कह्यो है वही, ध्यानमें कह्यो है वही, श्रुतिमें वही, वही सुमृति ककार मथि। बीजमें कह्यो है वही, मंत्रमें कह्यो है वही, यंत्रमें कह्यो है वही, तंत्रमें वकार मथि॥ जीवमें वही है, दोऊ दृगमें वही है सांचे, नेह वही है धुति देहमें रकार मथि। ताहिते कहत हैं कबीर तीन अंक जोरि, कोरिमें वही तूण तोरिमें अकार मथि ३६॥

ज्ञानही की नीति सो ककार करे निशि दिन, विमल सुनिर्मल वकार वाणी वर है। रमत रमणीया सदा चार प्रगट यह, देह देही गेहीमें अदेहहीको घर है॥ करो न विचार सन्तहीयमें स्मरण ताकी, रह्यो भर पूरन अफर धारा घर है। ताहिते कहत हैं कबीर

तीन अंक जोरि, मोरि मोरि नासिकाके बीचमें रकार है ॥३७॥

दारिद पछारि तिनुकासे तोरी डारे तिन्हे, करत निहाल जैसे भूधर ककार यो। अतिरस मोद है विनोद सुखसागर सो, सब गुण आगर सो नागर वकार यो ॥ हंसनमें कह्यो सो परमहंस सामरथ, वही गतिको गरंथ सो अर्थ रकार यो। ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, मारै सब कुमति विदारै काम अरि यो ॥३८॥

करे कर कर्म औ विकर्म किते काटे हाल, करत निहाल सोई कका करतार है। अनुभव विवेक जासों ज्ञान विज्ञान कहे, सकल सयानको सयान यो वकार है ॥ रति है संसारके विकार त्यागवेको सब, जागवेको भँवर गुफामें ररंकार है। ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, मोरि क्यों न देखो हिये बड़ो निज-सार है ॥ ३९ ॥

कठिन है कोमल है मृदु है मयंक मुख, सुख दुख तोरन है रह्यो भरपूर है। जगको जनेता व्यवहारको बनेता वही, कवि कहैं केता सो विभेता चकचूर है ॥ न्यारो मखमल सो अकूरो अरिदल त्यौंहीं, मारो छल बल प्यारो घरते न दूर है। ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, नेक मुरि देख तेरे हियेमें जहूर है ॥ ४० ॥

मित्र अरु वैर भाव कलिपत कहै हैं दोऊ, करो निरधार कोऊ कक्का जुदों जानिल्यो। ज्ञान औ अज्ञान यों उठाये धरे दोऊ जहाँ, वव्वा ही विज्ञान रूप भक्ति भूप मानिल्यो ॥ वही रति ज्ञानको रमावे दिन रैन कहूँ, सोई चित चायसों उठाय हिय आनिल्यो। ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, मोरि दृग अंशको सु हंस घट छानिल्यो ॥ ४१ ॥

जिते जग पापके पटल लपटाये अंग, करैं क्षण भंग कलि

केवल ककार वर। जेते जगमाहिं वेद विद्याके विपाक फल, सोधि सोधि बोधि बतायो है वकार वर॥ रसको अभ्यास जिन करे छिन एक संत, वही निज कन्त जासो कहत रकार वर। ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, मोरिके तनु बेलि गाज सामधार वर॥ ४२॥

चन्दकी कलाते और सूरकी कलाते न्यारो, दामिनी कलाते कृसान ते ककार भिन्न। गुणनते न्यारो जाको कहत स्वरूप साधु, निगम अगाध दुरराध वकार भिन्न॥ जागृत औ स्वपन सुषूपतिके आगे बढे, तुरीया माहिं चढै ररकि रकार भिन्न। ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, मोरि दशों द्वार सो जोरि दे अकार भिन्न४३॥

कालरूपी व्याल ताके ज्वालका है त्याग तहां, अति बड़भागी जानो कक्काके मझार जू। विविधि ऋचा हैं जेते वेदमें बतावे कवि, तिनके समूह वसे वव्वा निरधार जू॥ आप उर अन्तरमें क्रीडा करे आठो याम कहा करै दूजै एक कुंज ररंकार जू। ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, मोरि गति लाय कटै पापके पहार जू॥४४॥

कविनकी बानीमें प्रकाश करै आठो याम, सोई वह चैतन्य पुरुष है ककार थिर। संग्रह सकल गुण युक्त है सुमृत वही, रहै बन्यो सो गुण सन्यो जो वकार थिर॥ नाम लै लै गावत विदाहत सकल अघ, रटि रटि रागनमें रहत रकार थिर। ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, मोरि क्यों न देखो हिये बसत अकार थिर॥ ४५॥

नित्य नइमित्य पराकृत अतिअन्त चारु, प्रलैके समूहमें न विनशै ककार यो। आदि अंत मध्य जेते जीव हैं जगत मांझ, सबहीको मोहे सो है समुझ वकार यो॥ एकही पुरुष रमि रह्यो सब लोकनमें, थिर चर थावर विथावर रकार यो। ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंकजोरि, मोरि क्यों न देखै तेरे घट झनकार यो॥४६॥

कायाहूको जानै अरु मायाहूको जानै वही, मुक्तिहूको जानै अरु भुक्ति को ककार वो। राग अरु द्वेष तैं विमुक्त सदा न्यारो रहै, सहै दिन रातिनके वहम वकार वो। अघके जरायबेको दाहक सदा है डर, रतिके रमायवेको राजत रकार वो। ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, मोरि क्यों न देखो त्रिकुटीमें सोमधार वो ॥ ४७ ॥

कमल कह्यो है वही श्रुति और सुमृति मांझ, ध्यान धरिबेको एक कका निरधार है। सिद्ध जितनी हैं जानी लीजिये जगत मांझ, तिनहूँको आदि बीज दिन दिन वकार है ॥ रचना रचन सब जीवन जगत माहि, पूरन प्रताप अघताप सो रकार है। ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, रंचक जपेते कर्म कटत पहार है ४८॥

कला जितनी हैं जग ब्रह्महि विचारि लीजै, कहैं नेति नेति वेदन ककार मांझ। विकला विकाश जेते विविध प्रकाश अब, कहे हुलास तेते बास है विकार मांझ॥ रहित कह्यो मोह शोकते प्रसिद्ध वही, रमक झमक सब देखिये रकार मांझ। याही ते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, मोरि क्यों न देखो सब जगत अकार मांझ ॥ ४९ ॥

अमल कमल गंध दिन दिन बसत जामैं, छिन छिन हंसत विकसत सो ककारमें। गुणके विभाग भाग विविध प्रकाश जेते, तेते सब जानि लीजै अचल वकारमें॥ रसना रटत जाको नाम दिन रैन नीके, जगमगे ज्योति द्युति होत है रकारमें। याहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, मोरि क्यों न देखे सदा हाजिर अकारमें ॥ ५० ॥

करुणाके रूप औ समुद्र वही जान सदा, न्हाये गुणगाये दै बहाये अघ वकार सो ॥ वही सांचो नाम सबे भाग औ विभाग

माहिं, भरि भरि वहैरै विहारै है वकार सो ॥ भक्ति औ मुकुतिमें अत्यन्त रति जान्यों जाकी, दिन दिन सानो आनो भाव ररंकार सो। याहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, तोरि जग रीहि प्रीति जोरिये रकार सो ॥ ९१ ॥

कलिके कलेसन जरायवेको पावक है, संत उर जावक अचल सुहाग कवि। संतत सो विविधि विलास वनमाली वेहि, वानी अधीश्वर है ईश्वर विचारि विविधि ॥ रसनाके बीच बेसे सुधारस बास आछे, वचन विलास हांस अमल प्रकाश रवि। ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, मोरि ज्ञान पावक हवन कीजे कर्म हवि ॥ ९२ ॥

सकल ब्रह्मांडको अधार करतार सोई, सोई निराधार है विचार विस्तार कंक। सोई सब कालनको काल महाकाल जानो, सोई यमजाल बिहाल जगमग्यो वक। स्वर्ग पाताल छितिहूमें दशों दिशा सोई, रह्यो रमि रक्षक प्रतक्षक पुरान रंक। ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, मोरि देखो हिये माहिं अंकित अनादि अंक ॥ ९३ ॥

कलिके कलेशनको तारत निषेध सोई, जाको नाम कक्का जोइ जग करतार है। रतिके विनोदनको भागी है भँवर सदा, जग वन घन बीच भवन वकार है ॥ रतिके जे धर्म जिन्हैं पोथिनमें गावैं साधु, अगम अगाध बँधे बँधन रकार है। ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, सत्य याहि मानो जग झूठो व्यवहार है ॥९४॥

साँचे साँचे सबद किये हैं जामें बीनि बीनि, छीन सब किये जग करम ककारने। सार सार लीनो और कुसार सब धोय डारचो, यज्ञ कीन्हे भरम पछारी कै वकारने। ध्यान धारणा धरत दिन रातिहू समुझि, भ्रम सब डारे खोई जगके रकारने। ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, मोरि डोरि लावै ताकै जावै हम वारने ॥९५॥

मोहको गवाँवे रोग दोष ले बहावे सब, भाव उपजावे ले पचावे काम कासना। विविधि विवेक ले त्रिविधि ताप हंत करे, उरधरि वाही जनि लावो कोप वासना ॥ केते लोक पालनकी सभा मांझ राजे वही, वही महि मंडन अखंडन रकासना। ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, मोरि मोरि और कहे ताको मुक्ति आसना॥९६॥

कक्काही सकल जीव संभव विचार लीजे, वव्वाही विसर्ग सब संज्ञाको अधीश है। वही है रकार शब्द रूप सो अभासे सदा, संतत प्रकाशे दृग आनन रु शीश है॥ शब्द अरु सूरति संयोगमें समाय रहे, कुरँभकी वृति गहे लहे वीसो वीस है। ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, मोरि क्यों न देखो तेरे हिये जगदीश है॥९७॥

ज्ञान औ विज्ञान मख तीरथ वरत दान, सबही अनाथ नाथ जानिये ककार यो। मन बुधि चित्त अहंकार महाभूत पांचो, सबको मतो है कांचो सांचो हैं वकार यो। शब्द रूप रस औ परस वश है सो नाहिं, अरस चढायबेको दरश रकार यो। ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, मोरि मुसकाये पाँये गूँगेको अहार यो ॥ ९८ ॥

कक्काही कहत करतार किते भावनिको, वव्वाही विलासे अति सागरके पारको। रमत रकार नायकामें रूप भूप ह्वैके, शोभित सरूप यो कुरूप करतारको। विधि औ निषेध आछो बुरो ये तो माया वाद, विविध विषाद कियो माया और सारको। ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, मोरि उर खोजिले मतो है भवपारको ॥ ९९ ॥

कक्काही कह्यो है कथनीय वारताके माहि, वव्वा व्याधि नाशवेको अति बलवीर है। शब्द औ स्वरूप सदा मुक्तिको है भूप जोई सोई, घट घट माहिं राजे रणधीर है। ब्रह्म शिव विष्णु केते कोटिन

तेतीस देव, रहे जोरि जोरि हाथ बड़ी यह भीर है। ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, नेकहु दयाके किये हरै पर पीर है६०॥

और युग माहिं योग यज्ञ व्रत दान जप, कलिमाहिं केवल सो कक्का अर्थ सार है। विद्याहूको ईश योग यज्ञके अधीश केते, भोगको विलासी वही वव्वा व्यवहार है॥ रही आठों सिद्धि वा रकार मांझ वसि नीके, नवो निद्धि पीके जीके भयो भवपार है। ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, स्वासको मरोरि त्रिकुटी में निरधार है॥ ६१॥

लोक शुभ करन धरण बल बुद्धि वही, उधरन जक्त अघ हरण ककार है। पूरण प्रताप पद पल्लव नलिन वही, करि मन अलिन दलिन यों वकार है। विरहिनि मांझ वही विविधि विहारी वन, वारी अघहारी नर नारी में रकार है। ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, मोरि मन लाय देखो अमृतकी धार है॥६२॥

मायाको अधीश वही जो कर्ता कहावत है, जासो कहै कक्कासो मै हक्क है जहानको। गुप्त औ प्रगट उभै धाम निराधारनके, वसि वसि न्यारो है वकार उर आनको॥ रमत रकार सातों लोकनमें वार पार, विविध विहार प्रतिहार है निसानको। ताही तैं कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, ऊँचे मोरि देख भासै चांदनो सो भानको॥ ६३॥

करम धरम त्यागिवेको यों ककार कही, मोह काटिवेको अघकन्दन विबंद यो। कर्मके विरिछ निवारवेको आठों याम, झुकि २ झुमि २ घूमि घूमि रन्द यो॥ गुणी गुण धारण विदारण कठिण काल, तन अघ जारन उधारनको कन्द यो। ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, नेक मोरि देख हिये पुनोंको सो चन्द यो॥ ६४॥

कर्ता शुभ गाथ धाम जायवेको साथ आये, ग्रन्थ शुभ गाथ नाथ सांचो करतारको। विविध विशेष रोग हरण अशेष वहि, श्रुति मुख देखि अनुपेखि लै वकारको॥ वहि प्रतिपाल है रसाल ब्रह्म कहै जाहि, धरि धरि ध्यान ज्ञानी गावत रकारको। ताहिते कहत हैं कबीर तीन अंक जोरि, मोरि उर देखि हिये मांझ निज सारको॥ ६५॥

कामते रहित क्रोध लोभ तैं रहित मद, मोह तैं रहित माया रहित ककार यो। विविधि प्रकारके बिकार खंड खंड करि, डारे अघ देखतही प्रगट वकार यो॥ निरंजन भौन माहिं चितवत संत जाहि, धरे धाय धाय ध्यान रंचक रकार यो। ताहिते कहत हैं कबीर तीन अंक जोरि, मोरि उर देखो तेरे हिये मांझ सार यो॥६६॥

जेते अभिलाष जग बासना विलाश वाहि, करि कक्का मांहि वास होये जग पार त्यों। मोहसे नृपतिको विदारवेको अस्त्र यह, शस्त्र काम जारिवेको धरिलै वकार त्यों॥ दूरैते विराज सब जीवनसे आठों याम, करिले प्रकाश गुरु ज्ञानसो रकार त्यों। ताहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, मोरि उर देख नेक कटै जग भार त्यों॥ ६७॥

कौन जाके तुल्य थिर चरमें विशेष वही, युक्ति अनयुक्तिमें विचारिले वकार है। जाको विस्तार सब लोकन पसारो पर्‍यो, रचि रचि धर्‍यो भाव भर्‍यो सो वकार है॥ अतिरमणीय सब गुणनको ज्ञाता वही, दाता सो विज्ञानको प्रधान यो रकार है। ताहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, मोरि क्यों न देखो सब जगमें विहार है॥ ६८॥

कलह की खानि कलि कंटक विकंट वही, बंक उर अंक सोई कक्काको विचारि ले। विषमको भाव तामें लेशहू न नेक कहूँ,

कामना अकामना सो वग्वा उर धारि लें ॥ जानत हैं नवो रस भावना सो नीकी भांति, भाव उर धारिकै रकार मन मारिलै। ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, मोरि २ स्वांस बंकनालमे संभारि ले ॥ ६९ ॥

कायाहीको पालै निशिदिन दयापाल वही, करुणाको सिंधु अरु बिन्दुसो ककार यह। शील गति मिल्यो सनतोष झिलमिल्यो काम, क्रोध तिलमिल्यो बिलविल्यो सो वकार यह। अच्छे शुभ करम भरम धर्म काँचे तहाँ, सब गुण साँचे रंग राचे त्यों रकार यह। ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, मोरि वही देखि तोसूँ कही बार बार यह ॥ ७० ॥

कंठहिके पंथमें विमान बैठि ऊँचे चढि, दृष्टि गुण मढि बढि कक्काहीके धामको। वही सांचो लोक तामें करै जो विहार सदा, वाके वंकनाल विच्च धर्निधर बामको॥ करनी करम सब वरुनी उठाय डारी, मारीके कुबुद्धि चित्त लायो नाम रामको। ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, मोरि मोरि देख वाहि तजि और कामको ॥ ७१ ॥

तुरिया जो मोद ताको कारण करनहार, दुखको हरण हार जानिले ककारको। वेद भेद करि करि विधि सो बतायो ज्ञान, विविधि विज्ञान ताहि मानिले वकारको ॥ शुभको करैया वाहि अशुभ हरैया जान, भावको भरैया लखि लीजियो रकारको। ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, मोरि मोरि देखो हिय सिरजनहारको ॥ ७२ ॥

जपि २ आपसों विलास करि लेत नीके, जैसे वह भृंगी कीट करत ककार त्यों। बोध करे जीवको सुबोध सब जग माहिं, वधि २ नामसो निधान वो वकार त्यों ॥ निर्मल कहावे धोय

मलको बहावे सोई, ध्यानको लहावे उर आवत रकार त्यों। ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, मोरि मोरि देखो उर राजत अकार त्यों ॥ ७३ ॥

जग सुखदाई भक्ति कारन है आठों याम, मलन विदारन हैं वारन ककार यह। त्रिविधि कुसंग कलि कारन कलेश जेते, तेते अघहरण उधारण वकार यह। निर्मल है भाव जेते रमि २ चावही सो, मुक्तिपर पाव दै दै पायले रकार यह। ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, नेक मोरि देख घट माहिं टनकार यह॥७४॥

कमल कलीके मांझ कमलाको कंत वही, वही भगवंत जग ऊपर ककार है। प्रगट विशेष ज्ञान ध्यानके लगायबेको, हरि उर लायवेको राजत वकार है॥ वही अनुरक्त औ विरक्त सब जक्त माहिं, निगम विहारी जासों कहत रकार है॥ ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, मूरि क्यों न देखे तेरे हिये झनकार है ॥ ७५ ॥

कल्पहीके अंतमें आनन्द है ककार ही को, तीरथ वरतको विलासी सो वकार है। शब्दके स्वरूपमें विराजे अति राजे सोई, मनुष्यमें गाजे ऐसे बाजे सो रकार है॥ नीके कै विचारै उर धारै संतजन कोई, सोई श्रुति सार कहै लहै वार पार है। ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, मोरि मोरि देखि पेखि अति सुखसार है ॥ ७६ ॥

जेते लोक लोकपाल व्योमपाल भौमपाल, कक्काही को उरमाहिं सबहीके जानि लै ॥ भक्ति प्रतिपालक है बालक न बूढो वह, नर है न नारि ताहि वव्वाहीमें मानि लै॥ पाप अरु पुण्य दुख सुखको विहंडन है, आनन्दको मंडन रकार उर आनि लै। ताहिते

कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, मोरि स्वास इंगला औ पिंगलामें तानि लै ॥ ७७ ॥

द्वैत मत खंडन अद्वैत भाव मण्डन है, सगुन विहंडता बढावत ककार यह ॥ विभव बढावत कढावत भवसागर तैं, सुमति बढावन वकार है सार यह ॥ चित्त चितानन्द भावफन्दको निकन्द दुख, दारिद सुछन्द कन्द आनंद रकार यह । ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, नेक मोरि देख कामवनको कुठार यह ॥ ७८ ॥

मन वच कर्मन कषाय मल धोय नीके, जगमाहिं करै नित्य कक्काही सो प्रीति रे। बाहरिके विविधि विहार जानि फीके सति, लोकको विहार वव्वा अंतरमें जीति रे॥ रति मति गति जगमाहिं जे करत नेक, साँची रति अंतर रकार रस रीति रे। ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, नेक मोरि देख जिनि वृथा दिन बीति रे ॥ ७९ ॥

कलिके कलेश काटिवेको गाये कक्काहीको, वव्वा है विशेष ज्ञान ध्यान करतार यो॥ राग अनुराग झूठे जगमाहिं लावे मति, करि साँची रति हिये रटन रकार यो ॥ काहेको झंखत हैं फिरत वापी कूपनको, धायकै नहाय घाट गंगाजीकी धार यो॥ ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, मोरि२ देख तेरे हिये झनकार यो८०

जान कवि चातुरी ककारहीको नीकी भांति, कहत संयोग औ वियोग सो वकार है। धारिवेको धीरज विदारवेको कामादिक, हृदय विचारवेको नीको सो रकार है॥ झूठो जग संग करै ध्यान मांहिं भंग यातैं, दै दै ज्ञान रंग नीकै चित्त निरधार है। ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, नेक मोरि देख सब कटत विकार है ॥ ८१ ॥

जिते जगमाहि किते पापके पूर भरे, करे चूर चूर नेक कक्काके लगाये ते। चित्तकी विपत्ति केती फोरि डारी छिन माहिं, धरि धरि ध्यान वाहि वव्वा उर लाये ते॥ फूलत कमल दल लोचन छिनक मांहि, रटि रटि राग त्यों रकार गुण गायेते। ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, होय भव पार पूरो गुरू ढूँढ पायेते॥८२॥

जानिवे जो चाहे तोपै जान एको कक्काहीको, भयो जो विशेष चाहै वव्वा उर धारिलै। छुटो चाहे माया ते निहाल ह्वैकै जगमाहिं, करि करि ध्यान त्यों रकार पन पारि लै॥ जोपै जग माहिं आय युग २ जीवो चाहै, काम क्रोध मद मोहको विदारिलै। ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, मोरि २ स्वास नादबिन्दुको सँभारि लै॥ ८३ ॥

केवल आनन्दको समूह सोई कक्का यह, योग औ वियोगको विहारी सो वकार है। जेते जगमाहिं सब रोगनकी जाति पांति, होय खण्ड खण्ड ध्यान धरत रकार है॥ आसन विचारो पान भोजन विचारो सैन, जागृत विचारो जग विविधि विकार है। ताहिते कहत है कवीर तीनि अंक जोरि, मोरि क्यों न देखे हिये झूठो संसार है॥ ८४ ॥

कालरूपी व्याल ताने केतिक विनाश डारे, सुरनर मुनि गंधरवको ककार यो। वही निज मंत्र तंत्र वेदनमें गाय गाय, धाय धाय लागे जासो सोई है वकार यो॥ वही दिन रात मास पच्छ घटिकाका भाग, वही सूर चन्द्र तारा गणमें प्रकार यो॥ ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, मोरि क्यों न देखो तेरे हिये ततकार यो॥ ८५॥

विन पग धावै विना यंत्रही बजावे तार, गिरा बिन गावे सो लहावे करतारको। तीषनाके विविधि पहारन को फोरि डारै, सब

करि ध्यान भयो निर्मल वकारको ॥ अमरहिं लोक अरु अमर है नाम जाको, अमर विहार वन वाही है रकारको। ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, नेक मोर हिये भवसागरके पारको ॥८६॥

करण कहावे वही कारण कहावे वही, करता कहावे वही जानो जो ककार हैं ॥ सुखके समुद्र माहिं करत विहार वही, निराधार औ आधार सोई तो वकार है ॥ पाप ना लगत जासूँ जापके करेते नित, अति गति भाव भरयो रहत रकार है। ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, याहीकूँ निहारि जग झूठो व्यवहार है॥८७॥

सांचे सांचे पंथको चलावत है नीकी भांति, झूठे झूठे मारग विदारत ककार यह। अजपा जो जाप ताहि जपि २ आठो याम, थपि २ भावनासो कामना वकार यो ॥ भक्ति अरु मुक्तिके विलास हास जानि मानि मानि सो मनहि मनावत रकार यह । ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, नेक मुरि देख हिये मोतिनको हार यह ॥ ८८ ॥

कपट कपाट तन पटल विडारिबेको, दारिवेको कक्का काम ध्वज शूर वीर है। वेदनके जेते सातो अंग हैं विविधि भांति, तिनके संवारवेको वव्वा रणधीर है ॥ मंगल समूह केते आनंद समूह जेते, धरत रकार सोई हरै पर पीर है। ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, मोरि मोरि तौलि खोलि हिये में जंजीर है॥८९॥

जेते श्रुति सार जेते तत्त्वके विचार जेते, कहै हैं प्रचार सब कक्काहीमें मानिलै। अघको हरणहार वेदको धरणहार, भावको भरणहार वव्वाहीको जानिलै। सिद्धनको दाता वही बुद्धिको विधाता वही, सब जग जाना है रकार डर आनिलै। ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, मोरि जग रीति प्रीति वाहि सो तू ठानिलै ॥ ९० ॥

कायाहीकी सिद्धि सो ककार मांझ जानि लीजै, दयाहूकी सिद्धि सो वकार माहि जानिये। भक्तिका बढ़ोनि ज्ञान ध्यानको बढौनि चित्त, चेतन चढौनि सो रकारहीमें मानिये॥ दया उर धारि काहू जीव ना बिदारि हरे, हरे पग धारि पूरा गुरु चित्त आनिये। ताहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, मोरि मोरि स्वांस त्रिकुटीको ताकि तानिये॥ ९१॥

लोक सुखदाई दुखदाई है न आठों याम, संतनको भाई गुण सोई है ककार यो। सदाही प्रसन्न वह जगकी हस्तपीर, नेक न अधीर शूर वीर सो वकार यो॥ भक्तनकी दाम रचि उर लावे आप हरे, जगहीके पात चित्त चेत निरकार यो। ताहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, नेक मुरि देखै सोई होय भव पार यो॥९२॥

जेते गुण ज्ञान ध्यान दाता है ककार कवि, कहत विज्ञान तासों प्रवर वकार है। परम पवित्र जासूँ कहत है धाम कवि, होत पूरो काम नाम लियेते रकार है॥ गाफिल न होय जग डारे अघ धोय सब, लैलै वाहि नाम केते भये भवपार है। ताहिते कहत हैं कबीर तीन अंक जोरि, मोरि मोरि देख गाय गाय गुण सार है॥९३॥

कविके कवित्त माहिं राजत है नीकी भाँति, गाजत पुराण माहिं कका करतार है॥ देह विन डोले देहवान सो दिखाई देइ, चित हरि लेइ चाय चाय सो वकार है। योगी यती जंगम औ सेवरा कहे हैं जेते, केतक गुरूको रूप जानिलै रकार है॥ ताहिते कहत हैं कबीर तीनि अंक जोरि, नेक मोरि देख तोपै दीखै वार पार हैं॥९४॥

यज्ञमें वही है सांचे भावमें वही है अति, श्रेष्ठमें वही है जासुं कहत ककार है। चित्र औ विचित्र रमि रह्यो यत्र तत्र वही, जासो परमहंस कहै सोई जो वकार है। शोकको हरनहार रोषको हरनहार,

दोषको हरनहार जानिलै रकार है ॥ ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, मोरि मोरि देख धाय धाय धार धार है ॥ ९५ ॥

सिद्धिनको राजा सब रिद्धिनको राजा, नव निद्धिनको राजा राजै प्रगट ककार जू ॥ ज्ञान औ विज्ञान औ विवेककूँ बढावन है, ध्यानको बढावन है वावन वकार जू ॥ रवि की सो तेज निशि-दिन जगमगै जामैं, रगमगै जगमाहिं रंजित रकार जू । ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, मोरि मोरि देखि याहि होय भवपार जू ॥ ९६ ॥

दूर जनि जानो युग कोस है प्रमानौ धाम, एक कहै योजन विराज सो ककार यो ॥ एक कहै देश वाको न्यारोही विराजै सदा, एक कहै एक देश विविधि वकार यो ॥ रुनुक झुनुक झनकार रहै आठो याम, सोई निज धाम जासो कहत रकार यो। ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, नेक मोरि मोरि देख हिये होत किलकार यो ॥ ९७ ॥

वाही तेज पुंज कंज कंप करै आठो याम, हरै अघ पक न कलंक है ककार मांझ । विविध वकारको विदारि डारै क्षण माहिं, दिन माहिं रैन माहिं बंकित वकार मांझ ॥ जेते ऋषि मुनी यती योगी हैं जगत मांझ, तिनको परमधाम जानिलै रकार मांझ ॥ ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, मोरि मोरि देखि ढकि ढुरि अकार मांझ ॥ ९८ ॥

अति घनघोर सोर घनसो गरजि रहै, चन्द सो दरजि रहै रंजित ककार यो। आधिको विनाशै सब व्याधिको विनाशै काम,

क्रोध अघ फाँसै सोई विविधि वकार यो ॥ रविकोसो मंडल है तेज पुंज खण्डल है, विद्युत विहंडल है डंडल रकार यो। ताहिते कहत हैं कवीर तीनि अंक जोरि, मोरि मोरि देख हिये हाजिर अकार यो ॥ ९९ ॥

कूरम वही है शेषनागसो वही है धरा, धरसो वही है जासो कहत ककार है । शेष अवशेष वन बीहड नदी हैं जेति, सातहू समुद्र तिनै जानिलै वकार है ॥ वही निराधार और अधार सब जीवनको, विविधि विहार करै जगमें रकार है । ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, नेक मुरि देखि सोई राजत लिलार है॥ १००॥

कवि है जेतेक जग माहि बडे बुद्धिमान, तिनको अधीस ईस जानियो ककार है। धाता जो है पिता माता जो वही है, बुद्धि भ्राता हू यही है जासो कहत वकार है ॥ जगको जानेता सब अघको हनेता काम, क्रोधको हरेता जग राजत तकार है। ताहिते कहत हैं कवीर तीन अंक जोरि, मोरि मोरि देखि निशिदिन झनकार है ॥ १०१ ॥

इति कवीर एकोत्तर शतक ।

तीनों जे अंक ते निशंक है सुनाये शिव, आपने त्रियाको निज हित चित्त जानिकै। न्यारे २ अंक तेऊ एककै दिखाय दिये, गाये सामवेद मांझ दिनसांझ आनिकै ॥ गुप्ततें गुपुतसो प्रगटकै बतायो रुद्र, गायो युग संत साखी मनमानिकै। धऱ्यो

उर देवी जामें विविधि उपासना है, सब शिरमौर राख्यौ बीन बीन छानिकै ॥ २ ॥

एकोत्तर शतक कह्यो साहब कवीर जू को, सुनै तू महातमको नाहीं वार पार है । प्रात उठि पढे जो पै सुने चित लाइ जोई, सोई सांचो साध जो अगाध मतसार है ॥ ज्ञानको उजागरो सो जगको पसारो देखै, लोक तिनुका लौं लेखि हियेको विचार है। जायकै परमपद फिरि जग आवै नहीं, सही यही बात धार धार निरधार है ॥ ३ ॥

सो०-चन्दचूड निज मूल, रचिपचि कियो कवीर सत ।
टीका तेहि सम तूल, अखयराम भाषा करी ॥ १ ॥

सम्वद् अठारहसै गियारह मध्य भाषी, कार्तिककी पंचमी सुदीसे रविवार है ॥ नगर भरथपुर व्रजकी करौट आहि, ताहि माहिं बैठार कियो ग्रन्थको प्रकाश है ॥ स्वामी दयानन्द जू के बाल हरि दास भये, ताके श्यामदासको भिखारी दास २ है । साहब कवीर की कृपाते अखैराम कही, भाव दीप दीपिका समुझ गुरु पास है ॥ १ ॥

इति श्रीब्रह्मयामले पातालखंडे उमामहेश्वरसंवादे सामवेद शाखावर्णनं त्रिपदाक्षरनिर्णयं कवीरैकोत्तरशतक कवि आखयरामकृत तथा–कवीराश्रमाचार्य स्वामी श्रीयुगलानन्दविहारी द्वारा संशोधित सम्पादित ।

समाप्त मिदं ॥

सत्य

विनय रत्नावली प्रारम्भः ।

स्वामी परमानन्दजी विरचित ।

दोहा-सत्य कबीर कृपायतन, तन धरि जिवके काज ।
मो सम वायस मलिन भव, तव पद नलिन जहाज ॥१॥
भक्ति गरीबी दीजिये, नाथ कीजिये नेह ।
और दौर मन चूर भय, हौस रही यक एह ॥२॥
तुम बिन जिव विलकत फिरे, खिलकत भई विहाल ।
चिलकत प्रभु जग यम भजे, ढिलकत बन्धन माल ॥३॥

सवैया ।

जगमें बहु सूर सती जपिया, तपिया सो पिया पद पावत नीके । हमतो सबही विधि हीन महा, शुभ धर्म कहा गुण ज्ञानन फीके ॥ नहीं उपाय सहाय करो यक, आश किये करुणामय जीके । कछु जोर नहीं दृग कोर लखो, दलिहों दुविधा चलिहों गुरुलीके ॥ १ ॥

मोहिसो नहिं हीन मलीन कहूँ, गुरु धर्म न जो शुभ कर्महिं जानी । दम संयम नेम न क्षेम क्रिया, भव भोग प्रिया नहिं योग निशानी ॥ पति राखिलियो पति राखिलियो, जगमें मम लाज इलाज लहानी । अब किंकर काल दयाल मिले, निज किंकरको महि किंकर मानी ॥ २ ॥

कोइ माँगत मुक्ति है युक्ति कोई, कोई चाहत है युगही युग जीजै । कोइ देवसे स्वर्गकी ठेव धरे, उधरा धन धान्य धरा धरि लीजै ॥ तव दासन आस वही सबही, पदही सदही लदही रति कीजै । जेहि चाह न अन्य है धन्य वही, गुरु भक्ति अनन्य दया कर दीजै ॥ ३ ॥

सुख साज घनो गज वाजि घनो, सब शोक समाज घनो जिवकेरो। धन द्रव्य ले नर्कमें गर्क करे, कुल रूप सुजाति कुटुम्ब बडेरो॥ बर विद्या जहां लगि चातुरता, जिउँहिं ज्यों जीवमें होय घनेरो। तेवहिं त्यों भक्तिसे दूर करे, मद पूर कहे विषयाबन घेरो॥४॥

सुख स्वर्ग लहो अपवर्ग लहो, ऋधि सिद्धि समृद्धि जिते जग मांही। जप योग रु युक्ति औ उक्ति सभी, पद इन्द्र उपेन्द्र जहां लगि आही॥ जेहि जीव मदे वर वेद वदे, अभिमान लहे भ्रमकी सब छांही। धन्य धन्य सोई पद लागु जो, गुरु भक्ति समान कहूँ कछु नाहीं॥ ५॥

कर लेकर काह मिले प्रभुसे, कर भेट कहा करदाम न कोई। जहँ झार तपोधनके धनिका, दरबार तुम्हार रहे हग जोई। जिमि हंसनमें बकुला अकुला, देहि देखत मैं अपनो मुख जोई। विनती हमरी बुढिया दमरी करुणा कर नाथ कबूलहु सोई॥ ६॥

नहिं सायर हों कुलकायर हों, परि पाय रहो नित नाथ भरोसे। कहुँ मो सम तुच्छ न और कोई, गुण ज्ञान न छूछ बने प्रभु पोसे॥ करजोरि विनय प्रभु मोर सुनो, जन राखहु पायन पंकज गोसे। यक पूत कपूत प्रसूत प्रसू, जठरा जठरा भरको तजि तोसे॥७॥

यमदूत कपूत बडे रिसिहा, खिसिहा बसके कसि लीनेहु दण्डी। घिघियात दया कसिबात जिन्हें, अधिको वधिको विधि कूटत मुण्डी॥ बल वाहन साहस आतुरता, सब चातुरता तहवाँ भइ भुंडी। कोई यार नहीं हथियार नहीं, यक देह रही बिनु शस्त्रके लुण्डी॥ ८॥

नहिं लेश दया हृदया तनिको, जब छेदत है यम बांधि गटैया। इतही उत हेरके टेर सबै, कहु मोर नहीं चहुँ ओर उपैया॥ परिवार सगे न गोहार लगे, तजि भौन भगे दुख कौन

घटैया ॥ सुनि आवत बैन पुकारत आय, सहायक राम है बंदि कटैया ॥ ९ ॥

भवपाट महा अतिपीन जहाँ, किमि दीन पपीलहिं पार करीजे। बल भंग मतंग भयो जिहिंमें, गुरु संग विना तेहि माँह मरीजे॥ कह मुक्ति कोई जग युक्ति लोई; नहिं नाथ जो साथ तो पाथमें छीजे। भवसेत अभय पद देत तुही, प्रभु आस यही कर दास गहीजे ॥ १० ॥

भव सिन्धु अगाह न थाह कहूँ, मम नाय तरी यक गाथ निहोरे। झर झोर झकोर न ठौर कहूँ, भल भायचरी यक नाथ निहोरे। मद मोह तरंग तुरंग रहे, बड़ भाग भरी यक नाथ निहोरे। महिखेस चले मम केस गहे, कर धाय धरी यक नाथ निहोरे ॥ ११ ॥

जेहि सिन्धुमें पौन प्रचंडचरे, पलमें शतखंड करे तृणतूरी। खगराजहुके बलको दलजो, हमरो बन वाहन पाहन पूरी ॥ हम थूल थरा जहँ झूल नरा, दुर्गम्य दुकूल परा अति दूरी॥ शरणागत हूँ शरणागत हूँ, शरणागत नाथ हरो भय भूरी ॥ १२ ॥

समरत्थने हत्थ गहीर गही, जल रत्थ मेरी गुरु सत्यतरी है। समवाय वहाय सहाय करी, बल पाय हरी थल धाय धरी है। मम पोत टुटी गुणसो न जुटी, जेहि कोट दरार करार करी है। बिनु सत्यकवीरको पीर हरे, भवभौर भयावन भीर परी है ॥१३॥

कलिकाल विहाल किया जिवको, पिवको पदसो केहि भांति सो पावे। जहँ जाप नहीं जहँ ताप नहीं, जिव पाप महीं दिन रैन गमावे॥ अति बुद्धि मलीन जो लीन विषय, नहिं शुद्ध सतो छण एकहु आवे। यमफन्दपरे नहिं द्वन्द्वटरै, उबरे जब सत्य कवीर बचावे ॥ १४ ॥

अमरावति नग्र बसो जेहिमें, तेहि दर चार सुधार बनाये। वैराग्य विवेकहुँ ज्ञान गनाय, विचार सो चार गुरू बनि आये॥ तेहि मध्य सिंहासन आसन तौ, जगे ज्योति सोहंगम चौर ढुराये। सोइ द्वार ते जाय सो पाय तुम्हें, दुतिये विधिसे पुनि यों कहि गाये॥ १५॥

पद पादुक और पद त्रान तेरो, पद धूल पदामृत चार विचारे। पद पादुक ते मुक भर्म सबै, पदकी पनही धनही जिव तारे॥ पद धूल हरे तिहुँ शूलनको, चरणामृत कर्महिं धोय पँवारे। गुरू-चारहु जक्त उबार लियो, यम जीतन नाथ प्रताप तुम्हारे॥ १६॥

गुण सिन्धु यथा तुम आगर हौ, तिमि औगुण सागर मो सम नाहीं। दोउ मेल मिले यम जेल ढिले, अस खेल खिले करुणा-मय बाहीं॥ कण तुच्छ मिला मन अम्मर जो, तब रेणु हिरम्बर वेणु कहाहीं। विषयादि समीर सरीरन छै, भवतीर लगे नहि आवहिं जाही॥ १७॥

दिल देवल देव दया दरिया, थरिया भरिया भरि नैन निहारी। दुख दारिद कम्पत चम्पत भो, सुख संपति संपति सो भरभारी॥ सुखसाज सघट्ट अघट्ट दई, फिर आवँ न हट्ट या पनसारी। बयपार करी बयपार करी, बयपारन संगमें ये बयपारी॥ १८॥

हिरअम्मर चीर कबीर कवी, कविता सविता गुण गावत पायो। न टुटै न फटै न कटै कबहूँ, रुचि राउरकी पहिराउर आयो॥ जो मुनिन्द्र भरे न सो इन्द्रधरे, भगवान कृपा भग बाँन भगायो। सतनाम निकाम ररो सुधरो, उधरो दृग दिव्य दयाल बतायो॥ १९॥

गज ज्ञान अपानकि पीठ चढे, दल दैत विकार विषय विह-राना। गहि वज्र विवेककी टेक हिये, निज नाम निशानको मारुब्याना॥ सहसक्ष प्रतक्ष स्वरूप लखे, तम भक्ष कृपा भ्रम

कूप बिहाना। जन राउर यद्यपि बाउर है; पद पंकज पास कियो निज थाना ॥ २० ॥ इति ।

कबीर भानु प्रकाशसे ॥

कवित्त ।

पावन पतित जीवनके हित प्रभु, तूही गुरु पुरुष कहलायो धूँ और है। कहत कबीर धर्म धरत न धीर, करे अचल शरीर न लगे हिम जोर है॥ पशुपंछी तारत है निगम पुकारत है, आरतको देखिके निहार दृगको रहै। पीरो पयम्बर है धीर जो दिगम्बर है, वेद वाणी हूँ बिरह बन्दीछोर है ॥ १ ॥

तजत न वानी सुर मुनिन बखानी प्रभु, शरणमें आनी जो करत निहोर है । तीन लोक ढूँढ जाये दूसरे कहूँ न पाये, लग सो चरण दुख हरण जो शोर है॥ नहीं शुभ करनी है बहु दुख भरनी है, उस गुरु शरनी है कलिकाल घोर है। अधम उधारनको जगत सुधारनको, भक्ति मुक्ति धारन कबीर बन्दीछोर है ॥ २ ॥

बूडे बड ज्ञानी सिद्ध साधक जो ध्यानी, बिनु नाम सहिदानी जिन्हें आशा न तोर है। बल बीज चूसत है सिद्ध साधु दूसत है, निसिदिन मूसत है अनचिन्ह चोर है॥ जीवको है ठौर नहीं सुर मुनी दौर नहीं, परमानन्द पौर नहीं पावन जो दोड है। बन्दीछोर बन्दीछोर एक भजु साहब कबीर टेक सोई बन्दीछोर है ॥ ३ ॥

अर्जीनामा ।

महंत बीजक दास कृत,

ज्ञान सरूप अनूपम पूरन, पूर रहो जडचेतन माहीं । तीरथ वर्त रु कर्म करे बहु, अन्ध भयो शठ सूझत नाहीं ॥ १ ॥ काल महाबलवंत बडो रिपु, डारत ले भवसागर मांहीं । ताहिते सुद्धि भयो मोहिको अब, आइ रहो तुव चरनन मांहीं ॥२॥ कहा कलु केवल नाम कबीरहि, जीव रटे सब चातिक सोई। सर्वमें व्यापक

आप कबीरहि स्थावर जंगममें पुनि वोई ॥ ३ ॥ रँग रटना सब लागरही घट, ताहि बिना नहीं औरहि भासे ॥ नित अहे हमरे उर अन्तर, सु तारक बुद्धि सोई प्रकासे ॥ ४ ॥ जौन प्रकार कटे रजनी तम, सोइ उपाय कहो निरधारा। काम रु क्रोध रु लोभ भ्रमावत, ताहिसे दास जो कीन्ह पुकारा ॥ ५ ॥ आप विना नहीं कोउ हमारे, जो पुत्र कलत्र पितु परिवारा । अब मोहि तुमही सहाय करो प्रभु, बूडतहूँ भवसागर धारा ॥ ६ ॥ मातकूं बालक जो दुख देत सो, जननी नहीं सोच विचारा ॥ खैंचत केस करे नख घात जो, तोहू न छोडस गोदमें धारा ॥७॥ त्यों जननी सम गुरु देव कबीरहि, शिष्य समान जो बालक होई । डूबत बांह गहो गुरु देव जु, आप दयाल दयानिधि सोई ॥८॥ आप कृपा विन भाग जगे नहिं, आप कृपा बिन पातक लागे। आप कृपा बिन शुद्ध हिरदे नहिं, आप कृपा बिन मोक्ष न आगे ॥९॥ आप कृपाविन डूब मरे भव, जीव अनेक पडे जम त्रासा। ऐसि कृपा जो करा हम ऊपर, पारख बुद्धि सदा जु प्रकाशा ॥१०॥ योग रु यज्ञ करे विधि नाना, कायाहु कष्ट करे बहुतेरा। आँखहु मुन्दत कानहु रुंधत, प्रान चढ़ाय गगनहिं घेरा ॥ ११ ॥ नेती धोती कर्म करे बहु, ध्यान धरे पुनि काहु न हेरा । शुद्ध स्वरूपको ज्ञान विना शठ, मेटत नाहिं चोरासीको फेरा ॥१२॥ मै अपराध कियो बहुते गुरु, सो अपराध कह्यो न जाई। आप दयाल दयानिधि साहब, मम अपराध क्षमा करो सांई ॥१३॥ अन्तर्यामी जु जानत हो सब, कहा कहूँ मुख बारम्बारा । भूल मिटाये परखाई दियो सब, संधिक झाई जु काल पसारा ॥१४॥ जा दिन बन्ध छुडाइ दियो सब, ता दिन नाम पड्यो बंदीछोरा। तैसेही बन्धन मोर छोडावहु, बारम्बार करूँ जी निहोरा ॥१५॥ दासको संकट आय

परे तब, आयके ततक्षण लीन संभारा। बीजकदास यही बर मांगत, नित्त हृदय मांहि रहु ध्यान तुम्हारा ॥ १६ ॥

इन्द्रविजय ।

आपेही आप गोसाई सु साहब, होहु दयाल दया करि हेरो। ऐसी कृपा जो करो हम ऊपर, जे विधि होहुँ तुम्हारो हि चेरो ॥ औरहि व्रत मिटायके साहेब, एकही व्रत तुम्हारो हि प्रेरो। शिष्य कहे गुरुदेव सु साहेब, यहि विधि ध्यान तुम्हारो हि मेरो ॥ १ ॥

भांति अनेक करे यह चित्तसो, कर्म विकर्म करे तेहि काजा। तीरथ व्रत करे बहुते विधि, ताहिके काज लगावत साजा ॥ जो गुरु यज्ञ करे क्रिया तप, करे पुनि ध्यान कहे महराजा। भारि भरोस हिये गुरु आपसो, आप गुसाइं सु हो शिरताजा ॥ २ ॥

नानाहि भांति विचार करौं बहु, एकहु चित्त न आवत मेरो। जाल अनेकन हाल विहालसो, काल कराल करे घनघेरो ॥ जीवन मारि कियो पिसमानसो, कोईके चित्त न आवत हेरो। मोकहँ तो इक आश तुम्हारिहि, भाँति अनेक कहों बहुतेरो ॥ ३ ॥

जादिनसे मोहि आप मिले प्रभु, तादिनसे बहु दुःख निवारा। होय अधीन गह्यो शरणागत, भाजि गयो सब भ्रम पसारा॥ आप परछांइके भास मिटाइके, जीव छुटाये कियो निस्तारा। शिष्य कहे गुरु देवसु साहेब, मोकहँ तो एक आप अधारा ॥ ४ ॥

ऐसी कृपा जु करी हम ऊपर, होय अधीन गह्यो जब चरना। जन्म रु मर्ण रहे अब कोनको, ये कहि चित्त तुम्हारोहि शरना॥ सांझ इक संधिक काल सो ग्रासिक, मीटि गयो सब मनको भरना। शिष्य कहे गुरुदेव सुसाहिब, और उपाय नहीं मुहिं तरना ॥५॥

करुणानिधि आप बनाइ दियो, सकलो संत विवेककी आथी। मेरे हृदयसे दुःखसाल अनेकन्ह, आप मिटाइ कियो सुख साथी॥

भास मिटाइके फाँस छुटाइ दियो, प्रभु कालहि तू अब नाथी ॥
ऐसो दयालको छांडिके रे शठ, तू बहुदेय भुले देह भाथी ॥६॥

जो प्रभु आप सहाय करो नहिं, तो यह जीव रहे भव भीरा।
अवगुन बापजि माफ करो अब, मैं कछु शील विचार न धीरा॥
बाल पुकार करे बहुते सर, हे सुख सिंधु करो मन थीरा। साहेब
संत समाज मिले जब, आय लगूँ गुरु ज्ञानके तीरा ॥ ७ ॥

तुमही सब लायक जानत हो सद, वेद पुरान कुरान अनेका।
बुद्धि हीन मलीन पुकारत हों, अबहो प्रभु राखहु वेषको टेका॥
यद्यपि आप विसारहुगे तब, लोक हँसे नरनारि तरेका। ताहिते
शिष्यको भाव धरो अब, शिष्य भरौंस करै गुरु देका ॥ ८ ॥

करसे सुत मात ना छांडत है, शिर दुःख हजार परे मन जोखा।
जोपै पूत कपूत सही है, जननी न विचार धरे उर धोखा॥ कबीर
गोसांइ मेरे शिरताज, दूजा कहां जाये करों तन पोखा। विपति
शर बान ढरैं अतिसय, तुव दास लडे चढि ज्ञान झरोखा ॥९॥

कवित्त।

बालक ज्यों बोले बात तोतरी बनाय करी, मात पितु वाके
सुख माने प्रेम सानिके। ज्यों पै सुत भूल्यो आय जननी पुकारे
धाय, मारे सुख वचन कहत सहुं आनिके॥ रोदन करत पूत चले
जात दूर धाय, झांझांही विलाप धारि लोटे बहु ठानके। हाथही
अम्बर लेइ पोंछि कर उर देइ, पीर सब छीन करी गोद लेवे जानके १॥

दोहा-तैसे तुम गुरुदेव प्रभु, लेहु सकल सुख साज।
भवबन्धन जाते मिटे, सो चाहत मैं आज ॥ १ ॥

पारख शुद्ध विचार करी, ताहि मांहि सुखधाम।
ताते कहत हूँ आपसो, मोको राखहु ठाम ॥ २ ॥

सोरठा ।

खबर लीजिये मोर, परख रूप किरपाल प्रभु ।
तुम तजी अनत न ठौर, अबतो आश तुमार है ॥ १ ॥
तात मात मित्रादि, नहिं कोइ मेरो जगतमें ।
तुम सुहिर्द बर आदि, भवनिधि तारो नाथ हम ॥ २ ॥
अवगुन देखहु मोर, नहिं कल्यान जु कल्पसुधि ।
दया दृष्टि कर तोर, अवगुन चित्त न विचारिये ॥ ३ ॥
साहब परम उदार, सुखसागर सुखरूप घन ।
ताते करत पुकार, जो गुरु होहु सहाय अब ॥ ४ ॥

कवित्त ।

दीनोंके दयाल आप कियो है निहाल मोहिं, करो प्रतिपाल सुख सागर समान हौ। नागर विराजमान आगर कहत सब, जनके दयाल मोहि हियमें सोहात हौ॥ कहत अगम वेद पार नहिं पावत सो, मन भरमात मेरो आप सुख सार हो । शुद्ध बुद्ध ज्ञानभारी सन्तनके रूपधारी, कहे सहदेव भव पारहुके पार हो ॥

आपही पूरन गुरु साहेब कव्वीरहीसो, तिनको नम्र होय बन्दनी हमारी है। सुखही सरूप रूप ज्ञानहीं अनूप भूप, परख प्रकाश जहां नसे अन्धकारी है ॥ दरसही पाप टारी झांई संधि काल जारी, निजपद आप देहीं, बडे उपकारी है। दीनको दयाल प्रभु सन्तनके उरमाल, कहे सहदेव गुरु ऐसो सुखधारी है ॥

छन्द त्रोटक दुइपदी ।

गुणबन्द निधान सर्वज्ञ प्रभुं। त्रियताप निधारण धीर विभुं॥ कर्णधार उबारन जीवधनी। स्वयंपारख शोद्धच सुवाक्य मणी ॥१॥ त्रिगुणं रहितं सत भाषण हे। नित परख प्रकास सुसासन हे ॥ सुगिरामृतधार प्रवाह सरी। पुट श्रावण पानको प्यास

हरी ॥२॥ मुझ दासको देव तुहि प्रभु हो। दीननाथके नाथ रखो शर्णु हो ॥ ३ ॥

छन्द भुजंगी।

गुरुजी कृपालो बडो तु दयालो। करो प्रतिपालो मिटी दुःखसालो ॥ करूँ बिनती मैं शिशु जानि तारो। डरों दुःख देखी भवोंके अपारो ॥ १ ॥

परम सुजान महागुनखान। शीलके निधान सब सुखस्थान। कोई ना कोई ना कोई ना हमारो। डरों दुःख देखी भवोंके अपारो॥२॥

परं विरागी क्षमा उरपागी। मैं तो हूँ अभागी तेरो पाव लागी॥ हूँ अनारी अनारी मेरो दुःख टारो। डरों दुःख देखी भवोंके अपारो३॥

गिराहे तुमारी हरे शूल भारी। माया मोह डारी देही सुख सारी॥ अनाथा अनाथा हियो हे अधारो। डरों दुःख देखी भवोंके अपारो४॥

मेरे तुहीं स्वामी तुहीं अन्तर्यामी। नहि काम कामी प्रभूजी अकामी॥ दयाला दयाला गुरूजी तुं सारों। डरों दुःख देखी भवोंके अपारो ॥ ५ ॥

मेरी बात मानी कहुँ सो तुं जानों। तेरो ज्ञान भानो करे अन्ध हानो ॥ डरो अन्ध जारो उजारो उजारो। डरों दुःख देखी भवोंके अपारो ॥ ६ ॥

मेटो भ्रांतिझारी भ्रुमां शोकफारी। ग्रही टेकयारी करी प्रीति भारी॥ चहुँ साथ तेरो मेरेकुं उबारो। डरों दुःख देखी भवोंके उपारो७॥

अहो देव देव करूं तेरो सेव। अबे गुरुदेव देहु सुख भेव॥ प्रकाशी प्रकाशी प्रभुजी पुकारों। डरो दुःख देखी भवोंके अपारो॥ ८॥

अथ विनयशब्दावलि प्रारम्भः।

श्रीपूर्ण साहब कृत.

शब्द १—देखों अति सुन्दर छबि नीकी। मंगलदायक सुख

लायक, निरखि सकल छबि लागत फीकी ॥ टे० ॥ कृपा करत लखि दीन दयाकर, भ्रांति मिटाव सकलो जीकी ॥ शरण गये सकलो दुःख मेटत, सुख उपजावत देवत सीकी॥ निज पद मांहि लेत बैठारी, गांठ छुडावत मैं ममतीकी ॥ गुरु सम को उदार जगमाहीं, पूरन कीन्ह परख अति नीकी ॥ १ ॥

शब्द २–शरण तुम्हारी आयोजी गुरु॥ टे० ॥ त्रिगुण मायाके फन्दा परि; युगन २ जहँडायो ॥ चाह न योगध्यानकी अब मोहि, नाम जगीरी पायो ॥ १॥ लोक परलोक कछु नहिं चाहों, सगुण निर्गुण नहिं भायो ॥ पूरन ज्ञान ज्ञान विज्ञानको, भयो जब पारख थिति पायो ॥ २ ॥

शब्द ३–हौ प्रभु दीन जनन प्रतिपालक॥ टे० ॥ हौं मति मन्द छन्द विषयनको, महा अज्ञ इन्द्रिनको चालक ॥ औगुन हरन नाम प्रभु तेरो, मैं औगुणी अधम कुल घालक ॥ मैं अति दीन शरण तुव आयो, छमो अपराध जीवनके पालक ॥ ना मोहिं योग भोग मद नाहीं, धन मद नाहिं बाँह बल बालक॥ पूरन दासके तुमहिं अधारा; और सकल जगमें यम जालक ॥ ३ ॥

शब्द ४–पतित पावनको सुन्दर ध्याना । निरखत बदन प्रसन्न सुखदायक, देह आदि बिसरत जग भाना ॥ टे० ॥ चक्रांकित शिर टोप विराजे, ता ऊपर दस्तार बखाना । तिलक लिलाट शुभ अति नीको, तुलसीकी माल गले बिच नाना॥१॥ ज्ञानको अचला मुक्ति मेखला, अष्ट सिद्ध सेली प्रमाना । दया सिंहासन आइ बैठे, पूरणदास चरण लपटाना ॥ ४ ॥

शब्द ५–कहांलो कहौ गुरुपद प्रताप ॥ टे० ॥ जो मुख होय जीव दश लाखा, तऊ न बरनि सकत प्रभुजाप। अनेक जन्मको जीव विहाला, तिनको मिटयो महा भ्रम दाप॥ सङ्कटमें सन्तनको

तारा, साधुरूप धरे पुनि आप। बादशाहको कसनी दीन्हे; सिंहरूप धरे पुनि आप ॥ भेषकी टेक राखि करुणामय, पूरण कहा कीन धौ पाप ॥ ५ ॥

शब्द ६–तेरा दिल चाहे उधरे देख मैं देखूँगा तुझे ॥ टे० ॥ तुमतो मुखतार थार स्वतः सिद्ध आपी आप, और को न जानें एक आशरा तेरा है मुझे ॥ १ ॥ चाहे तो चन्द्रमा चकोरनको त्याग करै, पर चकोरनकी आग कहु चन्द्र बिन कैसे बुझे ॥२॥ चाहे तो प्रकाश सकल नेत्रको त्याग करै, पर विनु प्रकाश नेत्रनको जगमें कहु कैसे सूझे ॥ ३ ॥ सतगुरु दयाल तेरो सेवकहूँ बाल, बाल पूरणको तुमही एक और कोई नहिं दूजे ॥ ४ ॥ ६ ॥

शब्द ७–तेरी खुशी देख या न देख मैं देखूं तेरे चरणोंमें ॥ टेक॥ माय बाप सकल टारे, जाति पांति सकल सब विसारे, सकल आस छाडि गुरु! आन पडा शरणोंमें ॥ १ ॥ त्याग दई सकल लाज, काहूसे न राख्यो काज, घर घरके भिखारी हूँ नाम सुना करनोंमें ॥२॥ हरदम तेरा आभास और कछु नाहीं भास, सबसो ह्वै गयो निराश जो तनही भरनोंमें ॥३॥ नाम तेरा है दयाल पूरण फिरत बिहाल, कबधौं करिहौ निहाल, जावे जबरनोंमें ॥ ४ ॥ ७ ॥

शब्द ८–मेरी प्रीतके निवाहन हारे, लीजे खबरिया हंस पियारे ॥ टे० ॥ हौं अनाथ कहलावत तेरो, काहे निकारि बाहिर मोहिं डारे ॥ १ ॥ जो दूरिआव मोहिको सतगुरु तोहू न छोडो चरण तिहारे ॥ २ ॥ तुम्हारा नाम सुना प्रभु श्रवणन, कि प्रभु पतित अनेक उबारे ॥३॥ करहु दया निज टेक निबाहो, जो तुम बिरद जगतमें धारे॥४॥ जो कहो मोहि न जगतसे काजा, रहत अलिप्त सबनसों न्यारे ॥५॥ तो उपदेश कीन गहि बाहों, अब हम जाब

कौनके द्वारे॥६॥ धारी देह जीवन हितलागी, दै परचे अनेक उबारे ॥७॥ तार भार दीन्ह तोहि पूरण क्षमा करो अपराध हमारे॥८॥८॥

शब्द ९–धन सतगुरु तुमरी बलिहारी ॥ मैं मति हीन छीन निज कर्मनि, दीन उधारन लीन उबारी ॥ टे० ॥ जिमि अंकुर तपे विनु बारी, ताकी अम्बुज सिद्ध खरारी ॥ आनिके वेगहिं लीन जगाई, नहीं तो परते भर्म बिगारी ॥ परम दयाल दयाके सागर, महाकष्ट दुख द्वन्द निवारी ॥ सदा रहत दासनके संगा, पूरण परखावत भर्म विकारी ॥ ४ ॥ ९ ॥

शब्द १०–मम बोहित तुम खेवनहारा । जग समुद्र अज्ञान भरचो जल, तृष्णा तरंग करत ललकारा ॥ टे० ॥ काम क्रोध जलजन्तु अपरबल, बैठा मगर भरि हंकारा॥१॥ मोह भर्म बिच आनि परा हूँ, सूझिपरे नहीं वारो पारा ॥२॥ बूडत नाव उबारो साहब, आदि अन्तके हौ कढ़िहारा ॥ ३ ॥ अशरण शरण विरद सम्भारो, पूरण आयो शरण तुम्हारा ॥ ४ ॥ १० ॥

शब्द ११–तुमीरहि दरसको बना हूँ भिखारी ॥ मधुकर इव सब फिरत जगतमें, कबधौ मिलौगे कमल सुखारी ॥ टेक ॥ काम क्रोध मद लोभ अपरबल, तृष्णा उठत लहरि अति भारी॥ मन रात्यो नाना विषयनमें; इन्द्रिन बाट निपट मोरि पारी ॥ चित्त चंचल को समुझावे, खाँड छाडि फांकत है छारी ॥ गुरु विचार पर छिनहु रहत नहिं, जग अनित्य मां भई मतवारी ॥ ई नाना औगुन मोमें रहत है, मांगो दर्शन करि ढिठियारी ॥ जेहि हित मुनि जन योग करत हैं, त्यागि राज कुटुंब धन नारी॥ पूरन एक भरोसो आवत हो प्रभु जीवनके हितकारी ॥ शरण आयको त्यागत नाहीं, बन्दीछोर बिरद अति भारी ॥ ११ ॥

शब्द १२–मुझ लाचारके तुम रखवारी ॥ टे० ॥ नहिं मोहि

द्रव्य बाहु बल नाहीं, नहिं मोहि विद्या बल अधिकारी ॥ ना मैं सिद्ध न साधनको बल, ना मैं मन्त्री ना व्रतधारी ॥ तपसी हौं ना मैं, हौं दीन परम गुरु, बाँह गहेकी लाज तुम्हारी ॥ बालकके दुलार निरवाहन, तुम विनु कौन पूरण सुखकारी ॥ १२ ॥

शब्द १३-परचो है कष्ट अति भारी मोको कष्ट अतिभारी॥ ॥ टे० ॥ पाखंडिन पाछो बहु कीन्हो, ताते चोट लगत है कारी ॥ दीन जानि उपहास किय चाहै, मैं लाचार गरीब बिचारी ॥ ना मुहि सिद्धि न साधनको बल, मुझ कंगालके तुम रखवारी॥ सगरी जाल तुम्हारी परमगुरु, पूरण तुव पद केर भिखारी ॥ १३ ॥

शब्द १४-तुव चरणाम्बुज बिशद प्रयोगे ॥ टे० ॥ मम मन कठिन भँवर अतिदारुन, कारन कौन तन्त्र नहिं लागे॥ अब यह मांगों तोहिं दयानिधि, कर जोरे प्रेमन बहु पागे॥ जो रज पावन करत जगतको, सोइ आइ मस्तकपर लागे ॥ और इच्छा होय कबहुँ कछु, निशिदिन रहुँ चरणनके आगे ॥ चरण प्रताप होत ज्ञान गम, बहु जीव जाते होत सुभागे ॥ महिमा तुव चरणनकी साहब, बिनु जाने सब जीव अभागे॥ ताते काया रहै जबलौं जग, तौलौं रहों मैं चरणन लागे॥ आखिर चरण होय तै हौं, जैसे सीप बुन्दसों लागे ॥ साहब कवीर सुखरूप कृपाघन, पूरणदास यही वर मांगे ॥१४ ॥

शब्द १५-तुम्हरे नामको भरोसो भारी ॥ हो प्रभु सेवकके सुखकारी ॥ टे० ॥ सिद्ध चौरासी बन्दि परे तब, गुरु गुरु करि कीन्ह पुकारी ॥ तुरतहिं जाइ छुडायो तिनको, साह सुलतान कीन्ह सुखारी ॥ एक दिना काशीके माहीं, कुष्ठी साह आयो अतिभारी॥ पद्मनाभने परचे दीन्हा, नाम प्रतापते कष्ट निवारी॥ नाम लेत तारे बोहित प्रभु, साह दामोदरकी भयहारी॥ इन्दुमती

जब टेर कियो है, नाम प्रताप उतरचो विषकारी ॥ नाम तुम्हारा अटल प्रभु युग युग, जीवन अधम अनेक उबारी ॥ याहीते निश्चय भयो पूरण अब: करिहौ सुखी सब दुःख विडारी ॥१८॥

शब्द १६-कैसे रहौं जगमाहीं करुणायतन विनु, कैसे रहौं ॥ टे० ॥ जैसे जल बिनु मीन दुखित होय, तलफि तलफि मरि जाई ॥ कोइ तो आय ब्रह्म बतावे, सूर प्रभाकी झांई ॥ कोइ तो कहै यह आतम स्वयम्, जल तरंगकी नाई ॥ कोइ तो कहत दूजा है कर्त्ता, कोइ तो कहत कछु नाई ॥ कोइ तो कहत यह देहही ब्रह्म है, मेरो मन न पतियाई ॥ कोई योग कोई ध्यान बतावे, कोइ कोइ अलख लखाई ॥ कोइ कहै ज्ञान विचार करो फिर, आप ब्रह्म जग भाई ॥ गुरु कवीर पारखकी राशि, सब सुखको सुखदाई ॥ ता पदसे कैसे होय न्यारो, आपहि पूर्ण कहाई ॥१६॥

शब्द १७-क्यों न जपो मन लाई, अक्षर दोउ नीको, क्यों न जपो मनलाई ॥ टे० ॥ गुरु गुरु यह महामंत्र है, और मंत्र कछु नाहीं। ब्रह्म जपत अरु विष्णु जपत हैं, और जपत शिवराई ॥ शास्त्र पुराण यह साख बखानत, गुरुते परे कोइ नाहीं ॥ गुरुते सकल सिद्धि रिद्धि होत है, गुरुते परम पद पाई ॥ गुरुते ज्ञान अरु गम्य होत है, गुरु बिनु कछु न बसाई ॥ गुरु बिनु काहूको काज सरे नहिं, बहुत भये जगमाहीं ॥ राम कृष्ण तिनहूँ गुरु कीन्हा, मूरख चेतत नाहीं ॥ और मंत्र सब कालस्वरूपी, जीवन देत भुलाई ॥ गुरु मन्त्र यह पूरण कृपा धन, जीवनके सुखदाई १७॥

शब्द १८-गुरुते और नहिं कोई; मन देख विचारि ॥ टेक ॥ ज्ञानी मुनी सब ज्ञान बखानैं, रीते गये सब कोई । गुरुके गुण सब गावहिं, हो गज अन्धकी नाई ॥ टोइ टोइ पार नहिं पावे, मन माने मति भाई ॥ कोइ ब्रह्मा कोइ विष्णु कहै गुरु, कोइ कहै

शिवजोई॥ कोइ कहै सतगुरु पार ब्रह्म है, या विधि गैल बिगोई॥ कोइ तो परमगुरु पुरुष बखाने, ईश कहत कोइ लोई॥ कोइ कहै गुरु अन्तर्यामी, सबमें भरयो है सोई॥ कोइ कर्त्ता कोइ माया कहै गुरु, मति बुद्धि सब गइ खोई॥ पूरण त्रिपद लांघे नाहीं, कसे गुरु पद होई॥ १८॥

शब्द १९-बक बक सब बौराने, गुरू कोइ न जानें। अंधाधुन्ध मत प्रगट कियो है, सब जीवनको ताने॥टेक॥ घर घर तो सब गुरुआ बनें हैं, कीन्हें बहुत बहुत बन्धाने॥ बन्दीछोर विनु नहीं उबारा, ये सब जग मलताने॥ बन्दी छुडावन जगमें निकसे, आइपरे बन्दीखाने॥ जो पूछौ गुरु कासौ कहिये, तौ कहत आनकी आने॥ कोई कहै गुरु सच्चिदानन्द, कोई कहै पुरुष पुराने॥ कोइ मानुष कोइ देव कहत हैं, यहि विधि भरम भुलाने॥ कोई शब्द कोइ वेद कहत हैं, कोई आतम अनुमाने॥ त्रिपद परखाये बिनु पूरन, कैसे परे पहिचाने॥ १९॥

शब्द २०-आप न बूझ कहँ और बुझावे, बिनु पारख नर भटका खावे॥ टे०॥ ग्रन्थ पुराण बहुत जग बांचे; याते कहँ आवागमन नसावे। रहनी विना सब कहनी कांची, विनु भोजन कभू भूख न जावे॥ बेटी बेटा चेली चेला, मोह जाल कहँ जानि बढावे। घर छोडे मठकी करै आशा, पूरण व्याधि कहँ सीस चढावे॥२०॥

शब्द २१-गुरुजी तेरो भजन भरोसो भारी॥टे०॥ शरणागतकी बाँह गहत हौं, भवसे पार उतारी॥ बडे २ अपराधी तारे, हिंदू तुरुक नर नारी॥ गुण औगुण एकौ नहिं जानत, हौं पशु मूरख अनारी॥ जगसे भागि आये तुम शरणा पूरण दीन भिखारी॥२१॥

शब्द २२-मेरो मन बैरागी आज, बसिये साहब चरन॥टे०॥ चरण प्रताप महा अघ नाशत, मेटत जनम मरन॥ दुख दारिद्र

विनाशक गुरुपद होय रहो अशरन शरन ॥ परख परकाशी सब सुखराशी, जीवन मुक्ति करन। सबहिनके सुखदाई पूरन, सहाइ भवभय रोग हरन ॥ २२ ॥

शब्द २३–होय रहु साहब शरण, मन छाडि जगतकी आस ॥ टे० ॥ जग आशा औ स्वर्गकी वासा, यही कालकी फाँस ॥ नर नारी औ माल खजाना, छाडु आयुर्बल गाँस ॥ सुन्दर तन अरु सुन्दर जग यह, सब सपनेको भास ॥ पूरण पारख जौलौं नहि पावे, तौलौं भरम विलास ॥ २३ ॥

शब्द २४–भजुरे मन सद्‌गुरु कृपालको नाम ॥ टे० ॥ नामप्रताप अटलि तिहुँ लोकमें, सब विधि मङ्गल धाम ॥ और नहीं कहुँ जाऊं महा प्रभु, लागि रहौं निशिनाम ॥ नाम रटन जिन जगमें कीना, ते पाये विश्राम ॥ नाम असंग सकल सुखदाता, करिहैं पूरण काम ॥ २४ ॥

शब्द २५–(रागपिस्ता) जायके सनमसे कहियो मेरी बात। वेगि खबरिया लीजै अब जान निकरी जात। जाय सनमसे ॥ टे० ॥ तेरे विरहके मारे मोहिं नींद न आवे। नयनोंने झरि लाई जीव चैन नहिं पावे। एक राहके दरियावमें बूडा है मेरा मन। एक वक्त गश आवता जाता बिसर तन ॥ सुरता सहेली जायके तूने कहना अहवाल। वेगिते दर्श दीजै दास होत है विहाल ॥ सुख निधान समरत्थ सब सुराको बीज है। तेरी शरणमें आयके पूरण अजीज है ॥ २५ ॥

शब्द २६–प्रभु बिनु दुख नरकको कौन हरे ॥ टे० ॥ जहँ जहँ कष्ट पडत दासनको, तहँ तहँ साहब होत खरे ॥ गर्व करै तो भरी ढरकावे, होत अधीन तो फेरि भरे ॥ भाव भक्तिके सदा समीपी, दम्भ पाखण्डते रहे परे ॥ दीनदयाल बिरह है जाको, ताको पूरण ध्यान धरे ॥ २६ ॥

शब्द २७-सुनिय दयानिधि अरज दासकी। कृपा किये बहु भर्म मिटाये, शंका रही न गरभबासकी ॥ बडे भाग मैं आपन जान्यो, आय परचो प्रभु चरण खासकी ॥ देह अनित्य कहा अब मानो, नाश होयगी रक्त माँसकी ॥ यहि जगतकी मोह कहाँ बढ़ावई, कहा कथा जड वाम मासकी ॥ रिद्धि सिद्धि और मान बड़ाई, मनमें इच्छा नहीं तासुकी ॥ अमृत भोजन पाय अघाय, पुनि कस इच्छा होत घासकी ॥ यह संशय मेरे मन आई, मेटहु साहब कठिन फाँसकी ॥ परख विलासी सब सुखराशी, जानत हौ सब जीव पासकी ॥ काह छिपा तुमसे कहे पूरन, टेक निबाहो मोर आसकी ॥ २७ ॥

शब्द २८-तुम विनु समरथ कौन रखवारा। जीवनको दुख मेटनहारा ॥ टेक ॥ जब जब कष्ट परत दासनपर, होत विहाल जीव करत पुकारा ॥ धारि देह तुरत तहां प्रगटत, दुख द्वन्द्वज सब दूरि विडारा ॥ कियऊ सुखी निज दासन लागि, काहे उपेक्षा कीन्ह हमारा ॥ पूत कपूत लाज जनि ताको, शरण परे निर्वाह बिचारा॥ करुणामय कवीर गोसांई, दीनदयाल विरद अति धारा॥ दीन जानि अब दाया कीजे, आनि गह्यो अब शरण तुम्हारा ॥ जगमें कछु न मोर अधिकाई, साहब शिर सेवकको भारा॥ पूरण दुखित होय जो समरथ, तौ लाजत सब विरद तुम्हारा ॥२८॥

शब्द २९-याहीते प्रभु नाम दातारा, सेवक आश पुरावनहारा॥ ॥ टेक ॥ हीन दीन अति दीन भयो तब, याचक आयके कीन्ह पुकारा ॥ जो नहिं आश पुराओ ताको, तौ लाजत हैं बिरद तुम्हारा ॥ हम ऐसे याचक तुम्हरे घनेरे, मेरे तो एक तुमहि आधारा॥ तजब प्रान जो याचत तुमसों, तब हम जाब कवनके द्वारा॥ हंसन नायक सब सुखदायक, सुनिके अरज भली चित धारा॥

जो नहिं हमरी वांछा पुराओ, तो हँसिहैं सकलो संसारा ॥ जाके सेवक होत बिकल अति, ताके साहब कस कल धारा ॥ पूरण याहि अन्देशा मोही, जानि बूझिके चहत बिसारा ॥ २९ ॥

शब्द ३०–तुम विनु अरज करौं केहि आगे। स्वर्ग मृत्यु पाताल लोक लौं, अस को जो मोहि करत सुभागे ॥ टे० ॥ करुणामय कवीर कृपानिधि, साधु सन्त गावत सब जागे ॥ कि प्रभु अजर अमर अविनाशी, सुमिरत जाहि सकल दुख भागे ॥ यहिते मोहि भरोसा आवत, औ प्रतीति भई बहु जागे ॥ अबकी बार कस विलम्ब कियो है, यह अचरज मनमें अति लागे ॥ तुम सब लायक हो सुख दायक, अचरज करत मोरे मन पागे ॥ चाहो तो अपनो टेक निबाहो, नाहीं तो हम बने हैं नागे ॥ पूरण अचरज करत सुख सांई, तुम कीरति मोको हित लागे ॥ इतनी विनय मानहु मोरी, जो मम सुरति निशाना दागे ॥ ३० ॥

शब्द ३१–कृपादृष्टि कब हेरो गुरुजी कृपादृष्टि कब हेरो ॥टे०॥ तुम अस समरथ शिर पर राजत, दुख पावत है चेरो ॥ सब लायक प्रभु हो सुख दायक मम अपराध घनेरो ॥ क्षमो अपराध दयाके सागर, आय परे शरणों अब तेरो ॥ पूरनकी यह अरज दयानिधि चरणन देहु बसेरो ॥ ३१ ॥

शब्द ३२–कभी तो भी दरस दिखाओ गुरुजी मोको कभी तोभी ॥ टे० ॥ चातकवत मैं पंथ निहारों स्वाती ह्वैके जुडावो ॥ जिमि चकोर चन्दा तन चितवत, और नहीं चित भावौ ॥ तुम्हरे दरस विनु अति विहाल जिय, मिलत न परख परभावो ॥ पूरणके साहब सुख दाता, विनवत हौं गहि पावो ॥ ३२ ॥

शब्द ३३–लीला प्रभु तुम्हारी कही न जाय ॥ टे० ॥ राई सों पर्वत करि डारत, पर्वत राई तुल्य दिखाय ॥ सुर नर मुनि सब

खोजत हारे, कृपा मात्रमें सो परखाय ॥ जो पद इन्द्रादिक नहिं पावत, सो पद माँहिं दास बैठाय ॥ साहब कबीर जीवन सुखदाता, पूरण निज पद माँहिं रहाय ॥ ३३ ॥

शब्द ३४-मिले हैं दयाल कृतारथ भये हम ॥ टे० ॥ शब्द लखाये कियो प्रभु मेरे, निज करते डारी उरमाल ॥ धोखा द्वन्द्व सबै मिटि गयऊ, टूटि गयो सब जमको जाल ॥ स्वर्ग मोक्षकी आशा नाहीं, पारख पाय भये है निहाल ॥ पूरण प्रकाश और नहिं आशा, सर्वत्र दयाल बन्दीछोर कृपाल ॥ ३४ ॥

शब्द ३५-मन हर लीन्हो सत्य कबीर ॥ मन० ॥ टेक ॥ लोग कहत जग भई है बावरी, कोई न बूझत पीर ॥ गावन नाचन कछुओ नहिं भावे, व्याकुल भये हैं शरीर ॥ बहु विचार केतिक समझाऊँ, जियरा धारत न धीर ॥ पूरन सुख प्रभु आप विराजे पञ्चकोशके तीर ॥ ३५ ॥

शब्द ३६-मन हर लीन्हों दीन दयाल, जीवनके रक्षपाल ॥ टे० ॥ कहौं कहा मोहि कल न परत है, अन्तर होत बिहाल ॥ सुख सम्पति मोहि कछुवो न सुहावै; लोग कुटुम्ब यमजाल ॥ तनकी सुधि बुधि सबही बिसरी, जब दीन्हीं उरमाल ॥ पूरण सुख जे पूर रह्यो है, कहा करे भर्म काल ॥ ३६ ॥

शब्द ३७-गुनी अगुनी हौं तिहारो प्रभुजी ॥ गुनी० ॥ टे० ॥ पुत्र अजान करतु है औगुण, तोहु पिताको प्यारो ॥ जो मम औगुण लखहू साहब, तो सब विधि हम हारो ॥ मिहर करहु जो दास जानिके, तो हम जग निस्तारो ॥ विरदकी लाज राखु प्रभु मोरी, पूरण दीन विचारो ॥ ३७ ॥

शब्द ३८-हमारी लाज तुम्हारे हाथ गुरु नाथके नाथ ॥ ह० टे० ॥ खर्ची खुट गई वर्षा आइ, देश बुरो गुजरात ॥ तुम बिन

कौन हमारो वाली, जो अब करत सनाथ ॥ तेरे नामको भरोसा मोको और न कोई संग सँघात ॥ लेहु खबरि कबीर कृपानिधि, पूरण नावत माथ ॥ ३८ ॥

शब्द ३९–तुम विन कौन हमारो देश, कठिन कालको वेष॥ टे० ॥ जोरे मिला सो अपनी गरजको, राजा रंक नरेश॥ हमरे तो गुरु तुमहिं अधारा, दीन दयाल वरेश ॥ वेग खबरि लेहु प्रभु आई, दुचित भयो जिय रेश ॥ निज दासन प्रतिपालन करत प्रभु, साहब कवीर दुवेश ॥ ३९ ॥

शब्द ४०–गुरु तेरे दर्शनकी बलिहारी ॥ गुरु० ॥ टे० ॥ तुम्हरे दरसते कष्ट हरत है, करम मिटत है भारी ॥ सन्त स्वरूपी आप कृपानिधि, खोलत भरम किवारी ॥ जिन्हें दरस सुख दियो दयानिधि, आवा गमन तिवारी ॥ सुख स्वरूप कवीर कृपानिधि, पूरण परख बिहारी ॥ ४० ॥

शब्द ४१–तुम विनु कौन खबरिया मोरि लेवे ॥टे०॥ देश विरान कोइ नहिं आपन, कौन सेवकको सेवे ॥ मेरे तो सतगुरु एक अधारा, जो चाहो सो देवे॥ यह जग सबही द्वन्द्व पसारा, कैसे नवरिया खेवै॥ परख विलास कवीर कृपानिधि, पूरण जानत भेवै४१

राग बिलावल ।

शब्द ४२–तुमहो सतगुरु दाता मेरे, मैं अधीन चरननके चेरे ॥टे०॥ तुमको माँगे तुमको जाचे, निशिदिन रहत चरनके नेरे॥ चरन छांडि अनते नहिं जाबे, जैसा भँवर कमलको घेरे॥ तुमरा ज्ञान ध्यान जप तुमरो, तुम तजि औरे तन नहिं हेरे ॥ जिमि पतिव्रता पतिव्रत ठाने, आज्ञा जुगवे सांझ सबेरे॥ हरि हर ब्रह्मा आदि जे देवा, रिद्धि सिद्धि दातार घनेरे ॥ हमको नहीं इन सबते काजा, एक तुम्हारी दयाके प्रेरे ॥ वेगि खबर लेहु करुणा-

मय, काहेको अन्त लेत प्रभु मेरे ॥ तुमही जानक तुमही प्रेरक, तुम कवीर हो सुखके डेरे ॥ ४२ ॥

शब्द ४३–सबके जनैयाको कहा जनैये, जानतही सकलो सुख पैये ॥ टे० ॥ तनकी मनकी सकल लोककी, जाननहारसो कहा छिपैये॥ निर्मल संगति करहु संतकी, निर्मल होयके निर्मल समुझैये ॥ जो जानत तिहुँ लोक रैन दिन, ता साहबको कहा जनैये। जाग्रत सुषोप्ति तुरिया, तुरीयातीत नहिं जहँ पैये॥ वाच्य लक्ष मनको चतुराई, जहाँ नहिं तहँ कैसे कि जैये॥ बिनु पारख कछु जानि परे नहिं, उनकी कृपा बिनु परख न पैये॥ हौं लाचार सकल विधि साहब, विनय करो तो को चित्त लैये॥ सुख स्वरूप कवीर कृपानिधि, पूरनको मन ना भमैंये ॥ ४३ ॥

शब्द ४४–वेगि खबरिया प्रभु लीजे दीन दयाला ॥ टे० ॥ आनि परचो परदेशमें देख्यों यमको जाला॥इहाँ न कोई आपनो, तुम विनु रच्छपाला ॥ मोहि तो आधार तेरे नामको, हो दासन प्रतिपाला॥ मोहि कछु बिलम्ब न कीजिये, जीव भये हैं बिहाला॥ हौ गुणी औगुणी पर, तेरोई कहावत बाला ॥ जो तुम खबरि न लेहु, तौ मम कौन हवाला॥ साहब कवीर सुखके राशी, हो करुणाके आला॥ सुनियो अरज निज दासकी, अब करिये निहाला ॥४४॥

शब्द ४५–अपने हम भोगे निज भोग ॥ टे० ॥ जानि बूझि कैसे अन्त लेहौ, यह नहिं तुमको योग ॥ जगमें दास कहाये तुम्हारे, लागचो भवको रोग ॥ अस समरथके शरन आयके छूटचो नहीं मम सोग ॥ साहब कवीर विरदके पालक, हँसन लगैंगे लोग ॥ ४५ ॥

शब्द ४६–करुणामय नाम तिहारो ॥ टे० ॥ निठुर भये कछु काज न सरिहैं, आवत बिरदको हारो॥ जग हँसिहैं तब कहाँ बडाई,

ताते वेगि सम्हारो॥ तुमरी शरण आयउँ मैं साहब, और न कोइ सहारो ॥ साहब कवीर दया अब कीजे, पूरण आइ पुकारो॥४६॥

शब्द ४७-दीननके हो दयाल दया जनपे करो॥ शरण आयेकी लाज गई, प्रभु अस जनि करो॥ दशहूँ द्वार विकार धार नौका बहे, सुरति नाहिं ठहराय, लगन कैसे लगे॥ पाँच तत्त्व गुण तीन साज सब सांजिया, याते रहे भुलाय, तो फन्दे फँसे॥ त्रिगुण मायाके फन्द फँदो जिव आइके, गहु साधनको संग गुरुते लौ लायके॥ मोक्ष मुक्ति जब होय दया दिल आवई ॥ परिपूरण करि देव महासुख पावई ॥ साहब कवीर बन्दीछोर अरज एक भाखिये। हमसे अधम उधार शरण प्रभु राखिये ॥ ४७ ॥

आराधना (गद्यमय)

(स्वामी श्रीयुगलानन्द बिहारी कृत)

हे सत्यपुरुष! आपहीकी सत्तासे सर्व जड चैतन्य स्थित है, सर्वके जीवन आपही हो॥ आपके अतिरिक्त जो कुछ गुप्त परगट है, नाशमान, असत्य और अनित्य है, एक आपही सत्य और अविनाशी हो।

हे सत्यसुकृत! आपके अतिरिक्त जितनी कीर्त्ति है सब क्षणिक और मायिक है। सब कीर्त्ति आपके अतिरिक्त कालने रचे हैं और काल स्वयम् नाश होनेवाला है, इस कारण आपकीही कीर्त्ति सत्य और नित्य है।

हे आदि अदली। आपकाही नियम सत्य और सुखदायक है, आपकाही नियम सर्वसे पूर्व प्रकाशित होता है, उसीके सहारे सत्य आनन्दकी प्राप्ति होती है ॥

अजर! आपको जरा नहीं है अर्थात् आप जन्म, मरण और उसके मध्यकी बाल, किशोर, युवा, प्रौढ और वृद्धावस्थासे परे सदा एक समानही रहनेवाले हैं।

हे अमर ! आप कालके जालसे छुडाकर अपने हंसोंको अमर करते हो स्वयम् कालभी आपसे भय करता है।

हे अचिन्त ! आप शुद्ध आनन्द स्वरूप हो, चिन्ताका आपसे कोई सम्बन्ध नहीं, तथापि हम जैसे दीनोंकी सहायताकी चिन्ता आप सदा ही करते हो।

हे पुरुष ! आप यद्यपि सर्वत्र एक समान स्थित हो तथापि सच्चे सन्त, सच्चे भक्त, सच्चे हंस और सच्चे पारखियोंके हृदयोंमें आपका विशेष प्रकाश प्रगट होता है।

हे मुनीन्द्र ! सत्य सुकृत स्वरूपसे आप सदाचारका उपदेश देकर, मुनीन्द्र स्वरूपसे सत्यासत्य सारासारके मननका मार्ग बताते हो, अनेक प्रकारके मनन करने पर भी जब यह जीव कालके जालसे नहीं निकल सकता, तब आप करुणामय स्वरूपसे पारखका मार्ग बतलानेको टकसारकी प्रवृत्ति कराते हो। और जब टकसार द्वारा अन्तःकरण शुद्ध हो जाता है तब आप साक्षात् सत्य कबीरके स्वरूपसे प्रत्यक्ष पारख बतलाकर काल जालसे छुडा देते हो।

हे बन्दीछोर ! आप बारम्बार कहते हो, पुकार २ कर जतलाते हो कि, तुम्हारी शरण विना हमारा ठिकाना कहीं भी नहीं है, जिस समय आपका शरण प्राप्त होता है उसी समय कालसे तिनका टूट जाता है। ऐसी सर्व सुखदाई शरणको भी पाकर हे अधम उधारण ! हम ऐसे अधम हैं कि, आपकी शरण नहीं पकडते। वरन केवल मुखसे बातें बनाकर दम्भसे अपनेको आपका दास कहते कहलाते हैं परन्तु, दासपनका नियम तक नहीं जानते॥

हे दीनानाथ ! आपही सबके सहायक हो हम दीन और अनाथ हैं, जिसको नाथ करके पकडते हैं वे सभी स्वयम् आपके

शरणकी अभिलाषा रखते हैं इस कारण हे प्रभु ! आपही सत्यनाथ हो, आपको छोड कहां जाऊँ ।

हे ज्ञानमय चैतन्य पुरुष ! आपकेही अस्तित्वसे सर्व जड चैतन्य भासमान हो रहा है सबकी कुञ्जी आपहीके हाथमें है। कालभी आपके डरसे डरता है। सर्व ब्रह्मांड आपकीही आज्ञा पालन करते हैं। जब आप कालके प्रभु हो तब हमारा आपके अतिरिक्त दूसरा क्या सहारा है ।

हे निर्भय! जब तक आपका सत्य पारख हृदयमें वास नहीं करता, तबतक हम कालके करतूतोंको जान नहीं सकते जब तक उसे जानकर हम उससे अलग नहीं होते, जबतक आपकी आज्ञाओंका विरोध करते हैं, तभीतक हमको सर्व प्रकारका भय प्राप्त होता है, परन्तु आप जब दया करोगे तभी सर्व भयसे छुडाकर निर्भय करदोगे ।

हे आनन्दसिन्धु! जबतक हमारी ज्ञानशक्तिमें आपके पारखका प्रकाश नहीं होता, तबतक हम आपके सत्यस्वरूपको किस प्रकार जान सकें। जब आप दया करोगे, अपनी सारा सार विचारिणी ज्ञानशक्तिको प्रेरणा कर मुझे अपनी शरणमें लोगे, तभी आपकी आज्ञानुसार कालके जालको परखकर आपकी शरणसे निराश नहीं होंगे ।

हे सत्यसिन्धु ! ऐसी कृपा करो जिससे कि, सर्व असत्यसे छूटकर आपकोही प्राप्त हो जाऊँ ।

हे प्रेममयी ! अपने कृपाकटाक्ष द्वारा ऐसी दया करो कि, आपके सत्य प्रेममें मग्न हो जाऊँ ।

हे अमृतमयी ! ऐसी दया करो जिसमें आपकी अमृतरूपी आज्ञाओं पर चलनेकी हममें शक्ति हो ।

हे शांतिनिकेतन! आपकी कृपाके अतिरिक्त हम उस सौभाग्यताको कैसे प्राप्त हो सकेंगे, जो आपके सच्चे दासको प्राप्त होता है। हम कैसे भी हैं परन्तु अबतो आपके कहलाते हैं, यदि हमको सत्य शान्ति प्रदान न करोगे तो आपकीही विरद लज्जायमान होगी।

हे पुण्यमयी! हे सच्चे भ्राता! हमको ऐसी सुमति दो जिससे परस्परके विद्वेषको त्यागकर आपकी सेवामें लगजावें।

हे हंसननायक! अपने ऐसे हंसोंकी संगति मुझे प्रदान करो, जिससे आपके अतिरिक्त दूसरेकी वासना हृदयसे उठजावे।

हे सत्य! असत्यसे बचाकर सर्वदा सत्यकी ओर लेजाओ।

अविश्वासके जालसे निकालकर, विश्वास और श्रद्धाको प्राप्त करादो। अप्रेमसे बचाकर प्रेममयी देशमें पहुँचादो, अपवित्रतासे निकालकर पवित्रताको दिखादो। स्वेच्छाचारीपणासे निकालकर, अत्याचारसे छुडाकर तुम्हारी इच्छा और आज्ञाके अधीन करके स्वतंत्र और सदाचारी बनादो।

हे कल्याणमयी! अकल्याणके मार्गसे हटाकर कल्याणकी राह दिखादो।

हे सत्यगुरु! अन्धकारमय देशसे उठाकर प्रकाशमय देशमें डाल दो।

हे सत्याचार्य! आपके सत्य धर्म, सत्य पंथ और आपके सच्चे संतोंमें ऐसी श्रद्धा दो जिससे अवनतिके भवनसे निकलकर सत्योन्नतिकी सडकपर चढ जाऊँ।

हम लोगोंको ऐसा उत्साह और ऐसी उत्कंठा दो, जिससे आपकी आज्ञाओंको पूर्ण करने, आपके स्थापित सत्यधर्मको

फैलाने, आपके सत्यराजकी महिमा प्रगट कर, अपनी तथा और दुखियोंकी आत्माको कालजालसे बचानेमें समर्थ होवें। ॐ शांतिः ! शांतिः !! शांतिः !!! ॥

सत्य कबीरोजयति ।।

निवेदन।

यह गुरु सहस्रनाम लेखक महाशयोंकी कृपासे अबतक इस अवस्था को पहुँच गया है, जैसा आपके सन्मुख उपस्थित है। कितने कारणोंसे इसके शुद्ध करानेका अवसर नहीं मिला है। यदि कोई विद्वान महात्मागण इसको शुद्ध करके मेरे पास भेज देंगे, तो धन्यवाद पूर्वक इसकी दूसरी आवृत्ति फिरसे छपायी जायेगी।

इसके अतिरिक्त कितने लोगोंने मुझसे कहा है कि , यदि गुरुसहस्रनामकी हिन्दी हो जावे और वह भी होवे कवितामें, तो संस्कृत न जाननेवाले जिज्ञासुओंका विशेष उपकार हो। इसलिये श्रीयुत शास्त्री विचारदासजी साहब, पण्डित ब्रह्मलीन दासजी, शास्त्री हंसदासजी तथा महंत लक्ष्मणदासजी गुरु श्रीमान् महंत तुरंतदासजी साहेब मुंगाना आदि विद्वानोंसे मेरा विनय है कि, आपलोगोंमेंसे जो महानुभाव इस गुरुसहस्रनामको शुद्धकरके, टीका और इसका हिन्दी कविताबद्ध अनुवाद भेजनेकी कृपा करेंगे तो बडा उपकार करेंगे और मैं बडे आनन्दके साथ उसे छपाकर प्रकाशित करदूंगा।

भवदीय–

श्रीयुगलानन्द विहारी

कबीराश्रम खरसिया (विलासपुर सी०)

श्रीगुरुवे नमः ।

अथ श्रीगुरु सहस्रनाम प्रारम्भः ।

न्यास प्रारम्भः ।

ॐ यस्य सद्गुरुदिव्यनामस्तोत्रमन्त्रस्य ॥

शिष्य ऋषिः ॥ मन्त्रछंदः ॥ गुरुदेवता ॥ सोहं बीजं ॥ अहं शक्तिः ॥ गुँ अंगुष्ठाभ्यां नमः॥[1] रुँ तर्जनीभ्यां नमः ॥[2] वं मध्यमाभ्यां नमः॥[3] नं अनामिकाभ्यां नमः ॥[4] मं कनिष्ठिकाभ्यां नमः ॥[5] सं करतल-करपृष्ठाभ्यां नमः ॥[6] गुँ हृदयाय नमः ॥[7] रुँ शिरसे स्वाहा ॥[8] वँ शिखायैवषट् ॥[9] नँ कवचायहुं ॥[10] मँ नेत्रत्रयाय वौषट् ॥[11] सँ अस्त्राय फट् ।[12] गुरुप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ।[13]

श्लोक–ध्यान × ।

ध्यायेत सद्गुरुश्वेतरूपममलं श्वेतांबरं शोभितम् । कर्णैः कुण्डलश्वेतशुभ्रमुकुटम् हीरामणिमंडितम् ॥ नानामालमुक्तादि शोभितगलं, पद्मासने संस्थितम् । दयाब्धिधीरं सुप्रसन्न वदनम्

---

१ यह मन्त्र पढ़कर दोनों हाथकी तर्जनी अगुलीसे, दोनों हाथके अंगूठोंको स्पर्श करते हैं। अंगूठेके पास जो अंगुली है उसीका नाम तर्जनी है ।

२ यह मंत्र पढ़कर दोनों अंगूठोंसे तर्जनी अंगुलियोंका स्पर्श करते हैं ।

३ इस मंत्रको पढता हुआ दोनों मध्यमा अंगुलियोंका स्पर्श करे ।

४ इसको पढकर दोनों अंगूठोंसे अनामिकाको स्पर्श करे ।

५ इसको बोलता हुआ दोनों अंगूठोंसे दो कनिष्ठिकाको स्पर्श करे ।

६ यह मन्त्र पढकर प्रथम दाहिने हाथके नीचे बाया हाथ रक्खे फिर बायें हाथके नीचे दाहिना हाथ रक्खे ।

७ यह मन्त्र पढकर पांचों अंगुलियोंसे हृदयका स्पर्श करते हैं ।

८ यह मन्त्र पढकर पांचों अंगुलियोंसे शिरका स्पर्श करते हैं ।

९ इस मन्त्रको बोलकर पाचों अंगुलियोंसे शिखाका स्पर्श करते हैं ।

१० यह मंत्र पढकर दाहिने हाथसे बायें खवे (कन्धे) का और बायें हाथसे दहिने (खवे) कन्धे स्पर्श करते हैं ।

११ इसके द्वारा दहिने हाथसे दोनों नेत्रोंको छूते हैं ।

१२ यह मंत्र पढकर दहिने हाथकी तर्जनी और मध्यमासे बांये हाथकी हथेलीपर मारते हैं ।

१३ यह पढकर ऐसा संकल्प करे कि सद्गुरुके प्रसन्न होनेके निमित्त मैं यह पाठ करता हूं ।

× इसके पश्चात् प्रथम और द्वितीय श्लोकमें लिखे अनुसार सद्गुरुके स्वरूपका मानसिक ध्यान करे और सहस्रनामों द्वारा सद्गुरुकी विभूतिका चिंतन करता हुआ पाठ करें ।

उपरोक्त करन्यास अंगन्यास तथा ध्यानकी विधि गुरुसे सीखना चाहिये ।

सद्गुरुं तन्नमामि ॥ १ ॥ द्वै पदम् द्वै भुजम्, प्रसन्नवदनम् द्वै नेत्रम् दयालम्। सेलीकण्ठ माल ऊर्ध्वतिलकम् श्वेताम्बरीमेखला॥ चक्रांकस्य विचित्र टोपलसितं तेजो मयी विग्रहं। वंदेसद्गुरु योगदण्ड सहितं कब्बीर करुणामयम् ॥२॥ एतानि चतुर्मुखानि, विख्यातानि महास्याः। अज्ञायस्य स्तुतानि साधुभिः शजतुं (किंवा) साधुभिः परिगीतानि वक्ष्यामि जीविते यः ॥ ३ ॥ न अंग अंगन्यासं नकरं करन्यासता। स्वयमश्च गुरुमंत्र स्वयं भूत्वा स्वयंजपः ॥४॥ सोंमाप सोहं रूपाय सत्यनामाय साक्षिणे। करुणामयकवीराय त्रिपदातीताय नमः ॥ ५ ॥ अमी अमृत नामाय, अजराचिन्तरूपिणे ॥ अमरः सत सुकृताय, दयाब्धि गुरुवे नमः ॥६॥ कृपाल कृपायः सिंधुश्च, कृपायोत कृपाधनं॥ कृपार्णव कृपा वृष्टिः कृपा कर्ता नमोनमः ॥७॥ दयाल धीर्यवंतश्च, दयासिंधु दयार्णव ॥ दयाकर्ता दयावन्ता, ज्ञानदाता नमो नमः ॥ ८ ॥ अभयन्निर्भयश्चैव, निर्भयपददायकम्। भ्रमहारकनामाय भातारक नमोनमः ॥ ९ ॥ अचल रूपं अचलं चिन्तातीत प्रकाशकम्। दीनानाथं दीनोद्धारं, दीनवत्सल सुन्दरम् ॥१० ॥ अमृत मृत्यु नाशाय, महा भ्रमनिवारणम्। योगजीत अजीताय, ज्ञान वेत्ताय किञ्चन ॥ ११ ॥ निर्मोही मोह नाशाय जगत्याशा विनाशकम् ॥ निर्वैरभ्रमहीनाय, निर्भ्रमाय नमो नमः ॥ १२ ॥ उपदेश कर्ता स्वदेश दाता, उपाधिहीनश्च भय शोक हर्ता॥ संकष्ट नाशाय सिद्धान्त मूला, स्वयं गुरु सिद्ध अहं नमामि ॥ १३ ॥ हंसाय हंसरूपाय हंस पाल हंस पति ॥ हंसनायक श्वेताय, हंसोद्धारक तारकम् ॥ १४ ॥ जीवोद्धारक शान्ताय, शान्ति रूप अशाश्रिता। शांति कर्ता शांति धर्ता, सर्व शांति नमो नमः ॥१५॥ हंता नाश दयापाल संशयजाल विखण्डनम् ॥ वपुनाशा

प्रकाशश्च, वपुर्हर्ता वपुर्हनम् ॥ १६ ॥ परिक्षः परिक्षाश्चैव परिक्षं परीक्षावतम् ॥ परायत्त्वं अपाराय; सर्वातीत नमो नमः ॥ १७ ॥ पाखण्ड खण्डनम्, अजरूप अजामरः ॥ अग्रनाम ज़रातीतं, स्वतः सिद्धस्व साक्षिणः ॥ १८ ॥ आदादली आदि रूपं, आदि मूर्तं अनाद्यये ॥ अनादि सिद्ध नामाय, अकांक्ष अचले प्रिये ॥१९॥ निर्णय निर्णयः कर्त्ता, नास्ति सिद्धान्त नाशकः ॥ निराधार निराभासः, निर्विघ्नश्च निरामयः ॥ २० ॥ सुखाय सुख दाताय, सुखार्णव सुखात्ययम् ॥ नासि सुखमतीताय आस्ति सुख नमोस्तुते ॥२१॥ अनादि नामश्च अनादि रूपं; आनंद ततिश्च अकंप रूपं ॥ परब्रह्मतीताम प्रकाशतीतमधिष्ठानतीतं हि नमोनमस्ते ॥२२॥ गुणी पंचगुणातीतं, सर्वातीतं सर्वोत्तमम् । भासप्रपंचातीताय; भासकातीतये नमः ॥ २३ ॥ अखिलज्ञम् ज्ञानतीतं, अंधकारनिवारणम् । साक्षातीतं बोधातीतं बोधकर्ता नमो नमः ॥ २४ ॥ विघ्न विध्वंसनन्नाम सर्व मंगलदायकम् ॥ वृक्ष राक्षक नामश्च; वृंदधारीवृंदः प्रिये ॥२५॥ शिष्यपालं, भक्तपालं, दीनपालं दिनप्रिये ॥ दीनोद्धारकसाधाय वंदिमोचनये नमः ॥२६॥ कालसंधि निवार्नं च, महासंधि विध्वंसनम् ॥ भक्तोद्धार जगदोद्धारं असंधीसाधकः प्रिये ॥ २७ ॥ साधूसन्त साधुरूप संतस्थं संतधारना ॥ अविनाशी निर्विनाशं, प्रपंचं हीनम् पुरुषम् ॥ २८ ॥ पुर्षातीतं सुनीन्द्रश्च सारशब्दस्वरूपवाम् ॥ त्रिशब्दातीतस्थिराः स्थिरकर्तास्थिरालयन् ॥२९॥ परिणामंवस्थातीतं, भौभे दुःखनिवारणम् ॥ योगसन्तयन्ताय, तरन्तारं नमोस्तुते ॥ ३० ॥ भवाब्धि पोतं भवरोगवैद्यं भवार्णवं घोरविनाशनन्दुखः ॥ अशर्णशर्णाय उदारबुद्धिः, समासमं जीव समेक दृष्टिः ॥३१॥ मंगलं मंगलः कर्ता, बेर दाता प्रतापवान् ॥ निष्क्रियः निर्विकारश्च, निर्द्वंद्वाय शिष्यः

प्रिये ॥३२॥ जीवनं सर्वजीवानां भूषणं ज्ञान चक्षुषा ॥ मुक्ति दाता भक्ति दाता ज्ञान दाता नमो नमः ॥ ३३ ॥ मुक्त पदं मुक्त नामं, सर्वं बंधन मोचनम् ॥ विद्यादाता बुद्धिदाता सर्वज्ञाय नमो नमः ॥ ३४ ॥ परीक्षा प्रेरकन्नाम, समाधाय प्रदानकम् ॥ प्राप्ति कर्ता प्राप्ति रूपं, भक्ति नाथ नमो नमः ॥ ३५ ॥ सगुणं सगुणश्चैव, प्रसन्नं करुणाकरम् ॥ विचारं च प्रमोदारं, सर्वोत्कृष्ट नमो नमः ॥३६॥ भ्रमसंहारनन्नाम काम संहारनं मसि ॥ क्रोध दमनमक्रोधं, मोह निर्मोह नाशकम् ॥ ३७ ॥ निर्लोभ सर्वजीताय अजीताय जितेन्द्रियः ॥ सर्व वस्य अवस्यं च सर्वमान्य अमान्ययोः ॥३८॥ सर्व पूज्यं मंत्र मूलं, ध्यान मूलं स्वरूपकम् ॥ ज्ञान विज्ञान मूलाय, हंस मूलं हंसं प्रिये ॥ ३९ ॥ अयोनिसंभवकृपा कटाक्षं, अवीर्यं अरेत अकाम रूपम् ॥ अपाप अतात अजा अतीत; अविगत्य रूपं अहं नमामि ॥४०॥ अखिलादिखिलं ज्ञाता, अखिलानंदतीतयोः ॥ सन्त सन्तप्रियो नामं परं स्नेही परावृत्तिः ॥ ४१ ॥ उद्धारं भौहारकं च, निरंजनातीतप्रभु ॥ कर्ममोचनं नामाये निर्भरः शीतलाश्रयः ॥४२॥ भृंगीनाम अभैनामं, शीलनाम सुखार्णवम् ॥ पर्मनामाय सुर्तिश्च, विजपाय जपातियो ॥४३॥ अमलन्निर्मलश्चैव; हंसज्ञ हंस नायकम् ॥ भक्त सहाय कर्ता च सुखदाता सुखः प्रभू ॥ ४४ ॥ सत्यवक्ता प्रकाशं च, परमं पारखलीलया । अमोल मंगलन्नाम अविचलं, गुरुवे नमः ॥ ४५ ॥ संतोष शक्त बीरं च, साधू कबीर नामयम् । हंस कबीर नामाय, गुरु कबीर नमो नमः ॥४६॥ पर्म गुरु पर्म वैद्यं, पर्मलक्ष पदानये॥ सिद्ध कबीर नामाय, निरालम्ब कल्पद्रुमः ॥ ४७ ॥ निर्विघ्न करुणा रूपं, दिव्यनाम अनामयम् ॥ छायातीतं, मायातीतं कायातीतं नमोनमः ॥४८॥ कालमर्दन कीर्ति वर्द्धनं, वृक्ष रक्षकं ज्ञान अक्षकम् । सुखःसागरं

ज्ञान आगरं, परबं दायकं सर्व लायकम् ॥ ४९ ॥ वाच्य वाच-
कातीताय, अनिर्वाच अतीतये ॥ छन्दातीतं वेदातीतं शास्त्रातीतं
नमोनमः ॥५०॥ नररूपं नरातीतं नरज्ञ नर नामयोः । यक्षराक्षस
तीताय गंधर्वातीतये नमः ॥ ५१ ॥ दैत्यातीतं देवातीतं, त्रिका-
लभासकं प्रभू ॥ त्रिदेवातीतायन्नामः त्रिकालज्ञ नमोनमः ॥५२॥
पंच ब्रह्म अतीताय, पंच मात्रा विवर्जितः ॥ शदमात्रा विनिर्मुक्तं,
पंचस्थान अमानयो ॥५३॥ पंचअहंकारातीतं पंच देह अतीतयो ॥
पंचतत्त्वं अतीताय पंच विषय नाशकम् ॥ ५४ ॥ चतुर्दश
करणैरतीतं, षट्भावविनिर्गतम् । षट् विचार रहीताय, योगातीतं
महद्गुरुम् ॥ ५५ ॥ विराग वैराग्यातीतं योगं वियोग वर्जितम् ।
भोग्य भोगातीश्चैव संयोगातीतायनः ॥५६॥ विवेक विवेकातीतं,
विवेकत्व विवेकिनः ॥ अविवेक नाशनञ्चैव, विवेकः स्वरूपं प्रभू
॥५७॥ वैराग्यजाता गुरु भक्ति ताता, सत्यं दया धीर्य शीलस्य
कर्ता ॥ विचार मूलं ज्ञानस्य जनकं निर्णयस्वरूपं अहं भजामि
॥ ५८ ॥ निर्विन्दं प्रकाश्चैव स्थिर स्वस्थिति दायकम् ॥ क्षमा
मिथ्या त्यागनश्च, निःसन्देह नमोनमः ॥५९॥ गर्वप्रहारी अद्रोहं,
अहंता नाशनं प्रभुः ॥ समदृष्टि सर्वमित्रं भयहरन अभयीवरम्
॥ ६० ॥ अभैराज अभयदाता, सत्यसंग निवासिनम् ॥ अनि-
त्यखंडनन्नाम, सदा नित्यं स्वरूपवान् ॥६१॥ ससर्विदं विभावाय,
सर्वानुग्रह कारणम् । बंधनं नाशनं खण्डं, समोपास विनाशकम् ६२॥
दास रक्षा दासपालं सर्वव्याधि प्रशाम्यतम् ॥ परदुःखभंजनन्नाम,
भक्तानामनिरंजनम् ॥६३॥ दुष्टगंजनं नामाय, ज्ञानभंजनं तथैव च॥
भर्मपातं पवित्रं च, सर्वघात निवारणम् ॥ ६४ ॥ पावनः पावनः
कर्त्ता, भवाब्धि नौका एव च ॥ कृतांतं भयहरं चैव मृत्यूभयवि-
नाशकम् ॥ ६५ ॥ भूतभय नाशनं चैव, राजभय नाशनं तथा ॥

चौरभय नाशन्नाम, व्याघ्रादिभय विनाशनम् ॥ ६६ ॥ अलक्ष-लक्षायमक्षेस्वरूपं, सिद्धांत दाता ऐश्वर्यऽमूलम् ॥ अनादिदीक्षा निरपक्षरूपं, सजीवनेजीवन सर्वजीवः॥६७॥ महासजातीभानं च, गुरुं दाता तथैव च॥ सर्वसामर्थ्यवानाय, गुरु वर्यं नमो नमः ६८॥ साधुगुरुं सत गुरु अग्र नाम तथैव च ॥ अमल अक्षे नामाय, अज्ञावन अनामय॥६९॥ पतितः पवनन्नाम, दीनोद्धार दिनप्रिये॥ शरणागत रक्षकाये जद्दोद्धार नमाम्यहम्७०॥ भूभय निवारणन्नाम, भूसिन्धु तारकं तथा ॥ दैत्य विध्वंसनंन्नाम, कल्पना खण्डनं प्रभू ॥ ७१ ॥ दया धीरं भय हारं ज्ञान विज्ञान कारकम् ॥ सारं च सर्वसारं च स्वप्रकाश सज्ञन प्रिये ॥ ७२ ॥ परक्षवान संयुक्तं सन्ताधारं निराविशम् ॥ अइन्द्रि अगाध नामअपार अपरः प्रिये ॥७३॥ शुकाब्धि स्वरूपाधिश्च मुक्त नाम मुक्ता दया ॥ निर्तरूप सुर्तिनाम, अपार औगाह तीतयोः ॥७४॥ अमाया अकायाश्चैव, छः संधि विवर्जितः । अग्राह्यं ग्राह्यातीतश्च, अविकार प्रबोधिता ॥७५॥ प्रबोधकर्ता त्रय ताप हर्ता, हबोदस्या दाता सत्सिद्धि चारी॥ धैर्यधरं परमोद्धार रूपं, आनंद भेदं अहन्नमामि ॥ ७६ ॥ अचलं विगतन्नाम, अभेदागमलक्षणः ॥ अविनाशा परोक्षं च पुराण पुरुषोत्तमम् ॥ ७७ ॥ आद्यं कुरुते कृतस्य पर्मसार तथैव च ॥ साधूपति साधुधीशं, सत्य सन्तोषनामयोः ॥ ७८ ॥ साधु स्नेही, संतस्नेही, भक्तस्नेही भक्तप्रिये ॥ पर्मस्नेही सुर्तिस्नेही प्रेमस्नेही च स्वस्थिरम् ॥ ७९ ॥ हिरंपरं हिरंबरा, पुष्प दीप विहारि च ॥ सत्यलोक पतिनामं इति अक्षयवृक्ष नमो नमः ॥ इति ॥

इति गुरु सहस्रनाम समाप्तमिदं ॥

अथ नामलीला ॥

साहेब अबिचल नाम, दया करि पाइये ॥टे०॥ प्रथम बन्दों गुरु चरन, सीस संतनको नाऊँ। सतगुरु होयँ दयाल, तो नाम चरित्र सुनाऊँ ॥ सत्त सुकृत हिरदे बसै, कबहुँ ना आवै हारि। अविगतिसे परिचै भई, तो आवागवन निवारि ॥ १ ॥

कहा आनकी सेव, जीवको भर्म न भाजै। अलख सरूपी आप, तहाँ अनहद धुनि गाजै॥ यह धुनि सुनि अबिचल रहो, इत उत मन नहिं जाय। अमृत केरी बुन्द है, सो अमृत माहिं समाय ॥२॥

प्रथम पुरुष पग धर्‌यो सत्त, सतजुगमें आये। परमारथके काज, जीवकी बन्दि छोड़ाये॥ कागा तें हंसा किया; जाति बरन कुल खोय। जमसे तिनुका तोरिके, गंज न सक्कै कोय ॥ ३ ॥

सतजुग गयो व्यतीत, सुनो त्रेताकी बानी। धर्‌यो मुनिन्द्रको रूप, आप सतसुकृत ज्ञानी ॥ हंसनको परमोधिके, आप रह्यो नीनार। नाम प्रतीत बसे जो जिवको, सो जन उतरे पार ॥४॥

त्रेता गयो ब्यतीत, सुनो द्वापरकी बानी। करुणामय को रूप धर्‌यो, सतसुकृत ज्ञानी ॥ चेतनहारा चेतियो, बहुरि न चेता जाय ।सत्तसुकृत चीन्हें बिना, काल सबनको खाय ॥ ५ ॥

कलिजुग प्रगट कबीर, कालको देखा जोरा। किये कासी अस्थान, आप भै बन्दीछोरा ॥ मुनि पंडित सब बादहीं, कोई न पहुँचे ज्ञान। निर्गुन लीला धारिके, आप पुरुष निर्बान ॥६॥

कलिजुग कर्म अपार, जीव कोइ कहा न मानै। सीखे साखी शब्द, उलटिके बाद बखानै॥ बाद किये पहुँचे नहीं, मन ममताके जोर। लख चौरासी जिया जोनिमें, भर्मै नरक अघोर ॥ ७॥

कठिन कालको रूप, अंत कोइ जान न भाई। जब आवै मृतु अंध, जीव कहँ जाय पराई ॥ नाम बिना बाँचै नहीं, केतो करै उपाय। तीरथ जाय सकल भ्रमि आवै, जमको त्रास न जाय॥८॥

बहुत ज्ञान बहु गम्य, बहुत मूरतको पूजे। दीपक बरै अनेक, अंधको आंखि न सूझे। बहुतक जुग भरमत फिरै, कितहुँ न पावै दाद। सात द्वीप नौ खंडमें, सत्य नाम बिनु बाद ॥ ९ ॥

सतगुरुका उपदेस, संत कोउ बिरला जानै। करे तत्त्वका खोज, बहुरि संकट नहिं आनै॥ ऐसे सुरति लगाइये, जैसे चन्द्र चकोर। कठिन पडे सुख दुख सहै, प्रीत निभावै ओर ॥ १० ॥

अविगति अगम अपार, और सब दीसै बाजी। पढि पढि बेद कितेब, भुले पंडिते औ काजी। अगम गम्य जानै नहीं, बीचहिं परे भुलाय। जैसे ज्वारी जुवा खेलिके, सब रस चले गँवाय॥ ११॥

नहिं सागर नहिं सिखर, नहीं तहँ पवन न पानी। नहिं धरती आकास, नहीं कछु और निसानी॥ चन्द्र सूर वा घर नहीं, नहीं दिवस नहिं राति। जहाँ पुरुष आपै बसै, तहँ कुल कर्म न पाँति १२॥

वहाँ नहीं तीरथ ब्रत, नहिं तहँ वेद बिचारा। नहिं देवी नहिं देव, नहीं कछु नेम अचारा॥ जरा मरन वा घर नहीं, नहीं लाभ नहिं हान। प्रेम मगन हंसा रहै, सो धरै पुरुषको ध्यान॥ १३॥

जहाँ पुरुष रहै आप, तहाँ हंसनको बासा। तहँ नहिं माया मोह, नहीं तहँ तृष्णा आसा। हर्ष शोक वा घर नहीं, नहीं कर्म ब्यवहार। हंसा परम अनंद मय, छूटे भ्रम जंजार ॥ १४ ॥

चारों जुगके हंस, सत्य सतलोक सिधाये। भ्रमत फिरे सब काग, दूत बैठे रखवाये॥ मुनि पंडित जोगी जती, धरे कालको ध्यान। तीन लोकके बाहरे, कोई न पाये जान। ॥ १५ ॥

भ्रमत फिरे जुग चारि, रूप कीन्हा बिस्तारा। अजहुँ न समुझे अंध, परे जम कालकी धारा॥ बहुत भाँति परमोधिया, कोइ कोइ लीन्हा मान। आदि अंतके हंस हैं, सो प्रगट भये हैं आन ॥ १६॥

अनजानेको दूरि, जानेको निकट बिराजै। शब्द सनेही संत, सोई सब ऊपर छाजै। मगन होय मनको गहै, हंस रूप आनन्द। सुमिरन दीनदयालको, ज्यों उड़गन में चन्द ॥ १७ ॥

बहुत गुरू संसार रहित, घर कोइ न बतावै। आपन स्वारथ लागि, सीस पर भार चढावै॥ सार शब्द चीन्हे नहीं, बीचहिं परे भुलाय। सत्त सुकृत चीन्हे बिना, सब जग काल चबाय॥ १८॥

यह लीला निर्वान, भेद कोइ बिरला जानै। सब जग भरमे डार, मूल कोइ बिरला माने॥ मूल नाम एक पुरुष है, पुहुप द्वीपमें बास। सतगुरु मिलैं तो पाइये, पूरन प्रेम बिलास॥ १९॥

नाम सनेही होय, दूत जम निकट न आवै। परमतत्त्व पहिचानि, सत्त साहेब गुन गावै॥ अजर अमर विनसे नहीं, सुखसागरमें बास। केवल नाम कवीर है, गावे धनिधर्मदास॥ २०॥

॥ धर्मदासजी रचित ॥

बिनती प्रारम्भः।

॥ शब्द १ ॥

भक्ति दान गुरु दीजिये, देवनके देवा हो।
चरन कँवल बिसरौं नहीं, करिहौं पद सेवा हो॥ १॥
तीरथ बरत मैं ना करौं, ना देवल पूजा हो।
तुमहिं ओर निरखत गहौं, मेरे और न दूजा हो॥ २॥
आठ सिद्धि नौ निद्धि, हैं वैकुण्ठ निवासा हो।
सो मैं ना कछु माँगहूँ, मेरे समरथ दाता हो॥ ३॥
सुख सम्पति परिवार धन, सुन्दर बर नारी हो।
सुपनेहु इच्छा ना उठै, गुरु आन तुम्हारी हो॥ ४॥
धरमदासकी बीनती, साहेब सुनि लीजे हो।
दरसन देहु पट खोलिकै, आपन करि लीजे हो॥ ५॥

॥ शब्द २ ॥

साहेब साहेबी तन हेरो ॥ टेक ॥

चञ्च पंख बिन जटा पखेरू, मम गति समझ सबेरो ।
अब जनि तजो मोहिं यह खण्डा, तुम सतलोक बसेरो ॥ १ ॥
निस बासर मोहिं संशय ब्यापे, काम क्रोध मद घेरो ।
यासे नाम लेन नहिं पाऊँ, धिग जीवन जग मेरो ॥ २ ॥
प्रभु पद भिन्न भयो मैं जबसे, देह धरे बहुतेरो ।
त्रिविधि ताप दुख सहे निरंतर, कबहुँ न भयो सुखेरो ॥ ३ ॥
ममहित जानि प्रान-पति सतगुरु, जुगन जुगन तुम टेरो ।
मैं अचेत प्रीति मोह बस, तुम तजि भयो अनेरो ॥ ४ ॥
मैं हौं जीव तुम्हार दया-निधि, आदि अंतको चेरो ।
अब मोहिं लेहु छुडाइ कालसे, औगुन मेटो मेरो ॥ ५ ॥
बंदीछोर सुनो करुना-मय, करो हिये बिच डेरो ।
धर्मदास पर दाया कीजे, चौरासीसे फेरो ॥ ६ ॥

॥ शब्द ३ ॥

साहेब दीनबंधु हितकारी ॥ टेक ॥

कोटिन औगुन बालक करई, मातपिता चित एक न धारी ॥ १ ॥
तुम गुरु मात पिता जीवनके, मैं अति दीन दुखारी ॥ २ ॥
प्रनत-पाल करुना-निधान प्रभु, हमरी ओर निहारी ॥ ३ ॥
जुगन जुगनसे तुम चलि आये, जीवनके हितकारी ॥ ४ ॥
सदा भरोसे रहूँ तुम्हारे, तुम प्रतिपाल हमारी ॥ ५ ॥
मोरे तुमहीं सत्त सुकृत हो, अंतर और न धारी ॥ ६ ॥
जानत हौ जनके तन मनकी, अब कस मोहिं बिसारी ॥ ७ ॥
जो कहि सकै तुम्हारी महिमा, केहि न दिह्यो पद भारी ॥ ८ ॥
धरमदास पर दाया कीन्ही, सेवक अहौं तुम्हारी ॥ ९ ॥

॥ शब्द ४ ॥

साहेब मेटो चूक हमारी ॥ टेक ॥
बार बार मोहिं दंड भयो है, चूक भई अति भारी ।
अब हम आये निकट तुम्हारे, अब मो तर्नाहि निहारी ॥ १ ॥
करुनामय तुम नाम धराये, तुम समरथ अब मेरो ।
ऐसो बिपति भई मोहिं ऊपर, कोई ना हीत¹ हमारो ॥ २ ॥
तरसत जीव रहै निस बासर, जानि जनहिं तुम दौरो ।
अबकी चूक छिमाकर साहेब, अब सन्मुख है हेरौ ॥ ३ ॥
तुम सतगुरू सकल सुख दाता, शब्द पान दे तारो ।
धरमदास बिनवै कर जोरी, करौं बंदगी तेरो ॥ ४ ॥

शब्द ५

सुरति पर सतगुर धरि दियो बाढ ॥ टेक ॥
घरमाँ रहौं रहन नहिं पावौं, घरके लोग मोहिं देहिं निकार ॥१॥
बाहर जावँ डाइन इक लागै, सुनि पावै जिय डारै मार ॥२॥
ऐसी बाढ धरो मोरे साहेब, जहँ मारौं तहँ पल्ले पार ॥३॥
धरमदास पर दाया कीजै, साहेब कवीर दुख मेटनहार ॥४॥

शब्द ६

बंदी-छोर बिनती सुनि लीजै ॥ टेक ॥
कपट कुटिल अपराधी द्रोही, ठहराई मन लीजै ।
नाम तुम्हारा अधम उधारन, ताकी दिच्छा दीजै ॥ १ ॥
पाप पुन्न नहिं जाँचन कीजै, काटि फंद अब दीजै ।
माँगूँ अपन सुभाव दयानिधि, सुनि अनुमान न कीजै ॥ २ ॥
बिषे बिनाश रहूँ निसु बासर, यह तन छिन छिन छीजै ।
साठ जन्मको हौं अपराधी, अबकी छिमा प्रभु कीजै ॥ ३ ॥
सतगुरु नाम मुनींद्र कहाये, साहेब कवीर सुनि लीजै ।
धरमपास बिनवै कर जोरी, काटि चौरासी दीजै ॥ ४ ॥

1 हितकारी ।

शब्द ७

कब तुम मिलिहौ कंथ कबीर ।
धर्मदास पर दाया कीजै, हंस लगावो तीर ॥ १ ॥
भक्ति अचल औ दृढ बैरागा, पूरन ज्ञान गँभीर ।
जती सती संतोषी तुमहीं, सबके दाता धीर ॥ २ ॥
तुम प्रताप परवाह न केहुकी, सागर सलिता नीर ।
एक बुंद दयाल मोहिं दीजै, जाय जीवकी पीर ॥ ३ ॥
महा कठोर कठिन मन मेरो, हरो ताहिकी भीर ।
कामी क्रोधी झूठा लंपट, धार्‌यो अधम शरीर ॥ ४ ॥
सुक्ख करन और दुक्ख हरन तुम, ऐसे मतके थीर ।
ज्ञानमंडन, भर्मखंडन, दया सिंधु कबीर ॥ ५ ॥

॥ शब्द ८ ॥

साहेब बूडत नाव अब मोरी ॥ टेक ॥
काम क्रोधकी लहर उठतु है, मोह पवन झकझोरी ।
लोभ, मोरे हिरदे घुमरतु है सागर वार न पारी ॥ १ ॥
कपटकी भँवर परतु है बहुतै, वामें बेडा अटकारी ।
काल फाँस लिये है द्वारे, आया सरन तुम्हारी ॥ २ ॥
धरमदास पर दाया कीन्ही, काटि फंद जिव तारी ।
कहैं कबीर सुनो हो धर्मनि, सतगुरु सरन उबारी ॥ ३ ॥

॥ शब्द ९ ॥

बिन दरसन भइ बावरी, गुरु द्यो दीदार ॥ टेक ॥ ठाढि जोहौं तोरी बाट मैं, साहेब चलि आवो। इतनी दया हम पर करो, निज छबि दरसावो ॥ १ ॥ कोठरी रतन जडाव की, हीरा लगे किंवार। ताला कुंजी प्रेम की, गुरु खोलि दिखावो ॥२॥ बंदा भूला बंदगी, तुम बकसनहार । धर्मदास अरजी सुनो, भव पार करावो ॥ ३ ॥

॥ शब्द १० ॥

दीनानाथ दयाल, भक्तकी पछ क सरन आयेकी लाज, साहेब जनकी करौ॥ १॥ नौ दरवाजे बिकार, धार नौका बग्गै। मरी सुरत नहीं ठहराय, लगन कैसे लग्गै ॥ २ ॥ पाँच तत्त्व गुन तीनका, आदर साजिया। जम राखै बिलमाय, तो फन्द न फंदिया ॥ ३ ॥ तिर्गुन फाँसका फँदा, माया मद जालमें। भवसागरके बीच, महा जंजालमें ॥ ४ ॥ भक्ति मुक्ति देव दान, दया जन पर धरो। नौका पार लगाय, दास अपनो करौ ॥ ५॥ साहेब कवीर बन्दीछोर, अरज यक मानिये। धर्मनि पतित उबारि, सरनमें आनिये ॥ ६ ॥

॥ शब्द ११ ॥

चरन छाडि प्रभु जावँ कहाँ, मोरे और न कोई। जगमें आपन कोइ नहीं, देखा सब टोई ॥ १ ॥ मात पिता हित बन्धु तुम, कासे दुख रोई। सब कुछ तुम्हरे हाथ है, तुम्हरै मुख जोहीं ॥२॥ गुन तो मोरे है नहीं, औगुन बहुते होई। ओट लई तुम नामकी, राखो पत सोई ॥३॥ सतगुरु तुम चीन्हे बिना, मति बुधि सब खोई। सब जीवन के एक तुम, दूजा नहिं कोई ॥४॥ मैं गरजी अरजी करौं, मरजी जस होई। अरज बिपति लिखौं आपनी, राखौं नहिं गोई॥५॥ धरमदास सत साहेबी, घट घटहिं समोई। साहेब कवीर सतगुरु मिले, आवागवन न होई ॥ ६ ॥

॥ शब्द १२ ॥

साई मैं असल गुलाम तिहारा॥ टेक॥ काया नगर बन्यो अति सुन्दर, मोहको लग्यो बजारा। कुमति कलोल करै दशहों दिसि, लोभको ठुक्यो नगारा ॥१॥ मोह समुन्दर भरे अपरबल, भँवर भँवैं अति भारा। काम क्रोधकी लहर उठतु है, केहि बिधि

(१) बगदै, बेठिकाने बहै।

सत्यनाम



श्री १०८ पं० श्री दयानामसाहेब
वचनवंशीय गद्दीके विन्दवंशीयके १३ वें और अन्तिम
आचार्य्य, आपके पश्चात् अब वचनवंशीय नाद
वंशकी गद्दी आरम्भ हुई है ।

होय निवारा ॥ २ ॥ पाँचके ऊपर पचिस महतिया, इन परपंच पसारा। मन अदली जहँ अदल चलावै, कहा कर जीव बिचारा ॥ ३ ॥ ना मोरी नाव नहिं खेवटिया, डर लागै मोहिं भारी। चौदह लोकमें कोई नहिं दीसै, तुम गुरु पार उतारी ॥ ४ ॥ धरमदास की यही बीनती, उरझेको निवांरो। साहेब कवीर मिले गुरु समरथ, हमसे अधम उबारो ॥ ५ ॥

॥ शब्द १३ ॥

मैं तो तोरे भजन भरोसे अबिनासी ॥ टेक ॥
तीरथ बरत कछू नहिं करहूँ, बेद पढौं नहिं कासी ॥ १ ॥
जंत्र मंत्र टोटका नहिं जानौं, निसु दिन फिरत उदासी ॥ २ ॥
यहि घट भीतर बधिक बसत है, दिये लोभ की टाटी ॥ ३ ॥
धरमदास बिनवै कर जोरी, सतगुरु चरनन दासी ॥ ४ ॥

॥ शब्द १४ ॥

साहेब बंदीछोर हमारे॥टेक॥ ठाढे बैठे चलत निहारे, जागत साँझ सबारे। करुनासिंधु दयाके आगर, नैननके उजियारे॥१॥ बोलत बचन मीठ बहु लागै, पूरन पुरुष पियारे। उनकी रहनि गहनि जब पैहौ, होइ रहु सबसे न्यारे॥२॥ है बहु ज्ञान ध्यान बहुतेरो, खोलो गगन किवारे। दया स्वरूप बसै सिंधूमें, हीरा लाल निकारे ॥ ३ ॥ साहेब कवीर सदाके सतगुरु, हंसनके रखवारे। धरमदास पर दाया कीन्हा, आया सरन तुम्हारे ॥ ४ ॥

॥ शब्द १५ ॥

साहेब मोरी ओर निहारो॥टेक॥ परजा पुत्र अहौं मैं साहेब, बहुत बात मैं टारो ॥ १ ॥ हौं मैं कोटि जनमको पापी, मन बच करम असारो। एकौ कर्म छुटे ना कबहूँ, बहु विधि बात बिगारो ॥२॥ हौं अपराधी बहुत जुगनको, नइया मोर उबारो। बंदीछोर

(१) घूमैं। पृष्ठ २२४ पर पढ़ें

सकल सुखदाता, करुनामय करत पुकारों ॥ ३ ॥ सीस चढाइ पापकी मोटरी, आयो तुम्हरे द्वारो । को अस हमरे भाव उतारै, तुमहीं हेतु हमारो ॥ ४ ॥ धरमदास यह बिनती बिनवै, सतगुरु मो को तारो । साहेब कवीर हंसके राजा, अमर लोक लै धारो ॥५॥

॥ शब्द १६ ॥

साहेब मोरी बहियाँ सम्हारि गही ॥ टेक ॥ गहिरी नदिया नाव झाँझरी, बोझा अधिक भई । मोह लोभकी लहर उठत है, नदिया झकोर बही ॥ १ ॥ तुमहिं बिगारो तुमहिं सँवारो, तुमहिं भँडार भरी । जब चाहो तब पार लगावो, नहिं तो जात बही ॥२॥ कुमति काटिके सुमति बढावो, बल बुधि ज्ञान दई । मैं पापी बहु बेरी चूकूँ, तुम मेरी चूक सही ॥३॥ धरमदास सरन सतगुरुके, अब धुनि लाग रही ।अमर लोकमें डेरा परिगे, समरथनाम सही॥४॥

॥ शब्द १७ ॥

साहेब कौन कमी घर तेरो ॥ टेक ॥ भूखे अन्न पियासे पानी, कपडासे तन घेरो । जो कछु न्यामत सबै महल में, खरच खजाना ढेरो ॥ १ ॥ खाकसे पाक कियो पल माहीं, हे समरथ बल तेरो । भवसे काढि कियो तंरनी[1] पर, खेइ लगावो सवेरी ॥ २ ॥ रहे न घाम छाँह दुनियामें, रहे न जमको चेरो । रावसे रंक रंकसे राजा, छिनमें होवत हेरो ॥३॥ मानो सत्त झूठ जनि जानो, सत्त बचन है सूरो । धर्मदास चरनन पर बिनवै, तुम गति सब भरपूरो ॥ ४ ॥

॥ शब्द १८ ॥

साहेब खेइ लगावो पारा ॥ टेक ॥ असी कोसमें झील अरु झाँकर, असी कोस अंधियारा । असी कोस बैतरनी नदिया, जहँवाँ हंस उतारा ॥ १ ॥ बड़े बड़े सिकारी जोधा, आगेहीं पग डारा । खाल खैंचि जम भुसा भरावै, ऐंचि लेहि जस आरा ॥ २ ॥

१ हितकरी । २ नाव ।

लेखा माँगै जम फुरमावै, तीन लोक लै डारा। उपजत बिनसत जनम बीतिगै, चौरासीकी धारा ॥ ३ ॥ गगन मँदिलमें सतगुरु बोलै, सुनि लै शब्द सम्हारा। धरमदास चरनन पर बिनवै, अबकी अरज हमारा ॥ ४ ॥

॥ शब्द १९ ॥

अब मोहिं दरसन देहु कवीर ॥ टेक ॥
तुम्हरे दरससे पाप कटत है, निरमल होत सरीर ॥ १ ॥
अमृत भोजन हंसा पावै, शब्द धुननकी खीर ॥ २ ॥
जहँ देखों जहँ पाट पटंबर, ओढन अंबर चीर ॥ ३ ॥
धरमदासकी अरज गोसाँई, हंस लगावो तीर ॥ ४ ॥

॥ शब्द २० ॥

साहेब मोहिं दरसन दीजे हो। करुना निधि मेहर करीजे हो। पपिहाके चित स्वाति बसै, भावै नहिं जल दूजा हो। जैसे काग जहाज चढे, वा को और न सूझा हो॥१॥ बार बार बिनती करूँ, मेरी अरज सुनीजे हो। भवसागरसे काढिके, अपना करि लीजे हो ॥ २ ॥ सत्त लोक से सुरत करी, तब जगमें आये हो। जमसे जीव छोडाइके, धर्मनि मन भाये हो ॥ ३ ॥

॥ शब्द २१ ॥

मोर मन लागा साहेबसे, बन्दीछोर कवीरा॥टेक॥ सतगुरु सरनै मैं गई, सब दुख हरि लीन्हा। करम भरम सब मेटिके, निरमल करि दीन्हा ॥ १ ॥ तीन लोकके बीचमें, जम कातर चीन्हा। तासे मोहिं छुडाइके, आपन करि लीन्हा ॥ २ ॥ सतगुरु शब्द सुनाइके, पारस करि दीन्हा। कागा बरन मिटाइके, हंसा करि लीन्हा ॥३॥ काम क्रोध सब त्यागिके, बन हंस गँभीरा। शब्द हमारा मानि ले, गुरु कहत कवीरा ॥ ४ ॥ धरमदासकी बीनती, संतन महँ हेरा। जाति बरन कुल त्यागिके, सत लोक बसेरा ॥५॥

॥ शब्द २२ ॥

साहेब कौन देस मोहिं डारा ॥ टेक ॥
वह तो देस अमर हंसनको, यहि जग काल पसारा ॥ १ ॥
देवहु शब्द अजर हंसनको, बहुरि न है अवतारा ॥ २ ॥
निरगुन सरगुन दुंद पसारा, परि गइ कालकी धारा ॥ ३ ॥
जहाँ देस है सत्त पुरुषका, अजर अमी आहारा ॥ ४ ॥
धरमदास बिनवै कर जोरी, अबकी अरज हमारा ॥ ५ ॥

॥ शब्द २३ ॥

साहेब लेइ चलो देस अपना ॥ टेक ॥
जमकी त्रास सही नहिं जाई, केहि विधि धरौं मैं ध्याना ॥ १ ॥
माया मोह भरमकी मोटरी, यह सब काल कलपना ॥ २ ॥
माया मोह भरम सब काटो, दीजे पद निरबाना ॥ ३ ॥
अमर लोक वह देस सुहेला, हंसा कीन्ह पयाना ॥ ४ ॥
धरमदास बिनवै कर जोरी, आवागवन नसाना ॥ ५ ॥

॥ शब्द २४ ॥

तुम सतगुरु हम सेवक तुम्हरे ॥ टेक ॥ जो कोइ मारै औ गरियावै, दाद फिरियाद करब तुमहींसे ॥ १ ॥ सोवत जागतके रछपाला, तुमहीं छाँड़ि भजौं नहिं औरै ॥ २ ॥ तुम धरनीधर शब्द अनाहद, अमृत भाव करो प्रभु सगरे ॥३॥ तुम्हरी बिनय कहाँ लगि बरनों, धरमदास पद गहे है तुम्हरे ॥ ४ ॥

॥ शब्द २५ ।

जमुनियाँकी डारि सोरी तोड़ देव हो ॥ टेक॥ एक जमुनियाँके चौदह डारि, सार शब्द लेके मोड़ देव हो ॥ १ ॥ काया कंचन अजब पियाला, नाम बूटी रस घोर देव हो ॥२॥ सुरत सुहागिन गजब पियासी, अमृत रसमें बोर देव हो ॥ ३ ॥ सतगुरु हमरे ज्ञान जौहरी, रतन पदारथ जोरि देव हो ॥ ४ ॥ धरमदासकी अरज गुसाँई, जीवनकी बंदी छोर देव हो ॥ ५ ॥

॥ शब्द २६ ॥

मिहरबान है साहब मेरा। दिलभर दरसन पाऊँ तेरा ॥ १ ॥
तुम दाता मैं सदा भिखारी। देव दीदार जाऊँ बलिहारी ॥ २ ॥
करूँ बंदगी खिजमत दीजै। बकसो चूक दया बहु कीजै ॥ ३ ॥
सेवक तें बिगरै सौ बारा। सतगुरु साहेब लेइ उबारा ॥ ४ ॥
औगुन सेवक साहेब जानै। साहेब मनमें ना गिलानै ॥ ५ ॥
धर्मदास लइ तुम्हरि पनाह। अगले पछिले बकसु गुनाह ॥ ६ ॥

स्तोत्र उर्दूभाषा।

(स्वामी परमानन्दजी विरचित कबीर मन्सूरसे ॥)

किया सब जानपर रहमत जहाँदार। तू पुरुष सत शब्द सतके अमाँदार ॥ पडे हम भूल भवसागरमें आकर। न जाना भेद सत्पुरुष निराकार ॥ कहीं तीरथ कहीं मूरत पुजाया। कहीं खूनकत्लका जारी हुआ कार ॥ कहीं हनुमानो भैरव भूत पूजा। कहीं शिवलिङ्ग औ चण्डी गर्मबाजार ॥ कहीं खञ्जर कहीं छूरी चलाया। कहीं मुजंबह पै छूटीं खून पिचकार ॥ कहीं गरदन मरोड़ी झटका पटका। कहीं आतिशमें जलतें बलते जाँदार ॥ कहीं है चक्र भैरवका तमाशा। कहीं बकरे पै घूँसोंकी पड़ी मार ॥ कहीं रोजः कहीं मैं भङ्ग बूजः। कहीं गलकट बरहमन बैठे खूँखार ॥ कहीं मुर्गा है बिस्मिल हाथ कस्साब। कहीं चीखें सुअर कालीके दरबार ॥ कही है ढोल बजता ओ नकारः। कहीं मजमः है मर्दोजन जनाकार ॥ कहीं अश्वमेध गोमेध हो अजामेध। कहीं अहरमन बरहमन मर्दुमाजार ॥ कहीं मुल्ला व काजी ले छुरा हाथ। कहीं गरदन कुशीको तेज तलवार। कहीं रहमत कहीं जहमत दिखाया। पडे सब जीव धोखे धंधेके गार ॥ भरमका धर्म आलममें चलाया।

१ जबह करनेकी जगह–कसाइखाना।

कहीं नेक और कहीं है वद ब किरदार॥ हरी हर हर हरी हर कोई बोले। कोई कहता अहंब्रह्म सबका सरदार॥ कहांतक सो बयाँ कीजे सरापा। निरञ्जन खेलका नहिं वार औ पार॥ यह तीनों देव देवी सबके दाता। इन्हींके मर्दोंजन फरमान बरदार॥ फँसे वेद और शरणमें जीव सारे। नहीं महरम न ढूंढे कोई शब्द सार॥ दो लोक और वेद सूलीके सते हैं। लटकते उसके ऊपर जीव जम द्वारा॥ कि ज्यों सावनके घासोंसे छिपे राह। पुरुष सत्पंथ यों रोके हैं मक्कार॥ हमें रख लीजिये खुद जा पनहमें। तु बंदीछोड़ सब जीवनको आधार। बजुज सत्गुर हमारे कौन दे दाद। तुही है बरतरीं सब सिद्ध सालार॥ तुही सत्पुरुष खुद धर देह आया। शरण अपनीमें रखिये हमको इसबार॥ किया तदबीर सदहा योग जप हम। न छुटकारा हुआ अज दस्ते जब्बार। सिवा साया कदम तेरे न जाये। नहीं चारा कोई सूझे है नाचार॥ तुही बन्दः नेवाजः बन्दः परवर। सिवा तेरे न रह कोई है जिनहार॥ जियारत आपसे, यह संगे सोजा। हुआ हम सबके खातिर मिस्ल गुलजार॥ बचालीजे बचालीजे बचाले। हम आजिज कालके फँदे गिरफ्तार॥ कि सुन सतगुरुका कलमः आब हैवाँ। हुए हैं जिन्दः हम सब जीव मुर्दार॥ हुई शादी कदम कादिरकै देखे। बहर रुख होरही रहमत नमूदार॥ कि जर्रः खाक पाये परतव अफगन। हुए जाहिर व बाहर इल्म आसार॥ न तुझ-सा और कोई हर दो जहाँ में। तु आदमकी मुसीबतमें मददगार॥ हुआ बद हाल मुतगैय्यर हमारा। खबर लेनेको आये आप करतार॥ हुए हम भूलके मुजरिम तुम्हारे। गुनह वख्शो गुनह बखशिन्दः गफ्तार॥ सुबुक कीजे हमें इस बोझसे अब। हमारे सिर गुनाहोंका है अँबार॥ हमारे परदःको ढक मेह्र करके। तेराही नाम है मशहूर सत्तार॥ हम आजिज खाक हैं पा पाक तेरे। गुरूकी मेह्र पावें अस्ल इसरार॥

ऋषीश्वरोंका वचन

रामानन्दजी वचन (रामानन्दगोष्ठीसे)

कर्ता तुम ही साधु हौ, सत कवीर हौ देव ।
तनमन तुमको अरपिहौं, कुलदिक्षा मोहिं देव ॥

धर्मदास वचन ।

बाजा बाजे रहितका, परा नगरमें शोर ।
सद्गुरु खसम कवीर है, नजर न आवे और ॥

गोरखनाथ वचन ॥

नौनाथ चौरासी सिद्ध, इनका अनहद ज्ञान ।
अविचल घर कब्बीरका, यह गति बिरला जान ॥
झोरी झण्डा कूबरी, सेली टोपी साथ ।
दया भइ जब कवीरकी, चढायी गोरखनाथ ॥

नाभाजी वचन ।

वानी अरब व खरब हैं, ग्रंथाँ कोट हजार ।
कर्त्ता पुरुष कवीर है, नाभे किया विचार ॥

नानकशाह वचन राग महलापहला । ×

यक अर्ज गुफतम पेश तू दर गोश कुन करतार। हक्का कवीर करीम तू ऐब परवरदिगार ॥ दुनियाँ मुकाम फानी तहकीक दिलदानी। मन सर मूए इजराईल गिरफ्त दिल हेच न दानी ॥ जन पिसर बेरादर कस नेस्त दस्तम गीर । आखिर बयफ्तम कस नदारम चूँशब्द तकबीर ॥ शबोरोज गशतम दरहवा करदेम बदी खयाल। गाहे न नेकी कार करदम ई चुनीं अहवाल ॥ बदबख्त हमचू बखील गाफिल बेनजर बेबाक। नानक बगोयद जी तोरा तिरा चाकरा पाखाक ॥

मलूकदासजी वचन शब्द ।

जपो रे भाई साहब नाम कवीर। एक समय गुरु बंसी बजाई,

× नोट–इसका अर्थ परिशिष्ट में देखो ॥

कालिन्दीके तीर। सुरनर मुनि सब छकित भये हैं, अरु यमुनाजीको नीर ॥ काशी तजि गुरु मगहर आये, दोउ दीनको पीर। कोई गाडे कोई अग्नि जलावे, नेक न धरते धीर ॥ चार दागसे सद्गुरु न्यारा, अजरो अमर शरीर। जगन्नाथको मन्दिर थाप्यो, हटाके सायर नीर ॥ आसा रोप समुद्र हटाये, ऐसे गुरु गम्भीर। दास मलूक सलूक कहत है, कहो जो खसम कबीर ॥

दादूराम वचन साचके अङ्गकी साखियाँ

जै जै शरण कबीरके, तरगये अनन्त अपार। दादूगुण कीता कहै, कहत न आवै पार ॥ १॥ कबीर कर्ता आप है, दूजा नाहीं कोय। दादू पूरन जगतको, भक्ति दृढावन सोय ॥ २ ॥ ठीका पूरन होय जब, सब कोइ तजै शरीर। दादूकाल गँजे नहीं, जपै जो नाम कबीर ॥३॥ आदमकी आयू घुटै, तब जम घेरै आय। सुमिरन किये कबीरका, दादू लियो बचाय ॥ ४ ॥ मेट दिया अपराध सब, आय मिले छनमाँह। दादूको सँग ले चले, कबीर चरणकी छाँह ॥५॥ सेव देव निज चरणकी, दादू अपना जान। भृङ्गी सत्यकबीरके, कीन्हा आप समान ॥ ६ ॥ दादू अधम अनेक हैं, भगत दानपत हीन। साहब कबीर सहजमें, ताहि अपन कर लीन ॥ ७॥ दादू अन्तरगत सदा, छिन छिन सुमिरन ध्यान। वारूँ नाम कबीर पर, पल पल मेरा प्रान ॥८॥ सुन सुन साखि कबीरकी, मग्न भया मन मोर। दादू थाके खोजके, जैसे चन्द्र चकोर ॥ ९ ॥ सुन सुन साखि कबीरकी, काल नवावे माथ। धन्य धन्य तिन लोकमें, दादू जोडै हाथ ॥ १० ॥ केहरि नाम कबीरका, विषम काल गजराज। दादू भजन प्रतापते, भाजे सुनत अवाज ॥ ११ ॥ पलहिं नाम कबीरका, दादू मन चित लाय। हस्तीके असवारको, श्वान काल नहिं खाय ॥ १२ ॥ सुमिरत नाम

कबीरका, कटै कालकी पीर। दादू दिन दिन ऊपजे, परमानंद सुख सीर॥ १३॥ दादू नाम कबीरका, जो कोइ लेय ओट। तिनको कबहुँ न लागई, काल वज्रकी चोट॥१४॥ और सन्त सब कूप हैं, केते सरिता नीर। दादू अगम अपार है, दरिया सत्यकबीर॥१५॥ हिन्दू अपनी हद चलें, मुसलमान हद माँहि। दादू चाल कबीरकी, दोउ दीनमें नाँहि॥१६॥ हिन्दूके सद्गुरु सही, मुसलमानके पीर। दादू दोनों दीनमें, अदली नाम कबीर॥१७॥ अबही तेरी सब मिटै, जन्म मरनकी पीर। सास उसासा सुमिरले, दादू नाम कबीर॥१८॥ कोई रीझा सगुनमें, कोइ निर्गुन ठहराय। दादू गति कबीरकी, मोते कही न जाय॥१९॥भवजलतारन जीवको, खेवट आय कबीर। अनन्त कोट सुख भावसे, दादू उतरे तीर॥२०॥

मुखसे ज्ञान कबीरका, कोई कह समुझाय। दादू वाको चरणरज, लइहों शीश चढाय॥२१॥ नाम कबीर जो नर जपै, मैं बलिहारी ताहि। तन मन वारूँ तासु पर, दादू प्रान लगाय॥२२॥ सुमिरत नाम कबीरका, जिह्वा मोर सुखाय। विरह अग्नि तनमें तपै, दादू कौन बुझाय॥२३॥ दादू नाम कबीर का सुनिके काँपे काल। नाम भरोसे नर चले, बङ्क न होवे बाल॥२४॥ जिन मोको निज नाम दई, सद्गुरु सोइ हमार। दादू दूसर कौन है, कबीर सिरजनहार॥ २५॥ कबीर साहब कह गये, ढोल बजाय बजाय। दादू दुनियाँ बावरी, ताके सङ्ग न जाय॥२६॥ दादू बैठि जहाज पर, गये समुद्दर तीर। जलमें मच्छी जो रहैं, कहैं कबीर कबीर॥२७॥ स्वाती शब्द कबीरका, सुरति जो सीप विचार। दादू तन मन जोडके, लेत बूँद अनुसार॥ २८॥ स्वाती शब्द कबीरका, चात्रक मन बहु आस। दादू और पिवै नहीं, स्वाति बूँदकी प्यास॥ २९॥ स्वाती शब्द कबीरका, सो हम पिया अघाय। मनकी

प्यासा सब मिटी, दादू रहे समाय ॥३०॥ जैसे मिरगा नाद सुन, तन मन भूले प्रान। दादू भूले देह गुन, सुनि कबीरको ज्ञान ॥३१॥ केवल नैन कबीरका, उज्ज्वल रूप अनूप। दादू अन्तर निर्मला, देखे सहज सरूप ॥३२॥ शोभा देखि कबीरकी, नैन रहे ललचाय। कहा कहूँ छबि रूपकी, दादू कही न जाय ॥ ३३ ॥ एके रोम कबीरका, कोटिभानु छबि छाय। दादू कौतुक चन्द ते, शीतलता अधिकाय ॥३४॥ बन्दौं चरण कबीरके, कोटि बार पल माँहि। दादू हवस मनमें रही, कोटिक रसना नाँहि ॥ ३५ ॥ कोटि कर्म पलमें कटैं, नाम कबीर जो लेइ। दादू सच्चे होत है, सुफल मनोरथ देइ ॥३६॥ परमारथके कारने, आप स्वारथी नांहि। कबीर आये भगति लै, दादू भवजल मांहि ॥ ३७ ॥ भगति करै संसारमें, युग युग नाम धराय । दादू तारन जीवको, काशी प्रगटै आय ॥ ३८॥ बहुत जीव अटके रहे, बिन सद्गुरु भव मांहि। दादू नाम कबीर बिन, छूटे एको नांहि ॥ ३९ ॥ सद्गुरु बहियाँ जीवको, मंझधार भवसिन्ध। दादू नाम कबीरका, छोड आवे भवफंद ॥४०॥ साचा शब्द कबीरका, मीठा लागै मोय। दादू सन्ता परम सुख, कीता आनंद होय ॥ ४१ ॥ साचा शब्द कबीरका, सब सुखदाई सोय। दादू गुरु परतापते, किता भरोसा होय ॥४२॥ साचा शब्द कबीरका, सन्त सुनो चित लाय । दादू भ्रम सब मिट गया, कर्मकाल नहिं खाय ॥४३॥ साचा शब्द कबीरका, सबको होय सहाय। रोग दुःख त्रिताप सब, दादू दूर पराय ॥ ४४ ॥ साचा शब्द कबीरका, तोल मोलमें नाँहिं । दादू दूसर ना मिलै, जो खोजे घट माँहिं ॥ ४५ ॥ साचा शब्द कबीरका, युग युग अटल अभूल । दादू पावे पारखू, परम पुरुष निजमूल ॥ ४६ ॥

गरीबदासजीकी साखियाँ

नमो नमो सत्पुरुषको, नमस्कार गुरु कीन। सुरनर मुनि जन साधुवा, सन्तों सर्वश दीन॥ १॥ पुर पट्टन सतलोक है, अदली सद्गुरु सार। भगति हेत सो ऊतरे, पाया हम दीदार॥ २॥ ऐसा सद्गुरु हम मिला, सुन्न बिदेशी आप। रोम रोम परकाश है, दीना अजपा जाप॥३॥ ऐसा सद्गुरु हम मिला, सुरत सिंधुके सैन। उर अन्तर परकाशिया, अजब सुनाये बैन॥ ४॥ ऐसा सद्गुरु हम मिला, सुरत सिंधुके नाल। गौन किया सतलोकसे, अनल पंखकी चाल॥५॥ ऐसा सद्गुरु हम मिला, सुरत सिंधुके तीर। सब संतन शिरताज है, सद्गुरु अटल कवीर॥ ६॥ ऐसा सद्गुरु हम मिला, बे परवाह अबंध। परम हंस पूरन पुरुष, रोम रोम रविचंद॥ ७॥ ऐसा सद्गुरु हम मिला, है जिन्दा जगदीश। सुन्न विदेशी मिल गया, छत्र मुकुट है शीश॥ ८॥ जिन्दा जोगी जगत गुरु, मालिक मुरशिद पीव। कालकरम लागै नहीं, संका नाहीं शीव॥ ९॥ जिन्दा जोगी जगत गुरु, मालिक मुरशिद पीर। दुहूँ गरीब झगरा पडा, पाया नहीं शरीर॥ १०॥ ऐसा सद्गुरु हम मिला, तेज पुंजको अङ्ग। झिलमिल नूर जहूर है, रूप रेख नहिं रङ्ग॥ ११॥ ऐसा सद्गुरु हम मिला, खोले वज्रकपाट। अगम भूमिकी गम करे, उतरे औघट घाट॥ १२॥ सद्गुरु मारचो बान कसि, गहवर गाँसी खींच। करम भरम सबही लिये, ज्ञानीको बुधि ईंच॥ १३॥ सद्गुरु आय दया करि, ऐसे दीन दयाल। बन्दीछोर विरद किया, जठरअग्नि प्रतिपाल १४॥ यम जोरा जासे डरे, धरमराय धर धीर। ऐसा सद्गुरु एक है, अदली अदल कवीर॥१५॥ यम जोरा जासे डरे, मिटे करमको रेख। अदली अदल कवीर है, कुलका सद्गुरु एक॥ १६॥

ऐसा सद्गुरु हम मिला, भवसागरके बीच। खेवट सबको खेवता, क्या उत्तम क्या नीच ॥ १७ ॥ मायाको रस पीयके, डूब गये दो दीन। ऐसा सद्गुरु हम मिला, ज्ञान योग परवीन ॥ १८ ॥ साहबसे सद्गुरु भये, सद्गुरुसे भय साध। ये तीनों एक अङ्ग हैं, गति कुछ अगम अगाध ॥ १९ ॥ अंधे गूँगे गुरु घने, लोभी लँगडे लाख। साहबसे परिचय नहीं, काहि बनावैं साख ॥ २० ॥ ऐसा सद्गुरु सेविये, शब्द समाना होय। भौसागरमें डूबते, पार लँघावें सोय ॥ २१ ॥ सद्गुरु पूरण ब्रह्म है, सद्गुरु आप अलेख। सद्गुरु रमता राम है, यामें मीन न मेख ॥ २२ ॥ बङ्कनालके अन्तरै, तिरवेणीके तीर। जहँ मुहिं सद्गुरु ले गया, बन्दीछोड कवीर ॥ २३ ॥ शून्यमण्डल अनुराग है, शून्यमण्डल रह थीर। दास गरीब उधारिया, बन्दीछोड कवीर ॥ २४ ॥ या सुखते सुख संख गुण, ब्रह्म शब्दके माँहि। सद्गुरु मिले कवीरसे सत्यलोक ले जाँहि ॥ २५ ॥ जैसे बादल गगनमें, चलते हैं बिन पाँय। ऐसे पुरुष कवीर हैं, शून्यमें रहे समाय ॥ २६ ॥ गगनमण्डलसे ऊतरे, साहब पुरुष कवीर। चोला धरा खवासका, तोडे यम जञ्जीर ॥ २७ ॥ आदौ आदि कवीर है, चौदह भुवन विशाल। हीरे मोती बहुत हैं, कवीर लालनके लाल ॥ २८ ॥ ऐसा निर्मल ज्ञान है, निर्मल करे शरीर। और ज्ञान मण्डल सबै, चक्वे ज्ञान कवीर ॥ २९ ॥

चौपाई।

दास गरीब कवीर को चेरा। सत्य लोक अमरपुर डेरा।
अमृत पान अमिय रस चोखा। पीवे हंसा नाहीं धोखा ॥

गोसांई गरीब दासजीकी ब्रह्मवेदी।

नमो नमो सत पुरुषको, नमस्कार गुरु कीन्ह। सुरनर मुनिजन

साधवा, संतो सर्वस दीन्ह ॥ अनंत कोट ब्रह्माण्डमें, बन्दीछोर कहाय। सो तो पुरुष कवीर है, जननी जनी न माय ॥

ब्रह्म बेदी।

गैबी ख्याल विशाल सतगुरु, अचल दिगम्बर थीर है। भक्त हेत काया धरि आये, अविचल सत्य कवीर है ॥ १ ॥ नानक दादू अगम अगाधू, तरे जहाज खेवट सही। सुख सागरके हंस आये, भक्त हिरम्बर उर गही ॥ २ ॥ कोटि भान परकाश पूरन, रूम रूमकी लार है। अचल अभंगी है सत्संगी, अविगतका दीदार है ॥ ३ ॥ धन सतगुरु उपदेश देवा, चौरासी भ्रम मेटई। तेज पुंज तन देह धरिके, इस विधि हमको भेटई ॥ ४ ॥ सबद निवास अकास वानी, यह सतगुरुका रूप है। चन्द सूर नहिं पवन पानी, ना जहँ छाया धूप है ॥ ५ ॥ रहिता रमिता राम साहब, अविचल अलह अलेख है। भूले पंथ विटम्बवादी, कुलका खाविंद एक है ॥ ६ ॥ रोम रोममें जाप जपिले, अष्ट कमल दल मेल है। सुरत निरतके कमल बैठो, जहां दीपक बिन तेल है ॥ ७ ॥ हरदम खोज हनोज हाजिर, तिरबेनीके तीर है। दास गरीब तबीन सतगुरु, बन्दीछोर कवीर है ॥ ८ ॥

गरीबदासजीकी पारखअङ्गकी कुछ साखियां।

काशीपुरको कस्द किया, उतरे अधर अधार। मोमिनका मुजरा हुआ, जंगलमें दीदार ॥ १ ॥ कोटि किरन शशि भानु सुधि, आसन अधर विमान। परसत पूरण ब्रह्मको, शीतल पिण्ड औ प्रान ॥ २ ॥ गोद लिया मुख चूमके, हेम रूप झलकन्त। जगर मगर काया करे, दमके पद्म अनन्त ॥ ३ ॥ काशी उमडी गुल भया, मोमिनका घर घेर। कोई कह ब्रह्मा विष्णु है, कोई कह इन्द्र कुबेर ॥ ४ ॥ कोई कह वरुण धरमराय है, कोइ कोइ कहता

ईश। सोलह कला सुभान गति, कोई कहे जगदीश॥ ५॥ भगति मुक्ति ले ऊतरे, मेटन तीनों ताप। मोमिन घर डेरा लिया, कहे कबीरा बाप॥ ६॥ दूध न पीवे नहिं अन्न भखे, नहिं पलने झूलन्त। अधर आसन है ध्यानमें, कमल खिला फूलन्त॥ ७॥ कोई कहे छल, ईश्वर नहीं, कोई किन्नर कहलाय। कोई कहे गुण ईशका, ज्यों ज्यों मारे साय॥ ८॥ काशीमें अचरज भया, गयी जगतकी निन्द। ऐसे दुलहा ऊतरे, ज्यों कन्या बरबिन्द॥ ९॥ खल्क मुल्क देखन गया, राजा परजा रीति। जम्बूद्वीप जहानमें, उतरे शब्द अतीति॥ १०॥ दुनी कहे यह देव है, देव कहे यह ईश। ईश कहे परब्रह्म है, पूरन बिस्वेबीस॥ ११॥ काजी गये कुरान ले, धर लडकेको नाँउ। अच्छर अच्छरमें फुरे, धन्य कबीर बल जाउँ॥ १२॥ सकल कुरान कबीर है, हरफ लिखे जो लेख। काशीके काजी कहें, गयी दीनकी टेक॥ १३॥ शिव उतरे शिवपुरीसे, अविगत वदन विनोद। महके कमल खुशी भया, लिया ईशको गोद॥ १४॥ नजर नजरसे मिल गयी, किया दरश परनाम। धन्य मोमिन धन्य पूरना, धन्य काशीनिष्काम॥ १५॥ सात बार चर्चा करे बोले बालक बैन। शिव सो कर मस्तक धर्‍यो, ला मोमिन यक धेनु॥ १६॥ अनब्यावरको दुहतही, दूध दिया ततकाल। पियो बालक ब्रह्म गति, वहाँ शिव भये दयाल॥ १७॥ षष्ट मासके जब भये, नित दुनिया वर देहि। चरण चले तत पुरीमें, यहि शिक्षा निति लेहि॥ १८॥

रामानन्द स्वामी और कबीर साहबकी वार्तालापका वृत्तान्त।

भक्ति द्राविड देशथी, यहाँ नहीं यक रञ्च। ऊत भूतको ध्यावना, पाखण्ड और परपञ्च॥ १९॥ रामानंद अनन्द भये, काशी नगर मँझार। देश द्राविड छाडिके, आये पुरी विचार॥ २०॥ योग युक्ति

प्राणायाम करि, जीता सकल शरीर। तिरवेणीके घाटमें, अटक रहे बलबीर ॥ २१ ॥ तीरथ वरत इकादशी, गंगोदक अस्नान। पूजा विधि विधानसो, सर्व कलासों गान ॥ २२ ॥ करे मानसी सेव नित, आत्मतत्त्वको ध्यान। षट पूजा आदि भेद गति, धूप औ दीप विधान ॥ २३ ॥ चौदह सौ चेले किये, काशीनगर मँझार। चार सम्प्रदा चलत हैं, औरो बावन द्वार ॥ २४ ॥ पांच बरसके जब भये, काशी माहिं कबीर। दास गरीब अजीब कला, ज्ञान ध्यान गुण थीर ॥२५॥ गुल काशीपुरिमें भया, अटपट बैन विहंग। दास गरीब गुणी थके, सुनि जोलहा परसंग ॥ २६ ॥ रामानन्द अधिकार है, सुनि जोलहा जगदीश। दास गरीब विलंबना, ताहि नवावत शीश ॥ २७ ॥ रामानन्दको गुरु कहै, तनसे नहीं मिलाय। दास गरीब दरस भये, पैयन लगी जो लाय ॥ २८ ॥ पन्थ चलत ठोकर लगे, राम नाम कहि दीन। दास गरीब कसर नहीं, सीख लिये परवीन ॥२९॥ आडा परदा देइके, रामानन्द बुझन्त। दास गरीब उलंग छबि, अधर डाक कूदन्त ॥ ३० ॥ कौन जाति कुल पन्थ है, कौन तुम्हारा नाउँ। दास गरीब अधीन गति, बोलतही बलि जाउँ ॥३१॥ जाति हमारी जगदगुरू, परमेश्वर पद पन्थ। दास गरीब लिखत परे, नाम निरञ्जन कन्थ ॥ ३२ ॥ रे बालक दुर्बुद्धि सुनु, घट मठ तन आकार। दास गरीब दर दर लगे, बोले सिरजनहार ॥ ३३ ॥ तू मोमिनके पालुवा, जुलहेके घर बास। दास गरीब अज्ञान गति, एता दृढ विश्वास ॥ ३४ ॥ मान बडाई छाडिके, बोलौ बालक बैन। दास गरीब अधम सुखी, इतना तुम घर फैन ॥३५॥ कलियुग क्षेतरपाल है, क्या भैरो कोई भूत। दास गरीब विडंबना, गया जगत सब ऊत ॥ ३६ ॥ मनी मग्ज माया तजो, तजिये मान गुमान। दास गरीब सो बात कहि

नहिं पावेगो जान ॥ ३७ ॥ हे बालक बुधि तोरि गति, कौडी साखन भाँड । दास गरीबहि हदेसकरि, नहिं लेवेंगे डाँड ॥३८॥ शाह सिकन्दरके बधे, पग ऊपर तर शीश । दास गरीब अगाध गति, तोर कहा जगदीश ॥ ३९ ॥ कान काट बूचा करे, नली भरत रे नीच । दास गरीब जहानमें, तुम सर जोरा मीच ॥४०॥ मरत मरत सब जग मुवा, लखै न इस्थिर ठौर । दास गरीब जहानमें, तुमसा नीच न और ॥ ४१ ॥ नादबिन्दकी देहमें, येता गर्व न कीन । दास गरीब पलक फना, जैसे बुद बुद लीन ॥ ४२ ॥ तिर कतलोंसे बोलते, रामानन्द सुजान । दास गरीब कुजाति है, आखिर नीच निदान ॥ ४३ ॥ नीच मीचसे ना डरे, काल कुलहाड अशीश । दास गरीब अदत्त है, तैं जो कहा जगदीश ॥ ४४ ॥ जडिहों हाथ हथकडी, गले तौक जञ्जीर । दास गरीब परख बिना, यह वाणी गुणगीर ॥४५॥ परख निरख नहिं तोहिको, नीच कुलीन कुजात । दास गरीब अकल विना, तू जो कह यह बात ॥४६॥ हे बालक नीची कला, तुमही बोलो ऊँच । दास गरीब पलक धरि, खबर नहीं हम कूँच ॥ ४७ ॥ महँके वरन खलास करि, सुन स्वामी परवीन । दास गरीब मनी मरी, मैं आजिज आधीन ॥ ४८ ॥ मैं अविगत गतिसे परे, चारवेदसो दूर । दास गरीब दशो दिशा, सकल सिंधु भरपूर ॥४९॥ सकल सिंधु भरपूर हूँ, खालिक हमरो नाउँ । दास गरीब अजात हूँ, तेजि कहा बलि जाउँ ॥ ५० ॥ जात पाँत मेरे नहीं, नहिं बस्ती नहिं गाउँ । दास गरीब अनन्य गति, नहीं हमारे नाउँ ॥ ५१ ॥ नाद बिन्द मेरे नहीं, नहीं गोद नहिं गात । दास गरीब शबद सजग, नहीं किसीका साथ ॥ ५२ ॥ सब सङ्गी बिछुरू नहीं, आदि अन्त बहु जाँहि । दास गरीब सकल बसौं, बाहर भीतर

माँहि॥९३॥ हे स्वामी मैं सृष्टिमें, सृष्टि हमारे तीर। दास गरीब अधर बसूँ, अविगत पुरुष कवीर॥९४॥ अनन्त कोटि सलिता बड़ो, अनन्त कोटि घर ऊँच। दास गरीब सदा रहूँ, नहीं हमारे कूँच ॥ ९५ ॥ पुहमी धरनी अकाशमें, मैं व्यापक सब ठौर। दास गरीब न दूसरा, हम समतूल नहिं और॥९६॥ मैं माया मैं काल हूँ, मैं हंसा मैं बंस। दास गरीब दयाल हम, हमहीं करें विध्वंस॥९७॥ ममता माया हम रची, काल जाल सब जीव। दास गरीब प्राण पद, हम दासातन पीव॥९८॥ हम दासनके दास हैं, कर्ता पुरुष करीम। दास गरीब अवधूत हम, हम ब्रह्मचारी सीम ॥ ९९ ॥ हम मौला सब मुल्कमें, मुल्क हमारे माहिं। दास गरीब दलाल हम, हम दूसर कछु नाहिं॥६०॥ हम मोती मुक्ताहल, हम दरिया दरवेश। दास गरीब हम नित रहें, हम तजि जात हमेश॥६१॥ हमहीं लाल गुलाल हैं, हम पारस पद सार। दास गरीब अदालतँग, हम राजा संसार॥६२॥ हम पानी हम पवन हैं, हमहीं धरणि अकाश। दास गरीब तत्त्वपंजमें, हमहीं शब्द निवास ॥ ६३ ॥ सुन स्वामी सत भाषहूँ, झूठ न हमरो रञ्च। दास गरीब हम रूप बिन, और सकल परपञ्च॥६४॥ हम रोवत हैं सृष्टिको, जो रोवति है मोहिं। दास गरीब वियोगको, और न बूझे कोइ॥६५॥ मैं बूझूँ मैंही कहूँ, मैंही किया वियोग। गरीब दास गलतान हम, शब्द हमारा योग ॥ ६६ ॥ चारो रुकुनमें हम फिरें, नहिं आवें नहिं जावँ। गरीब दास गुरु भेदसे, लखे हमारा ठावँ ॥ ६७ ॥ रजगुण सतगुण तमगुण, रजबीरज हम कीन्ह। गरीबदास हम सकलमें, हम दुनियाँ हम दीन॥६८॥ लगी महम गनीम पर, काल कटक कटकन्त। गरीबदास निर्भय करूँ, जो कोइ नाम जपन्त॥६९॥ मैं बालक मैं वृद्ध हूँ, मैंही

जवान जमान। गरीबदास निज ब्रह्म हूँ, हमहीं चारों खान॥७०॥ गगन सुन्य गुप्ता रहूँ, हम परगट परवाह। गरीबदास घट घट बसूँ, विकट हमारी राह॥ ७१ ॥ आवत जात न दीसहूँ, रहता सकल समीप। गरीबदास जल तरङ्ग ज्यों, हमहीं सायर सीप ॥ ७२ ॥ गोता लाऊँ स्वर्गमें, फिर पैठूँ पाताल। गरीबदास ढूँढत फिरूँ, हीरे माणिक लाल ॥ ७३ ॥ इस दरिया कङ्कर बहुत, लाल कहीं कहिं ठाउँ। गरीबदास माणिक चुगूँ, हम मरजीवा नाउँ ॥ ७४ ॥ बोले रामानन्दजी हम घर बड़ा सुकाल। गरीबदास पूजा करें, मुकुट फई जद माल ॥ ७५ ॥ सेवा करो सम्हालके, सुन स्वामी सुरज्ञान। गरीबदास सिरधर मुकुट, माला अटकी जान॥७६॥ स्वामी घुण्डी खोलके, फिर माला गर डार। गरीबदास इस भजनको, जानत है करतार॥७७॥ ज्योढी परदा दूर कर, लीना कण्ठ लगाय। गरीबदास गुजरी बहुत, बदनन बदन मिलाय ॥ ७८ ॥ मनकी पूजा तुम लखी, मुकुट माल परवेश। गरीबदास किनको लखे, कौन वरन क्या भेष॥७९॥ यह तो तुम शिक्षा दयी, मान लिये मन मोर। गरीबदास कोमल पुरुष, हमरो बदन कठोर॥८०॥ हे स्वामी तुम स्वर्गको, छाडो आशा रीत। गरीबदास तुम कारणे, उतरे शब्द अतीत॥८१॥ सुन बच्चा मैं स्वर्गकी, कैसे छाडूँ रीत। गरीबदास गुदडी लगी, जन्म जात है बीत॥ ८२ ॥ चार मुक्ति वैकुण्ठमें, जिनकी मोरे चाह। गरीबदास घर अगमके, कैसे पाऊँ थाह॥८३॥ हेम रूप जहाँ धरणि है, रत्न जडे बहु सोभ। गरीबदास वैकुण्ठको, तन मन हमरो लोभ ॥ ८४ ॥ शंख चक्र गदा पद्म है, मोहन मदन मुरारि। गरीबदास मुरली बजै, स्वर्ग लोक दरबार ॥ ८५ ॥ दूधोंकी नदियाँ बहैं, श्वेत वृक्ष शोभान। गरीबदास मन्दिर मुकुत,

स्वर्गपुरी अस्थान ॥ ८६ ॥ रतन जडाऊ मनुष सब, गण गंधर्व सब देव । गरीबदास उस धामकी, कैसे छाडूँ सेव ॥ ८७ ॥ चार वेद गावें उसे, सुरनर मुनी मिलाप। गरीबदास ध्रुव पुर जस, मिटिगये तीनों ताप ॥ ८८ ॥ नारद ब्रह्मा यश रटें, गावें शेष गणेश। गरीबदास वैकुण्ठसे, और परे को देश॥८९॥ सुनु स्वामी निज मूल गति, कहि समझाऊँ तोय । गरीबदास भगवानको, राखा जगत समोय॥९०॥ तीन लोकके जीव सब, विषय बासना भाय । गरीबदास हमको जपैं, तिसको धाम दिखाय ॥ ९१ ॥ कृष्ण विष्णु भगवानके, जहाँ गये हैं जीव। गरीबदास त्रिलोकमें, काल कर्म्म सर शीव ॥ ९२ ॥ सुनु स्वामी तो सों कहूँ, अगम द्वीपकी सैल। गरीब दास डूबे परे, पुस्तक लादे बैल ॥ ९३ ॥ कहु स्वामी कहँ रहोगे, चौदह भुवन बिहण्ड। गरीब दास बीजक कहाँ, चलत प्राण औ पिण्ड ॥९४॥ बोलत रामानन्दजी, सुन कबीर करतार । गरीब दास सब रूपमें, तुमहीं बोलनहार॥९५॥ तुम साहब तुम सन्त हो, तुम सद्गुरु हम हंस। गरीबदास तुम रूप बिनु, और न दूजो बंस॥९६॥ मैं भक्ता मुक्ता भया, किया कर्म्म कुल नाश। गरीबदास अविगत मिले, मेटी मनकी प्यास॥९७ दोनहु ठौरमें एक तू, भया एकसे दोय। गरीबदास हम कारने, उतरे मगहर जोय॥९८॥ बोले रामानन्दजी, सुन कबीर सुजान। गरीबदास मुक्त भयो, उधरे पिंड औ प्रान॥९९॥ गुष्टी रामानन्दसे, काशी नगर मँझार। गरीबदास जिंद पीरकी, हम पाये दीदार॥१००

कबीर उक्ति धर्मदासप्रति ।

(गो. गरीबदास वचन ।)

हम साहब सतपुरुष हैं, यह सब रूप हमार। जिन्द कहे धर्मदाससे, सत्य शब्द घनसार ॥ १०१ ॥ सकल सृष्टिमें रमि रहा, हूँ सब जात अजात । गरीबदास जिन्दा कहे, मेरे दिवस

न रात ॥ १०२ ॥ बोले जिन्द कबीरजी, सुनु वानी धर्मदास। हम खालिक हम खलक हैं, सकल हमार प्रकास ॥ १०३ ॥ गरुडबोध बेदी रची, रामकृष्ण हैरान। लंकापर धाये जबे, तबका करूँ बखान ॥ १०४॥ दुर्वासा मुनि इन्द्रको, हुआ ज्ञान सम्वाद। दत तत्त्वमें मिल गये, जाघर वेद न वाद ॥ १०५ ॥ सिख बन्दी सतगुरु सही, चकवे ज्ञान अमान। शीश कटा मन्सूरका, फेर दिया जिवदान ॥ १०६ ॥ नाभाको सतगुरु मिले, देवल नेका फेर। पिंडा तो इतही रहा, शब्द कहा हम टेर ॥ १०७ ॥ रवी रसायन पीवते, झूले धरे अनन्त। चलत बार पाये नहीं, धन सतगुरु भगवन्त ॥ १०८ ॥ ऐसी संगति जो मिले, भक्ति गही प्रह्लाद। नारदसे सतगुरु मिले, सूझी अगम अगाध ॥ १०९॥ चार मुक्ति वैकुंठ बट, सप्तपुरी सैलान। आगे धाम कबीरका, हंस न पावें जान ॥ ११०॥ काया काशी मन मगहर, दोउके मध्य कबीर। काशी तज मगहर गये, पाया नहीं शरीर ॥ १११ ॥ काया काशी मन मगहर, दोउके बीच मुकाम। जहाँ जुलहदी घर किया, आदि अंत विसराम ॥ ११२॥ नौ लख नानक नादमें, दस लख गोरख तीर। लाख दत्त संगत सदा, चरनो चरच कबीर ॥ ११३ ॥ नौ लख नानक नादमें, दस लख गोरख पास। अनंत संत पदमें मिले, कोटि तैरे रैदास ॥ ११४ ॥ रामानन्दसे लक्ष गुरु, तारे शिष्यके भाय। चेलाकी गिन्ती नहीं, पदमें रहे समाय ॥ ११५॥ खोजी खालकमें मिले, ज्ञानीके उपदेश। सतगुरु पीर कबीर हैं, सब काहू परवेश ॥ ११६ ॥ मीरा बाई पद मिली, सतगुरु पीर कबीर। देह छतां लौलीन हुइ, पाया नहीं शरीर॥ ११७॥

सद्गुरुकी स्तुति।

मुसद्दस।

मालूम हुआ वेद व कुरआँकी रकमसे। जाहिर है तेरी हमद वंसना अहले कलमसे॥ क्या किल्क लिखे हीमःगो बागे अरमसे। दुनियामें न कोई वाकिफ है वस्ले सनमसे॥ जो कुछ नजर आता है सो तेरेही करमसे। सब इलमो अमल बरकत सद्गुरु के कदमसे १

जुजसायःकदम तेरे न इनसाँ का गुजारा। तदबीर नहीं तेरे शरणका है सहारा॥ लिखते तेरी औसाफ लगे बहा किनारा। दिलदिदः रौशन करे मजमूँ हमारा॥ पैदा कलम हरकत तुझ दीदः दमसे। सब इलम व अमल बर्कत सतगुरुकी कदमसे॥२॥

है कौनसा बाजार तेरा इश्क जहां है। है कौन फिरोशिन्दः खरिदार कहाँ है॥ हमराज कोई आशिके जाँबाज वहां है। जिस रम्ज की फहमीदको सर सिदकः शहाँ है॥ सो हाथ लगे कोई न दीनार दिरम है। सब इलमो अमल बर्कत सतगुरुकी कदमसे॥ ३॥

आई है जहां जेह्र सो खुरशैद झलक है। सब तार फना जरंःपा नूर झलक है॥ उमीद न कुछ आदम और जिन्नो मलिक है। है जाँ अमाँ बख्श तुही फितनः फलक है॥ जुज तेरे न महरम कोई इन्सानके धरमसे। सब इलमों अमल बरकत सद्गुरु की कदमसे॥ ४॥ तू रहबर हो जिसकी करे रहनुमाई। फिलफौर सोई खुदमें लिया देख खुदाई॥ हरजा तू है तुही है तुही अर्ज समावी। सदहा खाते गोता न इसरार सो पाई॥ है फज्ल तेरा आजिजकी दीदः नम से। सब इलम व अमल बर्कत सतगुरुकी कदमसे॥ ५॥

गजल प्रारम्भः।

बुल बुलाँ मुजदए बहार आया। इसके साथही पयाम यार आया ॥ आह व नालेके दिन गये हैं गुजर। दिल परागन्दा बरकरार आया ॥ खुल्द और जन्नते जिनाँ क्या जान। दिन बशाशतका बेशुमार आया ॥ शोर बख्तीके दिन गये हैं गुजर। नेकबख्तीका रोजगार आया ॥ मिहर मुरशद कबीर जिस पर हो। उसको है भेद वार पार आया ॥ फिर न कोई दवा दविश आजिज। हाथमें अपने जब शिकार आया ॥ १ ॥

नखले मुहब्बतका समर मुझको दिखा ऐ बागवां। तेरे बागमें उल्फते शिजर मुझको दिखा ऐ बागवाँ ॥ शफकत किया जो निहाल पर ताजा किया तौ पालकर। भूला करम क्यों टालकर मुझको बता ऐ बागवां ॥ सब खारो खसको खींचकर पाला है तूने सींचकर। बैठा क्यों आंखे मींचकर मुझको बता ऐ बागवां॥ खुद बागमें शामिल किया और पालकर कामिल किया। फिर काटना क्यों दिल दिया मुझको बता ऐ बागवां॥ आजिज पडा आजिज पडा ऊँधा हुआ पानी घडा। तुझ बिन भरे फिर कौन आ मुझको बता ऐ बागवां ॥ २ ॥

बागवां बाग कुहनमें तेरे अशजार जिते। कोई है समर बख्श हैं पुर खार किते ॥ तुही खालिक तुही मालिक सभी तहरीक तेरी। तू शाहन्शाह जहाँ फौजके सरदार किते ॥ सभी महकूम तेरे हाकिमे आला है तूही। तुही सरकार बडा छोटे हैं सरकार किते ॥ है हयात अबदी उनको जिसे तू बख्श अमाँ। जिन्दा है कोई कोई और हैं मुरदान किते॥ आलमोंका तु खुदाबन्द फिक्र सबकी तुझे। सबका दिलवर है तुही और हैं दिल्दार किते ॥ नाम लेते हैं बहुत लोग तेरी दुनियामें। हंस है कोई कोई और

बूतेमार किते ॥ आसमाँ और जमीं काँपते कबीर कहे। आशिकको खबर गो कि खबरदार किते॥ पेशकश हाथ सर अपना ले गली यारमें आ । बेकीमतके वस्ल खरीदार किते ॥ जिस्को तू अमल बख्श है अलमस्त सोई। बे नशः के छूटे हैं सरशार किते॥ सबका है खुदा तुही खुदाबन्दा नेक। बे बहा तू है समर बख्श समर बार किते ॥ आजिजको चखा लज्जते उल्फत ऐ गुल। गोबुलबुलो सद जानिबे हरचार किते ॥ ३ ॥

बुलबुलो खिजां गया अब आया है दिन बहार । गा गीत चहचहे सदा कर लै लोनेहार ॥ गुल्शनमें जाके मग्ज मुअत्तर कर अपनेको। क्या क्या है हुस्न खूब खिले गुल हैं पुर कत्तार॥ कह जाग बूम शूम से अब दूर भागजा । खूबोंकी खूबियां तेरी आंखोंमें लगते खार॥ वह वक्त क्या मुबारक व सायत सईद है। खुद वक्त बख्श आशिको माशूक दर किनार ॥ साहब कबीर होवे मिह्रबां जिस ऊपर । बे मिहनत सो आजिज हो दरिया पार ॥ ४ ॥

तुम साहब रहमान हो अगली मिहर मत छोडिये। दया धरमके खान हो अगली मिहर मत छोडिये॥ हम तो हैं दायम पुर खता इल्मो अमल कीजे अता । दुनियां व दीन सुल्तान हो अगली मिहर मत छोडिये ॥ हम इल्मो अक्लमें हेच हैं जम कालके दर पेच हैं। तुम जल्लेआलीशान हो अगली मिहर मत छोडिये ॥ जान बख्श मुर्दा लाशका पर्दः ढकें कल्लाशका । तुम आलमीं खाकान हो अगली मिहर मत छोडिये॥ नाचार आजिज जिऊ हम सामाँ नहीं कोई बहम। तुम साहबे सामान हो अगली मिहर मत छोडिये ॥ ५ ॥

दुशमन दिले शहजोर है छलबल भरा सो चोर है। निस दिन

भरोसा तोर है सद शुक्र बन्दीछोरका ॥ जब गिरियः और जारी हुई जम जातना भारी हुई । तब आपकी यारी हुई सदा शुक्र बन्दीछोरका॥ दारा सिकन्दर कुट गये सूफी कलन्दर लुट गये । कोई हंस तुझसे जुट गये सद शुक्र बन्दीछोरका ॥ दरियाय दिलकी लहरमें सब बह गये इस बहरमें । पहुँचे कोई तेरे शहरमें सद शुक्र बन्दीछोरका ॥ जिस्क यह तीनों भौन है उस्से बचे कह कवन है। तूही सकल दुख दवन है सद शुक्र बन्दीछोरका ॥ जग जीवको मारा झुला जाहिद व आबिद सब भुला। अब मुक्तिका द्वारा खुला सद शुक्र बन्दीछोरका ॥ अगला न रिश्ताः तोडिये अपने कदमसे जोडिये । आजिजका हाथ न छोडिये सद शुक्र बन्दीछोरका ॥ ६ ॥

सामा न सरे देखिये इस अहद हमारे। सब फितनः भरे देखिये इस अहद हमारे॥ कोई न सुने पन्द न पहचान न देखे। अन्धे भरे देखिये इस अहद हमारे ॥ इल्म न अमल सब है अबस बादफ़रोशी । गोया घिरे देखिये इस अदह हमारे ॥ है कौन गुरू और कहां धर्म खुदा है। कोई न डरे देखिदे इस अहद हमारे ॥ नेकीसे भगे सारे है बेपार बदीका । जम सबको घेरे देखिये इस अहद हमारे ॥ इस अहदके आदमके अमल पर जो नजर कर। कोई न तरे देखिये इस अदद हमारे ॥ आई जो खिजा बाद गुलिस्तां में सब गुल। पजमुर्दा पडे देखिये इस अहद हमारे ॥ जब आकर अब्र तेरी बारिशे बाराँ। सूखे लहर देखिये इस अहद हमारे। आजिजको बशारत हैं यह सतगुरुके शब्दसाख । सब खुश्क हरे देखिये इस अहद हमारे ॥ ७ ॥

मुखम्मस

जुज मिहर तुम्हारी कहीं आराम न होवे। इस दार फना नेक सरन्जाम न होवे॥ तदबीर व तकदीरसे कुछ काम न होवे। जिस जायमें इकता वह गुलन्दाम न होवे॥ दोजख है सरापा जहाँ सत्तनाम न होवे॥ १॥ जब किशबरे हस्तीसे चलें हन्स अदमको। किस शान व शौकतसे लिये शब्द अलमको॥ तब ब्रह्म बिचारा फिर जा चूम कदमको। बाजारमें आकरके जो पहचान सनमको॥ फिर आशिके सौदा यह कभीखाम न होवे॥ दोजख है सरापा जहाँ सत्तनाम न होवे॥ २॥ बहदत है तुझे और नहीं कोई है सानी। सब ओर भ्रम लअवत इस देर दुखानी। गह खुश्क गहे सब्ज गहे सुबक गिरानी। बे बर्गसमर बाम चले बाद खिजानी॥ पुर खार वह गुलशन जहाँ गुलफाम न होवे॥ दोजख है सरापा जहाँ सत्तनाम न होवे॥ ३॥

गल्तान सदहा बिसमिले नखचीरमें देखे। मुरगां बकफस जेरके जंजीरमें देखे॥ जर्ब व जखम व कारी इस तीरमें देखे। तासीर अजब जालिमें रहगीरमें देखे॥ वह राह था मुझको जहाँ दाम न होवे॥ दोजख है सरापा जहाँ सत्तनाम न होवे॥४॥

ऐ मेरे खिजर हाथ पकड आन हमारा। जुज तेरे करम फजल नहीं हमको सहारा॥ है तेरी पनह आजिजे मिसकीं विचारा। दिन गुजर गया यों है न कुछ काम सिधारा॥ रुख अपना दिखा जल्दतर शाम न होवे॥ दोजख है सरापा जहाँ सत्तनाम न होवे॥ ५॥

अव नसियां करम तेरे असर है कि नहीं। सदफे बाहर तेरे कोई गोहर है कि नहीं॥ बागबां बागमें उलफत का शजर है कि नहीं। कोई नखले मुहब्बतमें समर है कि नहीं॥ मन मिस की तरफ तेरी नजर है कि नहीं॥ १॥

ढूंढे मुल्क आदम और जिन्नो परी । तुझ बिन नहीं चैन सद आफत भरी ॥ शबे फ़ुरकत न कटी हाय कटी उम्र मेरी । बस्लकी रात की हयहात न तू बातकरी ॥ इस शबे हिजका आखिर को तो सेह्र है कि नहीं ॥ २ ॥

गौवास जो सद गोतः लगातेही मुआ । मुहरा हाथ लगा और न कुछ काम हुआ ॥ जब बहर करम लुत्फ तेरा मौजमें आया । बैठेही साहिल पर न सो नअम इनआम दिया ॥ दिल दरियामें तेरे कोई लहर है कि नहीं ॥ ३ ॥

ऐबख्त बख्वाव होवे बेदार कभी । मुझगहगारको हो यार की दीदार कभी ऐ परदःनशीं राज कर अफ़शार कभी निगह नेक होवे सोई गिरफ्तार कभी ॥ इस बन्देपर अगली सी मिहर है कि नहीं ॥ ४ ॥

दरपेश सफर मुझको वफाकेश जता । शाफी मेरे हामी मेरे कर इल्म अता ॥ मुजरिम हूं तेरा गरक गुनहगार खता । ऐ चश्मए फैज व रहमत मुझको बता ॥ आजिजका तेरी राहमें गुजर है कि नहीं ॥ ५ ॥

तरकीबबन्द ।

जबान मेरी बयान नुत्क असरदे । बदीद जाहिर व वातिन बसर दे ॥ न भूलूं एक पल तुझ रह तेरी याद । शबो रोज हर शमो सहरदे ॥ जो नेमत दो जहां सो सब खदफ कर दिल सदफ नाम गोहरदे ॥ न सर्दी दिनबदिन गर्मी तरक्की। मुहब्बत मुर्शिदे अब्दुल देहदे ॥ खुदीको भूलकर बाखुद हूँ सरमस्त । शराबे इश्कका अपने खुमरदे । न जाहिर जिलवः दिखलाता परीरू । उठाता इश्क आतश बोल परदे ॥ रुख खुर छिप रहा है अब कन्दर । खुश आँ वकतेके बुरकःदौरे दिहरदे। न मुझसा

और नालायक व नादार। तु सब लायक है खाली पूर करदे ॥ हमारे बद अमल पर मत नजर कर। सरन और नाम अपनेका अजरदे ॥ बहुत दिनका सगे दर हूँ मैं तेरा। न दुर दुर कर न दुर कर पेट भरदे ॥ ना जाऊँ दर बदर इक दरे उम्मीद। बचाले जान और जिवदान बरदे। मिहरकी बहर तू बेहद न पायान। मिहर कीजे मिहर कीजे अपनी लहरदे ॥ सगे दरको फिरा हरगिज न दर दर। मिहर कीजे मिहर कीजे मिहरकर॥१॥

तुही कुनसे किया कूनों मकाँको। तुही बरपा किया सब जिस्म व जाँको ॥ तुही सतपुर्ष ज्ञानी नाम तेरा। तुही बतला दिया नामे निशाँको ॥ किया तुहीने मल्कुल मौत पैदा। तुही भेजा है मुरशिद मिह्रबांको ॥ कहरके वास्ते कर काल जब्बार। मिहर कर फिर किया अमनो अमाँको ॥ बनज्मे इस जहाँ निर-गुन बनाना। किया पैदा हरी हर वेदख्वाँको। किय मकबूल और मकरूह व मरदूद। तुही खूबी दिया जन्नत जनाँको ॥ तेरे सब नाम हों आराम बख्शें। वले सब वस्फ सतनाम सुबहाँको॥ तेरे औसाफ लायक न मलायक। है क्या इमकान इन्साँकी जबाँको ॥ न जाना भेद कुछ हम्दे सरायां। बयाँ किस तौर कीजे लाबयाँको ॥ तुही बेमिस्ल साहब सबका सरदार। तुही बख्शे अदू और दोस्ताँको ॥ अलख तुही है कोई लख न पाया। ना जाने भेद तुझ राजे निहाँको॥ तुही सब कुछ किया है सबमें मौजूद। तुही देता है हरकस हर जमाँको ॥ बहर खानो बहर शानो बहरशै। तुही था और तुही होगा तुही है ॥ २ ॥

हजारों पीर गैगाँबर बनाये। जुदा सब मजहबो मिल्लत चलाये ॥ नहीं वह नूर सद मामूर तारे। मिहर तुझ रुख मिहर देजूर जाये ॥ नहीं लमअ सौसद शमअ शबिस्तां। कि बरकत

तेरी दिन मशअल जलाये । शरीअत शाखकर शारीं मुखालिफ नजाते राह इन्साँकों बताये ॥ नबी पीराँ फकीराँ कैल फरजन्द। सभी औतार धर अल्लह जताये ॥ सभोंमें बरतरीं हैं राम और कृष्ण । निरंजन राय खुद धर देह आये ॥ जिते मजहब हैं इस आलममें जारी । न राहे रुस्तगारी कोई दिखाये ॥ नहीं मजहब सो सारे कालके जाल । किया मंसूख इक दूजा चलाये ॥ किया मुरगाने जेरक दर कफस बन्द । जो दानांकी तरपा दिलको झुकाये ॥ फँसे उसदाममें आराम जानाँ । जपे सब राम नहि सतनाम पाये पडीं सब गाय दरकाबू कसाई । जिधर जावें उधर छूरी उठाये ॥ किया तब रहम तू मुर्शद हकीकी । जो साहब था सो सत सुकृत कहाये ॥ करे सब जीवके दुख द्वन्द तू दूर । तेरा है नाम बन्दी छोर मशहूर ॥ ३ ॥

तेरे मस्तोंकी मस्तीको न जाना । हुआ मदहोश बे खुद और दीवाना ॥ अनलहक भी न पहुँचे अपने हकको । हुआ था यह अनलहकका बहाना ॥ कोई नागा कोई भागा बियाबाँ । कोई अन्दर जमीके जा छिपाना ॥ कोई गावे बजावे तान तोडे । नकल भांडोंकी सबने अक्ल ठाना ॥ हुए बेगानः सब अपने अमलसे । न पहचाने कोई अपना यगाना ॥ तेरे प्यालेसे इक कतरा जो पीया लिया सो जान मुर्दोंका जिलाना ॥ नहीं भगवा तिलक कन्ठी न माला । निराला भेष धर तुझमें समाना ॥ हुआ जब अस्ल से वह वस्ल अपने । हुआ तब कतरये दरिया जमाना ॥ तेरी बेमिस्ल सागर मुश्कबूसे । रहे क्या अक्ल आदमके ठिगाना ॥ मुअत्तर मग्ज-उसबूसे हुआ जब। तो दानाईको खो बैठे हैं दाना॥ हुए बेखुद खुदीको खोय बैठे। अब तक तीर पहुँचा बर निशाना॥

किते पर पा किये परवाज बाला। जमींपर फिर फिर उनको है आना ॥ ४ ॥

पिला पुर प्याला कर ऐ मेरे साकी। रहेगा नाम बन्दी छोर बाकी ॥ यह चक्की चल रही गरदून गरदाँ। जो खायो पीसकर सब नेक मुर्दा ॥ बले जाते हैं पीरोपीर दामाँ। हकीकत क्या वहाँ फरऊन धामाँ चर्ख चक्की है और सब जीव दाना। मियाँनें मेख मुर्शिद मिहरबानाँ ॥ मियामे मेख मुर्शिदके कदमां लग। अलग बच जायगा मत हो हिरासाँ ॥ जिधर जावे उधर घर पीस डाले। जमीन और आसमाँ घर बन बियाबाँ॥ पिसे ब्रह्मा हरी हर कृष्ण राघो। पिसे नौनाथ और जाहिद बुजुरुगाँ॥ बचे कोई न कर सदहा जो तदबीर। बचौपानी बनाया मेश गुरगाँ॥ किया कब्जेमें सबके जिस्म व जाँ को। पड़ा पीछे कवी यह नफ्श शैतां ॥ यह सब खिलकत खोरिश जमकी रोजीनः ॥ मलायक क्या परी और जिन्नोंइन्साँ ॥ यह बैठा अक्कपर सबके दिल भूत। जिधर चाहे उधर करदे परीशाँ ॥ जिधर यह भाग जावे आदमीजाद। चमकती सैफ हर जानिब नुमायां ॥ वले दन्दान जेरीं कालके सब। यह मुश्किल तुझ सिवा होवे न आसाँ॥ वहां कैल मकाँ आजिज मुकीमाँ। तुही गफ्फूर और तुही रहीमाँ ॥५॥

॥ तरजीआ बन्द ॥

ऐके दर परदये शुक्र गुफ्तार। जल्द वह जलवः कीजिये इजहार ॥ मुझे वह जाम भर पिला साकी। मस्त हूँ तेरे इश्कमें सरशार ॥ हर तरफ लौलियान लल्लामा। इख्तलात इनका है अजाबुन्नार ॥ जाहिदोंके जहदमें मिलादें खाक। आबिदोंके न दिलमें सब्रो करार॥ ओट तेरी बचाव चोट उनके। मैं हूँ इन्तहा व दुश्मनाने बकन्नार॥ मंजिले दूर तोशए राह नहीं। मैं पियादा

व वह हमरहान सवार ॥ दस्तगीरी कर ऐ खुजिस्तः हकीर । दूईका परदःअज मियान बरदार ॥ मैं फकीर और मेरा गनीम गनी । न मुकाबिल हो मुफलिसो जरबार ॥

कोई बाकी रहे न सबमें शोर। कहो सतगुरु कबीर बन्दीछोर॥१॥

जिस्की जुल्फोंको देखकर लाला! दाग हसरतसे दिल हुआ काला॥ सद गुलिस्ताँ निसार खाक कदम। बुलबुलें जिस लिये करे नाला ॥ दीद बरदीद है न दीद बदीद । माह पर आन कर पड़ा हाला ॥ तुही खालिक हुआ तुही मखलूक। तुही पैदा किया तुही पाला ॥ जब उठा पांच तीनका झंडा । सारे नामो निशाँ मिटा डाला ॥ तुही जाहिर है और तुही बातिन । तुही जेरीन और तुही बाला ॥ कदम खाक तेरेकी बरकात । दुश्मने सद ब जेर पामाला ॥ सिर्फ तेरी मिहरसे यह जग जीव । बे गुमाँ लामकान ऊपर चाला ॥

कोई बाकी रहे न सरमें शोर। कहो सतगुरु कबीर बन्दीछोर॥२॥

वे अदद आलमीन् परवर है। औलिया अम्बियाय सरवर है॥ बन्दः मुजरिमका जुर्म करदे मुआफ। तू रहीमो करीम बरतर है॥ जंग मैदानमें हूँ पड़ा घायल न सनाम सैफ ढाल बकतर है ॥ मन मजह्र का तू है जर्राह । दिले दिलगीरका तू दिलबर है ॥ मने मिसकीन से अपना रुख मत फेर। मुझ ले जाय तेराहि दर है॥ अब किधर जाऊं छोड दामन को। तेरी साये कदम मेरा घर है कर जफा या वफा तुझे सब जेब। मुझे मनजूर जो तेरी सिर है ॥ हैं हुमायूँ नसीब सो जिनके।मूनिसे मह्र मुदाम दरबर है॥

कोई बाकी रहे न सरमे शोर। कहो सतगुरु कबीर बन्दी छोर॥३॥

देख उस रंग रूप रोगनको। तब लिया जान बाजी गर फनको ॥ शरर अफसाने दीदः हों ताजः। देख जब अपने

रश्क गुल्शनको ॥ गममें गिरियां खबर न उरियानी । प्यार तिनको न रहे इस तनको ॥ दिल चपल चुलबुला हुआ साकिन। मार कर मुर्दा कर दिया मनको ॥ खसो खासाकसे जब हुआ पाक । पार आ बैठे मार आसनको ॥ तुझसा कादर व मुझसा बे मकदूर । संग पारस मिला जो आहनको ॥ यह गलत मसलए आह और कहो । जिनको पहनाव खास जौशनको ॥ जख्म सब भर ब इक नजर न हजर । पारचा पाट टाट सोजनको ॥ कोईबाकी रहे न सरमें शोर। कहो सतगुरु कबीर बन्दी छोर॥४॥

दे बसा आन गैबका घेरा । जल्द कर मेरे कूचेमें फेरा ॥ जाल खंजर न छोड बिस्मिलको । ऐ दिलराम काम कर मेरा ॥ कारपरदाज तू गरीब निवाज । खानये दिल मेरे करो देरा ॥ रूय खुरशैदकी झलक झिलमिल । नूर हों पूर दूर अंधेरा ॥ भागजा जहां पडें ब पा जंजीर। सब जवानिब है कालका घेरा॥ ख्वाब गफलत्से कर कर दिया बेदार । बेहद्द अहसान बन्दः पर तेरा ॥ बिन तेरे कौन कब जग जीव । तूही साहब है और सब चितेरा ॥ हाथ थर कर जिसे उठाया तू ॥ बेगुमाँ उस्का पारहो बेरा ॥
कोई बाकी रहे न सरमें शोर ।कहो सतगुरु कबीरबन्दी छोर ॥५॥

बख्श तू दयाल मुझको किब्लेगाह । रोजो शब तूही तू है शाम पगाह ॥ कीजै मुहरम व दीजै अकल हिलाल । रख मेरा जामः पाक जेर निगाह ॥ होत गाफिल न तुझसे लमह कोई । बख्शदे मुझको मेरे शाहन्शाह ॥ यह दगाबाज दिल ये मुरदार। रख पनह खुद जे हीलये रोबाह॥ ऐ मेगे जान ऐ जानाँ।मुन्तजिर जलवः तेरे दीदः बराह ॥ रूबरू तेरे हूँ मैं किस ढबसे । हूं पशेमाँ फेलनामा स्याह । कोई बाकी रहा नहीं चारा । लैक

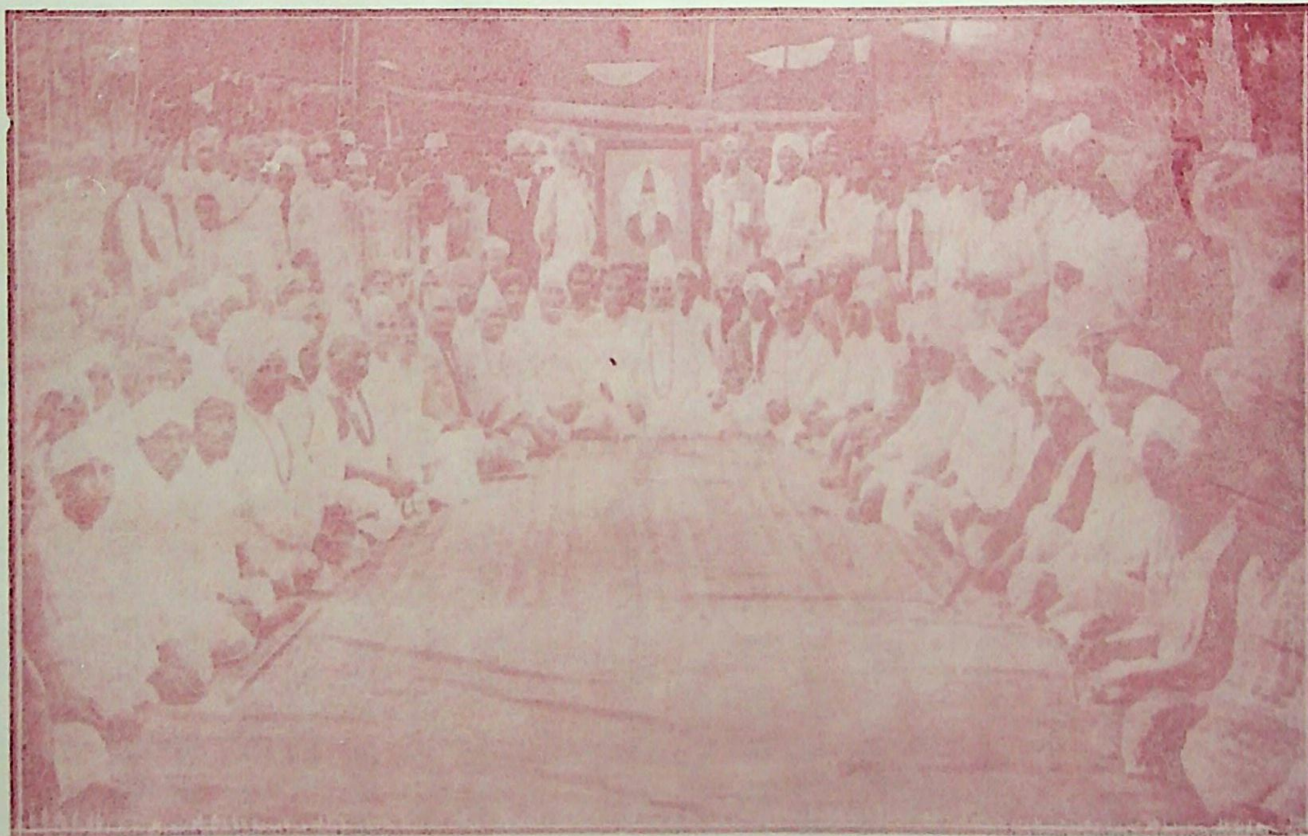
दम सर्द तोबः नालः व आह ॥ रू रहाई रही न राह गुरेज । बन्दः नाचारः को है तेरी पनाह ॥ न राह गुरेज । बन्दः नाचारः को है तेरी पनाह ॥
कोई बाकी रहे न सरमें शोर। कहो सतगुरु कबीर बन्दी छोर॥६॥

इस जहाँ का न काम बाकी । एक तेरा सत्य नाम बाकी है। कुल पानी जो दीदः मनजरमें । सार शब्द पयाम बाकी है॥ हक तेरेसे अदा न कोई ऐ हक। हक तेरा लाकलाम बाकी है॥ सब चले जायँगे रहे न कोई । इक तेराही कयाम बाकी है॥ देता है तू जो खास खासोंको । शरबते नोश जाम बाकी है॥ परदेसे पैरुवाँका रहबर है। जलसए खासो आम बाकी है॥ तेरी हमदो सना रहै कायम । जब तलक सुबह व शाम बाकी है॥ होचुका जोर दूरका आजिज। अब तेरा यह तमाम बाकी है॥ कोई बाकी रहे न सरमें शोर। कहो सतगुरु कबीर बन्दी छोर ॥७॥

तरजिआ बन्द ॥ २ ॥

न तुझ बिन कोई सीधी राह पाया। भटकते मरगया घरको न आया ॥ जो कुफरस्तानमें खुद खुद फँसाया । रहे पुरखार दौराँ ने दिखाया ॥ पकड जमराजने उसको भुलाया। पडे मुरगाँ सब सय्यादके फंद ॥ छुडाले बन्देको अज हस्तिये बन्द । खुदावन्दा खुदावन्दा खुदावन्द ॥१॥ कभी तुझ बिन न जिवका कुफ्रटूटे यह फिर फिर जाय कर उसहीसे जूटे ॥ यह दानाईकी दौलत सारि लूटे । तमीज और अक्ल दानिश उसकी छूटे ॥ हुआ सरमस्त इसमें फिर न फूटे । मिलाया बागवाँने उससे पैबन्द ॥ छुडाले बन्देको अज हस्तिये बन्द ॥ खुदावन्दा खुदावन्दां खुदावन्द ॥ २ ॥ पकड कर हाथ अपनी रह दिखादे। सफीना सीनः पर नाम लिखादे ॥ न भूलूं फिर सबक मुझको

सत्यनाम



चैत्र वद्य ५ सम्वत् १९८४ वि० की कबीरपंथी महासभा कोंवरमालके कतिपय सन्त महन्तोंका फोटो

सिखादे । किताबें अक्लकी ताकों रखादे ॥ रहे बाकी न कोई सब उठादे । खयाले खाम अज दिल चन्द दर चन्द ॥ छुडाले बन्देको अज हस्तिये बन्द। खुदावन्दा खुदावन्दा खुदावन्द ॥३॥ बबजमें खुद परिस्तां कौन जावे वहांकी ला खबर हमको सुनावे॥ गया जो फिर कभी कोई न आवे । जो आवे सो खबर पिछली भुलावे । न भूले तौ कभी इकता कहावे । मिहर तेरीसे पावें जीव आनन्द ॥ छुडाले बन्देको अब हस्तिये बन्द । खुदावन्दा खुदावन्दा खुदावन्द ॥४॥ इस आसी बन्दःको अपने करमसे बचाले पाँच और तीनों भरमसे ॥ गिरह दिल खोलकर महरम मरममे । के रखलीजे पनह अपनी शरमसे ॥ अरज करता है आजिज दीदः नमसे । कदम बरकत तेरी हो फाल फरखुन्द ॥ छुडाले बन्देको अज हस्तिये बन्द। खुदाबन्दा खुदाबन्दा खुदा-वन्द ॥५॥२१॥

छन्द ।

अब सन्त सुरति सम्हाल देखो कन्त निज पहचानिये । अगम अबिचल अलख लखि निह अन्त वाको जानिये ॥ लखि वार पार है सोई साहब ज्ञान आँख जो तानिये । देख दो तीर कबीर जहाँ तहाँ दूसरो नहिं मानिये ॥ १ ॥ अबिगत अलेख भौ लेख नहिं सो एक बन्दी छोर है । नर देह वाते नेह काजे भयो अब निसि भोर है ॥ जो नाम ररत काल डरत है हरत सो जम जोर है । बड भाग अटल सुहाग उनको जिहि भरोसा तोर है ॥२॥ लोमस भुशुंडके झुंड ऋषिमुनि जासु गुन वर्णन करें । सनकादि नारद धनुक गुप्त सेवत चित्त चरणन धरे ॥ ऋषभ आदि योगेश्वर जनक नृप सत पद चरनन परे । बहु

सिद्ध सो ऋषि गरुड गोरख आय तुम शरणन तरे ॥३॥ कोटिन पयम्बर पीर गये भव तीर नाम कवीरते। केहि कहत बनत अगनित ऋषि भये अमर सत शरीरते ॥ धरमदासको प्रभु खास निजकर बिलग नीरो छीरते। सत्तनाम मिल निज धाम दीनो काम एक पद थीरते ॥४॥ बिष बेलि फल संसार है यह झार विष जेहि तेहि भरा। विष अण्ड पिण्ड समस्त है विष वारिमय भव सागरा॥ बिलगाय विषते कौन ऐसो भवन तीनमें नागरा। करि कोटि यतन न ज्ञान रतन है मिटे किमि यह झा रा॥५॥ जहाँ काम क्रोध और लोभ मोहते सकल पूरण पावई। सब रोम रोममें विष भरा है अमृत नाहिं समावई॥ जग विषम आग है लागि तुम बिनु ताहि कौन बुझावई। जीव कठिन काल कराल वशते बन्दीछोर छुडावई ॥६॥ स्तुति करैं और आरति सब हंस मिलि सत लोकमें। सतपुरुष आय बचाय खुद जीव जरत यमकी झोंकमें॥ न पाव कोइ उपाय साहब धाय धर जीव शोकमें। अरुझा सबहिं सरुझा न कोई जीव लोक वेद अथोकमें ॥७॥ सत्तलोक हंस विलोक आनंद बजत खनहद तूर है। प्रभु आरति अरु स्तुति करत सब सहज और अंकूर है। इच्छा सोहं अचित्त अक्षर शिरधरे पद धूर है। यक रोम जासु प्रकाश ऐसो कोटि चन्दा सूर है ॥८॥ यह तीन लोक सशोक देखिये आय आनन्द कन्द है। दशदिशि पसर यम जाल है सब जीव फन्द तेहि फन्द है। गुरु वैद्य साँचा वेदवाचा हर लियो दुख द्वन्द है। भव भीर हरण कवीर दासन दास परमानन्द है॥ ९ ॥

कवित्त ।

पावन पतित जीव दीननके हितु प्रभु, तुही गुरु पुरुष कहायो

धूँ और है। कहत कवीर धर्म धरत न धीर, करे अचल शरीर न लगत हीम जोर है॥ पशु पंछी तारत है निगम पुकारत है, आरतको देखिके निहार रिग कोर है॥ पीरो पयम्बर है धीरजो दिगम्बर हैं, वेद वेद बानीहू विरद बन्दीछोर है ॥ १ ॥ तजत न बानी सुर मुनिन बखानी प्रभु, शरणमें आनी जो करत निहोर है। तीन लोक ढूँढ जाये दूसरे कहूँ न पाये, लगसो चरण दुख हरण जो शोर है। नहीं शुभ करनी है बहु दुख भरनी है, उस गुरु शरणी है कलि काल घोर है। अधम उधारनको जगत सुधारनको, भक्ति मुक्ति धारण कवीर वंदी छोर है ॥२॥ बूडे बड ज्ञानी सिद्ध साधक जो ध्यानी, बिन नाम सहिदानी जिन्हे आशा न तोर है। बलबीज चूसत है सिद्ध साधु दूसत है, निशि दिन मूसत है अन चीन्ह चोर है॥ जीवको है ठौर नहीं सुरमुनि दौर नहीं, परमानन्द पौर नहीं पाव न जो दौड है। बन्दी छोर बन्दी छोर बन्दी छोर एक भजु, साहब कवीर टेक सोई बन्दी छोर है ॥ ३ ॥

सद्गुरुकी महिमा।

गुरुको कीजै दण्डवत, कोटि कोटि प्रणाम। कीट न जानै भृंगको, वह (गुरु) करले आप समान ॥ १ ॥ जगत जनायो जिहिं सकल, सो गुरु प्रगटे आय। जिन गुरु आंखिन देखिया, सो गुरु दिया लखाय ॥ २ ॥ भली भई जो गुरु मिला, नातर होती हानि। दीपक ज्योति पतंग ज्यों, पडत्यो पूरा जानि॥३॥ भली भई जो गुरु मिला, जासो पाया ज्ञान। घटहिं माहि चबूतरा, घटही माहिं दिवान ॥ ४ ॥ कवीर गुरु गरुआ मिला, रुल गया आटै लौन। जाति पांति कुल मिट गया, नाम धरेगा कौन॥५॥

ज्ञान प्रकाशी गुरु मिला, सो जन बिसरि न जाय। जब गोविन्द कृपा करी, तब गुरु मिलिया आय ॥६॥ गुरु गोविन्द कर जानिये, रहिये शब्द समाय। मिलै तो दण्डवत बन्दगी, पल २ ध्यान लगाय ॥ ७ ॥ गुरु गोविन्द तो एक हैं, दूजा सब आकार। आपा मेटै हरि भजे, तब पावै करतार ॥८॥ गुरु गोविन्द दोऊ खड़े, काके लागौं पाय। बलिहारी गुरु आपने, गोविन्द दियो बताय ॥ ९ ॥ बलिहारी गुरु आपने, घड़ि घड़ि सौ सौ बार। मानुषसे देवता किया, करत न लागा बार ॥ १० ॥ बूडा था पर ऊबरा, गुरुकी लहरि चमक। वेरा देखा झांझरा, उतरि भया फरक ॥ ११ ॥ पहिले दाता शिष्य भये, तन मन अरप्यो शीश। पाछे दाता गुरु भये, नाम दियो बखशीश ॥ १२ ॥ राम नामके पटतरे, देवे को कछु नाहिं। क्या लै गुरु सँतोषिये, हवस रही मनमाहिं ॥ १३ ॥ निज मन तो नीचा किया, चरण कमलकी ठौर। कहैं कवीर गुरुदेव बिन, नजर न आवै और ॥ १४ ॥ मन दिया तिन सब दिया, मनके लार शरीर। अब देवेको कछु नहीं, यों कथि कहे कवीर ॥ १५ ॥ तन मन दिया तो भल किया, शिरका जासी भार। कबहूँ कहै कि मैं दिया, घनी सहैगा मार ॥ १६ ॥ गुरु सिकलीगर कीजिये, मनहिं मस्कला देइ। मनका मैल छुडाइके, चित दर्पण करि लेइ ॥ १७ ॥ गुरु धोबी शिष कापडा, साबुन सिरजन हार। सुरति शिला पर धोइये, निकसै ज्योति अपार ॥ १८ ॥ गुरु कुलाल शिष्य कुम्भ हैं, गढ गढ काढै खोट। अन्तर हाथ सहार दै, बाहर बाहे चोट ॥ १९ ॥ ज्ञान समागम प्रेम सुख, दया भक्ति विश्वास। गुरु सेवा ते पाइये, सतगुरु चरण निवास ॥ २० ॥ गुरु मानुष करि जानते, ते नर कहिये अन्ध। यहां दुखी संसारमें, आगे यमके बन्ध ॥ २१ ॥ गुरुको मानुष

जानते, चरणामृत सो पानि। ते नर नरके जायँगे, जन्म जन्म ह्वै श्वानि ॥ २२ ॥

कबिरा ते नर अन्ध हैं, गुरु को कहते और। हरि रूठे गुरु ठौर है, गुरु रूठे नहिं ठौर॥२३॥ गुरु हैं बडे गोविन्द ते, मनमें देखु विचार। हरि सुमरै सो वार है, गुरु सुमरै सो पार ॥ २४ ॥ गुरु सीढी ते ऊतरै, शब्द बिहूना होय। ताको काल घसीटि हैं, राखि सकै नहिं कोय ॥ २५॥ अहम अग्नि निशि दिन जरे, गुरु सो चाहै मान। ताको यम नेवता दियो, होहु हमार मेहमान॥२६॥ गुरु[1] पारस गुरु परस है, चन्दन बास सुबास। सतगुरु पारस जीवको, दीना मुक्ति निवास ॥ २७॥ गुरु सो भेद जो लीजिये, शीश दीजिये दान। बहुतक भोंदू बहि गये, राखि जीव अभिमान ॥ २८ ॥ गुरु समान दाता नहीं, जाचक शिष्य समान। तीन लोककी सम्पदा, सो गुरु दीना दान॥२९॥ गुरू बतावै साधुको, साधु कहै गुरु पूज। अरस परसके खेलमें, भई अगमकी सूज ॥ ३० ॥ यम गरजे बल बाघके, कहै कबीर पुकार। गुरू कृपा ना होत जो, तौ यम खाता फार ॥ ३१ ॥ अवर्ण वरण अमूर्ति जो, कहौं ताहि किन पेख। गुरू दयाते पावई, सुरति निरति करि देख॥३२॥ यह धन जो गुरुकी अहै, भाग बडे जिन पाय। कह कबीर टोटा नहीं, जब परे तबहि लखाय॥३३॥ कह कबीर दरगाह सो, जेहि उतरी ह्वै भार। सोइ करै गुरुआइया, झकि २ मरै गँवार॥३४॥ पंडित पढि गुनि पचि मुये, गुरु बिन मिलै न ज्ञान। ज्ञान बिना नहि मुक्ति है, सत्य शब्द प्रमान ॥ ३५ ॥ मूल ध्यान गुरु रूप है, मूल पूजा गुरु पाव। मूलनाम गुरु बचन

१ पारसमें अरु गुरूमें, बडो अंतरो जान।
वह लोहा कंचन करै, यह करे आपु समान।

है, सत्य मूल सत भाव ॥३६॥ नाम सजीवन देत गुरु, करिके दाया जाहि। गुरु गोविंद बताव जिहि, मिलत गोविंद ताहि ॥३७॥ गुरू गुरू में भेद है, गुरू गुरू में भाव। गुरू सदा सो बन्दिये, शब्द बतावे दाव ॥ ३८ ॥ कहै कबीर तजि भ्रमको, नान्हा करिके पीव। तजि अहं गुरु चरण गहू, यमसो बांचे जीव ॥ ३९ ॥ कनफुक्का गुरु देहका, बेहदका गुरु और। बेहदका गुरु जब मिलै, लहै ठिकाना ठौर ॥ ४० ॥ तीन लोक नौ खण्डमें, गुरु ते बडा न कोय। करता करै न करि सकै, गुरू करै सो होय॥४१॥

गुरु शिष्य पारखका अंग ॥

गुरु मिला न शिष्य मिला, दोऊ खेलैं दाव। दोऊ बूडै बापुरे, चढि पाथरके नाव ॥ ४२ ॥ जाका गुरु है आंधरा, चेला निपट निरन्ध। अन्धे अन्धा ठेलिया, दोऊ कूप परन्ध॥४३॥ काका गुरु है आंधरा, चेला खरा निरंध। अन्धेको अन्धा मिला, परे कालके बन्ध ॥ ४४ ॥ जानंता पूछी नहीं, पूछि किया नहिं गौन। अन्धेको अन्धा मिला, राह बतावे कौन ॥ ४५ ॥ माई मूडौ तेहि गुरुकी, जाते भ्रम ना जाय। आप बूडा मझधारमें, चेला दिया बहाय ॥ ४६ ॥ पूरा कबीर गुरु बिना, पूरा शिष्य न होय। गुरु लोभी शिष्य लालची, दूनी दाझन होय ॥४७॥ पूरा सतगुर ना मिला, रहा अधूरा सीख (शिष्य)। स्वांग यतीका पहिरकै, घर घर मांगै भीख ॥ ४८ ॥ पूरा सहजै गुण करै, गुण नहिं आवै छेह। सायर पोषै सर भरै, डांड न मांगै मेह॥४९॥ गुरू किया है देहका, सतगुरु चीन्हा नाहिं। भवसागरके जालमें, फिरि फिरि गोता खाहिं ॥५०॥ गुरुवाते भय ना मिटै, भ्रान्ति न जिवका जाय। गुरु तो ऐसा चाहिये, देवे ब्रह्म बताय ॥५१॥

१ आप बूडा चहुबेदमें, चेले दिया बहाय।

कबीर जानंता बूझा नहीं, पैंडा दिया बताय। चलते चलते तहँ गया, जहां निरंजन राय ॥ ५२ ॥ बंधेको बंधा मिलै, छुटै कौन उपाय। कर सेवा निर्बंधकी, पलमें लेत छुडाय ॥ ५३ ॥ गुरु सिकलीगर कीजिये, मनहि मसकला देइ। मनके मैल छुडाइके, चित्त दर्पण करिलेइ ॥ ५४ ॥ झूठे गुरुके पक्षको, तजत न कीजै बार। राह न पावै शब्दका, भटके द्वारहिं द्वार ॥ ५५ ॥ जाका गुरु गेही अहै, चेला गेही होय। कीच कीचके धोवते, दाग न छूटै कोय ॥ ५६ ॥ गुरू नाम है ज्ञानका, शिष्य सीखले सोइ। ज्ञान मर्याद जानै बिना, गुरू शिष्य न कोइ ॥ ५७ ॥ सिख तो ऐसा चाहिये, गुरुको सब कछु देइ। गुरु तो ऐसा चाहिये, शिखसे कछू न लेइ ॥ ५८ ॥ गुरु पूरा शिष्य सूरा, बाग मोर रन पैठ। सत सुकृतको चीन्हके, एक तख्त चढि बैठ ॥ ५९ ॥

॥ सतगुरुका अंग ॥

सतगुरु समान को सगा, साधु समान को दात। हरि समान को हीतु है, हरिजन सम को जात ॥ ६० ॥ सतगुरुको महिमा अनंत, अनंत किया उपकार। लोचन अनन्त उघारिया, अनन्त दिखावन हार ॥ ६१ ॥ सब जग भर्मा यों फिरै, ज्यों रामाका रोज। सतगुरु सो सुधि भयी, पाया हरिका खोज ॥ ६२ ॥ थापन पाई थिति भई, सतगुरु दीना धीर। हीरा कबीर बनीजिया, मान सरोवर तीर ॥ ६३ ॥ थिति पाय मन थिर भयो, सतगुरु कीन्ह सहाय। और कथा मन ना रुचै, हिरदय रमिता राय ॥ ६४ ॥ चेतन चौकी बैठि करि, सतगुरु दीनी धीर। निर्भय ह्वै निःशंक भजु, केवल कहैं कबीर ॥ ६५ ॥ बहे बहाये जात थे, लोक वेदके साथ। पैडामें सतगुरु मिले, दीपक दीन्हा हाथ ॥ ६६ ॥ दीपक दीन्हा तेल भरी, बाती दई अघट्ट। पूरा किया बिसाहिना, बहुरि

न आवै हट्ट ॥ ६७॥ चौपड माडी चौहटे, सारी किया शरीर । सतगुरु दाव बताइया, खेलैं दास कवीर ॥ ६८॥ सतगुरु हमसूँ रीझिके, एक कहा परसंग । बरषा बादल प्रेमका, भीजि गया सब अंग ॥ ६९ ॥ सतगुरुके उपदेशका, सुनिया एक बिचार । जो सतगुरु मिलता नहीं, जाता यमके द्वार ॥७०॥ यमद्वारे पर दूत सब, करते खींचा तानि । तिनते कबहुँ न छूटता, फिरता चारों खानि ॥७१॥ चारों खानिमें भ्रमता, कबहुं न लहता पार। सो तो फेरा मिटि गया, सतगुरुका उपकार ॥ ७२ ॥ सतगुरुके सिद्के किया, दिल अपना कै सांच। कलियुग मोसे लडि पडा, मोहकिम मेरा बांच ॥ ७३ ॥ सतगुरु सांचा सूरमा, शब्द जो बाहा एक। लागतही भय मिटि गया, पडा कलेजे छेक ॥७४॥ सतगुरु शब्दका बाण ले, बाहन लागा तीर। एक जो बाहा प्रेम सूं, भीतर विधा शरीर ॥ ७५ ॥ सतगुरु बाहा बाण भरी, धरकर सूधी मूठ। अंग उघाडे लागिया, गया धुवासूँ फूठ॥७६॥ सतगुरु मारा बाण भरि, डोला नहीं शरीर । कह चुम्बक का करि सकै, सुख लागे वहि तीर ॥७७॥ लागी गांसी सुख भया, मरै न जवै कोय। कह कवीरसो अमर भये, जीवत मृतक होय ॥ ७८ ॥ हंसि बोलै ना उन मुनी, चंचल मेला मार । कह कवीर अंतर विधौ, सतगुरुका हथियार ॥ ७९ ॥ गूँगा हूआ बावरा, बहिरा हूआ कान। पांयनसे पंगुला हुआ, सतगुरु मारा बान ॥ ८० ॥ सतगुरु मेरा शूरमा, भेदा सकल शरीर । बाण दुवासूं फूटिया, जीवै दास कवीर॥८१॥ सतगुरु सांचा शूरमा, नख शिख मारा पूर । बाहर घाव न दीसई, भीतर चकना चूर ॥८२॥ सतगुरु मारा बाण भरि, टूटि गया सब जेब। कहुँ आदा कहुँ आपदा, तसबीः कहूँ कितेब॥८३॥ सतगुरु मारा बाण भरि,

शब्द सुरंगी बान। मेरा मारा फिर जिवै, हाथ न धरूं कमान ॥ ८४ ॥ सतगुरु मारा बाण भरि, निरखि निरखि निज ठौर। राम अलखमें रमि रहा, चित्त न आवै और ॥ ८५ ॥ सतगुरु मारा प्रेमसूं, रही कटारो टूट। जैसी अनी न सालई, तैसी साजै मूट ॥ ८६ ॥ मान बडाई ऊरमी, यह जगका व्यवहार। दास गरीबी वन्दगी, सतगुरुका उपकार ॥ ८७ ॥ दिलहीमें दीदार है, बाद वहै संसार। सतगुरु शब्दका मसकला, मुझै दिखावनहार॥ ८८॥ दीसै सो सब विनसि हैं, नाम धरे सो जाय। कहै कबीर सोइ सत्य है, सतगुरु दिया बताय ॥ ८९ ॥ कुदरत पाई खबर सों, सतगुर दिया बताय। भँवर बिलम्बे कमलसे, अब कैसे उडिजाय ॥ ९० ॥ राम नाम छाडूँ नहीं, सतगुरु सीख दिया। अविनाशीको परसिके, आतम अमर भया ॥ ९१ ॥ चौसठ दीवा जोयके, चौदह चन्दा मांहि। तेहि घर कैसा चांदना, जेहि घर सतगुरु नाहिं ॥ ९२ ॥ चित चोखा मन मसकला, बुधि उत्तम मति धीर। सो धोखा ना विरचई, सतगुर मिलै कवीर ॥ ९३ ॥ कोटिक चन्दा ऊगवे, सूरज कोटि हजार। सतगुरु मेला बाहिरे, दीसत घोर अँधार ॥ ९४ ॥ सतगुरु मोहिं निवाजिया, दीना अम्मर बोल। शीतल छाया सुगम फल, हंसा करे कलोल ॥ ९५ ॥ सतगुरु सत्य कबीर है, संकट परा हजीर। हाथ जोड़ विनती करूं, भवसागरके तीर ॥ ९६ ॥ चित्त चोखा दिल निर्मला, दयावन्त गंभीर। सो धोखा विच क्यों रहै, सतगुरु मिलै कवीर ॥ ९७ ॥ ज्ञान समागम प्रेम सुख, दया भक्ति विश्वास। सतगुरु मिलि एकै भया, रही न दूजी आस ॥ ९८ ॥ सतगुरु पारसके शिला, देखो सोच बिचार। आई पडोसिन लै चली, दियो दिया सँवार ९९ ॥

१ कबीर सोइ तत्व गहो, सतगुरु दियो चेताय।

जीव अधम अति कुटिल है, कहूँ नहीं पतिआय। ताका औगुन मेटिके, सतगुरु होत सहाय ॥ १०० ॥ सतगुरु बडा सराफ है, परखे खरा अरु खोट। भवसागर ते निकारिके, राखै अपनी ओट ॥ १०१ ॥ सतगुरु शब्द जहाज है, कोइ कोइ पावै भेद। बुन्द समुद्र एकै भया, किसका करूँ निषेद ॥ १०२ ॥ सतगुरु महल बनाइया, ज्ञान गिलावा दीन। दूर दिखावन कारने, शब्द झरोखा कीन ॥ १०३ ॥ सतगुरु शब्द उलंघिके, जो कोई शिष जाय। जहां जाय तहँ काल है, कहैं कबीर समझाय ॥ १०४ ॥ सतगुरु बड़े जहाज हैं, जो कोइ बैठे आय। पार उतारैं और को, आपना पारस लाय ॥ १०५ ॥ बिन सतगुर बांचे नहीं, फिर बूडे भव मांहि। भव सागर के त्रासमें, सतगुरु पकडे बांहि ॥ १०६ ॥ सतगुरु मिला तो क्या भया, जो मन पाडी भोल। पास कपड ढाके नहीं, क्या करे वपुरी चोल ॥ १०७ ॥ सब जग मुआ विषधर धरे, कहै कबीर विचार। जो सतगुरुको पाइया, सो जन उतरे पार ॥ १०८ ॥

बिनु सतगुरु उपदेश, सुर नर मुनि नहिं निस्तरे। ब्रह्मा विष्णु महेश, और सकल जिव को गने ॥ १०९ ॥ कोटिन पढि गुनि पचि मुआ, योग यज्ञ तप लाय। बिनु सतगुरु पावे नहीं, कोटिन करै उपाय ॥ ११० ॥ करहु छोड कुल लाज, जो सतगुरु उपदेश है। होय तबै जिव काज, निश्चय के प्रतीति कर ॥ १११ ॥ अक्षर आदि जगतमें, जाकर सब विस्तार। सतगुरु दया सो पाइये, सतनाम निज सार ॥ ११२ ॥ सतगुरु खोजो सन्त, जीव काज जो चाहहू। मेटो भवको अन्त, आवा-गवन निवारहू ॥ ११३ ॥ विनवै दोउ कर जोर, सतगुरु बन्दी छोर है। पावै नामकी डोर, जरा मरण भव काल मिटै ॥ ११४ ॥ सत नाम निज सोय, जो

सतगुरु दाया करै। और झूठ सब होय, काहेको भरमत फिरै ॥ ११५ सतगुरु शरन न आवई, फिरि २ होय अकाज। जीव खोय सब जायँगे, काल तिहूँ पुर राज ॥ ११६ ॥ जो सतनाम समाय, सतगुरुकी परतीति करि। यमको अमल मिटाय, हंस जाय सतलोक कहँ ॥ ११७ ॥ तत्त्व दर्शी जो होय, सो सत सार विचारई। पावै तत्त्व बिलोय, सतगुरुका चेला सोई ॥ ११८ ॥ जग भौसागर माहिं, कहो कैसे बूडत तरे। गहै नाम सतगुरु काहि, जो जल थल रक्षा करे ॥ ११९ ॥ निज मत सतगुरु पास, जेहि पाय सब सुधि मिलै। जगत रहे उदास, ता कहँ क्यों नहिं खोजिये ॥ १२० ॥ यह सतगुरु उपदेश है, जो मानै परतीति। कर्म भर्म सब त्यागिके, चलै सो भव जल जीति ॥ १२१ ॥ सतगुरु तो सत भाव है, जो अस भेद बताय। धन्य शिष धन्य भाग तेहि, जो ऐसी सुधि पाय ॥ १२२ ॥

अथ [1]गुरुमुख लक्षण

गुरु मुख गुरु चितवत रहे, जैसे मणी भुवंग। कहैं कवीर बिसरे नहीं, यह गुरु मुखको अंग ॥ १२३ ॥ गुरु मुख गुरु चितवत रहे, जैसे शाह दिवान। और कवीर नहिं देखता, है

१ जगतमें दो भांतिके पुरुष होते हैं एक गुरु मुख, दूसरा मन मुख ॥ गुरु मुख वह है-जो अपने मनको सतगुरु सतपुरुषोंके आज्ञा रीति भांति चाल व्यवहारसे चलावे अर्थात् उनकी आज्ञा और रीति यद्यपि प्रत्यक्षमें दुखदाई भी हो परंतु उसके अंतफलको सुखदायक समझके जैसे हो सके वैसे मनको उनके अनुसार रक्खे ॥ इसमे कुछ सन्देह नहीं कि, सत्पुरुषोंके रीति उपदेश पर चलनेमें मन प्रथम कष्टको प्राप्त हो स्वेछाच्चारी बनना चाहेगा, परन्तु बलकरके मनको स्वतंत्रतासे रोक उसी तरफ लगावे फिर तो थोडेही अभ्याससे मन चंचलताको छोड उसीमें प्रवृत्त होकर पूर्ण गुरुमुखताको धारण करेगा ॥

गुरु मुख बिना विचार नहिं करई।
जो कछु करै तासे नहिं टरई ॥

मन मत दो प्रकार धरम, है गृही अरु साध।
दोहुनको लाजिम है, गुरु मुख होहु अबाद ॥

परन्तु गुरु किसे कहते हैं, यह भी सुनो कि जो शिष्यके शंकाओंको निवृत्त कर उसको उत्तम मार्ग पर लगाता हो तथा भयानक रोचक झूठे बखेडोंमें फसाय केवल कानफूंक पूजा सालीनासे काम न रखता हो ॥

वाहीको ध्यान ॥ १२४ ॥ गुरुमुख गुरु आज्ञासे, छोडि देइ सब काम। कहै कबीर गुरुदेवको, तुरत करै परणाम ॥ १२५ ॥ उलटे सुलटे बचनको, शिष्य न मानै दुःख। कहैं कबीर संसारमें, सो कहिये गुरुमुख ॥ १२६ ॥

अथ [1]मनमुखका लक्षण ।

सेवक मुखहि कहावै, सेवामें दृढ नाहि। कहै कबीर सो सेवक, लख चौरासी मांहि ॥ १२७ ॥ फल कारण सेवा करे, निसदिन जांचे राम। कहै कबीर सेवक नहीं, चाहै चौगुन दाम ॥ १२८ ॥ सेवक स्वामी एक मत, जो मतिसे मति मिल जाय। चतुराई रीझे नहीं, रीझे मनके भाय ॥ १२९ ॥ सतगुरु शब्द उलंघिके, जो कोइ शिष जाय। जहां जाय तहँ काल है, कहैं कबीर समझाय १३० गुरु सो करे कपट चतुराई। सो हंसा भव भरमे आई। जो जन गुरुकी निन्दा करई। शूकर स्वान गर्भमें परई ॥ १३१ ॥

अथ निगुराका लक्षण ।

नर निगुराके तीन गुण, भोपा भरडा भांड। रात राडाकी सेजमें, कहाँ पलापै राँड ॥ १३२ ॥ गुरु बिन माला फेरता, गुरु बिनु करता दान। गुरु बिन सब निष्फल गया, बूझो वेद पुराण ॥ १३३ ॥ जो निगुरा सुमरन करै, दिनमें सौ सौ बार। नगर नायका सत करै, जरै कौनकी लार ॥ १३४ ॥ गर्भ योगीश्वर गुरु बिना, लागा हरिके सेव। कहै कबीर बैकुण्ठसे, फेर दिया

१ मनमुख उसे कहते हैं कि, जो सतगुरु और महात्मा सत्पुरुषोंकी बात कान न धर केवल मनके कहवे पर चलता है और सत्गुरुकी कृपासे विवेक उसे उन कर्मोंसे रोकता है तो भी उस पर ध्यान न देकर मन्द कर्मों में प्रवृत्त हो ही जाता है। मन्द भोगोंमें प्रवृत्त रहवेवालोंको यदि वे भोग पहले कुछ कालतक अमृतके समान जान पडते हैं परन्तु पीछेसे वही अमृत विषरूप हो बिकराल दुःखरूपी राक्षसके स्वरूपको धारण कर पूर्ण नर्कका अनुभव कराते हैं और मनमुख पुरुष इन दुःखोंको देखता या अनुभव करता हुआ भी अपने मनके वश हुआ बारम्बार विषयासक्तिको प्राप्त होता है मनमुख पुरुषको कुछ लज्जा, भय आदिक भी नहीं होते, कभी त्यागी, कभी गृही, कभी चोर, कभी साधु, कभी यति, कभी व्यभिचारी अनेक स्वांगोंको धारण करता और अपनेको बडा बुद्धिमान्, न्यायी, धीर, साधु आदि विशेषणोंसे सम्पन्न जान अहंकारमें डूबा रहकर दूसरोंकी निन्दा असूया किया करता है ।

शुकदेव ॥ १३५ ॥ जनक बिदेही गुरु किया, लागा हरिके सेव । कहै कबीर बैकुण्ठमें, उलटि मिला शुकदेव ॥ १३६ ॥ पूराको पूरा मिलै, पूरा पडै सो दाव । निगुरा तो उम्भर चलै, जब तब चलै कुदाव ॥ १३७ ॥ जो कामिनि परदे रहै, सुनै न गुरु मुख बात । होय जगतमें कूकरी, फिरै उघारे गात ॥ १३८ ॥

अथ विनती (प्रार्थना)

विनवत हौं कर जोरिके, सुनियो कृपा निधान । साधु सँगति सुख दीजियो, दया गरीबी दान ॥ १३९ ॥ अबकी जो सतगुरु मिलै, सब दुख आँखू रोय । चरणों ऊपर सर धरूं, कहूं जो कहना होय ॥ १४० ॥ सुरति कर मोर साँइयाँ, हम हैं भवजल मांहि । आपेही बहि जायँगे, जो नहिं पकडो बाँहि ॥ १४१ ॥ क्या मुख लै विनती करूँ, लाज आवत है मोहिं । तुम देखत औगुन किये, कैसे भाऊँ तोहिं ॥ १४२ ॥ सतगुरु तोहि बिसारिके, किसके शरणे जाँय । शिव विरंचि मुनि नारदा, हृदय नाहिं समाय ॥ १४३ ॥ मैं अपराधी जनमका, नखशिख भरा विकार । तुम दाता दुख भंजना, मेरी करो उबार ॥ १४४ ॥ अवगुण मेरे बापजी, बखशो गरीब निवाज । जो हौं पूत कपूत हौं, तऊ पिताको लाज ॥ १४५ ॥ अवगुण किये तो बहु किये, करत न मानी हार । भावे बंदा बखशिये, भावे गर्दन मार ॥ १४६ ॥ कबिरा भूल बिगाडियाँ, करि २ मैला चित्त । साहेब गरुआ चाहिये, नफर बिगाडे नित्त ॥ १४७ ॥ साईं तेरे बहुत गुण, अवगुण कोई नाहिं । जो दिल खोजूँ आपना, सब अवगुण मोहि माहिं ॥ १४८ ॥ साहेब तुम जनि बीसरो, लाख लोग लगि जांहि । हमसे तुमरे बहुत हैं, तुम सम हमरे नांहि ॥ १४९ ॥ अवसर बीता अल्प तन, पीव रहा परदेश । कलंक उतारो रामजी,

भानो भरम सँदेश ॥ १५० ॥ कर जोडे बिनती करूं, भवसागर आपार । बन्दा ऊपर मिहर करी, आवा-गवन निवार ॥ १५१ ॥ अन्तर्यामी एक तू, आतमके आधार । जो तुम छोडो साथको, कौन उतारे पार ॥ १५२ ॥ भव सागर भारा महा, गहिरा अगम अथाह । तुम दयाल दाया करो, तब पाऊँ कछु थाह ॥ १५३ ॥ साहेब तुम्ही दयाल हौ, तुम लग मेरी दौर । जैसे काग जहाजको, सूझै और न ठौर ॥ १५४ ॥ साईं तेरा कुछ नहीं, मेरा होय अकाज । बिरद तुम्हारे लाजकी, शरण परेकी लाज ॥ १५५ ॥ मेरा मन जो तोहि से, यों जो तेरा होय । अहिरण ताता लोह ज्यों, संधि लखै नहिं कोय ॥ १५६ ॥ मेरा मन जो तुझसे, तेरा मन कहिं और । कह कबीर कैसे निभै, एक चित्त दुइ ठौर ॥ १५७ ॥ मुझ अवगुण तुझ गुण घणा, तुझ गुण अवगुण मुझ्झ । जो मैं बिसरूं तुझ्झको, तू नहिं बिसरो मुझ्झ ॥ १५८ ॥ तुझ विसारा सरै नहीं, किसके शरणें जांहि । शिव विरंचि मुनि नारदा, सो न हिरदय समाहि ॥ १५९ ॥ मैं अपराधी जनमका, नख शिख भरा विकार । दया करो तुम राम जी, तो मैं उतरूँ पार ॥ १६० ॥ साईं मेरा सावधान है, मैहीं भया अचेत । मन बच कर्म न हरि भजा, ताते निष्फल हेत ॥ १६१ ॥ मन प्रतीति न प्रेम रस, ना कोइ तनमें ढंग । ना जानूँ उस पीवसे, क्योंकर रहसी रंग ॥ १६२ ॥ जिनको साईं रँग दिया, कबहुँ न होय कुरंग । दिन दिन बाणी आगरी, चढै सवाया रंग ॥ १६३ ॥ साईं जो मुझको मिलैं, पूछैंगे कुशलात । आदि अन्त की सब कहूँ, उर अन्तर की बात ॥ १६४ ॥ कविरा तू तो गारुआ, हलकी अपनी चाल । रंग कुरंगी रंगिया, किया और लगवार ॥ १६५ ॥

अथ स्मरणका लक्षण और माहात्म्य ।

सुमिरण मारग सहजका, सतगुरु दिया बताय । साँस उस्वाँस संभालता, यक दिन मिलसी आय ॥ १६६ ॥ माला स्वाँस उस्वाँस को, करैं कोइ निजदास। चौरासी भरमें नहीं, कटे कर्मकी फांस ॥ १६७ ॥ मन माला तन मेखला, भवकी करी बभूत । राम मिला सब देखता, सो योगी अवधूत ॥ १६८ ॥ अजपा सुमिरण घट विषै, दीना सिरजन हार । रण रोही संग्राम में, रहगई मारा मार ॥ १६९॥ बाहर क्या दिखलाइये, अन्तर जपिये राम । कैसा मोहिला खल्क सूं, सरै धनीको काम ॥ १७० ॥ सतगुरुका सारा नहीं, शब्द न लागा अंग। कोरा रहिगो स दड़ा, सदा तेलके संग ॥१७१॥ कविरा माला काठकी, बहुत जतनका फेरु। माला फेरो स्वाँसकी, जामें गांठ न मेरु ॥ १७२ ॥ स्वासा सुमिरण होत है, ताहि न लागै बार । पल पल बन्दगी साधना, देखो दृष्टि पसार ॥ १७३ ॥ ओठ कण्ठ हालै नहीं, जिह्वा नहीं उचार। गुप्त वस्तुको जो लखै, सोई हंस हमार ॥१७४॥ शून्य मंडलमें घर किया, बाजा शब्द रसाल। रोम रोम दीपक भया, प्रकटे दीन दयाल ॥ १७५ ॥ तूतू करता तू भया, मुझमें रही न हूं। बारी तेरे नामकी, जित देखूं तित तूं ॥ १७६ ॥ तूतू करता तू मिला, तुझमें रहा समाय । तुझही माहीं मिलि रहा, अब मन अन्त न जाय॥१७७॥ पाँच सखी पिव पिव करे, छट्ठा सुमरे मन्न। आई सुरति कबीरकी, पाया नाम रतन्न॥१७८॥ चिंता तो यह नामकी, और न चितवै दास। जो कुछ चितवै नाम विनु सोई कालकी फांस॥ १७९ ॥ पहिले बुरा कमायके, बांधा विषको पोट। कोटि करम क्षणमें कटे, आया हरिकी ओट ॥ १८० ॥ कोटि कर्म फल पलकमें, रंचक आवै नाम ।

अनेक युग जो पुण्य करै, नहीं नाम बिन ठाम ॥ १८१ ॥ कबीर हरिके नाम से, कोटि विघ्न टरि जाय। राई समान वसंदरा, केता काठ जलाय ॥ १८२ ॥ होय नाम जो एक रती, पाप जु रती हजार । अर्द्धं नाम घट संचरै; जारि करै सब छार ॥ १८३ ॥ सत्य नामको खोजिले, जाते अग्नि बुझाय। बिना नाम बांचे नहीं, धरमराय धरि खाय ॥ १८४ ॥ गुण गाया गुण ना कटै, रटै न राम बियोग । अहि निशि हरि ध्यावै नहीं, क्यों पावै दुर्लभ योग ॥ १८५ ॥ कबिरा कठिनाई खरी, लेता हरिको नाम । सूली ऊपर सेज है, गिरै तो नाहीं ठाम ॥ १८६ ॥ कबिरा रामहि ध्याइले, मन करि प्रेम प्रतीति । हरि सागर जनि बीसरे, छीलर देखु अनीति ॥ १८७ ॥ कबिरा राम रिझायले, मनहीमें गुण गाय । फूटा नग ज्यों जोडि मन, सन्धे सन्धि मिलाय ॥ १८८ ॥ चित्त आग जो चमकिया, चहुँ दिशि लागी बाय। हरि सुमिरण हाथे घडा, वेगी लेहु बुझाय ॥ १८९ ॥ साच विना सुमिरण नहीं, भेद विन भक्ति न सोय। पारसमें परदा रहा, लोह किमि कंचन होय ॥ १९० ॥ नाम विसारे देहकूं, जीव दशा सब जाय । जबही छोडे नामको, तबही लागे धाय ॥ १९१ ॥ कबिरा सुमिरण सार है, और सकल जंजाल । आदि अंत मध सोधिया, दूजा देखा काल ॥ १९२ ॥ कंचन केवल हरि भजन, दूजा काँच कथीर। झूठा आल जंजाल तजि, पकडो साँच कबीर ॥ १९३ ॥ माला मोसे लड़ि पड़ा; क्या फेरत हो मोहि । मनका माला फेरिले, हरि मिलावै तोहि ॥ १९४ ॥ माला फेरत जुग गया, पाया न मनका फेर। करका मणिका छाडिके; मनका मणिका फेर ॥ १९५ ॥ माला जपूँ न कर जपूँ, मुखसे कहूँ न राम । [1]हरि मेरा सुमिरण

---

१ मेरा हरि मोको जपै, मैं पाऊँ विश्राम ।

करै, मैं पाऊँ विश्राम ॥ १९६ ॥ राम नाम सतगुरु दई, पवन सुरति सो पोय। बिन जिभ्या निशिदिन जपो, ब्रह्म जाप यों होय ॥ १९७ ॥ नाम लिया जिन सब लिया, सकल वेदका भेद । बिना नाम नरके पड़ा, पढता चारू वेद ॥ १९८ ॥ ज्ञान कथी बक बक मरै, कहाँ करै उपाधि । सतगुरु हमसों यों कहा, सुमिरण करो समाधि ॥१९९॥ राम सुमिरणी नामकी, मेरा मन मशगूल। छबि लागे निरखत रहौं, मिटि गा संशय शूल॥२००॥ राम नाम निज औषधी, सतगुरु दई बताय । औषध खाय रु पथ रहै, ताको वेदन जाय ॥ २०१ ॥ यह औषध आगे लगी, केतिक उधरी देह। कोइक फेर कुपथ तना, ना तरि औषध एह ॥२०२॥ पारस रूपी नाम है, लोह रूप संसार । पारस पाया पुरुषका, परखि परखि टकसार ॥ २०३ ॥ भजन भरोसे नामके, मगहर तज्यो शरीर। अविनासीके सेज पर, विलसे दास कवीर॥२०४॥ आदि नाम निज सार है, बूझि लेहु हो हंस । जिन जाना निज नामको, अमर भयो सो बंस॥२०५॥ आदि नाम निज मूल है, और मंत्र सब डार। कहै कवीर निज नाम बिन, बूडि मुआ संसार ॥ २०६ ॥ आदि नामको खोजहू, जो है मुकतिक मूल । ये जियरा जप लीजियो, मर्भ मता मत भूल ॥ २०७ ॥ कह कवीर निज नाम बिन, मिथ्या जन्म गवांय। निर्भय मुक्ति निःअक्षरा, गुरु विन कबहुँ न पाय ॥२०८॥ पूंजी मेरी नाम है, जाते सदा निहाल। कविरा गरजै पुरुष बल, चोरी करै न काल ॥२०९॥ जाके दिल अनुराग है, पावेगा नर सोय। विन अनुराग

न पाइये, बूड़ि मरै सब कोय ॥ २१० ॥ कबिरा हमारे नाम बल, सात द्वीप नौ खंड। जम डरपे सब भय करै, गाजि रहै ब्रह्मण्ड ॥ २११ ॥ काल फिरे शिर ऊपरे, काल नजर नहि आय। कह कबीर गुरु शब्द गहू, यमसे जीव बचाय ॥ २१२ ॥ काल फिरै शर साँधिके, हाथ गहे कमान। कह कबीर गहि नाम निज, छाडु मान अभिमान ॥ २१३ ॥ आदि नाम निज पुरुषकी, सुनतहि तजु अभिमान। कह कबीर सुनु संत हो, तजो नरककी खान ॥ २१४ ॥ कोटि नाम संसारमें, ताते मुक्ति न होय। आदि नाम गुरु जाप जो, बूझै बिरला कोय ॥ २१५ ॥ सोइ नाम संसारमें, उदित अमोल अपार। ता बिन पार न पावई, बूडि मुये संसार ॥ २१६ ॥ जस देखि फनपति मंत्र, राखै फनहिं सिकोरि। तैसे बीरा नामते, कालरहै मुख मोरि ॥ २१७ ॥ जो जन होवे जौहरी, सो धन ले बिलगाय। सोहं सोहं जपि मुये, मिथ्या जन्म गँवाय ॥ २१८ ॥ साखी पद संसारमें, कहन सुननको कीन्ह। चिट्ठी आई मूलते, सो धन लैहै चीन्ह ॥ २१९ ॥ सबको नाम सुनावहू, जो आवे तुव पास। शब्द हमारो सत्य है, दिढ राखो विश्वास ॥ २२० ॥ होय विवेकी शब्दका, जाय मिलै परिवार। नाम गहै सो पहुँचिहैं, मानहु कहा हमार ॥ २२१ ॥ आदि नाम पारस अहै, मन है मैला लोह। परसतही कंचन भया, छूटा बंधन मोह ॥ २२२ ॥ सुरति समावे नामसे, जगसे रहै उदास। कहै कबीर गुरु चरणमें, दृढ राखै विश्वास ॥ २२३ ॥ यहि विधि करै किसानिया, पोता तलब न होय। भक्त मिलै कोइ

बीरला, दाम देत नहिं सोय ॥२२४॥ मालिक हमारा नाम है, दरगाही परमान। शील संतोष आराम भौ, छाडि सकल अभिमान ॥ २२५ ॥ यहि अवसर नहिं पाइहो, धरो नाव कडिहार। भवसागर तरिजाव तब, पलक न लागै बार॥२२६॥ आदि नाम बीरा अहै, जीव सकल ले बूझि। अमगवै सतलोक लै, यम नहि पावै सूझि ॥२२७॥ या धन सोई पाइहै, ज्ञान दृष्टि जेहि होय। ज्ञान बिना नहिं पावई, कोटि करै जो कोय ॥२२८॥ ज्ञान दीप प्रकाश करि, भीतर भवन जराय। बैठे सुमरे पुरुषको, सहज समाधि लगाय॥२२९॥ अछय वृक्षकी डोर गहि, सो सतनाम समाय। सत्य शब्द प्रमाण है, सत्यलोक कहँ जाय ॥ २३० ॥ एक नामको जानिके, मेटै कर्मके अंक। तबही सो सचु पाइहै, जब जिव होय निशङ्क ॥ २३१ ॥ कोइ न यम सो बाचिया, नाम बिना धरिखाय। जे जन बिरही नामके, ताको देखि डराय ॥२३२॥ कर्म करै देही धरै, औ फिरि फिरि पछताय। बिना नाम बांचे नहीं, जिव यमरा लै जाय॥२३३॥ नाम गहै धन धाम तजि, नर नारी जो कोइ। अविचल महिमामें बसै, अविचल आपै होइ२३४

सोरठा।

सतगुरु का उपदेश, सत्य नाम निज सार है। यहि निज मुक्ति संदेश, सुनो संत सत भावसे ॥ २३५ ॥ तरे जो नाम समाय, बिन थिति सब जग बूढिया। उबरे एक उपाय सतगुरुके उपदेश गहि ॥ २३६ ॥ क्यों छूटे जमजाल, बहु बन्धन जिव बांधिया। काटै दीनदयाल, कर्म फन्द एक नाम

सो ॥ २३७ ॥ मिटै कर्मको अंक, जब सतनाम ध्यावही । होय जीव निःशंक, सत्य बचन सतगुरु कहे ॥ २३८ ॥ छोड़हु यमके फन्द, जेहि फन्दे जग फंदिया । कटे तो होय आनन्द, नाम खडग सतगुरु दिये ॥ २३९ ॥ तजे काक की देह, हंस दशाकी सुरति पर । मुक्ति संदेशा ऐह, सतनाम प्रमाण अस ॥ २४० ॥ सतनाम विश्वास, कर्म भर्म सब परि हरै । सतगुरु पुरवे आस, जो निराश आशा करै ॥ २४१ ॥

गजल प्रार्थना ।

गुरु सेवामें अपनी लगालो मुझे । आवा गवनके दुखसे छुड़ा दो मुझे ॥ जन्म मरण गर्भ वासके, सहि दुख बारम्बार । व्याकुल हो आयो शरण, मोहिं करो भव पार ॥ सतनाम कृपा कर सुना दो मुझे । गुरु सेवामें अपनी लगालो मुझे ॥ १ ॥ खान पान सुख भोगमें, मैं अरुझा अज्ञान । चञ्चल मन अस्थिर नहीं, केहि विधि हो कल्यान ॥ कोई योगकी युक्ति बता दो मुझे । गुरु सेवामें अपनी लगालो मुझे ॥ २ ॥ काम क्रोध मद दंभ छल, झूट कपट व्यभिचार । इनसे मोहिं बचाइये, दीजे काज सुधार ॥ शुभ ज्ञान की नीति सिखा दो मुझे । गुरु सेवामें अपनी लगालो मुझे ॥ ३ ॥ साधु संतसे प्रीति हो विषय विकार हो नाश । सत्य ज्ञान हिरदे बसे, होय परख प्रकाश ॥ साधन चारों परि पूर्ण करा दो मुझे । गुरु सेवामें अपनी लगालो मुझे ॥ ४ ॥ भगवानदास बिनती करे, प्रेम नयन वहे नीर । तुम

समान को जगतमें, करुणासिन्धु कवीर ॥ यही आस विश्वास दिखा दो मुझे । गुरु सेवामें अपनी लगालो मुझे ॥५॥

सद्गुरुस्तुतिः ।

सर्वमंगलमांगल्यं सर्वविघ्नविनाशनम् । अधमोद्धारणं देवं सद्गुरुं प्रणमाम्यहम् ॥ १ ॥ यं सर्वेश्वरदेवं ही स्तुवन्ति सततं सुराः । ध्यायन्ति मुनयश्चापि तं गुरुं प्रणमाम्यहम् ॥ २ ॥ शश्वज्जन्मजरामयाधिनिधनैर्दुःखैः सदा पीडितान् दृष्ट्वा प्राणभृतः कुशेशयदले स्वैरं च धृत्वा वपुः । शास्त्राब्धिं प्रविगाह्य बीजकसुधाज्ञानं च तेभ्यो ददौ तं वन्दे शिरसा प्रणम्य चरणौ वीरं कवीरं गुरुम् ॥ ३ ॥ नित्यानन्दस्वरूपो यो मायातीतो महोदयः । सच्छास्त्रविषयः साक्षात्कवीरं प्रणतोऽस्म्यहम् ॥ ४ ॥ नमः श्रीधर्मदासाद्यमहामुन्यन्तसत्तमान् । द्विचत्वारिंशदाचार्य्यान् भूतभव्यभविष्यतः ॥५॥ अकलितमहिमानं पूर्णकामं कृपालुं । धृतमनुजशरीरं भक्तसन्तारणाय ॥ सुरमुनिगणवन्द्यं दिव्यदेहाभिरामं । हृदयतिमिरभानुं सत्कवीरं स्मरामः ॥ ६ ॥

अर्थ–अगणितमहिमावाले, पूर्णकाम, दयायुक्त, भक्तलोगोंके उद्धार करनेके लिये मनुष्यशरीर धारण करनेवाले, देवता और मुनिगणोंसे वंदनीय, दिव्यदेह करके मनोहर, हृदयान्धकारको नाश करनेके लिये सूर्य ऐसे सत्कवीर को हम लोग स्मरण करते हैं॥

इति श्रीकवीराश्रमाचार्य परमार्थी वैद्य भारतपथिक स्वामी श्रीयुगलानन्दविहारी निर्मित कवीरपंथी शब्दावली अन्तर्गते स्तोत्रदर्शन द्वितीय खण्ड समाप्त ।।

सत्यनाम

सत्यसुकृत आदि अदली अजर अचिन्त पुरुष
मुनीन्द्र करुणामय कवीर सुरति योग
सन्तायन धनी धर्मदास की दया
सर्व सन्त महन्तोंकी दया ।

कवीरपंथी--शब्दावली ।

तीसरा खण्ड–अध्यात्म साधन ।

गुरुपूजा प्रकरण ।

वन्दौं सत्य कवीरके, युगल चरण शिरनाय । धर्मदास वन्दन करूं, सुकृतको बलपाय ॥ १ ॥ शब्दावलिको खण्ड यह, तीसर जान सुजान । गुरु पूजा चौका विधि, सबही करों बखान ॥ २ ॥

उछाह मङ्गल (पधरावनी) के शब्द ॥

मंगल ।

आज मेरे साहब आये मिहमान । तन मन जिव करूं कुरबान ॥टेक॥ प्रेमको पलंगा बिछाऊँ आय । चरण पखारि चर्णामृत पाय ॥ १ ॥ भाव सहित भोजन करूँ सारा । तुरतहिं करूं लगै न बारा ॥ २ ॥ कहा करूं कुछ सर भर नाय । तीनलोक पासंगमें जाय ॥ ३ ॥ ज्ञानकी पटरी सुरतकी डोर । आज मोरे सतगुरु झुले हिंडोर ॥ ४ ॥ धरमदास आमिन समुझाय । भगति करो तुम सुरत लगाय ॥ ५ ॥

मंगल (पधरावनी) ॥

आज मोरे सतगुरु आय मिहमान । तन मन जीव करूं कुरबान ॥ टेक ॥ सतगुरु आय मैं फूली न सामाँव । देखि

दीदार मगन ह्वै जाँव ॥ १ ॥ प्रेमको पलंगा देउं बिछाय। चरण परछालि चरणामृत पाय ॥ २ ॥ भाव सहित भोजन करूं सार। तुरत करो कछु लागे न बार ॥ ३ ॥ चौका चन्दन तुरति बनाय। सतगुरु जहाँ बैठे आय ॥ ४ ॥ धर्मदास या मन समुझाय। भक्ति करो तुम सुरति लगाय ॥ ५ ॥ कह कबीर सुनो धर्मदास। केवल नाम गहो विश्वास ॥ ६ ॥

मंगल उछाह ॥

मोरे जिवरे सुख परम अनन्द। आज साहब मोड आवेंगे ॥ टेक ॥ सखी काहि आँगन लिपायऊ। काहिको सखी चौक पुरायऊ ? ॥ १ ॥ सखी आंगन चन्दन लिपायऊँ। गजमोतियनको सखि चौक पुरायऊँ ॥ २ ॥ सखि काहेको डारो बैठनो। काहेको चरनामृत लेउ ? ॥ ३ ॥ तन मन डारूं बैठना। चरननको चरनामृत लेउ ॥ ४ ॥ सखि आँगन बोऊँ इलायची। मोरे फलसे सुख अम्मर बेले ॥५॥ सखि उंची पाल समुद्रकी। तले बहे जमुना नीर ॥ ६ ॥ सखि ऊँचे चढि देखहूँ। मोर साहबको रथ केतिक दूर ॥ ७ ॥ सखि सब वृन्दावन ढूंढिया। मोहिं मिलिया त्रिकुटिके तीर ॥८॥ सखि भक्ति हेतुके कारने। मोपै दया करी बन्दीछोर कबीर ॥ ९ ॥

मङ्गल उछाह ॥

आज घडी हो मेरे आनंदकी। सतगुरु आये मोरे धाम ॥ टे० ॥ आइया गुरुदेव सजनी, भयो, हरष अपार हो। सकल सुन्दरि साज आरति, होत मंगल चार हो ॥ १ ॥ दियो दरस परभाव सतगुरु, सुना सखी अमोल हो। अछै छाया सघन घनकी, करत हंस किलोलहो ॥ २ ॥ दया करी नाह निरगुन, अपनी कर लीन हो। भक्ति मुक्ति सनेह सजनी, लीन प्रीतम

चीन्ह हो ॥ ३ ॥ भयी है कलिविष दूर तनकी, गयी है तपन नसाय हो । अटल पंथ कबीर दीनो, धर्मदास लखाय हो ॥४॥

मङ्गल उछाह ॥

भल आय सतगुरु मैं बलि जावँ । आतम अन्ध जगाइया ॥टेक॥ ॥१॥ भूले आतमको भरम मिटाय । लख चौरासीको बन्द छुटाय ॥ २ ॥ आतम तब उतरन पाय । कोटि कर्म फन्द काटो आय ॥ ३ ॥ पूरन चन्दा सतगुरु परग आय । नौलख तारा गये छिपाय ॥ ४ ॥ पूरे गुरुकी पूरन कला । और कला न दीसे भला ॥ ५ ॥ और कला त्रिगुनकी ओप । सतगुरु कला परम संतोष ॥ ६ ॥ यहि कला मन राखो थीर । जनम जनमको मेटो पीर ॥ ७ ॥ दस मास जननी भरि बोझ । भक्ति विना भये बनके रोझ ॥ ८ ॥ कहै कबीर जग जीत ले साल । सतगुरु सुमिरो दीन दयाल ॥ ९ ॥

मंगल उछाह ॥

धन सतगुरु जिन दियो उपदेश । भव बूडन गहि राख्यो केश ॥ टेक ॥ १ ॥ साकटसे गुरु वैष्णव कीया । सत्य नाम सुमिरनको दीया ॥ २ ॥ जाति वरन कुल भरम मिटाय । साधु मिले तब साधु कहाय ॥ ३ ॥ पारस परसे कंचन होय । वाको कहै न कोय ॥ ४ ॥ पारसके गुन देखो आय । कंचन महंगे मोल विकाय ॥ ५ ॥ स्वाति बुन्द के दलीमें परे । रूप रंग कछु औरहिं धरे ॥ ६ ॥ नाम कपूर बासना होय । केदली वाको कहै न कोय ॥ ७ ॥ निसिदिन सुमिरो एकै नाम । जा सुमिरेते दिढ होय करम ॥ ८ ॥ कहैं कविर यह सांचो खेल । फूल तिलि मिलि भयो फुलेल ॥ ९ ॥

मंगल उछाह ।

आजके दिवस को मैं वारने जाऊं । वारने जाऊँ बलि हारने

जाऊँ ॥ टेक ॥ सतगुरु साहब आय मोरे पाहुन । घर आँगना मोहि लगे सोहाउना ॥ साधु संत मिलि लागे मंगल गावन ॥१॥ होय मगन गुरु चरनन पर छालूँ । चरन परछालुँ गुरु के वदन निहालूँ ॥ तन मन धन सतगुरु पर वारूं ॥ २ ॥ जादिन आय साधु धन दिन सोई । होत आनन्द परम सुख होई ॥ सतगुरु मिलि मोरि दुरमत खोई ॥३॥ सुरति लगा सतनामकी आसा । कहैं कविर दासनके दासा ॥ साधु संत मिलि काटौ जम फांसा४ ॥ ❀

मंगल उछाह ।। धुन ।।

राग सारंग (समय मध्याह्न काल)

भाग जाके संत पाहुने आवें । द्वारे कथा कीरतन करहिं, हिलमिल मंगल गावें ॥ टे० ॥ काम क्रोध मद मान कल्पना, दुर्मति दूर बहावें ॥ राग द्वेष परनिन्दा तजिके सत उपदेश, दिखावें ॥ १ ॥ प्रथम लाभ चरनोदक लैकरि, जो कोई सीस चढावे ॥ कोटिन तीरथको फल सहजहिं, सो घर बैठे पावे ॥२॥ खीर खाण्ड पकवान मिठाई, लखि नहिं हेत बढावें ॥ रूखा सूखा शाक पत्र अति, हितसे भोग लगावें ॥ ३ ॥ महाप्रसाद देवनको दुर्लभ, सन्त सदा सो दै पावें ॥ दुष्ट सदा दुर्मतिके घेरो, मिथ्या जन्म गवाँवें ॥ ४ ॥ गुरु प्रतापसे पूरवके सुकृत, कर्म उदय हो जावें ॥ कहैं कवीर साधु मूरति धरि, साहब दरश दिखावें ॥५॥

अथ छत्तीस गढी कामचलाऊ चौकी विधानकी पद ।।

शब्द व्यंजनभोग ।

सत्तनामको भोग लागे, शब्द अनाहद घंटा बाजेहो ॥ प्रेम सुरतिसे करो रसोई । अमृत भोजन पारस होई ॥ कंचन झारी अविगत थार । सत्यसुकृत जहां करें जेवनार ॥ जेंवहि साहब संत सब संगा ।

❀ इस प्रकार सतगुरुकी पधरावनी आरतीसहित करना चाहिये । पश्चात् चरण पखार चरणामृत लेना चाहिये ।।

गावहिं दास जो परम अनंदा॥ पाय प्रसाद जल अचवन कीन्हा। महाप्रसाद दासको दीन्हा॥ जाते काल भयो आधीना॥ जबसे हंस भये परवीना ॥ कहैं कवीर पूरन भये भाग। जब सतगुरु मस्तक दिये हाथ ॥

॥ धुन ॥

सतके भोग दयाके व्यंजन तुमको मालुम होय। महा पुरुष मानिये निज सोय ॥

इंगला पिंगला चौका पोते, छिमा मंत्र निज डार। बलकी फूंक अकलकी आंगी, चाहके चूल्ह सँवार॥ दिलदायाकी दाल बनाये, लक्षके नोन मिलाय। मनसा हींग डार व्यंजनमें, चहुँ दिस बास उडाय ॥ भाव भक्ति घृत निर्मल नीरा, दिल गडुवा जल डार। सतसुकृत जहां भोजन पावें, घर मानिक उजियार॥ आसन मूल बैठ दृढ अविचल, सुखमन बाव डोलाय। सुर्त निर्त दोय पाट सँवारे, संत परोसें आय॥ सकल संत मिल आरती उतारें, गावें मंगल चार। कहैं कवीर जिन सतगुरु सेवा, सो सतलोक सुधार ॥

शब्द गारी।

देहु न देहु प्रभुजन अपनेको, समर्थके गुन गाऊं केहांजू ॥ गगनमंडल मोरे सजन बसत हैं, उनहूको नेवत बुलाऊं केहांजू॥ काम क्रोध मद लोभ पांवडे, भीतर भवन बिछाऊं केहांजू ॥ नैननके जल चरन पखारों, चित चौकी बैठाऊं केहांजू॥ करनीके पातर कथनीके दोना, साखीके सींक लगाऊं केहांजू ॥ भावको भात औ दार दयाको, शब्दके बरा बनाऊं केहांजू ॥ मनसा मांडे सरस बनाऊं, प्रेमके घृत चुवाऊं केहांजू ॥ सतके दूध करनीके खोवा, शक्कर सुमत मिलाऊं केहांजू॥ यह सुख पाय जेवें सजन हमारे, स्वासाके बाव ढुलाऊं केहांजू॥ सीसा सार भरे जल अमृत,

सो अचवन करवाऊं केहांजू ॥ पांच पचीस पकर नौ नारी, सजनको गारी गवाऊं केहांजू ॥ तत्त्व तमोलिन सुघर सुमतिले, सजनको बिरियां खवाऊं केहांजू ॥ एकईस खंड महलके भीतर, निरभय पलंग बिछाऊं केहांजू ॥ शील संतो खवास हमारे, सजनके चरन दबाऊंकेहांजू ॥ धर्मदास कहे साहब मोरे, मुक्ति मनोरथ पाऊं केहांजू ॥

शब्द अचवन ।

सेवक लिये प्रेम जलझारी, खरचा ब्रह्म ज्ञान ।
सो अचवन कीजे गुरु कृपा निधान ॥
भाव भक्तिसों बीरा लीजे संतन जीवन प्रान. महाप्रभु ।
अमी उगार दासको दीजे जिनको परम कल्यान ॥
सो अचवन कीजे गुरु कृपा निधान ॥
हृदयकमल बिच पलंग बिछाऊं पौढें पुरुषपुरान. महा॰ ॥
चरनकमलकी सेवा करिहों दासातन परमान ।
सो अचवन कीजे गुरु कृपा निधान ॥
सुरतके बिजना डोलाऊं मैं ठाढी ।
एक टक लागों ध्यान. महा॰ ॥
धर्मदास पर दाया कीजे पूरन पद निर्बान ।
सो अचवन कीजे गुरु कृपा निधान ॥

शब्द बिजना ।

मेरे सतगुरु आये द्वारको रसको बिजना । काहेके बैठक देउं सुरत रसको बिजना ॥ चंदन पिढिया गुरु बैठका रसको बिजना । नीरन चरन पखारों सुरत रसको बिजना ॥ भात रिंधों रस दूधमें रसको बिजना । धोय मूंगके दार सुरत रसको बिजना ॥ काहेके थार परोसों हो रसको बिजना । काह कटोरन दूध सुरत रसको बिजना ॥ सोनेके थार परोसों हो रसके बिजना । रूप कटोरियन

दूध सुरत रसको बिजना॥ जेंईलेव सतगुरु पाहुना रसको बिजना। मुखभर देहु अशीस सुरत रसको बिजना ॥ पाथरको का पूजनो रसको बिजना। मुख बोले ना खाय सुरत रसको बिजना॥ सांचे पूजहु साधुको रसको बिजना। मुख बोले ओ खाय सुरत रसको बिजना ॥ खाय पाय सुख सेजमें रसको बिजना । करले शब्द शृंगार सुरत रसको बिजना ॥ पानन बिरियां खवाऊं हो रसको बिजना । दोउ कर चरन दबाय सुरत रसको बिजना ॥ बिजना बिजना सब कोई कहै रसको बिजना । बिजना लखे न कोय सुरत रसको बिजना॥ कहें कबीर धर्मदाससों रसको बिजना। रहत अमरपुर छाय सुरत रसको बिजना ॥

भोगकी आरती ।

सुमरन भजन आरती पूजा, सनमुख करले सेव । सिर पर राखिये हो, सोई परम गुरुदेव॥ अजपा जाप जपो बिन जिह्वा-मूलमंत्र आराधि । अस्थिर ध्यान अमर दृढ अविचल, लागी सहज समाधि ॥ मानसरोवर मंजन करले, त्रिबेनीको घाट। अनहद धुन सुन पांचों मोहे, खुलगये ज्ञानकपाट॥ बिन नदिया बिन नावरी, गुरु अधर उतारे पार। शब्द सिंढी ऊपर ले राखो, घरही है निज द्वार॥ चांद सूर निसि वासर नाहीं, नाहिंन विद्या बेद । साहब कवीर भये जहां गुरुमुख, बिरले पावहि भेद ॥

चौकाकी रमैनी ।

प्रथमहिं मंदिर चौक पुराये । उत्तम आसन श्वेत बिछाये ॥ हंसा पग आसन पर दीन्हा । सत्तकवीर कही कह लीन्हा ॥ नाम प्रताप हंस पर छाजे । हंसहि भार रती नहिं लागे ॥ भार उतार आप सिर लीन्हा। हंस छुडाय कालसों लीन्हा॥ साधसंत मिलि बैठे आई। बहु बिध भक्ति करे चितलाई॥ पान सुपारी नारियर केरा। लौंग लायची किसमिस मेवा ॥ सवा सेर आनो

मिष्टाँना। सत सवासा उत्तम पाना॥ सात हाथ बस्तर परवाना। सो सतगुरुके आगे आना॥ इतना होय और नहीं भाई। जासों काल दगा मिट जाई॥ धन्य संत जिन आरति साजा। दुख-दारिद्र वाके घरसे भागा॥ कहें कवीर सुनो धर्मदासा। ओहं सोहं शब्द प्रगासा॥

साखी-चौका चन्दन कीजिये, मलयागिरको नाम।
चारो कमल सुधारहू, मध्य ताहिको धाम॥ १॥

उग्र ज्ञानका कहों संदेशा। धर्मदास मानो उपदेशा॥ धर्मदास मानो चितलाई। रहो ठीका पर उचट न जाई॥ अजर लोकमें आरती कीन्हा। सो आरती हम तुमको दीन्हा॥ जा घर आरती नाहिंन साजी। ता घर धर्मरायके बाजी॥ जा घर आरती करो बनाई। निरभै हंस लोकको जाई॥ कोटिन ज्ञान कथे नर लोई। बिन आरती बांचे नहिं कोई॥ अजर जोत आरती परकाशा। दूत भूत जम मानै त्रासा॥ कहें कवीर सुनो धर्मदासा। हंसा पावे लोक निवासा॥

साखी-कलस आरती दल शिला, नरियर पान मिष्टान।
पुंगी फल पुष्प लौंग लायची, शब्द भजन धुन ध्यान २॥

धर्मदास तुम पंथ उजागर। अरपो दल परसो सुखसागर॥ चंदन चौका रचो बनाई। सत सुकृत जहां बैठे आई॥ सतबारीकै फूल मँगावा। सो सतगुरुको आन चढावा॥ धर्मदास उठ बिनती कीन्हा। हो सतगुरु हम तुमको चीन्हा॥ जो तुम कहो मानलेउं सोई। तुम गुरु छोड और नहिं कोई॥ कहैं कवीर सुनों धर्मदासा। बीरा नाम करो परकाशा॥

सा०-लौंग इलायची नारियर, आरती धरो लेसाय।
कहें कवीर धर्मदास सों, काल दगा मिटजाय॥ ३॥

धर्मदास तुम बीरा लेहू । जंबूद्वीपके जीवन देहू ॥ मैं का जानो पंथके आदी । जंबूद्वीप बसे बकबादी ॥ पढे बेद औ करें अचारा । वे नहिं माने शब्द तुम्हारा ॥ जो नहिं माने शब्द हमारा । सो चलि जैहै जमके द्वारा ॥ जो कोइ माने शब्द हमारा । सो चल अइहैं लोक मंझारा ॥ अंतर कपट करे मन माहीं । ताको लोक पहुंच नहिं जाहीं ॥ कहें कबीर सुनो धर्मदासा । बीरा नाम करो परकाशा ॥

सा०–अंसरेख सुर सीखको, गुरु स्वांसा घर एक ।
तामो नरियर मोरहु, टूटे विघ्न अनेक ॥ ४ ॥

चौकाके पद ।

भक्ति सतगुरु आनी संतो, कोई बूझे पंडित ज्ञानी संतो ॥ पाहन फोर गंग एक निकसी, चहुँ दिस पानी पानी । वा पानी दोय पर्वत बूडे, दरिया लहर समानी ॥ उड माखी तरवर पर बैठी, बोले अमृत बानी । वा माखीके मक्खा नाहीं, गर्भ रहा बिन पानी ॥ राई बरोबर बस्तु हमारा, अर्ध राई अस्थूला । लहर लहर वह घट बिच होवे, सोई पुरुष निज मूला ॥ नारी एक सकल जग जायो, ताते रहत अकेला । कहें कबीर यह पद को बूझे, सो सतगुरुका चेला ॥ १ ॥

गुनका भेद न्यारा न्यारा, कोई जानेगा जाननहारा ॥ सोई सुन्दर जाके पियको, बरत है अज्ञाकारी होई ॥ और सकल सब श्वान कूकरी, सुंदर बदन ना होई ॥ सोई गजराज राजकुल मंडन, जाके मस्तक मोती ॥ और सकल सब भार लदनुवां, महिषासुरके गोती ॥ सोई भुजंग जाके मस्तक मनि, मनि उजियारे खेले ॥ और सकल सावनके केंचुवा, जगत पांउतर डोले ॥ सोई पर्वत

सुमेर उजागर, अष्टौ धात निवासा॥ और सकल पाखान बरोबर, टांकी अगिन प्रकाशा॥ कहैं कबीर सोई जन गुरुवा, नाम भजन अधिकारी॥ और सकल साहबका बाना, देखो तत्व बिचारी॥

साखी-जो रचना है लोकके, सो चौका बिस्तार।
की बैठे निज बिंदसुत, की पूरा कंडिहार॥ २॥

चीन्हो रे नरलोई सतगुरु।
जासों मिटे तेरो जनम जोयनी, आवागमन न होई॥ गुरु जगतमें बहुत कहावे, मंत्र देत हैं काना॥ उपजे बिनसे भौसागरमें, भेद मरम नहिं जाना॥ बेद पुरान भागवत गीता, सब मिल रही डिठाई॥ धन सोई जीवसुफल सोई प्रानी, निज पूरे गुरुपाई॥ चोर औ साहु जगतमें ब्यापे, जो लखपावै कोई॥ सांचे मिले तबै सुख उपजे, तनके तपन बुझाई॥ सांचे एक जगतमें सतगुरु, भौतारन कंडिहारा॥ कहैं कबीर सब जगके गुरुवा, मर मर ले औतारा॥

साखी-द्वादश दल जहां रचिके, करहु प्रेम परकाश।
मध्यक्षेत्र बिस्तारहू, अंक नाम विश्वास॥ ३॥

गगनमंडलका बासा संतो, जहां देखो अजब तमासा संतो॥ गढ मेरो गगन सुरत मेरो चौका, चेतन चँवर ढुरावे॥ इंगला पिंगला सुषुमन नारी, अनहद बेन बजावे॥ अष्ट कमल दल पंखुरी बिराजे, उलटा ध्यान लगावे॥ पांचपचीस एक घर लावौ, तब धुनकी सुध पावैं॥ त्रिकुटी घाट अस्नान जो करले, रबि शशि सुषमन होई॥ हंसा केल करत राजन संग, एक महलमें दोई॥ विन बादल जहां बिजुली चमके, बिना सीपके मोती॥ कहें कवीर सुनो भाई साधू, निरखहु निरमल ज्योती॥

साखी-जापर बसे निह अक्षर, ताहि पवनके नाम ।
शब्द सुधारस खान है, हम तुम ताही धाम ॥ ४ ॥

अब हम अविगतसे चलिआये। काहू भेद भरम नहिं पाये॥ ना हम जनमें गरभ बसेरा, बालक होय खिलाये॥ काशी शहर जलहि बिच डेरा, तहां जुलाहा पाये॥ हते बिदेह देहधर आये, काया कबीर कहाये॥ बस हेत हंसनके कारन, रामानंद समुझाये॥ ना मोरे गगन धाम कछु नाहीं, दीसत अगम अपारा ॥ शब्द स्वरूपी नाम साहबका, सोई नाम हमारा ॥ ना हमरे घर मात पिता है, नाही हमरे दासी ॥ जात जोलाहा नाम धराये, जगत कराये हांसी॥ ना मोरे हाड चाम ना लोहू, हौं सतनाम उपासी॥ तारन तरन अभय पद दाता, कहैं कबीर अविनासी ॥ ५ ॥

होत अनंद अनंद भजनमें ।
बरषत शब्द अमीकी बादर, भींजत हैं कोई संत॥ अग्रबास जहँ तत्त्वकी नदियां, मानो अठारा गंग। कर अस्नान मगन है बैठे, बढत शब्दके रंग ॥ पियत सुधारस लेत नामरस, चुवत अग्रके बुंद। रोम रोम सब अमृत भीजे, पारस परसत अंग ॥ श्वासा सार रचे मोरे साहब, जहां न माया मोहंग । कहें कबीर सुनो भाई साधू, जपो सोहंग सोहंग ॥

साखी-रामनरायन जगत गुरू, करें बोध संसार ।
वचन प्रतापसे ऊबरे, भौजलमें कडिहार ॥ ६ ॥

दर्शन देहु कबीर अब मोहिं ।
अघ तम पुंज दहन रवि भासत, निरमल होत शरीर॥ श्वेत कमल पुरयनपर चौका, कर्मके कागद चीर । सुमरन करके दल तहां धरिया, सीतल जल हल नीर ॥ हंस बोलाय पुरुष जब लीन्हा, दीन्हो अंमर चीर। अमृत भोजन हंसा पावे, शब्द दूधके खीर॥

सेज्या पुष्प श्वेत सिंघासन, माथे छत्र मनि हीर । कहैं कबीर सुनो भाई साधू, सुमरण करो अस्थीर ॥

साखी-चार गुरू संसारमें, धर्मदास बड़ अंस ।
मुक्तराज तुमको दिये, अटल बयालिस वंश ॥ ७ ॥

पचडोरी ।

शब्द सिंघासन पाटमें, तुम हंसा बैठो आये हो । कौन नाम मुक्तामनी, कौन नाम वे अंस । कौन नाम वे पुरुष हैं, कौन नाम वे हंस ॥ अजर नाम मुक्तामनि, उग्रनाम वे अंस । ज्ञानी नाम वे पुरुष हैं सुर्त, नाम वे हंस ॥ मूलद्वीप निज द्वीप है, और सुनो हम पांह । बैठे हंस उबारही, सोहंगमके बांह ॥ जंबूद्वीपके हंसा भाई, पांजी बैठे आय । कहैं कबीर धर्मदास सो, तुम लावहु बांह चढ़ाय ॥

साखी-हंसा छूटे बाज जों, कोट सिंघका जोर ।
सुमरन दीनदयालका, पहुँच गया निज ठौर ॥१॥

नाम सनेह न छांडिये, भावे तन मन धन जरजाय हो॥ पानीसे पैदा किया, नख सिख सीस बनाय । वह साहबको बिसारिया, तेरो गाढो होत सहाय ॥ महल चुने खाई खने, ऊंचे ऊंचे धाम । जब जम बैठे कंठमें तेरो, कोई न आवे काम ॥ मात पिता सुत बंधुवा, और दुलारी नार । यह सब हिलमिल बीछुरे, तेरी शोभा है दिन चार ॥ जैसे लागी औरसे, दिन दिन दूनी प्रीत । नाम कबीर न छांडिये, भावे हार होयके जीत ॥

साखी-उनमुनि चढी अकाशमें, गई गगनमें छूट ।
हंस चलासो जात हैं, काल रहा सिरकूट ॥ २ ॥

अबकी बेर उबारिये मेरी अर्जी दीनदयाल हो ॥ आई थी

वही देशसे, भई परदेशी नार। वह मारगमें भूलिया, बिसर गई निज नाह॥ जुगन जुगन भरमत फिरे, जमके हाथ बिकाय। करजोरे बिनती करों, माहि मिलके बिछुर मत जाव॥ बिषम नदी बिकराल है, वाहित करिया धार। मोह मगरके घाटमें, खाये सुर नर झार॥ शब्द जहाज कबीरका, सतगुरु खेवनहार॥ कोइ २ हंस उबारहीं, पलमें लेहिं गोहार॥

साखी-चली जु पुतली नोनकी, थाह सिन्धुकी लेन।
आपन गल पानी भई, उलट कहे को बैन॥ ३॥

कौन मिलावै जोगिया, जोगिया बिन रहो न जाय हो॥ हों हरनीं पिय पारथी, मारा शब्दका बान। जाहि लगे सो जानिया, और दरद नहिं आन॥ पिय कारन पियरी भई, लोग कहे तन रोग। जप तप लंघनमें करों, पिया मिलनके योग॥ हूं तो प्यासी पीव की, रटों सदा पिव पीव। पिया मिले तो जीविहों, ना तो (सहजे) त्यागों जीव॥ कहें कबीर सुन जोगिनी, तनही में मनही समाय। पिछली प्रीतके कारने, (जोगी) बहुरि मिलेंगे आय॥

साखी-अस बीरा प्रताप बल, प्रबल काल ते होय।
जेह सतगुरु बहियां मिले, हंस न जाय बिगोय॥ ४॥

हंसा दुरमत छोड़ दे तूं तो, निर्मल होय घर आव हो॥ दूधहि से दधि होत है दधि, मथ माखन होय। माखनसे घृत होत है, बहुर न छांछ समोय॥ ऊंखहिसे गुड़ होत है, गुड़से खांड होइजाय। सतगुरु मिल मिसरी भये, बहुरि न ऊंख समाय॥ खांड जो बगरी रेतमें गजमुख, चुनी न जाय। जात बरण कुल खोय के, चींटी होय चुन खाय॥ दाग जो लागा नीलका, नौ मन साबुन धोय। कोट यतन परमोधिये, कागा हंस न होय॥ कहैं कबीर सुन केशवा, तेरी गत अगम अपार। बाप बिनोरा हो रहे, पूत भये चौतार॥

साखी–बीरा पद जिन जानहू, पुरुष नाम निजमूल।
जा दिन हंसा तन तजै, मेटैं संशय शूल ॥ ५ ॥

शब्दसनेही हंसा तुम, जग तज होहु न्यारा हो ॥ सतशब्द निज डोर है, तुम हंसा गहो बनाय। सतबीरा निज नाम है, (तुम) चाखतही घर जाव ॥ बिना बीज को जामि हैं, बिन अंकुरको झाड़। बिन डोडी फल लागिया, कोइ साधू करे बिचार ॥ अजर केर अंकुरा भये, अजर केर लागी डार। अजर फूल फल लागिया, (कोइ) साधू करे अहार ॥ मोहि अजर कर जानहू, अमर देऊं बताय। जेहि भांड़े निज सांच है, (हम) तामो रहें समाय ॥ कहें कवीर धर्मदास सो, बेग जाहु संसार। सोहंगमके बांह से, (तुम) हंस उतारो पार ॥

साखी–उत्तर घाटी ऊतरे, पांजी बैठे जाय।
तहवां सुर्त समावै, पुरुषके परसे पाय ॥ ६ ॥

चौपड़।

चल सखी चौपड़ खेलिये, तन मनसे बाजी लाय हो ॥ चौपड़ खेलौं सुन्नमें, खेलों दिन औ रात। चल हंसा घर आपने, जहां तेरी उतपात ॥ चौपड़ खेलों पीवसे, बाजी लगावों जीव। जो हारों तो पीव की, जो जीतों तो पीव॥ चार गली घर एक है, चार बरन एक सार। पासा ढारा प्रेमका, जीत चली सोई नार॥ चौपडिया के खेलमें, जुग नाहनेको दाव। नरद अकेली हो रही, छिन पल खावे घाव॥ चौरासी घर भस्मके, पौमें अटकी आय। अबकी पौं जो ना परे तो, फिर चौरासी जाय॥ पगरासे बाजी लगी, परे अठारा दाव। सार गँवाई हाथसे, सिर पर लागे घाव॥ जात बरन कुल मेटिके, पाये भक्ति अटूट। कहें कवीर धर्मदाससों, कोई न पकडे खूट ॥

साखी-मैं कबीर बिचलों नहीं, शब्द मोर समरत्थ ।
जाको लोक पठाइया, चढे शब्दके रथ ॥ ७ ॥

ज्ञान रतनकी आंखिया, तुम देखो जमके जाल हो ॥ जमके फंदा काटो हंसा, जग तज होहु न्यार । सतगुरु दरशन देयँगे, तुम उतरो भौजल पार ॥ जो तुम हंसा निर्गुन चाहो, सर्गुन करो बिचार । निर्गुन सर्गुन छोडिके, (तुम) दोउ तज होहु न्यार ॥ अष्ट कमल दल ऊपरे, भँवर गुफाके घाट । सहस पंखुरीको कमल है, पश्चिम दिशाके बाट ॥ नौ खंड हेत बिसारो हंसा, शब्द सुरत चित धार । कहैं कबीर धर्मदाससों, तुम उतरो भौजल पार ॥

साखी-नाद संघाती कबीर हो, बिंदहि देहु न भार ।
जुग जुग हंस हिरम्मर, नाद उबारन हार ॥ ८ ॥

चौकाकी आरती ।

मंगलरूप आरती साजे, अभय निशान ज्ञान धुन गाजे ॥ टे० ॥ अक्षे वृक्षकी अमर छाया । प्रेम प्रताप अमृत फल पाया ॥ निसि बासर जहां सूर न चंदा । परम पुरुष जहां करत अनंदा ॥ तन मन धन जिन अर्पन कीन्हा । पुरुष पुरुष परमातम चीन्हा ॥ जरा मरनकी संसै मेटो । सुरत संतायेन सतगुरु भेंटो ॥ कहैं कबीर हिरंमर होई । निरख नाम निज चीन्हे सोई ॥

मंगल ।

बनजारिन बिनती करैं सुन साजना । (साधो) नरियर लीन्हो हाथ संत सुन साजना ॥ बिना बीजको वृक्ष है सुन साजना । (साधो) बिन धरती अंकूर संत सुन साजना ॥ जाको मूल पताल है संत सुन साजना । (साधो) नरियर सीस अकाश संत सुन साजना ॥ बिना भेद जनि मोरहु सुन साजना । (साधो) जीव इकोतर हानि संत सुन साजना ॥ गुरुके शब्दले मोरहु सुन

साजना। (साधो) खुले जमको कपाट संत सुन साजना॥ सखियाँ पाँच सहेलरी सुन साजना। (साधो) नौ नारी बिस्तार संत सुन साजना। कहें कबीर बघेलसे सुन साजना॥ रानी इंद्रमती सर्दार संत सुन साजना॥

नारियलका शब्द॥

मोरहु नरियर मोरहु हो, आपन अंस बचाय। बिना शब्द जिन मोरहू, जिव परले तरजाय॥ तीन अंश नरियर महँ, तामों एक हमार। आपन अंस बचायके, जमके अंस निनार॥ जमको अमल मिटावहू, पवन बतीस बिलोय। नीर नेह निवारहू, चलो महातम खोय॥ धरती रेख सुधारहू, पौरुष पवन अमान। बिना भेद जिन मोरहू, जीव एकोतर हान॥ सोई पवन निज गहि रहो, नरियर बास समोय। तो नौ तत्व सुधारहू, काल निकट नहिं होय॥ धरती गुन गहि प्रगटहू, करो शब्द परकाश। साहब कबीर कर दीहल, दृढ मानो धर्मदास॥

भोगका शब्द।

सत पुरुषको भोग लागे, सिंगी शब्द अनाहद बाजे हो॥ कदली पत्र साजो पनवारा। सीतल शब्द जोत उजियारा॥ नरियर मोरि खुरौरी कीन्हो। आद नाम अंतर घट चीन्हो॥ सुघर मिठाई मधुर मिठाई। प्रीत भावसे संत मंगाई॥ लौंग लायची किसमिस मेवा। सुघर मधुर रस दाख घनेवा॥ सुख-सागरको निर्मल नीरा। जापर सतगुरु तृप्त शरीरा॥ सतपुरुषको अर्पन कीन्हा॥ शंख शब्द धुन बाजे बीना। सो पनवार दासको दीन्हा। जाते काल भयो आधीना॥ पान पसाद जीव जो पावे। अंकुरी सतलोक सिधावे॥ ऐसा भेद करो परकाश। सत्य शब्द मानो बिश्वास॥ कहें कबीर सुनो धर्मदास। बीरानाम करो परकाश॥

शब्द तिनुकाका।

जमनियाके डार साहब तोड़ दीजे हो ॥

एक जमनियाकी चौदह डार, सार शब्द ले तोड़ दीजे हो ॥ सुरत हमारे अजब पियासे, प्रेम अमीरस घोर दीजे हो ॥ गुरु हमारे ज्ञान जौहरी, हीरा पदारथ अमोल दीजे हो॥ यह संसार बिषैरस माते, भरम किंवरिया खोल दीजे हो ॥ धर्मदासकी अरज गोसांई, जीवनको बंध छोर दीजे हो ॥

शब्द कंठीका।

पायो निजनाम गलेको हरवा ॥

सतगुरु पटवा अजब लहरवा। छोटी मोटी डोलिया चार कहंरवा॥ प्रेम प्रीतकी पहिर चुनरिया। निहुर नचो साहब दर-बरवा॥ सतगुरु कूंची दई महलमें। जब चाहो तब खोल केंवरवा॥ एही मेरो ब्याह यही मेरो गवना। कहें कवीर बहुर नहिं अवना ॥१॥

शब्द नामका।

गुरु पईयां लागों नाम लखाय दीजो हो ॥

जुगन जुगनके सोये मनुवा। दे सत शब्द जगाय लीजे हो ॥ घट अँधियार कछू नहि सूझे। ज्ञानकी दृष्टि खुलाय दीजे हो॥ बिषकी लहर उठे घट भीतर। अमृत बुंद चुवाय दीजे हो॥ गहरी नदिया नाव पुरानी। खेयके पार लगाय दीजेहो ॥ धर्मदासकी अरज गोसांई। जीवन बंध छोड़ाय दीजे हो ॥ २ ॥

शब्द दीहल प्रारम्भः।

आमिन बिनती बिनवई, सुनहू हो बंदीछोर। भौसागर मोहिं तारहू, इतना मोर निहोर ॥ भौसागर अहै भयावना, सूझे वार न पार। झंझर नाव पुरातमा, खेइ उतारो पार॥ कोट कर्म छूटे नहीं, या जिव कीट समान। भृंगी होय गुरु तारहू, अधम उधारन मान ॥ आसन आदि पुरुषको, धर्मदासको दीन्ह। चार अंश

चौका महि, तामो लीन्हो चीन्ह ॥ कहैं कवीर सुन आमिनी, रहो हमारी आस। जीवन पार उतारिहौं, होइ चूरामन दास ॥ १ ॥

दोहल कालज्ञान।

पांच घरी बायें चले, सोई दहिने होय। दस स्वासा सुखमन चले, ताहि विचारो लोय॥ आठ पहर जबही चले, पिंगला माहीं स्वास। तीन बरस काया रहे, ता पीछे होय नास। आठ दिना जबहीं चले, स्वासा रवि की ओर। दोय बरस काया रहे, प्रान जाय तन छोर॥ सोरह दिन जबहीं चले, भान दाहिने होय। बरस दिना काया रहै, पीछे रहै न कोय॥ बीस रैन औ बीस दिन, चले दाहिनो स्वास। षष्ट मास काया रहै, ता पीछे होय नास॥ एक मास औ एक दिन, रविके पहरा होय। स्वास सरोधा सत्य है, नर जीवे दिन दोय॥ नहिं चंदा नहिं सूर है, नहीं सुषुमना बास। मुख सेती स्वासा चले, पहरमें होय बिनास॥ कहें कवीर विचारके, गहो शब्द टकसार। सत्य लोक हंसा चले, आवा गमन निवार ॥ २ ॥ निज अनंद घर महलमें, करो सदा सुखबास। सो वर चीन्हों संतो, काटो जमके फांस॥ निज उत्तम घर आपनो, सो तुम चीन्हत नाहिं। बिन चीन्हे कहां जैहो, यह बड़ अचरज आहि॥ अबहू कहो जो मानहू, उलखो वचन हमार। दुबधा दुरमत छोड़के, चीन्हो वस्तु सम्हार॥ पांचतत्व निज मूल है, करता इनहीं मांहि। नख सिख तन निज ढारिया, सो कहुं अन्ते नाहिं॥ अनत होय तो को गढे, यह तन सुंदर रूप। सकल साज एक बुंदमें, ऐसा ख्याल अनूप॥ अगिन पवन जल पृथवी, इनमें साहब जीव। पुहुप मध्य ज्यों बास है, दूध मध्य ज्यों घीव॥ घरमें जल जलमें घर, बोलनहार संजोग। सांचे सांचे ढ़ारिया सांचेमें सुख भोग॥

तब जो हता सो अब है, फेर फार कछु नाहिं। बिन स्वरूपको साहब, सो कतहूं नहिं आहिं॥ निर्गुण नाथ निरंजना, जिनके पिंड न प्रान। सो बर बरो सबन मिलि, कामिन रूप जहान॥ गुरुमुख भई सगाई, सुमरन लागो नेह। तत्वको तेल चढाय के, भूल गई गुन देह॥ ज्ञानको मंडप छाइले, ध्यानको भराई ठांव। बिन अक्षरको मंगल, बिन रसना गुण गाँव॥ दूलह देव निरंजन, दृष्ट मुष्टसे चीन्ह। पृथी अकाशके बाहिरे, या विधि भांवर दीन्ह॥ भाँवर भई अनंद भये, अजहूं मिलना नाहिं। तन छूटे, गुरु टूटे तब वे गहि हैं बांहि॥ ऐसी आशा अवधि बद, गये गुन राह बताय। नाम अधार सो रहगई, दुलहिन अतिसुख पाय॥ अवध पूजे जब आयके दुलहिन, जोवै बाट। तन छूटे वे ना मिले, कौन सहे अपघाट॥ गोहरावे आवे नहीं, बिन देखेकी प्रीत। आप अपुन चीन्हे बिना नहिं आवे, परतीत॥ आशा भई निराशा, को आवे को जाय। भौजल नदिया भयावना, फिर फिर गोता खाय॥ अगम अगाह अथाह है, थाह न पावे कोय॥ सतगुरु थाह थहावे, जीवन मुक्ता होय॥ जा कारन जग नाचिया, नाना भेष बनाय॥ सो ना मिलौ ना मिलि हैं, नाहक गोता खाय॥ बिन परचे जिन भूलियो, कहैं कबीर विचार। जिनको परचे अब भई, तिनके अटल दिदार॥ ३॥ सुखसागर सुख विलसहू, छांडो दुखकी आस अपने जिवन धन चीन्हहू, सब सुख तुम्हरे पास॥ जुगल रूप जग भीतरे, कांता कामिनि नेह,। अष्टधातको जुगल तन, एक प्रान दोय देह॥ तन सूरत मन मूरत, साहब बोलन हार। नर नारी सुख बिलसो, करता सिरजन हार॥ यह छबि आय सकल विधी, दुखका मूल बिसार। एक बुन्दते सिर-जिया, एकहि है करतार॥ आपुहि तखत बनावै पानी पवन

संयोग। अष्ट धातके महलमें क्रीडाकरे सुखभोग॥ आपुहि राजा परजा, आपुहि रंक फकीर। आप सर्व गुन आगरे, आपुहि गुन गंभीर॥ आपुहि जती सती है, आपुहि है दयापाल। आपुहि जोगी जंगम, आप कियो विस्तार॥ आपुहि गावै बजावे, आपुहि तोरे ताल। आपुहि लखे अपन पौ, आप अपुनमें काल॥ आपुहि करे करावै, लेय औरको नांव। आपुहि खलक ऊजरे, आप बसावे गांव। जुगअसंखलो शंकर, धरे सुन्नमें ध्यान। उनहूं न लखो अपुनपो, तू नर क्यों बौरान॥ ब्रह्मा विष्णु थकित भये, खोजत पार न पाय। औरन्हकी मति केतिक, नाहक गोता खाय॥ शिव सनकादिक नारद, शारद शेष सुरेश। अस्तुति करत थकित भये, उनहूं न कहा संदेश॥ एकै जपै निरंजन, निर्गुन और निरंकार। पांच तत्वके बाहिरे, उनके भये अकार॥ अलख अपार परम गुरु, अरु मूरत वे पिंड। औगह अगह अबीज है, जोत सरूप अखंड॥ सुध बुध वा पहुँचे नहीं, महा कठिन ऊ पंथ। सुमिरन साखकी खबर नहीं, कथकथ मरे ग्रंथ॥ हाथ माथ पग पिंड बिन, केतिक बडो वह कोड। किसबिध चेरी आगरी, किसबिध खसम निगोड॥ कथकथ मुनिजन उडगये, जस भँवे अकाशे गिद्ध। चारा वाके भुई धरो, कहा उडे भये सिद्ध॥ नौ नाथ चौरासी सिद्ध, कोट अनंतन दास। उनहूं न लखो अपुनपो, भरमत फिरत उदास॥ कस्तूरी है कुरंगरंग, चले पवनके बास। मृगमध्य नाभी बसे, मृग ढूंढे वन घास। कहें कवीर अब कहतहूं, डार भर्मकी मोट, अपनो भलो जो चाहऊ, परखलेउ खर खोट॥ ४॥ सुन्न सरोवर भीतरे, तीरथ एक अनूप। तेज पुंज जहां झलकई, प्रगटे जोत स्वरूप॥ कदल कमलदल अंतरे, रजनी बासर नाहिं। अनहद घंटा बाजई, पांच

सुन्नके माहिं ॥ कंचन कूट औटाइले, भिन कबहूँ नहिं होय। परमल बास पलासकी, काष्ठ कहे नहिं कोय॥काष्ठ माहिं पावक बसे, ज्यों तिल मद्धे तेल। जुक्ति बिना नहिं नीकसे, ऐसा अद्भुत खेल ॥ परम पुरुष संग दुलहिन, खेलै आतम सार। एक वरण एक अंक है, एक रूप अनुहार ॥ साहब कवीरके दीहल, सुनियो संत सुजान। समुझत सुख ऊपजे, नातो दुक्ख निदान ॥ ५ ॥ सुकृत फूल गुलाबके, सबघट रहो समाय। कहु कैसेके पाइये, गुरु बिन लखो न जाय॥ तीन त्रिकुटीके ऊपरे, फुलै सोहंगम फूल। जहां न धर्मकी आसना बिन अझर निजमूल ॥ चार जोजनके ऊपरे, पुरुष विदेही पूर। जगरमगर वह नग्र है, बाजत अनहद तूर ॥ अपने ठीका हम खडे, सतगुरु दिया बताय। खिरकी खोल दिखाइया, राह गगनकी जाय ॥ कहें कवीर धर्म-दास सों, प्रगट दीहल बताय। सो हंसा भल पावई, नहिं आवे नहिं जाय ॥ ६ ॥ अचरज देखो कामिनी, कहतेको पतियाय। अधर साहब हम देखिया, सतगुरु डंडिया फँदाय ॥ चंद सूर जहँवां नहीं, जहां न धरनि अकास। तीन पुरुष मोरे प्रीतम, केहि विधि करों निवास ॥ गुरु दरशनके कारने, सरवस देउँ लुटाय। एक पलकके बीछुरे, अब मोहिं कछु न सोहाय॥ गुरु दरसन हम पायल, छूटल कुल परिवार। अब जैहौं पुर आपने, परख परख टकसार॥ कहैं कवीर धर्मदाससों, हिरदे करो बिचार। अरस परस करो कामिनि, निर्गुण नाह तुम्हार॥७॥ दरिया पार हिंडोरना, दीन्हो कंथ बताय। कोई एक नार सुलक्षनी, हरदम झूलै जाय ॥ अरध उरध दोय खंभ हैं, सुखमन लागी डोर। जेठी सुर्त सम्हारले, रचले गगन मन मोर॥ द्वादश केर हिंडोरना, झूलै पांचों नार। मेघ घटा घन गरजई, पिय बिन जग अंधियार॥

अव्वल घरी मोरे जोबन, समुझ न आई मोह। मैं सकुची दोय नैनमें, पियसों परो बिछोह॥ चंद लहर मोरे अंचला, सूर लहर मोरे पीठ। मनरे पवन गहि आसन, करले साहब सो डीठ॥ कंथ हमारे निरगुन, हम अवगुनियां नार। एक पलक सुख सेजमें, बात न पुछे हमार॥ पोहप दीप बसे बालमा, उहांते आयेल संदेस। छाडो छाडो जमपुरी, बिहँसि चलो वहि देस॥ स्वेत बरण एक सुंदरी, शोभा अगम अपार। कहें कबीर सुन धर्मनी, आवौ लोक हमार॥८॥ गुरुके वचन मोरे प्रीतम, हरदम खबर जो लेय। जो चित अंते जाइहै, हंसि पिया तजि न देय॥ पार बसे मोरे प्रीतम, दुरबल भई मोर देह। पांच भइया संग दारुन, तिनसो छूटल सनेह॥ जाके आँगन नदिया बहे, सो कस कुवा नहाय। जा घर नार सुलक्षनी, सो कस परघर जाय॥ गृह अंगना नहिं भावई, सुख संपत न सुहाय। निर्गुण नाह मोरे आवई, सेज गई कुम्हिलाय॥ जो साहब बर पाइहों, नइहर धरो उठाय। सेज बैठ सुख बिलसही, गुरुमुख मंगल गाय॥ कहें कबीर मैं थाकल, छूटल यह संसार। चरन कमल चित राखहू, पूरण नाम अधार॥९॥ अरे! अरे! बालसंघातिनि, सखी सुनो तुम आय। हम जो भई परदेसिन, गुरुमुख मंगल गाय॥ पिया हमारे तीन जने, दुलहिन पांच पचीस। इन प्रपंच हम भूलिया, जन्म गयो सब खीस॥ सबे कहावे पीवकी, चहुँ दिस पिउ पिउ सोय। ना जानों या झुंडमें, कौन सोहागिन होय॥ है कोई प्रेम पियारी, जस इतनो करलेव। जुगन जुगनके बीछुरे, पिया मिलन करदेव॥ सतगुरु लगन लिखाइया, हमे दिहल वा देश। जा घर उगे न आथवे, पवन नहीं परवेश॥ गई धिया नहिं बहुरे, सुन ससुरेकी बात। अन्न पानी नहिं भावई, सीतल भई सब गात॥ साहब

कबीर कहि दीहल, सुनियो हो धर्मदास। निर्गुन केर सुलच्छनी, निर्गुण कियो निवास ॥ १० ॥ आरती साजहु दुलहिन, आवहिं कंथ सबेर । निर्गुण मंगल गावहू, अब जिन लावहु बेर ॥ तन रुइया कर बातियां, मन तिलको कर तेल। सुरत हाथ दियना धरो, निरत चली कर केल ॥ अछे पलंग जहां पचरंग, सो रे बिछावौ झार। सुषुमन सेज सँवारहू, सुकृत गढवा धार ॥ हँसिके प्रीतम आइया, बिहँसि के लीन्हो पाय। मुख देखत सुख ऊपजे, सुमिरत कर्म कटाय॥ ईंगला लिये कर झारी, पिंगला पंखा गाँस। सतगुरु शब्द सहायक, पहुंच पियाके पास ॥ हियरा गहभर भेटिया, मुक्त पलोटे पांय। मुख देखत सुख ऊपजे, तनकी तपन बुझाय ॥ कहें कबीर धर्मदाससो, सुनियो संत सुजान । पिया मिलो सुख बिलसो, जम जीतो मैदान ॥ ११ ॥ भौसागर मोर नइहर, निर्गुण सासुर मोर। आवत बटिया भुलानी, काल करे घन घोर॥ आग लगे वह नइहर, धोख परे असगार। सास ननद झगरा करे, नित उठ मांडे रार ॥ अनचिन्ह ससुरे के लोगवा, नित उठ लावे दोस। पार परोसिन बैरिन, एक पियाके भरोस॥ बालम मंदिर छवायेल, झलके अधर अकास। छिन छिन बदन निहारत, देखत बहुत हुलास ॥ प्रेम सुरत गहु कामिनि, जामों निर्गुन बास। परम अनंद सुफल भये, जम माने (जाके) त्रास॥ बहुर न या जग आइहो, बहुर न धरिहो देह। साहब कबीर कहि दीहल, निरख परख कर लेह ॥ १२ ॥

मिलरहु सखी री तू मिलरहू, अपने पिया सुख जान। नइहर आपन कोई नहीं, जासों करो पहिचान॥ मोरे जीवको भावतो, छाय रह्यो वही देस। मैं विरहिन निशदिन फिरों, कर जोगिनको भेस ॥ तात मात कोइ संग नहीं, संग नहीं सग भाय। काम न

काहू कुटुम्ब सों चली, निसान बजाय ॥ चंद सूरकी पालकी, तेहि चढ बैठी नार। सुखमन संग सहेलरी, दुलहिन उतरी पार॥ कमल जो फुले अकासमें, अलि गुंजे चहुंओर। पियाको ले बैठी तहां, ढुरे सोहंगम चौंर ॥ सोहंगम मूरत मोरे, हिरदे रही समाय। कहैं कबीर धर्मदाससे, सो लाजो दरसाय ॥ १३ ॥

दीहल आगम ज्ञान ।

पांच सखी संग दुलहिन, सासुर झगरा होय। ससुर चोर घर मूसही, कासों कहों दुख रोय ॥ वासर चंदा ऊगही, निस-कर ऊगे सूर । गंग जमुन दोय सम बहे, हंस गवन बड़ दूर ॥ गंग जमुनके अंतरे, परवत धोल सुजाव। चितवन नजर न आवई, जमको अमल अमान। ध्रुव मंडल नहिं दरसई, नेत्र गुंज अनुसार। चित गहि चेतो संतहो, मास परे जमधार ॥ स्वासा सुर नहीं बंदई, केहर बंदन लेय। आठें पाखके भीतरे, हंस पयाना देय॥ कायापुर पाटन परचे, याका यही सुभाव। चितगहि चेतो कडिहारहो, औ घट लगे न नाव॥ जेमुन लगन संभारहू, सुमिरन निर्गुन सार। पान छत्रपति साजहू, हंस उतारो पार ॥ पच्छिम लहर जुगावहू, पूरब चंदा तान। निर्गुन शब्द उचारहू, कबहुँ न होय जिव हान॥ चंद उदय सुर आथवे, कूच नगारा होय।साहब कबीर कर दीहल, देखो शब्द बिलोय॥१४॥ जुगत जान जुग बांधहू, चार पवन परवान। हंस हंस चलो बिहँसत, जम जीतो मैदान ॥ काल कठिन दुर्गदानी, हंसनके घटवार। तुरतहिं पार उतारई, जिन गहिले टकसार॥ चौथे पवन जुग बंधना पवन बहत्तर डोर। हंस हंस चल सत्तपुर, उतरो घाट करोर ॥ दान मांगें जगातिया, ना रोके घटवार। जंबूद्वीप देव लेखा, परख परख टकसार॥ भौजल नदिया भया-वना, सूझे वार न पार। अमित पवन वासा रहे, जिनरे गहल

टकसार ॥ बिन हंस हंस न पहुंचई, बीचहिं परे भुलाय। काल कठिन भरमावई, कामिन परे उरझाय॥ हंस हंस मिलि लेचले, जहां पुरुष रहिवास। साहब कवीर कहि दीहल, निर्गुन अधर निवास ॥ १५ ॥ सहतेजीं चित चेतहू, सुमिरो नाम अधार। हंसन पार उतारहू, परख २ टकसार ॥ भौसागर बड दारुन, विषके लहर फिराय। बिन सतगुरु नहिं बांचिहो, सबै काल धरखाय ॥ मोरहु नरियर मोरहू, आपन अंस विचार। काल कठिन दुर्गदानिया, काह करे झखमार ॥ सहतेजी चित चेतहू, काल कठिन बल जोर। लगन साध परमोधहू, पला न पकडै चोर ॥ निर्गुन नाम निअक्षर, सुमिरत कर्म कटाय। साहब कवीर कहि दीहल, सहतेजी समुझाय ॥ १६ ॥ चार कमल चित चेतहू, जहां जीवको बास। जुग जुग पान सुधारहू, मेटो जमको त्रास ॥ कमल तत्त्व चित चेतहू, जिव ना नसे तेह मांह। लगन सनेह बिचारहू, देउ हंसको बांह ॥ जाहि कमल बस जीयरा, ताहि लगन देव पान। प्रीतम जैमुन जगपती, हंस होय निरवान ॥ या बिधि भेद बिचारहू, निरखो तत्व निसान। तब छुटिहै भौसागरा, जिव कहं पहुंचे यान ॥ कमल तत्व नहिं दरसई, जिव धोखे पर जाय। परमोदिक भये दारुन, राखो काल झुलाय ॥ राये बंकेज बिचारहू, जीवन करहु सुधार। साहब कवीर कहि दीहल, परख परख टकसार ॥ १७ ॥ राज बरन जुग बांधहू, भांवर सती सनेह। येही गमन करो दुलहिन, बहुर धरो जिन देह ॥ चंपा पहुम चमेलिया, लाये करेउ बनाय। तिलक लिलार सम्हारहू, जमकी दासी छुड़ाय ॥ हंस हंस जुग बांधहू, चौदह पवन लखाय। शब्द चित्त गहु दुलहिन, कोटिन कर्म कटाय॥ जाहि पवन पर शशि बसे, चित गहि रहे चकोर।

और दिसा चितवे नहीं, ऐसा सुरत वहि ओर ॥ शिव शक्ती जल अर्पई, गुरुके बचन प्रमान । जन्म सो अम्मर दुलहिन, जम जीतो मैदान ॥ सीस मट्टुकिया गहिलहु, मुक्ती देहि सुधार। साहब कबीर कहि दीहल, परख परख टकसार ॥ १८ ॥ गुंज-बरन जुग बांधहू, लगनहिं लगन बिचार । निरखके पान सुधारहू, कबहुं न होवे हार ॥ दीप दीप जम बैठल, पलक न लावे भोर । अमी बीज जिन बोयल, भये कालके चोर ॥ जम पाटन जे जीतले, तिनपर माँगे लेख । गुरुजी लगन सुधारहू, दिखलो जमहिं बिसेख ॥ अमी बीज जिन बोयल, भये कालके चोर । सुर नर मुनि सब खायल, काल कठित बल जोर ॥ शेष सहस मुख विनवई, ब्रह्मा जमकी ओर । साहब कबीर कहि दीहल, लेख देखहु सोर ॥ १९ ॥ मनहिं आनंद दुलहिन, बिहँसत बोली बात । भौसागर बड संकट, चौदह लगी जगात ॥ प्रभुजी लगन बिचारले, देखले जमहिं बिसेख । जिन जम पाटन परसिले, तिनपर मांगे लेख ॥ दीपन दीप जगातियां, पलक न लावे भोर । अमी बीज जिन बोयल, भये कालके चोर ॥ सुर नर मुनि सब अटके, काल कठिन बलजोर । शेष सहस मुख बिनवही, ब्रह्मा जाके चोर ॥ साहब कबीर कहि दीहल, लेखा देव चुकाय । जमको मस्तक तोरके, अभे निसान बजाय ॥ २० ॥ बासर लगन बिचारहू। कटे कर्मकी डोर । सुखसागर पहुंचावहू, जमसों तिनुका टोर ॥ राज बरन होती कामनी, तासम होते कान्ह । कर्म काट दे भांवर, जमकर मरदोमान ॥ चंद लगन चित चेतहू, उतरो भौजल पार । निरख परख गुरु परसिहौ, परख परख टकसार ॥ धरती रथ चढो कामनी, कटे कर्मके फंद । हंस हंस जुग बांधहू, अब जिव करहु अनंद ॥ सहतेजी शरनागती,

कोटन कर्मकटाय । साहब कवीर कहि दीहल, अभै निसान बजाय ॥ २१ ॥ पान छत्रपत कर धरो, अनभो संधि बिचार । विषम त्रिक्ष जमकी दसी, रेख गुंज निरवार ॥ जुगकी रेख सम्हारहू, पान अखंडित सार । जाते हंस न बीगरे, चंद लगन बिस्तार ॥ चार तत्व घटमें धरो, पाँचें लेहु समोय। जेहि अक्षरते जिव भयो, ताते हंसा होय ॥ वहि अक्षरते सब भयो, लोक दीप अस्थूल । ताको चीन्हो संतो, वहि अक्षर निजमूल ॥चार कमल घट भीतरे, परखो संत सुजान । जामें बासा जीवको, तहां सुधारो पान ॥ आन कमलमें जिव बसे, अंते पान प्रकास। अधर पान जम लेत है, जीव परे जम फाँस ॥ चारों मोहर सुधरहू, अंक छत्रकी छाँह । लक्षन लगन बिचारिके, देहु हंसको बांह ॥ सतगुरु संधि सम्हारहू, सब बिधि पूरन होय । सुरत निरत गहि धर्मनी, देखो शब्द विलोय ॥ पान छत्रपति साजहू, जुगकी रेख सुधार । कहें कवीर धर्मदाससो, हंस उतारो पार ॥ २२ ॥ सुमिरहु कामिन सुमिरहू सुमिरहु आपन नाह । अधर साहब हम देखिया, जहवां धूप न छाँह ॥ बिनही घटा घन गरजई, बिन जल तिरथ नहाय । देखतही सुख ऊपजे, सुमिरत कर्म कटाय ॥ बिन पानीको जीवन, बिन दीपक उजियार । ऐसो निर्गुण देखले, परख शब्द टकसार ॥ साहब कवीर कहि दीहल, अग्र सोहंगम फूल । अब मोरे जन्म सुफल भये, पाये मुक्तिको मूल ॥ २३ ॥ कौन हंसको खेल है, कौन मुक्तिको दाव ? । कौन अमृतको कूप है, कौन व्रजको घाव ? ॥ सुरत हंसको खेल है, भक्ति मुक्तिको दाव। छिमा अमृतको कूप है, शब्द वज्रको घाव ॥ बन बन ढूंढत का फिरे, अंदर फूली बेल। तोहीमें तेरो धनी, ज्यों तिल मद्धे तेल ।। जब चाहे तब देखिले,

अष्ट कमल के कोट। सतगुरु मिले तो पाइये, साहब तृणके ओट॥ कहें कबीर यह तत्व है, सब तत्वनको सार। जुगन जुगन चल आयेऊं, बोलनहार अपार ॥ २४ ॥ सतगुरु कहे चेतावनी, कौन अमीको अंक ?। जासो हंसा बांचई, जम सो रहे निशंक ?॥ कौन शब्दकी लेखनी, कौन वरनको पान ?। कौन नाम अगुवा भये, कौन बचन परवान ?॥ कौन नामको बीज है, कौन नाम की डोर ?। कौन शब्दकी बैठक, निरखो बस्तु अंजोर॥ धर्मदासकी बीनती, सतगुरु देव लखाय। कौन दीप पर हंस है, बहुर न आवे जाय॥ २५ ॥ सुनियो सुर्त चेतावनी, अग्र अमीको अंक। जासो हंसा बांचई, जम सो रहे निशंक॥ अमी शब्दकी लेखनी, सत्त वरनको पान। निहअक्षर निज बीज है, पुरुष वचन परमान॥ सुकृत नाम अगुवा भये, सत्तनामकी डोर। मूल शब्द पर बैठिके, निरखो वस्तु अंजोर॥ साहब कबीर कहि दीहल, सुन सुकृत चितलाय। पुहुम दीप पर हंस है, बहुर न आवे जाय॥ २६ ॥ अगम चरित चेतावनी, अधर अनूपम धाम। अजर अमर है सोई, सो वह निर्गुन नाम॥ कौने घर होय सुमिरन, कौने घर होय ध्यान ?। कौने घर होय देखहू, कौने घर अस्थान ?॥ सहज सुरत घर सुमिरण, त्रिकुटी संगम ध्यान। अजपा घर होय देखहू, हिरदे कमल अस्थान॥ कौन जुगत गढ साजहू, कौन जुगत गढ लेहु ?। कौन जुगत गढ तोरहू, कौन शब्द मन देहु ?॥ मूल बांध गढ साजहू, आपा मेट गढ लेहु। गुरुके शब्द गढ तोरहू, सत्त शब्द मन देहु॥ सहजे

सहजे देखिये, सहजे सुरत समाय। कहवे की कछु ना रही, देखे मन पतियाय॥ साहब कवीर कहि दीहल, रहन गहन समुझाय। बूझे संत बिचारिके, गुरुमुख मंगल गाय॥ २७॥ पांच तत्वके भीतरे, गुप्त वस्तु अस्थान। बिरले मरम कोइ पावई, सतगुरु वचन प्रमान॥ दिल अंदर दीदार है, बाद भ्रमें संसार। सतगुरु शब्द के मसकला, मांज दिखावन हार॥ महल लेत कोई सूरमा, बाजे अनहद तूर। बिना पिंडका पुरुष है, झिलमिल दरसे नूर॥ सहज समाधी लगि रही, मनका छूटा मैल। अनहद बाजा बाजते, सहजे पहुँचा गैल॥ बिना पांव को पंथ है, बिन बस्ती को देश। बिना पिंडको पुरुष है, कहैं कवीर संदेश॥२८॥ पारब्रह्म जासों कहो, ताहि निरंजन नाम। तहवांसे मन ऊपजो, तीन लोक लिये ग्राम॥ पारब्रह्म के अगुवा, मन राजा सरदार। जो चाहे सोई करो, कोइ न पावे पार॥ चौरासी उपजावई, आशा बीज जमाय। दशो जन्म राजा भये, ममता अमल चलाय॥ तीन लोकके भीतरे, सब जिव भये किसान। चौदह काल जगातिया, मारग रोक समान॥ तीन लोक के बाहिरे जहँ, समरथ को देश। चेतो हंसा चित धरो, छाड सकल भर्म भेश॥ पारब्रह्म की महिमा, सुनो संत चितलाय। साहब कवीर के दीहल, परख परख टकसार२९॥

अथ आरतिदर्शन प्रारम्भः ।

ज्ञान आरती अमृत बानी । पूरन ब्रह्म लेहु पहिचानी । त्रिदेवा मिलि ज्योति बखानी । निरंकारकी अकथ कहानी ॥ यहि आशा सबही मिलि ठानी । भरमि भरमि मुये नर प्रानी ॥ दृष्टि विना दुनिया बौरानी । साहेब छाडि यम हाथ विकानी ॥ कहहि कवीर कोइ संत सुजाना । जिन जिन शब्द हमारा माना ॥ १ ॥

कैसे मैं आरति करों तुम्हारी । महामलिन साहेब देह हमारी ॥ मैलेसे उपज्यो संसारा । हौं छुतिया गुन गाउँ तुम्हारा ॥ झरना झरे दशो दिशि द्वारे । कैसे मैं आवों निकट तुम्हारे ॥ जब तुम देहु अग्रकी देही । तब हम होइब नाम सनेही ॥ मलयागिरिमें बसे भुजंगा । विष अमृत गो एके संगा ॥ तिनुका तोरि देहु प्रवाना । तब हम पाएब पद निरबाना ॥ धनी धर्मदास कविर बल गाजे ॥ गुरु प्रताप आरती साजे ॥ २ ॥

अखण्ड आरती खण्ड न होई । कालहिं मारी रसातल खोई ॥ खण्डित पिंड इकइस ब्रह्मण्डा । खंडित नदी अठारह गण्डा ॥ खंडित रघुपति खंडित रावन । खंडित कृष्ण वीर बलि बावन ॥ खंडित धरती पवन अकासा । खंडित चांद सूरज कैलासा ॥ खंडित जहँ लगि सकल पसारा । खण्ड अखण्ड कवीर पुकारा ॥ ३ ॥

मंगल रूप आरती साजे । अभय निशान ज्ञान धुनि बाजे ॥ निसि बासर जहँ सूरज न चन्दा । परम पुरुष जहां करे अनन्दा ॥ अछे वृक्ष जाकी अम्मर छाया । प्रेम प्रकास अमृत फल पाया ॥ जरा मरनकी संशय मेटो । सुरति संतापन सतगुरु भेंटो ॥ तन मन

धन जिन्ह अरपन कीन्हा। परम पुरुष परमातम चीन्हा॥ कहै कवीर हिरम्बर होय। निरख नाम निज चीन्हे सोय॥ ४॥

आरती सत कवीर तुम्हारी। दया करो जाऊँ बलिहारी॥ पहली आरति पुहुमी आये। काशी प्रगटे दास कहाये॥ दूसर आरति देवल थपायो। आसा रोपि समुद्र हटायो॥ तीसर आरति चरण जल ढारे। हरिके पंडा जरते उबारे॥ चौथी आरति तुरतहि धाये। तोर जंजीर तीर ले आये॥ पांचे आरति बलख सिधाये। चौरासी सिधके बन्ध छुडाये॥ छठईं आरति अविगती धारे। मुरदासो जिन्दा कर डारे॥ सतयें आरति पीर कहाये। मगहर आमी नदी बहाये॥ आठें आरति मंडल सिधाये। जन ज्ञानीको संशय मिटाये॥ कहँ लगि कहौं वरनि नहिं जाय। धर्मदास आरती सच पाय॥ ५॥

आरती कीजे बन्दीछोर समरत्थकी। चरन शरन सतनाम पुरुषकी॥ आरती कर पुहमी पग धारे। सतयुगमें सतनाम पुकारे॥ आरति कर मुख मंगल गाये। त्रेता नाम मुनींद्र धराये॥ कर आरति जग पंथ चलाये। द्वापरमें करुनामय कहलाये॥ आरति युग २ बांधे आशा। कलयुग केवल नाम प्रकाशा॥ चारों युग धरे प्रगट शरीरा। आरति गावें बन्दीछोर कवीरा॥६॥

आरती करहिं धनि धर्मदासा। पांच तत्त्व मुख भेद प्रकाशा॥ प्रथमहिं वायु तेज है पानी। रहत अकास निरंतर जानी॥ गगन वायु गरजे असमाना। निज घर नित्य ध्वजा फहराना॥ कोट ब्रह्मा जहाँ कथे पुराना। कोट रुद्र जहाँ धरहीं ध्याना॥ कोट विष्णु बिनवे कर जोरी। औरहु देव तेतीस करोरी॥ शेष सहसमुख निशि दिन गावे। स्तुति करे पार नहिं पावे॥ जो गुरु मिले तो

भेद बतावे। पांच तत्व मुख भेद लखावे॥ कहै कबीर हंसा पतियाय। धर्मदास आरती सचुपाय॥ ७॥

ऐसी आरती देउँ लखाई। निरखत अधर ज्योति फैलाई॥ गहु निरच्छर गहु निज डोरी। धरमरायसो तिनुका तोरी॥ जुग बांधो निरखो टकसारा। जासें उतरो भवजल पारा॥ कोट जनमको कर्म कटाये। चौदह काल जीत घर आये॥ हीरा कोटि होय परकाशा। विना सुगंध पुहुपकी बासा॥ चन्द्र लगन गहि करो प्रकाशा। चौदह यम तब माने त्रासा॥ धरती धर्मनि उदित अकाशा। जापर सूरज करे प्रकाशा॥ कहै कबीर सुनो धर्मदासा। जम जालिम माने त्रासा॥ ८॥

आरति नाम निरन्तर भावे। तेतीसो मिलि मंगल गावे॥ चितकर थार ज्योति जिव गाजे। शब्द अनाहद झालर बाजे॥ घटहीमें यंत्र बजावइ बाजा। सतगुरु मिले भय सब भाजा॥ बिन करताल पखावज बाजे। श्वेत सिंघासन छत्र विराजे॥ कर सनमान जीव भये आगे। (साहेब) कबीर गुरुके चरनन लागे॥९॥

आरति सतनामकी कीजे। जीवन जनम सुफल कर लीजे॥ अग्रकी थाल अनूपम बाती। ज्योति प्रकाश बरे दिन राती॥ मुरली ध्वनि अनूपम बाजे। शब्द अनाहद धुन तहाँ गाजे॥ त्रिकुटी संगम झलके हीरा। चरन कमल चित राखु शरीरा॥ सत सुकृत आरति चित दीजे। तन मन धनहिं निछावर कीजे॥१०॥

जाघर आरति दास करत हैं। जनम जनमको पाप हरत हैं॥ कदलीदल पुहुपके द्वारा। सत सुकृत जाघर पग धारा॥ परिमल अग्र गुलाल सुवासा। जा घर हंस करे सुखवासा॥ अनहद ताल पखावज बाजे। सत्त सिंघासन छत्र विराजे॥ नाम एकोतर सुमिरे जबहीं। सतगुरु बैठ सिंहासन तबहीं। तत्वमता नरियर प्रवाना।

सतगुरु कृपा होय निर्वांना ॥ नरियर मोरत बास उडाई ॥ पल एक साहेब विलमें आई ॥ सतगुरु दया प्रगट जब होई । पाय प्रसाद महाफल सोई ॥ महा प्रसाद तत्त्व विधि पावे । कहैं कवीर सतलोक सिधावे ॥ ११ ॥

मंगलरूप आरति होई । शब्द सुरति चित राखु समोई ॥ दीप अमोल अगम उजियारा । सन्त पुरुष कीन्हो विस्तारा ॥ हंस हिरम्बर शब्द समाई । वृक्ष गुरुम्बर बैठक पाई ॥ शीतल नीर सुरति भर लावे । हंस सोहंगम चौंर ढुरावै ॥ मणि माणिक हंसनकी पांती । शब्द स्वरूप सुरतिकी कांती ॥ हंस सुजन जन आज्ञाकारी । हंसन काज देह निज धारी ॥ मन बच कर्म जो आरति साजे । कहै कवीर सतलोक विराजे ॥ १२ ॥

आरति सतगुरु साहेब कवीर बंदी छोरकी । करत किलोल हंस पति आगर आनंद विमल विनोदकी ॥ त्रिगुन तेल पंच मुख बाती मानिक ज्योति अपार । हीरन धार संजोय सकल विधि पूरन नाम अधार ॥ संगति सकल सुकृत भये ठाढे कहत संदेश अपार । जाकी सुरति भई तन व्याकुल अति आतुर दीदार ॥ बाजत ताल मृदंग झालरी वीना शब्द रसाल। धुधुक धुधुक जहां तुरही बाजे गरजत शब्द विशाल ॥ पूरण पुरुष सिंघासन राजे बहु शोभा इस्थीर । धर्मदास आरति कर जारे गावहिं साहब कवीर । ॥ १३ ॥

आरति निज नाम तुम्हारी। अविगति अगम अलेख मुरारी ॥ पहली आरति पियाजीको पाये । रोम रोममें अलख लखाये॥२॥ दुसरी आरति दुतिया नहीं कोई । जहाँ देखो तहाँ हरिहरि होई ॥३॥ तिसरी आरती त्रिगुण नाई । चौथे पदमें रहे समाई ॥४॥ चौथी आरति चहुँ दिशि भरपूर । गगन मंडल बाजे अनहद तूर

॥५॥ पंचयें आरति पूरन प्यार। कहहिं कबीर सो सबसे न्यार॥ १४॥

संझा आरति सुमिरण सोई। सुमिरण करत महाफल होई॥ १॥ पहिली आरती प्रेम प्रकाशा। कर्म भर्म सब कीन्ह विनाशा॥२॥ दूसरी आरति दिलहीमें देवा। योग मुक्तिसे करले सेवा॥ ३॥ तीसरि आरति त्रिभुवन सूझै। गुरुगमज्ञान अगोचर बूझै॥ ४॥ चौथी आरति चहुँयुग पूजा। गुरु सम देव और नहीं दूजा॥५॥ पचयें आरति पद निरबाना। कहहीं कबीर (हंसा) लोकसमाना १५॥

आरती परम पुरुष निजदेवा। अनन्त कोटि जहां लावहिं सेवा १ ओंकार घंटाधुनि बाजे सतगुण विष्णु आरती साजे॥२॥ शेष महीकर कीन्हों भारा। सूर असखन ज्योति अपारा॥३॥ शिव सनकादिक मुनि ऋषि सारे। स्तुति ब्रह्मा बेद उचारे॥४॥ ध्रुव प्रहलाद चँवर लिये ढारे। धूप दीप गणपति बिस्तारे॥५॥ वरुण इन्द्र पुहुपनकी माला। नाना रूप अनंत विशाला॥६॥ व्यास वसिष्ठ कपिल सत धारी। विविधि विधान सब साज सँवारी॥७॥ शुकदेव नारद वेनु बजावैं। साहेब कबीर आरति गावैं॥ १६॥

ऐसी आरति घुरै निसाना। सुनहु चितदै सन्त सुजाना॥१॥ जिह्वा वचन झूठ मति भाखो। सत्य शब्दमें चित दे राखो॥२॥ परधन त्यागो और पर नारी। शब्द अनाहद लेहु विचारी॥३॥ काम क्रोध छाडो यह क्षण। हंस दशा धरि होहु सुलक्षण॥४॥ तन मनसे परचे करु भाई। बिन परचे यम हाथ बिकाई॥५॥ छाडहु दूर दुरकेर बसेरा। उलटा मिलै सो हंस है मेरा॥६॥ पक्ष वेष तजो चतुराई। सतसुकृत तब होहि सहाई॥ ७॥ आशा तृष्णा तजहु विकारा। सो ज्ञानी कहिये तत सारा॥ ८॥ संत विवेकी शीतल अंगा। अगर वास जस चन्दन संगा॥९॥ प्रेम प्रकाश भक्ति लौलीना। निर्मल हीरा न कबहुँ मलीना॥ १०॥

निर्मल सो जेहि संशय नाहीं। आपा मध्ये आप समाहीं॥११॥
कहहिं कवीर संतन सुखदाई। अजर अमर इस्थिर घर पाई १२॥१७॥

ऐसी आरती गुरुहिं लखायी। निरखत शब्द सुरति ठहरायी॥१॥
ऐसी आरति आतम पोर। आगे पला न पकडे चोर॥२॥ गहो
शब्द निहच्छर डोडी। धरमरायसे तिनका तोडी॥३॥ तन धरती
चित लग्यो अकासा। विना पुहुप सुगंध निवासा॥४॥ उलटि
अगोचर अमीरस चाखे। दरिया पार सुरति लै राखे॥ ५॥
अनन्त जनमकी उग्झ मिटावे। चौदह काल जीति घर आवे॥
॥ ६॥ कहहिं कवीर भाग नर तेरा। सतगुरु किये अमर पुर
डेरा॥ ७॥ १८॥

कैसे मैं आरति करौं तुम्हारी। महा मलिन साहब देह हमारी॥१॥
छूतहिंसे उपजे संसारा। मैं छुतिया गुनगाँउँ तुम्हारा॥२॥ झरना
झरे दशो दिशि द्वारा। कैसे मैं आऊँ साहब निकट तुम्हारा॥३॥
जो प्रभु देउ अग्रकी देही। तब हम पायब (साहेब) नाम सनेही॥४॥
मलयागिरि पर बसे भुवंगा। विष अमृत रह एकै संगा॥ ५॥
तिनुका तोडि दियो प्रवाना। तब पाये (साहेब) पद निर्वाना॥६॥
धनि धर्मदास कविर वल गाजे। गुरू प्रताप आरती साजे॥
॥ ७॥ २॥ १९॥

आरती सतगुरु करौं तुम्हारी। कलह कल्पना हरहु हमारी॥१॥
पहिले पुरुष पीछे भौ नारी। तेहि पाछे तिहुँ लोक सँवारी॥२॥
जो नारी सो अंग छुवावे। सो चौरासीमें भर्मावे॥३॥ जो नारी
सो न्यारा रहैं। ज्ञान ध्यान योग सब दहैं॥ ४॥ साहेब कवीर
कहे समुझाई। आपन आपनि निवेरहु भाई॥ ५॥ २०॥

सिरपर राखिय सोई परमगुरुदेवा।

सुमिरन भजन आरति पूजा, सन्मुख करले सेवा॥१॥ भव नदिया
बिन नावरी, गुरु अधर उतारे पार। बनसे भी ऊपर ले राखे,
घटहीमें निज सार॥ २॥ मान सरोवर मंजन करिले, त्रिबेनीके

घाट। अनहद धुनि सुनि पांचो मोहे, खुलिगै ज्ञान कपाट ॥३॥ अजपा जाप जपे बिनु जिभ्या, मूल मंत्र अवराधि। स्थिर ध्यान दृढ आसन लागे, सहज समाधि ॥ ४ ॥ चांद सूर निसि वासर नहीं, नहिं तहां विद्यावेद। साहेब कबीर मिले सुखसागर, विरला पावे भेद ॥ ५ ॥ २१ ॥

आरति कीजे आतम पूजा। प्राण पुरुष सो अवर न दूजा ॥१॥
ज्ञान प्रकाश दीप उजियारा। घट घट देखो प्रान पियारा ॥२॥
भाव भक्ति कर और न भेवा। दया स्वरूपी करिले सेवा ॥ ३ ॥
सत संगति मिलि शब्द विराजे। धोखा द्वंद भर्म सब भाजे ॥४॥
काया नगर थिर होय भाई। आनन्द रूप सकल सुखदाई ॥५॥
शून्य ध्यान सबके मनमाना। तुम बैठो आतम अस्थाना ॥६॥
शब्द सुरति ले हृदय बसाओ। कपट क्रोधको दूर बहाओ ॥७॥
कहहि कबीर जिन रहनि सम्हारी। सदा आनंद रहते नर नारी।८॥२२

सत स्वरूपकी आरति कीजै। साहब चीह्नि चरण चित दीजै ॥१॥
चिन्हों चिन्हों मन चित लाई। बिन चिन्हे कह जाओ भाई ॥२॥
जिह्न चिह्न तिन निर्मल अंगा। विन चिह्ने ते भये पतंगा ॥३॥
जब लग साहेब सो नहिं भेंटा। तब लग भाव भक्ति सब हेठा ॥४॥
शून्य सेज आरति करई। विबा कन्त का पूरी परई ॥ ५ ॥
भूषण पहिरो रूपकी रासी। फूलन सेज महलमें प्यासी ॥ ६ ॥
आरति लिये कन्तको जागे। पति बिनु प्रेम कहो केहि लागे ॥७॥
केतिक पंडित मुनिजन योगी। केतिक नागे भक्त वियोगी ॥८॥
झूने झूने बहुत जमाती। विन दुलहेकी कवन बराती ॥ ९ ॥
खोजो गगन शून्य ब्रह्मंडा। सात द्वीप पृथ्वी नव खंडा ॥ १० ॥
ग्रह माया तजि भये दिवाना। आप अपन पौ मर्म न जाना ॥११॥
जिनिकै दूसर असरा नाहीं। आपामध्ये आपहिं आहीं ॥१२॥
चेत चेत संशय कर दूरी। घटही माहिं संजीवन मूरी ॥ १३ ॥
साँचे सतगुरुकी बलिहारी। जिन यह कुंजी कुलफ उघारी ॥१४॥

नख सिखते पूरण भरपूरी । ते साहबको कहिये दूरी ॥ १५ ॥
निरखि निरखि अमृतरस पीजै । तन मन शीश सब अर्पण कीजे १६॥
दिल दरियामें है हिरामनी । काया कबीर बोलता धनी ॥ १७॥
लौकी वाती पवनसे बारी । दीपक ज्ञान शब्द उजियारी ॥ १८॥
कहहिं कबीर यह ख्याल हमारी । बिनु समुझन हम सबते न्यारी ॥ १९ ॥ २३ ॥

आरति कीजै अन्न ब्रह्मकी । सकल कला सुख प्रान पतिकी ॥ १॥
धनि धनि अन्न धनि धनि पानी । अन्नकी भक्ति नारायण ठानी ॥२॥ अन्न भयो गिरधरही ध्यान । अन्नमें बसे सबहिके प्रान ॥ ३॥
अन्न अहेरी पुरवे जाला । अन्नहिं जिआवे अन्नहिं काला ॥ ४ ॥
अन्नहिं गाया अन्नहिं गावे । अन्न बिना मुख बात न आवे ॥५॥
अन्न भक्ति ले कीजै कामा । (कहत कबीर) तबहीं रीझे आतमरामा ॥ ६ ॥ २४ ॥

आरती अन्न देव तुम्हारी । जाते काया पले हमारी ॥ १ ॥
जलकी उत्पति यह संसारी । भोजन करे सकल नर नारी ॥२॥
ब्रह्मा विष्णु और महादेवा । यह सब करे अन्नकी सेवा ॥ ३ ॥
राजा प्रजा और मठधारी । ये सब आशा जिये तुम्हारी ॥ ४ ॥
पीर औलिया अजमत धारी । सुर नर मुनि सब अन्न अहारी ॥५॥
अन्न बनावे अन्न भुलावे । अन्न बिना मुख बात न आवे ॥ ६ ॥
अन्न अहारी पूर्व जियाला । अन्न जिआवे अन्नही काला ॥ ७ ॥
जहां जहां लागी अन्नकी ढेरी । सुर नर मुनि सब बैठे घेरी ॥८॥
दयाकी दीप भावकी बाती । सब अन्नको आरति साती ॥ ९ ॥
अन्न आरति आतम पूजा । कहहिं कबीर देव नहिं दूजा ॥ १० ॥ २५ ॥

साखी–अन्न नाम निज मूल है, सोई हमारा कीन्ह ।
एक अन्नको बीछुरे, कोइ न काहू चीन्ह ॥ १ ॥

आरती दर्शन समाप्त ॥

सत्यनाम ।

आवश्यक विज्ञप्ति

(चौका विधानके दूसरे भागके विषयमें)

अब तक जो चोका विधानकी रमैनी आदिक आयी हैं वह छत्तीसगढ-वालोंके क्रमसे; यथार्थमें यह विधान पूरा नहीं है, क्योंकि, छत्तीसगढी गुरुवाई करनेवालोंने, चौका आदि धार्मिक सब कार्य्योंको अपने जीवन निर्वाहका मार्ग बना रक्खा है, इस प्रकार धर्मके जितने नियम हैं व्यापारके रूपमें प्रवर्तित हो गये हैं । यही कारण है कि, चौका करनेको सभी तय्यार रहते हैं, किन्तु, चौका क्या वस्तु है ? इससे क्या लाभ है ? इसके करने कराने वालोंको चौकेसे क्या बोध होना चाहिये ? नारियल और पानकी प्रधानता कबीर पंथमें क्यों है ? इत्यादि धर्मके एक भेदकी भी खबर उनको नहीं है । चौका करनेवाले लोग तो समझते हैं चलो मेरा काम हो गया, चौका करनेसे कुछ न कुछ तो मिलही गया और चौका करानेवाले चौकाके महातमको सुनकर समझते ह चौका करालेनेसेही मेरा सब पातक दूर हो जायगा—इससे जैसे तैसे करके घरम जोत बरवा देनाही वह अपना महान कार्य्य समझते हैं, इसीसे देने लेनेमें वह भी अपनी शक्तिभर कोर कसर करनेमें नहीं चूकते । इसका परिणाम---

गुरु लोभी शिष लालची, दोनों खेलें दाव ।
दोऊ बूडे बापुरे, चढि पाथरकी नाव ॥

के—अनुसार गुरु अलग शिष्यकी निन्दा करता है कि, इसने कुछ दिया-नहीं ? शिष्य अलग कहता है कि, महंत बडा लोभी है, इसने बडा हैरान किया । यह नित्यकी बातें हैं यह नित्य देखनेमें आती हैं और जो लोग धर्मको धर्मके। रूपसे देखते हैं, वह धर्मके नियमोंको पूर्ण रूपसे पालन करनेका प्रयत्न करते हैं ।

इन्हीं सब बातोंको विचारकर, मैंने इसके आगे चौका विधानके पूरे पूरे रमैनी पद आदि देदिया है, जिसमें पूरा विधान चाहने वालोंको पछताना न पडे, और इस शब्दावली को भी दूसरी शब्दावलियोंके समान अधूरी न समझलें ।

इसके आगे जो चौका विधानके पद आदि लिखे जाते हैं वे रोसडा- के मुहल्ला लक्ष्मीपुर बगीचाके कवीर मन्दिर के चौका विधानका है। यों तो भारत-वर्षही क्या पृथ्वीके प्रत्येक भागोंमें कवीरपंथियोंका स्थान है और बड़े बड़े धनी मानी महंतोंके बडे २ स्थान वर्तमान हैं किन्तु, मेरी जानमें इस समय रोसडाके लक्ष्मीपुर बगीचेका स्थान कबीरपंथके आदर्श स्थानोंमें सर्वश्रेष्ठपद भोग रहा

है । पूर्व विहार आदिमें भी सब स्थानके बडे महंत सन्त लोग उस स्थानकी प्रतिष्ठा करते हैं ।

वहाँके प्रधान महंत साहब श्री १०८ श्री महंत काशीदासजी साहब ब्राह्मणोंकी सर्वोच्च कान्यकुब्ज शाखामें जन्म लेकर भी, इतने निरभिमान और जात पातके भ्रमसे रहित हैं कि, कोई भी मनुष्य उनके दर्शन कर और उनसे मिलकर, लेशमात्र भी भेद भाव अनुभव नहीं करता । इसका यह आशय नहीं है कि, आप मर्यादाका उलंघन कर कूडापंथी चलाते हैं और हिन्दू जातिकी मर्यादाको त्यागकर सबको एकमें मिलाते हैं और सबका खान पान एक कर, देते हैं, नहीं ! कदापि नहीं, किन्तु आपके–मर्यादापालनेमें बडे दृढ होनेपर भी, आपके शीलस्वभाव दया वृत्ति और सच्चे प्रेमके कारणही जो आपके समझ्झ आता है, वह आपकी आज्ञा और आचार विचारको ग्रहण करना अपने श्रेयका कारण, समझता है । आपके स्थानसे निकले हुए सैकड़ों स्थान हैं, जिनमें सर्व जाति और वरणके महंत संत अपने अपने धर्म तथा व्यवहारकी मर्यादामें रहकर देशकाल वस्तुका विचार रखते हुए, अपना और संसारका कल्याण कर रहे हैं । कहां तक कहूँ !! आपके इन्ही सब गुणोंपर मोहित होकर, सलोनीके मेलेमें पं० श्रीदयानाम साहबके न आनेपर, सर्व सन्त महंतोंने आपहीको सभाका सभापति चुनकर सभाके कार्य्यको निर्विघ्न समाप्त किया था । जिसपर उस सभामें जानेवाले सर्व सन्त महंत सेवक सतियोंके साथ पं श्री दयानाम साहब आप पर भी बहुत नाराज हो गये थे । किन्तु ऐसा होने पर भी, आपके धर्म भाव, सौजन्यता, कार्य्यकुशलता, दृढता आदि गुणोंके कारण आपकी इच्छा न रहते हुए भी पं० श्री दयानाम साहबनेही बडे आग्रह से आपको बुलाकर, अपने प्रधान दीवानका पद दे दिया था । अब जब कि, पं. श्री दयानाम साहब सत्यलोक सिधार गये हैं, तब कोदरमालके कबीर पंथी महासभामें, जहां एक लाखसे भी अधिक सन्त महंत सेवक सती इकट्ठे हुए थे, सर्वकी सम्मतिसे आपही वंश गद्दीके अधिकारी चुने गये हैं । आपको इस बडाईकी इच्छा न रहनेपर भी, सर्व वेषोंका कहना मानकर अनेक कठिनाइयों और अडचनोंसे पूर्ण इस पदको आपने स्वीकारकर लिया ।

इस प्रकार आचार्य्य स्थानीय पद पाकर भी आप इतने निर्मान और निर्मोह हैं कि, इस पद तककी भी ममता आपको नहीं है, केवल धर्म समझकरही आप अपना कर्तव्य करते चले जाते हैं ।

इस पदपर आनेके कितने पहलेही, निवृत्तिमें सत्संग और विचार परायण रहने और आगेके लिये स्थानको सुरक्षित रखनेके हेतु, कुल जायदाद सहित स्थानको आपने कवीर साहबके नामसे समर्पण) करके, रजिष्ट्री करा दी है और स्थानपर पश्चात्के लिये ट्रस्ट्री (पंच) नियत कर दिया है तथा व्यवहारके भारसे अवकाशके लिये, अपने समक्षही महंत श्रीअवधदासजीको अपना उत्तराधिकारी बना दिया हैं।

श्रीमहंत अवधदासजी साहब भी, योग्य गुरुके योग्य शिष्यके समान, अपने पदका कर्तव्य पूर्णरूपसे निवाह रहे हैं. आपको सहायक भी वैसेही योग्य मिले हैं।

स्थानके समुचित प्रबन्धमें जिन लोगोंके हाथ हैं और जिनकी सज्जनता और सुप्रबन्धसे स्थान अपनी मर्यादाकी रक्षा करके आदर्शस्थान बना हुआ है उनमेंसे —

(१) पहले श्रीमान् मैनेजर साहब श्री सर्यूदासजी साहब हैं। आप बहुत दिनोंसे स्थानके मैनेजर रहे हैं और इस समय वृद्ध होकर एक प्रकारसे अवकाश ग्रणह करनेपर भी, आवश्यकता होनेपर सब कामोंको देखते और उनका प्रबन्ध करते हैं। आप पूर्ण अनुभवी वैद्यराज्य हैं, आपके पास रससे लेकर साधारण काष्ठादि तककी अनेक औषधियाँ सदा तय्यार रहती हैं, स्थानकी मूर्तियोंके तो आप प्राणदाताके समानही हैं, बाहरके भी अनेक दुखियोंके दुःख दूर करनेमें आप सदा तत्पर रहते हैं।

(२) दूसरे खजांची नत्थूदासजी साहब हैं। आपका काम स्थानकी कुल नकदी जिन्सी आमदनीका सुप्रबन्ध करना, जमीनदारी सम्बन्धीमामला मुकद्दमाकी खबरगीरी करना खेती बाडी आदिका प्रबंध करना इत्यादि हैं, आपकी प्रमाणिकता इतनी बढी हुई है कि, सब ओरसे सब लोग द्रव्यादि लाकर आपको देतं हैं, परन्तु आपके हिसाब देनेको सदा तय्यार रहनेपर भी, कोई हिसाब नहीं पूछता क्योंकि, आपके व्यवहारने सबको निश्चय दिला दिया है कि, इन्होंने अपनेको पूर्ण रूपसे कवीर साहबके अर्पण कर दिया है, शील और सदाचारकी आप मूर्ति हैं साथही स्थानकी मर्यादा रक्षाके लिये आपमें स्वाभिमान और आत्म प्रतिष्ठाकी कमी नहीं है इत्यादि।

(३) तीसरे श्रीयुत परमहंस मित्तूदासजी साहब अधिकारी हैं। आपने सर्व प्रकारके मान अभिमानके त्याग पूर्वक, भेदभाव रहित सर्वप्रकारके जीवोंकी

सेवा करना अपना आदर्श बना रक्खा है । आपकी इस वृत्तिकाही प्रभाव है कि, सब मतके लोग आपसे प्रसन्न रहते हैं, ऐसा होते हुए भी आप सत्यका त्यागकर किसीकी झूठी खुशामद कभी नहीं करते । दुखियोंकी, तन मन धनसे, सेवा करना आपका स्वभावही है ।

(४) चौथे श्रीगोपीदासजी अधिकारी हैं, जिन्होंने स्थानकी खेती बाडी काश्तकारीकी देखरेख सब अपने जिम्में ले रखा है ।

(५) पांचवें भंडारी सौखी दासजी हैं, जिन्हें सदा सर्वदा दुखी जीवोंके लिये, अपने सुखका त्याग करना कोई कठिन बात नहीं दीख, पडती आप बडे श्रीमहंत साहबके खास भंडारी और शिष्य हैं । इसी प्रकार भंडारी नेभूदासजी भंडारी जगादासजी कोठारी रामअधीन दासजी, रामधनीदासजी, झड़ी, दासजी, अनूपदासजी इत्यादि सर्व संत दया और प्रेमकी मूर्ति, द्वेष और ममतासे रहित, सदा परोपकाररत रहनेवाले, स्थानकी मर्यादा बना रखनेमें सचेत रहते हैं ।

श्रीयुत महंत चंचल दासजी, गोविन्ददासजी, भौजनदासजी, खाकीजी इत्यादि सङ्गीत द्वारा स्थानकी शोभारूप हैं ।

श्रीयुत गंगादासजीको सद्गुरुकी वाणीसे इतना प्रेम है कि, आप सदा-वाणीकीही खोजमें लगे रहते हैं, आपहीके वाणी प्रेमकी प्रत्यक्ष मूर्ति गंगाशब्दा-वली है, जिसमेंसे लक्ष्मीपुर (रोसडा) के कवीरमन्दिरके चौकाविधानकी रमैनी पद आदि लिये गये हैं ।।

इसके अतिरिक्त स्थानमें रहनेपर उससे सम्बन्ध रखनेवाले जितने व्यक्ति हैं सबमें सज्जनता कूट कूटकर भरी है, सव सदा सर्वदा अपने ऊपर कष्ट उठाकर भी दूसरोंको सुख देनेमें तय्यार रहते हैं और तो विद्यार्थी रामजी जो स्थानमेंही रहता और स्थानकी सेवा टहल करता हुआ, विद्या अध्ययन कर रहा है, साधुओंकी संगतिमें रहता हुआ ऐसे सरल स्वभावका हो गया है कि, कभी किसीकी अवज्ञा करना जानताही नहीं, जिसने जहां जिस कामके लिये पुकारा रामजी वहीं रामजीके समान हाजिर मिलेगा । अंतमें ––

श्रीरामरूपदासजीको लीजिये; आप बडे महंत साहब या यों कहिये कि, वंशगद्दीके आचार्य्य स्थानापन्न धार्मिक कर्म्मोंके सम्पादन करनेवाले कवीर साहबके अधिकारी श्री १०८ युक्त पंश्री महंत काशी दासजी साहबके परम प्रिय शिष्य

और प्राइवेट सेक्रेट्री हैं। आप हरफन मौला हैं, आप जिस प्रकार अपने टकसार और धार्मिक ज्ञान ध्यानमें कुशल हैं, उसी प्रकार व्यवहारमें पूरे हैं, आप कवि लेखक, मुंशी, कचहरीके कार्य्यमें कुशल, जमीन्दारी, दुकानदारी आदि कामोंमें चतुर, अधिक क्या कहूँ जिस कामका प्रसंग आपके सम्मुख, आजावे आप सबमें अग्रसर रहनेवालोंमें हैं, साथही आप इतने दयालु और मिलनसार हैं कि, सदा सर्वदा भेदभाव रहित सबकी सहायता करनेको तय्यार रहते हैं। जिस कामको हाथमें लेतें हैं उसमें पूरे तौरसे जुट जाते हैं। श्रीयुत गंगादासजीके संग्रह किये हुए शब्दोंका सम्पादन कर आपहीने उसे प्रकाशित करवाया है। कबीरचन्द्रोदय मासिकपत्रके तो आप एक प्राण स्वरूपही हैं।

श्रीमान् संतदासजी साहब उर्फ बाबा साहेब स्थानके सरदारोंमें हैं, आप सर्व गुण पूर्ण, परम विरक्त, सत्यधर्म परायण संत हैं, आप सर्वदा, भ्रमण करके जीवोंको चेताते और सत्यधर्म का प्रचार करते रहते हैं। पूर्ण विरक्त होनेपरभी आप व्यवहारकी कुशलतासेभी बंचित नहीं हैं, स्थानके किसीभी व्यवहारिक कार्यमें आवश्यकता होनेपर, आप उसको सुचारुरूपसे पूर्ण करते हैं, आपकी दर्शनीय मूर्ति और आनन्दी स्वभावके कारण सबही आपसे प्रसन्न रहते हैं। आप शान्ति रसकी मूर्ति होते हुए भी, हास्यरसमें ऐसे दक्ष हैं कि आपकी एकही बातमें शोकातुर मनुष्योंको भी हँसी आ जाती है। आप जिस प्रकार सुन्दर अक्षर लिखनेमें निपुण हैं वैसेही पाकशास्त्रमें पूर्ण प्रवीण हैं।

इसी प्रकार पण्डित वसंत दासजी वैराग्य गम्भीरता और विचारकी मूर्ति हैं। एक स्थानधारी साधुओंमें सौजन्यता, प्रेम, दया, व्यवहार, कुशलता आदि जितने गुण होने चाहिये सब आपमें वर्तमान हैं।

श्रीसाधु ज्ञानचन्द दासजी भी स्थानके वैसे विरक्त साधुओंमेंसे एक हैं, जो सदा भ्रमण कर सेवक सतियोंको उपदेश देकर सजग करते और कालके जालसे बचाते रहते हैं।

इसके अतिरिक्त सैकडों मूर्ति इस स्थानके इस समय सत्य कबीरके उपदेशका प्रचार कर सत्यधर्मकी वृद्धिमें लगे हुए हैं।

इसी प्रकार रोसडा स्थानकी प्रत्येक बातें आदर्श रूप हैं। इस समय तो यह स्थान मेरे अनुभवसे अपने धार्मिक टकसारमें अपनी उपमा आपही है। इसका कारण और कुछ नहीं, केवल "यथा राजा तथा प्रजा" के अटल नियम काही फल है।

श्री १०८ महंत साहबके सदाचार और दया क्षमा आदि गुणों सहित धर्म प्रेमही इनका एक मात्र कारण है।

उसी आदर्श स्थानमें जिस प्रकार चौकाकी रमैनी आदि काममें लायी, जाती हैं, वही क्रम शब्दावलीके इस विभागमें दिया है।

यद्यपि इस प्रकार अलग लिखनेसे कितने शब्द पद और रमैनीयोंके दुबारा आनेसे पुनरुक्ति अवश्य हुई है तथापि जानकरही मैंने ऐसा रखा है क्योंकि, ऐसे किये विना इस शब्दावली लेनेवालों को सुभीता नहीं होता. कारण यह है कि, इसके पढनेवाले सबके सब ऐसे विद्वान तो हैं नहीं कि, प्रयत्न करके इधर उधरसे ढूँढ ढाँढकर शब्द पदादि को याद करेंगे; वरन बहुतसे ऐसे पढनेवाले भी हैं जो सर्व सामग्री इकट्ठा न रहनेसे ग्रन्थसेही श्रद्धाहीन हो विरक्त हो जायेंगे। इसी लिये इच्छा न रहते हुए भी ऐसा करना पडा है।

अन्तमें इतना निवेदन कर इस सूचनाको समाप्त करता हूँ कि, रोसडाके इस किंचित गुणवर्णनको सुनकर किसीको घबराने या ईर्षाग्निमें जलकर यह मेरा लिखा मिथ्या प्रलाप समझनेकी आवश्यकता नहीं है. क्योंकि, यह सब मेरे स्वतः अनुभवकी बात है। सम्वत १९८६ वि. में अषाढसे कार्तिक तक बराबर वहां निवास करके मैंने स्वतः अनुभव किया है। और तो और रोसडा स्थानमें पारसाल जब भादों पूनोंपर वार्षिक चौका आरती और संगठन सभा हुई उस समय छत्तीस गढके एक मात्र कवीरपंथी विद्वान बाबू दुलारे सिंह दार्शनिक बी. ए. मालगुजार बंसूला जिला विलासपुर जो–इस समय वंशगद्दी कवीर कौंसिलके रेजिडण्ट वायस प्रेसिडेन्ट हैं; वहां जाकर और महंत साहबके गुणोंको देखकर इतने मोहित हुए कि, वंशगद्दीके लिये आपका चुना जाना परम सौभाग्य समझने लगे। इन्ही सब कारणोंसे मैं कहता हूँ, यदि कौंसिलवाले आपको यथार्थ रूपसे पहचनेंगे और आपसे लाभ लेना चाहेंगे, तो कौंसिलके सुचारु रूपसे चलनेमें कोई बाधा नहीं होगा. क्योंकि वर्तमानमें ऐसा योग्य आचार्य्य मिलना दुस्तर है।

इस समय जबके वंशघरके आचार्य्यके विन्दवंशका लोप हो गया है तब कवीर वचनानुसार नाद वंशही प्रधान है,इस लिये मेरा विचार है कि, वर्तमानके जितने स्थान हैं, सबकी एक डायक्ट्री इसी प्रकार बनाकर प्रकाशित कराऊँ, जिसमें सत्यधर्मके जिज्ञासुओंको अपनी आत्म उन्नतिके लिये सत्संग करनेमें सुभीता हो। सद्गुरु कवीर तथा संत महंतोंकी दया होगी तो, यह कार्यभी अवश्य पूरा होगा ।।

बम्बई.
२८–७–२९
श्रावण वदि ७
सम्वत् १९८८ वि.

भवदीय
सबका परमार्थी मित्र कवीरा–
श्रमाचार्य्य
श्रीयुगलानन्द बिहारी.

मध्यमें कबीर साहबके अधिकारी आचार्य्य शिरोमणि श्री १०८ महंत काशीदासजी साहब.



दहिनी ओर श्री युगलानन्दविहारी
तथा भण्डारी सोखीदासजी

बाईं ओर—श्री साधु रामरूपदासजी
और शेष सब भागलपुरकी सेवक मंडली



अथ अध्यात्म साधन गुरु पूजा प्रकरण ।

दूसरा भाग ।।

पूर्व विहार विशेषकर रोसडा कबीरमन्दिरमें

प्रचलित चौका विधान प्रारम्भः ।

रमैनी ।। १ ।।

साखी–चौका चन्दन कीजिये, मल्यगिरिके नाम ।
चारो कमल सुधारिये, मध्य ताहिको धाम ।। १ ।।

प्रथमहि मन्दिर चौका पुराये। उत्तम आसन श्वेत बिछाये।। हंसा पगु आसनपर दीन्हा । सत्य कबीर कही कहि लीन्हा ।। नाम प्रताप हंसपर छाजे । हंसहिं भार रती नहिं लाजे ।। भार उतारि आप शिर लीन्हा। हंस छोड़ाय कालसे दीन्हा ।। साधु सन्त मिलि बैठे आयी। बहु बिधि भक्ति करें चितलायी ।। पान सुपारी नारियर भेवा । लवंग इलायची किसमिस मेवा ।। सवा सेर आनो मिष्टाना । और सवा सौ उत्तम पाना ।। सात हाथ बसतर परमाना। सो सतगुरुके आगे आना ।। इतना होय और नहिं भाई । जासे काल दगा मिटि जाई ।। धन्य सन्त जिन आरति साजा । दुःख दरिद्र वा घरसे भाजा ।। कहहिं कबीर सुनो धर्मदासा । सोहम् ओहम् शब्द परकासा * ।। २ ।।

रमैनी ।। २ ।।

साखी–चौका चार सुधारहू, चार कमल असथान ।
चारो पवन उरेहिके, देखो तत्व अमान ।। ३ ।।

---

* पुरानी प्रतियोंमें यह पद यों है–कहै कबीर सुनो भाई साधो । सोहं सोहं शब्द अराधो ।।

अगर चन्दन घसि चौका दीन्हा। आदि नामका सुमिरण कीन्हा॥ जब धनी मन चितवन कीन्हा। चौका श्वेत हंस करि लीन्हा॥ धर्मदास चौका अनुसारा। चौका बैठें पुरुष पियारा॥ साधु सन्त मिलि बैठें आई। सुरत निरतसे शब्द लौ लाई। श्वेत सिंघासन अगम अपारा। सोहं हंसो बहुत पियारा॥ कहहिं कवीर शब्द जो ध्यावै। शब्दै मांहि सो दर्शन पावै॥ २॥

रमैनी ॥ ३ ॥

साखी-यही चाल है हंसकी, नरियर धोती पान।
यहि बिधि भेद बिचारई, हंस होई निर्वान॥ ३॥

उत्तम झारी अमृत जल भरिया। लवँग इलायची कपूर अनुसरिया॥ मन वच पान वरौना भाखा। तापर पांच सुखरिचा राखा॥ त्रिगुण खरिचा दीन्ह बताई। दूत भूत सब चले पराई। तब दल तत्व पान जो लीन्हा। तापर अंक अगर को दीन्हा॥ अगर वास है लोक मँझारा। तौन हंसले करइ अहारा॥ कहहिं कवीर सुनो धर्मदासा। हंसा पावहिं लोक निवासा॥३॥ कहहिं कबीर धर्मनिनागर। अरपो दल पाओ सुखसागर॥ ३॥

रमैनी ॥ ४ ॥

साखी-प्रमथे चौका कीजिये, चार खूंट अनुमान। दीप चौरासि सुधारहु, लोकरंभ सहिदान॥ ४॥ आदिनाम चित चेतहु भाई,। आरति साजहु ज्योति बराई॥ पाट पटम्बर अम्बर छाया। जहवाँ हंस करे गवनाया॥ श्वेत सिंहासन अगम अपारा। सत सुकृत तहवाँ पगु धारा॥ भागा तिमर भया परकासा। आदि ज्योति किन्हा रहिवासा॥ हंस रूपका भेद बताऊँ। कहो तो आपन अंश दिखाऊँ॥ श्वेतहिं रूप शब्द है भाई। अग्र वासमें रहे समाई॥ कहहिं कविर निज भेद हमारा। सत्य शब्द गहि उतरो पारा॥ ४॥

रमैनी ॥ ५ ॥

साखी—ऊपर पांखुरी द्वीपकी, भीतर चौका चार। द्वादश दल निर्वाण है, देखो सुरति विचार ॥५॥ केदली दल उत्तम विस्तारा। अति सुन्दर साजो पनवारा ॥ सुघर मिठाई उत्तम पाना। नरियर अंत लेहु पहिचाना ॥ सात पांच नरियरमें नाहीं। ता जीवका गहो जिन वाहीं ॥ सात पांच नरियरमें रेखा। सम्पुट गुप्त प्रगट होय देखा ॥ सवा सेर आनो मिष्ठाना। सेतु सवा सौ उत्तम पाना ॥ सात हाथ बस्तर परमाना ॥ सो सतगुरुके आगे आना ॥ इतना होय और नहिं भाई। जासे काल दगा मिटि जाई ॥ लक्ष जीव नित करे अहारा। तासे थाप्यो यह व्यवहारा ॥ और भेद सब राखो गोई। मति मुनिके जिव बिचले सोई ॥ सतगुरु शरण जीव जो आवे। ताको काल सदाशिर नावे ॥ कहै कबीर सुनु धर्मनि नागर। बीरा नामसे हंस उजागर ॥५॥

रमैनी ॥ ६ ॥

सा०—कलश आरति दल शिला, नारियर पान मिष्टान। पुङ्गी फल फुल श्वेत अरू, शब्द भजन धुन ध्यान ॥ ६ ॥ उग्र ज्ञानका कहौं सन्देशा। धर्मदास मानो उपदेशा ॥ धर्मदास मानो चित लाई। रहो ठिकानि उचट नहिं जाई ॥ अजर लोकमें आरति कीन्हा। सो आरति हम तुमको दीन्हा ॥ जाघर आरति नाहिं न साजी। ता घर धर्म रायकी बाजी ॥ जा घर आरति करे बनाई। निर्भय हंस लोकको जाई ॥ कोटिक ज्ञान कथे नर लोई। बिनु आरति बाँचे नहिं कोई ॥ अजर ज्योति आरती प्रकाशा। दूत भूत यम माने त्रासा ॥ कहहिं कबीर सुनो धर्मदासा। हंसा पावे लोक निवासा ॥ ६ ॥

रमैनी ॥ ७ ॥

सा०—लौंग इलायचि नारियर, आरति धरो लेसाय। कहैं

कवीर धर्मदाससे, काल दगा मिटिजाय ॥ ७ ॥ धर्मदास तुम पंथ उजागर । अपोंदल परसो सुख सागर ॥ चन्दन चौका रचो बनाई । सत सुकृत जहां बैठें आई ॥ सेत बारिसे फूल मँगावा। सो सतगुरुको आनि चढावा ॥ धर्मदास उठि विनती कीन्हा । हो सतगुरु हम तुमको चीन्हा ॥ जो तुम कहो मानि लेउँ सोई। गुरु छोडि और नहिं कोई ॥ कहहिं कवीर सुनो धर्मदासा । वीरा नाम करो प्रकासा ॥ ७ ॥

रमैनी ॥ ८ ॥

साखी–अंश रेख स्वर शिष्यको, गुरु श्वासा घर एक। तामें नरियर मोरहू, टूटे विघन अनेक ॥ ८ ॥ धर्मदास तुम बीरा लेहू । जम्बू द्वीप जीवन कहँ देहू ॥ मैं का जानों पंथके आदी। जम्बूद्वीप बसे बकवादी ॥ पढै वेद औ करे अचारा । वे नहीं माने शब्द तुम्हारा ॥ जो नहिं माने शब्द हमारा । सो चलि जैहैं यमके द्वारा ॥ जो कोइ माने शब्द हमारा । सो चलि हैं लोक मँझारा ॥ अन्तर कपट करे मन माहीं । सो तो लोक पहुंच नहिं जाहीं ॥ कहहिं कवीर सुनो धर्मदासा । बीरा नाम करो प्रकासा ॥ ८ ॥

इति चौकाकी रमैनी ॥

शब्द नारियर ।

साखी–कलश आरति दल शिला, चारो अंक सुधार । रेखा लिखि कर पान धर, तहां कपूर प्रजार ॥ १ ॥ बनि जारिन विनती करे, संत सुनु साजना । नरियर लीन्हों हाथ, संत सुनु साजना ॥ विना बीजके वृक्ष है, सुनु साजना । विनु धरती अंकूर संत सुनु साजना ॥ जाके मूल पताल है; सुनु साजना । नारियर शीश अकाश, संत सुनु साजना ॥ बिना भेद जनि मोरहु, सुनु साजना । जीव एकोत्तर हानि, संत सुनु साजना ॥

गुरुके शब्दले मोरहू सुनु साजना । यम शिर मर्दहु मान, संत सुनु साजना ॥ सखियाँ पांच सहेलरी, सुनु साजना । नौन री विस्तार, संत सुनु साजना ॥ कहहिं कबीर बघेलसे, सुनु साजना। इन्द्रमती शिर ताज संत, सुनु साजना ।

आरती चौकाकी १ ।

साखी-पुहुप दीपमें बैठिके, सुख सागरमें पान । अंबु दीपमें बैठिके मूल करी पहिचान ॥ २ ॥ आदिनामचित चेतो भाई । आरति साजो जोत बराई ॥ पाट पटम्बर अम्बर छाया । तहवाँ हंसकरे गवनाया ॥ सेत सिघाँसन अगम अपारा । सत-सुकृत तहवाँ पगु धारा ॥ भाजा तिमिर भया परगासा । दूत-भूत जम आगम नासा ॥ बाहँ पकरि जिव सौंपो भाई । सत-सुकृतकी फिरी दुहाई ॥ सुरत निरत हैं सतगुरु पासा । जराम-रनकी छूटी आसा ॥ तौन सुरतिले करो विचारा । सोहं सोहं हंस उबारा ॥ अहिनिसि सुमिरे जो कोई । सुख सागर पहुँचे जन सोई ॥ हंस रूपका भेद बताऊँ । कहो तो आपन अंस दिखाऊँ ॥ सुरति हँस सत्य है भाई। अगर बासमें रहे समाई॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधो । पद परचे आरति आराधो ॥

साखी-आरति चौका कर धरो, जीव उधारन काज । कहैं कबीर धर्मदाससों, जुग जुग अविचल राज ॥ अगर विदेही पायकरि, जगते रहे निनार । सुख सागरमें घर करे, सत्य नाम आधार ॥ ४ ॥

आरती चौकाकी ॥ २ ॥

मृत लोक जम थान सवाँरा । तब सत सुकृत जुगति विचारा सावधान बान यक कीन्हा । ताते काल भयो अधीना ॥ ले नरि-यर जब तिलक बनाया । काल शीघ्र शरनागत आया ॥ नरि-यर लीना हाथ उठाई । दूत भूत जग गये पराई ॥ कालहिं

मारि जगत यसलीन्हा। नरियर मोरि खुरहरि कीन्हा ॥ कहैं कवीर सुन हंसपति राई। धर्मदास आरति सचु पाई ॥

साखी--नामी मिलि नामी भया, रही न दूजी आस। सुख सागरमें घर किया, सत्यनाम विस्वास ॥

चौकाकी आरती ॥ ३ ॥

साखी-सत्य पुरुषकी आरती, जा घर होय प्रकास। कहैं कविर सुनु धर्मनि, निर्मल होय सु दास ॥ १ ॥ जाघर आरती दास करतु हैं, जन्म जन्मके पाप हरतु हैं ॥ टेक ॥ केदली दल पुष्पनकी माला। सतसुकृत जाघर पगु घाला ॥ परिमल अगर गुलाल सुवासा। जाघर हंस करे सुख वासा ॥ १ ॥ अनहद ताल पखावज बाजे। श्वेत सिंहासन छत्र विराजे। नाम एकोत्तर सुमिरे तबहीं। सतगुरु बैठे सिंहासन जबहीं ॥ २ ॥ तत्व मता नरियर प्रमाना। सतगुरु कृपा होय निर्वाना ॥ नरियर मोरत बास उड़ाई। पल यक साहिब विलमे आई ॥ ३ ॥ सतगुरु दया प्रगट जब होई। पाये प्रसाद महाफल सोई ॥ महाप्रसाद तत्व विधि पावे, कहहिं कविर सतलोक सिधाये ॥ ३ ॥

शब्द भोग

सत्यपुरुषको भोग लागे, सिंगी शब्द अनाहद बाजे ॥टेक॥ केदली पत्र साजो पनवारा। शीतल शब्द ज्योति उजियारा। नारियर मोरि खुरुहु कीना। आदि नाम अन्तर घट चीना १॥ मधुर मिठाई मधुर मिठाई। प्रीतिभावसे सन्त बोलाई ॥ लौंग इलायची किसमिस मेवा। मधुर मधुर रस दाख घनेवा ॥२॥ सुखसागरके निर्मल नीरा। जापर सतगुरु तृप्त शरीरा ॥ सत्य पुरुषको अर्पण कीना शंख शब्द धुन बाजे वीना ॥ ३ ॥ सो पनवार दासको दीना। जाते काल भयो है अधीना ॥ पान प्रसाद जीवको पाव। अंकूरी सतलोक सिधावे ॥४॥ ऐसा भेद

करो प्रकासा। सत्य शब्द मानो विश्वासा॥ कहहिं कबीर सुनो धर्मदासा। वीरा नाम करो प्रकासा॥५॥

साखी-गुरुमुक्तावें जीवको, चौरासी बन्ध छोर।
मुक्त प्रवाना देहिं गुरु, यमसे तिनुका तोर॥१॥

शब्द तिनुकाका॥ १॥

जमुनियाकी डार साहेब तोड दीजे हो॥ एक जमुनियाकी चौदह डार। सार शब्दसे मोड दीजे हो॥ १॥ सुरति हमारी अजब पियासी, प्रेम अमीरस घोरि दीजे हो॥२॥ गुरु हमारे ज्ञान जौहरी, हीरा पदारस मोल दीजे हो॥ ३॥ यह संसार विषय रस माते। भर्म केवरिया खोल दीजे हो॥४॥ धर्मदासको अरज गोसांई। जीवन बन्ध छोड़ दीजे हो॥५॥

शब्द तिनकाका॥ २॥

जमुनियाकी डार मोरि तोरदे सतगुरु तोरदे॥ टेक॥ काया कंचन अजब प्याला, नाम बूटी रस घोरदे। घोरदे सतगुरु घोरदे, जमुनियाकी डार साहव तोरदे॥ १॥ सुरति सुहागिन अजव पियासी, अमृत रसमें बोरदे। बोरदे सतगुरु बोरदे, जमुनियाकी डार साहब तोरदे॥२॥ तू है सतगुरु ज्ञान जौहरी, रतन पदारथ खोल दे। खोल दे सतगुरु खोल दे, जमुनियाकी डार साहब तोरदे॥ ३॥ धरमदासकी अरज गुसांई, जीवनको बन्धन छोर दे। छोर दे साहब छोर दे, जमुनियाकी डार साहब तोर दे॥४॥

साखी-धन्य भाग उस दासको, सतगुरु दिये सुसाज।
माथ नवावे काल तिहीं, पायो नाम जहाज॥६॥

शब्द नाम लखावन।

गुरु पैंया लागु नाम लखाय दीजै हो॥ युगन युगनके सोवल मनुआ, दै सत शब्द जगाय दीजै हो॥१॥ घट अंधियार वस्तु

नहिं सूझे, ज्ञानकी दृष्टि बताय लीजे हो ॥२॥ विषकी लहरि उठे घट भीतर। अमृत घोरि पिलाय दीजे हो ॥३॥ गहिरि नदिया नाव पुरानी, खेइके पार लगाय दीजे हो ॥४॥ धर्मदासको अरज गोसांई, जीवन बन्ध छोड़ाय दीजे हो ॥५॥

शब्द कण्ठी।

साखी—कण्ठी जाके कण्ठमें, ताही नमे यमराज।
मारग छोडे दिखतही, सकलो ताहि समाज ॥१॥

पायो निज नाम गलेको हरिया ॥टेक॥ सतगुरु पटवा अजब निह हिया। छोटी मोटि डोलियामें चारि कहरिया ॥१॥ प्रेम प्रीती की पहिरि चुन्दरिया। निहुरि नाचो साहेव दरबरिया ॥२॥ सतगुरु कूंजी दई महलकी। जब चाहो तो खोलो केवरिया ॥३॥ यही मोरे ब्याह यही मोरे गवना। कहहि कवीर बहुरि नहिं अवना ॥४॥

शब्द उपदेश।

साखी—सतगुरुके उपदेश हैं, अतिशय सुखकी, खानि।
वेद मंत्र सम जानिके, लेहु हृदयमें मानि ॥१॥

धन सतगुरु जिन दियो उपदेश ॥ भव बूडत गहि राख्यो केस ॥टेक॥ साकटसे गुरु वैष्णव कीन्ह। सत्यनामका सुमिरण दीन्ह ॥१॥ जाति बरण कुल कर्म नशाय। साधु मिले तब साधु कहाय ॥२॥ जब लगि ममिता मरी न होय। तब लगि काज एको नहिं सोय ॥ ३ ॥ जब ममिता मेरी मिटिजाय। तब प्रभु काज सुधारे धाय ॥४॥ जब लगि सिंह रहे वनमाहिं। तब लगि यहो बन फूले नाहि ॥५॥ उलटा स्यार सिंहको खाय। तब फूले सकलो वनराय ॥६॥ खाती बुन्द केदली परे। रूप वरण कछु और धरे ॥७॥ नाम कपूर वासना होय। केदली वाको कहै न कोय ॥८॥ पारस परसे कंचन होय। लोहा वाको कहै न कोय

॥९॥ पारसके गुण देखहु जाय। कंचन महँगे मोल बिकाय ॥१०॥ निशिदिन सुमिरो एके नाम। जिहि सुमिरे सिध होवे काम ॥११॥ साहेब कबिरके पक्का खेल। तील फूल मिलि भये फुलेल ॥१२॥

साखी-तेल तीलते ऊपजे, जन्म जातिके तेल।
संगति भई जब फूलकी, नाम धराय फुलेल ॥१॥

शब्द अर्जी।

बहियाँ पकडो समुझिके, अर्ज सुनो गुरु मोर।
पकडो तो छोडो नहीं, तब बलहारी तोर ॥२॥

समुझि गहो मेरि बाहीं परम गुरु समुझि गहो मेरि बाहीं ॥टेक॥ जो बालक ढुनमुनवा खेले, सो बालक हम नाहीं। हम तो चाहें सतके सौदा, पथल पुजनको नाहीं ॥१॥ चौदह सो चौरासी चेला, सो चेला हम नाहीं। जियत ठिकाना सबहि बतावे मुये ठिकाना नाहीं ॥२॥ जो तुमरे घर उद्यम नाहीं, भीख माँगि किन खाहीं। मूल सजीवन जानत नाहीं, मति प्रबोधो काही ॥३॥ नाव तेरी करुअरिया नाहीं, लहरि उठे बिकरारा। गुरु सहित चेला सब बूडे, कौन उतारे पारा ॥४॥ सूखल लकडीमें घून लगतु है, लोहेमें लगु काई। बिनु प्रतीत गुरुका कीजे। काल घसीटे जाई ॥५॥ अमृत कुण्ड सदाकी चौकी, बेली बेला राखे। नेउल देखिके विषहर कम्पे, चपल अमी रस चाखे ॥६॥ माया आय चौकमें बैठी, नवल विवाहन आहीं। देय कपाट महलमें पौढे, अब कछु संशय नाहीं ॥७॥ समुझ न होय तो समुझो गुरुजी, न तरु होत बिगारा। कहैं कबीर सुनो गुरु रामानन्द, अब सिख लेहु हमारा ॥८॥

साखी-गुरु हमारा शब्द है, सदा रहतु है संग।
रामानन्दको युं किया, जगत जनावन ढङ्ग ॥

पान परवानाका शब्द ॥

पान छत्रपति कर धरो, अनुभव सन्धि विचार। विषम त्रिच्छ जमकी दशी, रेखगुंज निरुचार ॥१॥ जुगकी रेख सम्हारहु, पान अखण्डित सार। ताते हंस न वीगरे, चन्द्र लगन विस्तार ॥२॥ चार तत्व घटमें धरो, पांचो लेहु समोय। जेहि अक्षरते जिव-भया, जाते हंसा होय ॥३॥ वहि अक्षरते सब भयो, लोकदीप-स्थूल। ताको चान्हो सन्तो, विज अक्षर निजमूल ॥४॥ चार कमल घर भीतरे, परखो संत सुजान। जामें वासा जीवको, तहां सुधारो पान ॥५॥ आन कमलमें जिव बसे, अन्ते पान प्रकाश। अधर पान जमलेत है, जीव परे जम फांस ॥ ६ ॥ चारो मुहर सुधारहू, अंक छत्रकी छाँह। लच्छन लगन विचारके, देहु हंसको बाँह ॥७॥ सतजुग संधि सम्हारहू, सब विधि पूरन होय। सुरति निरति गहि धर्मनि, देखो शब्द विलोय ॥ ८ ॥ पान छत्रपति साजहु, जुगकी रेख सुधार। कहैं कबीर धर्मदास सो, हंस उतारो पार ॥ ९ ॥

॥ इति आनन्दी चौकाविधान समाप्ता ॥

॥ अथ चलावा चौका ॥

साखी-हंस उबारण कारने, सतगुरु जगमें आय।
काशीमें परगट भये, नाम कबीर कहाय ॥१॥

मंगल।

सतगुरु हंस उबारण जगमें आइयां। प्रगट भये निज काशीमें दास कहाइयां ॥१॥ रामानन्द गुरु कीन सो शिष्य कहाइयां। बुधि बल दीक्षा लीन बहुरि समुझाइयां ॥ २ ॥ ब्राह्मण औ सन्यासी हांसी कीन्हियां। तजि काशी गये मगहर काहु न चिन्हियां ॥ ३ ॥ बिजुलीखां पैठान तो कबुर खोदाइयां। बिरसिह राय बघेल, साजि दल आइयां ॥ ४ ॥

लिखि कमलापति रानि, सो पतिया पठाइयां। मूर्दा न होहिं कबीर, सो बुधि विचराइयां ॥ ५ ॥ पर्दा उघारिके देखेउ, कछु नहिं पाइयां। पान फूल लिये हाथ, बहुत पछिताइयां ॥६॥ मगहर झगडा निवेरि, दोउ दल राखियां। गढबाँधो धर्म-दास, आपन कर थापियां ॥ ७ ॥ अटल बयालिस वंश, राज लिखि दिन्हियां। जस हम तस तुम वंश, दया बहु कीन्हियां ॥८॥ हद बाँधा दरियाव, उड़ीसा जाइके। लक्ष्मी सहित जग-न्नाथ, मिले प्रभु धाइके ॥ ९ ॥ उहँवाँ सतगुरु जायके; अदल चलाइयां। महा प्रसाद पवायके भ्रम मेटाइयां ॥१०॥ आगम कहों पुकारि, सुनो धर्मनिनागरा। बहुत हंस लिये साथ उतरो भव सागरा ॥११॥

साखी–चार गुरु संसारमें, धर्मदास बड अंश।
मुक्त राज तुमको दियो, अटल बयालिस वंश ॥ २ ॥

॥ अथ दीहल प्रारम्भः ॥

साखी–आमिनिकी विनती यही, सुनिये बन्दी छोर।
भवसागरसे तारहू, पुनि पुनि करौं निहोर ॥१॥

दीहल। (१)

आमिनि विनती बिनवई, सुनहु हो बंदी छोर। भवसागरसे मोहि तारहु, इतना मोर निहोर ॥१॥ भवसागर भयावन सूझे, वार न पार। झांझरि नाव पुरातम, खेइ उतारहु पार ॥ २ ॥ कोटि कर्म छूटे नहीं, यह जिव कीट समान। भृङ्गी होय गुरु तारहू, अधम उधारण नाम ॥३॥ आसन आहीं पुरुषके, धर्म दास को दीन्ह। चार अंश चौका महँ, तामें लेहू चीन्ह ॥४॥ कहहिं कबीर सुनु आमिनि, रहो हमारी आस। जीवन पार उतारि हौं होइ चुरामणि दास ॥५॥

दीहल (२)

साखी-मानहु शब्द हमार यह, सतगुरु सुमिरण सार।
नतु पाछे पछताइहो, जब पडिहैं जम मार ॥ २ ॥

फेरु पछितायव हे कामिनि, मानहु शब्द हमार ॥ टेक ॥ चन्दन जानि विरछा रोपल, सेहू भेल सेमर पलास। फुलवा देखि धीरज बांधल, फल देखि भयल निरास ॥१॥ बिनारे सोनाके कैसन आभरण, बिन मोती कैसन गरहार। बिनारे मय्याके कैसन नैहर, बिनु स्वामी कैसन सिंगार २ कायारे कंचन गढ टूटल, छूटल कुल परिवार। दशो दुआरिया जमुआ रोकल, कौनेबिधि होयब पार ॥ ३ ॥ साहेब कवीर कहि दीहल, शब्द परखु टकसार। बहुरि न यहि जगमें आयब, फिर न मनुष अव-तार ॥४॥

दीहल (३)

साखी-कामिनि अचरज देखहु, जहं नहिं धरनि अकाश।
चान्द सूर जहवाँ नहीं सत्य, शब्द परकाश ॥ ३ ॥

अचरज देखहु कामिनि, कहौं तो को पति आय। अधर साहेब हम देखलौं, सतगुरु डोलिया फनाय ॥ १ ॥ चांद सुरज हे वहां नहीं, वहां नहिं धरनि अकाश। तौने पुरुष मोरे प्रिय-तम, केहि विधि करौं निवास ॥२॥ गुरु दरशनके कारने, सर-वस दियो लुटाय। एक पलकके बीछुडे, अब मोहिं कछु न सोहाय ॥ ३ ॥ गुरु दरशन हम पायलौं, छूटल कुल परिवार। अब जैहौं पुर आपने, परखु टकसार ॥४॥ साहिब कवीर कहे दीहल, हृदय करहु विचार। अरस परस करु कामिनि, निर्गुण नाह तुम्हार ॥५॥

दीहल (४)

सा०-सुमिरहु कामिनि नाह निज, जहँवाँ धूप न छांहिं।
देखत अतिसुख ऊपजे, सुमिरत कर्म कटाहि ॥ ४ ॥

सुमिरहु कामिनि सुमिरहु, सुमिरहु आपन नाह। अधर साहिब हम देखिया, जहँवाँ धूप न छाँह ॥ १ ॥ बिनारे घटा घन गरजई, बिनु जल तिरथ नहाय। देखतहीं सुख ऊपजे, सुमिरत कर्म कटाय ॥ २ ॥ बिन पानीके जीवन, बिनु दीपक उजियार। ऐसो निर्गुण देखिके, परखु शब्द टकसार ॥ ३ ॥ साहेब कबीर कहँ दीहल, अब सोहंगम फूल। अब मोरे जन्म सुफल भये, पाये मुक्तिके मूल ॥ ४ ॥

दीहल (५)

साखी-मानहु गुरुके वचन पिय, हरदम खबरजु लेय।
जो चित अन्ते जाइहैं, तौ गुरु ताजन देव ॥५॥

गुरुके वचन मोरे प्रियतम, हरदम खबर जुलेय। जो चित अन्ते जाइ हैं, हँसि पिय ताजन देय ॥ १ ॥ पार बसे मोर प्रियतम, दुर्बल भइ मोरि देह। पांच भैया संग दारुण, तिनसे छुटल सनेह ॥२॥ जिनके आंगन नदिया बहे, सो कस कुआँमें नहाय। जाघर नारि सुलक्षणा, सो कस पर घर जाय ॥३॥ गृहि आंगन नहिं भावई, सुख संपत नाहि सुहाय। निर्गुन नाह न आवई, सेज गयल कुम्हिलाय॥४॥ जो साहेब वर पाइहों, नैहर धरे उठाय। सेज बैठे सुख विलसहिं, गुरुमुख मङ्गल गाय॥५॥ साहेब कबीर कहि दीहल, छूटल कुल परिवार। चरण कमल चित राखहू, पूरण नाम अधार ॥ ६ ॥

दीहल (६)

सा०-नैहर आपन कोइ नहिं, जासे करूं पहिचान।
प्रेमसहित सखि मिलिलेहु, निजप्रियसुखप्रदजान॥६॥

मिलि रहु सखिरी तु मिलि रहु, अपने पिया सुख जान। नैहर आपन कोइ नहीं, जासे करौं पहिचान ॥ १ ॥ मोरे जिवके भावतु, छाय रहो वहि देश। मैं विरहिनि निश दिन फिरौं, धरि

योगिनिकी भेस ॥२॥ तात मात कोइ संग नहिं, संग नहीं सग भाय। काम न काहु कुटुम्बसे, चली निसान बजाय॥३॥ चाँद सूरजकी पालकी, तोह चढि बैठी नार। सुखमनि संग सहेलरी, दुलहिनि उतरी पार॥४॥ कमल जो फुले अकाशमें, अलि गुंजे चहुँ और। पियाको लै बैठी तहां, ढुरै सोहंगम चौर ॥ ५ ॥ सोहंगम मूरत मोर, हिरदय रही समाय। कहहिं कबीर धर्मदा-ससे, सो लीजे दरसाय ॥ ६ ॥

दीहल (७)

साखी-पांच सखीके संगमें, सासुर झगडा होय।
भैंसुर घर मूसे सदा, काहि कहों दुख रोय ॥ ७ ॥

पांच सखी संग दुलहिनि, सासुर झगडा होय। भैंसुर चोर घर मूसई, काहि कहों दुख रोय ॥ टेक ॥ वासर चन्दा ऊगई, निशिमें ऊगैं सूर। गङ्गा जमुना दोउ संग बहे, हंस गमन बडि दूर॥१॥ गंगा जमुनाके अन्तरे, पर्वत धवल सुजान। चितवत नजर न आवई, जमके अमल अमान॥२॥ ध्रुव मण्डल नहीं दरशई, नेत्र गुंज अनुसार। चित गहि चेतहु सन्त हो, मास पडे जम धार ॥ ३ ॥ श्वासा सूर न बन्द हो, केहरि बन्द न लेय। आठ पखहिंके भीतरे, हंस पयाना देय ॥ ४ ॥ कायापुर पाटन परिचय, कायाको एहि सुभाव। चित चेतो कडिहार हो, अवघट लगे न नाव॥५॥ जैमुनि लगन सम्हारहु, सुमिरहु निर्गुण सार। पान छत्र पत साजहू, हंस उतारो पार ॥ ६ ॥ पच्छिम लहरि जोगावहु, पूरव चन्दा तान। निर्गुण शब्द उचारहू, कबहुँ न होय जिव हान ॥ ७ ॥ चन्द उदय सुर आवे कूच नगारा होय। साहेब कबीर कहि दीहल, देखहु शब्द बिलोय ॥

दीहल (८)

साखी–आरति साजहु दुलहिनी, आवहिं कन्त सबेर ।
निर्गुन मङ्गल गावहू, अब जनि लावहु बेर ॥ ८ ॥

दीहल (९)

साखी–यहि बिधि श्वास बिचार है, सुनहु सन्त मतिधीर ।
साधन करिके जानि हो, रहे कि जाय शरीर ॥ ९ ॥*

शब्द नारियर ॥ १ ॥

साखी–मोरहु नारियर मोरहू, आपन अंश बचाय ।
बिना शब्द जो मोरहु, जिव परलय तर जाय ॥

मोरहु नारियर मोरहू, आपन अंश बचाय। बिना शब्द जनि मोरहु, जिव परलय तर जाय ॥ टेक ॥ तीन अंश नरियर महँ, तामें एक हमार। आपन अंश बचाय के, यमके अंश निनार ॥ १ ॥ जमके अमल मिटावहू, बत्तिस पवन विलोय। नीर नेह निर्वारहु, चलहु महा तम खोय ॥ २ ॥ धरती रेख सुधारहू, पुरुष पवन अनुमान। बिना भेद जनि मोरहु, जीव एको तर हान ॥ ३ ॥ सोहं को निज गहि रहू, नारियर बास समोय। तीनौ तत्व सुधारहू, काल निकट नहिं होय ॥ ४ ॥ धरती गुण गहि प्रगटहू, करौ शब्द परकास। साहिब कबीर कहि दीहल दिढ मानहु धर्मदास ॥ ५ ॥

आरती ॥ १ ॥

साखी–आरति सत्य कबीरकी, जा घर होय प्रकाश ।
दुःख दरिद्र आपे भगे, पूरे मनकी आश ॥ १ ॥

मङ्गल रूप आरति साजे। अभय निशान ज्ञान धुनि बाजे ॥ टेक ॥ अछै वृक्ष जाकी अम्बर छाया। प्रेम प्रताप अमृत फल पाया ॥ १ ॥ निशि वासर जहां सूर्य न चन्दा। परम पुरुष जहँ करहिं अनन्दा ॥ २ ॥ तन मन धन जिन अर्पण कीन्हा। परम

* नोट–इसके आगेके दीहल सब पहिले पृष्ठ ३४३ से आरंभ होकर बहुत आ गये हैं सो देख लेना चाहिये और भी पांचवें छठे खण्डमें आनेवाले हैं वहां से देख लेना.

पुरुष परमातम चीन्हा ॥ ३ ॥ जरा मरणके संशय मेटे। सुरत सन्तायन सतगुरु भेंटे ॥ ४ ॥ कहहिं कवीर हिरम्बर होई ॥ निरखि नाम निज सुमिरे सोई हो ॥ ५ ॥ १ ॥

अथ डोरी पद प्रारम्भः ।

चलाना चौंकाका पद डोरी ॥ १ ॥

साखी-अबकी बार उबारिये, अर्जी दीन दयाल ।
जगमें कोई है नहीं, तुमरे सरिस कृपाल ॥ १ ॥

अबकी बार उबारिये, मेरी अर्जी दीन दयाल ॥ टेक ॥ आई थी ओहि देशसे, भई परदेशी नारि। वह मारग मैं भूलियां, बिसरि गई निज बारि ॥ १ ॥ युगन युगन भ्रमत फिरी, जमके हाथ बिकाय। कर जोरे बिनती करूँ, मोहि मिलि बिछुड़ि जनि जाय॥२॥ विषम नदी बिकराल है, बहत कटरिया धार। मोह मगरके घाटमें, खाये सुर नर झार ॥ ३ ॥ शब्द जहाज कवीरके सदगुरु खेवन हार। जो कोई हंसा आवई, पलमें लेहिं उबार ॥ ४ ॥

साखी-चली पूतली लवणकी, थाह सिन्धुको लेन ।
आपे गलि पानी भई, उलटि कहे को बैन ॥ २ ॥

पद डोरी ॥ २ ॥

उनमुनि चढी अकाशमें, गई गगनमें छूट ।
हंस चला घर आपने, काल रहा शिर कूट ॥ ३ ॥

नाम सनेह न छाड़िये, भावे तन मन धन बर जाय ॥ टेक॥ पानीसे पैदा किया, नख शिख अंग बनाय। उस साहिबको बिसारिया, (तेरो) गाढमें होय सहाय ॥ १ ॥ महल चुने खाई खने, ऊंचे ऊंचे धाम। जब यम बैठे कण्ठमें, कोइ न आवे काम ॥ २ ॥ मातु पिता सुत बान्धवा, और दुलारी नारि। यह सब हिलि मिलि बीछुडे, शोभा है दिन चारि ॥ ३ ॥ जैसे लागी

ओरसे, दिन दिन दूनी प्रीत। नाम कबीर न छाडिये, (भावे) हार होय की जीत ॥ ४ ॥

पद डोरी ॥ ३ ॥

साखी-हंसा छूटे बाज ज्यों, कोटि सिन्धुके जोर।
सुमिरत दीन दयालके, पहुँचि गया निज ठौर ॥ ४ ॥

शब्द सिंहासन पाटमें (तुम) हंसा बैठो आय॥ टेक॥ कौन नाम मुक्तामणि, कौन नाम वो अंस। कौन नाम वह पुरुष है, कौन नाम वो हंस ॥ १ ॥ अजर नाम मुक्तामणि, ऊग्र नाम वो अंस। ज्ञानी नाम वह पुरुष है, सुरत नाम वह हंस ॥२॥ मूल द्वीप निज द्वीप है, और सुनो हम पाहिं। बैठे हंस उबारहीं, सोहंगमकी बाँह॥३॥ जम्बु द्वीपके हंसा भाई, पांजी बैठो आय। कहहिं कबीर धर्मदाससे, लावहु बांह चढाय ॥ ४ ॥

साखी-अस बीरा प्रताप बल, प्रबल काल छय होय।
जिहिं सतगुरु बहियां मिले, हंस न जाय बिगोय ॥ ५ ॥

पद डोरी ॥ ४ ॥

हंसा दुर्मति छाड़िदे, तू तो निर्मल होय घर आव ॥ टेक ॥ दूधहिसे दधि होतु है, दधि मथि माखन होय। माखनसे घृत होत है, बहुरि न छांछ समोय ॥ १ ॥ ऊखहिंसे गुड़ होत है, गुड़से खांड़ हो जाय। सतगुरु मिलि मिश्री भई, बहुरि न ऊख समाय ॥ २ ॥ चीनी छिटकी रेतमें, गज मुख चुनी न जाय। जात बरण कुल खोयके, चींटी होय चुनि खाय ॥ ३ ॥ दाग जु लागी नीलकी, नौ मन साबुन धोय। कोटि यतन प्रबोधिये, कागा हंस न होय ॥ ४ ॥ कहहिं कबिर सुनु केसवा, तेरी गती अपार। बाप बिनौला होय रहे, पूत भये चौतार ॥ ५ ॥

पद डोरी ॥ ५ ॥

साखी-उत्तर घाटी ऊतरे, पांजी बैठे जाय।
तहँवाँ सुरति लगायके, पुरुषहि परसे पांय ॥ ६ ॥

शब्द सनेही हंसा, तुम जग तजि होय रहु न्यार ॥ टेक ॥ सत्य निज डोर है, तुम हंसा गहो बनाय। सत बीरा निज नाम है, चाखतही घर जाय ॥ १ ॥ बिना बीजके जामई, बिनु अंकुरके झार। बिनु डण्डी फल लागिया, साधू करहिं बिचार ॥ २ ॥ अजरहिके अंकूर भये, अजरहिकी लागी डार। अजर फूल फल लागिया, साधू करहिं अहार ॥ ३ ॥ मोहि अजर कर जानहू, अम्मर देउ बताय। जिहिं भाण्डे निज सांच है, तामें रहो समाय ॥४॥ कहहिं कबीर धर्मदाससे, बेगि जाहु संसार। सोहंगमकी बांहसे, हंस उतारहु पार ॥ ५ ॥

पद डोरी ॥ ६ ॥

साखी-बीरा बद जिन जानहू, पुरुष नाम निज मूल।
जा दिन हंसा तन तजे, मेटे संशय शूल ॥ ७ ॥

कौन मिलावे योगिया, योगिया बिनु रहल न जाय ॥ टेक ॥ हौं हरिनी पिया पारधी, मारा शब्दके बान। जाहि लगे सोइ जानिया, और दरद नहिं आन ॥ १ ॥ पिया कारण पियरी भई, लोग कहें तन रोग। जप तप लंघन मैं करौं, पिया मिलनके योग ॥ २ ॥ हौं तो पियासी पीवकी, रटौं सदा पिव पीव। पिया मिले तो जीवऊँ, (न तु) सहजे त्यागौं जीव ॥ ३ ॥ कहहिं कबीर सुनु योगिनी, तनीमें मनहि समाय। पिछली प्रीतिके कारणे, योगी मिलेंगे आय ॥ ४ ॥

पद डोरी ॥ ७ ॥

साखी-साथी नाद कबीर हौ, विन्दहिं देहु न भार।
युग युग हंसा हिरम्बर, नाद उबारन हार ॥ ८ ॥

ज्ञान रतनकी आंखिया, देखहु यमको जाल ॥ टेक ॥ यमके फन्दा काटहु हंसा, जग तजि होहु न्यार। सतगुरु दर्शन देइँगे, उतरो भवजल पार ॥ १ ॥ जो तुम हंसा चाहो निर्गुण, सर्गुण करहु विचार । निर्गुण सर्गुण छोडिके, तुम दोउ तजि होय रहु निनार ॥ २ ॥ अष्ट कमल दल ऊपरे, भमर गुफाके घाट। सहस्र पांखुरिका कमल है, पछिम दिशाके बाट ॥ ३ ॥ नौ खण्ड हेतु विसारहु हंसा, शब्द सुरति चित धार । कह कबीर धर्मदाससे, उतरो भवजल पार ॥ ४ ॥

पद डोरी ॥ ८ ॥

साखी–चलु सखि चौपर खेलिये, तन मन बाजी लाय ।
सतगुरुके ढिग खेलते, दुर्मति जाय नशाय ॥ ९ ॥

चलु सखि चौपर खेलिये, तन धनसे बाजी लाय ॥ टेक ॥ चौपर खेले शुन्यमें, खेले दिन औ रात। चल हंसा घर आपनो, जहँ तेरी उत्पात[१] ॥ १ ॥ चौपर खेलौं पीवसे, बाजी लगावौं जीव। जो हारौं तो पीवकी, जीतौं तो मोर पीव ॥ २ ॥ चार गली घर एक है, चार वरण इक सार । पासा डारौं प्रेमका, जीति चलै सोइ नार ॥ ३ ॥ चौपरियाके खेलमें, युगन युगनके दाव। नर्द[२] अकेली होय रही, छिन पल खावे घाव ॥ ४ ॥ चौरासी घर भरमिके, पौ में अटकी आय । अबकी पौ जो ना पड़े, फिर चौरासी जाय ॥ ५ ॥ पगरासे बाजी लगी, पड़े अठारह दाव । सार गँवाई हाथसे, शिर ऊपर लग घाव ॥ ६ ॥ जाति वरण कुल मेटिके, पाई भक्ति अटूट । कह कविर धर्मदाससे, कोइ न पकड़े खूँट हो ॥ ७ ॥

॥ इति चलावा चौकाका पद समाप्त ॥

---

१ उत्पत्ति । २ गोटी चौपडकी ।

शब्द व्यञ्जन भोग ॥ १ ॥

मेरे सतगुरु आये द्वार हो रसके व्यञ्जना। सखि, काहेकी बैठक देउँ, सुरत रसके व्यञ्जना ॥ १ ॥ चंदन पिढिया गुरुकी बैठका रसके व्यञ्जना। सखि नीरन चरन पखारु, सुरत रसके व्यञ्जना ॥ २ ॥ भात राँधों रस दूधमें, रसके व्यञ्जना। सखि धोय मूँगकी दाल, सुरत रसके व्यञ्जना ॥ ३ ॥ काहेके थार परोसौं, हो रसके व्यञ्जना। सखि, काहेके कटोरेमें दूध, सुरत रसके व्यञ्जना ॥ ४ ॥ सोनेके थार परोसौं, हो रसके व्यञ्जना। सखि, रूपे कटोरेमें दूध, सुरत रसके व्यञ्जना ॥५॥ जिमि लेहु सतगुरु पाहुना; रसके व्यञ्जना। सखि, मुख भरि देहु आशीष, सुरत रसके व्यञ्जना ॥६॥ पाथरको क्या पूजनों, रसके व्यञ्जना। सखि मुख बोले नहिं खाय, सुरतके व्यञ्जना ॥७॥ सांचे पूजहु साधुको, रसके व्यञ्जना। सखि, मुख बोले अरु खाय, सुरत रसके व्यञ्जना ॥ ८ ॥ खाय पियाय सुख सेज में, रसके व्यञ्जना। सखि, करिले शब्द सिंगार, सुरत रसके व्यञ्जना ॥ ९ ॥ पानन बिरिया खवाऊँ, हो रसके व्यञ्जना। सखि, दोय कर चरण दबाऊँ, सुरत रसके व्यञ्जना ॥ १० ॥ व्यञ्जना २ सब कोई कहे, रसके व्यञ्जना। सखि, व्यञ्जना लखे नहिं कोइ, सुरत रसके व्यञ्जना ॥ ११ ॥ कहहिं कविर धर्मदाससे, रसके व्यञ्जना। सखि, रहत अमर पुर छाय, सुरत रसके व्यञ्जना ॥ १२ ॥

व्यञ्जन भोग ॥ २ ॥

सतके भोग दयाके व्यञ्जन, तुमको मालुम होय। महा पुरुष मानिये निज सोय ॥ टेक ॥ इंगला पिंगला चौका पोते, क्षमा मंत्र जल ढार ॥ महा० ॥ १ ॥ बलकी फूक अकिलकी आग, चाहकी चुल्हा सम्हार ॥ महा० ॥ २ ॥ तिल दयाकी दाल बनी है लक्षके

लवण मिलाय ॥ महा० ॥ ३ ॥ मनसा हींग डारु व्यञ्जनमें, चहुँ दिशि बास उड़ाय ॥ महा० ॥ ४ ॥ भाव भक्ति घृत निर्मल नीरा, लै गडुआ जल ढार ॥ महा० ॥ ५ ॥ आसन मूल बैठ दृढ अविचल सुषमन, बांह पसार ॥ महा० ॥ ६ ॥ सुरत निरत दोय पाक सँवारे, सन्त परोसहिं थार ॥ महा० ॥ ७ ॥ सतसुकृत जहां भोजन पावें, घर माणिक उजियार ॥ महा० ॥ ८ ॥ सकल सन्त मिलि आरति उतारें, गावहिं मङ्गल चार ॥ महा० ॥ ९ ॥ कह कवीर जो सतगुरु सेवे, सो सतलोक सिधार ॥ महा० ॥ १० ॥

व्यञ्जन भोग ॥ ३ ॥

सत्यपुरुषको भोग लागे, शब्द अनाहद घण्टा बाजे ॥ सतपु० ॥ प्रेम सुरतिसे कियो है रसोई । अमृत भोजन पारस होई ॥ १ ॥ कंचन झारी सुकृत थार । जेवन बैठहिं सिर्जन हार ॥ सत पु० ॥ २ ॥ जेवहिं धनी सन्त सब संगा । गावहीं दास सुख प्रेम उमंगा ॥ ३ ॥ पाय प्रसाद जल अचवन कीन्हा । महा प्रसाद दासको दीन्हा ॥ ४ ॥ तबसे काल भयो है आधीना, जबसे हंस भयो प्रवीना ॥ ५ ॥ कहहिं कवीर पूरण भौभाग, जब सत गुरु मस्तक दियो जाग ॥ ६ ॥

शब्द अचवन ॥ १ ॥

सेवक लिये प्रेम जल झारी, खरिचा ब्रह्मज्ञान ॥ सो लेय अचवन कीजे, गुरु कृपा निधान ॥ टेक ॥ भाव भक्तिसे बीरा लीजे, सन्तन जीवन प्राण ॥ महा० ॥ अमी उतारि दासको दीजे, जनको परम कल्याण ॥ सो अचमन० ॥ १ ॥ हृदय विच पलँगा बिछावों, पौढौ पुरुष पुराण ॥ महा० ॥ चरण कमलकी सेवा करौं, दासातन प्रमाण ॥ सो अचमन० ॥ २ ॥ सुरतिके बेनिया डोलाऊँ मैं ठाढी, एक टक लागे ध्यान । महा० ॥ धर्मदास पर दाया कीजे, पूरण पद निर्वांन ॥ सो अचवन कीजे गुरु कृपा निधान ॥ ३ ॥

शब्द धुन ॥ १ ॥ राग सारंग-(समय मध्याह्न काल)

भाग जाके सन्त पाहुने आवें। द्वारे कथा कीरतन करहीं, हिलमिल मंगल गावें ॥ टे० ॥ काम क्रोध मद मान कलपना, दुर्मति दूर बहावें ॥ राग द्वेष परनिन्दा तजिके, सत उपदेश लिखावें ॥ १ ॥ प्रथम लाभ चरणोदक लैकरि, जो कोइ शीश चढावें ॥ कोटिन तीरथको कर सहजहिं, सो घर बैठे पावें ॥२॥ खीर खांड पकवान मिठाई, लखि नहिं हेत बढावें ॥ रूखा सूखा शाकपत्र अति, हितसे भोग लगावें ॥ ३ ॥ महा प्रसाद देवनको दुर्लभ, सन्त सदा सो पावें ॥ दुष्ट सदा दुर्मतिके घेरे, मिथ्या जन्म गवांवें ॥ ४ ॥ गुरु प्रतापसे पूर्वकी सुकृत, कर्म उदय हो आवें ॥ कहैं कवीर साधु मूरति धरि, साहिब दरश दिखावें ॥५॥

॥ शब्द धुन ॥ २ ॥

भाग जाको सन्त पाहुने आवें ॥ द्वारहिं होत कथा अरु कीरतन, हिलिमिलि मंगल गावें ॥ भाग० ॥ १ ॥ प्रथमहि लाभ शीत चरणामृत, महा प्रसादको पावें ॥ भाग० ॥ जेहि कारण योगि जप तप करहीं, सो फल साधु जिमावें ॥ भाग० ॥ २ ॥ खीर खांड घृत अमृत भोजन, सन्त सदा यहि पावें ॥ भाग० ॥ दुष्ट सदा दुर्मतिके घेरे, मिथ्या जन्म गवाँवें ॥ भाग० ॥ ३ ॥ शिव सनकादि आदि ब्रह्मादिक, सतगुरु यही लखावें ॥ भाग० ॥ कहहिं कवीर सन्तनकी महिमा, साधुमें साहेब पावें ॥ भाग० ॥४॥

शब्द धुन ॥ ३ ॥

सोहं हंसा सकल समाना। कायाके गुण आनहिं आना ॥ सोहं० ॥ टेक ॥ माटी एक सकल संसारा। आन आन बासन गढे कुम्हारा ॥ सोहं० ॥ १ ॥ सरिता सिन्धु औ कूप तलाई। एकै नीर सकल रहु छाई ॥ सोहं० ॥ २ ॥ पांच बरणकी दुहिये गाय। श्वेत दूध देखि मन पतियाय ॥ सोहं० ॥ ३ ॥ कहहिं कवीर संशय करु दूरी। सब घट ब्रह्म रहा भरपूरी ॥ ४ ॥

शब्द धुन ॥ ४ ॥

बोलो साधु सतनाम साहिब कवीर बन्दि छोर कवीर ॥टेक॥ अकह नाम अभिअन्तर सारो। सुकृतनाम बन्दि छोर तुम्हारो॥ १ ॥ सुकृत अचिंत नाम पतित उधारण। धनि धर्मदास साहेब हंस उबारण ॥२॥ आय सन्तको कीजे मिजमानी। उनके मुख कछु सुनिये बानी॥३॥ जो तुम सहो जगतकी हांसी। बन्द छोडाय काटहि यम फांसी ॥ ४ ॥ साधु सन्त मिलि सुमिरों मोही। आपन करि प्रतिपालों तोही ॥५॥ तीरथ जाउँ नहिं पूजौं देवा। सब पर श्रेष्ठ सतगुरु पद सेवा ॥ ६ ॥ कहहिं कवीर समुझ नर बौरे। नष्ट जाहु जनि मोर निहोरे ॥ ७ ॥

॥ शब्द गारी प्रारम्भः ॥

शब्द गारी ॥ १ ॥

जो तू भक्ति करनको चहतु है। निन्दासे नहिं डरिहो जी ॥ टेक ॥ पांच छडी कोई शिरपर मारे। सहत बने तो सहिहो जी ॥१॥ मूरख आगे ज्ञान न कथिहो। मौनी होके रहिहो जी॥२॥ पर तिरियासे नेह न करिहो। देखत दुरिसे डरिहो जी ॥ ३ ॥ यह संसार विषयके कांटा। निरखि परखि पगु धरिहो जी॥४॥ साहिब कवीरजीकी निर्गुण गारी। महरम होके बुझिहो जी ॥५॥

गारी ॥ २ ॥

देहु न देहु प्रभु जन अपनेको, सामरथके गुण गावहु जी हो ॥ टेक ॥ गगन मण्डल मोरे सजन वसतु हैं, उनहुंको नौति बोलावहु जी ॥ १ ॥ काम क्रोध मद लोभ पाँवरे, भीतर भवन बिछावहु जी॥२॥ नयनके जलसे चरण पखारहु, चितके चौक बैठावहु जी ॥३॥ करनीके पातर कथनीके दोना, साखके सीक लगावहु जी ॥४॥ भावके भात अरु दाल दयाकी, शब्दके बरा

बनावहु जी ॥ ५ ॥ मनसा मारिके सरस बनावहु, प्रेमके घृत चुआवहु जी ॥६॥ सतके दूध रु करनीके खोआ, शक्कर सुमति मिलावहु जी ॥७॥ यह सुख पाव जिमि सजन हमारो, श्वासकी वेनिया डोलावहु जी ॥८॥ शीश भार भरे जल अमृत, सजनको अचवन करावहु जी ॥९॥ पांच पचीस पकडि नौ नारी, सजनको गारी गवावहु जी ॥ १० ॥ तत्व तमोधिनि सुधर सुमति ले, सजनको बिरिया खवावहु जी ॥ ११ ॥ एकइस खण्ड महलके भीतर, निर्भय पलँग बिछावहु जी ॥ १२ ॥ धर्मदास कहँ साहेब आये, मुक्ति पदारथ पावहु जी ॥ १३ ॥

गारी ॥ ३ ॥

सेवकके सतगुरु पाहुन आये। काले करउँ मिजमानी जी ॥ १ ॥
चरण धोय चरणामृत लेऊँ, तनकी तपन बुझावउँ जी ॥ २ ॥
चित चौका सन्तोष बैठिका, प्रेमके पातरि लावउँ जी ॥ ३ ॥
निरतिके गडुआ जल भरि लावउँ, परसहुँ सुरति सयानीजी ॥४॥
अकिलके आम रु नेहके नेमुआ, अदरख आदर मिलावउँजी ॥५॥
शीलके सेम रु भावके भण्टा, बनि हैं करार करैलाहुजी ॥ ६ ॥
धोयके डारो विचारके जलसे, कर्मनकी कडुआई जी ॥ ७ ॥
हियकी हलदी नामके नीमक, तत्वके तेलमें बघारहु जी ॥ ८ ॥
मनके मूंग मनसा मुँगौरा, प्रीतिके पापड लावहु जी ॥९॥ दिलकी दाल अरु हेतुके बरा, सुरतिके घृतमें छनावहु जी ॥१०॥ दयाके दही ले कढी बनावहु, तेहिमें बरा भिजावहुजी ॥११॥ दुबिधाकी लकडी बुद्धिसे चीरहु, ज्ञानकी अगिन जरावहुजी ॥१२॥ महिमा पुरी मनोरथ चटनी, युक्ति जिलेबी लावहुजी ॥१३॥ एत जेवनार बने घट भीतर, सतगुरु नेवति बुलावहुजी ॥ १४ ॥ साधु सन्त मिलि जेवन बैठे, छुटे प्रेम रस गारी जी ॥ १५ ॥ कहहिं कबीर सुनो धर्मदासा, शोभा लेहु अधिकारीजी ॥ १६ ॥

गारी ॥ ४ ॥

हौं मैं सत्यनामसे राजी । जासे जीती सारी बाजी ॥ १ ॥ मैं रतन अमोलक पाया । ताते कौडी हाथ न लाया ॥ २ ॥ मैं पहिरौं मुक्ता मोती । ताते छाडी कांचकी ज्योती ॥ ३ ॥ जहाँ ब्रह्मा विष्णु महेशा । हम छोडे तिनके देशा ॥ ४ ॥ जहाँ कोटि भानु प्रकाशा । तहां का दीपककी आशा ॥ ५ ॥ सन्तो कहहिं कवीर विचारी । मोहि साधु संगत लगी प्यारी ॥ ६ ॥

गारी ॥ ५ ॥

जाको चरणामृत लीजे । तिहिं गारी काहेको दीजे ॥ १ ॥ जासे मुक्ति पदारथ पय्ये । ताको हृदय माहिं समय्ये ॥ २ ॥ जाको लोभ मोह भर्मावे । ताको हीरा हाथ न आवे ॥ ३ ॥ जो काम क्रोध मद माता । सो बांधे जमपुर जाता ॥ ४ ॥ संसार जाल है भारी । मेरे सन्तनकी मति न्यारी ॥ ५ ॥ सन्तो कहहिं कवीर बिचारी । मोहि साधु संगत लागे प्यारी ॥ ६ ॥

गारी ॥ ६ ॥

जोरा जोर जनावे, या माया पर पनचनिया ॥ दोय रूप बनावे, इक कनक इक कामिनिया ॥ टे० ॥ इक जावे इक रहावे, इक संशय यह मारनिया ॥ ताको काटिये कैसा, संत जन लेउ बिचारनिया ॥ १ ॥ चलि सतगुरु सरना, करिय जाय पुकारनिया ॥ हम माया फांसे, जन्म जन्म जम डांडनिया ॥ २ ॥ हम बहु दुख पाये, सतगुरु लेहु उबारनिया ॥ भइ अधरते वानी, विगसित कमल परकाशनिया ॥ ३ ॥ समरथ सुनि आये, विरह दुख द्वन्द निवारनिया ॥ हम हाहो दुख पावें, सतगुरु ऊपर वारनिया ॥ ४ ॥ देहु अत्र बधाई, काम क्रोध दल मारनिया ॥ पद देइ मवासी, कर देउ निस्तारनिया ॥ ५ ॥ कालहु शिर नाई, जे लूटे तिरदेवनिया । गावें साहब कवीर, अब नहिं आऊँ संसारनिया ॥ ६ ॥

गारी ॥ ७ ॥

अल मस्त दिवानी, हम लाल भई जोगिनियाँ ॥ टेक ॥ कर पंख ढुरावैं, सोहं संग सहेलिनियाँ ॥ १ ॥ रस मगन भई है देखिके, साहबकी सेजडिया ॥ २ ॥ जहँ पवन न पानी, बिन बादर घन घेरनिया ॥३॥ जहँ सूर न चन्द, जहँ रैन न भोरनिया ॥ ४ ॥ जहँ काया न माया, करम नहीं जहँ लेखनिया ॥ ५ ॥ जहँ आप गुसांई, कोटि भानु परकासनिया ॥ ६ ॥ जहँ तम्बु तनाय, बिना मेखकी चाँदनिया ॥ ७॥ रंग सेज बिछाइ, अधर नहि कोइ लागनिया ॥ ८ ॥ जहाँ चँवर ढुरावें, सुरति सोहं सहेलिनिया ॥९॥ जहँ रमें कवीर, सुरति समानी शब्दनिया ॥१०॥

गारी ॥ ८ ॥

आय आय मेरे सतगुरु हो, कि हाथ लिये ज्ञानकी छडी ॥१॥ तोरि जात जानूं हो, कि रसिक राय शब्द घना ॥२॥ तेरि माया परबल हो, कि घनेरा छन्द करै ॥ ३ ॥ अति नाच नचावे हो, कि भेष नटवा सम धरो ॥ ४ ॥ गुन तीनो रसिया हो, कि पल छिन रंग करै ॥ ५ ॥ पांचन संग राची हो, कि पचीसो तेरे संग चलै ॥ ६ ॥ मन मस्त कुपलिया, कि चाली लंगर कौन घरा ॥ ७ ॥ तेतो नाह न चीन्हे हो, कि जाते डोली घरां घरां ॥ ८ ॥ चलु गगन महलमें हो, कि जहँ तेरो पीव बसै ॥ ९ ॥ जहँ रिम झिम वासे सो, कि मोती अजर झरै ॥१०॥ जहँ अनहद बाजे हो, कि शब्द झंकार करै ॥ ११ ॥ जहँ जगमगता उजियार हो, कि साधु जन ध्यान धरै ॥ १२ ॥ तू तो पिव पिव बोलिहो, कि अमृत रस पिवत फिरै ॥ १३ ॥ जहँ साहब कविरजी हो, कि ओहं सोहं चँवर ढुरै ॥ १४ ॥

गारी ॥ ९ ॥

टक रंग महलमें आव, कि निरगुन सेज बिछी ॥ जहां पवन

गमन नहिं होय, तहां मेरि सुरति बसी ॥ जहँ निरगुन विन निर्वान, जहां नहिं सूर ससी ॥ जहां पाँच तत्व नहीं हो, मुक्तिकी होय हसी ॥ जहां पिव प्यारी मिलि एक, तो सोस्या अजब वनी ॥ जहां साहब कवीर गलतान, इच्छा द्वैत हरी ॥

॥ गारी १० ॥

तेरि मय्या मनिराम, गयी जुलाहाके पासवै ॥ हंसि सेज विछाइ, आयी जुलाहाकी ताक वै ॥ लगन और होनदे, उतरन देत न ताप वै ॥ तेरी नली भरूंगी ठीक, बुनो चौतार वै ॥ नौतारको जामा, पचरंग सोहे पागवै ॥ तुम पहिरो मनिराम, मय्याके परसादवै ॥ सतनामको घुडला, सुमिरन पायल अस-वारवै ॥ चित चेतको चावक, देहु महाबल हाथवै ॥ लंगा हाकके घोडवा, अमर लोक चल जाववै ॥

गारी ॥ ११ ॥

सुनि समझिले सुरत विचारी । तोको दीजै कहाकहि गारी ॥ घर आंगन झाड बुहारी । कर कूड़ा बाहर डारी ॥ घरके नाहिन अपने । कबहुँ ना भेंटी सपने ॥ परपंची तीनों देवा । उनहू लह्यो न भेवा ॥ पाचन मिलि परपंच कीन्हा । सतसुकृत उनहू नहिं चीन्हा ॥ ब्राह्मन छत्री वानी । तिनहूकी करी न कानी ॥ तुम रुंड मुंड बासी । तू करवा चौथ उपासी ॥ करवा चौथ अहोई । सब रांडनकी मति खोई ॥ कहैं कवीर ब्रह्मवानी । तै मुंहि सुनी औ जानी ॥

गारी ॥ १२ ॥

तुम पहिरो सुमति सिंगार, भजनकी चूनरिया ॥ तेरे ढिग ढिग विधि बिचार, पची सो घूँघरिया ॥ तेरे पायल गहर गंभीर, सदा सुख सेहडिया ॥ तेरेहि बडे हार हमेल, दयाकी टोलनिया ॥ तेरे त्रिकुटी तिलक संजोय, जगत मन मोहनिया ॥ दूध बेचन निकसी हो, सुमति भरि गवालनिया । आडे होय रहिय हो,

सतगुरु गैलनिया ॥ नहि नहि साहब हो, नहि भइ बोहनिया ॥ चलु गगन में हो, जहाँ तेरि बोहनिया ॥ जब गई गगनमें हो, गगनमें मगन भय्यनिया ॥ मैं बहुरि न आऊँ हो, भइयाकीसों वा गलिया ॥ ऐसे कहें कबीर साहब हो, अटल भई गोवालनिया ॥

गारी ॥ १३ ॥

सुन समधिन चतुर सुजान, कहूँ इक बात भली ॥ तु तो अजहूँ चेत सम्हारि, सपेदी बगर गयी ॥ तेरि खाल गई कुम्हलाय, ममता अजहुँ न मुयी ॥ चल गगन महलमें हो, निरगुन सेज विछी ॥ तेरि पायलकी झंकार, शहरमें रोर परी ॥ तेरे दो मारगके बीच, डगर इक ज्ञान गली ॥ तेरो हटकनहार कौन, निसा सो आवचली ॥ तोसों कबीर कहैं समझाय, भजनकर घडी घडी ॥

गारी ॥ १४ ॥

सुनु समधिन संसै गारि । तोसे बहुत विधि कहौं पुकारि ॥ एतो पीर पैगम्बर जोगी । तै तो छलि बलि किये वियोगी ॥ एतो पारासरसे जोगी । तै तो नाही काहूको छोडी ॥ एतो शृंगी रिषि ब्रह्मचारी । तै तो उनहूकी करी खुवारी ॥ ऐसे कहैं कबीर तू दारी । मेरे साधासो बहुत विधि हारी ॥

गारी ॥ १५ ॥

तुम समझो कुमति देवरानी । तेरि कीरति जगत बखानी ॥ तेरे काम क्रोध दोउ भाई । हिरनाकुस मारि बहाई ॥ जोगी शिवशंकर ध्यानी । तेरी गति मति उनहू न जानी ॥ तुम रावनके घर आई । तुम सीता हरन कराई ॥ तुम पंडवनके घर आई । उन पासे खेल हराई ॥ तुम कौरवनके घर आई । सब कुनबा नाश कराई ॥ तोसों कहैं कबीर समझाई । नकटी तोहि लाज न आई ॥

गारी ॥ १६ ॥

धनि आय सम्हारो हो, घरकी खबर भई ॥ आय धाय गहो गुरुके चरन, दया करि लइ अपनी ॥ गुरुतत्व लखायो हो, खडी

भयी ज्ञान गली॥ जब तत सम्हारी हो, कि सन्मुख पीवसो भयी॥ संतोष सिला पर हो, कि पटकी पांच जनी॥ सब मारे पिसनिया हो, कि सिलकी सांग हनी॥ धसि आय महलमें हो, कि गगनमें मगन भई॥ साधु तुम जिन जानो गारि, कि मुक्तिकी राह कही॥ तो सो कहैं कबिर समझाय, कि याही मत आव चली॥

गारी ॥ १७ ॥

सुनु समधिन चतुर, अइलों मैं तोरे आंगना॥ तेरे अंगना समधिन तीनू छन्दना तै तो कहा रची जिवनार, पाहुन आये संतजना॥ टे०॥ समधी हमारे बालो भोलो, समधिन छैल-चिकनिया॥ या समधिन सुर मुनि मोहे, कि तीन लोककी रनिया॥१॥ इक ऊठे इक बैठे समधिन, इक आवे इक जाय॥ लख चौरासी ख्याल तुम्हारो, फिर फिर गोता खाय॥२॥ कोइ ध्यावे तीरथ बरतको, कोइ पूजे पाषान॥ ऐसा ख्याल तुम्हारा समधिन, समधी देखि ललचान॥३॥ कहैं कबीर सुनो हो समधी, मानो वचन हमार॥ अबकी बार रहनिमें रहिहो, उतरो भवजल पार॥४॥

गारी ॥ १८ ॥

जो तू पियाको पियारिनी, पिया अपनेको सिंगार करो॥ जाकी सुमतिकी कंगही, कर्म केस निरुवार करो॥ जाके तत्वको तेल, प्रेम डोरिसे चोटी गुहो॥ जाके अलखकी कजरा, विरहकी बेंदी लिलार भरो॥ जाकी नेह नथुनिया, शीलकी लटकल लटक रहे॥ जाकी बोध चुनरिया, ज्ञानका लहँगा घूम रहे॥ जाकी अकिलकी अंगिया, सुरति निरति द्वै बन्द लगे॥ जाकी चितकी चुडिया, कसनीके कंगना दमक रहे॥ जाके शीलका सोंटा, मायसे हरदम हमेल परे॥ जाके जुगतकी जेहर, शब्दकी

बिछवा बाज रहे ॥ इतना धन पहिर धनी, रूठे पियाको मनाव सही ॥ पिय हमसे बोलो, साहब कबीर दया करी ॥

गारी ॥ १९ ॥

अब चित चेतले तू, काहे भूले मूरख गवाँर ॥ मय्या तो तेरी कुवँर देई, लागे उनके मनुष हजार ॥ चकर मकरकी चाची तेरी, उनहूँका यही हवाल ॥ हरफ निरफकी फूफू तिहारी, उनहूके दश लगवार ॥ अनबुधिया तेरि बहिन बजिन्द, फांदि जाय डंडवार ॥

सत्यनाम ।

श्री १०८ युतसद्गुरु श्रीमहन्त शम्भुदासजी साहब
इन्दौरी संशोधित शब्दादि यहाँसे आरम्भ होता है ॥

* ठुमरी खंमाच ॥ १ ॥

सखीरी मेरे मनमें बस्यो है सतनाम । लोग कहैं यह भयी है बावरी, मोहि मिल्यो सुखधाम ॥टे०॥ जबसे दृष्टि परी सतगुरुकी, मूरति ललित ललाम । तबसे जानि पर्‌यो मोहि झूठो, यहि जगको परिनाम ॥ १ ॥ मैं आयी संतनकी शरने, होय सबसे बदनाम । कोइ निन्दो चाहे कोइ वन्दो, मोहि न काहुसे काम ॥२॥ मेरे प्राण नाथ मोहि अस प्रिय, ज्यों लोभीको दाम । जो उनके उपदेश मनोहर, सो मोहि ऋग यजु साम ॥ ३ ॥ जिन अपनो पिय नहि पहिचान्यो, सो तिय निपट निकाम । सोइ धन्य सुगति जाकी है, पियमें आठो जाम ॥ ४ ॥ काहूको पति है अति ज्ञाता, काहूको नृप अभिराम । धर्मिनि तो ऐसो पिय पायो, जाके है सकल गुलाम ॥ ५ ॥

* सूचना. जो छोटा चौका करते हैं जहां दो चार नारियल मोरना और थोडे आर्बानियोंको प्रसाद देना होता है वहां तो जल्दी फुरसत हो जाती है, वहां पीछे लिखे हुए विधानके शब्दोंसे ही काम चल जाता है, अधिककी आवश्यकता नहीं होती किन्तु, जहां सैकडों नारियल मोरना, बहुतोंको कंठी आदि देना और बहुतोंको प्रसाद बांटना पडता है, वहां गानेवालोंको भी बहुत देर तक गाना बजाना पडता है, इस लिये इसके आगे नाना राग रागनियोंके संकेतयुत पदादि दिये जाते हैं जिसमें गानेवालोंको सुभीता और सुननेवालोंको आनन्द होवे ।

भवदीय–

श्रीयुगलानन्द विहारी.

ठुमरी ॥ २ ॥

गाफिला क्यों विसरचो धनी। तेरी सुन्दर काया बनी ॥ टे०॥ गर्भ वासमें भक्ति कबूल्यो, विनती करके घनी। भूल्यो आय गोदमें लीन्यों, जब तो को जननी ॥ १ ॥ बालपना सब खेलि गँवायो, तब कुछ नाहि गनी। तरुण भयो मदमें मत्त होय, मोह्यो लखि तरुनी ॥ २ ॥ वृद्ध भयो तन काँपन लाग्यो, कैसी आँनि ठंनी। तीनोंपन ऐसेहि गवायो, आयुष सब अपनी ॥ कहैं कबीर चेतु नर अजहूं, बाकी है इतनी। अब मूरख अवसर मति खोवे, यह अनमोल मनी ॥ ३ ॥

ठुमरी जिला।

सखि सोइ सुंन्दरी पियकी पियारी। जाकी सुरति एक पल स्वपनेहु, होत न पियसे न्यारी ॥ टे० ॥ धोय गुमान मैल सब तनसे, ओढि शीलकी सारी। सत्यवृत्तका पहिरि घाघरा, चाल चलै मतवारी॥ प्रेमकी अँगिया भक्ति चुडिया, समताके कँगना री। बेंदी विनय विमल श्रद्धाको, उरमें हार हजारी॥ आगमको कूंकू मस्तकपर, ज्ञानको अञ्जन सारी। यहि विधिसे निज पियको रिझावे; अटल सिंगार सिंगारी ॥ अपनो मरम धर्म पति सेवा, जाने हृदय विचारी। तीरथकी इच्छा जो होवे, पीवे चरण पखारी॥ और पुरुषको पति करि जाने, सो नारी कुलटा री॥ सत्य पुरुषको जो तिय सेवै, सोई पतिवंरता री॥ क्यों भूली तू देखि जगत सुख, विषयभोग दिन चारी ॥ हो तजि सब प्रपंच गुरुशरणे, मानिके मेरो कहा री॥ कहैं धर्मिनि सोई चतुर विचक्षण, सोई कुलवन्ती नारी। जो निजपरमातम पिय पायो, ताकी मैं बलिहारी॥ १॥

सखि! मैं धन्य सोहागिनि नारी। मेरो पति पूरण परमातम, अजर अमर अविकारी॥ टे०॥ औरनके पति एक दिन विछुरत,

१ आय उपस्थित हुई. २ स्त्री. ३ प्रसन्न करे ४ धोयके. ५ व्यभिचारिण ६ पतिव्रता

तजि निज सुन्दरी प्यारी। मेरे प्राणनाथ मोहिं एकक्षण, करत न उरसे न्यारी॥ जाको खोज करत निशिवासर, बडे २ तप धारी। चकित होत वरणत श्रुति गुण जेहि नेति २ कहि हारी॥ संयम नियम शृंगार है मेरो, श्रद्धा सहित सँवारी। पहिरौं विविध विवेकके भूषण, ज्ञानको अञ्जन सारी॥ सत्य नाम कूंकूका टीका, मस्तकपर सुखकारी। गुरुके वचन कानमें मोती, तिनकी बहु शोभा री॥ इन्द्रमती सतगुरुके चरणन, तन मन धन सब वारी। प्रियतम पाय कबीर कृपानिधि, रहत सदा मतवारी॥ २॥

दादरा।

कब करिहौ मोपे दयाकी नजरिया। तुम्हरे दरश बिन निशिदिन तलफों, जिमि तलफत विन जलके मछरिया॥ टे०॥ मंगल मूरति परम मनोहर, श्वेत वसन जस चमकै उजेरियां[1]॥ शीश मुकुट उरमाल भाल बिच, तिलक रुचिर लखि मुनि मन हरिया॥ दरश हेतु गृहकाज छोडि सब, कबकी मैं ठाढी २ देखों डगरिया[2]॥ धर्मनिको राखों चरणनमै, करिहों सदा तुम्हरी पर[3]चरिया॥ १॥

कब मिलिहो त्रिभुवनपति स्वामी॥ करुणासिन्धु कबीर कृपानिधि, विमल जलज[4]परणज सुखधामी॥टे०॥ परम स्वच्छन्द अनन्द ज्ञानघन, द्वन्द्व रहित मति गति अभिरामी॥ अशरण शरण भक्तभवभञ्जन, सेवक सुखद सन्त अनुगामी॥ वरणत विशद विशेष वेद यश, कस[5] न सुनहु मम अन्तर्यामी॥ धर्मदास कर जोरि बदत इति बार बार तव चरण नमामी॥ २॥

का वरणों छबि आज तुम्हारी। सन्तसमाज विराजमान जिमि, सुरगन बिच सुर[6]पति अधिकारी॥ टे०॥ दिपत दिनेश समान

१ चंद्रमाका प्रकाश. २ मार्ग, रस्ता. ३ सेवा. ४ कमलपत्रपर. प्रगट हुये. ५ क्यों नहीं. ६ इन्द्र.

तेज वपु, मङ्गलवेष परम सुखकारी। सुन्दर वदन मदन लखि लाजत, हुलसत मन मुसक्यान निहारी॥ भ्रुकुटी कुटिल कपोल मनोहर, चोरत चित चख चितवन न्यारी। नाशा रुचिर कपोल मनोहर चारु चिबुक अति लागत प्यारी॥ भाल तिलक उरमाल मुकुट मणि, जडित तडित सम मस्तकधारी। विमल वसन तन लसत हसत जिमि, देखि मन्द द्युति चन्द उजारी॥ अशरण शरण हरण भव संकट, तारण तरण नाथ बलिहारी। धर्मदास सब करत निछावर, तन मन धन चरणन पर वारी॥ ३॥

कोइ समुझै ब्रह्मज्ञानी मेरे सद्गुरुकी बानी॥ टे०॥ क्या समुझैं वे वेदके वक्ता, विद्याके अभिमानी॥ यदपि दिखत कछु अर्थ असंगत, तदपि प्रबोधकी खानी॥ लोक वेदसे है वह न्यारी, त्रिगुण रहित निरवानी॥ साधु सन्त सब शीश चढावैं, महामंत्र सम जानी॥ धर्मिनिके तो परम शिरोमणि, पाय भई पटरानी॥४॥

दुनिया अजब दिवानी, मोरी कही एक न मानी॥ टे०॥ तजि प्रत्यक्ष सतगुरु परमेश्वर, इत उत फिरत भुलानी॥ तीरथ मूरति पूजत डोले, कङ्कर पत्थर पानी॥ विषय वासनाके फन्दे परि, मोहजाल उरझानी॥ सुखको दुख दुखको सुख माने, हित अनहित नहिं जानी॥ औरनको मूरख ठहरावत, आप बनत है सयानी॥ साँच कहौं तौ मारन धावे, झूठेको पतियानी॥ कहैं कबीर कहां लग बरणों, अद्भुत खेल बखानी॥ ५॥

ध्वनि खम्माच.

ध्याइये गुरुपद सुखदायक॥ टे०॥ विघनहरण मुदकरण सुमंगल, ऋद्धिसिद्धि वरदेश विनायक॥ नाम लेत सब पाप प्रनाशत, बहु जन्मनकृत मनवचकायक। करुणासिन्धु कृपाल

१ मुख. २ नेत्र. ३ नाशिका, नाक. ४ टुड्डी, डाढी. ५ वस्त्र. ६. अनोखी, अद्भुत. ७ फंसी हुई. ८ चतुर. ९ भरोसा किया. १० आशिर्वादके प्रभु. ११ श्रेष्ठ. १२ अनेक जन्मोंके किये हुये. १३ मन वाणी और शरीरसे.

दयानिधि, शरणागतवत्सल सब लायक ॥ तारण तरण भक्त-भवभञ्जन, अधम उधारण सन्त सहायक ॥ धर्मदास इति वदत विनय करि, सत्य कबीर मोरे पितु मायक ॥ १ ॥

नाथ एक आश है मोहिं तुम्हारी। सुत कुपूतहू पर राखत है, ममता पितुमहतारी ॥ टे० ॥ मो सम को कृतघ्न खल पामर, क्रूर कुटिल कुविचारी। भोग्यो श्वान समान जगत् सुख, लोक लाज भय टारी ॥ रह्यो अधीन सदा मायाके, प्रभुको नाम विसारी। सुर दुरलभ तन पाय गवाँयो, विषय विवश झखमारी ॥ भूलि सकल कर्तव्य आपनो, सोयो पाँव पसारी। स्वपनेहु सुकृत कियो नहिं कबहूँ, धर्म अधर्म विचारी ॥ और न कुछ विश्वास मोहिं प्रभु, कहै धर्मदास पुकारी। पै मैं पतित पतितपावन तुम, यह भरोस यक भारी ॥ २ ॥

मेरे निरधनके धन सतनाम। जेहि प्रताप कोई रांव रंकसे, मोहिं नहीं कुछ काम ॥ टे० ॥ कामधेनु चिन्तामणि पारस, कल्पवृक्ष अभिराम। ऋद्धि सिद्धि सब ताके सन्मुख, दीखत तुच्छ निकाम ॥ अक्षर चारि अखिल फलदायक, अतुलित ललित ललाम। महामन्त्र यहि जानि सन्तजन, जपत हैं आठो यांम ॥ नासत सकल अरिष्टं दाहिने, होत विधाता वाम। उठि प्रभात जो करत है चिन्तन, क्षणधरि मन विश्राम ॥ दृढश्रद्धा धर्मदास धारि उर, तजि रहीम अरु राम। गुरु कबीरके शरणे आयो, तब पायो सुखधाम ॥ ३ ॥

भूपाली.

आवो सखी मिलि मङ्गल गावो मोरे अँगन माँरी ॥ टे० ॥ आज सुन्यो सतगुरु आवत हैं, आली मोरे भवनमाँ ॥ सखीरी

१ कुपात्र. २ प्रीति. ३ पितामाता. ४ किये उपकारको न माननेवाला. ५ नीच. ६ क्रोधी. ७ कपटी. ८ राजा और दीनसे ९ प्रहर. १० कष्ट ११ घरमें

मो० ॥ शब्द सुनत प्रभुके आवनको, रस बरष्यो काननमाँ ॥ सखीरी मो० ॥ फरकत नयन शकुन शुभ होवें, अति अनन्द होय मनमाँ ॥ सखीरी मो० ॥ बोलत मोर पपीहा चहुँदिश कोयल कुहुकत बनमाँ ॥ सखी० ॥ बारबार मेरो हिय हुलसत है, पुलक उठत सब तनमाँ ॥ सखीरी मो० ॥ गुरु आवत धर्मिनि उठि धाई, जाय परी चरणनमाँ ॥ सखीरी मो० ॥ १ ॥

कोसिया काफी।

आज मोरे सतगुरुको गृह लाऊँ ॥ टे० ॥ चरण धोय चरणामृत ले करि, सिंहासन बैठाऊँ ॥ चन्दनसे चौका लिपवाऊँ, मोतियन चौक पुराऊँ ॥ नरियर पान सुपारी केला, फल अनेक मँगवाऊँ ॥ श्वेत मिठाई विविध भांतिकी, थारन माहिं भराऊँ ॥ कञ्चन कलश कपूरकी बाती, आरति साज धराऊँ ॥ अमृतझारी प्रेमसहितले, प्रभुजीको भोग लगाऊँ ॥ तन मन धन निछावरि करिके, आनन्द मंगल गाऊँ ॥ धर्मदास विनवें कर जोरी, भक्तिदान गुरु पाऊँ ॥ १ ॥

आज मोरे घर साहिब आये, दरशन करी दोउ नयन जुंडाये ॥ टे० ॥ विगत क्लेश अखिलेश दयानिधि, मंगल वेष विशेष बनाये, । तिलक भाल उर माल मनोहर, शीश मुकुट मणिमय छबिछाये ॥ चन्दनसे चौका लिपवायो, गजमोतियनकी चौका पुराये । बाजत ताल मृदंग झाँझ डफ, साधुसन्त मिलि मङ्गल गाये ॥ दुखदारिद्र दूरि सब भागे, काम क्रोध मद मोह दुराये । भयो आनन्द भुवनमें चहुँदिश, चरण कमल रज शीश चढाये ॥ कञ्चन थार सँवारि आरती, धर्मिनि करत है हिय हुलसाये । करुणासिन्धु कबीर कृपानिधि, सत्यनाम निजमंत्र सुनाये ॥ २ ॥

ध्वनि झँझोटी।

आज गुरु दीनो नाम सुनाय । तजि सकल फन्द, भई अति

१ आनन्दित होता है, उत्साहित होता है २ रोमाञ्च होना. ३ शीतल हुए. ४ रत्नजडित. ५ शोभाको प्राप्त. ६ मंजीरा. ७ छिपगये.

अनंद, जिमि रंक बिपुल धन पाय ॥ टे० ॥ लै तिनुका तुरवाय कालसे, मुक्त कियो सब भ्रम जालसे; विविध भाँति उपदेश दृढाय ॥ दुखदारिद्र दूरि सब भागे, मुदमंगल लखि ठांढे आगे, कुमति रही मनमें खिसियाय ॥ जब सतगुरुने नाम सुनाया, तब यमने निज शीश हिलाया, अब मेरो कुछ है न उपाय ॥ कहे धर्मिनि सन्तन हितकारी, कृपाकरी मोपर बहुभारी, जन्ममरण भवरोग नशाय ॥ १ ॥

दरश कब देहो दीनदयाल । तुम्हरे दरश बिन कल न परत छिन, जिव अति होत बिहाल ॥ टे० ॥ वदन निहारि मदन छवि लाजै, शीश मुकुट अति सुन्दर भ्राजे । उर गजमोतियन माल ॥ ललित कमण्डलु योगदंण्डकर, भृकुटी कुटिल कपोल मनोहर, राजिवनयंन विशाल । मंगलरूप अनूप संहायक, भव्य वेष भक्तन वरदायक, शुभ्र तिलकयुत भाल ॥ निगमागम गुण गान करत हैं, सुरनरमुनि सब ध्यान धरत हैं, लखि भय मानत काल ॥ धर्मदास विनवै करजोरी, वेगि सुनो प्रभु विनती मोरी, करुणा-सिन्धु कृपाल ॥ २ ॥

माड.

दीनबन्धु दीनानाथ, म्हारी बीनती सुनो ॥ टे० ॥ म्हारे तो शत्रु घणाजी, भक्ति करन नहिं देत । काम क्रोध मद लोभ ये म्हारी, सुमतीको हरि लेत ॥ तृष्णा परबल डाकिनी जी, लागी म्हारे लार । कंदेई तो धापे नहीं, इण खायो सब संसार ॥ शब्द स्पर्श रु रूप रस जी, गन्ध विषय ये पाँच । आप आपने खींचकै; काई म्हाने नचावे नाच ॥ मन मरकंट नहिं होत वश, कीन्हे कोटि उपाय । ज्यों २ गहि परंमोधिये कांई, त्यो २ भाग्यो जाय ॥

१ अत्यन्त. २ सन्मुख खडे हुये. ३ लज्जित. ४ शान्ति. ५ व्याकुल ६ आसा. ७ कमलनेत्र. ८ सहायता करनेवाले. ९ कदापि कबो भी. १० बन्दर. ११ उपदेश देना.

भवसागरके चक्रमे, आय पड्यो मँझधार। करुणाभवन कवीरजी, काई म्हाने करो प्रभु पार ॥ १ ॥

जहरीली योवन माती, यासे दूर भागिये॥ टेक॥ इन्द्र डश्यो ब्रह्मा डश्यो काई, नारद डसिया व्यास। बात करत शिवको डशी काई, क्षण एक बैठत पास ॥ कंस वंशको नाश करिजी डश्यो रावणहि जाय। दश मस्तक कटवायकै काँई लङ्क दई लुटवाय ॥ पाराशरि शृंगी ऋषि जी, विश्वामित्र वशिष्ठ। और अनेकन मुनिन डशि काँई, कियो योगसे भ्रष्ट॥ मोटा २ गारेडी इनसे मानी हार। कच्छ देशमें जायकै काँई, लागी गोरख लार॥ माया काली नागिनी जी, डशिया सब संसार। बाँच्या कोई २ सन्तजन जी, कहै कवीर विचार ॥ २ ॥

ऐसो सुन्दर मुखडा पाकै, मूरख प्रभुको क्यों न भजे?॥टे०॥ जिन जगमें सब सुख दियोजी, तिय सुत वित धन धाम। ताको नाम विसारियो काई, ऐसो निमकहराम॥ अबही तो भूल्यो फिरे काँई, ज्यों मदान्ध गजराज। एकदिन काल गिरासैहीजी, ज्यों तीतरको बाज॥ अठावठासे लाय कर जी, सञ्चय धन दोउ हाथ। अन्त समय नहिं जायगी थोर, फूटी कौडी साथ॥ धन्धेमें निशिदिन फिरै जी, आठो जाम गँवार। बणजाराका बैल ज्यूं काँई, गयो जमारो हार॥ करसे दियो न दान कुछ, मुखसे लियो न नाम। खोय गमायो जन्म सब काँई, तीनो पन बेकाम॥ विद्या पढि भूलो फिरे काई, मनमें करि अभिमान। सन्तांके उपदेशने तूं, तनक धरचो नहिं कान॥ मिथ्या जग परपंच सब तूं मतिना देखि भुलाय। कहैं कवीर गुरु शरण गहु काँई, ऐसो नरतन पाय ॥ ३ ॥

१ दंश मारना, काटना. २ मंत्रशास्त्री, ३ भक्षण करेगा. ४ जमा करत। है. ५ धाम-प्रहर.

म्हारा साहिब म्हाने पाईजी, गुरुज्ञान भाँग डली ॥ टे० ॥ सुरति शिलापर घोटिके कांई, सतगुरु ज्ञान निधान। अमृतसार निचोडियो जी, मति साफीसे छान ॥ हस्तकमल मस्तक धर्‌यो, भक्तिके रङ्ग लगाय। अनुभव प्यालो प्रेमको कांई, म्हाने दीन्हो पाय ॥ चढी खुंमारी आंखमें जी, रही निरन्तर छाय। सुख ब्रह्मा इन्द्रादिको कांई, तृणवत तुच्छ दिखाय ॥ दिव्यदृष्टि उरमें भईजी, लख्यो आतमाराम सन्ताँकी शरणो लियो म्हारे, जगसे रह्यो न काम ॥ पियत भाँग धर्मदासकी जी, मिटी सकल भवपीर। अटल बयालिस वंशको कांई, दीनों राज कबीर ॥ ४ ॥

गरबा।

देखो २ जगत् यह स्वपना है। ये तो इन्द्रजालकीसी रचना है॥ टे० ॥ सुत दारा गृह परिवार सभी है मिथ्या सदा नहिं सत्य कभी, हाँहाँ अन्त कोई नहिं अपना है ॥ तूं जो बाल वृद्ध अरु ज्वान भयो, सब माया कृत परपञ्च थयो, भ्रम मात्र ये तेरी कलपना है॥ द्विज शूद्र गृहस्थ वनस्थ भयो, वर्णाश्रमको अभिमान गह्यो, त्रयतापसे यह सब तपना है॥ गन्धर्वनगर जैसे दृष्टि परै, मृगतृष्णाको नीर न प्यास हरै, रज्जुसर्पसे जैसे डरपना है ॥ गुरुदेव कबीर कृपा जो करैं, स्वपनेसे जगायके दुःख हरै, निज आतमरूप परखना है ॥ १ ॥

वृथा खोवे क्यों नरतन पायकैरे। मोहमायाके फन्देमें भुलायकैरे। ॥ टे० ॥ तरुनपना धन पायके, मति हो मूढ उतङ्ग। क्षणमें यह उडि जायगा, ज्यों पतङ्गको रङ्ग ॥ बिजली किसी चमक चमकायकैरे ॥ सदा न फूलै केतकी, सदा न भ्रमर लुभात। चार दिनाकी चाँदनी फेर अँधेरी रात। पछतायेगा अवसर गँवा-

१ नशा. २ धोखा. ३ बाजीगरका बनाया शहर. ४ मिथ्याजल. ५ रस्सीका सांप, ६ विना प्रयोजन. ७ गर्ववाला. ८ एक प्रकार की रङ्गकी लकडी. ९ उजाली.

यकेरे ! ॥ दो दिनाका मिहमान तूं, आय वस्यो यहि धाम । आखिर तेरा होगया, यहाँसे कूच मुकाम । रहेगा फिर कहां तूं जायकेरे ! ॥ स्वारथके साथी सभी सभी लोक कुटुम परिवार । अन्तसमय नहिं जायगा, कोई तेरे लार । घरसे डारेंगे बाहर उठायकेरे ! ॥ कहैं कवीर समुझायके, सुन मूरख नादान । सीधे मारग जगतमें, चल तूं तजि अभिमान । साधु सन्तोंसे शीश नवायकेरे ॥ २ ॥

ठुमरी ध्वनि काफी.

पास खडा तेरे नजर न आवे, महबूब पियारा वे ॥ टे० ॥ घट २ व्यापक सबकी जानै, रहे सबनसे न्यारा वे । ढूंढ २ कोइ खोज न पायो, सब जग हारा वे ॥ स्मर्ण ध्यान योग संयम व्रत, नेम अचारा वे ॥ जाके हेत करत सुर नर मुनि, विविध प्रकारा वे ॥ वेद पुराण भागवत गीता, बहोत विचारा वे ॥ सबी अपार अगम्य अगोचर, अलख पुकारा वे ॥ छोडिके जिन अज्ञान कल्पना कुमति निर्वारा वे ॥ मिला कवीर तिन्हे दिल अन्दर, सिरजन हारा वे ॥ १ ॥

तुम कौन हो मियाँ कहाँके ? ॥ टे० ॥ कहाँसे आये, कहाँ जावोगे ?, किसे हाल अपना सुनावोगे ?, किसने भेजा, कौन काम है, नई नगरिया झाँके ॥ आते तुमने रोय दिया है, क्या लाये सो खोय दिया है ? । कौन जिकर किस फिकरमें, आँखे खोले हो के ढाँके ? ॥ वतन् तुम्हारा कौन ठाम है ?, बडा सहर या कोई गाँम है ? पूरव पश्चिम उत्तर दक्षिण, नैरित वायु ईशाँके ॥ आये हो जो इस नगरीमें, दया धरम कुछ राखो जीमें, अब ऐसी मत कीजो जिसमें, यहाँके न हो न वहाँके ॥ हिंदू हो या मुसलमान हो ?, दाना या बिलकुल नदान हो ?, कहैं कवीर कहो कुछ हमसे, तिरछे हो के बाँके ॥ २ ॥

---

१ पाहुना. २ प्रयाण, जाना. ३ साथ. ४ प्रिय. ५ पूर्ण. ६ निवारन क्रिया, भगाया, नाश किया. ७ देखा. ८ स्मरण. ९ चिन्ता. १० बंद किये. ११ जन्म स्थान. १२ ईशान कोण. १३ बुद्धिमान. १४ मूर्ख.

ऐसी प्रबल यह चपल[1], नारि सब जग वश कीनो रे॥ टे० ॥ ब्रह्मचारी योगी संन्यासी, ऋषि मुनि तपसी वनवासी, दण्डी[2] मुण्डी सिद्ध उदासी[3], कहु वचन न दीनो रे॥ गण गन्धर्व[4] असुर सुर किन्नर[5], दैत्य[6] पिशाच प्रेत विद्याधर[7], इनको क्या? पर विधि हरि शङ्कर छलि लिये तीनोरे।॥ अब औरनकी कौन चलाई, जो बैठे हैं स्वांग बनाई, त्याग बताकै करें ठगाई। धिग यह जीनोरे!॥ बचा चहो तो मनको बांधो[8], सत्य नाम उरमें आराधो, कहैं कवीर सुनो भाई साधो, गुरु पद चीन्होरे।॥ ३ ॥

ठुमरी ध्वनि जंगला.

सुन्दर तन पाय न करु अभिमान। त्यागि सकल अनरीति[9] प्रीतियुत, धरु सतगुरुको ध्यान॥ टे०॥ दुख सुख सब जीवनको जगमें, व्यापत एक समान। दया धर्म कुछ राखि हृदयमें, दे भूखेको दान॥ कर्म भोग भोगनको आया, दो दिनका मिहमान[10]। सदा न रहै साहिबी तेरी, क्षणभंगुर[11] कहि जान॥ जन्म पाय नर सुकृत[12] करिले, जो चाहै कल्यान। गहु सतपन्थ ग्रन्थ गुरु संमत[13], कहैं जो सन्त सुजान॥ बारम्बार कवीर कहत हैं, सुनि ले मूढ अयान[14]। जो मानै तौ मान नहीं यह, गोय यह मैदान॥१॥

करो न कोई यह मनकी परतीत[15]। थाह बताइ डुबावत भवमें, बनि हितकारी मीत[16]॥ टे० ॥ गने न उदय अस्त निशि वासर, छाहँ धूप जल शीत। भटकत फिरै निरन्तर चहुँदिश, ऐसो महा पलीत[17]॥ स्वर्ग पताल जाय एक पलमें, कपि[18]सम अति निरभीत[19]। गण गन्धर्व असुर सुर किन्नर, सबको लीनो जीत॥ ऋषी मुनी योगी वनवासी, तपसी सिद्ध अतीत। छल्यो सकल ज्ञानी वि-

१ चञ्चल. २ दण्डधारी. ३ बैरागी, ४ गान करनेवाले देव. ५ एक प्रकारके देव. ६ राक्षस. ७ देवविशेष. ८ रोको. ९ अन्याय. १० पाहुना. ११ नाशमान. १२ पुण्य. १३ मान्य. १४ मूर्ख. १५ विश्वास १६ मित्र. १७ अधम. १८ बंदर. १९ निरभय.

ज्ञानी, बहुविध करि अनरीत ॥ सुनै न एक सीख काहूकी, गावै अपनीहि गीत । कहैं कवीर डरे यह तिनसे, जिनकी गुरुसे प्रीत ॥ २ ॥

जगतमें तो सम कौन अनारी । चहत बुझावेंन काम अग्निको, विषय भोग घृत डारी ॥ टे० ॥ रह्यो सदा झूंठे झगरनमें, शठ प्रभुनाम विसारी । खायो पियो अघाय पेट भरी, सोयो पांव पसारी ॥ तृष्णाके वश भटकत डोल्यो, निशिवासर झख मारी । छल परपंच कपट फैलावत, उमर गँवाई सारी ॥ कबहुँ न सुमति आनि उर तनकहु, देख्यो आँखि उघारी । अन्त समय यमदूत आयकै, का गति करहिं हमारी ॥ अजहूं मानु सीख सन्तनकी, भाव भक्ति उरधारी । गहु गुरु शरण तरण भवसागर, कहैं कवीर पुकारी ॥ ३ ॥

समय यह नीको बीत्यो जात । पल २ क्षण २ घरी पहर होय, दिवस सांझ परभात ॥ टे० ॥ फूटे घट जिमि वाँरि आयु तिमि, क्षीण होत दिनरात । तापर जरा वाघिनीके सम, आवत है अकुलात ॥ विविध प्रकार रोग शत्रुगण, मारि २ कै लात । करत प्रहार वज्र जिमि तनपर, यहि नाना उतपात ॥ मुखमें दांत रहै नहिं एकहु, शिथिल होय सब गात । देखि न परै नयनसे मारग, तृष्णा तहूं न बुढात ॥ कहैं कवीर सुनो भाई साधो, एक हमारी बात । मन वच सत्यनाम आराधो, जो चाहो कुशलात ॥ ४ ॥

कृपानिधि अब तौ मोहि तँन हेरो । तुम बिन कौन और है जगमें, नाथ सहायक मेरो ॥ टे० ॥ भटकत फिरत दुष्ट मन इत उत, जैसे अलर्लबछेरो । उर सन्तोष करब नहिं पावत, एक पल आय वंसेरो ॥ कुमति प्रबल होय लरति सुमतिसे, करि घट मांहि

१ मूर्ख. २ शीतल करना. ३ जल. ४ मारना, वार करना ५ ढीला. ६ कल्याण. ७ मेरी तरफ देखो. ८ जिसको लगाम नहीं चढाई गई ऐसा घोडेका बच्चा. ९ निवास.

अँधेरो। राखा चहत मोह अपने वश, प्रभु यह न्याव निवेरो॥ युगन २ तन धारि अनेकन, कूकर शूकर केरो। भवसागरकी प्रबल धारमें, पायो दुख बहुतेरो॥ धर्मदास विनवे कर जोरी, चरण कमलको चेरो। अभय दान गुरु देहु दयाकरि, मेटि चौरासी फेरो॥८॥

शरण तोरी आयो गरीबनिवाज। कलिमल हरण करण मुद-मङ्गल, भवनिधितरण जहाज॥टे०॥ विश्व आय अवतार लियो तुम, अधम उधारन कांज। मो सम कौन जगतमें दूसर, पतितनको शिरताज॥ कुबुधि अधीन रहों निशिवासर, खोरि विषयकी खाज। कबहुं न सुनी सीख सन्तनकी, बैठिके साधु समाज॥ किये अनेक अधर्म कर्म मैं, महाकुगतिको साज। अति मलीन मति हीन दीनकी, अब तुमको है लाज॥ करुणासिन्धु कवीर कृपा करि, कर पकर्‍यो गुरुराज। होय कृतार्थ धर्मदास कहत हैं, धन्य पुण्य मन आज॥९॥

धन्य नर गुरुमहिमा जो जाने। सो अति नीच त्रिलोक्य पूज्य है, अस कथि कहत सयाने॥टे०॥ वेद पुराण सन्त गुरुके गुण, हरिसे अधिक बखाने। नाम लेत अघ पुञ्ज नाश होय, तीनो ताप सिराने॥ हरिमाया वश जीव भ्रमत हैं, मोह-पाश उरझाने। गुरुकी कृपा छूटि बन्धनसे, पहुँचैं मुक्ति ठिकाने॥ जानि मनुष्य मूढ जो गुरुको, सेवत चरण विराने॥ ते नर महा अधम हैं पामर, केवल कलिमल साने॥ भवसागरमें भटकत २ अजहूँ न पावँ पिराने। धर्मदास विश्वास हीन जन जमके हाथ बिकाने॥६॥

गजल, ताल दादरा.

मोहि अति अजान जानिकै, मोपै कृपा करो। जगजाल अति

१ दीनोद्धारण. २ अर्थ. ३ मुकुट. ४ खुजाकं. ५ साहित्य. ६ शीतल हुए. ७ स्थान. ८ अन्यके. ९ पापसे भरे.

कराल झाल, मेरो प्रभु हरो ॥ टे० ॥ वह इन्द्रमतीकी पुकार, सुनि उदार हो । कीन्ही सहाय जायकै, तक्षक बहोत डरो ॥ जब सेतु बांधनेको, पुकारा था रामने । तब धाय आये कौनसो, संकट तुम्हे परो ॥ पुनि जाय जगन्नाथमें, तुम योगदंण्ड[2]से । सागर हटाया आपने, अति कोपसे भरो ॥ साहिब कबीर मेरी पीरके, बखत कहां ? । सोये हौ आप जायकै, कुछ मनमें अब धरो ॥ १ ॥

गजल ध्वनि ईमन

विषयोंसे मनको तृप्त, कराना नहीं अच्छा । जलती अगिनको, घीसे बुझाना नहीं अच्छा ॥ टे० ॥ सुख भोग ये जगतके, सबी होंगे नाशमान । तृष्णाको बढा, जीको फँसाना नहीं अच्छा ॥ ये स्वप्नका तमाशा, है झूठमूठका । रंग रंगके खेल, देख लुभाना नहीं अच्छा ॥ धन धाम पुत्र कलत्र, रूप जो पाया । हरगिज गरूर[6], इनका है लाना नहीं अच्छा ॥ पल २ अमोल जाती है, कहते हैं ये कबीर । मानुष शरीर मुफ्त गँवाना नहीं अच्छा ॥ १ ॥

प्रबल ये सैर्न मायाने, चलाई है कृपासिन्धू । बचाले जालसे, तेरी दुहाई है कृपासिन्धू ॥ टे० ॥ गर्भमें कौल था मेरा, न भूलूं ध्यान मैं तेरा । वो बातें उसने छल बलसे भुलाई हैं कृपासिन्धू ॥ हमेशा लोभसे रहता है, मन मैला बना बेशंक । दिखानेको ये ऊपरकी सफाई है कृपासिन्धू ॥ पड़ा अज्ञानके वशमें, तड़फता हूँ मैं मुद्दतसे । तेरेही हाथमें मेरी, रिहाई है कृपासिन्धू ॥ त्रिविध कर्मोंसे जो पैदा, जन्म अरु मरण बीमारी । वो तेरेही कृपा इसकी, दवाई है कृपासिन्धू ॥ अजब ढँगकी यह दुनिया जो, दुरंगी[16] देख पडती है । सो सब तेरीही कुदरत[17]ने, बनाई है कृपासिन्धू ॥

१ एक प्रकारका सर्प. २ आसा. ३ मोहित होना. ४ स्त्री. ५ कदापि. ६ अभिमान. ७ व्य . ८ कटाक्ष. ९ वचन १० यथार्थ. ११ स्वच्छता. १२ व्याकुल. होना. १३ बहुत कालसे. १४ मोक्ष. १५ अद्भुत प्रकारकी. १६ द्वन्द्वसहित. १७ माया.

नहीं है दोष कुछ तेग, हुआ जो होरहा होगा। ये सुखदुख सबको कर्मोंकी, कंमाई है कृपासिन्धू॥ विना भक्तीसे जो कवीर, तारे हैं कई पापी। इसीसे जगत्में तेरी, बडाई है कृपासिन्धू॥ २॥

गजल ध्वनि जँगला.

वो जो गर्भमें दुख था जबर, तुझे याद हो कि, न याद हो। आया था तब तूँ कौलकर, तुझे याद हो कि न याद हो॥ टे०॥ मलमूत्रसे तौ शरीर सब, लिपटा हुआ दुरगन्धमें। जठराग्निसे जलनेका डर, तुझे याद हो कि न याद हो। उलटा टँगा अति कष्टसे, नीचा किये शिर पैरमें। रोता था हरदम आंख भर, तुझे याद हो कि न याद हो॥ इस दुखसे काढौ मुझे, हरगिज न भूलूँगा मैं तुझे। कहता था होहोके बेखबर, तुझे याद हो कि न याद हो॥ नव मास रक्षा की प्रभू, फिर गर्भसे बाहेर किया। बलहीन बालक बेखबर, तुझे याद हो कि न याद हो॥ फिर दूधसे पालन किया हो, ज्वान मायामें फँसा। फिरने लगा तूं इधर उधर, तुझे याद हो कि न याद हो॥ कपडे अभूषण पहनकर, चलनेमें देखै छाँहको। मोहित हुवा लखि नारि पर, तुझे याद हो कि न याद हो॥ रहकर जवानी कुछ दिनो, आते बुढापा देख कर। कँपने लगा शिर सरबसर, तुझे याद हो कि न याद हो॥ अब भी तो मूरख चेत तूँ, तीनों ये पन योंही गये। कवीर कहते हैं अगर, तुझे याद हो कि न याद हो॥ १॥

गजल ध्वनि जिला.

तजि सकल तदबीर, एक कवीरको ध्याया करो। होके दीन अधीन सन्तोंके, निकट आया करो॥ टे०॥ फूल फल परसाद, थोडा बहुत श्रद्धाके सहित। बन सके जो कुछ सो, उनकी भेंटको लाया करो॥ घरके सन्मुख उनके, अपने हाथ दोनों जोडकर।

१ फल प्राप्ति. २ कठिन. ३ स्मरण. ४ अधैर्य. ५ अज्ञान. ६ साक्षात्. ७ यदि. ८ प्रयत्न ९ पास.

अदबसे अभिमान तजि, चरणोंमें शिर नाया करो ॥ सुनिके उपदेशोंको उनके, मनन कर फिर बारबार। निदिध्यासन करके उसको, काममे लाया करो ॥ दमूंबदम् कर याद वह, धर्मदास उठते बैठते, सत्य साहिब, सत्य साहिब, कहके गुन गाया करो॥१॥

गजल ध्वनि खम्माच.

भरा सतसंगका दरियां, नहालो जिसका जी चांहै। जिगंरसे दागं पाकका, छुडालो जिसका जी चाहै॥ टे॥ न ऐसा और है तीरथ, जगतमें दूसरा कोई। गया हरद्वार जाके, आजँमा लो जिसका जी चाहै॥ ऋषी मुनियोंने भी गाई, बहोत कुछ इसकी जो महिमा। लिखी वह पोथियोमें है, पढालो जिसका जी चाहे॥ नहीं इसमें जरा तअज्जुब, जो फल सन्तोंने फरमाया। कागसे हंस अपनेको, बनालो जिसका जी चाहै॥ हजारों रत्न बेशमंत; भरे आलेंसे आला हैं। जरा इसमें लगा गोतें उठाले, जिसका जी चाहै॥ मुकत होना चहो दुखसे, तौ धर्मदास सतगुरुके। शरण आ कालसे तिनका, तुडालो जिसका जी चाहै॥ १॥

हे नाथ! इस जगतमें, सिवा कौन तुम्हारे?। माता पिता स्वामी सखा, बंधू है हमारे॥ टे०॥ ऐसा दयाल और, नहीं दूसरा धनी। करि कष्ट नष्ट जीवके, दुखद्वन्द निवारे॥ जब २ तुम्हारा नाम लै, भक्तोने पुकारा। तब २ सहाय करनेको, आपी तौ सिधारे॥ चारों युगोंमें धारि रूप, तुम प्रगट भये। पापी अनेक तारके, भवपार उतारे॥ महिमा अनन्त आपकी, कोई न कह सके। यह जानि भेद वेद, नेति २ उचारे॥ अब बेगि मोहिं दीजे, दर्शन कृपानिधे। होय अति अधीन दीन, धर्मदास पुकारे॥२॥

विनती मेरी पै ध्यान, जो है तुम्हारा नहीं। आश्रित क्या

१ नम्रतासे. २ निरन्तर. ३ समुद्र. ४ इच्छा हो. ५ अन्तःकरणसे, दिलसे. ६ संस्कार ७ परीक्षा कर लो. ८ आश्चर्य. ९ कथन किया. १० अमूल्य. ११ श्रेष्ठ. १२ डुबकी.

दास आपका, मैं बिचारा[1] नहीं ॥ टे० ॥ मैं तो अनाथ मेरे, कौन दूसरा धनी । एक छोड तुम्हे और मुझे सहारा[2] नहीं ॥ मेरी तौ दौड़[3] फक्त[4], तुम्हींतक कृपानिधे । तीनों भुवनमें और, कहीं गुजारा[5] नहीं ॥ कई एक दफे जो आफतें, भक्तोंपै[6] आ पडीं । तो आपने क्या उनके, दुखको निवारा नहीं ? ॥ क्या मुझसरीके[7] पातकी, तुमने कभी कोई । भवसिन्धु डूबतेंसे, पार उतारा नहीं ? माना की मैंने पाप, मेरे है प्रबल सही[8] । पर कम भी तुम्हारी, दयाको इशारा[9] नहीं ॥ दरशन जो अबतलक, न दिये आपने कवीर । क्या लेके धर्मदास, नाम पुकारा नहीं ? ॥ ३ ॥

गजल ध्वनि पीलू.

जगत जिसका ये कुल[10], बनाया हुआ है । वही सब घटोंमें, समाया हुआ है ॥ टे० ॥ नहीं दूसरा कोई, है उससे न्यारा । वो अपनेमें, आपी भुलाया हुआ है । हरएक[11] शै जो हैगी, वो रङ्गोबरङ्गी[12] । ये जलवा[13] उसीका दिखाया हुआ है ॥ उसीकी अकलमें[14], ये आती है बातें । शरण सद्गुरुकी, जो आया हुआ है । है ताकत[15] उसीमेंही, मूँखोलनेकी[16] । जो कुछ भेद सन्तोंसे, पाया हुवा है । घरमदास अपनी, उसीकी फिकरमें[17] । करोड़ोंकी दौलत लुटाया हुआ है ॥ १ ॥

गजल ध्वनि कहरवा.

कृपा करनेको भक्तोंपर, प्रभू सतलोकसे आये । कमलदलपर प्रगट, काशीमें हो कवीर कहवाये ॥ टे० ॥ बनाके वेष साधूका, लगे फिरने घरोघरमें । कहैं हमसे करो चर्चा, ये सुन विद्वान घबराये[18] ॥ चली नहिं और कुछ युक्ति, तौ सब पण्डित लगे कहने । बतावो ये हमैं पहले कि, दीक्षा किससे तुम लाये ॥ न हरगिज[19]

१ दीन. २ आश्रय. ३ प्रयत्न. ४ केवल. ५ निर्वाह. ६ प्राप्त हुई. ७ मेरे समान. ८ सत्य. ९ कटाक्ष १० यह संपूर्ण. ११ प्रत्येक पदार्थ. १२ नाना प्रकारके. १३ जोति, प्रकाश. १४ बुद्धिमें. १५ शक्ति. १६ कहनेकी. १७ विचारमें. १८ चकित हुए. १९ कभी.

ज्ञान दुनियाँमें, कभी परमान होता है। बिना कोई गुरुके पास, जाकर काँन फुंकुवाये॥ ये सुन कौतुंक किया ऐसा, धऱ्यो लंघु रूप बालकका, जाय गङ्गा किनारे घाट पर सोये थे शिर नाँये॥ नहानेके समय जातेमें, रामानन्द स्वामीकी। खडाऊँ आ लगी शिरमें, तौ दैयाँ। कहके चिल्लाये॥ दयालू सन्त थे स्वामी, उठाके गोदमें बोले। भजो श्रीराम मत रोवो, मिटै दुख हरिका गुण गाये॥ करी ऐसी कई लीला, कहाँतक कह सके कोई। मुक्ति धर्मदास है जगमें, उन्हींकी शरणमें जाये॥ १॥

लीला अनेक देखके, सतगुरु कबीरकी। भई अक्ल परेशान है सुलतान मीरकी॥ टे०॥ सलँतनत बादशाही थी उस वखत अजीब। सब हो रहे थे हिन्दू, हरहालसे गरीब॥ धर्मो करमसे रहना, था किसके तब नँसीब। यह बात सम्वत पन्द्रा, सौके कि है करीब॥ फैली जगत्में चरचा, थी धर्मवीरकी। भई अक्ल०॥ होलीके दिनों वेश्याको, लैकै अपने साथ। फिरते फिरे काशीमें, डाले गलेमें हाथ॥ रीवाँ नरेशं था वहीं, हाजिर वघेलेंनाथ। आते कबीर देख, झुकाया न उसने माँथ॥ चरणोंपै लगे ढारने, लै धार नीरकी। भई अक्ल०॥ बोला बघेल वीरसिंह, देखिये कलाँ। चरणोंमें वाँरि डारिके, करते हो क्या भला?॥ कहने लगे जगदीशमें, पण्डा जो लै चला। अँटका उठाके हाथसे, छूटा तौ पग जला॥ पानीसे जलत उसके, बुझाई सरीरकी। भई अक्ल०॥ राजाने भेजा काँसिद फौरँन बुलायके। ला खँबर खासं जलदी जगदीश जायकै॥ कहते कबीर सच हैं, कि बातें बनायकै। झूंठी हमारे सामने, दुर्गुण छिपायकै॥ ठहरावो हाल

१ मंत्र सुने. २ चरित्र. ३ छोटा. ४ मस्तक नीचा किये. ५ मां. ६ रोये. ७ राज्य. ८ अद्भुत. ९ सर्व प्रकार. १० प्रारब्धमें. ११ राजा. १२ क्षत्रीजातिविशेष. १३ मस्तक. १४ चरित्र. १५ जल. १६ दूत. १७ जलदी. १८ समाचार. १९ यथार्थ.

ठीक[1] २, बेनजीर[2]की । भई अक्क० ॥ उस वक्त[3] सिकन्दर कहीं, काशीमें था आया । संग अपने शेखतकी पीर[4]को भी था लाया ॥ लोगोंने जाके सारा[5], हाल उसको सुनाया । सुनतेही सिकन्दरसे, कहके उनको बुलाया ॥ देखो हुजूर करामात[6], इस फकीर[7]की । भई अक्क ॥ आतेहि सिकन्दरको, रहम[8] न जरा आई । गरदनमें तौंक हतकडी, हाथोंमें डलाई ॥ बेडी भराके पांवमें, मुशकें भी कसाई । फिकवा दिया गङ्गामें, गठड़ीमें बँधाई ॥ पर थी उन्हें परवाह[9] कब ?, लोहे जँजीरकी । भई अक्क० ॥ बुलवाके कातिलों[10]को, टुकडे करा वदन[11]के । मँगवाके देग[12] उगमें, भरवाके कनके कनके[13] ॥ चढवाके आगपै वहीं हाजिर खडा था तनके[14] । सब कर लिये इरादे, पूरे जो कुछ थे मनके ॥ सतगुरु खड़े खड़े तख्त[15], नजर आये वजीरकी । भई अक्क० ॥ आया वजीर[16] पास, बादशाहके धायके । कहने लगा करते हो क्या आतिश[17] जलायके ॥ बैठे कवीर तो है, वहाँ तख्त जायके । शरमाके सिकन्दर है, गिरा चरण आयके ॥ गति धन्य धर्मदास है, अति गुणगँभीरकी । भई अक्क० ॥ ८४ ॥

लावनी ध्वनि गारी.

चलो सखी दरशनको सरतीर ।
प्रगट भये सतगुरु सत्य कवीर ॥ टे० ॥

समय अरुणोदय[18]के परभात । विमल है जल बिच पुरइनके पात, अवतरे बालरूप मृदुगात । देखि सुन्दरता काम लजाय ॥
परम मनोहर रूप अति, शोभा वरणि न जाय ।
उपमा काह त्रिलोकमें, जो कोई देवे लाय ॥
मनो रवि उदय भयो तम चीर । प्रगट भये० ॥

१ सत्य. २ अपूर्व. ३ समय. ४ गुरु. ५ संपूर्ण. ६ सिद्धि. ७ साधु. ८ दया. ९ चिन्ता. १० चांडाल ११ शरीर. १२ हंडा. १३ बारीक टुकडा, १४ दृढ होकर. १५ सिंहासन. १६ मंत्री. १७ अग्नि. १८ सूर्योदय.

जुलाहा गमन लिये घर जाय, सरोवरके तट पहुँच्यो आय,
देखि बालक तिय गई लोभाय, धायके लीन्ह्यो गाद उठाय ॥
देखत बालक गोदमें, जुलहा कह्यो सरोष ।
धरु जहँ ते लाई तहां, लोग लगावें दोष ॥
तबे तिय बोली उर धरि धीर । प्रगट भये० ॥
देखि यह बालक मोहि मुसकात । मनो कुछ कहन चहत है बात ॥
पिया मोहि ताते अधिक सोहात । लै चलो घर सब तजि उतपात[1] ॥
सुनत बात यह नारिकी, काढि लई तलवार ।
धरि चलु बालकको यहां, नहिं तो डारूं मार ॥
कह्यो यहि विधि त्रास दिखाय । नाय शिर रहगई तिय सकुचाय ॥
हाय अब करूं मैं कौन उपाय ?। जायके दूबपे दियो सोवाय ॥
सजल[2] नयन अति विकल तन, कहि न सकै कुछ बात ।
धरणि परी जिमि माछली[3], विन जलके अकुलात ॥
भई तब नभ[4]से गिरा[5] गँभीर । प्रगट भये० ॥
तोहि तारण कारण सर्वेश । धर्‍यो निज बालरूप यहि देश[6] ॥
धामलै जागके सुनु उपदेश । मिटे सब जन्म मरण भवक्लेश ॥
सुनि अकाशवाणी बिमल, चकित भयो चितमाहिं ।
तियहि[7] कह्यो लै चलु घरे, अब मैं बरजों[8] नाहिं ॥
बहन लगी मुदमय मलय समीर । प्रगट भये० ॥
प्रभू जुलहाके घर आये । सन्त सब दरशनको धाये ॥
सुमन[9] सुर नभसे वरषाये । विरद यश बन्दीजन गाये ॥
दीनबन्धु करुणा भवन, समन सकल दुखद्वन्द ।
पन्थ चलायो जगतमें, करि गुरु रामानन्द ॥
मेटि धर्मदासकी भवनिधि पीर । प्रगट भये० ॥

१ बखेड़ा. २ अश्रु भरे हुए. ३ मच्छी. ४ आकाश. ५ वाणी. ६ स्थान. ७ स्त्रीको. ८ मना करता हूं.
९ पुष्प.

लावनी रंगत लंगडी.

करुणा भवन कबीर, समन भवपीर वीर विग्रह[1] धारी। अति उपकारी, कमल दल प्रगटे निज इच्छाचारी॥ टे०॥ कुन्द इन्दु अनुरूप[2], देखि वपु[3] अति अनूप मनमथ[4] लाजे। करत पराजय, कौमुदा[5] दिव्य वसन भूषण साजे॥ दिपति[6] अमित मणि जड़ित, तड़ित[7] आभाजित[8] शीश मुकुट राजे। तिलक मनोहर, भाल सुचि सुमन माल उरमें भ्राजे॥

निरविकार अकार निरमल, नित्यमुक्त निरामयम्।
निजानन्दानन्दकन्द, स्वच्छन्दमद्भुतमद्वयम्॥
निरनिमित्य परमार्थकारी, निरममत्व मुदालयम्।
निरविवाद विषाद निरगत, निष्प्रपञ्चस निरभयम्॥
भ्रान्ति ध्वांन्त[10] ध्वंसक प्रधान, निरभ्रान्ति विमल
विद्या धारी। अति उपकारी, कमल०॥

मुद मङ्गल मय वेष, सुखद सर्वेश सर्वविद विज्ञानी। निर-अभिमानी[9], विगत मल द्वेष क्लेश हत निरबानी[11]॥ ध्यावत सन्त महन्त, अन्त नहिं पावत है ज्ञानी। परम सयानी, भारती[12] चकित होत वरणत वानी॥ यस्य विविध चरित्र, चारु विचित्र सुरसरि निरमलम्॥ वकनि मज्जि[13] मराल[14], काकः पिकं[15] भवन्ति निरगलम्[16]॥ सिद्ध मुनि योगिन्द्र, यति सुरवृन्द वन्द्य पदुत्पलम्। शेष वदत अशेष मुख, गुण शक्यते न कथेत्यलम्[17]॥

योगदण्ड धारी अखण्ड पाखण्ड प्रचण्ड खण्डन कारी।
अति उपकारी, कमल०॥

सेवक सुखद कृपाल, काल कलि व्याल खगेश्वर[18] अति अभिराम। धाम सुधामय, साम[19] गावत निशिवासर जेहि गुण

१ शरीर. २ सदृश. ३ शरीर. ४ कामदेव. ५ चन्द्रमा का प्रकाश. ६ प्रकाशित. ७ विद्युत. ८ प्रकाशकोजीतनेवाला. ९ अभिमानरहित. १० अंधकार. ११ मोक्षरूप. १२ सरस्वति. १३ स्नान करि १४ हंस. १५ कोयल. १६ सत्य. १७ पूर्ण. १८ गरुड. १९ सामदेव.

ग्राम ॥ नाम जाप जपि विमल होत जन, मननशील मुनिवत निष्काम । वांमदेव सम,प्रसन्न सेवत भवन्ति प्रभु पूरण काम ॥

धर्मधुरीण प्रवीण गति, मति अपार विशारदम् । अज्ञान हरण प्रधान, निगदित ज्ञान भव निधि पारदम् । वेद बोधित कर्म वर्म, विचार सार असारदम् । आपत्तिहर सम्पत्ति सुख, प्रतिपत्ति प्रचुर[६] प्रकारदम् । वरदायक वरदेश विनायक, विश्वविदित वर ब्रह्मचारी । अति उपकारी, कमल० ॥

अति अनल्प तरुकल्प, सत्य संकल्प अखिल अन्तरयामी । अपर त्रिविष्टप परात्पर प्रवर परमतरसुखधामी । अविनाशी अव्यक्त, अजर अज अमर चराचरके स्वामी ॥ अधम उधारण, तरण तारण कारण निज अनुगामी ॥ यं विधिर्वरुणेन्द्र इन्द्र, सुराः स्तुवन्ति[१२] निरन्तरम् । चिद्घनं दिव्यं ह्यमूर्तिं, पूरुषेति परात्परम् । निराकार निरीह निरगुण, किञ्चिदस्ति न तत्परम् । कञ्ज पर्ण समुद्भवं[१३], पारद[१४] भवाब्ध्यति दुस्तरम्[१५] ॥ धर्मदास दासानुदास, भवदीय[१६] दास आज्ञाकारी । अति उपकारी, कमल दल प्रगटे निजइच्छा० ॥

लावनी रंगत मोहिनी ॥

आनन्दकन्द अखिलेश्वर, अन्तरयामी । अघ ओघ हरण तव, चरण कबीर नमामी ॥ टे० ॥ भव भ्रमित श्रमित लखि, जीव दुखित अति भारी । करुणानिधि दीनदयाल परम उपकारी ॥ सब काम क्रोध मद, मोह द्रोह रिपु मारी । काशीमें कमल पत्र, पर स्वेच्छाचारी ॥ धरि बालरूप प्रगटे, त्रिभुवनपति स्वामी । अघ ओघ० ॥ जग श्रेष्ठाचार प्रचार, करनको भाई । गंगातटपै कियो रामानँद गुरु जाई ॥ तजि पक्षपात विज्ञान, विविध विधि

१ महादेव. २ विद्वान्. ३ कहा हुवा. ४ कवच. ५ प्राप्ति ६ बहोत. ७ इधर. ८ स्वर्ग. ९ अतीव १० सेवक. ११ जिसको. १२ स्तुति करते हैं. १३ उत्पन्न. १४ पार करनेवाले. १५ अपार. १६ आपका.

गाई। सद्ग्रन्थ अनेकन, रचे करी प्रभुताई॥ निजपंथ चलायो, वीतरांग[1] निष्कामी। अघ ओघ० ॥ जिस समय सिकन्दर, काशीजीमें आया। बावन परिचय[2] सतगुरूने जाय दिखाया॥ यह कौतुक लखिकै शेखतकी घबराया। जीता करवावो, मुरदेको फरमाया॥ कीन्ह्यो कमाल[3] जिन्दा[4], तबहीं सतनामी। अघ ओघ०॥ ऐसी अनेक लीला, प्रभुने बहु कीनी। नहिं जानें मूरख जिनकी बुद्धि मैलीनी[5]॥ बांधो गढमें धर्म दासको दीक्षा दीनी। कहँलग गुण वरणे इन्द्र मती मति हीनी॥ सत रूप सत्य संकल्प, सत्य सुख धामी। अघ ओघ० ॥

झूँठे झगडेमें पडि, क्यों जन्म गमावै। यह मनुष देह फिर, बारबार नहिं पावै॥ टे०॥ मति मूरख इतनी वेसरमाई[6] धारे। हित अनहित अपनो, तूं नहिं जरा विचारे॥ यह वृथा डुबोवै, आई नाव किनारे। विषयोंके वशपरि जीती बाजी हारे। अब कहांतलक, तुझको कोई समुझावै॥ यह मनुष०॥ वे भूली बातें तुझे, सकल दुखदाई[7]। जो गर्भवासमें, तूने यातना पाई। अब चढी आय तेरे तनपर तरुणाई। मर्ग[8] चलत निहारे सुन्दर नारि परोई[9]॥ करकै गुमान लै तान, रागिनी गावै। यह मनुष० ॥ छल कपट त्यागि भजु, सत्य नाम सुखदाई। जिससे कुछ होवे, तेरी मूढ भलाई॥ सुख संपति माया, दो दिनकी है भाई। बन सके सो कर ले, परमारथ जग आई॥ जब काल अचांनक[10], आय तुझे लै जावे। यह मनुष०॥ सत संगति कर सन्तोंकी, शरणमें जाके। वे कहैं सो सुन उपदेश, तूं ध्यान लगाके॥ है तेरा यही कर्तव्य[11], जगतमें आके। कहते कवीर गुरु है, तुझको

१ वैराग्यवान्. २ सिद्धि. ३ नामविशेष, अद्भुतता. ४ जीता. ५ दूषित मैली. ६ निर्लज्जता. ७ दुःख. ८ मार्ग. ९ दूसरेकी १० एकाएकी. ११ काम.

समझाके ॥ करि चतुराई मति, बातैं बहुत बनावै। यह मनुष देह फिर बार बार नहिं पावै ॥

मलार–समय वर्षा ऋतु.

उमड़ि घुमड़ि चहुँ दिशिसे आय, कर्मनके बादर बरषे ॥ टे० ॥ सञ्चित[1] अरु प्रारब्ध[2] विविध विध, और करत जो करसे। सो सब भोग हेतु शरीर धरि, जीव जगत्में संरसे[3] ॥ विषयके सुख सब चमकि दुरंत[4] पुनि, द्युति दामिनिसे दरशे। ताको मूढ प्राप्ति इच्छा करि, देखि २ के तरसे[5] ॥ त्रिविध ताप नाना अनर्थयुत, नाश करनको जरसे[6]। अर्थ धर्म अरु काम मोक्षकी, करत याचना[7] हरसे ॥ कोई लै वैराग त्यागि सब, निकरि चले निज घरसे। जप तप व्रत संयम आराधत, जन्म मरणके डरसे ॥ गुरु कबीर सब कर्म नाश करि, निजमति परख प्रवरसे। निश्चय करि सिद्धान्त लखायो, न्यारा क्षर[8] अक्षर[9]से ॥

आज घन[10] ज्ञान घटा घिरि आई। शीतल बहत समीर[11], सुगन्धित मन्द २ सरसाई ॥ टे० ॥ सुमति दामिनीकी द्युति दमकत, तम अज्ञान नशाई। बरषत विविध विचार सार पद, अखँड धार धराई[12] ॥ सकल विकार रहित अस पावस[13], की ऋतु लहि सुखदाई। धर्म विटप[14] वन कुंज[15], सुकृत तृणपुञ्ज उठे हरियाई ॥ लखि मयूर मुनि मनन[16]शील धुनि, प्रमुदित कूक मचाई[17]। दादुर[18] दीन अधीन हीनजन, बोले अति हरषाई[19] ॥ चहुँ दिशि धर्मदास चित चात्रिक[20], चितवत[21] आस लगाई। स्वातिबुन्द सतगुरु बानी विन, नहिं मम प्यास बुझाई ॥

---

१ पूर्व. कृतकर्म जो एकत्रित हैं. २ फलोन्मुख कर्म. ३ प्रवृत्त हुए. ४ छिरती है. ५ अभिलाष करता है. ६ समूल. ७ माँगना, ८ नाशमान. ९ अविनाशी. १० बादर. ११ वायु. १२ गर्जना करि. १३ वर्षा. १४ वृक्ष. १५ लताच्छादित स्थान. १६ विचारमान १७ चिल्लाकर. १८ मेंडक. १९ आनन्द हो. २० पपीहा. २१ देखता है.

पूर्वी। (समय वर्षाॠतु.)

पीले प्याला हो मतवाला[1] प्याला प्रेम अमी[2] रसका रे ॥टे०॥ पाप पुण्य भुगतन[3]को आया, कौन तेरा और तूं किसकारे ? । जहँलग स्वांस[4] नाम ले प्रभुका धन यौवन स्वपना निशिका रे ॥ बालापन सब खेलि गँवाये । तरुण भयो नारी वशकारे । वृद्ध भयो तन कांपन लागै, फिर न जाय कतहूं सर[5]कारे ॥ नाभिकमलमें है कस्तूरी, वन वन मृग डोलै भटकारे । बिन सतगुरु इतना दुख पायो, कैसे भर्म मिटै पशुकारे ॥ जन्म मरणसे बचना चाहो, तौ छोडो कामिनी चसका[6]रे । कहैं कवीर सुनौ भाई साधो, नखशिख[7] रूप भरा विषकारे ॥ १ ॥

करन मतेसो[8] करै करतारे । और सबनको झूंठ मतारे ॥टे०॥ कबहुंक शैल[9] शैलपर सागर, कबहुँक शोषे[10] सब सरितारे । कबहुंक नृपको करत है भिक्षुक, कबहुँ रंक शिर क्षत्र धरतारे ॥ पूतना कौन सुकृत करि आई, गुन अवगुन तजि करि प्रभुता[11]रे । ताहि मारि वैकुण्ठ पठायो, बलिराजामें कौन खता[12]रे ॥ एक पुत्रको नृप पचिहारे, जाके हती सहस्र वनिता[13]रे ॥ साठ पुत्र नारदको दीन्यो, माया त्यागि विरति[14] रहतारे॥ पञ्चभर्तारी[15]को व्रत राख्यो, दोष लगायो पतिवरतारे । कहैं कवीर कर्ताकी गति को, दूजा जगमें लखि सकतारे ॥ २ ॥

वसन्त (समय, वसन्तॠतु)

वन्दों सतगुरु साहिब कृपाल । जासे छूटे भवद्वन्द[16] जाल ॥ टे०॥ धरि ध्यान हृदय ध्यावे महेश । पदपङ्कज सेवैं अज सुरेश[17] ॥ नारद सारद अरु श्रुति[18] अशेष, मुख सहस करत गुणगान शेष ॥ अभिमान नाग[19] मृगपति[20] प्रचण्ड । त्रयताप अनल पावस अखण्ड ॥

१ सांसारिक ज्ञान शून्य, उन्मत्त. २ अमृत. ३ भोगकरनेको. ४ प्राण. ५ उठा बैठा. ६ अभ्यास. ७ नखसे चोटी पर्यंत. ८ इरादा. ९ पर्वत. १० सोखे. ११ ऐश्वर्य. १२ अपराध. १३ स्त्री. १४ उपाराम. १५ द्रौपदी. १६ जन्म मरणादि सुख दुःख. १७ इन्द्र. १८ वेद. १९ हस्ती. २० सिंह.

सुरतरु[१] विशाल फल प्रद यथेष्ट[२], भवरोग हरण वर भिषग्[३] श्रेष्ठ ॥ अनुरोधरहित[४] गति मति उदार। कश्मल[५] अरण्य तीक्ष्ण[६] कुठार ॥ अद्वैत अखिल पति संप्रमेय[७] रागादि व्याल[८]गण वैनतेय[९]॥ वैरबन्ध विगत मल अति स्वच्छन्द। अनवद्य अनघ आनन्दकन्द॥ धर्मदास और तजि सकल आस, राखत कबीरको दृढ[१०] विश्वास ॥ ३ ॥

ऋतुराज आज आयो वसन्त। सतगुरु यश जग प्रगटचो अनन्त ॥ टे० ॥ चहुँ दिशि अनुशासन[११] मय समीर। लगि बहन हरण भवजाल पीर ॥ तेहि परसि[१२] बुद्धि कलिका[१३] अनूप। भई विकसि[१४] मुमुक्षु प्रसून[१५]रूप ॥ श्रद्धा रसाल[१६]तरु धर्म मौर। झौरन[१७]पर झूलत भक्त भौर ॥ पतिझार[१८] भयो कर्मनको सर्व। बहु जन्म २ कृत धारी गर्व[१९]॥ अति प्रीतिसहित सत मत विधान[२०]। करि कोकिल[२१] साधू करत गान॥ करुणानिधान मुख चन्द्र ओर। चितवत सज्जन जन चित चकोर[२२] ॥ सतसंगनि उपवन[२३]में विचार। पल्लवित[२४] भयो सिद्धांत सार॥ लखि शान्त होय उर जेहि प्रताप। धर्मदास नाश होय त्रिविध ताप ॥ ४ ॥

मोरे सतगुरु खेलैं नित वसन्त। मिलि सन्त विशारद[२५] मति महन्त॥ टे० ॥ अनुराग भक्तिको घोरि रंग। छिरकें एकपर एक करि उमङ्ग[२६]॥ उर झोरीमें समता गुलाल। भरि वचन मूठि मारैं कृपाल ॥ नहिं सुर दुर्लभ[२७] तन बारबार। ताते भजिले सतनाम सार॥ ना तो भवसागरकी धार जाय। तन कीट कृमी योनिनमें पाय ॥ दुख भूख प्यास तप शीत द्वन्द । अति कठिन क्लेशके परहिं फन्द ॥ औघटमें करि हो कहँ उपाव। जहँ नाहिं खेवैयाँ[२८]

---

१ कल्पवृक्ष. २ इच्छानुसार. ३ वैद्य. ४ निर्बंध. ५ पाप ६ पैनी. धारदार. ७ प्रमाणसहित. ८ सर्प. ९ गरुड. १० निश्चय. ११ उपदेशरूप १२ स्पर्शकरि. १३ कलि. १४ फूलिकैं. १५ फूल. १६ आम्रके वृक्ष १७ गुच्छोंपर. १८ पत्र गिरना. १९ अभिमान. २० वर्णन. २१ कोयल. २२ पक्षी विशेष. २३ बाग. २४ कोपल फूटे. २५ पंडित. २६ उत्साह. २७ दुष्प्राप. २८ पार करनेवाला.

और नाव ॥ मनही मन संकट घूटिघूटि । सहि रहिजैहो शिर कूटिकूँटि[2] ॥ तेहि कारण चेतहु अबहिं वीर[3] समुझाय कहैं तुमको कवीर ॥ ८ ॥

सतसङ्गतिकी महिमा अनन्त । सुनि साधुसन्त खेलैं वसन्त ॥ टे० ॥ गावें नारद वीणा बजाय । शङ्कर ताण्डव नृत करत आय ॥ शुकदेव व्यास सनकादि सङ्ग । लियो भाव भक्तिको घोरि रङ्ग ॥ गुरु ज्ञान गुलाल चढावें शीश । प्रह्लाद सुदामा अम्बरीष ॥ बलभद्र बिभीषण विदुर सूत । अति प्रबल वीर हनुमन्त दूत ॥ नामा पीपा अरु अजामील । रंका वङ्का पुनि अग्र कील ॥ जैदेव सैन नाईको ठाट । रैदास भक्त अरु धना जाट ॥ गुरु रामानंदसे लै अबीर, सब संतनपर डारैं कवीर ॥ ६ ॥

होरी ॥

ऐसे नाम उजाकर, होरी खेलन जग आये ॥ टे० ॥ कमल पत्र पर प्रगट भये हैं, नीरू[4] निज गृह लाये । होय शिष्य रामानन्द गुरुके, निरगुण पंथ चलाये ॥ कथि निरणय निरबान अभय पद, साखी शब्द बनाये । जड पूजाको खण्डन करिकै, आतमज्ञान हढाये ॥ सत्य यथार्थ वचन सतगुरुके, सुनि पण्डित खिसिआये । षट् दरशन चरचाको आये, पार कोई नहिं पाये । काशीमें हाँसी करवाई, गणिका सङ्ग लगाये । निजचरणन जल ढारि दयानिधि, पण्डा जरत बचाये ॥ शाह सिकन्दर कसनी लीना, जरत अग्निमें डराये । लै यमुनामें पकरि डुबायो, निज समीप[5] गुरु पाये । मस्ता हाथी आनि झुकायो, सिंहरूप दरशाये । हाथी आय पर्‍यो चरणनमें, सत्य कवीर कहाये ॥ ७ ॥

हमारे को ! खेलै ऐसी होरी । जामे आवागमन[6] लगी डोरी[7]

१ पीपीकर. २ पटक पटक. ३ भाई. ४ संज्ञाविशेष. ५ निकट, पास. ६ आना जाना. ७ तार.

॥ टे० ॥ श्रवण सुन्यो नयनन नहिं देख्यो पिय २ लागी लौरी। पन्थ निहारत जन्म सिरान्यो, प्रगट मिल्यो नहिं चोरी॥ जा कारण सब गृह तजि निकरे, लोकलाज कुछ तोंरी। तासे भेटं भई नहि अबलों, तनमें विरंह बढोरी॥ कोई मस्तक जटा बढाये, काहूको मूंड़ मुड़ोंरी। षट दरशन मिलि स्वांग बनायो, रचि जग मांहि ठंगोरी॥ अङ्ग भभूति गले मृगछाला, कोई लिये गूदरी झोरी। कोई कमण्डल दण्ड ग्रहण करि, कपड़ा भगवा रँगोरी॥ जगन्नाथ बद्री रामेश्वर, देश देशान्तर दोरी। अरसठ तीर्थ पृथ्वि परिकरमा, पुष्करमें लटबोरी॥ वेद पुराण भागवत गीता, आठा जाम रटोरी॥ कहै कवीर विना सतगुरुके, भर्म मिटै नहिं भोरी॥ ८॥

मोपे रङ्ग न डारो, मैं तो दिननकी थोरी॥ टे०॥ पिय देखनको घरसे मैं निकरी, सास ननदकी चोरी। सखि अपने सँग पकरि लै आई, करि मोसे बरंजोरी॥ फागको नाम सुनत डर लागत, कांपत तन सगंरोरी। तनक छुवत छाती धरकत है, बहियाँ जनि पकरोरी॥ चोवा चन्दन अत्रिर अरगजा, केसरि घोरि धरोरी। अबके फागमें खेलि न जानो, परंके मैं खेलूँगी होरी॥ ऐसी कहि रंगमें नहिं भीजी, कोटि उपाव करोरी। कहै कवीर सुनो भाई साधो, तृष्णा रहगई कोंरी॥ ९॥

काया नगरकी पोंरी, मन खेलत होरी॥ टे० ॥ या नगरिमें चेतन राजा, प्रेमकी चाचँर जोरी। वनिता वृत्ति लिये अपने सँग, हिलमिल फाग रचोरी॥ सुरतिकी वीना बाजन लागी, निरतिको डफ ठनकोरी। उठत तरङ्ग छतीस रागिनी, अनहंतकी घनंघोरी॥ ज्ञान गुलाल लियो भरि झोरी, क्षमाकी केशर घोरी। पांचपचीस

१ ध्यान. २ तोडकर ३ प्राप्ति. ४ मिलनेकी अभिलाषा. ५ मस्तक. ६ घुटा हुवा. ७ ठगाई. ८ भोली. ९ बलपूर्वक. १० संपूर्ण. ११ अगले वर्ष. १२ शुष्क. १३ द्वारपर. १४ होली खेलनेवालोंका झुंड १५ योगनाद. १६ ध्वनि खूबजोरकी

सखी संग आई, तिनको रँगमें बोरी॥ घूँघट खोलि खेलु सन्मुख होय, अपने पिय सँग गोरी। कहैं कवीर फोरि नहिं पइहो, ऐसो दाँव बहोरी ॥ १० ॥

काहूको मारैगी, दृग अञ्जन नयन सँवार॥टे०॥ भौंह कमान तानि तनकहु जो, तिरछी देत निहार। विरहबान लागत जहरीले, होत करेजे पार ॥ चन्द्रवदनि मृगलोचनि माया, करि सोरह शृङ्गार। ब्रह्मा विष्णु महेश्वर तीनों देव बनाये जार॥ नरसे नारी कियो नारदको, आप बनी भर्तार। साठ पुत्र तिनके उपजाये, करिके कपट अपार ॥ विश्वामित्र पराशर आदिक, वायू करत अहार। शृंगी ऋषिसे और अनेकन, तपसी छले हजार ॥ जीव उबारन हम जग आये, हमरेहु लागी लार[११]। कहैं कवीर सुनो भाई साधो, यासे रहो हुशियार[१२] ॥ ११ ॥

होरीके खिलारीने, कैसी ? मजा करडारी॥टे०॥ भारी भरमकी सारी फारी, वरवश पकर हमारी। त्रिगुण तनीं अँगियाकी तोरी, शब्द कुम्कुमा मारी ॥ ज्ञान गुलाल पर्‍यो नयननमें, मिटिगइ सब अँधियारी। एकहि भाव विलास[१३] करत हैं, कौन पुरुषको नारी ?॥ नित्यानित्य देत है गारी, लोकलाज सब टारी। मोहकी वेसँरि कुमतिके कंगना, मानकी वेंदी उतारी॥ पूरण लखि मन भूलि गयो है, ऐसी न देखी धमारी। साहिब कवीर परख रँग रँगिया, परखिके कीनी न्यारी ॥ १२ ॥

सतगुरु प्रियतम पाऊं, हरषि हिय होरी खेलाऊँ ॥ टे० ॥ प्रवृति पन्थमें जात सखिनको, दै २ सयन बुलाऊँ। हिलमिल धाय जाय कृपालको, लै अपने गृह आऊँ ॥ चरण गहि फाग मचाऊँ। सतगुरु० ॥ प्रेमप्रीतिकी करि पिचकारी, भक्तिको रंग

१ डुबाई. २ पुनः ३ अवसर. ४ पुनः फिरसे ५ चंद्रमुखी. ६ मृगनयनी. ७ उपपति. ८ पति. ९ भोजन. १० अनन्त. ११ पीछे. १२ सावधान. १३ केलि. १४ नथ. १५ होरी.

बनाऊँ। अनहत नाद झांझ डफ वीना ढोल मृदंग बजाऊँ। लोभको नाच नचाऊँ॥ सतगुरु०॥ त्रिविधि कर्मकी धूरि उडाऊँ रथ दिनेश ठहराऊँ॥ जलप्रवाह स्थिर करि सरितनको, विधिको वेद भुलाऊँ॥ ध्यान शंकरको डिगाऊँ॥ सतगुरु०॥ तन अरपों मन वारों चरणपर, सब धन धाम लुटाऊँ। साहिब कबीरसे फगुवा मै लेऊँ तो धर्मदास कहाऊँ॥ मुक्तिको पन्थ चलाऊँ सतगुरु०॥१३॥

मैं तो जात हती निज बाँट २, मोहि सतगुरु होरी खेलाई ॥ टे० ॥ कृपाकी केसर घोरि बोरि तन, चूनरि रंगमें भिगाई। शब्द कुम्कुमा मारि हजारन, ज्ञान गुलाल उड़ाई॥ जाय नभ ऊपर छाई। मोहिं सतगुरु० ॥ आय विवेक अबीर पऱ्यो, मेरे नयनन अति सुखदाई। विविध प्रकार उपाय कियो, नहि निकस्यो रह्यो समाई॥ कछू मोसे बन नहिं आई॥ मोहि सतगुरु०॥ त्यागि दियो धन धाम काम सब, बास एकान्त सोहाई। मिल्यो अचानक आय प्राणपति, कर गहि कण्ठ लगाई॥ भूल गई सब चतुराई। मोहिं सतगुरु०॥ सगरो शृंगार बिगार दियो मेरो, भरमकी गाँठ छुडाई। लाजकी बात न जात कही कछु, निज उपदेश दृढाई॥ दियो एक मन्त्र सुनाई। मोहि सतगुरु०॥ अस्ति भाँति प्रियें रूप है तोरो, सब तेरो प्रभुताई। गाय कवीर अबीर उड़ायो, धर्मनि अति सुख पाई॥ बजी तिहुँ लोक बधाई॥ मोहि सतगुरु०॥ १४॥

आज मैंने देखो अनोखो खिलारी। मोसे करि झकंझोरी होरी खेले वरजोरी, मोरी सगरी भिजोय दीनी सारी॥ टे०॥ लोक वेद मग जात अचानक, रोकत गैल हमारी। कर गहि कँगन मोहके तोरत, अरु मारत पिचकारी॥ देत गुरुगमकी गारी।

१ रज. २ मार्ग ३ सत्त. ४ चित्त. ५ आनन्द. ६ अद्भुत. ७ छाना झपटी. ८ संपूर्ण. ९ गुरुका ज्ञान.

मैंने देखो० ॥ न्याय मीमाँसा सांख्य पतञ्जल, वैशेषिकहू विचारी। प्रक्रिया सहित वेदान्त व्यासकृत, षट दर्शन निर्धारी ॥ परख वाकी सबसे है न्यारी ॥ मैंने देखो० ॥ शिव सनकादि और ब्रह्मादिक, गौतम शुक ब्रह्मचारी। गोरखदत्त वशिष्ठ श्रेष्ठ जग, ये महान आचारी ॥ बुद्धि इन सबकी हारी। मैंने देखो० ॥ निज पदके रँग बोरि दियो मोहि, भ्रांति भेद सब टारी। तापर ज्ञान गुलाल सुरंङ्गी, मारि कुम्कुमन डारी ॥ भरमकी अँगिया फारी ॥ मैंने देखो० ॥ धर्मिनि गुरुके चरण कमलपर, तन मन धन सब वारी। बजन लगी तिहुँ लोक बधाई, मँगन लगी फगुवारी ॥ भक्ति मोहि दीजे तुम्हारी। मैंने देखो० ॥ १५ ॥

आज निज घटबिच फाग मचैहों। तजि मोह मान करुणा निधानके, ध्यान चरणमें लगैहों ॥ टे० ॥ यक स्वर साधि तँबूरा तनको, स्वासके तार मिलैहों। मोद मृदंग मँजीरा मनसा, विनयको बीन बजैहों॥ भजन सत नामको गैहों॥ आज निज० ॥ भक्ति उमंग रंग केसरको लै प्रभुपै ढरकैहों। प्रेम सनेह गुलाल अरगजा, उनहींके शीश चढैहों॥ सुरतिकी मुरति बनैहों॥ आज निज०॥ सार विचार शृंगार साजि मति, सन्मुख आनि नचैहों। विविध प्रकार रिझाय नाथको, फगुवा लै करि रैहों॥ अखँड सुख पाय अघैहों॥ आज निज० ॥ कीच उलीच नीच कर्मनको, निरगुनपर वर्षैहों। पातिक जारि राख करि कारिखं, विमुखके मुखपै लगैहों ॥ तबै धर्मदास कहैहों ॥ आज निज घट बिच फाग मचैहों ॥ १६ ॥

जड़ चेतनकी उरझी गाँठ, ये तो सुरझत नहिं सुरझाई॥टे०॥ अमल अचल अव्यय अविनाशी, जेहि श्रुति गुण बहु गाई। सो

१ व्यवस्था. २ भिन्न. जुदी. ३ सुन्दर रङ्गकी ४ बुद्धि. ५ प्रसन्नकरि. ६ काजल.

मायावश बँध्यो आपही, शुक[1] मरकटका नाई ॥ भ्रमत चौरासी जाई। ये तो सुरझ० ॥ तीरथ व्रत आचार विविध विधि, जप तप आदि उपाई। ज्यों २ करत यत्न छूटनको, त्यों २ होय दृढताई[2]॥ परत फन्दा अधिकाई[3]॥ ये तो सुर० ॥ यद्यपि मृषा[4] तदपि छूटत नहिं, मोह[5]जनित तम पाई। देखि न परत ज्ञान दीपक बिन, छूटि सकै किमि भाई ॥ अनिरवचनी[6] प्रभुताई। ये तो सुरझ० ॥ सतगुरु कृपा ग्रन्थि छूटनकी, युक्ति कबीर बताई। आतम अनुभव[7]के प्रकाश करि, सहज मुक्ति होय जाई॥ मिटत संभ्रम[8] समुदाई[9]॥

होरी अनोखी ये भाई। सुनो साधो चित लाई ॥ टे० ॥ उतैं[10]से अखिल वेद श्रुति बनिता, बहु प्रकारकी आई। कोइ भोरी कोइ बाल किशोरी[11], कोई जहरकी बुझाई॥ भरी सब गुण चतुराई। होरी अनोखी ॥ इतैं[12]से गुरु मुख शब्द यथारथ, परस्वरूप सुखदाई। सरल[13] मनोहर शान्त मोहप्रद, शील सहित तहँ जाई ॥ परस्पर फाग मचाई। होरी अनो० ॥ कर्मविधायक[14] नवप्रमदा[15] यक, लै गुलाल कर धाई। ताकी पकरि बाँह सब चूनरि, निज रंग मांहि भिजाई॥ तबै रहगई खिसियाई[16]। होरी अनो० ॥ दूजी अवसर जानि ठानि निज, मनमें अति दृढताई। आगू चली अबीर उड़ावन, रपटि गिरी अकुलाई॥ मानो कोई मूँठ[17] चलाई॥ होरी अनो० ॥ तीजी ईश मनाय[18] विविध विधि, ले पिचकारी धाई। नहिं वश चल्यो फिरी पाछे पुनि, देखि रही सकुचाई[19]। हाथ मींजत पछिताई। होरी अनो० ॥ योगयुक्ति आँगर[20] चौथी पुनि, अनहत ढोल बजाई। गावत ऐसो अनोखो खिलारी, देख्यो सुन्यो नहीं माई ॥ करों

१ तोतां. २ कठिनता. ३ विशेष. ४ मिथ्या. ५ अज्ञानजन्य अंधकार. ६ सत असतसे विलक्षण. ७ साक्षात्. ८ भय. ९ समूह. १० उधरसे. ११ तरुण. १२ इधरसे. १३ सीधा १४ विधानकर्ता. १५ नवीन स्त्री. १६ लज्जित हो १७ मंत्रमारा. १८ ईश्वरका स्मरण कर. १९ सकुचित हो २० कुशल.

यासे कौन उपाई। होरी अनो॰ ॥ प्रकृति पुरुष विवेक निपुन, मृग नयनी नयन नचाई। बोली पकरि लेहुँ मैं याको, पै पकरन नहिं पाई ॥ सिथिलता तनपर छाई। होरी अनो॰ ॥ ठानि यक अद्वैतवाद कहि, फगुवा लेहो चुकाई। साहिब कवीर कृपाल दया-निधि, जड चेतन समुझाई॥ दियो पारख परखाई। होरी अनो॰ ॥८॥

इति शब्दावली तीसरे खण्डका तीसरा विभाग ॥



सत्यनाम।



शब्दावली तीसरे खण्डका चौथा भाग

"चौका आरती माहात्म्य" की प्रारम्भिक विज्ञप्ति ॥

कवीरपंथमें चौका आरती एक ऐसा अनुष्ठान है जिसमें धर्मके सर्व अंगोंका समावेश हो जाता है। यद्यपि वर्तमानकालमें, प्रायः रोजगारी कडिहारोंने इसे, अपने रोजगारका एक साधन बना रक्खा है, तथापि इसके भेदके समझने वालोंका अभी तक अभाव नहीं हुआ है, किन्तु अधिकारीकी कमीसे उन्हें इसके भेदको प्रकट करनेका अवसरही नहीं मिलता। और इसके भेदके न जाननेवाले अज्ञानता वश, प्रायः इसकी निन्दा उठाया करते हैं। और रोजगारी कडिहारोंकी कृपासे सेवक सतियोंकी भी बुद्धि ऐसी कुंठित हो रही है कि, उन्हें इसके भेदको जाननेकी जिज्ञासाही नहीं उठती। क्योंकि, जिनमें उनकी श्रद्धा है वे या तो

व्यापारी हैं अथवा सीधे साधे संत। व्यापारी, पहले तो आपही इसके महान आशयको नहीं समझते और जो कोई थोडा बहुत ग्रन्थ पोथियोंसे समझता भी है, तो वह अपने रोजगारमें विघ्न पडनेके डरसे सेवक सतियोंको बतलाना नहीं चाहता और जो सीधे हैं वे कुल्हेडीकी रस्सी घसीटते चले जा रहे हैं, उनको जब स्वतःही खबर नहीं है, तब दूसरोंको क्या बतलायंगे। और मेरे जैसे लोग जो खुल्लमखुल्ला भेद बतानेको तय्यार हैं. अधिकारी जिज्ञासुओंके अभावसे इस साखीका स्मरण कर करके निराशा अनुभव करते हैं—

परबत परबत मैं फिरा, नैन गवाँया रोय।
सो बूटी पाऊँ नहीं, जोरे सजीवन होय॥

तथापि यदि संत गुरुकी दयादृष्टि हुई तो मुझ अकिंचनसे जितना करते बन रहा है सेवा करता जा रहा हूँ और जो बनेगा करता जाऊँगा, इसका उपक्रम आरम्भ हो चुका है और कबीरधर्मदर्शन ग्रन्थमाला निकालना आरम्भ हो गया है। प्रथम भाग माहात्म्य दर्शन छप चुका है।

श्रीवेंकटेश्वर प्रेसके मालिक रायबहादुर सेठ रङ्गनाथजी तथा लघुभ्राता परमसज्जन बुद्धिमान् धर्मपरायण श्री बाबू श्रीनिवासजीका कबीर मात्रको कृतज्ञ होकर, पंथी सद्‌गुरुसे प्रार्थना करना चाहिये कि, वे धन जन और धर्मसे पूर्ण रहकर सत्यमार्गकी उन्नतिमें सहायता देते रहें॥

सम्वत् १९५८ वि. से ही साकेतवासी सेठ खेमराजजीने मेरे दिये हुए ग्रन्थोंका, प्रकाशन करके सत्यधर्मका कितना उपकार किया है, वह किसीसे छिपा नहीं है।

इसका विषय विशेष प्रस्तावनामें लिखना है, इस लिये यहांही समाप्त करता हूं।

भवदीय—
आप सबोंका पूर्व परिचित
रसीपुर शिवहर वाले—स्वामी -
श्रीयुगलानन्दविहारी.
(कबीरआश्रम पो०, खरसिया.)
(जि० बिलासपुर (सी० पी०)

श्रीवेंकटेश्वरप्रेस,
बम्बई ता. ७–८–३१

अथ चौका आरती माहात्म्य प्रारम्भः ।

सत्यनाम स्वकृत विभू, अदली आदि अचिन्त । अजर पुरुष मुनीन्द्र प्रभू, मायापार अनन्त ॥ १ ॥ करुणामय कवीर कही, ज्ञानी पुरुष सुजान । योगजीत सतगुरु सही, मेटे काल गुमान ॥२॥ सुरति शब्दको योग जो, परगट कीन जहान । योग सँतायन नामते, कहते ताहि सुजान ॥ ३ ॥ जाकर शिष धर्मदासजू, पूरण सुकृत रूप । पायी दया कवीरकी, भये सो आप अनूप ॥ ४ ॥ सत सुकृत प्रतापते, भये जगत आदर्श । नाम देइ भव काटई, मिटे काल उतकर्श ॥ ५ ॥ कह कवीर धर्मदाससे, वचन मोर समरत्थ । ताहि गहै सो बंश है, चढै मुक्ति के रत्थ ॥ ६ ॥ वंश व्यालिस जगतमें, माने बचन हमार । आप तरे जग तारई, देवे शब्द अहार ॥ ७ ॥ शब्द अहार जो छाडई, अखज काल ढिग जाय । गुरु सीढि ते ऊतरे, काल निरञ्जन खाय ॥ ८ ॥ दुखित जीव जग जानिके, प्रगट भये गुरु देव । चौका विधि प्रगट करी, तत्त्व लखाये भेव ॥ ९ ॥ सत्यलोकको यान है, आतम ज्ञानको मूल । काल जालते काढिके, हरे सकल भव शूल ॥ १० ॥ ता महिमा निज मुख कही, सत्य गुरु सत्य कवीर । पूछी सो धर्मदासने, जीव लगावन तीर ॥ ११ ॥

इति मंगला चरण ।

अथ चौका आरती–

माहात्म्य (अनुरागसागरसे) धर्मदास वचन ॥

धर्मदास पद गहि अनुरागा । हो प्रभु मोहि कीन सुभागा ॥ हे प्रभु नहिं रसना प्रभुताई । अमित रसन गुण बरनि न जाई ॥ १ ॥ महिमा अमित अहै तुव स्वामी । केहि विधि बरनों अन्तर्यामी ॥ मैं सब विधि अयोग्य अविचारी । मुझ अधमहिं

तुम लीन उबारी ॥ २ ॥ अब चौका भेद कहो मुहि स्वामी । काहि कहहु तिनका सुख धामी ॥ जो तुम कहो करौं मैं सोई । तामहँ फेर न परिहैं कोई ॥ ३ ॥

कबीर वचन ।

गेही भक्ति आरति आने । प्रति पाख आरती ठाने ॥ प्रति पाख आरति नहिं होई । ताहि भवन रह काल समोई ॥ ४ ॥ पाख दिवस नहिं होवे साजू । प्रति पूनोकर आरति काजू ॥ पूनो पान लेइ धर्मदासा । पावे सिष होय सुख बासा ॥ ५ ॥ चन्द्र कला षोडस पुर आवे । ताहि समय परवाना पावे ॥ यथाशक्ति सेवा सहिदाना । हंसा पहुँचे लोक ठिकाना ॥ ६ ॥

धर्मदास वचन ।

धर्मनि विनय करी कर जोरी । होहु प्रभु अब दयाल बहोरी ॥
आरति चौका किहि विधि होई । काकासाज लगे प्रभु सोई ॥७॥

कबीर वचन ।

आरति साज धर्मनि सुनो, तुमसे कहौं बखान ।
विधि विधान ते जो करे, पावे मुक्ति ठिकान ॥ १ ॥

धर्मदास सुनु आरति साजा । जाते भाग चले जमराजा ॥ सात हाथको वस्तर लाओ । स्वेत चँदेवा वस्त्र तनाओ ॥ १ ॥ घर आँगन सब शुद्ध कराओ । चौका करि चन्दन छिड़काओ । तापर आँटाको चौक पुराओ । सवा सेर तन्दुल लै आओ ॥२॥ स्वेत सिंघासन तहां विछायी । नाना सुगन्ध धरु तहँ लायी ॥ स्वेतै मिठाई स्वेतै पाना । पूंगी फल स्वेतहिं परमाना ॥ ३ ॥ लौंग इलायची कपूर सँवारो । मेवा अष्ट केरा पनवारो ॥ जिब पीछे नरियर लै आओ । यह सब साज सु आनि धराओ ॥४॥ संत साधु को बैठक दीजौ । यथा शक्ति सन्मान सु कीजो ॥ करि

आरति सतगुरु लौ लाओ । भावभक्ति बहु प्रीति बढाओ ॥५॥
चरण धोइ चरणामृत लीजो । शरधा सहित सुपूजन कीजो ॥
बिनु शरधा नहिं आरति कीजे । अनशरधा तहँ काल भनीजे ॥
६ ॥ अनशरधा अगुवानी जहँवाँ । काल बसे नहिं सतगुरु तहँवाँ ॥
शरधा प्रेम बसे जेहि ठाऊँ । सोई जानो सतगुरु गाऊँ ॥ ७ ॥

कहैं कवीर धर्मनि सुनो, शरधाको व्यवहार ।
विनु शरधा नहिं पाइये, सत्त लोक निज द्वार ॥ २ ॥

शरधा ते सतगुरु सन्माने । यथाशक्ति द्रव्य लेइ आने ॥
नाना वासन वस्त्र विधाना । सोना रूपा बहुविधि नाना ॥ १ ॥
कपट छोडि शक्ति निज देखे । परमार्थ स्वार्थ बहुविधि पेखे ॥
गुरु पूजा संतन सनमाना । पहिलि विधि आरति कर जाना ॥२॥
नारि पुरुष सबहीं इकठाई । ले नरियर सब सन्मुख आई ॥ सह
मरजाद सु सीस चढावे । सतगुरु ध्यान मगन ह्वै जावे ॥ ३ ॥
सतगुरु आज्ञा देइ चढाई । इक टक दृष्टि गुरु पहँ लाई ॥ मोरत
नरियर बास उडावे । जमका पला तुरत छुट जावे ॥४॥ साँचा
सतगुरु साँचा चेला । साँचहिं साँच भया इक मेला ॥ घटका
परिचय सतगुरु देवे । देही देह परख कर लेवे ॥५॥ दूजा मेटि
एक लौ लावे । देखत काल तुरत मरिजावे ॥ काल दयाल को
जाने भेवा । जो सतगुरु सोई निज देवा ॥ ६ ॥ पूजा दूजा
काल पसारा । बिना एक नहिं होय उबारा ॥ चौका आरति
भेद बतावे । छाडि अनेक एक लौ लावे ॥ ॥ ७ ॥

कह कवीर धर्मनि सुनो, यह चौका बिस्तार ।
गुरु कृपासे छूटई, ततछन काल पसार ॥ ३ ॥

पान प्रसाद गुरु ते पाई । सह परिवार भक्ति चित लाई ॥
आरति ज्योति घरे घर फेरे । कंटक काल सबहिं खदेरे ॥ १ ॥

पुनि सतगुरु सह संतन बैठारे। नाना भाँति करे जेवनारे॥ महा-
प्रसाद पुनि संतन लीजे। युग बन्ध मिलि सो सेवा कीजे॥२॥
बिनु सेवा नहिं जीव उबारा। ताते तन मन संतन वारा॥ तनसे
सेव करै बहु भांती। मनसे त्यागे भेद विजाती॥३॥ गुरू संत
सब इक सम जाने। माने वचन कवीर परमाने॥ कहे कवीर
हम साधु सरूपा। हमहीं गुरु हंसन कर भूपा॥४॥ मोमें गुरुमें
अरु संतन भाई। रंचक भेद न जाने कोई॥ भेद करे सो भवमें
डूबे। जमकर मार पडे सो खावे॥ ५॥ साधु सोई जो सीधा
चाले। है निर्पच्छ सत्य प्रतिपाले॥ संत सोई जो सत मत जाने।
काल दिशा को नाहिं परमाने॥६॥ गुरु सोई जो सत परखावे।
असत छुडाई लोक पठावे॥ सो संत गुरु भेद नहिं भाई।
साधु स्वरूप हमहीं निरमाई॥ ७॥

धर्मदास तुम पूछिया, चौका बिधि विस्तार।
सो मैं तुमसे भाषिया, अब का करहु विचार॥ ४॥

सुनत बचन धर्मनि निज बोले। अस संशय मम हिय महँ डोले॥
कलऊ जीव रंक बहु होई। इतना साज न साजे सोई॥ १॥
ताकर निरणय कहिये स्वामी। किहिं विधि तरे जीव अनुगामी॥
सकलो जीव तुम्हारे देवा। कैसे कहौं करै सब सेवा॥ २॥
धर्मनि सुनौ रंक परभाऊ। छठैं मास आरति लौ लाऊ॥ छठे
मास नहिं आरति भेवा। वरष माँहिं गुरु चौका सेवा॥ ३॥
सम्वत माहिं चूक जो जायी। तबै संत साकट ठहरायी॥ सम्वत
माहिं आरती करई। ताकर जीव धोख नहिं परई॥ ४॥ नाम
कवीर जपे लौ लाई। तुमरो नाम कहै गोहराई॥ तुमरी चाल
चले धर्मदासू। संतहिं सेवे भक्ति पिपासू॥ ५॥ व्रत अखंडित
गुरु पद गहई। गुरु पद प्रीति होई निस्तरई॥ ऐसी धारन रंक

परभाऊ। गुरु प्रतापसे लोक सिधाऊ॥ ६॥ समरथ राखि करै जो चोरी। काल निरंजन तहँ डारै डोरी॥ कूर कपटकी राह चलावे। सतका मारग सो नहिं पावे ॥ ७ ॥

यथा शक्ति सबही करै, छोडि कपट व्यवहार ।
शक्ति राखि चोरी करै, बूडे काली धार ॥ ५ ॥

सुनहु धर्मनि जगत व्यवहारा। सत्यनाम सो विरक्ति अपारा॥ देखि बडाई भगतिहिं लागे। माया मोह हियेमें पागे॥ गुरु सेवा ते जीव चुरावे। समधि सोर महँ दरब लुटावे॥ देखि साधु दुआर निज भाई। नहिं समझे निज भाग्य बडाई ॥ २ ॥ आय परेकी सेवा करई। भाव भक्ति नहीं मन धरई ॥ विवाह सराधमें लाख लुटावे। संत देइ मनही पछतावे ॥ ३ ॥ बहु विधि नाना बिषय कमावे। देत दान हिये दुख पावे॥ ऐसी विधि संसार भुलाना। सो नहिं समझे निज कल्याना ॥ ४ ॥ ताते तुमको कहत हम भाई। योग देख करहु चित लाई॥ बिनु साधन नहिं जीव उबारा। विनु अधिकार न साधन सारा॥ जहँ अधिकार तहाँ सब होवे। भाव भक्तिसो ज्ञान सँजोवे॥ ५॥ विनु अधिकार न कोई माने। गजमुकता घोंघा करि जाने ॥ जहँ अधिकार तहाँ उपदेशा। थोडहु करे बहुत परवेशा ॥ ६ ॥ चौका आरति सब कर लेखा। जस अधिकारी तसहिं विवेखा ॥ चौका आरति समझे जोई। संशय मिटै काल मिट सोई ॥ ७ ॥

संशय काल शरीरमें, विषम काल है दूर ।
सतगुरुकी संधी मिलै, जारि करै सब धूर ॥ ६ ॥

संशय मिटै योगके धारे। धारि शब्द सब योग सँवारे॥ जैसे मन संसारहीं राता। काल बान जस बना विधाता ॥ १ ॥ ऐसे गुरु शब्दहिं मनराते। गुरु वाणी छोरे काल कलाते॥ बंदीछोर

गुरू कर नाऊँ। शब्दहि भेद मैं तोहि बताऊँ ॥ २ ॥ विना योग न मिटै जिव फेरा। सतगुरु शब्द कहै जिव टेरा ॥ गुरुके शब्द सुरति जब जूटे। तबहीं काल ठगौरी छूटे ॥ ३ ॥ संशय मिटै योगके धारे। धर्मनि तुम मन करो विचारे ॥ शब्द सुरति योग यह जानो। गुरुके शब्द सुरत ठहरानो ॥४॥ गुरू शब्द निश्चय जब होई। छूटे काल जाल निज सोई ॥ संशयको खण्डन यह योगा। ता सम आहि न दूसर भोगा ॥५॥ जीवन काज जाहिते होई। सोई जतन करो सब कोई ॥ सब जिव होंहि न एक समाना। कर्महि योग अधिकार पिछाना ॥ ६ ॥ जस अधिकार जाहि कर होई। तैसे माने शब्द बिलोई ॥ चौका आरति सबहिं बतावे। अपन पराइत भेद लखावे ॥ ७ ॥

चौका आरति जो लखे, ज्ञानी मूढ प्रवीन।
सतगुरु भेद बतावई, पावे अम्मर चीन ॥ ७ ॥

चौका आरति भेद बतावे। जेहि समझे तेहि लोक पठावे ॥ जैसी रचना लोक विचारा। घटके भीतर सबहिं सँवारा ॥ १ ॥ घटका भेद गुरू पहिचाने। चौका आरति सबहिं विधाने ॥ चौका आरति जो कोइ बूझे। काल दयाल सब तेहि सूझे ॥ २ ॥ ज्ञान कर्म औ योग विचारा। चौका महँ सबही विस्तारा ॥ सत्य लोक औ काल पसारा। सबहीं भेद किया निरुआरा ॥ ३ ॥ भक्ति उपासन निज कर राखा। जेहि समझे फल मुक्ति चाखा ॥ अगम अलख सब गुरु समझावे। सुरति निरति ते दर्शन पावे ॥ ४ ॥ शब्द परतीत देख सत लोका। गुरुकी दया मिटै सब धोखा ॥ एके सुरति निरति जो धारे। गुरु परतापसो लोक सिधारे ॥५॥ यहि निहतत्व मता जो धारे। सुरति निरति सो दीप निहारे ॥ घटमें चौका कर उजियारा। पल पल निरखे सतगुरु द्वारा ॥६॥

जाते सहज योग नहिं होई। सो तो आरति साजे लोई॥ संतभेष जो कोइ काछे। ताको देहु योग मति आछे ॥ ७ ॥

गेही लीने आरती, संत सोई सो योग।
ईडा पिंगला साधिके, मुख मन राधे भोग ॥ ८ ॥

ज्ञानसागरका प्रमाण ॥

जैसे ग्रेहीके मन नेहा। तैसे साधे जो सनेहा॥ आसन दृढ पर नारि न जावै ॥ ग्रेही रहै न भेष बनावै ॥ १ ॥ देखी देखा भेष बनावै। राधे जोग तो शोभा पावै॥ भेषै धरे सूरता चाही। कादर भेषकी हाँसी आही ॥२॥ जाते नहिं मन सूरमा होई। तातें गिरही थाप्यो सोई ॥ गिरहीमें छल मता अपारा। तातें सत्य भक्ति चित धारा ॥ ३ ॥ सेवा संत करे जो कोई। आरति भक्ति महाफल होई ॥ धन्य संत जो आरति साजा। काल जँजाल गृहते भाजा ॥४॥ आरति समान भक्ति नहीं दूजा। सब ते भली संतकी पूजा॥ चरणामृत संतनको लेई। सुरति निरति चरणन चित देई ॥५॥ विना योग नहिं होय उबारा। कै नेवर कै दीपक बारा॥ तातैं सहज योग मैं भाखा। शिरनी पान महातम राखा ॥ ६ ॥ आरति तो नानाविधि साजै। पान मिष्टान भक्त भय भाजे ॥ जो कछु आहि जोगकर भाऊ। सब साखी आरति परभाऊ॥७॥

संत आरती जोग मत, करहिं गगनमें बास।
ग्रेही जोग न जानहीं, कर आरति परकास ॥ ९ ॥

वह देही यह ग्रेही व्यवहारा। काया संयम दे अनुसारा ॥ निसदिन सुरति रु निरति बिचारा। तातैं मंदिर सेत सँवारा॥१॥ पाचौं तत्त्व तीन गुन साधे। ताते मन बिच आरति राधे॥ इंगला पिंगला सुष्मनि वासा। मन वच कर्म आरति प्रकासा ॥ २ ॥ बांधै मूल नामको साधै। दुबिधा मिटै एक अवराधै॥ एके घर

कर प्रकृति पचीसा। सोई पुरुष आरतिमें दीसा ॥३॥ उघरै संपुट गुरुकी दाया। नरिअरको देखै परभाया ॥ तत्त मूल नरिअरमो जाना। ज्ञानवंत भजि हो निर्बाना ॥ ४ ॥ अनहद बाजे त्रिकुटी ताला। तातें भक्ति जो होय रिसाला ॥ बिन करताल पखावज बाजे। अनहद धुन निसदिन तहँ गाजे ॥ ५ ॥ अष्ट दल कमल फूल जो फूला। तातें सुमिरन किय समतूला ॥ सुन अति जोग छतीसौं रागा। तातें भांति भांति पद जागा ॥६॥ जो करतमें देह बिसारै। यहि संसारमें काज सम्हारै॥ योग समाधि छूटत नहिं देखा। आरति मेटै कर्म विशेषा ॥ ७ ॥

उलट पवन जब आवै, त्रिकुटी भेंट सु होय।
गुरुकी दया परगट हो, संपुट उघरै सोय ॥ १० ॥

प्रतिदिन जो समाधि मन लावै। तातें सदा आरति गावै ॥ जोग हीन तत्व नहिं लहई। तातें पान बढौना चहई ॥१॥ देखो मन बहु रंग अपारा। तातें पहुप सेज बिस्तारा ॥ देह समाधि गंध बहु होई। साधे अग्र प्रबल है सोई ॥ २ ॥ चौका सेत हंस भल छाजे। सेत सिंघासन छत्र बिराजे ॥ मन औ पवन आहिं दुइ धारा। तातें पवन अनिल घृत जारा ॥३॥ जोग जुगत बिन संग न होई। पाले पवन पाहन है सोई ॥ गगन बाव योग अमीरस चाखा। तातें महाप्रसाद जो भाषा ॥ धन्य अंकूर जीव है सोई। परिचय योग करै तन जोई ॥४॥ गरजै जो जायी। दीप शिखर द्वारे ठहरायी ॥५॥ लावै योग न होय आरती करई। सोई जीव भवसागर तरई ॥ मूल नाम और सब शाखा। पुहुप जोग महातम राखा ॥६॥ जोगी दृष्टि भाव बहु करई। घट दृष्टिमें सुमिरन अनुसरई ॥ मूल नाम मुक्ति फल योगा। सो नरिअर मिष्टानक भोगा ॥७॥

परचै में मन बांधे, करे जोग मन बास।
संतन आरति जोग मन, दीपक करे प्रकास ॥ ११ ॥

देह विसार जोग फल चाखा। मन बच कर्म नरिअर सत भाखा॥ उज्जल मंदिर सेत सम्हारा। सेतहिं रूप साज्यो पनवारा॥ १॥ मुक्ति पदारथ अबेधा हीरा। तेहि पाये कोई गहिर गंभीरा॥ चंदन काष्ठ सिंहासन चाही। सुमिरण नाम इकोतर आही ॥२॥ उत्तम पान बडौना चाही। टूटा भाँगा नाहि निवाही ॥ नरियर चहिये निरमल भाई। महा मुक्ति फल होय सदाई ॥ ३ ॥ और कछू बात संपुट आही। काचा जीव सुनि बिचले ताही ॥ ताते सहज बतायो भाऊ। परिचय जीवहिं परम सुभाऊ ॥४॥ अथवा जो इतना नहिं होई। सहज आरती थापो सोई॥ सवा सेर आनो मिष्टाना। तत्त सवासौ आनौ पाना ॥५॥ प्रति पूनौं जो आरति करई। सोई जीव भवसागर तरई ॥

धर्मदास बचन।

हे प्रभु पूनोंका अधिकारा। दया करौ दुख भंजन हारा॥६॥

साहिब कबीर बचन।

तुम कहँ दीन्ह यही दिन पाना। तासौं पूनौं आरति ठाना॥ अथवा सबई अर्थ नहिं जाना। दोई आरति थाप प्रमाना॥ ७॥

योग आरती फल बडा, सत्त बचन परकास।
दुबिधा निश्चय मेटई, सत्तलोक होय बास ॥ १२ ॥

गुरुका कर्तव्य ॥

सत्तभाव देखहु मति धीरा। लगन साधि देऊ निज बीरा॥१॥ बिना लगन करो मत शिक्षा। जोती खेती आदि भल दिक्षा ॥ उस्सर बीज डार जो कोई। निरफल खेत किसानी होई॥ २॥ उस्सर बीजका ऐसा भाऊ। बोया बीज सो वृथा जाऊ॥ काँचे जिव कहँ वस्तु न दीजे। परिचय जीव तात गहि लीजे ॥ ३ ॥

ता कहँ कैसी करइ जमराजा । देह धरै तो गुरु कहँ लाजा ॥ बिना लगन मगन भयौ जानी । ऐसो अहै शिष्य सहिदानी ॥ ४ ॥ पूरा जब शिष्य जो होई । गुरु देव भेद बतावे सोई ॥ अथवा जो गुरु अंतर राखै । गुरु में धोख संतमें भाखै ॥५॥ लीक करी औ पंथ बतावै । शोभा अधिक गुरू सो पावै ॥ जस बाना तस होवै करनी । ता गुरुके सम और न बरनी ॥ ६ ॥ सदा लीन नाम जो भाखै । पांच आत्मा अनुरुचि राखै ॥ पांचमें करे पच्चीसों नारी । जे बस किये योग अधिकारी ॥ ७ ॥

जो ऐसी बनि आवै, औरो बनिहै सार ।
तातैं ग्रेही थापिया, कढिहारी संसार ॥ १२ ॥

मरत तजो जस कांचरि साँपा । तातैं सबको मेटब दापा ॥ करो शिष्य जो यहि विधि कोई । पुरइनि पान रहै जनु सोई ॥ १ ॥

गुरुवाके लक्षण ।

आप स्वारथी भेष बनावै । मनकी दशा ताहि चित लावै ॥ तृष्णा युक्त करै गुरुवाई । जमसों बाँचे कौन उपाई ॥२॥ निश्चय मानो शब्द हमारा । पर द्रोही कैसा कडिहारा ॥ आप अबूझ औरन समझावै । साखि रमैनी झगरो लावे ॥ ३ ॥ सेवा साधु नहीं बनि आवे । तृष्णा कारण भेष बनावे ॥ अहै न सींहँ स्वान सियारा । परचें बिना कैसे कडिहारा ॥४॥ पर नारी औ मन्थन कर्मा । यह तो भेद काल को मर्मा ॥

गुरुवाको सिखावन ।

मारइ मनसा होइ सो होई । नातर नारि करे पुनि लोई ॥५॥ गिरही माहिं मुक्ति कर भेवा । गुरुकी भक्ति साधुकी सेवा ॥ जोपे सहज भाव कडिहारा । शिष्य कियेका का अधिकारा ॥ ६ ॥ साँचा हो गुरु भगती साधे । साधु संतसो प्रीति अराधे ॥ साधु संत संग रहनी आवे । विन रहनी नहिं जीव तरावे ॥ ७ ॥

साधु संतकी अधिक महिमा, रहनि कुण्ड नहाइये ।
काम क्रोध विकार परिहरि, बहुरि न भवजल आइये ॥१४॥

ग्रेही साधु मुक्ति फल बासा। सो सब बचन कहौ परकासा॥ नाम गहै राखे सत करमा । गहि सुकृत छोडे सब भरमा ॥ १ ॥ मद अरु मांस सदाको त्यागे। जीवदया सब विधि अनुरागे ॥ पाछल चूकको एक उपाऊ। साधु सेवा अरु सवै सतभाऊ॥२॥ करे आरती मन बिच करमा। पर घर तजे जान निज भरमा॥ गिरही माहिं जो रहें उदासा । निश्चय सत्तलोकमें बासा ॥ ३ ॥ नाम पाइ जो अवज्ञा करई। भाव विहीन जग अनुसरई ॥ जो कोइ चूके साधुन सेवा। ताकर फल भाखों कछु भेवा ॥४॥ जाई सो लोक नाम परतापा। तजे देह जिमि कांचरि साँपा॥ देख जाई हंसनक पांती। ता मध्ये अस बैठ अजाती ॥५॥ जाते चूक परे सिवकाई। ताते शोभा हीन लजाई॥ जो कोई याकी करे उछेदा। ताते मैं समझाऊँ भेदा॥६॥ ग्रही तरे सो कौन विशेखा। गुरुको अचरज यौ बड़ देखा॥ गुरू नहीं कोई थहि भवसागर। सतगुरु आप अजरमनि आगर ॥ ७ ॥

ऐसी महिमा प्रकट है, जैसे सिंधुका नीर ।
सरिता सब कडिहार भये, सतगुरु सिंधु कबीर ॥ १५ ॥

जपत आहिं जो नाम हमारा । तातें नाम धरा कड़िहारा ॥ ले कडिहार जिवनका भारा। तेहि न सूझ किमि उतरे पारा॥१॥ सरिता माँहि बारि जो होई। जीव जन्तु सुख पावे सोई॥ सरिता लहै पुण्य परमारथ। सत कडिहारी परस्वारथ॥२॥ अथव नीर अथाह न होई। सहज योग भाखौं पुनि सोई॥ नदीमें सोह सदा जो वारी। ऐसी उत्पति आहि हमारी ॥३॥ प्यासा जाय नदीके पासा। बिन पानी सो जाय पियासा॥ प्यासा पानी नदी न पावै।

जहँ पानी तहँ तृषा बुझावै ॥ ४ ॥ इक जिव ग्रेही आप उबारा। बारि नदी नहिं तस कडिहारा ॥ बांधे अस्त्र करे शुरमाई। तिनके त्रास दुर्जन डरपाई ॥ ५ ॥ काछे रहै शूर का साजा। आय समय कादर होइ भाजा ॥ तेहि विश्वास रहै नहिं कोई। स्वारथ पिंड परे जन सोई ॥ ६ ॥ ता कहँ होइ पुन्य परमारथ। नाम गहे जन्मैं होय स्वारथ ॥ कड़िहार सोइ जो शूरा होई। भाखों ताहि आप सम सोई ॥ ७ ॥

कड़िहारी औ गृही को, कोई ना जाने अंत।
बिन परचै विषमाद है, हरषत परचै संत ॥ १६ ॥

गिरहीका धार्मिक नियम संयम ॥

भाषों संयम संतके भाऊ। अस गेही जो करै उपाऊ ॥ प्रात नेम जो करै अस्नाना। हो प्रफुल्लित कमल बिगसाना ॥ १ ॥ मद रु मांस कहँ त्यागै दोऊ। मिथ्या जीव घात पुनि सोऊ ॥ सत आसन परनिन्दा त्यागी। भली बुरी सैं रहत बिरागी ॥२॥ जाइ तहाँ पर जहँ हितकारी। उचट न परै लह अन्तर भारी ॥ क्षुधावंत हित कारी होई। अति प्रिय जान समोवहि सोई ॥३॥ यहि सम दूसर व्रत नहिं जाना। ते जन पूनौं आरत ठाना ॥ कहौं जान दासातन जोई। भागी जीव पावहिं निज सोई ॥४॥ शिष्य होय जो तन मन वारे। गुरु आज्ञा कबहूँ नहिं हारै॥ गुरु दे शब्द मुक्ति जेहि होई। तेहि समान दूसर नहिं कोई॥ ५ ॥ गुरू समान जानु नहिं आना। साधू गुरू एक सम जाना ॥ गुरुमत पावे गुरुसम होई। भेद भाव तहाँ नहीं कोई॥६॥ सत सतलोक गुरू मत जानो। भेद भाव कछुऔ मति आनो ॥ तहां न नारि पुरुष कर भाऊ। हंसहिं हंस एक सदभाऊ ॥ ७ ॥

साखी-तन मन गुरुको दीजिये, मुक्ति पदारथ जान।
गुरुकी सेवा मुक्ति फल, यह गेही सहिदान ॥१७॥

चौका आरती पठन फल।

चौका आरति माहात्म्य यह, पढै सुनै जो कोय। मोक्ष मुक्ति फल पावई, युगल लोक सुख होय॥१॥ चौका आरति माहात्म्य, संछेप कियो बखान। एकहि दिनमें लिखनभौ, क्षमियो संतसुजान॥२॥ अभिलाषा तो बड अहै, करूं विस्तार महान। नहिं अवसर नहिं स्थान है, सूच्छम कियो बयान॥ ३ ॥ धर्म कबीर दर्शन विषय, लिखिहौं कछु विस्तार। स्पष्ट वर्णन मद्य विषै, निरखि मिलै सुखसार॥४॥ युगलानन्द है दास निज, संत साधु गुरु केर। विद्वद्वरसे विनति अस, क्षमा करो निज हेर॥ ५ ॥

इति कबीराश्रमाचार्य्य स्वामी श्रीयुगलानन्द विहारी द्वारा संगृहित संयोजित सम्पादित चौका आरती महात्म्य सम्पूर्ण शुभम्.

सत्यनाम।

कबीरपंथके धार्मिक सामान्य एकादश नियम.

१-अनादि, अनूप, अजर, अमर, अभय, सच्चिदानंदस्वरूप, निर्मल, निर्विकार, निराकार, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान् जो महानप्रभु परमात्मा है, उसके अतिरिक्त और किसी देवी देवताकी उपासना न करनी चाहिये.

२-आचार्य्य, गुरु, महात्मा संत ये तीनों उस परमात्माकी साकार मूर्ति हैं, इन्हींकी तन, मन, धनसे सेवा सत्कार द्वारा, उस निराकार महाप्रभु की उपासना करनी योग्य है.

३-गुरुके वचन और अपने धर्मग्रन्थोंमें अटल और पूर्ण श्रद्धा रखकर उनकी शिक्षाके अनुसार चलना चाहिये.

४-संपूर्ण संसारके प्राणीमात्रको निज आत्मा जानकर दया-भावसे, सदा हृदयमें सबका हित चिन्तन करना चाहिये.

५-निर्भयतापूर्वक अन्तःकरणमें सदा शुभ संकल्प और सदाचारका सेवन करना चाहिये; जिससे शरीर, मन और आत्मा पवित्र होकर बलिष्ठ हो जाय.

६–मांस मदिरा, व्यभिचार, चोरी, हिंसा, द्यूत, (जुवा) मिथ्या और पिशुनता (चुगली) इन अष्ट महा दोषोंको सर्वथा त्यागना चाहिये.

७–परीक्षापूर्वक सत्यकी धारणा और असत्यके परित्याग करनेमें कदापि विलम्ब न करना चाहिये.

८–विनयभावसे अत्यन्त प्रेम पूर्वक मनुष्यमात्रको सत्य-मार्गमें चलनेका सदा उपदेश देना चाहिये.

९–नित्यप्रति नियमपूर्वक स्वाध्याय द्वारा विद्या वृद्धि करनेमें कदापि आलस्य न करना चाहिये.

१०–तिलक कंठी सहित अपना वेष सभ्य और पवित्र रखना चाहिये.

११–स्वधर्म्म तथा अपनी आत्माके विपरीत कभी कोई काम न करना चाहिये.

तीसरे खण्डके विषयमें सूचना–

इस ग्रन्थके प्रथम खण्डमें संज्ञासुमिरनका विषय आया है, उसके दो विभाग हुए हैं–१ सर्व साधारण कबीर पन्थियोंका संज्ञासुमिरण, २ बुरहानपुरी संज्ञासुमिरण ॥

दूसरे खण्डमें–जहांतक मिला है स्तोत्रोंका संग्रह है।

तीसरे खण्डमें–चौका आरती विधान चार विभागमें दिया है। १ विभागमें छत्तीस गढी चौका आरती का विधान, २ में सर्वदेशी चौकाविधान रोसडा कबीर मन्दिरके पाठसे दिया है, ३ रे चौकामें गानेके विशेष राग रागनियोंसे संयुक्त हैं, ४ में आरती चौका माहात्म्य है ॥

इस खण्डमें दूसरा विभाग छपनेसे रह गया है उसे पाठक गण पृष्ठ ४२२ से दूसरे खण्डका तीसरा विभाग आरंभ समझलें।

इसके आगे शब्दकुंजी मूल रमैनीसे चौथा खण्ड प्रारंभ.

भवदीय–श्री युगलानन्द बिहारी.

मूल रमैनी अर्थात शब्दकुंजी प्रारंभ।

(अक्षर खण्डकी रमैनी ।)

प्रथम शब्द हैं शुन्याकार। परा अव्यक्त[1] सो कहै विचार ॥ अंतःकरण उदय जब होय । पश्यंति[2] अर्धमात्रा सोय ॥ स्वरसो[3] कंठ मध्यमा[4] जान। चौतिस अक्षर मुख[5] अस्थान॥ अनवनि[6] वानी तेहिके मांहि। बिन जाने नर भटका खाहिं॥ बानी अक्षर स्वर समुदाय[7] । अर्ध[8] पश्यंति जात नशाय ॥ शून्याकार सो प्रथमा रहै। अक्षर ब्रह्म सनातन कहै ॥ निर्वृति[9] प्रवृति[10] है शब्दाकार। प्रणव[11] जाने इहै बिचार ॥

साखी-अकुलाहट[12]के शब्द जो, भई चार सो भेष ।
बहु बानी बहु रूपकै, पृथक पृथक सब देश ॥ १ ॥

र०-अनवनि बानी चार प्रकार। काल संधि झांई औ सार॥ हेतु शब्द बूझिये जोय। जानिय यथारथ[13] द्वारा सोय ॥ भ्रमिक[14] झांइ संधिक औ काल। सार शब्द काटे भ्रमजाल॥ द्वारा[15] चार अर्थ परमान। पदारथ[16] व्यंगारथ[17] पहिचान॥ भावारथ[18] ध्वन्यारथ[19] चार। द्वारा शब्द कोइ लखे विचार ॥ परा[20] पराइति मुखसो जान। मोरे सोरह कला निदान ॥

विन जाने सोरह कला, शब्दी शब्द कौआयें[21] ।
शब्द सुधार पहिचानिये, कौन कहा बौआय ॥ २ ॥

अक्षर वेद पुराण बखान। धरम करम तीरथ अनुमान॥ अक्षर पूजा सेवा जाप। और महातम जेते थाप॥ यही कहावत अक्षर काल। जाए गडी उर होयके भौंल[22] ॥ ओहं सोहं आतमराम।

---

१ इसका स्थान नाभी ।। २ इसका स्थान हृदय ।। ३ सोलह स्वर अ आ इत्यादि. ४ इसका स्थान कण्ठ. ५ व्यंजन. ६ नाना प्रकारकी. ७ एकट्ठी. ८ पश्यन्ति होय फिर परा अवस्थाको प्राप्त होता है. ९ लय. १० उत्पत्ति. ११ ओंकार. १२ उविआहठ. १३ सच्चा,. १४ भरमाने. १५ मार्ग, रस्ता. १६ पद, अर्थ, शब्दका जो अर्थ, शब्दार्थ. १७ व्यंग, अर्थ, व्यंग भावसे जो कहा जावे. १८ मतलब, आशयवाला जो अर्थ. १९ ध्वनिमात्र. २० परा और अपरा दो विद्या कोई शब्द परा विद्याको वर्णन करता है कोई अपराको २१ भटकता है. २२ तीर.

माया मंत्रादिक सब काम ॥ ये सब अक्षर संधिक है। जेहिमाँ निशिवासर जिव रहै ॥ निरगुण अलख अकह निर्वांण। मनबुधि इन्द्रिय जाय न जान ॥ विधि निशेध जहँ बँनत न दोय। कहैं कवीर पद झांई सोय ॥

प्रथमें झांई झाँकते, पैठा संधिक काल।
पुनि झांईकी झांई रही, गुरु विन सके को टाल ॥ ३ ॥

प्रथमही संभव[२४] शब्द अमान। शब्दी[२५] शब्द कियो अनुमान ॥ मान महातम मान भुलान। मानत मानत बावन ठान ॥ फेरा फिरत भयो भ्रमजाल। देहादिक जग भये विशाल ॥ देह भई ते देहिक होय। जगत भई ते कर्ता कोय ॥ कर्ता कारण[२६] कर्महि लाग। घर घर लोग कियो अनुराग ॥ [२७]छौ दरशन वर्णाश्रमचार[२८]। नौ[२९] छौ भये पाखंड बिकार ॥ कोई त्यागी[३१] अनुरागी[३२] कोय। विधि निषेधमा बँधिया दोय ॥ कल्पेउ ग्रंथ पुराण अनेक। भरमि रहै सब बिना विवेक ॥

भरमि रहा सब शब्दमें, शबदी शब्द न जान।
गुरुकृपा निज परखवल, परखो धोखा ज्ञान ॥ ४ ॥

धोखा प्रथम परखिये भाई। नाम जाति कुल कर्म बड़ाई ॥ क्षिति[३३] जल पावक[३४] मरुत[३५] अकाश[३६]। तामहँ पंच विषय परकाश ॥ तत्व पांचमें श्वासासार। प्राण अपान समान उदार[३७] ॥ और ब्यान बावन संचार। निज निज थल[३८] निज कारजकार ॥ इंगला पिंगला

---

२३ जगत्को निषेधकर और ब्रह्मका. प्रतिपादन करना यह है स्त्री जिसकी. २४ होता भया. २५ शब्दका मालिक शब्द कहने वाला. २६ हेतु २७ योगी जंगम १ सेवडा ४ संन्यासी. ५ दर्वेश। ६ छठा कहिये ब्राह्मण छः घर छ' है उपदेश. २८ ब्राह्मण १ क्षत्री. २ वैश्य, ३ शूद्र ४ वर्ण और ब्रह्मचर्य्य १ गृहस्थ २ बानप्रस्थ ३ संन्यास ४ आश्रम. (२९–(९६) छ्यानवे पाखण्ड. ३१ विरक्त. ३२ गृहस्थ. ३३ पृथ्वी. ३४ अग्नि. ३५ वायु. ३६ शब्द आकाशका विषय, स्पर्श वायुका, रूप अग्निका, रस जलका, गन्ध पृथ्वीका ३७ उदात्त. ३८ स्थान.

औ सुखमनी । इकइस सहस्र छौसत सोगनी ॥ निगम[३९] अँगम[४०] सो सदा बवावे । श्वासासार सरोदा गावे ॥

धोखा अँधेरी[४१] पायके, या विधि भया शरीर ।
कल्पेउ करता एक पुनि, बढी कर्मकी पीर[४२] ॥ ५ ॥

योग जप तप ध्यान अलेख । तीरथ फिरत धरे बहु भेख ॥ योगी जंगम सिद्ध उदास । घरको त्यागि फिरे बनबास ॥ कन्द[४३] मूँल[४४] फँल[४५] करत अहार । कोइ कोइ जटा धरे शिरभार ॥ मन मलीन मुख लाये धूर । आगे पीछे अग्नि औ सूँर[४६] ॥ नग्न होय नर खोँरि[४७] न फिरे । पीतर पाथरमें शिर धरे ॥

काल शब्दके शोरते, हेर[४८] परी संसार ।
देखा देखी भागिया, कोई न करे विचार ॥ ६ ॥

जब पुँनि[४९] आय खसी यह बाँनि[५०] । तब पुनि चित्तमा कियो अनुमानि ॥ महीं ब्रह्म कर्त्ता जग केर । परे सो जाल जगतके फेर ॥ पाँचँ[५१] तीन गुण जग उपजाया । सो माया मैं ब्रह्मनिकाया ॥ उपजे खपे जग विस्तारा । है साक्षी सब जाननिहारा ॥ मो कहँ जानि सके नहिं कोय । जोपै विधि हरिशंकर होय ॥ अस सन्धिककी परी विकार । विनु गुरु कृपा न होय उबार ॥ मगन ब्रह्म संन्धिकके ज्ञान । अस जानि अब भया भ्रमहान ॥

संधी[५२] शब्द है भ्रममा, भूलि रहा किँत[५३] लोग ।
परखेउ धोखा भेवँ[५४] नहिं, अंत होत बड़ सोग[५५] ॥ ७ ॥

जो कोइ संधिक धोखा जान । सो पुनि उलटि कियो अनुमान ॥ मन बुधि इन्द्रिय जाय न जान । निरबँचनी[५६] सो सदा अमान ॥

---

३९ वेद. ४० शास्त्र. ४१ अविद्या अज्ञानता. ४२ दुख. ४३ जो पृथ्वीके नीचे है जैसे आलू शकरकंद केसउर फर इत्यादि. ४४ जो मूलसे होता है अर्थात् काठ फोड कर जो निकलता है जैसे कटहल, गूलर इत्यादि. ४५ जो. फूलसे पैदा होता है जैसे आम, (केरी) अमरूद (आमफल) इत्यादि. ४६ सूर्य. ४७ गलीगली ४८ शोर हल्ला. ४९ फिर. ५० शब्द. ५१ पांचतत्व ॥ ५२ देखो रमैनी ३ । १० इत्यादि. ५३ कहां. ५४ भेद. ५५ शोकदुख. ५६ कहनेमें जो नहीं आवे.

अकल[५७] अनीह[५८] अबाध[५९] अभेद[६०]। नेति नेति के गावे वेद ॥ सोहं[६१]वृत्ति अखण्डित रहै। एक दोय अब को तहँ कहै ॥ जानि परी तब नित्या[६२]कार। झांई सो भ्रम महा बेकार ॥

संभव शब्द अमान जो, झांई प्रथम विकार।
परखेउ धोखा भेव निज, गुरुकी दया उवार ॥ ८ ॥

पहिले एक शब्द समुदाय। बावन रूप धरे छितराय॥ इच्छा नारि धरे तेहि भेश। ताते ब्रह्मा विष्णु महेश॥ चारिउ उरपुर बावन जागे। पंच अठारह कंठहिं लागे॥ तालू पंच शून्य सो आय। दश रसनाके पूत कहाय॥ पांच अधर अधरहीमा रहै। शुन्ने कंठ समोधे वहै॥ ओठ कंठ ले प्रगटे ठौर। बोलन लागे औरके और ॥

एक शब्द समुदाय जो, जामें चार प्रकार।
कालशब्द संधिशब्द, झांई औ पुनी सार ॥ ९ ॥

पांच[६३] ती[६४]नि नौ[६५] छौ[६६] आचार[६७]। और अठारह[६८] करे पुकार॥ कर्म धर्म तीरथके भाव। ई सब काल शब्दके दाव ॥ सोहं आत्मा ब्रह्म लखाव। तत्व मसी मृत्युंजय[६९] भाव ॥ पचकोश[७०] नवकोश[७१] बखान। सत्य झूठमें करे अनुमान॥ ईश्वर साक्षी जाननिहार। ये सब संधिक कहै विचार॥ कारज कारण जहां न होय। मिथ्याको मिथ्या कहि सोय ॥ बैन[७२] चैन नहिं मौन रहाय। ई सब झांई

---

५७ कला अंश रहित. ५८ इच्छा रहित. ५९ बाद रहित. ६० भेव रहित. ६१ लगन ख्याल, सुरत. ६२ सत्य रूप. ६३ पांच तत्व ६४ तीनगुण. ६५ नौ व्याकरण. ६६ छः शास्त्र. ६७ चार वेद ऋगवेद १ यजुर्वेद २ सामवेद ३ अथर्ववेद. ६८ अठारह पुराण. १ मारकण्डेय पुराण २ मत्स्य पुराण. ३ भागवत. ४ भविष्य पुराण ५ ब्रह्मा वैवर्तक. ६ ब्रह्माण्ड पुराण. ७ ब्रह्मपुराण. ८ विष्णुपुराण. ९, शिवपुराण १० वाराहपुराण. ११ वायुपुराण १२ अग्निपुराण १३ नारद पुराण. १४ पद्म पुराण १५ कूर्मपुराण. १६ स्कन्द पुराण. १७ लिंग पुराण १८ गरुड पुराण. ६९ नाम वायु ७० अन्नमय प्राणमय, मनोमय, ज्ञानमय, विज्ञानमय (आनंदमय) ७१ उपरोक्त ५ और शब्दमय. १ प्रकाशमय. २ आकाशमय. ३ आनंदमय. ४ देखो बीजक के ५० वीं साखीकी टीका पृष्ठ ३६१ और कबीर मंशूर बडा पृष्ठ ६९६. ७२ वाणी.

दीन भुलाय ॥ कोई काहूका कहा न मान । जो जेहि भावे तहँ अरुँझान ॥ परे जीव तेहि यमकी धार । जौंलौ पावे शब्द न सार ॥ जीव दुँसह दुख देखि दयाल । तब प्रेरी प्रभु परख रिसाल ॥

परखाये प्रभु एक को, जामें चार प्रकार ।
काल संधि झांई लखी, लखी शँब्द मत सार ॥ १० ॥

प्रथमे एक शब्द आरूढ । तेहि तकि कर्म करे बहु मूढ ॥ ब्रह्मभरम होय सब (जग) में पैठा । निरमल होय फिरे बहु ऐंठा ॥ भरम सनातन गावे पांचँ । अटकि रहै नर भवकी खाँच ॥ आगे पीछे दहिने बांये । भरम रहा है चहुं दिशि छाये ॥ उठी भर्म नर फिरै उदास । घरको त्यागि कियो वनवास ॥ भरम बढी शिर केश बढावे । तके गगन कोइ बांह उठावे ॥ दे तारी कर नाशा गहै । भरमिक गुरू बतावे लहै ॥ भरम बढो अरु घूमन लागे । विनु गुरु पारख कहु को जागे ॥

कहैं कवीर पुकारके, गहहु शरण तजि मान ।
परखाये गुरू भरमको, वानि खानि सहिदान ॥ ११ ॥

भरम जीव परमातम माया । भरम देह औ भरम निकाँया ॥ अनहद नाद औ ज्योति प्रकास । आदि अंतलौ भरमहिं भास ॥ इत उत करे भरम निरमाँन । भरम मान औ भरम अमान ॥ कोहं जगत कहांसे भया । ई सब भरम अती निरमया ॥ प्रलँय चारि भ्रम पुण्य औ पाप । मन्त्र जाप पूजा भ्रम थाप ॥

❀बाट बाट सब भर्म है, माया रची बनाय ।
भेद बिना भरमें सकल, गुरु बिन कहां लखाय ॥ १२ ॥

❀बाप पूत दोउ भरम है, माया रची बनाय ।
भेद बिना भरमें सकल, गुरु बिन कहाँ लखाय ॥

७३ फंस गया. ७४ कठिन. ७५ शब्द. ७६ पांचतत्त्व ७७ कीचड पंक कांदो. ७८ निराकार ७९ स्थित. ८० नित्य प्रलय १ नैमित्तिक प्रलय २ महाप्रलय ३ आत्यंतिक प्रलय ४।

बाप पूत दोऊ भरम, आँधकोश नव पांच ।
बिन गुरु भरम न छूटे, कैसे आवै सांच ॥ १३ ॥

कलमा बांग निमाज गुजारै । भरम भई अल्लाह पुकारै ॥ अजब भरम एक भई तमासा । ला मुकाम बेचून निबासा ॥ बेनमू नवह सबके पारा । आखिर ताको करे दिदारा ॥ रगडे नाक मसजिद अचेत । निंदे बुतपरस्त तेहि हेत ॥ बावन तीसबरन निरमान । हिन्दू तुरक दोऊ भरमान ॥

भरमि रहे सब भरम महँ, हिन्दू तुरुक बखान ।
कहहिं कबीर पुकारकै, बिन गुरु को पहिचान ॥ १४ ॥

भरमत भरमत सबै भरमाने । रामसनेही विरले जाने ॥ तिरदेवा सब खोजत हारे । सुर नर मुनि नहि पावत पारे ॥ थकित भया तब कहावे अन्ता । विरहिनि नारि रही बिनु कन्ता ॥ कोटिन तरक करें मनमाहीं । दिलकी दुबिधा कतहूँ न जाहीं ॥ कोई नख शिख जटा बढावै । भरमि भरमि सब जहँ तहँ धावैं ॥ बाट न सूझै भई अँधेरी । होय रही बानीकी चेरी ॥ नाना पन्थ बरनि नहिं जाई । ❀जाति वरण कुल नाम बड़ाई ॥ रैन दिबस वे ठाँढे रहहीं । वृक्ष पहार काहे नहिं तरहीं ॥

खसम न चीन्हे बावरी, पर पुरुष लौलीन ।
कहहिं कबीर पुकारके, परी न बानी चीन ॥ १५ ॥

❀ जातिकर्म गुन नाम बडाई ॥

८१ आधमात्री. मुसलमानोंका गुरु मन्त्र लाएलाइलिल्लाह मुहम्मदुर. सूलिल्लाह." ८३ अजान जो निमाज पढनेके थोडेही पहले निमाजके समय सूचना करनेको कलमा श० पुकारते हैं. ८४ जो खुदाके प्रार्थना पांच समय दिन और रात्री पढते हैं पश्चिम मुह होकर. ८५ स्यान रहित. ८६ निराकार. ८७ अद्वितीय ८८ क्यामतके दिन, सृष्टिके अंतमें जब खुदा सबका न्याय करेगा. ८९ दर्शन. ९० मुसलमानोंके नेमाज पढनेकी जगह प्रतिमापूजक. (जातिकर्म गुन नाम वडाई) वाप पूत दोऊ भरम है माया रची वनाय. भेद विना भरमें सकल, (गुरु बिन कहाँ लखाय) ९२ संस्कृत वर्णमालाके अक्षर. ९३ मुसलमानी वर्णमालाके ३० अक्षर ९४ मुसलमान. ९५ वियोगित. ९६ पिया मालिक. ९७ खडे. ९८ मालिक यति

[९९]कनैरसकी मतवाली नारी। [१००]कुटनीसे खोजे [१०१]लंगवारी ॥ कुटनी आंखिन [१०२]कांजर दियऊ। लागि [१०३]बतांवन ऊपर पियऊ ॥ काजर लेके हूवै गई अंधी। समुझ न परीबातकी [१०४]सँधी॥ बाजे कुटनी माटे [१०५]मँटकी। ई सब छिनरौता महँ अटकी ॥ विरहिनि होयके देह सुखावै। कोई शिरमहै केश बढावै॥ मानि मानि सब कीन्ह सिंगारा। बिन पिय परसै सबे अंगारा ॥

अटकी नारि छिनारि सब, हरदम कुटनी द्वार।
खसम न चीन्हे बावरी, घर घर फिरत खुवार ॥ १६ ॥

नव दरवाजा भरम विलास। भरमहि वावन बहे वतास ॥ कनउज [१०६]बाँवन भूत समान। कहँ लगि गनो सो प्रथम उडान ॥ माया ब्रह्म जीव अनुमान। मानतही मालिक बौरान॥ अकबक भूत बके परचंड। व्यापि रहा सकलो ब्रह्मंड ॥ ई भर्म भूतकी अकथ कहानी। गोत्यो जीव जहां नहि पानी ॥ तनक तनक पर दौरे [१०७]बौरा। जहां जाये तहँ पावे न ठौरा ॥

योगी रोगी भगत [१०८]बावँरा, ज्ञानी फिरे निखट्टू।
संसारीको [१०९]चैन नहीं है, ज्यों सरायका टट्टू ॥ १७ ॥

[११०]इतंउत दौरे सब संसार। छुटे न भरम किया उपचार॥ जरे जीवको बहुरि जरावे। काटे ऊपर लोन लगावै॥ [१११]योगी ऐसी हाल बनाई। उलटी बत्ती नाक चलाई॥ कोइ विभूति मृगछाला डारे। अगम पन्थकी राह निहारे ॥ काहूको जल मांझ सुतावे। [११२]कहरतहीं सब रैन गँवावे॥ भगती नारी कीन श्रृंगार। बिन प्रिया परचै सबै अंगार ॥ एक गर्ब ज्ञान अनुमान। नारि पुरुषका भेद न जान॥ संसारी कहूँ कल नहिं पावे। कैहरत जगमें जीव गवाँवे॥

९९ कान कारस बाणी. १०० गुरुआ लोग. १०१ आशना, जार. १०२ झूंठा उपदेश १०३ बताने लगी, उपदेश देनेलगी. १०४ मिलावट. १०५ इशारा. १०६ अक्षर १०७ डुबाया. १०८ उदास. १०९ सुख. ११० यहां वहां. १११ नेती धोती बाहर कराता है. ११२ हाय २ करते २

चारि दिशामें मंत्री [११३]झाँरे। लिये पलीता मुलना हारे॥ जरै न भूत बड़ो [११४]वरियाँरा। काजी पण्डित ❋ पढि पढि हारा॥ इन दोनों पर एकै भूत। झारेंगे क्या माँकी चूत॥

भूत न उतरे भूतसों, सन्तो करो विचार।
कहैं कबीर पुकारिके, बिनु गुरु नहिं निस्तार॥ १८॥
परम प्रकाश [११५]भाँस जो, होत [११६]प्रौढ विशेष।
तद प्रकाश संभव भई, महा काश सो शेष॥ १९॥
झांई संभव बुद्धि ले, करी कल्पना अनेक।
सो परकाशक जानिये, ईश्वर साक्षी एक॥ २०॥
विषम भई संकल्प जब, तदाकारसो रूप।
महा अंधेरी कालसो, परे अविद्या कूप॥ २१॥
महातत्व त्रीगुण[११७]पांचतत्व, [११८]समष्टि व्यष्टि परमान।
दोय प्रकार होय प्रगटे, [११९]खंड [१२०]अखंडसो जान॥ २२॥

सदा [१२१]अस्तिभासे निज भास। सोई कहिये परम प्रकाश॥ परम प्रकाश ले झांई होय। महद अकाश होय बरते सोय॥ बरते वर्तमान परचंड। [१२२]भाँसक तुरियातीत अखंड॥ कालसंधि होये उश्वास। आगे पीछे अनवनि भास॥ विविध भावना कल्पित रूप। परकाशी सो साक्षि अनूप॥ ❋ शून्य अज्ञान सुषुप्ति होय। अकुलाहट ते नादै सोय॥ नाद वेद आकर्षण जान। तेज नीर प्रगटे तेहि आन॥ पानी पवन गांठि परिजाय। देही देह धरे जग आय॥ सो कौवार शब्द परचंड। बहु व्यवहार खण्ड ब्रह्मण्ड॥

❋ पचि पचि हारा

❋ शून्य ज्ञान सुषुप्ती होय। अकुलाहटसे नादी सोय॥

११३ पंडित लोग. ११४ मजबूत वलो बलवान. ११५ अभ्यास. ११६ दृढ. ११७ समूह जैसें बन. ११८ एक जैसे एक वृक्ष. ११९ अंस. १२० पूर्ण १२१ सत्य. १२२ अभ्यासका करानें वाला.

जतन भये निज अर्थको, जेहि छूटे दुख[123]भूरि ।
धूर परी जब आंखमें, सूझे किमि निजमूरि ॥ २३ ॥

पांजी परख जबै फरि आवै । तुरतहि सबै विकार नशावै ॥ शब्द सुधारिके रहे अकरम । स्वाती भक्तिके खोटे भरम ॥ काल जाल जो लखि नहिं आवै । तौलौ निज पद नहीं पावै ॥ झांई संधि काल पहिचान । सार शब्द बिनु गुरु नहिं जान ॥ परखे रूप अवस्था जाय । आन विचार न ताहि समाय ॥ [124]झांई शब्द ले परखे जोय । संशय वाके रहे न कोय ॥

धन्य धन्य तारण तरण, जिन परखा संसार ।
वंदीछोर कवीरसों, परगट गुरू विचार ॥२४॥

शब्द संधि ले ज्ञानी मूढ । देह करम जगत आरूढ ॥ [125]नींद संधिलै सपना होय । झांई शून्य सुषोपति सोय ॥ ज्ञानप्रकाशक साक्षी संधि । तुरियातीत अभास अबंधि ॥ झांई ले वरते वर्तमान । सो जो तहां परे पहिचान ॥ काल अस्थितिके भास नशाय । परख प्रकाश लक्ष बिलगाय ॥ बिलगे लक्ष [126]अपनपौ जान । आपु अपनपौ भेद न आन ॥

आप अपनपौ भेद बिनु, उलटि पलटि अरुझाय ।
गुरु बिन मिटे न दुगदुगी, अनवनि यतन नशाय ॥२५॥

निज प्रकाश झांई जो जान । महा संधिमाकाश बखान ॥ सोई[127]पांजी ले बुद्धि विशेष । प्रकाशक तुरियातीत अरु शेष ॥ विविध भावना बुद्धि [128]अनुरूप । विद्यामाया सोई स्वरूप ॥ सो संकल्प बसे जिव आप । [129]फुरी अविद्या बहु संताप ॥ त्रीगुण पांच तत्व विस्तार । तीन लोक तेहिके मंझार ॥ [130]अंदबुद कला बरनि नहिं जाइ ।

१२३ ढेर, समूह. १२४ वेदांत. १२५ अंतरका जो शब्द १२६ दाव, अपना स्वरूप. १२७ खाता–बही. १२८ अनुसार मुताबिक १२९ स्फुर्ण हुआ. १३० नाना रंगका आश्चर्यमय.

उपजे [१३१] खपे तेहि माहि समाइ॥ निज झांई जो जानी जाय। सोच मोह संदेह नशाय॥ अनजानेको एही रीति। नाना भांति करे परतीति॥ सकल जगत जाल अरुझान। बिरला और कियो अनुमान॥ कर्ता ब्रह्म भजे दुख जाय। कोई आपै आप कहाय॥ पूरण संभव दूसर नाहिं। बंधन मोक्ष न एको आहिं॥ फल आश्रित स्वर्गहिके भोग। कर्म सुकर्म लहै संयोग॥ करमहीन [१३२] बाना भगवान। [१३३] सूंत [१३४] कुसूंत लियो पहिचान॥ भांतिन भांतिन पहिरे चीर। युग २ नाचे दास [१३५] कबीर॥

भासे जीवरूप सो एक। तेही भास के रूप अनेक॥ कोई [१३६] मगन रूप लौलीन। कोइ [१३७] अरूप ईश्वरमन दीन॥ कोई [१३८] कर्मरूप है सोय। शब्द [१३९] निरूपे न करे पुनि कोय॥ [१४०] समय रूप कोई भगवान। कर्ता न्यारा [१४१] कोई अनुमान॥ कोई कहे [१४२] ईश्वर ज्योतिहिं जान। आतमको कोई [१४३] स्वतः बखान॥ कोई कहै [१४४] सबपुनी सबते न्यार। आपै राम विश्व विस्तार॥

शब्द [१४५] भाव कोई अनुमान। अद्वै रूप [१४६] भई पहिचान॥ [१४७] दुगदुग रही को बोले बात। बोलतही सब तत्व नशात॥ बोल [१४८] अबोल लखे पुनि कोय। भास जीव नहिं परखै सोय॥

निज [१४९] अध्यास झांई अहै, सो संधिक भौमास।
प्रथम अनुहारा कल्पना, सदा करे परकास॥ २६॥

लख चौरासी योनि जेते। देही बुद्धि जानिये तेते॥ जहँ जेहि भास सोई २ रूप। निश्चै किया परा भवकूप॥ नाना भांति विषय रस लीन। अरुझि २ जिव मिथ्या दीन॥ [१५०] दावा [१५१] विषय जरे सब

१३१ नाश होता है १३२ वेष. १३३ भला. १३४ बुरा, १३५ भक्त लोग. १३६ सगुण उपासक. १३७ निगुण उपासक. १३८ पूर्व मीमांसक. १३९ व्याकरणी. १४० वैशेषिक. (काल वादी.) १४१ तर्कवादी नैय्याइक. १४२ योगी (पातांजल) १४३ सांख्यवादी १४४ वेदांती. १४५ बोलता. १४६ हुई. १४७ शंका. १४८ विज्ञानी. १४९ कल्पना. १५० उसके बुद्धि का जो विषय. १५१ अग्नि.

लोय। बाँचा चहै गहै पुनि सोय॥ दृढ विश्वास [१५२]भरोसा राम। कबहुँ तो वे आवैं काम॥ विषयं[१५३] विकार माँझ संग्राम। राम खटोला किया अराम॥ घायल बिना तीर तरवार। सोइ अभरण[१५४] रीझे भरतार॥ कामिनी पहिर पियासों राँचा[१५५]। कहै कविर भवबूडतं[१५६]बाँची॥ भव बूडत बेडाँ[१५७] भगवान। चढे धाये लागीलौज्ञान॥ थाह न पावे कहे अथाह। डोलत करत तराहि तराह॥ सूझ परे नहिं वार न पार। कहे अपार रहै मँझधार[१५८]॥ माँझधारमें किया विवेक। कहांके दूजा कहांके एक॥ बेरा आपु आपु भवधार। आपै उतरन चाहे पार॥ बिन जाने जाने है और। आपै राम रमै सब ठौर॥ वार पार ना जाने जोर। कहै कवीर पार है ठौर॥ २४॥ अक्षर खानी अक्षर वाणी। अक्षरते अक्षर उतपानी॥ अक्षर करता आदि प्रकास। ताते अक्षर जगत विलास॥ अक्षर ब्रह्मा विष्णु महेश। अक्षर रज सत तम उपदेश॥ क्षिति जल पावक मरुत अकाश। ये सब अक्षरमो परकाश॥ दश औतार सो अक्षर माया। अक्षर निर्गुण ब्रह्मनिकाया॥ अक्षर काल संधि अरु झांई। अक्षर [१५९]दहिने अक्षर [१६०]बांई॥ अक्षर आगे करे पुकार। अँटके नर नहिं उतरे पार॥ गुरुकृपा निज[१६१] उदय[१६२] विचार। जानि परी तव गुरुमत सार॥

ओसको जहँ लेश नहीं, बूड़े सकल जहान।
गुरु कृपा निज परख बल, तब ताको पहिचान॥ २७॥

रमैनी–अक्षर काया अक्षर माया। अक्षर सतगुरु भेद बताया॥ अक्षर यन्त्र मन्त्र अरु पूजा। अक्षर ध्यान धरावत दूजा॥ अक्षर पढि २ जगत भुलान। अक्षर बिनु नहिं पावै ज्ञान॥ विन अक्षर

१५२ आशा १५३ क्षोभ, ऐव. १५४ गहना १५५ लगी. १५६ गुरू. १५७ नाव किश्ती. १५८ बीच धारमें. १५९ दक्षिण पंथ १६० वाममार्ग. १६१ अपना. १६२ प्रकाश.

नहिं पावे [१६३]गती। अक्षर बिन नहिं पावे [१६४]रती॥ अक्षर भयउ अनेक उपाय। अक्षर मुनि २ शून्य समाय॥ अक्षरसे भव आवै जाय। अक्षर काल सबनको खाय॥ अक्षर सबका भाषे लेखा। अक्षर उत्पति प्रलय विशेखा॥ अक्षरकी पावै सहिदा[१६५]नी। कहै कबीर भव उतरे प्रानी॥

परखावे गुरु कृपा करि, अक्षरकी सहिदानि।
निज बल उदय विचारते, तब होवे भ्रम हानि॥ २८॥

बावनके बहु बने तरङ्ग। ताते भासत नाना रङ्ग॥ उपजे औ पालै अनुसरे। बावन अक्षर आखिर करे॥ राम कृष्ण दोउ लहर अपार। जेहिपद गहि नर उतरे पार॥ महादेव लोमश नहिं बांचे। अक्षर त्रास सबै मुनि नाचे॥ ब्रह्मा विष्णु नांचै अधिकाइ। जाको धर्म जगत सब गाइ॥ नांचै गण गंधर्व मुनि देवा। नाचै सनकादिक बहु भेवा॥ अक्षर त्रा[१६६]स सबनको होइ। साधक सिद्ध बचे नहिं कोइ॥ अक्षर त्रास लखे नहिं कोइ। आदि भूल बंछे सब लोइ॥ अक्षर सागर अक्षर नाव। करणधार अक्षर समुदाव॥ अक्षर सबका भेद बखान। बिन अक्षर नहिं अक्षर जान॥ अक्षर आसते फंदा परे। अक्षर लखे ते फन्दा टरे॥ गुरु शिष अक्षर लखे लखावे। पराशी फन्दा मुक्तावै॥ विनु गुरु अक्षर कौन छोडावे। अक्षर जालते कौन बचावे॥ संचि[१६७]त क्रिया उदय जब होय। मानुष जन्म पावे तब सोय॥ गुरु पारख बल उदय विचार। परख लेहु जगत गुरुमुख सार॥ अस्ति हंस प्रकाश अपार। गुरुमुख सुख निज अति दातार॥

साखी०-अक्षर है तिहु भ्रमका, विनु अक्षर नहिं जान।
गुरु कृपा निज बुद्धिबल, तब होवे पहिचान॥२९॥

१६३ मुक्ति. १६४ प्रवृत्ति. १६५ चिह्न, पारख, पहिचान. १६६ भय, १६७ जन्मांतरोंमें संचित किया हुआ कर्म.

जहँवांसे[१६८] सब प्रगटे, सो हम समझत नाहिं ।
यह अज्ञान है मानुषा, सो गुरु ब्रह्म कहि ताहिं ॥ ३० ॥
ब्रह्मा विचारे ब्रह्मको, पारख गुरु प्रसाद[१६९] ।
रहित[१७०] रहै पद परखिके, जिवसो होय अवाद[१७१] ॥ ३१ ॥

इति मूल रमैनी—शब्दकुंजी समाप्ता ॥

वाणी जेती जगतमें, सबमें ताला दीन । विनु सतगुरु कृपा कोई, पावे नाहीं चीन ॥ १ ॥ सतगुरु कवीर कृपा करी, चावी दीन्ह रसाल । वाणी कुलुफ याते खुले, पावे भेद विसाल ॥ २ ॥ वाणी विविधि जगतमें, काल जाल प्रचंड । सत्य भेद किमि पावई, भूले जीव पखंड ॥ ३ ॥ याते सतगुरु कृपा करी, जीव उबारन हेतु । मूल रमैनी प्रगट करी, दीन्हा भवको सेतु ॥ ४ ॥ कठिन शब्द जेते रहे, टिप्पणी करि बनाय । बाकी अब कछु होय जो, दीजो संत जनाय ॥ ५ ॥ गुरुथल होताँ[१७२] जानिये, शिवहर[१७३] जन्म स्थान । युगलानन्द मम नाम है, जानो संत सुजान ॥ ६ ॥

इति मूलरमैनी प्रसिद्ध अक्षरखण्डकी रमैनी स्वामी श्रीयुगलानन्द बिहारीद्वारा संशोधिता समाप्ता ।

आदि वाणीका शब्द ।

"बलिहारी अपने साहबकी जिन यह जुगुति बनायी । उनकी शोभा केहि विधि कहिये मोसों कही न जायी ॥ बिना ज्योतिकी जहँ उजियारी सो दरशे वह दीपा । निरते हंस करै कौतूहल वोही पुरुष समीपा ॥ झलके पदुम नाना विधि वानी माथे छत्र विराजै । कोटिन भानु चन्द्र तारागण एक फुचरियन छाजै ॥ कर गहि बिहँसि जबै मुख बोलै तब हंसा सुख पावै । वंश अंश जिन बूझ विचारी सो जीवन मुकतावै ॥ चौदह लोक वेदका मण्डल तहँ लग काल दोहाई । लाक वेद जिन फंदा काटी ते वहि लोक

१६८ जहांसे. १६९ दया, कृपा. १७० अलग. १७१ वाद रहित. १७२ जिला सारन डा० घ० कुचाह कोटके इलाकेमें और हथुआसे पांच कोस उत्तर पर है. १७३ विहार प्रान्तके मुजफ्फरपुर जिलेमें राजस्थानहै.

सिधाई॥ सांत शिकारी चौदह पारथ भिन्न भिन्न निरतावै। चारिअंश जिन समुझि बिचारी सो जीवन मुकतावै॥ चौदह लोक बसे यम चौदह तहँ लग काल पसारा। ताके आगे ज्योतिनिरंजन बैठे सुन्न मझारा॥ सोरह खंड अक्षर भगवाना जिन यह सृष्टि उपाई। अक्षर कला सृष्टिसे उपजी उनही माहँ समाई॥ सत्रह संख्य पर अधरदीप जहँ शब्दातीत बिराजे। निरतै सखी बहु विधि शोभा अनहद बाजा बाजे॥ ताके ऊपर परमधाम है मरम न कोई पाया। जो हम कही नहीं कोउ मानै ना कोइ दूसर आया॥ वेद न साखी सब जिउ अरुझे परमधाम ठहराया। फिरि फिरि भटकै आप चतुर है वह घर काहु न पाया॥ जो कोइ होइ सत्यका किनका सो हमका पतिआई। और न मिलै कोटि कर थाकै बहुरि कालघर जाई॥ सोरह संख्यके आगे समरथ जिन जग मोहिं पठवाया। कहै कबीर आदिकी बाणी वेद भेद नहिं पाया"

कड़िहार भेदका शब्द।

"दशौ दिशा कर मेटौ धोखा। सो कड़िहार बैठही चोखा॥ दशौ दिशा कर लेखा जानै। सो कड़िहार आरती ठानै॥ दश इंद्रीकै पारिख पावै। सो कड़िहार आरती गावै॥ जो नहिं जानै एतिक साजे। चौका युक्ति करै क्यहि काजे॥ इस कारण करहिं गुरुआई। बिगरै ज्ञान जो पंथ पराई॥ पद साखी अरु ग्रंथ दृढावै। बिन परख न उत्तम घर पावै॥ शब्द साखी सिखि पारस करहीं। होय भूत पुनि नरकहिं परहीं॥ विना भेद कड़हार कहावै। आगिल जन्म श्वानको पावै॥ पद साखी नहिं करहि विचारा। भूँकि भूँकि जस मरै सियारा॥ पद साखी है भेद हमारा। जो बूझैं सो उतरहिं पारा॥ जब लग पूरा गुरू न पावै। तब लग भवजल फिरि फिरि आवै॥ पूरा गुरू जो होय लखावै। शब्द निरख परगट दिखलावै॥ एक बार जिय परचौ पावै। भव जल तरै बार नहिं लावै॥"

इति श्री शब्दावली खण्ड तीसरा। शुभम् भवति।

---

१ सात सुरति। २ चौदह यम। ३ चारवेद। ४ सोरह कला जीवकी। ५ सत्रहतत्व सूक्ष्म शरीर के

सत्यनाम ।



शब्दावली चौथाखंड

सत्यकबीरकी आगम वाणी ।

अमर लोकसे हम चलि आये, आये जगत मंझारा हो। सही छाप परवाना लाये, समरथके कड़िहारा हो ॥१॥ जीव दुखित देखा भवसागर, ता कारण पगु धारा हो। बंश ब्यालिश थाना रोपा, जम्बूदीप मंझारा हो ॥ २ ॥ दस मुकामकी भक्ति दिढाई, चौका पान विस्तारा हो। बारह पंथ चलेंगे आगे, घर घर बोध पसारा हो ॥ ३ ॥ गुरू शिष्य तौ लग नहिं उबरे, फिर फिर गर्भ मँझारा हो। बचन वंशके बीरा पावे, तब होवे निस्तारा हो॥४॥ तेरहें पीढी ज्ञान रजधानी, चूरामन औतारा हो। उनके अंग छाया नहिं होई, देह विदेह अपारा हो ॥ ५ ॥ उनके आगे जोग मत चलिहै, राजनीति मिट जाई हो। पांच स्वादकी इच्छा नाहीं, सो गति सब महँ आई हो॥६॥ द्वादश पंथ मिलेंगे आई, छोड कपट चतुराई हो। जंबूद्वीप करैं कडिहारी, हंस लेहिं मुकताई हो ॥७॥ पांच हजार पांच सौ बीते, सत्त चाल ठहराई हो। पारस पान जब पुनि ऊगे, जग निंदा मिट जाई हो॥८॥ की आपन करनी सो बांचे, की गुरू शरने आई हो। ना गुरू शरन न नामकी करनी, कैसे हंस कहाई हो ॥९॥ जौ लग कौल पूरे नहिं आवे, तौ लग भेद छिपाई हो। दोय शिर काटि मिले जो आई, ताको देहु लखाई हो॥१०॥ जो कोइ संत विवेकी होहीं, सुनत मिलेंगे धाई हो। कहे कबीर सुनो धर्मदास, आगम तुम्हें लखाई हो॥११॥

राम परखकी रमैनी ॥

ऐसा राम जपु मोर भाई। जासे आवागमन मिटाई ॥टे०॥ ज्ञानी बहुत कथै जो ज्ञाना। तासो उपजत मन अभिमाना ॥ सब मिलि सुनु रे ज्ञान हमारा। राम रहा उनहूते न्यारा ॥ १ ॥ पंडित पढि गुन वेद भुलाना। वेद पढै पुनि भेद न जाना ॥ संझा तरपन अरु आचारा। राम रहा उनहूते न्यारा ॥ २ ॥ सन्यासी आपे भगवाना। अहमेव के गरब भुलाना॥ धरि धरि अंग लगावै छारा। राम रहा उनहूते न्यारा ॥३॥ अचारी चौका पाक बनावै। प्रतिमाको ले भोग लगावै ॥ बजावे घंट करै बमकारा। राम रहा उनहूते न्यारा ॥ ४ ॥ जोगी जोग ध्यान तप करई। मन पवना दृढ आसन धरई॥ कंद मूल खनि करै अहारा। राम रहा उनहूते न्यारा ॥ ५ ॥ जैनी जीव दया प्रति पारै। रसना राम नाम नहि उच्चारे ॥ किरतम सो कहै यह करतारा। राम रहा उनहूते न्यारा ॥६॥ यती अपने यतको धावे। काम जीतिकै बडा कहावे ॥ हम तो अपना तन मन जारा। राम रहा उनहूते न्यारा ॥ ७ ॥ जंगम फिरै लिंग लरकाई। निसि वासर शिवहीं को ध्याई ॥ शिव शिव करत गये जमद्वारा। राम रहा उनहू ते न्यारा ॥ ८ ॥ मौनी हो मौन गहि रहई। रसना बचन कहै नहि कहई॥ लहर क्रोध घट भीतर धारा। राम रहा उनहूते न्यारा ॥९॥ तपसी हो तनकूं दहई। गृह छाडि बन भीतर रहई॥ देह अज्ञान लगावै छारा। राम रहा उनहू ते न्यारा ॥ १० ॥ जिन्दा होय जिन्दगी जानै। सतका शब्द हिरदय नहिं आनै॥ होय प्रात तब करै पुकारा। राम रहा उनहू ते न्यारा ॥ ११ ॥ शेख साहिब नहि पहिचाना। भरि भरि मूठी भांग चबाना ॥

नोट—यह रमैनी एकही शब्दावलीमें मिली है, जैसी थी वैसेही यहां रक्खी गयी है, पाठकोंको और कहीं मिले तो शुद्ध करले और मुझे भी सूचित करें तो अगली आवृत्तिमें सुधारदी जायगी।

धै कुतका करे दम कारा। राम रहा उनहू ते न्यारा॥ १२॥ भक्त होयकर मढी बँधावै। नर नारी सो नेह लगावै॥ पाछे करै माया विस्तारा। राम रहा उनहू ते न्यारा॥ १३॥ किरतनिया जो किरतन करई। करि किरतन भवबिच परई॥ किरतन करै औ हाथ पसारा। राम रहा उनहू ते न्यारा॥१४॥ भोपा होय करि संख बजावै। दाढी मूंछा घोंट मुड़ावे॥ उभा पेटको करत पुकारा। राम रहा उनहू ते न्यारा॥ १५॥ जोत जगावे पाव पुजावे। सती धामको राह बतावे॥ जीव सतावे करै विभिचारा। राम रहा उनहू ते न्यारा॥ १६॥ सूरा होय सूरापन करई। सेर अन्न कुल कारण मरई॥ कहा भयो जो धरलिया धारा। राम रहा उनहू ते न्यारा॥१७॥ दाता दान देह कर भूला। दान देइके मनमें फूला॥ ऐसा है सत धर्म हमारा। राम रहा उनहू ते न्यारा॥ १८॥ सती होयके सत जो करई। मुरदा संग जीवत मरई॥ कामस्वाद कियो विभिचारा। राम रहा उनहू ते न्यारा॥१९॥ भरमत भरमत सब भरमाई। राम भक्ति कोउ विरले पाई॥ प्रेमभक्ति सब ऊपर राजे। अखण्ड राम तहँ अटल विराजे॥२०॥ ऐसी भक्ति करै जो कोई। सतगुरु शब्दमें रहै समोई॥ आन शब्दसो रहै निनारा। सो भगता कहिये ततसारा॥२१॥ कहैं कवीर दिया बतलाई। होती गुपत परगट दिखलाई॥ सत्यनाम सुमरे जो कोई। ताको आवागमन न होई॥ २२॥

इति राम परखकी रमैनी॥

निरख परमोधकी रमैनी।

निरगुन दाता हरता करता। सब जग विनसे आपहि रहता॥ सदा सर्वदा अविचल सोई। तौलना एक न देना दोई॥ १॥ कहा बखानू हूँ गुण तेरा। उस्तुति करत थका मन मेरा॥ जिह्वा

ललनी जानै सोई। तौलना एक न देना दोई ॥ २ ॥ सब घट व्यापक मालिक मौला। को घट काला को घट धौला ॥ पांच रंगते न्यारा होई। तौलना एक न देना दोई ॥३॥ अलख पुरुष जो निरगुन हाका। चलत चलत मेरा मन थाका ॥ निरगुन सरगुन एकै होई। तौलना एक न देना दोई ॥ ४ ॥ कहा बखानूँ रूप निशानी। ज्यों दरपनमो दरशन जानी ॥ है हजूर दिखै न कोई। तौलना एक न देना दोई ॥ ५ ॥ कथनी कथके कहा बखाना। शबॅद सुरतमें एक समाना ॥ शब्द सुरत एकै जब होई। तौलना एक न देना दोई ॥ ६ ॥ शब्द सुरति अँच्छर बतलावे। अँच्छर संधि लखै सो पावे ॥ अंच्छर संधि लखै जो कोई। तौलना एक न देना दोई ॥७॥ वस्तु अपार पार नहिं पावे। है नंजीक पुनि दिष्टि न आवे ॥ दिष्टिँ अँदिष्टि मध्य है सोई। तौलना एक न देना दोई ॥ ८ ॥ जो भीतर सो बाहर जाना। बाहर भीतर एक समाना ॥ आदि रु अन्त मध्य है सोई। तौलना एक न देना दोई ॥ ९ ॥ बावन अक्षर नाम न होई। शब्द सुरति ले रहो समोई ॥ है निजनाम नाम है सोई। तौलना एक न देना दोई ॥ १० ॥ उतपतका जो करूँ बखाना। परलयका भाषूँ अनुमाना ॥ उतपत परलय एकै होई। तौलना एक न देना दोई ॥ ११ ॥ शून्न्हिंते सब जग उपराजा। सून्न्हिं माहिं शब्द पुनि साजा ॥ सून्न बिसून्न लखै जो कोई। तौलना एक न देना दोई ॥ १२ ॥ पूरन बल सबहिनमें जाना। सो तो पूरन काल समाना ॥ काल अकाल मध्य है सोई। तौलना एक न देना दोई ॥ १३ ॥ जहँ लग दीखै तहँ लग नाहीं। जहाँ सून्न तहाँ सून्न समाहीं ॥ सतगुरु शब्द लखै जो कोई। तौलना एक न देना दोई ॥ १४ ॥ गुरु गम होय तो चश्मँहिं पावे। आपामध्ये आपा समावे ॥ आप मध्ये आपु सु सोई।

१ शब्द. २ अक्षर. ३ नजदीक, निकट. ४ दृष्टि. ५ शून्य. चश्म फा० आंख.

तौलना एक न देना दोई ॥१५॥ अलख पुरुष देखा समदिष्टी। हाथ पसार आवे नहिं मुष्टी ॥ पांच तत्वते न्यारा होई। तौलना एक न देना दोई ॥ १६ ॥ पानीसे पतला करि जाना। धूवाँते अति झीन बखाना ॥ मनही आवे मनही जाई। मन ही काल सबनको खाई ॥ मन चंचलही लखै जु कोई। तौलना एक न देना दोई ॥१८॥ मनही जल थल मनहि अकासा। मनही पांच तत्व परकासा ॥ मनको रूप देख नहिं होई। तौलना एक न देना दोई॥१९॥ ब्रह्मादिक सनकादिक भाई। तेऊ मनके हाथ बिकाई॥ मन सावज बस करै जु कोई। तौलना एक न देना दोई ॥२०॥ कौन सु मुनिवर मनको मारै। मनको मारि कौनको तारै॥ उल्टा मनै निज मनै समोई। तौलना एक न देना दोई ॥२१॥ अगम अगाध वार नहिं पारा। गुरुगम शब्दहिं किया विचारा ॥ कहैं कबीर हम देखा सोई। तौलना एक न देना दोई ॥ २२ ॥

इति रमैनी निरख परखकी ॥

सत्यनाम।

॥ अथ शब्द पारखकी रमैनी ॥ ×

सिंगी निसदिन अनहद बाजे। सदा रहे उन मुनिके छाजे॥ सुरति शब्दमें रहे समाई। कहे कबीर गलतान रहाई॥१॥ बहुत दिवसका सूता जागा। खोलि कपाट नामसो लागा। धन सतगुरु जिन राह बताई। कहैं कबीर सब विपत मिटाई॥२॥ घटमें भया नामका हेला। मूल गद्दा जब खेलम खेला। मोह मायाकी काटी फांसी। कहैं कबीर मिटी चौरासी ॥ ३ ॥ स्वामी जो संसारसे न्यारा। सो कहिये साहबका प्यारा। आशा तजिके रहे निरासा।

× यह शब्द मुझे--सेवक मातादीन कबीर पंथी--करनेलपुरा इन्दौरसे मिला था--जो बहुत पुराना लिखा हुआ है। एकही प्रति होनेके कारण ज्यों का त्यों रहने दिया है। पाठक और प्रतिसे मिलानकर सुधार सकते हैं॥

कहै कबीर तब देख तमासा ॥ ४ ॥ हाथ ठीकरा गलेमें कंथा। निर्गुन होके पकड़े पंथा। ज्ञान चिरागी घटमें जूपी। कहै कबीर सो मुक्त सरूपी ॥ ५ ॥ फाँटा टूटा कंथा पहिरे। मनसा ममता घटमें गहिरे। ताकी चौकी मान बडाई। कहै कबीर सो ढिया उठाई॥६॥ मनराजा सरगुनमें भीजे। ज्यों छेरी खटिककी धीजे। निरगुन सेती लाजा मरई। कहैं कबीर जिव कैसे तरई ॥ ७ ॥ फांसी लिया हाथमें माया। ज्यों बाघिन बकरेको खाया। पल पल सो गँवावे रोई। कहैं कबीर ऐसा दुख होई॥८॥ मायाका जोरा है फंदा। यासे उबरा कोइ कोइ बंदा। स्वास उसास सुमिरन लागा। कहैं कबीर विषय सब भागा ॥ ९ ॥ जैसे सरपिनि किया कुँड़ाला। कोइ बन्धा कोई दीया टाला। कहैं कबीर कुडाला पेले। निर्भय होय जगतमें खेले ॥ १० ॥ यह संसार कुँडाला माहीं। जाको सरपिनि घर घर खाहीं। कहै कबीर कोइ बाहर आवे। ताको माया नाहि सतावे ॥ ११ ॥ व्यवहार करै औ ऊंचा बोले। निसि दिन फूला फूला डोलै ॥ मांग तांग कर करै रसोई। कहैं कबीर नफा नहिं काई॥१२॥ बहुत जतन करि जगत परमोधे। अपने घटको नाहीं सोधे। अंधा शब्द करे नहि परिचय। कह कबिर ब्रह्म कैसे दरसे ॥ १३ ॥ दुनिया सेती बक बक मूवा। ज्यों नलनीने पकरचो सूवा। ऊपर पाँव तले भइ मूड़ी। कहै कबीर संसारी बूडी ॥ १४ ॥ रात दिवस कर ज्ञान पुकारे। मन इन्द्रीको नाहीं मारे। कहैं कबीर सुनो नर लोई। कागा हंसा कैसे होई ॥ १५ ॥ कठिन धारना हंसकी भाई। ज्यों नटनी कर बरत चढाई। चढै बरत वह तन मन साधै। कहैं कबीर वहि कला अगाधै ॥ १६॥ सुरत निरत सो नटनी खेलै। तन संभालि आगे पग मेलै। ऐसी धरन नाम जेहि आवे। कहैं कबीर सो हंस कहावे

॥१७॥ अन्तर लागी करमकी टाटी। दशो दिशा सुरत जो फाटी। धोखा चिन्तामें दिन बीता। कहैं कबीर यों रहिगा रीता॥१८॥ जाग शिताबी अब का सोवे। टाला-टूलीमें दिन खोवे। छाडि अनेक एकको धावै। कहैं कबीर निर्भय होय जावै॥१९॥ बांका गढको बेगइ लीजे। पीछे नहीं पयाना कीजे। सन्मुख जूझे सोई सूरा। कहैं कबीर साहेबका पूरा॥२०॥ आठ पहर जो मान पुकारे। घटका बैरी चुन चुन मारे। अगम पंथका नाम बोहारे। कहैं कबीर नहि जमके सारे॥२१॥ हिंदू तुरुक दोऊ सो न्यारा। मुखसो बचन कहे नहिं खारा। राह ऊजडकी लीजे भाई। कहैं कबीर झांखा नहि खाई॥२२॥ छन्द व्याधिसो न्यारा रहना। निशिदिन साहिंब साहिब कहना। कहैं कबीर समझकर देखो। आन बसी सो नाहि न लेखो॥२३॥ सार शब्दका थाला झेलै। निर्भय होय जगतमें खेलै॥ कहैं कबीर क्या संशय कीया। नाम पियाला भर भर पीया॥२४॥ शून्य मँडलमें तारी लागी। सूती सुरति भडक दै जागी॥ कहैं कबीर पियासो लागी। मनकी दुविधा तबहीं आगी॥२५॥

सा०-डोरी लागी डर मिटा, सुरत रही गरनाय।
सुरत सुहागिन हो रही, पर घर परत न जाय॥

इति श्री शब्द पारखा सम्पूर्ण।

सत्यनाम।

॥ सर्वांगबत्तीसी रमैनी ॥

काजी कौन ?

सोइ काजी जो होय समाना। दिल दरिआवमें रहे समाना॥
परम जोतिपर आसन करई। सो काजी भवसागर तरई॥१॥

मुल्ला कौन ?

सो मुल्ला जो मनका धीरा । आप आपनी चीन्है पीरा ॥
सहज शून्यमें रहे समाई । सो मुल्ला विहिश्त को जाई ॥२॥

दुर्वेश कौन ?

सोई दुर्वेश जो दिलका सूरा । घट परचेमें देखे नूरा ॥
ज्ञान ध्यानकी बातें करई । सो दुर्वेश जगतमें तरई ॥ ३ ॥

शेख कौन ?

सोई शेख जो शेखी धरई । घट परिचय कर मन सो तरई ॥
मनसा मार करै पिसमाना । मन जीते सो शेख बखाना ॥४॥

फ़क़ीर कौन ?

सोई फ़क़ीर जो फांके काला । इन्द्री जिह्वा एकहि नाला ॥
इन्द्री जिह्वा दोष परहरई। काया खोज अलह चित धरई ॥५॥

पठान कौन ?

सो पठान जो परमादहिं तोरे । अलख पुरुष घट माहिं निहोरे ॥
निरगुन कालसे तिनका तूरा । सोई पठान जगतमें सूरा ॥ ६ ॥

सय्यद कौन ?

सो सय्यद जो सरा विचारे । वेद कितेबसे रहे निनारे ।
वेद कितेब दोनों परिहरई । निर्गुण नाम निरंतर धरई ॥ ७ ॥

काफिर कौन ?

सो काफिर कदी न लौलावे । दुनिया त्याग नहीं मन भावे ।
घटको छाडि अनत नहिं जाई। बिचमें मुवे लखे न खुदाई ॥८॥

हिन्दू कौन ?

सोई हिन्दू जो हिरदय समाना। पाप छोडि करै पुण्य निधाना ॥
निरगुन नाम निरंतर ध्यावे । जरा मरणमें बहुरि न आवे ॥९॥

ब्राह्मण कौन ?

सोई ब्राह्मण जो ब्रह्म पहिचाना । जीव शीवमें रहे समाना ॥
तीन लोकमें ब्रह्म परचाना । ब्रह्म छाडि पूजे नहिं आना ॥१०॥

क्षत्री कौन ?

सो क्षत्री जो जमा संभारे। काम क्रोध गुन हिरदय जारै ॥
काम क्रोध तन तजे गुमाना। सो क्षत्री रहे निरवाना ॥११॥

वैश्य कौन ?

सो वैश्य जो करै व्योपारा। सत्य शब्द ले हाट पसारा ॥
झूठ कपटको त्यागन कीन्हा। सब जीवनको भोजन दीन्हा ॥१२॥

शूद्र कौन ?

सोई शूद्र जो सेवा मन लीन्हा। आतमराम सकल घट चीन्हा ॥
सेवाको फल पावै सोई। जरा मरन दुख नासै दोई ॥ १३ ॥

जुलहा---कोरी कौन ?

सो जुलहा जो कोरै विधाना। बिन धरनीको बुनै जो बाना।
बाना बुनकै करै ठिकाना। मुवा प्रान जो वा घर जाना ॥१४॥

राजा कौन ?

राजा सो जो विलसे राजू। निसि दिन करै सत्यको काजू।
हाथ अन्तर कबहुँ न धरई। सब जीवनकी रच्छा करई ॥१५॥

कायथ कौन ?

सो कायथ जो कथी विलोवे। पाप पुन्यका संसा खोवे ॥
मिथ्या वचन कबहूँ नहिं कहई। निसिदिन ओट नामकी गहई ॥१६॥

योगी कौन ?

सो जोगी जो खोजे आपा। लिप्त न होवे पुन्य अरु पापा ॥
आपा मध्ये करै विचारा। काम क्रोध ते रहे निनारा ॥ १७ ॥

संन्यासी कौन ?

संन्यासी करै सबको न्यासा। काम क्रोधको मेटै फाँसा ॥
कनक कामिनि जीतै झारी। सतगुरु शब्द दिल माहिं विचारी ॥१८॥

वैरागी कौन ?

सो बैरागी जो राग न करई। बीत राग होय जग संचरई ॥
व्यापक ब्रह्म घटहीमें देखे। सो बैरागी है हमरे लेखे ॥ १९ ॥

रामानन्दी कौन ?

रामहिं छाड़ि न आन ध्यावे। घट घट महँ राम चित लावे ॥
भेदभाव कबहूँ नहिं माने। सो रामानन्दी साँच बखाने ॥२०॥

शैव कौन ?

सो शैव जो शिवोऽहम गावे । जीव शीवको भेद मिटावे ॥
छाडि अमंगल मंगल रांचे। रहिअ जांच कबहूं नहिं जांचे॥२१॥

वैष्णव कौन ?

वैष्णव सोई जो व्यापक जाने । भक्त भगवंत एक करि माने ॥
दया क्षमा उर धरे विचारू । एक दोयका करे निवारू ॥ २२ ॥

कर्मी कौन ?

कर्मी सोई जो कर्म कमावे । अकरम छोडि सुकरम को धावे ।
पाप पुण्यकी आस बहाई । एक नाम रहै लवलाई ॥ २३ ॥

उपासक कौन ?

इष्ट देवको निकटहिं जाने । रहे सदा सन्मुख मनमाने ॥
उपास्य देवको धरे ध्याना । सद्गुरु दया होय निर्वाना ॥ २४ ॥

ज्ञानी कौन ?

ज्ञानी सोई जो ज्ञेय पहिचाने । आतम ब्रह्म एक करि जाने ॥
द्वैत भावको देइ उडाई । कहैं कबीर ज्ञानी सतभाई ॥ २५ ॥

पंथी कौन ?

पंथी होय सुपंथहि चाले । छाँडे पथ न कुपथ पग डाले ।
सद्गुरु बचन सदा मन आने । वेद संत सोइ पंथ बखाने ॥२६॥

गृही कौन ?

गिरही होय गिरहको जाने । पांच तत्व गुण तीन पिछाने ।
करि पिछान न्यारा होय जाई । आत्मतत्वमें रहे समाई ॥२७॥

वैद्य कौन ?

वैद्य सोई जो नाडि पिछाने । रोग अरोगका भेद बखाने ।
पात्र कुपात्रका करे विचारा । औषध नाम करे परचारा ॥२८॥

मंत्री कौन ?

मंत्री सोई जो मंत्र विचारे । राज काजको भले सँह्मारे ।
रय्यत राजा बसि करि राखे । नाम सुधारस निसि दिन चाखे ॥२९॥

गुरु कौन ?

गुरु सोई जो ज्ञान सिखावे। मनका संशय दूर बहावे॥
करम भरम सब देइ बहाई। सांचा सतगुरु सोइ कहाई॥ ३०॥

इष्ट कौन ?

इष्ट सोई जो सबका होई। जहां न भेद भाव कछु कोई।
अखंड स्वरूप अस्ति बखानो। कहैं कवीर निज आतम जानो॥ ३१॥

रहनी कौन ?

ऐसी रहनी रहै जु कोई। मुक्ति पंथको पावै सोई॥ भाव भक्ति दोऊ समतूला। कहैं कवीर सो पावै मूला॥ ३२॥

पच्छापच्छी कारने, सब जग गया भुलान।
निर्पच्छ होयके हरि भजे, सोई संत सुजान॥ १॥
आस पास जग बंधिया, आश रहै लिपटाय।
नाम आश पूरन करै, सबै आश मिट जाय॥ २॥
जो तू चाहै मुझ्झको, मते कुछ राखे आश।
मुझ्झ सरीखा होय रहू, सब कुछ तेरे पास॥ ३॥

इति श्रीसर्वांग बत्तीसी रमैनी॥

रमैनी सोलहतिथिकी॥

आउ संत मिलि उतरो पारा। सोलह तिथिका करो विचारा॥
सोरह तिथिकी कथूँ रमैनी। धरम दास यह लोक निसैनी॥ १॥
अमावस जो मन दिढ होई। आतम परिचय मुआ न कोई॥
(अमावस आसन दिढ होई। आतम परिचय मानै सोई)॥२॥
पडिवा प्रीति पियासूँ लागी। संशय गयो द्वैत सब भागी॥ गुरु प्रताप दया जब कीन्हा। दिलका धोखा सब हर लीन्हा॥ ३॥
दूइज भीतर बोले ओई। अन्दर रांचे जोगी सोई॥ तीजे तीन गुननसे न्यारा। जो बूझै सो उतरै पारा॥४॥ चौथे चित चैतन सो लागा। दिलका धोखा सबहीं भागा॥ पाँचे मिलि गुरु पूरा

पाया। बहुरि न जोनी संकट आया ॥ ५ ॥ छठएँ छूति करो मत कोई। सब घट ब्रह्म व्यापक होई ॥ सातम नाम सुधा रस पीजे। निर्मल नाम साहेबको लीजे ॥ ६ ॥ (सातें सतनाम रस पीजे। सिरके सांटे साहिब लीजे॥) आठम अनुभव लेहु बिचारी। सब घट पुरुष कहूँ नहि नारी ॥ ७॥ नौ नारी देखो इक साथा। है हीरा जो आवे हाथा॥ दशों दिसा मन काहेको धावे। अन्दर खोजे साहब पावे ॥ ८॥ ग्यारह आवागमन न होई। जो सत-नामहिं चीन्हे कोई ॥ द्वादश ऊपर बोले ओई। जरा मरन दुख नासे सोई ॥ ९ ॥ (द्वादश ऊपर बोले सोई। जरा मरनके भरम न होई ॥ तेरस तनकी तपन बुझाई। होय लौलीन साहब गुन गाई॥ १०॥ चौदश चञ्चल निश्चल कीन्हा। तब साहिब आपन करि लीन्हा॥ पूनो प्रेम पियाला पीजे। सिरके सांटे साहिब लीजे ॥ ११ ॥ सोलह तिथि यहि विधि भाखा। सबहि कला विचार अभिलाखा ॥ सोलह कला सम्पूरन भयऊ। कहैं कवीर सत लोके गयऊ ॥ १२ ॥

साखी—सोरह सुत सो पुरुषके, सोरह कला विहार।
सत्यलोक सो पावई, सोलह करे विचार ॥

अथ रमैनी अक्षर खण्डकी ॥

अच्छर खानी अच्छर बानी। अच्छरसे अच्छर उत्पानी ॥ अच्छर आदि बसे आकास। अच्छर चन्द सूर परकास ॥ १ ॥ अच्छर ब्रह्मा विष्णु महेस। अच्छर नारद गौरि गनेस॥ अच्छर धरनि पवन औ पानी। अच्छर आदिहि अगम बखानी ॥ २ ॥ अच्छर नव औतार जो भयऊ। बिन अच्छर कोउ भेद न लहेऊ॥ बिन अच्छर नाहिं निवेरा। अच्छर विन सब धुंध कुहेरा ॥ ३ ॥ अच्छर निरंकार परमाना। अदली अच्छर अदल अमाना ॥ अच्छर काया अच्छर माया। अच्छर जग सतगुरु हो आया॥४॥

अच्छर मंत्र जंत्र सब पूजा । विन अच्छर कोइ और न दूजा ॥ अच्छरमें सब जगत भुलाना । विन अच्छर नहिं उपजे ज्ञाना ॥५॥ अच्छर विन कारज नहिं रती । विन अच्छर पावे नहिं गती ॥ अच्छरमें सब जग उपजाया । अच्छर शून्य विशून्य समाया ॥६॥ अच्छर आवे अच्छर जाई । अच्छर काल सबनको खाई ॥ अच्छर सबका भाखे लेखा । अच्छर गुप्त परगट होय देखा ॥७॥ सतगुरु अच्छर आनि बतावा । जीवनको भय फंद छुडावा ॥ निअच्छर की पावे सहिदानी । कहैं कवीर तब छूटे प्रानी ॥ ८ ॥

साखी–अच्छर पावे प्रेम सो, धोखा देइ बहाय ।
प्रेम भक्ति जाने विना, जिव परले तर जाय ॥ १ ॥

रमनी । प्रेम अच्छरको ।

अच्छर प्रेम लखै जो कोई । प्रेम विना सब दुनी विगोई ॥ जो कोइ करै प्रेम मो बासा । जरा मरणकी छूटै आसा ॥ १ ॥ जोगी गोरख बहु विधि गावें । बहुत प्रेम सो नाद बजावें ॥ नाद बजाय भेद नहिं पावें । छूटै प्रान बहुत पछतावें ॥२॥ एक प्रेम संन्यास विचारे । तीरथ वरत करि काया गारे ॥ करै तपस्या होमैं काया । अच्छर प्रेम कहो कहँ पाया ॥ ३ ॥ एक प्रेमसे पढै पुराना । करम भरम कथि भाषै ज्ञाना ॥ पाप पुण्य बहु विधि अरथावे । अच्छर प्रेम कहो कहँ पावे ॥ ४ ॥ एक प्रेम गहि कुलकी कानी । डालि तोड आमकी आनी ॥ करवा चौथ करै बहु पूजा । अच्छर प्रेम कहो कहँ सूजा ॥ ५ ॥ तुरुक कतल करि दीन बनावै । पीर औलिया बहुत मनावै ॥ आयत बैंत हदीस अति गावे । धारै प्रेम मक्के चलि जावे ॥ ६ ॥ पढै प्रेम औ छुरी चलावे । अच्छर प्रेम कहो कहँ पावे ॥ जीव दया दिलमें पहिचाना । सोई प्रेम निज प्रेम समाना ॥ ७ ॥

प्रेम प्रेम सबही कहै, प्रेम न चीन्है कोय ।
जाहि प्रेम साहिब मिले, प्रेम कहावै सोय ॥ २ ॥

रमैनी रहनी गहनी ।

रहनि गहनि पावे जो कोई । शब्द सार निअच्छर सोई ॥ अच्छरमें निहअच्छर सारा । ताहि पाय कोइ हंस हमारा ॥१॥ हंस होय परखे वह वानी । अच्छर भेद करै पहिचानी ॥ अच्छर भेद करै कडिहारी । निहअच्छर महँ हंस उवारी ॥ २ ॥ अच्छर निहअच्छर भेद निनारा । जो परखे सो भवजल पारा ॥ कहे कवीर जो कहै विचारै । आप तरै औरनको तारै ॥ ३ ॥

शब्द सार निहअच्छरा, जब तब करियो याद ।
अन्त फलेगी माहिली, ऊपरकी सब बाद ॥ ३ ॥

रमैनी यमजाल ।

तीन लोक जम जाल पसारा । नेम धर्म षटकर्म अचारा ॥ आचारे सब दुनी भुलानी । सार शब्द कोउ विरले जानी ॥ १ ॥ सत्तपुरुषको जानै कोई । तीन लोक जाते पुनि होई ॥ करम भरम तजि शब्द समावे । इस्थिर ज्ञान अमरपद पावे ॥२॥ सत्यशब्द को करे विचारा । सो छूटे जमजाल अपारा ॥ कहै कवीर जिन तत्त विचारा । सोहं शब्द है अगम अपारा ॥ ३ ॥

शब्द हमारा सत्य है, सुनि मत जाहु सरख ।
जो चाहे निज मुक्तिको, लीजो शब्दहिं परख ॥ ४ ॥

रमैनी—सांचाकडिहार ॥

नाम अमलमें रहे मतवाला । प्रेम अमीका पीवे प्याला ॥ ज्ञान दीप निज भीतर बारा । सो कहिये सांचा कडिहारा ॥१॥ और अमलको रंग न करई । माया ममताको पर हरई ॥ सार शब्दमें ध्यान लगावे । सो कडिहार जम जाल बचावे ॥ २ ॥ दया छमा औ शील विचारा । धीरज धरम संतोष अचारा ॥

यह सब धरे ममता मारे। सो कडिहार जगत जल तारे॥३॥ शब्द सरोतर हिरदय सांचा। छाडि परपंच सत्यसे राँचा॥ सत्यनाम मो रहै न काँचा। सो कडिहार जगत सो बाँचा॥४॥ कुल करनाको मेटै धोखा। समता ज्ञान सु अंतर पोखा॥ ज्ञान रतनके पूरे नौका। सो कडिहार बैठिहै चौका॥५॥ दया छिमा संतोष विचारा। शील वैराग ज्ञान अधारा॥ काम क्रोध चिन्ता नहिं परई। सो कडिहार आरति करई॥६॥ आसा वासा मनको नासे। माया मोह न फटके पासे॥ कर्म कला सो तिनका तोरे। सो कडिहार नारियल मोरे॥७॥ सिख साखा सब प्रेम बढावैं। बहुत भांति ते सेवा लावें॥ कोटिक शिष्य करे सनमाना। रह कडिहार शब्द लपटाना॥८॥ गुरुका शब्द सदा परकासे। भेद भरम का दुविधा नासे॥ नहिं तो कालरूप कडिहारा। सब जीवनका करे अहारा॥९॥ लोभ मोहकी धरै सगाई। शब्द छाडि जग करै ठगाई॥ शब्द चाल हिरदे नहिं आवे। सो कडिहार कस लोक सिधावे॥१०॥

आसन चाँपे फूलके, धरै जु जमको भाव।
कहैं कबीर तब जानि है, पडै बज्रको घाव॥५॥

रमैनी—सत्यनाम।

सत्यनाम सुमिरो मन माहीं। जहवाँ रजनी वासर नाहीं॥ आदि अन्त नहि धरनि अकासा। पावक पवन न नीर निवासा॥१॥ चन्द सूर तहवाँ नहि कोई। प्रात सांझ तहवाँ नहिं दोई॥ कर्म भर्म पुण्य नहिं पापा। तहवाँ जपियो अजपा जापा॥२॥ झलमलाट चहुँदिस उँजियारा। वरषे तहाँ अगरकी धारा॥ तहँ सतगुरुको आसन होई। कोटि माहिं जन पहुँचे कोई॥३॥ दसो दिसा झिलमिल तहँ छाजा। बाजे तहाँ सु अनहद बाजा॥ तहवाँ हंसा ध्यान लगावे। बहुरि न जोनी संकट आवे॥४॥

उहवाँको सुख वरनि न जाई। सतगुरु मिलै तो देह लखाई॥ ज्यों गुंगाको सुपना देखो। ऐसो जीवत जनम को लेखो॥५॥

सा०-मन पवना दुइ थिर हुआ, भया प्रेम परकास।
जीवातम जहँ रमि रहा, पूरन ब्रह्म विलास॥६॥

रमैनी—रहनी पहचान।

सतगुरु सो सतनाम सुनावे। और गुरु कोइ काम न आवे॥ तीरथ सोई जो मोंछै पापा। मित्र सोई जो हरै संतापा॥१॥ जोगी सो जो काया सोधे। बुद्धि सोई जो नाहि विरोधे॥ पण्डित सोई जो आगम जानै। भक्त सोई जो भय नहिं आनै॥२॥ दातै जो औगुन परहरई। ज्ञानी सोइ जीवता मरई॥ मुक्ता सोई सतनाम अराधे। श्रोता सोई जो सुरतिहिं साधे॥३॥ सेवक सोई गहै विश्वासा। निसिदिन राखै संतन आसा॥ सतगुरु का लोपै नहि बाचा। कहै कवीर सो सेवक सांचा॥४॥

जीवन मरन जानै नहीं, अंध भया सब जाय।
द्वारे दाद न पावई, अनेक जनम पछताय॥७॥

अथ कवीर अष्टाङ्गयोग प्रारम्भः।

अविगत योग रमैनी॥१॥

अविगत लीला अगम अपारा। धरनी धन्यो संत औतारा॥ अविगत लीला अगम अलेखा। अबरन बरन रूप नहिं रेखा॥१॥ जा गति सुर नर मुनि नहिं पाई। अविगतकी गति वरनि नहिं जाई॥ शेष सहस मुख निसिदिन गावैं। इस्तुति करत पार नहिं पावैं॥२॥ वेद कोटि सहस गुण गावे। अविगतकी गति बरनि नहि जावे॥ कहँलों कहौं कहा नहिं जाई। अविगतिकी गति अविगति भाई॥३॥

सा०-अविगतिकी गति विगत है, मन बुधि चितते दूर ।
आपा मेटि सतगुरु मिलै, पावे दरस हजूर ॥ १ ॥

कर्मयोग रमैनी ।। २ ।।

योगी योग बहुत जो करई । क्रिया योगते नहिं निस्तरई ॥ फिर फिर आवै फिर फिरि जाई । कर्महि कर्म बहुत उरझाई ॥ होय निहकर्म नाम जो ध्यावे । योनी संकट बहुरि न आवे ॥ कर्महिं कर्म बँधा बहु भारा । कर्महि कर्म अटका संसारा ॥ देह कर्म जो दीन उठाई । मनका कर्म छुटै नहिं भाई ॥ जब लग मनका कर्म न खोवे । तब लग मन निरमल नहिं होवे ॥ मनकी क्रिया जबै मिटि जाई । तब प्रभु मिलै सहजमें आई ॥ मने निरञ्जन आपुहिं होई । याको जाने विरला कोई ॥

तन क्रियाको छाडिके, मन क्रिया रुचि राख ।
कर्म क्रिया अभिमान तजि, सत्यनाम निज भाख ॥२॥

तत्कर्मयोग रमैनी ।। ३ ।

तन कर करनी देहु बहाई । मन कर करनी सत्य मिलाई ॥ मनकी क्रिया सत्य जो होई । ताहि समान क्रिया नहिं कोई ॥१॥ सांख्य योग करना है—सारा । जेहिते उतरे भवजल पारा ॥ सत क्रिया ते ज्ञानी भयऊ । सत क्रिया साहब मिलि गयऊ ॥ २ ॥ सत क्रिया सत पुरुषहि ध्यावे । सत क्रिया सतनाम मिलावे ॥ सत क्रिया जग होय उदासा । सत क्रियाते मुक्ति निवासा ॥ ३ ॥

समौ०-सत्य क्रिया निर्वाण है, है तन मन ते भिन्न ।
मन पवना दिढ करि गहै, सत्यनाम निज चिन्ह ॥३॥

अष्टांगयोग अन्तर्गत.

सांख्य योग रमैनी ।। ४ ।।

अब मैं सांख्य योग बतलाऊँ । योग अष्टाङ्गके लच्छन दिखलाऊँ ॥ इक इकके चारि चारि लच्छन । जो जाने सो होय विचच्छन ॥१॥ यों तो कहे लछन बतीसा । अष्टांगयोगमें एकहि

दीसा। अष्टांगयोग सांख्य जो जाने। और लच्छन बत्तीस पिछाने ॥ २॥ प्रथम योग ज्ञान बखाना। दूसर विचार कहै परमाना॥ तीसर योग विवेकहिं जाने। चौथा योग शील परधाने ॥ ३ ॥ पँचवां योग संतोष बखाना। योग निरवैर छठवहिं माना ॥ सतवाँ सहज योग है भाई। अठवाँ शून्य एक लौलाई ॥ ४ ॥

समौ–तेई भवसागर तरै, या करनी निज सार।
सत क्रिया सतसो गहै, सत्यनाम आधार ॥ ४ ॥

ज्ञानयोग १ रमैनी ॥ ५ ॥

प्रथम योग ज्ञान है भाई। तेहिते सुख परम पद पाई॥ निरालंब अलब न कोई। सतगुरु इच्छा होय सो होई ॥ १॥ करम भरम तजि साहब जानै। भली बुरी कछु चित्त न आनै॥ निरवासिक बास नहिं कोई। जङ्गल वस्ती एकै होई ॥ २ ॥ होय निरभय रहै ततसारा। बाहर भीतर अलख अपारा ॥ द्वैत विचार न मनमें आवे। आतमरूप सदा दरसावे ॥ ३ ॥

समौ–एक नामको जानिके, दूजा देइ बहाय।
तीरथ वरत जप तप नहीं, आतम ब्रह्म समाय ॥ ५ ॥

विचारयोग २ रमैनी ॥ ६ ॥

दूजा योग विचार सम्हारे। निरमोही होय आप विचारे ॥ लै निरद्वन्द रहै जगमाहीं। जगके सुखसों लागे नाहीं ॥ १ ॥ मातु पिता सुत नारि निभावे। काम क्रोध मद लोभ भुलावे ॥ होय निशंक शब्द सो लागे। अनहद सुनै आतमा जागे ॥ २॥ देह अदेह करै निरुवारा। देही छोड विदेह पैसारा ॥ देह छोड विदेह समाना। हंसा पावे पद निर्वाना ॥ ३ ॥

समौ–जो कुछ करे सुविचारके, पाप पुन्य ते न्यार।
नाम कवीरा जानिके, जाय पुरुष दरबार ॥ ६ ॥

विवेकयोग ३ रमैनी ॥ ७ ॥

तीजो योग विवेक कहावे । बिन विवेक कोइ पार न पावे ॥
जाके समाधान मन होई । भली बुरी कहि जावै कोई ॥ १ ॥
समदर्शी सम ज्ञान विचारे। सब घट भीतर ब्रह्म निहारे॥ प्रीति गहै सो नाम समाना । और सकल जग मिथ्या जाना ॥ २ ॥
जाके शान्ति होय घट मांहीं । कोइ कछु कहो क्रोध मन नाहीं ॥
सोइ विवेकी सत पद जाने । सबही आतम एक पिछाने ॥ ३ ॥

समौ-जब लग नहीं विवेक मन, तब लग लगै न तीर ।
भवसागर नामी तरै, अस कथि कहैं कबीर ॥ ७ ॥

शील योग ४ रमैनी ॥ ८ ॥

चौथा योग शील कहि दीन्हा । बिना शील साहब नहिं चीन्हा॥
निर्मल सोचहिं सोच विचारे। सुच रुच दया धरम उर धारे॥१॥
मनको संयम करै जो जानी । पांचो पकडि एक घर आनी ॥ सत्यशब्द भासे संसारा । सतही ते उतरे भवपारा ॥ २ ॥ होय सरोतर सत्य बखाने । भावे भला बुरा कोइ मानै ॥ बुरा कर्म ते लज्जा करई । बिना बिचार नहीं पगु धरई ॥ ३ ॥ जो काहूको होय उपकारा । मन बच कर्म करै उपचारा ॥ शीलवान जग अस बुधि पाई। आपन दिसि वह चूके नाहीं ॥४॥ शील पाइ इन्द्री निज साधे । गुरुगम पन्थ नाम अवराधे ॥ जियत मरै सोई शिलवन्ता । शब्द विचारि गहै मगु कन्ता ॥ ५ ॥

समौ-शील छमा जब ऊपजे, अलख दृष्टि तब होय ।
विना शील पहुँचे नहीं, कोटि कथै जो कोय ॥८॥

संतोषयोग ५ रमैनी ॥ ९ ॥

पंचवाँ योग संतोष बखाना। विन संतोष बूडे अज्ञाना ॥ मानो नहीं रंक औ राजा । होय अमान नहिं काहुसो काजा ॥ १ ॥
नर्क स्वर्ग बंच्छे नहिं कोई। होय अबंच्छक साहिब सोई ॥ मन

स्थिर करि प्रेम उपजावे। अनहद शब्द सुने चित लावे ॥ २ ॥ जो कछु कर्म योगते आवे। जानि प्रारब्ध शीस चढावे॥ मनमें छोभ न लावे कबहीं। जो कछु आवे सह ले सबहीं ॥३॥ होनी होय टले नहिं काहू। करि असंतोष मिले का लाहू॥ संतोषी हो ऐसी मति राखे। निराश बचन कबहुं नहिं भाखे ॥ ४ ॥ सोई योग संतोष कमावे। काल जाल ते जीव छुडावे ॥ बिन संतोष काल मुख जाई। पाई संतोष काल बहाई ॥ ५ ॥

समौ–निरमल शब्द प्रकाश करि, रह सुख सेज समाय।
सत्यनाम संतोष बिन, सत्य लोक नहिं जाय ॥९॥

निर्वैर योग ६ रमैनी ॥ १० ॥

छठवें योग है निरवैरा। जासे जगमें होय निवेरा॥ सब घट भीतर एक करि जाने। होय सुहृद प्रेमहि परमाने॥१॥ सुखदाई सबहिनको भावे। जल सरूप होय अग्नि बुझावे॥ शीतल होय सबहिनको भावे। समता होय तुरमता पावे ॥ २ ॥ निरबैरी निहकाम रहावे। साईं सेती नेह लगावे ॥ साईंके सबही जग माहीं। कापर दाया कापर नाहीं ॥ ३ ॥ अपनो रूप जगत बिखराना। कोहे आपन कोहै आना॥ कासन बैर करो मोर भाई। अपनहि रूप रहा जग छाई ॥ ४ ॥ अपनो दांत जीभको काटे। तो कहँ कोई जीभ कहँ छाँटे॥ आपन अंगुरी आंख गडावे। तो कहँ अंगुरी काटि गिरावे ॥ ५ ॥ एकहि आतम सकल समाना। मायाके गुण आनहि आना॥ अहै निजरूप सकलमें एक्कै। जो वस काशी सो बस मक्कै ॥ ६ ॥ मायावश हो सब जग भूला। मोर तोरके गर्वहिं फूला ॥ निरवैरी निहकाम सु होवे। सतगुरु ज्ञान वैर सब खोवे ॥ ७ ॥

समौ–कंचन कांच है एक सम, दुष्ट मित्र सब एक।
दूजा भाव न जानई, एक नामकी टेक ॥ १० ॥

सहज योग ७. रमैनी ॥ ११ ॥

सतवाँ योग सहज है मीता । सहज भावसो सबही जीता ॥ एक विचार प्रेम उपजावे । पाँचूँ इन्द्री सहज समावे ॥ १ ॥ निरलोभी होय लोभ भुलावे । भवसागरमें बहुरि न आवे ॥ निर संसिक होवे जो कोई । संशय काल गहै नहिं सोई ॥ २ ॥ होय निरलेप कितहुँ नहिं लागे । सत्य शब्द गहि आतम जागै ॥ सहज ध्यान रहै लौलाई । सहजे सहजे पार लगाई ॥३॥ जा घट ज्ञान सहज समावे । सहजे माया आप भुलावे ॥ सहजे परिचय आतम होई । ब्रह्मरूपमें सहज समोई ॥ ४ ॥ सहज समाधि भले जग जाने । गुरु प्रतापते सहज पिछाने ॥ जप तप योग सहजमें आवे । काया कष्ट न कबहुँ करावे ॥५॥ आतम परिचय सहजहिं पावे । खुले नैन सो दरस करावे ॥ विना सहज दूसर कछु नाहीं । सहजेमें सब रहा समाई ॥ ६ ॥ सहज योग जो कोई धारै । आप तरे औ जगको तारै ॥ सहजहिं आतम ब्रह्म प्रकाशा ॥ सहजे जीव सुज्ञान विलासा ॥७॥ विना सहज नहीं भव पारा । विना सहज बूडे भव धारा ॥ कहै कबीर सुनो नर लोई । सहजे सहज भया सब कोई ॥ ८ ॥

समौ-सब जग झूठा जानिके, गहे नाम सत सार ।
सहजे सहजे प्रकट भया, सतगुरु शब्द सम्हार ॥ ११ ॥

शून्य योग ८ । रमैनी ॥ १२ ॥

आठम योग शून्य है नीके । बिना नाम जप लागु सुफीके ॥ सहजे नाम विदेह समावे । विना नाम कहाँ सुख पावे ॥ १ ॥ शून्यहिते सब जग उपराजा । शून्यहिते भव शब्द अवाजा ॥ शून्य सहज एक नाम विराजे । अनहद बाजा बाजन बाजे ॥२॥ सहज शून्य जो लावे ध्याना । अलख लखै आप बलवाना ॥ नाम सहज शून्यमें होई । अलखहिं लखे आप है सोई ॥ ४ ॥

सहज शून्य जो ध्यान लगावे। भौजल तरत वार नहिं लावे ॥
सुरतै शब्दमें सहज समावे। सहज समाधि परमपद पावे ॥५॥
जब लग नाम विदेह न आवे। तब लग सहज समाधि न पावे ॥
ध्यान विदेह औ ज्ञान विदेहा। सहज समाधिमें चहिये एहा ॥६॥
ध्यान विदेह लखे जब प्रानी। विदेह नाम मिले परमानी ॥ काया
नाम सबे जग जाने। नाम विदेह विरले पहिचाने ॥ ७ ॥

समौ-ज्ञान विचार विवेकसो; शील संतोष समाय।
नाम गहै निरभय रहै, सहज सतलोक समाय ॥ १२ ॥
शब्द सनेही होय रहै, जगते रहै उदास।
सुख सागरमें घर करै, सत्य नाम विश्वास ॥

अष्टांगयोगका सार (१) ज्ञान परीक्षा साखी।

ज्ञानी लक्षण चार हैं, सुनि त्यागो विस्माद।
निरालंब निहभ्रमपुनि, निर्बासिक निहस्वाद ॥ १ ॥

भावार्थ-ज्ञानकी परीक्षा चार गुणोंसे होती है-
१ निरालम्ब, २ निःभ्रम, ३ निर्वासना, ४ निःस्वाद ॥

(२) विचार परीक्षा।

विचार परीक्षा चार है, निर्मोही निरबन्द।
निःशंक निरावरण सोई, छुटे कालको फन्द ॥ २ ॥

भावार्थ-विचार योगकी प्राप्ति इन चार लक्षणोंसे जानी जाती है-१ निर्मोही होवे, २ निर्बन्ध हो, ३ निःशंक हो, ४ निरावरण अर्थात् आत्मरूपमें सन्देह न हो ॥

(३) विवेक परीक्षा।

सर्वज्ञी सुचेत होय, सावधान मन मार।
सार ग्राही सुजानिये, विवेक परीक्षा चार ॥ ३ ॥

भावार्थ-१ सर्वज्ञी अर्थात् किसी बातको सुनतेही उसकी तहको पहुंच जाना। २ सुचेत अर्थात् सदा हृदयका जागृत

रखना, गाफिल न होना, प्रमादमें न भूलना, ३ सावधान मन इन्द्री आदि सबोंपर सदा दृष्टि रखना, जिसमें ये ठगने न पावें। ४ सारग्राही–कैसा भी प्रसंग उलटा-सुलटा सम्मुख आकर उपस्थित हो उसमेंसे उत्तम सार ले लेना ॥

(४) शील परीक्षा।

शुचि साधन संयम करन, श्रवण करन गुरु वानि।
विनय वचन सब सो कहै, रूप आपनो जानि ॥४॥

भावार्थ–जिसमें शील आता है–उसमें चार गुण आकर बास करते हैं। १ पवित्रता–भीतर बाहर दोनों प्रकारसे पवित्र रहता है। २ संयम–शारीरिक मानसिक जितने कार्य्य हैं सब नियम पूर्वक करता है। ३ गुरुकी वाणी और उपदेशमें श्रद्धा (विश्वास) रखता है। ४ नम्रता–सबकेसाथ कोमलतासे वरतता है।

५ संतोष परीक्षा ॥ ४ ॥

संतोष परीक्षा सुनि लीजे। अयाची अमानी मन दीजै ॥
स्थिर वाञ्छा नहि करई। सो संतोषी संत उच्चरई ॥५॥

भावार्थ–जिसके हृदयमें संतोषका वास होता है वह–१ अयाँची–अर्थात् यथा प्राप्त संतुष्ट रहकर उसीमें निर्वाह कर लेता है किसीसे याचना करनेकी इच्छा नहीं रखता। २ अमानी–मिथ्या अभिमान कर आप दुःखी नहीं होता; दूसरोंको भी दुखी नहीं करना। ३ स्थिर–अर्थात् सदा धैर्यके साथ अपना सब कार्य करता है कभी घबराता नहीं। ४ अबांछित–यथा प्राप्तमें संतुष्ट रहनेवाला अधिककी वांछाही क्यों करेगा।

६ निर्वैर परीक्षा ४.

सुहिरदयता शीतलता, समता जान सुजान।
सुखदाई सब जीवको, निरवैरी पहिचान ॥ ६ ॥

भावार्थ–निर्वैरता जिसमें आती है वह– १ सुहृद होजाता है

किसीके साथ किसी अवस्थामें भी छल कपटका वर्तांव नहीं करता। २ शीतलता-अर्थात् सदा शान्त अक्रोध रहता है। ३ समता-धारण करता है अर्थात् सब जीवोंके सुख दुःखोंको अपने आत्माके समानही समझकर उनसे समानता वरतता है। ४ सुखदाई-सबके लिये सुखदाई होता है अर्थात् कोई ऐसा कार्य्य नहीं करता जिससे किसीको दुःख होवे।

७ सहज परीक्षा ४.

निह प्रपंच निहतरंग रु, निर्द्वन्द निरलेप।
चारो लक्षण सहजके, मिटे सकल विक्षेप ॥ ७ ॥

भावार्थ-सहजयोग अर्थात् सहज वृत्तिको धारण करनेवालोंमें चार गुण स्वभावसेही वास करते हैं। १ निष्प्रपंचता-सहज वृत्तिवाला पुरुष प्रपंचमें कभी नहीं फँसता-जहाँ कहीं प्रपंचकी वृद्धि देखता है आप वहाँसे खसक जाता है। २ निहतरङ्ग-नाना प्रकारके मनके तरङ्गोंसे अपनेको बचा रखता है। ३ निर्द्वन्द-द्वन्द्वंसे अलग रहता है। ४ निर्लेप-सदा सबमें रहते हुए भी निर्लेप-रहता है।

"सब संग रसिये सब संग बसिये सबका लीजे नाम।
हाँजी हाँजी सबकी कीजे. रहिये अपने ठाम ॥"

८ शून्य।

लव धीरज अरु ध्यान जो, मिली समाधि है चार।
ये लक्षण हैं शून्यके, किये संत प्रचार ॥ ८ ॥

भावार्थ-शून्य अथवा समाधिवानके ४ लक्षण हैं। १ लव-एक ओर वृत्ति लगी रहै. २ धीर्य-जिस काममें लगे दृढ होकर लगे. ३-ध्यान-जिधर वृत्ति जाय उधरही तन्मय हो जावे. ४-समाधि-ध्येय वस्तुमें ऐसा निमग्न हो जाना कि, जुदाई जान न पडे ॥

समौ-ये बत्तिस जब ऊगहीं, तैतीसो छिप जाय ।
कहै कवीर सुनु गोरखा, आवा गमन नसाय ॥

इति अष्टाङ्ग योगकी रमैनी ।।

रमैनी--करीमको हिकमत ।।

वाह करीम वलि हिकमत तेरी । खाक एक सूरत बहुतेरी ॥
औंधे बासन नीर जमाया । जतन जतन करि नूर उपाया ॥ १ ॥
आप मनीका सकल पसारा । हिन्दू तुरुक कोई नहिं न्यारा ॥
दम दम करि बोलै सब कोई । दमके भीतर हरदम होई ॥ २ ॥
बाहर दमको लखै जो कोई । ताको आवा-गमन न होई ॥ दम
लखिया जिन लखिया नामा । दम छूटा पाये निज ठामा ॥३॥
पीर पैगम्बर शेख मुलाना । तुम्हरी सिफत सुनि भै दिवाना ॥ कहैं
कवीर वह साहब न्यारा । यार वाः यार वाः यार हमारा ॥४॥

रमैनी--काया मसजिद ।।

यार वा यार वा यार हमारा । सब जीवनका प्रान अधारा ॥
काया मसजिद अजब सँवारी । दोय खम्भा दस लगी किवारी
॥१॥ ता भीतर होय बंग निमाजा । हरदम इरदम हरदम साजा ॥
एक मसजिद दसो दरवाजा । मन मुल्ला तहँ पढै निमाजा ॥२॥
ज्ञान करद मौन दिल पकरी । बिस्मिल कीन्हों पांचो बकरी ॥
पांच चोर करैं कुफराना । मारी सवदसूँ किया छिमाना ॥ ३ ॥
पांच पीर बसै इक थाना । शब्द अनाहद घुरै निशाना ॥ कहैं
कवीर अजब कछु देखा । नूर नाम सत साहब पेखा ॥ ४ ॥

रमैनी-मन ।।

मनकी मूठ लखै जो कोई । सो जन संत पारखी होई ॥ नगन
मगन बकला कंद खाई । देखि दिसा मनको पतियाई ॥ १ ॥
बहु विधि बकता चतुर परवीना । अलप अहारी काया खीना ॥
बहु बुधिमान प्रेम हित रोवै । रंचक चाह रसातल बोवै ॥ २ ॥

ताके फंद परे जो कोई। रंचक सुख दुख बहुते होई॥ कहै कवीर सोई निज दासा। जाको पारब्रह्मकी आसा॥ ३॥

साखी-जो तू चाहे मुझ्झको, मति कछु राखे आस।
मुझ्झ सरीखा होय रहो, सब कुछ तेरे पास॥

रमैनी-मन राजा॥

मन राजा संग पवन वजीरा। चित चंचल निश्चल नहि थीरा॥ पांच मवासो त्रिगुण खाई। पांच पचीस जिनके संग भाई॥ तैंतीसो मिलि द्वन्द्व मचावें। मन राजाको नाच नचावें॥ ज्ञान सूरमा बीडा लीन्हा। तैंतीसों पर डेरा दीन्हा॥२॥ पांच मवासी मिलिया आई। मन राजा पर फिरी दुहाई॥ जोग जुगतका लशकर साजा। गगन दमामा निरभय बाजा॥ ३॥ झलकत चन्दा जोति अपारा। मिटिगा तिमिर भया उजियारा॥ गुरु परताप सकल बस हूआ। नहीं कोइ जूझा नहि कोइ मूआ॥४॥ आप आपमें सबही जाना। जिन जाना तिन निजकै माना॥ कहैं कवीर या पद को बूझे। आपा मिटे तबहीं घर सूझे॥५॥

साखी-ऐसी बानी बोलिये, मनका आपा खोय।
या आपाको डार दे, दया करै सब कोय॥

रमैनी-कथता बकता॥

कथता बकता श्रोता सोई। आप विचारे ज्ञानी होई॥ चंचल चपल बुधिका बेला। अगिन पवन पानीका मेला॥ १॥ नव दरवाजा दसू दुवारा। बूझहु ज्ञानी ज्ञान विचारा॥ माटीका गौन पवनका सूआ। पांच तत्त्वले परगट हूआ॥ २॥ काया माटी बोले पवना। बूझो पण्डित मूवा कौना॥ मुई सूरति बाद अहं-कारा। एक न मूवा बोलन हारा॥ ३॥ जिस कारन तप तीरथ जाहीं। रतन पदारथ है घर माहीं॥ पढ पढ पंडित वेद बखाना।

भीतर होती वस्तु न जाना ॥ ४ ॥ हूँ न मरूँ मेरि मरै बलाय। बोलन हारा रहै समाय ॥ कहैं कबीर गुरु ब्रह्म बताया। मरता जीता नजर न आया ॥ ५ ॥

सा०-राम मरै तो हम मरै, नातर मरे बलाय।
अविनासीको चीगुटा, मरे न मारा जाय ॥

रमैनी। बोलना।

बोलना कहा कहिये रे भाई। बोलत बोलत तत्त्व नसाई ॥ १ ॥
बोलत बोलत बढै विकारा। चित्त बोलेका होय विचारा ॥ २ ॥
संत मिलै कछु कहिं कहिये। मिलै असंत मौन होय रहिये ॥ ३ ॥
ज्ञानी सो बोलै हितकारी। मूरख सो बोलै झखमारी ॥ ४ ॥
कहैं कबीर आधा घट डोलै। भरा होय तो मुखां न बोलै ॥ ५ ॥

सा०-बोली तो अनमोल है, जो कोइ जानै बोल।
हिये तराजू तौलके, तब मुख बाहर खोल ॥

रमैनी सातगुरुकी।

गुरु गुरु कहत सकल संसारा। गुरु सोइ जिन तत्त्व विचारा ॥ १ ॥ प्रथम गुरु हैं माता पिता। रज वीरजके जो हैं दाता ॥ २ ॥ दूसर गुरु है मनसा दाई। गर्भवासको बंध छुडाई ॥ ३ ॥ तीसर गुरु जिन धरिया नामा। लेले नाम पुकारे गामा ॥ ४ ॥ चौथे गुरु जिन दीच्छा दीन्हा। जग व्यवहार रीति सब कीन्हा ॥ ५ ॥
पांचे गुरु जिन वैष्णव कीन्हा। रामनामको सुमिरन दीन्हा ॥ ६ ॥
छठे गुरू जिन भ्रम गढ तोडा। दुविधा मेटि एकसों जोडा ॥ ७ ॥
सातम गुरू सत शब्द लखाया। जहाँका तत ले तहाँ समाया ॥

साखी-सात गुरू संसारमें, सेवक सब संसार।
सतगुरु सोई जानिये, भव जल तारे पार ॥

रमैनी निर्वान देश ॥

हंस वा दिस करहु पयाना। जा देस बसै पुरुष पुराना ॥
हल न चलै जहँ बहै न कुदारा। अमृत भोजन करै अहारा ॥ १ ॥

चलै न चरखा बजै न ताती । अम्मर चीर पहिरे बहु भांती ॥
बरषै न मेघ चुवै नहिं पानी। शीतल सुरति अमी भरि आनी ॥२॥
चंद न सूर दिवस नहिं राती। कुल नहिं भेद वरन नहिं जाती ॥
रोग न दोष जहँ शोक न संतापा। कहै कवीर जहँ समरथ आपा ॥३॥

साखी-सुरति समानो निरतमें, निरत रही निरधार ।
सुरति निरति परचा भया, तब पाया दीदार ॥

रमैनी गुरुकी ॥

गुरु सम दाता कोइ नहिं भाई। मुक्तिक मारग दियो बताई ॥
गुरु विन हिरदय ज्ञान न आवे । ज्यों कस्तूरी मिरग भुलावे ॥
गुरु विनु मिटै न अपनो आपा । भरम जेवरी बाँध्यो साँपा ॥
गुरु विनु केहरि कूपहिं पडिया। गुरु विनु गज छायहिं लडिया ॥
गुरु विन स्वान देखि बहु भेखा । मन्दिर एक कांचको देखा ॥
चहुँ दिसि दीखै अपनी छाया । भूँकत भूँकत प्राण गँवाया॥ गुरु विन सुवा नलनी सो बंधा । गुरु विन कपि पडो सो फंदा॥ कहैं कवीर भरम्यो संसारा । गुरु विन सतगुरु किम उतरै पारा ॥

साखी-भरम जेवरी गज बंध्यो, फिर जन्मे मर जाय ।
कहै कवीर सतगुरु मिलै, तब सतलोक सिधाय ॥

रमैनी-विरह वार्ता ॥

तैं कहँ जानै बिरहकी बाती। प्रेम न उपजै तेरी छाती॥ जैसी प्रीति मच्छ जो कीन्हा। जलते विछुडे जीवहिं दीन्हा॥ ऐसी प्रीति मच्छीकी जानी। मूवा पीछे माँग्यो पानी॥ धन सरवर जहँ काली माटी। प्रीतम बिछुडे छाती फाटी ॥ कब तोर हाड रु माँस सुखाया। कब तोर नयनन लोहू आया ॥ कब तैंने प्रेम पियाला पीया । कब तैं पिय मारग सिर दीया ॥ कहैं कवीर योंही तन खोया ॥ पाँव पसार पेट भर सोया ॥

सा०-जब लग विरह उपजे नहीं, तब लग नहिं पहिचान ।
प्रेम परगटचो जब अंगमें, मन तब किया कुरबान ॥

रमैनी-गुरुटेककी ॥

जाको टेक एक गुरु दाता । ताको और कछू न सुहाता ॥ पय जो बिगडा माखन होई । बिगडे छांछ कहे नहिं कोई ॥ पतिव्रताको लांछन होई । गनिका बिगडे कहत न कोई ॥ सूरा भागा आप विगोई । कायर भागा कहै न कोई ॥ नटनी नाचे आपा खोई । देखन हार पडै नहिं कोई ॥ भूला मनको जो समुझावे । आदि अंत सोइ संत कहावे ॥ कहैं कवीर हम एता कहिया । सांच माने सो नरकहिं गइया ॥

सा०-डालकी चूकी बांदरी, शब्दका चूका हंस ।
कहैं कवीर धर्मदास सो, दोऊ निरफल वंस ॥

रमैनी-गुरु महिमा ॥

सतगुरु बोलै अमृत वानी । गुरु विन मुक्ति नहीं रे प्रानी ॥ गुरु हैं आदि अंतके दाता । गुरु है मुक्ति पदारथ भ्राता ॥ गुरु गंगा काशी अस्थाना । चारि वेद गुरु गमते जाना ॥ गुरु है सुरसरि निर्मल धारा । विनु गुरु घटना हो उजियारा ॥ अडसठ तीरथ भ्रमि भ्रमि आवे । गुरुकी दया घर बैठहिं पावे ॥ गुरू कहै सोई पुन करिये । मातु पिता दोउ कुल तरिये ॥ गुरु पारस परसे नर लोई । लोहते कंचन होय सोई ॥ शुक देव गुरू जनक बिदेही । वो भी गुरुके परम सनेही ॥ नारद गुरु प्रह्लाद पठाये । भक्ति हेतु जिन दर्शन पाये । कागभुसुंड शम्भु गुरु कीन्हा ॥ अगम निगम सबही कहि दीन्हा । ब्रह्मा गुरु अग्निको कीन्हा ॥ होम यज्ञ जिन आज्ञा दीन्हा ॥ वशिष्ठ गुरू किया रघुनाथा । पाइ दरस तब भये सनाथा ॥ कृष्ण गये दुर्वासा शरना । पाइ भक्ति तब तारन तरना ॥ नारद दिच्छा धिमर सो पायो । चौरासी सो

तुरत छुडायो॥ गुरू कहै सोई है साँचा। विनु परिचय सेवक है काँचा॥ कहै कवीर गुरु आपु अकेला। दश औतार गुरुका चेला॥

साखी–राम कृष्ण ते को बडा, उनहू तो गुरु कीन।
तीन लोकके वै धनी, गुरु आगे आधीन॥

रमैनी—जुलाहाकी॥

जुलहा कहि कहि जग भरमाया। मो जुलहेका मरम न पाया॥ समझ विना जिव भरम भुलाना। विनही सूत न पसारे ताना॥ धरनि अकास बिच खाड खुदाई। चन्द सूर दोय नली भराई॥ आदि नामका पूरन पूरा। चेतहु अंधा पथ है दूरा॥ सूत कुसूत बुने नर कोरी। वाको सुरति निरति है जोरी॥ हम षट दर्शन हम षट भेखा। हमही तत्व अनूप अलेखा॥ हम हैं सकल सकल हम माहीं। हमते और दूसरा नाहीं॥ सबहीं कर्म हमारा कहिया। हम करमनते न्यारा रहिया॥ निरगुन सगुन खेल हमारा। हमरा चौदह लोक पसारा॥ बन्दीछोर है विरद हमारा। हमहीं बन्दी छुडावन हारा॥ जुग जुग बन्द छुडावन आये। ताते बंदीछोर कहाये॥ कहै कवीर हम अगम अपारी। स्वसम नलीसो एक हमारी॥

रमैनी—स्वरूप महिमा॥

जीवत जीव जागनी ठानै। माया ब्रह्म दोऊ पहिचाने॥ तीन सरूप एकहि देखा। ताको निहचल विज्ञान विसेखा॥ माया ब्रह्म दोऊते न्यारा। आगे पारब्रह्म उजियारा॥ विज्ञानीको कोइ नहिं पावे। वाहि स्वरूप नजर नहिं आवे॥ तृनकी ओट पहाड लुकाना। ऐसे ताहि दूर मति जाना॥ है हममें हमही सा देखा। निज सरूपको यही विशेखा॥ आवै कहीं कहूँ नहिं जाई। समुन्द्र लहरि समुन्द्र समाई॥ ज्यों बालक खेलै फिरकाई। देखि परै तो सकल फिराई॥ जो हिरदामें होय रहे थीरा। ताका विनसे नाहिं शरीरा॥ चंचल निहचल यहि रूपा। निरखे देखि यहि वस्तु

अनूपा॥ बिछरन मिलन होय कछु केरा। जैसे सोवै सुपना तेरा॥ सोवे जहां तहां उठि जागे। पंछी मनि राह उठि लागे॥ आगे पीछे मध्यम कोई। ऐसा सहज सरूपी होई॥

साखी-सहज सरूपी होय रहै, दिलकी दुविधा जाय।
अकह कबीरा क्या कहै, उलटि कालको खाय॥

रमैनी-कालजीत॥

काल न आवे निहचल होई। अब यह जतन करो सब कोई॥ निहचल चित्त न कबहुं चलावे। ताको काल न कबहुं सतावे॥ परगट कहा तब है जग माहीं। जागे जाकूं सूझै नाहीं॥ जो कोइ चेतन होय करि जागे। ताके तसकर कबहुं न लागे॥ कलह कल्पना सब विधि खोई। निहचै सहज सरूपी होइ॥ इच्छा ते जग जीवत नाई। ब्रह्म अनिच्छित गहै चित लाई॥ कारज कारनकी यह बाता। माया माहीं ब्रह्म समाता॥ माया माहीं ब्रह्म फंदाया। ताते पुरुष प्रकृति कहाया। अच्छर है इक और अनूपा॥ पारब्रह्म अन इच्छित रूपा। पूरण ब्रह्मते न्यारा होई। परमहंसनको प्यारा सोई॥ हंसदसा होय जु भाई। ताको काल कबहुँ नहिं खाई॥

साखी-काल काल सबही कहै, काल न जाने कोय।
जेती मनकी कल्पना, काल कहावै सोय॥

रमैनी-निर्वानपद।

ऐसा ब्रह्म विचारो भाई। शब्द उठै धुनि कहाँ समाई॥ काष्ठ मथि २ अगिन उपाई। उलटि अग्नि काष्ठको खाई॥ दोनों नास भयो इक ठाऊँ। उड गइ भसम धरेका नाऊ॥ भस्म भई उड कहवाँ गई। सो गति याकी ऐसी भई॥ मुए जीव जइहो जाहाँ। जीवतही ले राखो ताहाँ॥ जैसो केल कदली खंद। ऐसा पारब्रह्म गोविन्द॥ खोजत खोजत पायो ठौर। मैं जानो कछु आगे और॥ नहिं कछु नहिं कछु नहिं कछु सोई। पंछी पीछे खोज न होई॥

दास कबीर तहां लौलीन । आगे पन्थ न पीछे चीन ॥

सा०—सबही घर है गांवमें, गाँव कौन घर माहिं ।
ऐसे सब जग ब्रह्ममें, न्यारो कितहूँ नाहिं ॥

सत्यनाम ।

रमैनी–स्वरूप पहिचान ॥

आपने रूप राम हम पाये । ताते जीवन मुक्ति घर आये ॥ तब हम भक्ति कीन हरि केरी । आसा राखी मनसा घेरी ॥ आसा मनसा भई निरासा । छुट गये बन्धन भये खुलासा ॥ तब हम योगयुक्ति चित धरते । अष्ट कला मन पवना भरते ॥ अब हम पायो अपना भेव । आपुहि कर्ता आपुहिं देव ॥ तब हम जान्यो यह अब जानी । अन जानेसे करी पहिचानी ॥ गयो भरम मन बढ्यो हुलास । सहजहिं राम कबीरा दास ॥

सा०—अर्थ धर्म अरु काम तजि, देह काल सिर धूर ।
संशय नाहीं मुक्तिमें, ब्रह्म रहा भरपूर ॥

रमैनी एकतार ।

भजि यकतार भ्रममति भूलो । है यकतार सबनको दूलो ॥ बिन यकतार कस पतिवरता । एक पिया विन सबै अविरथा ॥ १॥ राम राम कहि भक्ति दिढावे । बिन यकतार राम कहँ पावे ॥ भागवत सौ पुरान उचारे । निगम चारि सुनि श्रुति विचारे ॥२॥ वेद पढे पढि अरथ बतावै । विन यकतार थाह नहिं पावै ॥ बिन अंकूर बीज नहिं ऊगे । विन यकतार हंस कहँ पूगे ॥ ३ ॥ बिन यकतार भक्ति क्या कीजे । गुरु प्रताप अमीरस पीजे ॥ ररंकार जहँ अनहद गाजे । ता ऊपर यकतार विराजे ॥४॥ इंगला पिंगला सुषमन साधे । ले उदान पौन तहँ बांधे ॥ अरधे उरधे सुरति लगावै । बिन यकतार पीव नहिं पावै ॥ ५ ॥ वेद पुरान अरु शास्तर सोधे । अर्थ करि करि मन परबोधे ॥ जहँलग वेद तहांलग

ओंकारा। केवल ब्रह्म वेद सो न्यारा॥६॥ षट दर्शन जहँ कोइ न देखा। वह यकतार सुरति सो पेखा॥ जाको गुरु यकतार लखाया। पहुंचा धाम बहुरि नहिं आया॥७॥ जैसे सरिता सिन्धु समाई। ऐसे हंसे सुरति मिलाई॥ है यकतार सजीवन बूटी। विन यकतार बात सब झूठी॥८॥ बात कहूँ तो कोइ न मानै। जिन देखा सोई पहिचानै॥ पूरब जन्म भक्ति परगटाई। सो यकतारहिं लखै बनाई॥९॥ छर अच्छर दोनों ते न्यारा। है यकतार सकल आधारा॥ है सब रस पर जिह्वा नहिं आवे। बैठि निरंतर नाद बजावे॥१०॥ जप तप और अनेक दृढावे। बिन यकतार मुक्ति नहिं पावे॥ जप तप व्रत खीन होय जाई। बिन यकतार न हंसा पाई॥११॥

समौ-सतगुरु सो साँचा रहै, सुरति रहै यकतार।
कहैं कबीर धर्मदास सो, पहुंचे लोक मंझार॥

रमैनी-ज्ञान विरह॥

लागी चोट शब्दकी तनमें। गिरह नहिं चैन चैन नहिं बनमें॥ सूरा खेत जबै मंडाना। ना जानू को रहै निदाना॥१॥ ढूँढत फिरूँ पीव नहिं पाऊँ। औषधि मूल कहाँ घसि लाऊँ॥ तुमसे वेद न हमसे रोगी। बिन दीदार क्यों जिये वियोगी॥२॥ एकहि रंग रंगी सब नारी। ना जानूं को पियकी प्यारी॥ कहै कवीर कोइ गुरुमुख पावै। बिन दरस न दीदार दिखावे॥३॥

समौ-साधु हमारे शिरधनी, हम साधुनकी खेह।
रोम रोममें रमि रहा, ज्यों बादलमें मेह॥

रमैनी घट दर्शन।

बंदा! दरसे सब घट माहीं। अंधरे अंखिया सूझत नाहीं॥ या घट चन्दा या घट सूरा। या घट बाजे अनहद तूरा॥१॥ या घट मथुरा या घट काशी। या घट पूरि रहा अविनाशी॥

या घट भीतर दस दरवाजा। पांच प्रधान छठौ मन राजा॥२॥
या घट भीतर सोलह खाई। चक्र फिरै गढ मुसौ न जाई॥ या
घट भीतर धोबि पुरानी। कपडा धोवे विनु सिल पानी॥ ३॥
धोयलले रे धोबिया मधुरिसि धारा। उत्तम निर्मल घाट हमारा॥
कहै कबीर कोइ धोवे विचारी। जो धोवे सो उतरै पारी॥४॥
समौ-घटहीमें सबहीं बसैं, जहं लगि ज्ञान विलास।
सब ऊपर साहब धनी, घटहीमें निज बास॥

रमैनी—योग भोगकी॥

दुनिया दिवानी हमहुं दिवाना। हमरे तो है अनहद ज्ञाना॥
दुनिया पट पटंबर भोगी। हम तो ज्ञान पदारथ योगी॥ १॥
दुनिया चाहै हस्ती घोडा। हम पाय पियादे गढ तोडा॥ दुनिया
चाहै विषरा प्याला। हम तो नाम सदा मतवाला॥२॥ दुनिया
अपने मारग जाई। हम तो सतकी राह चलाई॥ कहैं कबीर
हम पाई छाहीं। जीवतके संग मुवाके माहीं॥ ३॥
साखी–हम वासी वहि देशके, पार ब्रह्मका खेल।
दीपक पाया गैवका, बिन बाती बिन तेल॥

आदि रमैनी।

आदि रमैनी कहूँ विचारी। सुनियो संतो कथा निनारी॥
युग छत्तीस छयानवे लाखा। अरब कोटि सत सुकृत भाखा॥१॥
जब नहिं होते शून्य बिसून्ना। जब नहिं होतै पाप औ पुन्ना॥
न था वेद अरु ना थी बानी। ना था ब्रह्मा नहिं थी ब्रह्मानी॥२॥
ना था पवन नहीं था पानी। ना थी माया अकथ कहानी॥ ना
थी धरती नहीं अकासा। जब नहिं होता तत्त्व विलासा॥ ३॥
जब नहिं होता तुरुक औ हिन्दू। माताका रक्त पिताका बिन्दू॥
जब नहिं होता गाय कसाई। कहो विसमिल्लाह किन फरमाई॥४॥
जब नहिं होता भादू माहा। कच्छ मच्छ नहीं बाराहा॥ जब

नहिं होते रघुपति रावन। जब नहिं होते कृष्ण बलि बावन॥५॥
जब नहिं होते शम्भू गौरा। जब नहिं होते दश औतारा॥ जब
नहिं होते कूर्म औ शेषा। जब नहिं शारद गौरि गणेशा॥ ६॥
जब नहिं होते निरंजन राया। जिन जीवन कहँ बांधि झुलाया॥
तेतीस कोट देवता नाहीं। और अनेक बताऊँ काहीं॥ ७॥

समौ-कहँ कविर कछु ना होता, होता आप अलेख।
तबका आप कवीर है, धरि धरि खेलै भेख॥

रमैनी-एक ओंकार॥

ऐसा ज्ञान विचारै कोई। सो नर जीवन मुकता होई॥ पांच तत्त्व गुण तीनों सोई। अविगत सो सब परगट होई॥ १॥ बोलनहारा कहँ सो हूआ। कैसे उपजा कैसे मूआ॥ पवनकी गांठ सहज बनि आई। ताका बना बगूला भाई॥२॥ खुलि गइ गांठ खोज नहिं पाया। पवनक पुतला पवन समाया॥ जैसे बादल होत अकारा। तैसे दरसे यह संसारा॥ ३॥ मिट गया बादल रहा अकासा। ऐसे आतमको न विनासा॥ इस बहुरंगीका पार न पाया। कहैं कवीर गुरु भेद लखाया॥४॥ पाया भेद भया उजियारा। साहब दरस्यो पार ओंकारा॥ यही ज्ञान रतन है भाई। जो पावै सुख विलसे आई॥ ५॥

साखी-ज्ञान रतनकी कोठरी, चुपकर दीजे ताल।
पारिख आगे खोलिये, शीतल बचन रिसाल॥

रमैनी-गुरु महिमा॥

गुरु मिले तो सत्य लखावे। बिन गुरु अन्त न कोऊ पावे॥ जिन गुरुकी कीन्ही परतीती। एक नाम कर भव जल जीती॥१॥ गुरू प्रेमते जीव मराला। गुरु स्नेह विन काग कराला॥ गुरु दया गुरु शब्द हमारा। गुरु परगट गुरु गुप्त अधारा॥२॥ गुरु पृथ्वी गुरु पवन अकाशा। गुरु जल थल महँ कीन निवासा॥ चन्द सूर

गुरु सब संसारा। गुरु विन होय न कोइ व्यवहारा ॥ ३ ॥ गुरु ब्रह्मा औ विष्णु महेशा। गुरु भगवान कूर्म औ शेशा ॥ चर अचर जहां लगि सब देखा। गुरु विन कछु और नहिं पेखा ॥४॥ उत्तम मध्यम और कनिष्ठा। ये सब कीन्हे गुरू बरिष्ठा ॥ ये सब जीव गुरू मय जानो। गुरुसे भिन्न और नहिं मानो ॥ ५ ॥ गुप्त प्रगट सबही जग जाया। सबहीमें है सतगुरुकी छाया ॥ कहैं कवीर सो हंस पियारा। यही भांतिते गुरु दरश निहारा ॥ ६ ॥

सा०-सो गुरु निसिदिन वंदिये, जासो पइये नाम।
नाम विना घट अंध है, ज्यों दीपक विन धाम ॥

रमैनी-गृही रहनी ॥

गृही भाव भक्ति जो साधे। संत साधु सेवा अवराधे ॥ घर तजि बाहर कबहुँ न जाई। गुरु गम भक्ति करै लौलाई ॥ १ ॥ भक्ति करै निर्भय सहदानी। गुरु अरु साधु एक करि जानी ॥ जहाँ साधु तहँ सतगुरु वासा। जहँ सतगुरु तहँ मुक्ति निवासा ॥ २ ॥ जहाँ मुक्ति तहँ लोक उजागर। जहाँ लोक तहँ रह सुख सागर ॥ जहां सुख सागर तहां कवीर। भक्ति मध्य बाहर औ तीर ॥ ३ ॥ जहाँ मध्य तहँ पुरुष अमान। जहँ बाहर तहँ हंस सुजान ॥ जहाँ तीर तहँ निर्मल धीर। जहाँ मरन नहिं व्यापै पीर ॥ ४ ॥ जहाँ पीर तहँ संशय धीर। संशय मध्य असंशय नीर ॥ जहाँ नीर तहँ सुख संतोखा। जरा मरण नहिं व्यापै धोखा ॥५॥ जहाँ धोख तहँ आवै धीर। जहाँ धीर तहँ गहिर गँभीर ॥ जहाँ गंभीर तहां स्थिर होइ। जहाँ थीर तहँ लहरि न कोइ ॥ ६ ॥ लहरि नहीं तहँ आपै आप। आपा मेटि मिटै संताप ॥ आपा मेटे ममिता खोइ। भाव भक्ति करि मानुष होइ ॥ ७ ॥ मानुष होय गहे निरवाना। पावै सत्य सही अस्थाना ॥ मानुष पद छोडे व्यवहारा। ताते फिरि आवे संसारा ॥८॥ संसार आइके भक्ति

कमाई। भक्ति कमाय भक्त कहाई॥ भक्त कहाइके रहे उदासा। सत्य गुरु मिलै सत्य विश्वासा॥ ९॥ सतगुरु मिलै तो संशय भागे। सो फिरि बहुरि अंक नहिं लागे॥ सतगुरु सुख संतोषके नायक। परमारथ सो सदा सहायक॥१०॥ सतगुरु पाय दुसर घर नाहीं। आवागमन रहित घर जाहीं॥ कहैं कबीर सत्य करि मानै। साधु गुरू नहिं अन्तर जानै॥ ११॥

सा०-साधु बडे परमार्थी, घन ज्यों बरषे आय।
तपन बुझावें औरकी, अपनो पारस लाय॥

रमैनी-बैरागी (साधु) रहनी॥

बैरागी उनमुन घर करई। हर्ष शोक कछु चित्त न धरई॥ रूखा सूखा करै अहारा। निसि दिन आतम तत्त्व सम्हारा॥१॥ विकसित बदन भजनके आगर। शीतल सदा प्रेम सुखसागर॥ रहिता रहै बहै नहिं कबहीं। सो बैरागी पावे हमहीं॥ २॥ हमें पाय हमहीं अस होई। आवागमन मिटावे सोई॥ आवा-गमन मिटावै काई। रहैं अधीन तत्त्व समाई॥३॥ काया धरि काया कहँ बोधे। आवागमन रहित तत सोधे॥ जीवत मरै मरै पुनि जीवै। उनमुनि बसे महा रस पीवै॥४॥ महाशून्यमो रहै समाई। मरै न जिवे आवे न जाई॥ ऐसी विधि वैरागी सोई। हम मिलि रहै हमहिं अस होई॥ ५॥ भीतर रहनी कहा बनायी। बाहर रहनी देहुँ बतायी॥ बैरागी आसन दृढ होई। रहै अजाँच जाँचे नहीं कोई॥ ६॥ वैरागी अस चाल चलावे। तजै अखज तब हंस कहावे॥ मद्य मांसके निकट न जाई। करै अहार सो काल कसाई॥७॥ प्रेम भक्ति आने उर माहीं। द्रोह घात दिसि चितवे नाहीं॥ जीव दया राखे हिय जानी। मन वच कर्म घात नहिं आनी॥८॥ हंस दशा धरि पंथ चलावे। श्रवनि कण्ठी तिलक लगावे॥ क्रोध

कपट सब देइ बहाई। क्षमा गंगमें पैठि नहाई ॥९॥ विन जाँचे जो कछु आवे। रूखा सूखा ना बिलगावे॥ गृही भक्ति जो सेवा लावे। ताको देखि न मोह बढावे ॥ १० ॥ वर्तमान वरते सो साधा। अधिक चहै तो होय व्याधा॥ छाडि उपाधि रहै लवलीना। कहैं कवीर सो हंस परवीना ॥ ११ ॥

सा०-संत सराहिये ताहिको, जाको सतगुरु टेक।
टेक निबाहे देह भरि, रहै शब्द मिलि एक ॥

रमैनी ॥ गुरु शिष्य अधिकारी ॥

साहब सेवक एकै होई। सदा बसंत खेलै सब कोई ॥ गुरु शिष्य एक जब होई। चिन्ह न परे एकको दोई ॥ १ ॥ साहब सेवक वरण दुहेला। एकै वरण गुरु औ चेला ॥ जैसे फूल बास कहँ तोरी। पाछे तिल संग तेहि जोरी ॥ २ ॥ पाछे फूल सुबासहिं देई। तिल तजि तेल बास गहि लेई॥ ऐसे गुरू शब्द जो देई। चेला गहै निज हेतु विलोई ॥ ३ ॥ विना प्रेम जिव होय अनेरा। पाछे परे कालके घेरा॥ गुरु सुवास है फूल सनेही। तिल अनुमान शिष्यकी देही॥४॥ प्रेम भक्ति जो गुरू बतावे। करि विश्वास शिष्य तेहि धावे ॥ गुरु शिष्य भेद नहिं ताही। जोइ गुरु सोइ शिष्य निवाही॥५॥ गुरु पूरा शिष सूरा होई। तबहिं काल रहै मुख गोई॥ शष विना गुरु छूटे नाहीं। फिरि फिरि परिहैं भोचक माहीं॥ ६ ॥ सतगुरु सो सतभाव बतावे। शिष, सोई जो प्रेम लगावे॥ तीनों लोक एक होय जाई। गुरु शिष अलग होय नहिं भाई ॥ ७ ॥

सा०-गुरु समाना शिष्यमें, शिष कर लीया नेह।
विलगाये विलगे नहीं, एक प्रान दुइ देह ॥

कर्म खण्डकी रमैनी १।

कर्म कथा अब कहूँ बखानी। जौन फाँस अटके नर प्रानी॥

चारों खानि कर्म अधिकाई। चहूँ खानि मिलि कर्म दृढाई ॥ कर्महि धरती पवन अकाशा। कर्महि चन्द्र शूर प्रकाशा॥ कर्महि ब्रह्मा विष्णु महेशा। कर्महिते भौ गौरि गणेशा ॥ सात बार पन्द्रह तिथि साजा। नौग्रह ऊपर कर्म विराजा ॥ कर्महि राम कृष्ण अवतारा। कर्महि रावण कंस संहारा॥ कर्महि ले वसुदेव घर आवा। कर्महि यसुदा गोद खिलावा॥ कर्महिते वन गऊ चराई। कर्महि गोपी केलि कराई॥ कौशिल्या तप कर्म जो करिया। कारण कर्म राम औतरिया॥ कर्महि दशरथ कीन्ह उदासा। कर्महि राम दीन्ह वनवासा॥ कर्म जाय जब धनुष चढावा। कर्महि जनकसुता सिर नावा॥ कर्महि हरयो सीता कहँ आई। दुख सुख कर्म ताहि भुगताई॥ कर्म रेखते कोइ न मुकता। लछमन राम करम फल भुगता॥ कर्मैसाग बांधेउ तहिया। कर्महि जल जीवन दुख सहिया॥ रुद्र राम कर्म कीन्ह लडाई। भला मिलाप हना भेंट चढाई॥ कर्मरेख नहिं मिटे मिटाई। जीव पपील लङ्का होय आई॥ कर्म रेख लंकापति गयो। लंकापति विभीषण भयो॥ कर्म रेख सबहीं पर छाजा। कहां राम कहँ रावण राजा॥ कर्मरेख सबहिन पर होई। देखो शब्द विलोय बिलोई॥ कर्मरेख सागर बँध हीना। बिरला कोई चीन्हे चीन्हा॥

कर्म रेख सागर बँध्यो, सौ योजन मर्याद।
विन अक्षर कोइ ना छूटे, अक्षर अगम अगाध ॥ १ ॥

रमैनी ॥ २ ॥

सागर है भवसागर धारा। नहिं कछु सूझे वार न पारा॥ तहवाँ बावन अक्षर लेखा। कर्म रेख सबहिन पर देखा॥ कर्म रेख बंधा सब कोई। खानी बानी देखि बिलोई॥ वेद कितेब कर्महीं गाया। कर्महिको निःकर्म बताया॥ सद्गुरु मिले तो भेद बतावे।

कर्म अकर्म मध्य दिखलावे ॥ कर्म अकर्म मध्य है सोई । सो निःकर्म अकर्म न होई ॥ अक्षरसागर निर्भय वानी । अक्षर कर्म सबन पर जानी ॥ गोरख भरथरि गोपी चन्दा । कर्म फांस सबही पुनी फन्दा ॥ सौ औ सात चौदह इक्कीसा । ब्रह्माके चौरासी भेसा ॥ कर्म फांस तहवाँ लग राखा । जहँ लग वेद व्यास कछु भाषा ॥ दश औ द्वादश कर्म बखाना । जिन जाना तिनहीं पहिचाना ॥ कर्म अकर्म भूल जो करई । गहे मूल सो कर्म न परई ॥ अक्षर सागर मूल भँडारा । अक्षर मूल भेद उजियारा ॥ अक्षर मूल भेद जो जाने । कर्मी होय निःकर्म बखाने ॥

सा०—कर्महिं डोर चारो युग, सुनो सन्त सब दास ।
तत्त्वभेद निहतत्त्व लहि, जगते रहो उदास ॥ २ ॥

रमैनी ॥ ३ ॥

सतयुग तप कीन्हे रघुराजा । कारन कर्म नन्द घर गाजा ॥ एक नारि रघुवर दुख पावा । सोलह सहस गोपी निरमावा ॥ कारन कर्म केलि भव कीन्हा । कुञ्ज कुञ्ज गोपिन सुख दीन्हा ॥ जहँ तहँ गोरस जाय चुरावा । जहँ जहँ कर्म तहाँ ले खावा ॥ कर्म कंस ठीका आयो जबहीं । मारन कृष्ण विचार्‍यो तबहीं ॥ कर्म पूतना भेष बनायो । कर्म पयोधर कृष्ण लगायो ॥ कर्महि कारण तहाँ सिधारा । कारण कर्म पिवे विषधारा ॥ मारि ताहि कीन्ही गति चारा । कर्म फांस बोरचो संसारा ॥ कर्म इन्द्र बरस्यो दिन साता । कर्म कृष्ण गिरि लीन्हो हाथा ॥ कर्महि मारि विध्वंस जो कीन्हा । कर्म फाँस सबही आधीना ॥ कुब्जा कछू कर्म जो कीन्हा । कारन कर्म कृष्ण गति दीन्हा ॥ कर्म पताल कालेश्वर नाथा । साँवर अङ्ग भयो तेहि साथा ॥ यज्ञ अश्वमेध करत बलि राजा । कर्मते जाय पताल विराजा ॥ कर्महि वामन रूप

बनाया। बलिराजापै दान दिवाया॥ कर्म अहूठ नापि पग लीन्हा। तीनै पग तीनों पुर कीन्हा॥ आधा पाँव कर्म अधिकारी। बाँधि नृपति पतालहिं डारी॥ जहँ लगि जीव जन्तु उत्पानी। तहँ लगि कर्म राय परवानी॥ कर्म फाँसते कोइ न छूटे। कर्म फाँस सबहिन घर लूटे॥

सा०-कर्म फाँस छूटे नहीं, केतो करो उपाय।
सद्गुरु मिले तौ ऊबरै, नहिं तौ परलय जाय॥ ३॥

रमैनी ४॥

जो कुछ कर्म जगतमें करई। करि करि कर्म बहुरि भव परई॥ एक न होय यज्ञ व्रत ठाना। एक न पाप पुण्य पहिचाना॥ एक कर्म कुल लीन्ह उठाई। कर्म अकर्म न जाने भाई॥ एक छापा और तिलक बनावे। पहिरि मेखला साधु कहावे॥ वैष्णव होय करै षटकर्मा। वेद विचार सदा शुचि धर्मा॥ कथा पुराण सुनै चित लाई। कर्महि सुमिरै बहु विधि भाई॥ विष्णु सुमिरि तप बहु विधि कियो। सो निःकर्म विष्णु नहिं भयो॥ कर्मक डोरि बँधा संसारा। क्यों छूटे उतरे भवपारा॥ एक अभंग एकादशि करई। तन छूटे वैकुण्ठहिं तरई॥ यह वैकुण्ठ न इस्थिर होई। अन्त कर्मगति परलय सोई॥ करै कर्म वैकुण्ठहि जाई। कर्म घटे भव जल फिरि आई॥ योगी योग कर्म्मको साधे। किरिया कर्म पवन आराधे॥ योगी कर्म पवनको किरिया। भुगते कर्म देह पुनि धरिया॥ संन्यासी जो बन बन फिरहीं। होय निःकर्म कर्म फिर परहीं॥ जीयत दग्ध देहको करई। जटा बढाय व्यसन परिहरई॥ कोई नग्न कोई वस्त्र कछोटा। भरमत फिरै सहै पग ढोटा॥ राजद्वार पावै अवतारा। भुगतै कर्म अकर्म व्यवहारा॥ पण्डित जन सब कर्म बखाने। नख शिख कर्मफाँस अरुझाने॥

कर्म धर्मकी युक्ति बतावै। दान पुण्य बहु विधि अरथावै॥ वस्त्र दान लै जन्म गँवावै। होई ऊँट बहु भार लदावै॥ एक जो करै बरत अवतारा। होइ है सूकर श्वान सियारा॥ सूकर श्वान हो कर्म जो भुगता। विन निःकर्म न होइ हैं मुकता॥

सा०—बहु बन्धनसे बाँधिया, एक विचारा जीव।
जीव बेचारा क्या करे, जो न छुडावै पीव॥

रमैनी॥ ५॥

शब्द भेद निःशब्द बताओं। करि निःकर्म हंस मुकताओं॥ निरालम्ब अवलम्ब न जानै। शब्द निरन्तर भेद बखानै॥ पाप पुण्यकी छोडे आसा। कर्म धर्मते रहे उदासा॥ रहे उदास नाम लौ लाई। तत्त्वभेद निस्तत्त्व समाई॥ तीरथ व्रतके निकट न जाई। भरम भूतको देइ भजाई॥ सुख सम्पति नहिं विपति विचारे। काम क्रोध तृष्णा परजारे॥ क्रिया कर्म आचार विसारे। होय निःकर्म कर्म निरुवारे॥ सो ग्रहै जो निग्रह काया। अभिअन्तरकी मेटे माया॥ शील स्वभाव शरीर बसावे। अन्तर स्थिर ध्यान लगावे॥ ब्रह्म अग्नि मनमें परजाले। ताको विष्णु चरन परछाले॥ गहे तत्त्व निस्तत्त्व विचारा। काम क्रोधको करै अहारा॥ सहज योग सो योगी करई। कर्म योग कबहूँ नहिं परई॥ धन यौवनकी करै न आशा। कामिनि कनकसे रहै उदासा॥ चहुँदिशि मंसा पवन कलोले। ज्ञान लहर अभ्यन्तर डोले॥ उनमुनि रहे भेद नहिं कहई। तत्त्वभेद निहतत्त्वहि लहई॥ जो कोइ आय अग्नि होय दहई। आप नीर होय नीचा बहई॥ मन गयन्द गुरुमतसे मारा। गुरुगम लूटे ज्ञान भँडारा॥ शूरा होय सो सन्मुख जूझै। भोंदू शब्द भेद नहिं बूझै॥ दुखिया होय रैन दिन रोई। भोगी भोग करै सुख सोई॥ दुख सुख भोग सोग सम जाने। भली बुरी कछु मन नहिं आने॥ भली बुरीका करे सो त्यागा। निश्चय

पावै वह बैरागा ॥ सींगी अछय रैन दिन बाजे । सिद्ध साधु तहँ आसन छाजे ॥

सा०-आसन साधे आपमें, आपा डारै खोय ।
कहैं कबीर सो योगी, सहजै निर्मल होय ॥ ९ ॥

इति कर्मखण्डकी रमैनी ।

सत्यनाम ।

अथ पंच[1] देहकी निर्णय ॥

एक जीवको स्वतः पद, बुद्धि भ्राँति सो काल । काल होइ यह काल रचि, तामें भये बिहाल ॥ १ ॥ बीहालेको मतो जो, देउँ सकल बतलाय । जाते पारख प्रौढ लहि, जीव नष्ट नहिं जाय ॥२॥ करि अनुमान जो शून्य भो, सूझै कतहूँ नाहिं । आपु आप बिसरो जबै, तन विज्ञान कहि ताहि ॥ ३ ॥ ज्ञान भयो जाग्यो जबै, करि आपन अनुमान । प्रतिबिंबित झाईं लखै, साक्षी रूप बखान ॥ ४ ॥ साक्षी होय प्रकाश भो, महा कारण त्यहि नाम । मसुर प्रमाण सो बिम्ब भो, नील बरण घनश्याम ॥ ५ ॥ बढचो बिम्ब अध पर्व भो, शून्याकार स्वरूप । ताको कारण कहत हैं, महँ अधियारी कूप ॥ ६ ॥ कारण सो आकार भो, श्वेत अँगुष्ठ प्रमान । वेद शास्त्र सब कहत हैं, सूक्षम रूप बखान ॥ ७ ॥ सूक्षम रूपते कर्म भो, कर्महिते यह अस्थूल । परा जीव या रहटमें, सहै घनेरी शूल ॥ ८ ॥

संतौ षट प्रकारकी देवी ॥

स्थूल सूक्ष्म कारण महँ कारण कैवल हंस कि लेही ॥ साढे तीन हाथ परमाना देह स्थूल बखानी । राता वर्ण बैखरी बाचा जागृत अवस्था जानी ॥ रजो गुणी ओंकार मात्रुका त्रिकुटी है

---

१ इस ग्रन्थमें षट्‌देहका वर्णन है परन्तु इसका नाम पंचदेहका निर्णय है इसका कारण यह है कि, हंस देहको दूसरी देहोंके साथ न मिलाकर अलग माना है । क्योंकि, वह बन्ध और मोक्षते परे मध्यकी भूमिका है ।

अस्थाना। मुक्ति श्लोक प्रथम पद गायत्री ब्रह्मा वेद बखाना॥ पृथ्वी तत्त्व खेचरी मुद्रा मग पीपल घट कासा। क्षय निर्णय बड़वाग्नि दशेंद्री देव चतुर्दश बासा॥ और अहै ऋग्वेद बतायू अर्द्ध शुन्नि संचारा। सत्यलोक विषयका अभिमानी विषयानंद हंकारा॥ आदि अंत औ मध्य शब्द या लखै कोइ बुधिवीरा। कहै कबीर सुनो हो संतो इति स्थूल शरीरा॥ १॥

संतौ सूक्ष्म देह प्रमाना।

सूक्ष्म देह अंगुष्ठ बराबर स्वप्न अवस्था जाना॥ श्वेत वर्ण ओंकार मात्रुका सतोगुण विष्णू देवा। ऊर्ध्व सुन्न औ यजुर्वेद है कण्ठ स्थान अहेवा॥ मुक्ति समीप लोक बैकुण्ठ पालन किरिया राखी। मार्ग बिहंग भूचरी मुद्रा अक्षर निर्णय भाखी॥ आव तत्त्व कोहं हंकारा मंदाअग्नी कहिये। पंच प्राण द्वितीया पद गायत्री मध्यम बाणी लहिये॥ शब्द स्पर्श रूप रस गंध मन बुद्धि चित हंकारा। कहै कबीर सुनौ भाइ संता यह तन सूक्षम सारा॥२॥

संतौ कारण देह सरेखा।

आधा पर्व प्रमाण तमोगुण कारा वर्ण परेखा॥ मध्य शून्य मकार मात्रुका हृदया सो अस्थाना। महदाकाश चाचरी मुद्रा इच्छा शक्ती जाना॥ उदराग्नि सुषुप्ति अवस्था निर्णय कंठ स्थानी। कपि मारग तृतीय पद गायत्री अहै प्राज्ञ अभिमानी॥ सामवेद पश्यन्ती वाचा मुक्त स्वरूप बखानी। तेज तत्त्व अद्वैतानन्द अहंकार निरबानी॥ अहै विशुद्ध महातम जामें तामें कछु न समाई। कारण देह इती सम्पूरण कहै कबीर बुझाई॥ ३॥

सन्तो महकारण तन जाना।

नील बरण औ ईश्वर देवा है मसूर परमाना॥ नाभि स्थान

विकार मात्तुका चिदाकाश परवानी। मारग मीन अगोचर मुद्रा वेद अथर्वन जानी॥ ज्वाला कल चतुर्थ पद गायत्री आदि शक्ति ततु वायु। आश्रय लोक बिदेहानंद मुक्ति साजोजि बतायु॥ नृणे प्रकरशिक तुरी अवस्था प्रत्यज्ञात्मतु अभिमानी। शीव अहंकार महाकारण तन इहो कबीर बखानी॥ ४॥

संतो सुनौ केवल देह बखाना।

केवल सकल देहका साक्षी भमर गुफा अस्थाना॥ निराकाश औ लोक निराश्रय निर्णय ज्ञान वसेखा। सूक्षम वेद है उनमुनि मुद्रा उनमुन बाणी लेखा॥ ब्रह्मानंद कही हंकारा ब्रह्मज्ञानको माना। पूरण बोध अवस्था कहिये ज्योतिस्वरूपी जाना॥ पुण्य गिरी अरु चारुमात्तुका निरंजन अभिमानी। परमारथ पंचम पद गायत्री परामुक्ति पहिचानी॥ सदाशीव औ मार्ग सिखा है लहै संत मत धीरा। कालातीत कला सम्पूरण केवल कहै कबीरा॥५॥

संतो सुनौ हंस तन ब्याना।

अबरण बरण रूप नहिं रेखा ज्ञान रहित विज्ञाना॥ नहिं ऊपजै नहिं बिनशै कबहूं नहिं आवै नहिं जाहीं। इच्छ अनिच्छ न दृष्ट अदृष्टी नहि बाहर नहिं माहीं॥ मैं तू रहित न करता भोगता नहीं मान अपमाना। नहीं ब्रह्म नहिं जीव न माया ज्योंका त्यों वह जाना॥ मन बुधि गुन इन्द्रिय नहिं जाना अलख अकह निर्बाना। अकल अनीह अनादि अभेदा निगम नीति फिरि जाना॥ तत्त्व रहित रवि चंद्र न तारा नहिं देवी नहिं देवा। स्वयं सिद्धि परकाशक सोई नहिं स्वामी नहिं सेवा॥ हंस देह विज्ञान भाव यह सकल वासना त्यागे। नहिं आगे नहिं पाछे कोई निज प्रकाशमें पागे॥ निज प्रकाशमें आप अपनपौ भूलि गये विज्ञानी। उनमत बाल पिशाच मूक जड़ दशा पांच इह लानी॥ खोये

आपु अपनपौ सब रस निज स्वरूप नहिं जाने । फिरि केवल महकारण कारण सूक्ष्म स्थूल समाने ॥ स्थूल सूक्ष्म कारण महाकारण केवल पुनि विज्ञाना। भये नष्ट ये हेर फेरमें कतौं नहीं कल्याना ॥ कहैं कवीर सुनो हो सन्तो खोज करो गुरु ऐसा। ज्यहिते आप अपनपौ जानो मेटो षटका रैसा ॥ ६ ॥

निरख प्रबोधकी रमैनी ॥ २ ॥ ÷

अस सतगुर बोले सत बानी। धन धन सत्त नाम जिन जानी॥ नाम प्रतीत भई सब संता । एक जानके मिटे अनंता ॥ १ ॥ अनँत नाम जब एक समाना । तब ही साध परमपद जाना ॥ बिरला संत परम गति जानै । एक अनंत सो कहा बखानै ॥२॥ सबते न्यारा सबके माहीं । मांहीं सतगुर दूजा नाहीं ॥ सत्तनाम जाके धन होई । धन जीवन ताहीको सोई ॥ ३ ॥

दोहा-जिनके धन सतनाम है, तिनका जीवन धन्न ।
तिनको सतगुरु तारहीं, बहुर न धरई तन्न ॥ १ ॥

सत्तनामकी महिमा जानै। मन बच करमै सरना आनै॥ एक नाम मन बच कर लेई । बहुर न या भवजल पग देई ॥ ४ ॥ योग यज्ञ जप तप क्या करई। दान पुन्नतें काज न सरई॥ देवी देवा भूत परेता। नाम लेत भागैं तज खेता॥ ५ ॥ टोना टामन पूजा पाती। नाम लेत सहजे तर जाती ॥ जो इच्छा आवै मन माहीं। पुरवै तुरत बिलम्ब कछु नाहीं॥ ६ ॥ सो सतनाम हृदय अनुरागी। सो कहिये साँचा बैरागी ॥ जब लग नाम प्रतीत न करई। तब लग जनम जनम दुःख भरई ॥ ७ ॥

दोहा-कबिरा महिमा नामकी, कहता कही न जाय ।
चार मुक्ति औ चार फल, और परमपद पाय ॥ २ ॥

÷ निरख प्रबोधकी पहली रमैनी पृष्ठ ५०८ में आ गयी है ।

सत्तनाम है सबतें न्यारा । निर्गुन सर्गुन शब्द पसारा ॥ निर्गुन बीज सर्गुन फल फूला । साखा ज्ञान नाम है मूला ॥८॥ मूल गहेते सब सुख पावै । डाल पातमें मूल गँवावै ॥ सतगुर कही नाम पहिचानी । निर्गुन सर्गुन भेद बखानी ॥ ९ ॥

दोहा-नाम सत्त संसारमें, और सकल है पोच ।
कहना सुनना देखना, करना सोच असोच ॥ ३ ॥

सबही झूठ झूठ कर जाना । सत्त नामको सत कर माना ॥ निस बासर इक पल नहिं न्यारा । जाने सतगुरु जानन हारा ॥१०॥ सुरत निरत ले राखै जहवाँ । पहुँचै अजर अमर घर तहवाँ॥ सत्तलोकको देय पयाना । चार मुक्ति पावै निर्बाना ॥ ११ ॥

दोहा-सतलोकै सब लोक पति, सदा समीप प्रमान ।
परमजोतसो जोत मिलि, प्रेम सरूप समान ॥ ५ ॥

अंस नामतें फिर फिर आवै । पूरन नाम परमपद पावै ॥ नहिं आवै नहिं जाय सो प्रानी । सत्यनामकी जेहि गति जानी ॥१२॥ सत्तनाममें रहै समाई । जुग जुग राज करै अधिकाई ॥ सत्तलोकमें जाय समाना । सत्त पुरुषसों भया मिलाना ॥१३॥ हंस सुजान हंसही पावा । जोग संतायन भया मिलावा ॥ हंस सुघर दरस दिखलावा । जनम जनमकी भूख मिटावा ॥१४॥ सुरत सुहागिन भइ आगे ठाढी । प्रेम सुभाव प्रीति अति बाढी ॥ पुहुपदीपमें जाय समाना । बास सुवास चहूँ दिस आना ॥ १५ ॥

दोहा-सुख सागर सुख बिलसई, मानसरोवर न्हाय ।
कोट काम-सी कामिनी, देखत नैन अघाय ॥ ६ ॥

सुरति नाम सुनै जब काना । हंसा पावै पद निर्बाना ॥ अब तो कृपा करी गुरु देवा । तातें सुफल भई सब सेवा ॥ १६ ॥ नाम दान अब लेय सुभागी । सत्त नाम पावै बड़ भागी ॥ मन बच

कर्म चित निश्चय राखै । गुरुके शब्द अमीरस चाखै ॥ १७ ॥ आदि अंत वहँ भेदै पावै । पवन आड़में ले बैठावै ॥ सब जग झूठ नाम इक साँचा । श्वास श्वासमें साचा राचा ॥ १८॥ झूठा जान जगत सुख भोगा । साँचा साधू नाम सँजोगा ॥ यह तन माटी इन्द्री छारी । सत्तनाम सांचा अधिकारी ॥ १९॥ नाम प्रताप जुगे जुग भाखी । साध संत ले हिरदे राखी ॥ कहँ कबीर सुन धर्मनि नागर । सत्यनाम है जगत उजागर ॥ २० ॥

दोहा-महिमा बड़ी जो साध की, जाके नाम अधार ।
सतगुर केरी दया ते, उतरे भव जल पार ॥ ७ ॥

निरख प्रबोधकी रमैनी ॥ ३ ॥

प्रथम एक जो आपै आप । निराकार निर्गुन निर्जाप ॥ नहिं तब भूमि पवन अकासा । नहिं तब पावक नीर निवासा ॥ १ ॥ नहिं तब पांच तत्त्व गुन तीनी । नहिं तब सृष्टी माया कीनी ॥ नहिं तब आदि अंत मध धारा । नहिं तब अंध धुंध उजियारा ॥२॥ नहिं तब ब्रह्मा विष्णु महेसा । नहिं तब सूरज चाँद गनेशा ॥ नहिं तब मच्छ कच्छ बाराहा । नहिं तब भादों फागुन माहा ॥३॥ नहिं तब कंस कृष्ण बलि बावन । नहिं तब रघुपति नहिं तब रावन ॥ नहिं तब सरगुन सकल पसारा । नहिं तब धारे दस औतारा ॥ ४ ॥ नहिं तब सरसुति जमुना गंगा । नहिं तब सागर समुद्र तरंगा ॥ नहिं तब तीरथ व्रत जग पूजा । नहिं तब देव दैत अरु दूजा ॥५॥ नहिं तब पाप पुन्न गुर सीखा । नहिं तब पढना गुनना लीखा ॥ नहिं तब विद्या बेद पुराना । नहिं तब हते कितेब कुराना ॥ ६ ॥

दोहा-कहैं कबीर विचारके, तब कुछ किरतम नाहिं ।
परमपुरुष तहँ आपही, अगम अगोचर माहिं ॥ १ ॥

करता एक अगम है आप । वाके कोई माय न बाप ॥ करताके

नहिं बंधु औ नारी। सदा अखंडित अगम अपारी ॥७॥ करता कछु खावै नहिं पीवै। करता कबहूँ मरै न जीवै॥ करताके कुछ रूप न रेषा। करताके कुछ बरन न भेषा ॥ ८ ॥ जाके जात गोत कछु नाहीं। महिमा बरनि न जाय मो पाहीं॥ रूप अरूप नहीं तेहि नाँव। बर्न अबर्न नहीं तेहि ठाँव ॥ ९ ॥

दोहा-कहै कबीर बिचार के, जाके बरन न गाँव।
निराकार और निर्गुना, है पूरन सब ठाँव ॥ २ ॥

करता कृत्रिम बाजी लाई। ओंकार तें सृष्टि उपाई ॥ पांच तत्त्व तीन गुन साजा। ताते सब कृत्रिम उपराजा ॥ १० ॥ कृत्रिम धर्ती कृत्रिम अकास। कृत्रिम चंद सूर परकास॥ कृत्रिम पांच तत्त्व गुन तीनी। कृत्रिम सृष्टि जो माया कीनी ॥ ११ ॥ कृत्रिम आदि अंत मध तारा। कृत्रिम अंध कूप उजियारा ॥ कृत्रिम सर्गुन सकल पसारा ॥ कृत्रिम कहिये दस औतारा ॥ ॥१२॥ कृत्रिम कंस कृत्रिम बलि बावन। कृत्रिम रघुपति कृत्रिम रावन॥ कृत्रिम कच्छ मच्छ बाराहा। कृत्रिम भादौं फागुन माहा॥ ॥ १३ ॥ कृत्रिम सहर समुद्र तरंगा। कृत्रिम सरसुति जमुना गंगा॥ कृत्रिम स्मृति वेद पुराना। कृत्रिम काजी कितेब कुराना॥ ॥१४॥ कृत्रिम जोग जोगावत पूजा। कृत्रिम देवी देव जो दूजा॥ कृत्रिम पाप पुन्न गुर सीखा। कृत्रिम पढना गुनना लीखा॥१५॥

दोहा-कहैं कबीर बिचारके, कृत्रिम करता नहिं होय।
यह बाजी सब कृत्रिम है, साँच सुनो सब कोय ॥

करता एक और सब बाजी। ना कोई पीर मसायख काजी॥ बाजी ब्रह्मा विष्णु महेसा। बाजी इन्द्र औ चन्द गनेसा॥१६॥ बाजी जल थल सकल जहाना। बाजी जानो जमीं असमाना॥ बाजी बरनो स्मृति बेदा। बाजीगरका लखै न भेदा ॥ १७ ॥ बाजी सिद्ध साधक गुर सीखा। जहाँ तहाँ यह बाज़ी दीखा॥

बाजी जोग यज्ञ व्रत पूजा। बाजी देवी देवल दूजा॥१८॥ बाजी तीरथ व्रत आचारा। बाजी जोग यज्ञ व्योहारा॥ बाजी जल थल सकल किवांई। बाजीसों बाजी लिपटाई॥ १९॥ बाजीका यह सकल पसारा। बाजी माहिं रहै संसारा॥ कहैं कबीर सब बाजी माहीं। बाजीगरको चीन्है नाहीं॥ २०॥

अथ बीजककी रमैनी।

प्रथम रमैनी १॥

अंतर ज्योति शब्द यक नारी। हरि ब्रह्मा ताके त्रिपुरारी॥१॥
ते तिरिये भग लिंग अनंता। तेउ न जानै आदिउ अंता॥ २॥
बाखरि एक बिधातै कीन्हा। चौदह ठहर पाटि सो लीन्हा॥३॥
हरि हर ब्रह्मा महंतो नाऊँ। ते पुनि तीनि बसावल गाऊँ॥४॥
ते पुनि रचिनि खंड ब्रह्मंडा। छा दर्शन छानवे पखंडा॥ ५॥
पेटहि काहु न वेद पढ़ाया। सुनति कराय तुरुक नहिं आया॥६॥
नारी मो चित गर्भप्रसूती। स्वांग धरैं बहुतै करतूती॥ ७॥
तहिया हम तुम एकै लोहू। एकै प्राण बियापल मोहू॥ ८॥
एकै जनी जना संसारा। कौन ज्ञानते भयो निनारा॥ ९॥
भा बालक भगद्वारे आया। भग भोगेते पुरुष कहाया॥ १०॥
अविगतिकी गति काहु न जानी। एक जीभ कित कहौं बखानी११॥
जो मुख होइ जीभ दश लाखा। तौ कोइ आय महंतो भाखा॥१॥

सा०-कहहिं कबीर पुकारिकै, ई लेऊ व्यवहार।
एक रामनाम जाने विना, भव बूडि मुआ संसार॥ १॥

दूसरी रमैनी २॥

जीवरूप यक अन्तर बासा। अन्तर ज्योति कीन परगासा॥१॥
इच्छारूप नारि अवतरी। तासु नाम गायत्री धरी॥ २॥ तेहि नारीके पुत्र तिन भाऊ। ब्रह्मा विष्णु महेश नाऊ॥ ३॥ तब ब्रह्मा

१ काई,

पूंछल महतारी। को तोर पुरुष तू काकरि नारी॥४॥ तुम हम हम तुम और न कोई। तुमहिं मोर पुरुष हमहिं तोर जोई॥२॥

सा०-बाप पूतकी एकै नारी, एकै माय बिआय।
ऐसा पूत सपूत न देख्यो, बापै चीन्हे धाय॥ २॥

तीसरी रमैनी ३॥

प्रथम अरंभ कौनके भयऊ। दूसर प्रकट कौन सो ठयऊ॥१॥
प्रकटे ब्रह्मा विष्णु शिव शक्ती। प्रथमै भक्ति कीन जिव उक्ती॥२॥
प्रकटे पवन पानी औ छाया। बहु बिस्तारकै प्रकटी माया॥३॥
प्रकटे अंड पिंड ब्रह्मण्डा। पृथिवी प्रकट कीन नवखंडा॥ ४॥
प्रकटे सिध साधक संन्यासी। ये सब लागि रहे अविनासी॥५॥
प्रकटे सुरनर मुनि सब झारी। तेऊ खोजि परे सब हारी॥ ३॥

सा०-जीव सीव प्रकटे सबै, वे ठाकुर सब दास।
कविर और जानै नहीं, एक रामनामकी आस॥ ३॥

चौथी रमैनी ४॥

प्रथम चरण गुरु कीन बिचारा। करता गावै सिरजन हारा॥१॥
कर्मै करिकै जग बौराया। शक्ति भक्ति लै बांधिनि माया॥२॥
अद्भुत रूप जातिकी वानी। उपजी प्रीति रमैनी ठानी॥ ३॥
गुणि अनगुणी अर्थ नहिं आया। बहुतक जने चीन्ह नहिं पाया॥४॥ जो चीन्हे तेहि निर्मल अंगा। अनचीन्हे नल भये पतंगा॥४॥

सा०-चीन्हि चीन्हि कह गावहू, बानी परी न चीन्हि।
आदि अंत उत्पति प्रलय, सब आपुहि कहि दीन्हि॥४॥

पांचवी रमैनी ५॥

कहँलौं कहौं जुगनकी बाता। भूले ब्रह्म न चीन्हे त्राता॥१॥
हरिहर ब्रह्माके मन भाई। बिबि अक्षर लै जुगति बनाई॥ २॥
बिबि अच्छरका कीन बँधाना। अनहद शब्द ज्योति परमाना॥३॥
अच्छर पढि गुनि राह चलाई। सनक सनन्दनके मन भाई॥४॥

वेद किताब कीन्ह विस्तारा। फैल गैल मन अगम अपारा ॥५॥ चहुं जुग भगत बांधल बाटी। समुझि न परी मोटरी फाटी ॥ ६ ॥ भैभै पृथ्वी चहुँ दिसि धावै। अस्थिर होय न औषध पावै ॥७॥ होय भिस्त जो चित न डोलावै। खसमहिं छोड़ि दोजखको धावै ॥८॥ पूरुब दिशा हंस गति होई। है समीप सँधि बूझै कोई ॥९॥ भगता भगतिन कीन सिंगारा। बूड़ि गयल सब माँझहिं धारा ॥ ५ ॥

सा०-विन गुरु ज्ञाने दुन्द भो, खसम कही मिलि बात।
जुग जुग कहवैया कहै, काहु न मानी जात ॥ ५ ॥

छठीं रमैनी ६ ॥

वर्णहु कौन रूप औ रेखा। दूसर कौन आहि जो देखा ॥१॥ ओ ओंकार आदि नहिं बेदा। ताकर कहौ कौन कुल भेदा ॥२॥ नहिं तारागण नहिं रवि चंदा। नहिं कछु होत पिताके बिंदा ॥३॥ नहिं जल नहिं थल नहिं थिर पवना। को धरै नाम हुकुम को बरना ॥ ४ ॥ नहिं कछु होत दिवस अरु राती। ताकर कहहु कौन कुल जाती ॥ ५ ॥

सा०-शून्य सहज मन स्मृतिते, प्रकट भई यक ज्योति।
बलिहारी ता पुरुष छबि, निरालंब जो होति ॥ ६॥

सातवीं रमैनी ७।

जहिया होत पवन नहिं पानी। तहिया सृष्टि कौन उतपानी ॥ १ ॥ तहिया होत कली नहिं फूला। तहिया होत गर्भ नहिं मूला ॥ २ ॥ तहिया होत न विद्या वेदा। तहिया होत शब्द नहिं खेदा ॥ ३॥ तहिया होत पिंड नहिं बासू। ना धर धरणि न गगन अकासू ॥ ४ ॥ तहिया होत गुरू नहिं चेला। गम्य अगम्य न पंथ दुहेला ॥ ५ ॥

सा०-अविगतिकी गति का कहौं, जाके गाँव न ठाँव।
गुण विहीना पेखना, का कहि लीजै नाँउ ॥ ७ ॥

आठवीं रमैनी। (वेदांत विचार) ८।

तत्त्व मसी इनके उपदेशा। ई उपनिषद कहै संदेशा ॥ १ ॥
ऊ निश्चय उनके बड़ भारी। वाहिको वर्ण करै अधिकारी ॥२॥
परमतत्त्वका निज परमाना। सनकादिक नारद सुख माना॥३॥
याज्ञवल्क्य औ जनक संवादा। दत्तात्रय वहै रसस्वादा ॥ ४ ॥
वहै वसिष्ठ राम मिलि गाई। वहै कृष्ण ऊधव समुझाई ॥ ५ ॥
वहै बात जो जनक दिढाई। देहै धरे विदेह कहाई ॥ ८ ॥

सा०-कुल अभिमाना खोयकै, जियत मुवा नहि होय।
देखत जो नहिं देखिया, अदृष्ट कहावै सोय ॥ ८ ॥

नवीं रमैनी ९।

बांधे अष्ट कष्ट नौ सुता। यम बांधे अंजनिके पूता ॥ १ ॥
यमके बाहन बांधिनि जनी। बांधे सृष्टि कहालौं गनी ॥२॥ बांधे
व तेंतीस करोरी। सुमिरत बंदि लोह गौ तोरी ॥३॥ राजा सुमिरैंदे
तुरिया चढी। पंथी सुमिरि नाम लै बढी ॥ ४ ॥ अर्थ बिहीना
सुमिरै नारी। परजा सुमिरै पुहुमी झारी ॥ ९ ॥

सा०-बँदि मनाय फल पावहीं, बँदि दिया सो देव।
कह कवीर ते ऊबरे, निसि दिन नामहिं लेव ॥ ९ ॥

रमैनी दशवीं १०।

राही लै पिपराही बही। करगी आवत काहु न कही॥ आई
करगी भो अजगूता। जन्म जन्म जम पहिरे बूता॥ बूता पहिर
जम करै पयाना। तीन लोकमें कीन्ह समाना॥ बांधेउ ब्रह्मा
विष्णु महेशू। सुर नर मुनि औ बांध गणेशू॥ बांधे पवन
पावक औ नीरू। चन्द्र सूर बांधे दोउ बीरू॥ सांच मंत्र बांधे
सब झारी। अमृत वस्तु न जानै नारी॥

सा०-अमृत वस्तु जानै नहीं, मगन भये कित लोय।
कहहि कवीर कामो नहीं, जीवहिं मरण न होय ॥११॥

रमैनी ग्यारहवीं ११।

आंधरी गुष्टि सृष्टि भई बौरी। तीन लोक महँ लागि ठगौरी॥ ब्रह्महिं ठग्यो नाग संहारी। देवन सहित ठग्यो त्रिपुरारी॥ राज ठगौरी विष्णुहिं परी। चौदह भुवन केर चौधरी॥ आदि अन्त जेहि काहु न जानी। ताको डर तुम काहेक मानी॥ ऊ उतंग तुम जाति पतंगा। यम घर किहेउ जीवको संगा॥ नीम कीट जस नीम पियारा। बिषको अमृत (मान) कहत गवारा॥ विषके संग कौन गुण होई। किंचित लाभ मूल गौ खोई॥ विष अमृत गौ एकै सानी। जिन जाना तिन विष कै मानी॥ कंहा भये नर सुध बेसुद्धा। बिन परचय जग बूड़ न बुद्धा॥ मतिके हीन कौन गुण कहई। लालच लागे आशा रहई॥

सा०-मुवा है मरी जाहुगे, मुये कि बाजी ढोल।
स्वप्न सनेही जग भया, सहिदानी रहिगो बोल ॥ ११॥

रमैनी बारहवीं १२।

माटिक कोट पषानक ताला। सोई बन सोई रखवाला॥ सो बन देखत जीव डेराना। ब्राह्मण वैष्णव एक करि जाना॥ (जोरी) ज्यों किसान किसानी करई। उपजे खेत बीज नहिं परई॥ छाड़ि देहु नर झेलिक झेला। बूड़े दोऊ गुरू औ चेला॥ तीसर बूड़े पारथभाई। जिन बन दाहे दवा लगाई॥ भूंकि भूंकि कूकर मरि गयऊ। काज न एक सियारसे भयऊ॥

साखी-मूस विलारी एक संग, कहु कैसे रहि जाय।
अचरज यक देखो हो सन्तो, हस्ती सिंहहि खाय॥१२॥

१ कहां भये नल सूझ बेसूझा। विन परिचय जग मूढ न बूझा॥

रमैनी तेरहवीं १३ ॥

नहिं परतीति जो यह संसारा। द्रब्यक चोट कठिन को मारा॥ सो तो शेषै जाय लुकाई। काहूके परतीति न आई॥ चले लोग सब मूल गँवाई। यमकी बाढि काटि नहिं जाई॥ आजु काज जिय कालिह अकाजा। चले लादि दिग्गंतर राजा॥ सहज बिचारत मूल गँवाई। लाभ ते हानि होय रे भाई॥ ओछी मती चन्द्र गो अथई। त्रिकुटी संगम स्वामी बसई॥ तबहीं विष्णु कहा समुझाई। मैथुन अष्ट तुम जीतहु जाई॥ तब सनकादिक तत्त्व बिचारा। जैसे रंक धन पाव अपारा॥ भौ मर्य्याद बहुत सुख लागा। यहि लेखे सब संशय भागा॥ देखत उतपति लागु न बारा। एक मरै यक करै विचारा॥ मुये गयेकी काहु न कही। झूठी आश लागि जग रही॥

सा०-जरत जरतसे बाचहू, काहे न करहु गोहार।
विष विष्याकै खायहू, राति दिवस मिलि झारि॥ १३॥

रमैनी चौदहवीं १४।

बड सो पापी आहि गुमानी। पाखण्ड रूप छल्यो नर जानी॥ बावन रूप छल्यो वलि राजा। ब्राह्मण कीन्ह कौनको काजा॥ ब्राह्मणही सब कीन्हो चोरी। ब्राह्मणही को लागी खोरी॥ ब्राह्मण कीन्हो वेद (ग्रन्थ) पुराना। कैसेहु कै मोहि मानुष जाना॥ यकसे ब्रह्महिं पंथ चलाया। यकसे हंस गोपालहिं गाया॥ यकसे शम्भू पंथ चलाया। यकसे भूत प्रेत मन लाया॥ यकसे पूजा जैन विचारा। एकसे निहुरि निमाज़ गुज़ारा॥ कोइ काहूको हटा न माना। झूठा खसम कविर न जाना॥ तन मन भजि रहु मोरे भगता। सत्य कवीर सत्य है वकता॥ आपुहि देव आपुही पाती। आपुहि कुल आपुहि है जाती॥ सर्व भूत संसार निवासी।

आपुहि खसम आप सुखरासी ॥ कहते मोहि भयल युगचारी । काके आगे कहौं पुकारी ॥

सा०-सांचे कोइ न मानई, झूठेके संग जाय ।
झूठे झूठा मिलि रहा, अहमक खेहा खाय ॥ १४ ॥

रमैनी पन्द्रहवीं १५ ॥

उनई बदरिया परिगौ संझा । अगुवा भूले बन खंड मंझा ॥ पिय अन्ते धन अन्ते रहई । चौपरि कामरि माथे गहई ॥

सा०-फुलवा भार न ले सकै, कहै सखिनसों रोइ ।
ज्यों २ भीजे कामरी, त्यों २ भारी होइ ॥ १५ ॥

रमैनी सोलहवीं १६ ॥

चलत चलत अति चरण पिराने । हारि परे तहँ अति खिसियाने ॥ गण गन्धर्व मुनि अन्त न पाया । हरि अलोप जग धन्धे लाया ॥ गहनी बन्धन बंध न सूझा । थाकि परे तहँ कछुव न बूझा ॥ भूलि परे तब अधिक डेराई । रजनी अंध कूप ह्वै जाई ॥ माया मोह उहां भर भूरी । दादुर दामिनि पवनहु पूरी ॥ वरषै तपै अखंडित धारा । रैनि भयावनि कछु न अधारा ॥

सा०-सबै लोग जहँ डाइया, अन्धा सबै भुलान ।
कहा कोइ नहिं मानही, (सब) एकै माहि समान ॥ १६ ॥

रमैनी सत्रहवीं १७ ॥

जस जीव आपु मिलै अस कोई । बहुत धर्म सुख हृदया होई ॥ जासूँ बात रामकी कही । प्रीति न काहूसों निर्वही ॥ एकै भाव सकल जग देखी । बाहर परै सो होय विवेखी ॥ विषय मोहके फंद छोडाई । जहां जाय तहँ काटु कसाई ॥ है कसाई छूरी हाथा । कैसेहु आवै काटौं माथा ॥ मानुष बड़े बड़े ह्वै आये । एकै पंडित सबै पढाये ॥ पढ़ना पढ़उ धरहु जनि गोई । नहिं तो निश्चय जाहु विगोई ॥

सा०-सुमिरन करहू रामको, छाडहु दुखकी आस।
तर ऊपर धरि चापि है, जस कोल्हू कोटि पचास ॥१७॥

रमैनी अठारहवीं १८ ॥

अद्भुत पंथ बरणि नहिं जाई। भूले राम भूली दुनिआई॥ जो चेतहु तो चेतु रे भाई। नहिं तो जीव यमै लै जाई॥ शब्द न माने कथै विज्ञाना। ताते यम दीन्हों है थाना॥ संशय सावज बसै शरीरा। ते खायल अनवेधल हीरा॥

सा०-संशय सावज शरीरमें, संगहि खेलै जुहारि।
ऐसा घायल बापुरा, जीवन मारे झारि॥ १८॥

रमैनी उन्नीसवीं १९ ॥

अनहद अनुभवकी करि आशा। देखो यह बिपरीति तमाशा॥ इहै तमाशा देखहु भाई। जहां है शुन्य तहां चलि जाई॥ शुन्यहि बांछा शुन्यहिं गयऊ। हाथा छोडि बे हाथा भयऊ॥ संशय सावज सब संसारा। काल अहेरी साँझ सकारा॥

सा०-सुमिरण करहु रामको, काल गहे है केश।
ना जानों कब मारिहै, क्या घर क्या परदेश ॥१९॥

रमैनी बीसवीं २० ॥

अब कहु राम नाम अविनासी। हरि तजि जियरा कतहु न जासी॥ जहाँ जाहु तहँ होहु पतंगा। अब जनि जरहु समुझि बिष संगा॥ राम नाम लौलाय सो लीन्हा। भृङ्गी कीट समुझि मन दीन्हा॥ भौ अति गरुवा दुख कै भारी। करु जिय जतन सो देखु विचारी॥ मनकी बात है लहरि विकारा। तोहि नहिं सूझे वार न पारा॥

सा०-इच्छाके भव सागरै, वोहित राम अधार।
कहँ कवीर हरि शरण गहु, गो बछ खुर विस्तार ॥२०॥

रमैनी इक्कीसवीं २१ ॥

बहुत दुखै है दुखकी खानी । तब बचि हौ जब रामहिं जानी ॥ रामहिं जान युक्ति जो चलई । युक्तिहिं ते फंदा नहिं परई ॥ युक्तिहि युक्ति चलत संसारा । निश्चै कहा न मानु हमारा ॥ कनक कामिनी घोर पटोरा । संपति बहुत रहै दिन थोरा ॥ थोरी संपति गौ बौराई । धर्म रामकी खबरि न पाई ॥ देखि त्रास मुख गौ कुम्हिलाई । अमृत धोखे गो विष खाई ॥

सा०-मैं सिरजों मैं मारहूं, मैं जारौं मैं खाँव ।
जल थल मैही रमि रहौं, मोर निरंजन नाँव ॥ २१ ॥

रमैनी बाईसवीं २२ ॥

अलख निरंजन लखै न कोई । जेहि बंधे बंधा सब लोई ॥ जेहि झूठे सब बाँधु अयाना । झूठी बात साँचकै माना ॥ धंधा बंधा कीन व्यवहारा । कर्म विवर्जित बसै निनारा ॥ षट आश्रम षट दर्शन कीन्हा । षटरस वस्तु खोट सब चीन्हा ॥ चारि वृक्ष छौ शाख बखानै । विद्या अगणित गनै न जानै ॥ औरौ आगम करै बिचारा । तेहि नहिं सूझै वार न पारा ॥ जप¹ तीरथ व्रत कीजै पूजा । दान पुण्य कीजै बहु दूजा ॥

सा०-मन्दिर तो है नेहका, मत कोइ पैठे धाय ।
जो कोइ पैठे धायके, बिन शिर सेती जाय ॥ २२ ॥

रमैनी तेईसवीं २३ ॥

अल्प सुख दुख आदिहु अंता । मन भुलान मैगर मैं मंता ॥ सुख बिसराय मुक्ति कहँ पावै । परिहरि सांच झूठ निज धावै ॥ अनल ज्योति डाहे यक संगा । नयन नेह जस जरै पतंगा ॥ करहु विचार जेहि दुख जाई । परि हरि झूठा केर सगाई ॥ लालच लागे जन्म सिराई । जरा मरन नियरायल आई ॥

१ जप तीरथ पूजे व्रत भूता । दान औ पुण्य किये बहूता ॥

सा०–भरमकी बांधा ई जगत, यहि विधि आवे जाय ।
मानुष जन्महिं पाय नर, काहेको जहँडाय ॥२३॥

रमैनी चौबीसवीं २४ ॥

चन्द चकोर अस बात जनाई । मानुष बुद्धि दीन पलटाई ॥ चारि अवस्था सपना कहई । झूठो फुरे जानत रहई ॥ मिथ्या बात न जाने कोई । यही विधि सिगरे गेल विगोई ॥ आगे दैदै सबन गँवाया । मानुष बुद्धि न स्वपनेहु पाया ॥ चौतिस अक्षर सो निकले जोई । पाप पुण्य जानेगा सोई ॥

सा०–सोइ कहंते सोइ होहुगे, निकरि न बाहर आव ।
हो हजूर ठाढे कहौं, क्यों धोखे जन्म गवाव ॥ २४ ॥

रमैनी पचीसवीं २५ ॥

चौतिस अक्षरका यही विशेखा । सहसरो नाम यहीमें देखा ॥ भूलि भटक नर फिर घट आयो । होय अजान सो सभन गँवायो ॥ खोजहिं ब्रह्मा विष्णु शिव शकती । अनंत लोक खोजहिं शिव भगती ॥ खोजहिं गण गंधर्व मुनि देवा । अनंत लोक खोजहिं बहु भेवा ॥

सा०–यती सती सब खोजहीं, मनै न मानै हार ।
बड़े बड़े बीर बांचे नहीं, कहहिं कवीर पुकार ॥ २५ ॥

रमैनी छब्बीसवीं ॥ २६ ॥

आपुहि कर्तारा भय करतारा । (कुलाला) बहु विधि वासन गढे कुम्हारा ॥ विधिना सबै कीन यक ठाऊँ । अनेक यतनके बनक बनाऊँ ॥ जठर अग्नि मह दिये प्रजाली । तामहँ आपु भये प्रतिपाली ॥ बहुत यतनके बाहर आया । तब शिवशक्ती नाम धराया ॥ घरका सुत जो होय अयाना । ताके संग न जाहि सयाना ॥ साँची बात कहौं मैं अपनी । भया दिवाना औरकी सपनी ॥ गुप्त प्रगट है एकै मुदरा । काको कहिये ब्राह्मण सुदरा ॥ झूठे गर्व भूलौ मति कोई । हिन्दू तुरुक झूठ कुल दोई ॥

सा०-जिन्ह यह चित्र बनाइया, सांचा सो सूत्रधार ।
कह कवीर ते जन भले, चित्रवंतहि लेहिं विचार ॥ २६ ॥

रमैनी सत्ताईसवीं २७ ॥

ब्रह्माको दीन्हो ब्रह्मण्डा। सात द्वीप पुहुमी नौ खण्डा॥ सत्य सत्य कहि विष्णु द्दढाई । तीन लोक महँ राखिनि जाई ॥ लिंग रूप तब शंकर कीन्हा। धरती कील रसातल दीन्हा॥ तब अष्टंगी रची कुमारी। तीन लोक मोहा सब झारी॥ दुतिया नाम पार्वती भयऊ। तप करता शंकरको दयऊ॥ एकै पुरुष एक है नारी। ताते रचिनि खानि भौ चारी॥ शर्म्मन वर्म्मन देवो दासा। रज सत तम गुण धरणि अकाशा ॥ २७ ॥

सा०-एक अण्ड ओंकार ते, सब जग भयो पसार ।
कहहि कवीर सब नारि रामकी, अविचल पुरुष भतार॥२७॥

रमैनी अठ्ठाईसवीं ॥ २८ ॥

अस जोलहाका मर्म न जाना। जिन जग आइ पसारल ताना॥ धरति अकाश दोऊ गाड बनाई। चंद्र सूर दुइ नरा भराई॥ सहस तार लै पूरिन पूरी। अजहू बिनय कठिन है दूरी॥ कहहिं कवीर करम सों जोरी। सूत कुसूत बिनै भल कोरी॥ २८ ॥

रमैनी उनतीसवीं २९ ॥

वज्रहुते त्रिन छनमें होई। त्रिनते वज्र करै पुनि सोई॥ निझरू नरू जानि परिहरई। कर्मक बांधा लालच करई॥ कर्म धर्म बुद्धि मति परिहरिया। झूठा नाम साँचलै धरिया॥ रजगति त्रिविधि कीन्ह परगासा। कर्म धर्म बुधिकेर विनाशा॥ रविके उदय तारा भौ छीना। चर बेहर दोनोमें लीना॥ विषके खाये विष नहिं जावै। गारुड सो जो मरत जिआवै॥

सा०-अलख जो लागी पलकमें, पलकहिमें डसि जाय ।
विषहर मंत्र न मानई, गारुड काह कराय ॥२९॥

रमैनी तीसवीं ॥ ३० ॥

औ भूले षष्ट दरशन भाई। पाखण्ड भेष रहा लपटाई ॥ जीव शीवका आयन सौना। चांरिउ वेद चतुर्गुण मौना ॥ जैनी धर्मक मर्म न जाना। पाती तोरि देव घर आना॥ दवना मरुआ चम्पा फूला। मानो जीव कोटि समतूला ॥ औ पृथ्वीको रोम उचारै। देखत जन्म आपनो हारै ॥ मनमथ बिंदु करे असरारा। कलपे बिन्दु खसैं नहिं द्वारा ॥ ताका हाल होय अघकूचा। छौ दरसनमें जैन विगूचा ॥

सा०-ज्ञान अमर पद बाहिरे, नियरे ते है दूरि।
जो जाने तेहि निकट है, रह्यो सकल घट पूरि ॥३०॥

रमैनी इकतीसवीं ३१ ॥

सुम्रिति आहि गुणनको चीन्हा। पाप पुण्यको मारग लीन्हा॥ सुम्रिति वेद पढै असरारा। पाखण्ड रूप करैं हंकारा॥ पढै वेद औ करै बड़ाई। संशय गांठि अजहूं नहिं जाई॥ पढिकै शास्त्र जीव बध करई। मूड़ि काटि अगमनकै धरई॥

सा०-कहहि कबीर पाखण्डते, बहुतक जीव सताय।
अनुभव भाव न दर्शई, जियत न आपु लखाय ॥३१॥

रमैनी बत्तीसवीं ॥ ३२ ॥

अंध सो दर्पण वेद पुराना। दरबी कहा महारस जाना॥ जस खर चंदन लादे भारा। परिमल बास न जानु गँवारा ॥ कहहिं कबीर खोजै अस्माना। सो न मिला जो जाय अभिमाना॥३२॥

रमैनी तेतीसवीं ॥ ३३ ॥

वेदकी पुत्री स्मृति भाई। सो जेवरि करि लेतै आई॥ आपुहि बरी आपु गर बन्धा। झूठी मोह कालको धंधा॥ बंधवत बंधा छोरि नहिं जाई। विषय स्वरूप भूलि दुनियाई ॥ हमरे लखत

१ चारोबद्ध चतुर्गुण मौना।

सकल जग लूटा । दास कबीर राम कहि छूटा ॥

सा०-रामहि राम पुकारते, जिभ्या परिगौ रौस ।
सुधाजल पीवे नहीं, खोद पियनकी हौस ॥ ३३ ॥

रमैनी चौतीसवीं ३४ ॥

पढि पढि पंडित करहु चतुराई । निज मुक्तिहि मोहि कहु समुझाई ॥ कहां बसे पुरुष कवन सो गाऊँ । सो मोहि पण्डित सुनावहु नाऊँ ॥ चारि वेद ब्रह्मे निज ठाना । मुक्तिक मर्म उन्हों नहिं जाना ॥ दान पुन्न उन बहुत बखाना । अपने मरनकी खबरि न जाना ॥ एक नाम है अगम गँभीरा । तहवाँ अस्थिर दास कबीरा ॥

सा०-चिउटी जहां न चढि सके, राई नहिं ठहराय ।
आवागमनकी गम नहीं, तहँ सकलो जग जाय ॥३४॥

रमैनी पैंतीसवीं ३५ ॥

पंडित भूले पढि गुणि वेदा । आपु अपनपौ जानु न भेदा ॥ संध्या तर्पण औ षट कर्मा । ई बहु रूप करहिं अस धर्मा ॥ गायत्री युग चारि पढाई । पूछहु जाय मुक्ति किन पाई॥ औरके छुये लेतहौ सींचा। तुमते कहहु कौन है नीचा॥ ई गुण गर्व करो अधिकाई । अतिके गर्ब न होय भलाई ॥ जासु नाम है गर्व प्रहारी । सो कस गर्वहिं सकै संहारी ॥

सा०-कुल मर्यादा खोइकै, खोजिनि पद निर्वान ।
अंकुर बीज नशाइकै, भये बिदेही थान ॥ ३५ ॥

रमैनी छत्तीसवीं ३६ ॥

ज्ञानी चतुर विचच्छण लोई । एक स्यान स्यान न होई ॥ दूसर स्यानको मर्म न जाना । उत्पति परलय रैनि विहाना ॥ बानिज एक सबन मिलि ठाना । नेम धर्म संजम भगवाना ॥ हरि अस ठाकुर तज्यो न जाई । बालन भिस्ति गांव दुलहाई ॥

सा०-ते नर मरिके कहाँ गये, जिन दिन्हा गुर घोटि ।
राम नाम निज जानिकै, छाडहु बस्तू खोटि ॥३६॥

रमैनी सैंतीसवीं ३७ ॥

एक सयान सयान न होई । दूसर स्यान न जानै कोई ॥ तीसर सयान सयानै खाई । चौथ सयान तहाँ लै जाई ॥ पँचये सयान न जानै कोई । छठयें महँ सब गये बिगोई ॥ सतयें सयान जो जानहु भाई । लोक वेदमें देहु देखाई ॥

सा०-बीजक बतावै बित्तको, जो बित्त गुप्ता होय ।
शब्द बतावै जीवको, बूझै विरला होय ॥ ३७ ॥

रमैनी अडतीसवीं ३८ ॥

यहि विधि कहौं कहा नहिं माना । मारग मांहि पसारिनि ताना ॥ राति दिवस मिलि जोरिनि तागा । ओटत कातत भर्म न भागा ॥ भर्मैं सब घट रह्यो समाई । भर्म छाडि कतहूं नहिं जाई ॥ परै न पूरि दिनौ दिन छीना । तहां जाय जहाँ अंग बिहीना ॥ जो मति आदि अन्त चलि आया । सो मति उन सब प्रगट सुनाया ॥

सा०-वहै संदेश फुर मानिकै, लीन्हो सीस चढाय ।
संतो है संतोष सुख, रहहु हृदय जुडाय ॥३८॥

रमैनी उन्तालीसवीं ३९ ॥

जिन्ह कलमां कलि माह पढाया । कुदरत खोज तिनहुँ नहिं पाया ॥ करमत कर्म करै करतूती । वेद किताब भया सब रीती ॥ करमत सो जो गर्भ औतरिया । कर्मत सो निमाज गुजरिया ॥ करमत सुन्नति और जनेऊ । हिन्दू तुरुक न जानै भेऊ ॥

सा०-पानी पवन संजोयकै, राचयाई उतपात ।
शून्यहि सुरति समानिया, कासों कहिये जात ॥३९॥

१ करमत सो जो नामहिं धरिया ।

रमैनी चालीसवीं ४० ॥

आदम आदि सुद्धि नहिं पाई। मामा हउआ कहांते आई ॥
तब नहिं होते तुरुक औ हिन्दू। मायाके रुधिर पिताके बिन्दू ॥
तब नहिं होते गाय कसाई। तब विस मिल्लाः किन फरमाई ॥
तब नहिं रह्यो कुल औ जाती। दोजख भिस्त कहां उतपाती ॥
मन मसलेकी खबरि न जानै। मति भुलान दोइ दीन बखानै ॥
सा०-संयोगेका गुण रवे, बिन योगे गुण जाय।
जिभ्या स्वादके कारणे, कीन्हे बहुत उपाय ॥ ४० ॥

रमैनी इकतालीसवीं ४१ ॥

अम्की रासि समुद्रकी खाई। रवि मसि कोटि तैंतीसौ भाई ॥
भँवर जालमें आसन माडा। चाहत सुख दुख संग न छाडा ॥
दुखको मर्म काहु नहिं पाया। बहुत भांतिके जग भर्मांया ॥
(बौराया) ॥ आपुहि बाउर आपु सयाना। हृदय बसत राम नहिं जाना ॥
सा०-तेई हरि तेइ ठाकुरा, तेई हरिके दास।
न जम भया न जामनी, भामिनी चली निरास ॥४१॥

रमैनी बयालीसवीं ४२ ॥

जब हम रहल रहा नहिं कोई। हमरे मांहिं रहल सब कोई ॥
कहहु हो राम कौन तोरि सेवा। सो समुझाय कहौ मोहि देवा ॥
फुर फुर कहउँ मारु सब कोई। झूठेहि झूठा संगति होई ॥ आंधर कहे सबै हम देखा। तहँ दिठियार बैठि मुख पेखा ॥ यहि विधि कहौ मानु जो कोई। जस मुख तस जो हृदया होई ॥ कहहिं कवीर हंस मुसकाई। हंमरे कहल दुष्ट बहु भाई ॥ ४२ ॥

रमैनी तैंतालीसवीं ॥ ४३ ॥

जिन्ह जिव कीन्ह आपु विश्वासा। नरक गये ते नरकहिं बासा ॥
आवत जात न लागहि बारा। काल अहेरी साँझ सकारा ॥

१ मुक्ताई। २ हमरे कलह छुठिहौ भाई।

चौदह विद्या पढि समुझावै। अपने मरनकी खबर न पावै॥ जाने जिवको परा अंदेसा। झूठहि आनिकै कहा संदेसा॥ संगति छोडि करै अस रारा। उब है मोट नरक कर भारा॥ ४३॥

सा०–गुरु द्रोही औ मन मुखी, नारि पुरुष बिचार।
ते नर चौरासी भ्रमि है, जौलौ शशि दिनकार॥४३॥

रमैनी चौवालीसवीं ४४॥

कबहुँ न भये संग औ साथा। ऐसो जन्म गँवाये हाथा॥ बहुरि न पैहो ऐसो थाना। साधु संग तुम नहिं पहिचाना॥ अब तोर होइ नरकमें बासा। निसु दिन बसे लबारके पासा॥४४॥

सा०–जात सबन कहँ देखिया, कहहिं कबीर पुकार।
चेतवाहोहु तो चेतिले, दिवस परत है धार॥४४॥

रमैनी पैंतालीसवीं॥ ४५॥

हिरणाकुश रावण गौ कंसा। कृष्ण गये सुर नर मुनि बंसा॥ ब्रह्मा गये मरम नहिं जाना। बड सब गये जो रहे सयाना॥ समुझि परी नहिं राम कहानी। निरबक दूध कि सरबक पानी॥ रहिगौ पंथ थकित भौ पवना। दशो दिशा उजारि भौ गवना॥ मीन जाल भौ इ संसारा। लोहकि नाव पषानको भारा॥ खेवे सबै मरम नहिं जाना। तहिबो कहै रहै उतराना॥ ४५॥

सा०–मछरी मुख जस केंचुवा, मुसवन मुँह गिरदान।
सर्पन मुँह गहेजुवा, जात सबनको जान॥ ४५॥

रमैनी छयालीसवीं॥ ४६॥

बिनसै नाग गरुड गलि जाई। विनसै कपटी औ सतभाई॥ विनसै पाप पुण्य जिन्ह कीन्हा। विनसै गुन निर्गुन जिन चीन्हा॥ बिनसे अग्नि पवन औ पानी। बिनसे सृष्टि कहां लौ गानी॥ विष्णु लोक विनसे छन माहीं। हौ देखा परलैकी छांही॥ ४६॥

सा०–मछ रूप माया भई, यमरा खेलै अहेर।
हरिहर ब्रह्म न ऊबरे, सुर नर मुनि केहि केर॥४६॥

रमैनी सैंतालीसवीं ॥ ४७ ॥

जरासिंधु शिशुपाल संहारा । सहस्रार्जुनै छल सो मारा ॥ बड छल रावन सो गौ बीती । लंका रही कंचनकी भीती ॥ दुर्योधन अभिमानहिं गयऊ । पांडव केर मरम नहिं पयऊ ॥ मायाके दम्भ गैल सब राजा । उत्तम मध्यम बाजन बाजा ॥ छौ चकवे सब धरनि समाना । एको जीव परतीति न माना ॥ कहां लौ कहौं अचेते गयऊ । चेत अचेत झगर एक भयऊ ॥ ४७ ॥

सा०-ई माया जग मोहिनी, मोहिसि सब जग धाय ।
हरिचंद्र सतके कारने, घर घर गये बिकाय ॥४७॥

रमैनी अडतालीसवीं ॥ ४८ ॥

मानिक पुरहि कबीर बसेरी । मद्दति सुनी शेख तक़ि केरी ॥ ऊजे सुनी जमन पुर धामा । झूसी सुनी पिरनको नामा ॥ इकइस पीर लिखै तेहि ठामा । खतमा पढै पैग़म्बर नामा ॥ सुनी बोल मोहि रहा न जाई । देखि मुकरवा रहे भुलाई ॥ हबीब औ नबीको कामा । जहांलों अमल सो सबै हरामा ॥ ४८ ॥

सा०-शेख अकरदी शेख सकरदी, मानो बचन हमार ।
आदि अन्त औ जुगहि जुग देखहु दृष्टि पसार ॥४८॥

रमैनी उन्चासवीं ॥ ४९ ॥

दूरकी बात कहौ दर्वेसा । बादसाह है कौने भेसा ॥ कहां कूच कहां करै मुकामा । कौन सुरतिको करो सलामा ॥ मैं तोहि पूछों मुसलमाना । लाल ज़र्द की नाना बाना ॥ काजी काज करो तुम कैसा । घर घर ज़बह करावौ भैंसा ॥ बकरी मुर्ग़ी किन फ़ुरमाया । किसके कहे तुम छूरी चलाया ॥ दर्द न जानै पीर कहावै । बैता पढि पढि जग भर्मावै ॥ कह कबीर यक सय्यद कहावै । आप सरीखा जग कबुलावै ॥ ४९ ॥

सा०-दिनभर रोजा रहत है, रात हनत है गाय ।
यह खून वह बन्दगी, क्यों कर खुशी ख़ोदाय ॥ ४९ ॥

रमैनी पचासवीं ५० ॥

कह इत मोहिं भयल जुग चारी। समझत नाहीं मोहि सुत नारी॥ बंस आग लगी बंसे जरिया। भ्रम भुलाय नर धंधे परिया॥ हस्तीके फन्दे हस्ती रहई। मृगीके फन्दे मृगा परई॥ लोहै लोह काटु जस आना। तियाके तत्व तिया पहिचाना॥५०॥

सा०–नारि रचंते पुरुष है, पुरुष रचंते नारि।
पुरुषहि पुरुषा जो रचे, ते बिरले संसार॥ ५०॥

रमैनी इक्यावनवीं ॥ ५१ ॥

जाकर नाम अकहुआ भाई। ताकर कहा रमैनी गाई॥ कहैको तातपर्य है ऐसा। जस पंथी वोहित चढि बैसा॥ है कछु रहनि गहनिकी बाता। बैठा रहै चला पुनि जाता॥ रहै बदन नहिं स्वांग सुभाऊ। मन अस्थिर नहिं बोलै काऊ॥ ५१॥

सा०–तन रहते मन जात है, मन रहते तन जाय।
तन मन एकै ह्वै रहै, हंस कबीर कहाय॥५१॥

रमैनी बावनवीं ५२ ॥

जेहि कारन शिव अजहुँ वियोगी। अंग बिभूति लायभै जोगी॥ सेष सहस मुख पार न पावै। सो अब खसम सहित समुझावै॥ ऐसी विधि जो मो कहँ धावै। छठयें मास दरस जो पावै॥ कौनेहु भांति दिखाई देऊँ। गुप्तहि रहौं सुभाव सब लेऊँ॥५२॥

सा०–कहहिं कबीर पुकारिके, सबका उहै हवाल।
कहा हमार मानै नहीं, किमि छूटै भ्रमजाल॥५२॥

रमैनी तिरपनवीं ५३ ॥

महादेव मुनि अन्त न पाया। उमा सहित उन जन्म गंवाया॥ उनहूते सिद्ध साधक होई। मन निश्चै कहु कैसे कोई॥ जब लग तनमें आहै सोई। तब लग चेत न देखो कोई॥ तब चेतिहो जब तजिहो प्राना। भया अन्त तब मन पछताना॥ इतना सुनत निकट चलि आई। मनके बिकार न छूटे भाई॥

१ उनसे सिद्ध साधक नहिं कोई। मन निश्चय कहु कैसे होई।

सा०-तीनलोक मुआ कौआयके, छुटि न काहुकी आस।
यक अंधरे जग खाइया, सब जग भया विनास ॥९३॥

रमैनी चौवनवीं ५४ ॥

मरिगो ब्रह्मा काशीके बासी। शिव सहित मुये अविनाशी॥ मथुरा मरिगो कृष्ण गुवारा। मरि मरि गये दसो अवतारा॥ मरि मरि गये भगति जिन ठानी। सर्गुण मां जिन दुर्गुण आनी॥

सा०-नाथ मछंदर बांचे नहीं, गोरखदत्त औ व्यास।
कहहि कबीर पुकारिके, परे कालके फांस ॥९४॥

रमैनी पचपनवीं ५५ ॥

गये राम औ गये लछमना। संग न गई सीता असधना॥ जात कौरवन लागु न बारा। गये भोज जिन्ह साजल धारा॥ गये पांडव कुंतीसी रानी। गये सहदेव जिन्ह बुद्धि मति ठानी॥ सर्व सोनकी लंक बनाई (उठाई)। चलत बार कछु संग न लाई॥ कुरिया जासु अंतरिक्ष छाई। सो हरिश्चन्द्र देखि नहिं जाई॥ मूरख मानुष अधिक सँजोवै। अपने मुवल और लगि रोवै॥ ई न जाने अपनो मरि जैबे। टकादश बिढै और लै खैवै॥

सा०-अपनी अपनी करिगये, लगी न काहुकी साथ।
अपनी करिगये रावणा, अपनी दशरथ नाथ ॥९५॥

रमैनी छप्पनवीं ५६ ॥

दिन दिन जरै जरलके पाऊ। गाड़े जाइ न उमगे काऊ॥ कंध न देई मसखरी करई। करहु धौं कौनि भांति निस्तरई॥ अकरम करै करमको धावै। पढि गुनि वेद जगत समुझावै॥ छूछे परै अकारथ जाई। कहैं कबीर चित चेतहु भाई॥ ९६॥

रमैनी सत्तावनवीं ५७ ॥

कृतियासूत्र लोक यक अहई। लाख पचासकी आगे कहई॥

१-तीन लोक मो आइके, छुटी न काहुकी आश।
यक अंधार जग खाइया, सब जग भया निराश॥

विद्या वेद पढै पुनि सोई। बचन कहत परतच्छै होई ॥ पहुँची बात विद्याकी वेता। वाहुके भर्म भयो संकेता ॥

सा०-खग खोजनको तुम परे, पीछे अगम अपार।
बिन परचे किमि जानिहौ, झूठा है हंकार ॥५७॥

रमैनी अट्ठावनवीं ५८ ॥

तै सुत मातु हमारी सेवा। तो कहँ राज देऊँ हो देवा ॥ अगम द्रिगम गढ देहुँ छुडाई। औरो बात सुनहु कछु आई ॥ उतपति परलै देउँ दिखाई। करहु राज सुख बिलसहु जाई ॥ एको बार होइहै बाँको। बहुरि जन्म न होइहै ताको ॥ जाय पाप हुइहैं सुख घाना। निश्चय बचन कबीरको माना ॥

सा०-साधु संत तेइ जना जिन, माना बचन हमार।
आदि अंत उतपति प्रलय, देखहु दृष्टि पसार ॥५८॥

रमैनी उनसठवीं ५९ ॥

चढत चढावत भंडहर फोरी। मन नहिं जनिको करि चोरी ॥ चोर एक मूसल संसारा। विरला जानै कोइ बूझन हारा ॥ स्वर्ग पताल भूमि लै बारी। एकै राम सकल रखवारी ॥

सा०-पाहन है है सब गये, अन भितियनके चित्त।
जासो किये भिताइया, सो धन भया न हित्त ॥५९॥

रमैनी साठवीं ॥ ६० ॥

छाडहु पति छाडहु लबराई। मन अभिमान टूटि तब जाई ॥ जिन्हले चोरि जो भिच्छा खाई। सो बिरवा पलुहावन जाई ॥ पुनि संपति औ पतिको धावै। सो विरवा संसार लै आवै ॥

सा०-झूठ झूठ कै डारहू, मिथ्या यह संसार।
तेहि कारण मैं कहत हौं, जाते होय उबार ॥ ६० ॥

---

१ पंटी बात विद्याकी पेटा।

रमैनी यकसठवीं ॥ ६१ ॥

धर्म कथा जो कहतै रहई । लबरी नित उठि प्रातै कहई ॥ लबरि बिहाने लबरी संझा । एक लाबरि वस ह्रिदया मांझा ॥ रामहु केर मर्म नहिं जाना । ले मति ठानी वेद पुराना ॥ वेदहु केर कहा नहिं करई । जरतै रहै सुस्त नहिं परई ॥

सा०-गुणातीतके गावते, आपुहि गये गमाय ।
माटी तन माटी मिलो, पवनहि पवन समाय ॥ ६१ ॥

रमैनी बासठवीं ॥ ६२ ॥

जो तोहि करता बरण विचारा । जनमत तीन दण्ड अनुसारा ॥ जनमत शूद्र मुये पुनि शूद्रा । कृत्रिम जनेउ घालि जग दुंद्रा ॥ जो तुम ब्राह्मण ब्राह्मणी जाये । और राह तुम काहे न आये ॥ जो तुम तुरुक तुरुकनी जाये । पेटै काहे न सुनति कराये ॥ कारी पीरी दूहौ गाई । ताकर दूध देहु बिलगाई ॥ छाडु कपट नर अधिक सयानी । कहहि कबीर भजु शारंगपानी ॥ ६२ ॥

रमैनी तिरसठवीं ॥ ६३ ॥

नाना रूप बरण यक कीन्हा । चारि वरण वै काहु न चीन्हा ॥ नष्ट गये कर्त्ता नहिं चीन्हा । नष्ट गये औरहिं मन दीन्हा ॥ नष्ट गये जिन वेद बखाना । बेद पढै पै भेद न जाना ॥ विमलख करै नैन नहिं सूझा । भौ अजान तब कछुव न बूझा ॥

सा०-नाना नाच नचाइके, नाचे नटके भेष ।
घटघटमें अविनाशी बसै, सुनहु तकी तुम सेष ॥ ६३ ॥

रमैनी चौसठवीं ॥ ६४ ॥

काया कंचन जतन कराया । बहुत भांतिके मन पलटाया ॥ जो सौ बार कहौं समुझाई । तहिबो धरा छोडि नहिं जाई ॥ जनके कहे जो जन रहि जाई । नव निधि सिधि तिन्ह पाई ॥ सदा धर्म तेहि ह्रिदया बसई । राम कसौटी कसतै रहई ॥ जोरि कसावै अन्ते जाई । सो बाउर आपुहिं बौराई ॥

सा०–ताते परी कालकी फांसी, करहु आपनो सोच।
जहां संत तहां संत सिधावै, मिलि रहे पोचै पोच ॥६४॥

रमैनी पैंसठवीं ॥ ६५ ॥

अपने गुणके औगुण कहहू। इहै अभाग तुम न विचारहू ॥ तुम जियरा बहुते दुख पाया। जल बिनु मीन कवन सचुपाया॥ चात्रिक जल हल भरे जो पासा। मेघ न बरसे चले उदासा ॥ स्वांग धरे भौसागर आसा। चात्रिक जल हल आसै पासा ॥ रामनाम अहै निज सारा। औरो झूठ सकल संसारा॥ हरी उतंग तुम जात पतंगा। जम घर किये जीवको संगा ॥ किंचित है सपने निधि पाई। हिये न समाय कहँ धरे छिपाई ॥ हिय न समाय छोड़ि नहिं पारा। झूठा लोभ वै कछु न विचारा ॥ सन्निति किन्ह आपु नहीं माना। तरिवर छर छागर ह्वै जाना॥ जिय दुर्मति डोलै संसारा। तेहि नहिं सूझे वार न पारा ॥

सा०–अन्ध भया सब डोलई, कोइ न करै विचार।
कही हमार माने नहीं, किमि छूटै भर्म जार ॥६५॥

रमैनी छाछठवीं ॥ ६६ ॥

सोई हीतु बंधु मोहि भावै। जात कुमारग मारग लावै ॥ सो सयान मारग रहि जाई। करे खोज कबहूँ न भुलाई॥ सो झूँठा जो सुतकै तजई। गुरुकी दया राम (को) भजई ॥ किंचित है यह जगत् भुलाना। धन सुत देखि भया अभिमाना ॥

सा०–जियँ जो नेक पयान किय, मन्दिर भया उजार।
मरे जे जियते मरि गये, बांचे वाचन हार ॥६६॥

रमैनी सढ़सठवीं ॥ ६७ ॥

देह हलाय भक्ति न होई। स्वांग धरे बहुतै नर जोई॥ धींगा धींगी भलो न माना। जो काहू मोहि ह्रिदय न जाना॥ मुख

---

१ हरिको भक्ति जानै विना, भव बूदि मुआ संसार। २ किंचित है एक तेज भुलाना।
३ दीन नखता किया पयाना, मंदिर भया उजार। मरि गया सो मरि गया, बांचे बांचन हार ॥

किछु और ह्रिदय कछु आना। सपनेहुं कबहूं मोहि न जाना॥ ते दुख पावै यहि संसारा। जो चेतहु तो होय उबारा॥ जो नर गुरुकी निंदा करई। सूकर स्वान जन्म सो धरई॥

सा०-लख[1] चौरासी जिव जंतुमें, भटकि भटकि दुख पाव।
कहहि कबीर जो रामहि जानै, सो मोहिनीके भाव॥६७॥

रमैनी अडसठवीं ६८॥

तेहि वियोगते भयउ अनाथा। परि निकुंज बन पाव न पाथा। वेदो नकल कहै जो जानै। जो समुझै सो भलो न मानै॥ नटवत[2] विद्या खेलै जो जानै। तेहि गुणके ठाकुर भल मानै॥ उहै जो खेलै सब घट माहीं। दूसरको कछु लेखा नाहीं॥ भलो पोच जो अवसर आवै। कैसहुके[3] जन पूरा पावै॥

सा०-जेकरे शर लागे हिय, सो जानेगा पीर।
लागै तो भागै नहीं, सुखसिंधु निहारु कबीर॥६८॥

रमैनी उनहत्तरवीं ६९॥

ऐसा योग न देखा भाई। भूला फिरे लिये गाफिलाई॥ महादेवको पंथ चलावै। ऐसो बडो महंत कहावै॥ हाट बजारै लावै तारी। कच्चेसिधन माया प्यारी॥ कब दत्ते मावासी तोरी। कब सुकदेव तोपची जोरी॥ कब नारद बन्दूक चलाया। व्यासदेव कब बंब बजाया॥ करहिं लडाई मतिके मंदा। ये है अतिथि कि तरकस बंदा॥ भये बिरक्त लोभ मन ठाना। सोना पहिरि लजावै बाना॥ घोरा घोरी कीन्ह बटोरा। गाव पाय जस चले करोरा॥

१ लख चौरासी योनि जिव, भटकि २ दुख पावैं।
२ नटवर वन्द खेल जो जानैं। ताकर गुण जो ठाकुर मानैं॥
३ कैसे कै जन पूरा पावैं।

सा०-तिय सुन्दरी न सोहई, सनकादिकके साथ ।
कबहुक दाग लगावई, कारी हांडी हाथ ॥ ६९ ॥

रमैनी सत्तरवीं ७० ॥

बोलना कासो बोलिय रे भाई । बोलतही सब तत्व नशाई ॥ बोलत बोलत बाढु बिकारा । सो बोलिय जो परै विचारा ॥ मिलै जो संत वचन दुइ कहिये । मिलै असंत मौन ह्वै रहिये ॥ पंडित सो बोलिय हितकारी । मूरख सो रहिये झखमारी ॥ कहहि कबीर अध घट डोलै । पूरा होय बिचार लै बोलै ॥७०॥

रमैनी इकहत्तरवीं ७१ ॥

शोक बधावा सब करि माना । ताकी बात इन्द्र नहिं जाना ॥ जटा तोरि पहिरावै सेली । योग युक्तिको गर्भ दुहेली ॥ आसन उड़ाये कौन बड़ाई । जैसे काग चीन्ह मड़राई ॥ जैसे भिस्ति तैसी है नारी । राज पाट सब गनै उजारी ॥ जस नर्क तस चंदन जाना । जस वाउर तस रहै स्याना ॥ लपसी लौंग गनै यक सारा । खांड[1] छांडि मुख फांकै छारा ॥

सा०-यही विचार विचारते, गये बुद्धि बल चित्त ।
दुई मिलि एकै होय रहा, काहि लगाऊं हित ॥७१॥

रमैनी बहत्तरवीं ॥ ७२ ॥

नारी एक संसारहिं आई । माय न वाके बापहिं जाई (बाप न जाई) ॥ गोड न मूंड न प्राण अधारा । जामे भरमि रहा संसारा ॥ दिना सात लो वाकी सही । बुध अध बुध अचरज यक कही ॥ वाहिकि वंदन कर सब कोई । बुध अधबुध अचरज बड़ होई ॥

सा०-मूस बिलाई एक संग, कहु कैसे रहि जाय ।
अचरज एक देखो सन्तो, हस्ती सिंहहि खाय ॥७२॥

१ खांडोपरी हरि फांकै छारा ।

रमैनी तिहत्तरवीं ७३ ॥

चली जात देखी यक नारी । तर गागरि ऊपर पनिहारी ॥
चली जात वह बाटहिं बाटा । सोवन हारके ऊपर खाटा ॥
जाडन मरे सुपेदी सौरी । खसम न चीन्है धरनि भई बौरी ॥
सांझ सकारै दिया लै बारै । खसमहिं छाडि सुमिरै लगवारै ॥
वाहिके संग निशिदिन रांची । पियासो बात कहै नहिं सांची ॥
सोवत छांडि चली पिय अपना । ई दुख अवधौं कहौं केहि सना ॥
सा०-आपनी जांघ उघारिके अपनी कही न जाय ।
कि जाने चित आपना, की मेरो जन गाय ॥ ७३ ॥

रमैनी चौहत्तरवीं ७४ ॥

तहिया गुप्त थूल नहिं काया । ताके सोग न ताके माया ॥ कमल पत्र तरंग यक माहीं । संगहि रहै लिप्त पै नाहीं ॥ आश ओस अंडन महँ रहई । अगनित अंडन कोई कहई ॥ निराधार आधार लै जानी । रामनाम लै उचरी बानी ॥ धर्म कहै सब पानी अहई । जाती के मन बानी रहई ॥ ढोर पतंग सरे घरियारा । तेहि पानी सब करै अचारा ॥ फन्द छोडि जो बाहर होई । बहुरि पंथ नहिं जोहै सोई ॥
सा०-भर्मक बांधल ई जगत, कोई न करै बिचार ।
हरिकी भगति जाने बिना, बूडि मुआ संसार ॥७४॥

रमैनी पचहत्तरवीं ७५ ॥

तेहि साहबके लागहु साथा । दुइ दुख मेटिके होहु सनाथा ॥
दशरथ कुल अवतरि नहिं आया । नहिं लंकाके राव सताया ॥
नहिं देवकीके गर्भहिं आया । नहिं यशोदा गोद खेलाया ॥
पृथ्वी रमन दमन नहिं करिया । पैठि पताल नहिं बलि छलिया ॥
नहिं बलि राय सो माडी रारी । नहिं हिरणाकुश बधल पछारी ॥
बाराह रूप धरणी नहिं धरिया । क्षत्री मारि निक्षत्र न करिया ॥

नहिं गोवर्धन कर गहि धरिया। नहिं ग्वाल संग वन २ फिरिया॥
गंडकी सालिग्राम नहिं सीला। मत्स्य कच्छ होय नहिं जल हीला॥
द्वारावती सरीर नहिं छाडा। लै जगन्नाथ पिंड नहिं गाडा॥
सा०-कहहि कबीर पुकारिके, वा पन्थै मति भूल।
जेहि राखे अनुमान करि, थूल नहीं अस्थूल ॥७५॥

रमैनी छिहत्तरवीं ७६॥

माया मोह कठिन संसारा। यहै विचार न काहु बिचारा॥
माया मोह कठिन है फन्दा। होय विवेकी सो जन बन्दा॥ राम नाम लै बेरा धारा। सो तौ लै संसारहि पारा॥
सा०-राम नाम अति दुर्लभै, औरे ते नहिं काम।
आंदि अंत और जुग जुगै, रामहिसे संग्राम ॥७६॥

रमैनी सतहत्तरवीं ७७॥

एकै काल सकल संसारा। एकै नाम है जगत पियारा॥
तिया पुरुष कछु कथो न जाई। सर्व रूप जग रहा समाई॥
रूप अरूप जाय नहिं बोली। हलका गरुआ जाय न तोली॥
भूख न त्रिषा धूप नहिं छाहीं। दुख सुख रहित रहे तेहि माहीं॥
सा०-अपरम परम रूप मगुरंगी, रूप निरूपन ताहि।
बहुत ध्यानके खोजिया, नहिं तेहि संख्या आहि ॥७७॥
अपरम परम रूप मगु रंगी, नहिं तेहि संख्या आहि।
कहहि कबीर पुकारि के, अदभुत कहिये ताहि॥

रमैनी अठहत्तरवीं ७८॥

मानुष जन्म चूके अपराधी। यही तन केर बहुत है उपाधी॥
तात जननि कहै हमरो बाला। स्वारथ जानि कीन्ह प्रतिपाला॥
कामिनी कहै मोर पिय आही। बाघिनि रूप ग्रासे चाही॥ पुत्र कलत्र रहें लव लाई। जम्बुक नाई रहैं मुँह बाई॥ काग गीध ढ़ोउ मरन विचारैं। सूकर स्वान दोउ पंथ निहारैं॥ अग्नि कहै मैं

ई तन जारों ॥ सो न कहे जो जरत उबारौं । धरती कहे मोहिं मिलि जाईं । पवन कहे मैं लेउं उडाई ॥ जेहि घरको घर कहैं गंवारे । सो वैरी है गले तुम्हारे ॥ सो तन तुम आपन के जानी । विषय स्वरूप भूले अज्ञानी ॥

सा०-इतने तनके साझिया, जन्मो भरि दुख पाय ।
चेतत नाहीं बावरे, मोर मोर गोहराय ॥ ७८ ॥

रमैनी उन्नासिवीं ७९ ॥

बढवत बाढि घटावत छोटी । परखत खरी परखावत खोटी ॥ केतिक कहौ कहां लों कही । औरो कहौं परे जो सही । कहे बिना मोहिं रहो न जाई । विरहिनि ले ले कूकुर खाई ॥

साखी-खाते खाते जुग गया, अजहुँ न चेतो आय ।
कहहिं कबीर पुकारिकै, जीव अचेतै जाय ॥ ७९ ॥

रमैनी अस्सिवीं ८० ॥

बहुतक साहस करि जिय अपना । सो साहेबसे भेट न सपना ॥ खरा खोट जिन नहिं परखाया । चाहत लाभ सो मूर गवांया ॥ समुझि न परै पातरी मोटी । आछी गाढी सब भौ खोटी ॥ कहहिं कबीर केहि देहो खोरी । जब चलिहौ झिन आशा तोरी ॥८०॥

रमैनी इक्यासिवीं ८१ ॥

देव चरित्र सुनौ रे भाई । सो तो ब्रह्मा धिया नसाई ॥ दूजे सुनी मंदोदरि तारा । जेहि घर जेठ सदा लगवारा ॥ सुरपति जाय अहिल्यहिं छलिया । सुर गुरु धरनि चन्द्रमा हरिया ॥ कहैं कबीर हरिके गुण गाया । कुंती कारण कुंवारिहि जाया ॥८१॥

रमैनी ब्यासवीं ८२ ॥

सुखके वृक्ष एक जगत उपाया । समुझि न परी विषय कछु माया ॥ छौ छत्री पत्री जुग चारी । फल द्वै पाप पुन्न अधिकारी ॥ स्वाद अनन्त कछु बरनि न जाई । करि चरित्र सो ताहि समाई ॥ नट वट साज साजिया साजी । सो खेलै सो देखै वाजी ॥ मोहा

वपुरा जुगति न देखा। शिव शकती विरंचि नहिं पेखा ॥
सा०-परदे परदे चलिगया, समुझि परी नहिं बानि।
जो जानै सो बांचिहै, होत सकलकी हानि ॥८२॥

रमैनी तिरासीवीं ८३ ॥

छत्री करै छत्रिया धर्मा। वाके बढै सवाई कर्मा ॥ जिन अवधू गुरु ज्ञान लखाया। ताकर मन तहँइं लै धाया ॥ छत्री सो जो कुटुम्ब सो जूझै। पांचो मेटि एक करि बूझै ॥ जीवहि मारि जीव प्रतिपालै। देखत जन्म आपनो घालै ॥ हालै करै निशाने धाऊ। जूझि परे तहां मनमत राऊ ॥
सा०-मनमत मरै न जीवई, जीवहि मरन न होय।
शून्य सनेही राम बिन, चले अपन पौ खोय ॥८३॥

रमैनी चौरासिवीं ८४ ॥

ऐ जिय आपन दुखहि संभार। जेहि दुख व्यापि रह्यो संसार ॥ माया मोह बंधा सब लोई। अल्पै लाभ मूल गो खोई ॥ मोर तोर में सबै बिगूता। जननि उदर गर्भ महँ सूता ॥ ई बहु रूप खेलै बहु बूता। जन भौंरा अस गये बहूता ॥ उपजि विनसि फिर जोनी आवै। सुखको लेश सपनेहु नहिं पावै ॥ दुख संताप कष्ट बहु पावै। सो न मिला जो जरत बुझावै ॥ मोर तोरमें जर जग सारा। ध्रिग स्वारथ झूठा हंकारा ॥ झूठो आश रहा जग लागी। इन्हते भागि बहुरि पुनि आगी ॥ जे हितकै राखे सब लोई। सो सयान वाचा नहिं कोई ॥
सा०-आपु आपु चेतै नहीं, कहो तों रुसावा होय।
कहै कबीर जो आपु न जागे, निरास्ति अस्ति न कोय ॥८४॥

इति रमैनी मूल बीजककी संपूर्ण ॥

१ धृग जीवन झूठो संसारा।
२ आपु आप चेतै नहीं कहौ तौ रिसिहा होय।
कहै कबीर सपनें जगें निरस्थि अस्थि नहि कोय ॥

निरख परमोधकी।

रमैनी १।

अमर लोकते हम चलि आवा। तीन लोक जम लूटत पावा॥ जम लूटे जिवको नासै। दसौ दिसा सबहुनको फाँसै॥ १॥ सुर-नर असुर कोई नहिं बाँचै। बहु विधि भेष धरे धर नाचै॥ जने तीन परपंची देवा। उनहु न जान्यो जमको भेवा॥ २॥ गरभ वासमें रहे भुलाई। अगम पन्थ जानो नहिं जाई॥ ब्रह्मा वेद पढै अधिकाई। वरण चारि मिलि बांध दिढाई॥ ३॥ विस्नू आपन पंथ चलावा। अविगत मरम काहु नहिं पावा॥ त्रिपुरारी आसन आरंभा। तीनों मिलकर आसन थंभा॥ ४॥ सो पाखंड षटदर्शन भूले। फिर फिर जोइनि संकट झूले॥ करे डिंभ जो मूल गमावे। धोखेई धोखे डहकावे॥ ५॥ एक न पूजे देई देवा। बोल झूठ बूडे यह खेवा॥ एक न चण्डी मन चित लावा। स्वारथ काजे जीव हतावा॥६॥ एक न तीरथ वरत फल ताका। कहैं विराने आगम भाखा॥ एक बरतकी आशा लाई। औसर हमको होइ सहाई॥७॥ एक दान पुन सरवस देहीं। जीवन जन्म सुफल करि लेहीं॥ ऐसे करि करि सब जग बन्धा। जस संपुटमें लै कुछ रन्धा॥ ८॥ कहा हमार न कोई मानै। मनुष एक हमहूँको जानै॥ मनुष रूप होय हम दिखलावा। बहुत भाँति कर नर समुझावा॥ तऊ न अन्ध मोहि पतियावा। धाई धाई जस उन विष खावा॥९॥ खसम न चीन्हे मूढ गवाँरा। हारै ठोकै माथ लिलारा॥ १०॥ झूठ नात सबही मन माना। साँच बातकी निन्दा आना॥ हंस होइ सो मुहि पतिआई। और न मुहि पतिआवै भाई॥११॥ तज कुल कानि करे उजियारा। यह तो मता कालको मारा॥ जुग जुग आऊं कह समझाऊं।

जो मानै तिहिं लोक पठाऊं ॥१२॥ अजहूं कहूं जो कोई माने। अच्छर माहिं मोहि पहिचानै॥ जिहि घट अच्छर होय हमारा। सो ठठ खोजै आप विचारा॥१३॥ अच्छर यहमें कहूं विचारा। जो कोई बूझे आन सवारा॥ अच्छर की प्रतीत कराई। आन उपाय छाडिदे भाई॥१४॥ अच्छर मध्ये बास हमारा। जो कोई बूझै आन सवारा॥ आन उपाय विज्ञानी होई। अच्छर विना न छूटे कोई॥१५॥

सा०-कहैं कवीर सब हंस से, कुल टूटे ते हंस।
तिनसे हमसे भेद नहीं, काटे जमके फंस॥ १॥

रमैनी २।

मोर कहा कोई विरले माना। सत्य लोकको दीन पयाना। सत्यलोक सत्यहिते भयउ। जुरा मरण कागज गल गयउ॥१६॥ जूरा मरण रहित घर पावा। जिन माना मोर समुझावा॥ और न कोई समझावन हारा। और न कोई राखन हारा॥१७॥ सो का राखे आपुहि भूलै। आपुहि बानी संकट झूलै॥ आपुहि झूलै और झुलावै। आपा माड़ सबन डहकावे॥१८॥ हमहूं से जो आपा माड़ै। उलट चोर कोतवाले डाँड़ै॥ जस नट विद्या नटवे चीन्हा। रात दिवस जिव पालन कीन्हा॥१९॥ बहुतक वृक्ष जो लाय दिखाये। तिसके फल सब तोड चखाये॥ काहूको सन्तोष न भयउ। खाली दिखाय और कछु लयउ॥२०॥ अस लालच जुग जुग चलआवा। लालच आगे जीव गवाँया॥ अम्मर घर को कोई न धावे। करामतकी सेवा लावे॥२१॥ एक कहे संपत मैं पाई। मान बड़ाई बहुत दिढाई। एक कहै फुर शब्द हमारा। जोरे कहें सो होय सवारा॥२२॥ इन बातन बूड़े बड़ ज्ञानी। एक कहे जो सिद्ध कहानी॥ सिद्ध कहानी अंजुली पानी। घट

छूटे की काहु न जानी ॥ २३ ॥ घटकी क्रिया रहनि रहाई । कालहुते तिनहू डहकाई ॥

सा०-बन्दिछोर मम शब्द है, काटै जमके बन्द ॥ लैराखे सतलोकमें, चले काल कटि फन्द ॥ २ ॥ ऐसे कारजको शब्द है, जो तोडै कुलकान ॥ लै राखे सतलोकमें, करै शब्द पहिचान ॥ ३ ॥ शब्द हमारा जो लहै, चलै न जमका जोर ॥ काले मारे छय करै, हंसा पहुँचै ओर ॥ ४ ॥ सत्तलोकमें पहुँचिया, अमरित भोजन पाइ ॥ जोग जुगंतर रम रहै, कहैं कबीर समझाइ ॥ ५ ॥

रमैनी-यह दुनिया झूठे रंगराची । झूठौ उपाई करे कर नाची ॥ २४ ॥ झूठेसे परतीत कराई । ताते सृष्टी काल मुख जाई ॥ कालक काहू मरम न पावा । काल सबन मिल खसम दिठावा ॥ २५ ॥ काल रूप बरते घट मांही । काल लगन नर आवै जाहीं ॥ काल सबनपै भेष धरावै । कालक दीन सिमरफल पावै ॥ २६ ॥ सो फल चाखै रुआ उड़ावे । हाथ पिछौरै शीश डुलावे ॥ सेवा कर पंछी पछताई । ऐसे जीव काल मुख जाई ॥ २७ ॥ अस जिन जानौ पंछि भुलाना । जनम हार जग जिय पछताना ॥ शब्द हमारे जो फल होई । सो फल कालसु माँगौ लोई ॥२८॥ कहौ काल कहाँते देई । नंगक आस धोबि का लेई॥ ऐसे कर कर जग डहकावा । जैसे आगी वनधौं लावा ॥ २९ ॥ अस इन लोगन घर मत कीना । घरके मते अपन पौ लीना ॥ जैसे नाद सो म्रिग भुलाई । समुझे नहीं पारधि दुखदाई ॥३०॥ नाद सुनाइ प्रान हत कीनौ । ऐसै काल जीव हत कीनौ ॥ ज्यों जल मध्ये मीन रहाई । निसवासर आपनौ भछ खाई ॥ ३१ ॥ तहाँ पारधी बंशी लाई । गेंडुआ चार तहाँ लटकाई ॥ मीन न

जाने कहाँ ते आवा । लालच लागे जीव गवाँवा ॥३२॥ पतंग न चीन्हे जोत की अहई । यहो न जान यह मोहिं दहई ॥ जो तो जानै तऊ न डरई । बिन जाने वह नाश जो करई ॥ ३३ ॥ स्वानको स्वान कहाँते आवा । भूसि भूसि उन जीव गवाँवा ॥ अपनो प्रतिमा देखि डराना । ऐसे भरम भरमि पछताना ॥३४॥ कहा केहरिको केहर कीनो । केहर जाइ कूप जिय दीनो ॥ ताको किनहु विचार न कीनो । यह विचार कोइ ज्ञानी चीनो ॥३५॥ यह अच्छर चीन्हहु रे भाई । हिन्दू तुरुकसे कहुँ समुझाई ॥ छाडै नहीं तीरथ वरत आसा॥ पाप पुन्नको कीनी नासा॥३६॥ छोडै नहिं गृह दार सुयारी । शबद छाड़ भये अलप अहारी ॥ छाड राज पाहन सिर नायो । छाड़िनि तोशः हम कछु न चलायो ॥ ३७ ॥ औंधूको सतगुरु कर जाना ॥ अंधाके मन औंधू माना ॥ प्रथम कहैं सुत आसन कीजे । मन पवनाको बस कर लीजे ॥ अनहद नाद रहै भरपूरी । अब हमते शंसै गो दूरी ॥ इंगला पिंगला सुषमन जागी । दसौ द्वार तब तारी लागी ॥ दीपक रूप निरंजन देखा । जोत सरूप निरंजन पेखा ॥ घटही मांहि निरंजन पाया । कहैं जु आवागमन मिटाया ॥ ३८ ॥ एक कहैं हम अम्मर भयऊ । एक कहैं हम पच्छहि लयेऊ ॥ ऐसी बाजी काल दिखावे । प्रान पयान काम नहीं आवे ॥ ३९ ॥ यह मिल औंधू सबहन सीका । अगम पंथको कहैं जो फीका ॥ कालके फंद पडे सब लोई । साची कहौं न मानै कोई ॥ ४० ॥ सांचे मरन न काहू पावा । कालक फंदा जग डहकावा ॥ वेद कितेब फंद यक कीना । जैसे कीर जाल बुन लीना ॥ ४१ ॥ तेहि फंद अटके सब कोई । हम चीन्हे बिन बड दुख होई ॥ ऐसो फंद जुग जुग चलि आवा । सेवक स्वामी सब

डहकावा ॥ ४२ ॥ काले धौ परपंच बनाये । ये परपंच न काहू पाये ॥ तेहिते बचिके बाहिर आये । हुए निनार सो हंस कहाये ॥४३॥ हंस होइ बहुतै सुख पावा । जोनी संकट बहुरि न आवा ॥ हंस चाल चलै जो कोई । ताको आवागमन न होई ॥ ४४ ॥ चाल बिना लागै बड बारा । तहवां नाहीं दोष हमारा ॥ यही बात कहै समझाई । तेई हंसको धोख छुडाई ॥ ४५ ॥

साः०-कहत कबीर हंसनते, धरमराइको लूट ।
अमरको निहचल करौं, भवजल जाई छूट ॥ ६ ॥

रमैनी-जीव काजको हम चलि आये । आइ देसको मंझा पाये ॥ मंझा लीना देस हम आई । राजा खोट अनीत तहांई ॥ ४६ ॥ रइयत कर कर मार उजारी । ऊँचेते नीचे लै डारी ॥ नीचे डारे सब संसारा । हमरे शब्द बिनु नाहि सहारा ॥४७॥ सेवा करै जस मोलक लीनौ । सहस आस उन विनती कीनौ ॥ उहिको पच्छ करै जो कोई ॥ सोच विचार रहै पुन सोई॥४८॥ रहै दुचित वह चैन न लेई । जस घरही मार घरही बध देई ॥ हाथक दीना खाइ अधीना । बाकी अटक रहै लौलीना ॥४९॥ अस जिव काम किये मन ऐई । जस पकड बहलिया दुख देई॥ जो भावै सो करै विचारा । ऐसै काल जगत यह मारा ॥५०॥ तेई कालको मरम न पावा । सेवा संजम बहुत दिढावा ॥ छोडे गिरह परिवार घनेरा । कह सो गुरू भला कर मेरा ॥ ५१ ॥ कहौ गुरू कहवाँते आवा । कहो गुरू कौनै समझावा ॥ इतनी बूझ न करै अधीना । फटी आँख न कहैं हम चीन्हा ॥ ५२ ॥ घरे गुरु घरही घर चेला । जैसे उढरू चलै अपेला ॥ कान न करै कहौ नहीं मानै ॥ जहँ जहँ रुचै तहँ तहँ तानै ॥५३॥ अस विचार इन सब मिल कीना । झूठे खसमहिं सरबस दीना ॥

कोई कहै राम कोइ रहमाना । ब्रह्मज्ञानी एककै जाना ॥ ५४ ॥ ब्रह्मज्ञान बाँचे नहीं कोई । पानी मिलै कौन सिधि होई ॥ वाको सुख यह कैसे पावै । यह बैठे वह खाइ उडावै ॥ ५५ ॥

साखी०-ऐसे डूबे षट दरशन, और सकल संसार ।
कविरा हमरे शब्द बिनु, कोइ न पावै पार ॥ ७ ॥

रमैनी-लोग कहैं हमही होय स्याना । साँच कहौं कोई नहीं माना ॥ काम झरै कन्द्रप नित झरई । ताको कोइ विचार न करई ॥५६॥ कंदरप यह निकस उपजाना । ताको विरही छटी बखाना ॥ जेहि पिता पुत्रको पालै । जीवन जनम सुफल कर जानें ॥ कहैं हमारो आगौ चलिहै । चीन्है नहीं कालको बलि है ॥ ५७ ॥

साखी-तैसहिं सुता दिढावै, अपने वसीठ चलान ।
दान दहेज दे कर जोरे, कहूं कि उन सरमान ॥ ८ ॥

रमैनी-कहु कौनसी कर यहु आवै । ताको सब मिल माथ नवावै ॥ रहौ पछताई काल धर खावा । जनम जनम पाछे पछतावा ॥ ५८ ॥

सा०-मानै शब्द बंदि जम छूटै, बाते सुनत भयान ।
कहँ कबीर नर भोदू, लोके वेद भुलान ॥ ९ ॥

रमैनी-छाड़हु लाज और छाडहु बडाई । छाडहु झूठ जो कथा चलाई ॥ छाडहु पाखंड छाडहु भेषा । छाडहु सब पापन-को लेषा ॥ ५९ ॥ छाडहु तीरथ वरत फल भाई । तजौ जोग आतम समझाई ॥ तजौ आसन जो बैठक दीना । छाडहु सुन्न सिखर मन चीना ॥ ६० ॥ चीन्हो जस हम जो चिन्हावैं । अपर करैं सतलोक पठावैं । सुन्न सिखरमैं धरम अन्याई । तिह डहकेको शकति पठाई ॥ ६१ ॥ माता बहनी भनजी होई ॥

मिहरि सुता हुइ बैठी सोई ॥ औरौ कुल बहु भांत बनाई। वरन चारमें सब डहकाई ॥ ६२ ॥ जोगियन तपियन अपडर कीना। भाज भाज उन बनखंड लीना॥ तिनको खनि खनि कंद खवावे। गिरह दारा सुख सबै छुटावे ॥ ६३ ॥ एक जनम भर मिथ्या खोवै। एक जो गुफाके माहीं सोवै॥ एक जोग जग उदासी फिरई। मन मथ जोग प्रान हत करई ॥ ६४ ॥ एक नगन हुइ आपु दिखावै। चौहटे नट जस पसू नचावै॥ ऐसै तीनों लोक नचावे। धरम रायको मरम न पावै ॥ ६५ ॥ धरम अहै परपंची देवा। उनहू कीन अमलको भेवा ॥ सकती लै परपंच बनाये। जुग जुग जीव सबै डहकाये ॥ ६६ ॥ वेद कितेब फंद एक कीनौ। मन बच करम सबै जुग लीनौ॥ वेदहि रच रच ग्रंथि जु दीना। वेद विचारै परै न चीन्हा ॥ ६७ ॥ तिन ग्रंथिन अटके सब कोई। तिनते छुटत बडो दुख होई॥ तिन ग्रंथिन जोरै छुटाऊँ। करि अमर सतलोक पठाऊँ ॥६८॥ अक्षर कहै सो कीजे भाई। हंस होइ सतलोकै जाई ॥ पांच दूत यहि तनमें जाना। यह तौ धरम राइका बाना ॥६९॥ परधन त्रिया क्रोध विकारो। लोभ मोह तिशनाको जारो॥ पांच पचीसको संग्रह छूटै। धरम राइ-को जम कुल लूटै ॥ ७० ॥ सत शब्दमैं डोर समावै। रहनि गहनि सतलोकै पावै ॥ बिनु रहनी कछु काज न होई बिनु गहनी सतलोक न कोई ॥ ७१ ॥

साखी–कह कवीर निरमल होय, काट करमके फंद ।
अमरलोक निहचल भये, जुग जुग करै अनन्द॥१०॥

इति निरख प्रबोधकी रमैनी सम्पूर्ण शुभम् ।

अथ ज्ञानचौंतीसा प्रारंभः ।

कक्का–केता कहे कबीर कहा कोई नहिं मानै । कायामें करतार, नाहिं कोई पहिचानै । कर्म बन्ध संसार, काल सों नहिं बचन है । अरे हाँ अवधू ! काम क्रोध हंकार, कल्पना कठिन है ॥ १ ॥

खख्खा–खारी सो कह खाँड; खाँड खारी विधि लेखै । खरे खोटको न्याव, नहीं हिरदय विवेखै ॥ खोरिन खोरिन फिरै, खाक मुख लायके । अरे हाँ अवधू ! खसम परो न चीन्हि, रहे खिसियायके ॥ २ ॥

गग्गा–ग्यान सोई निज सार, जाही सो थिर भया । कर्मको टूट्यो फन्द, द्वन्द्व सब खिरगया ॥ ग्यानी कथै अगाध, रहै हिया फेर फारके । अरे हाँ अवधू ! गाडि रख्यो बातनको, लेगो चोर उखारिके ॥ ३ ॥

घघ्घा–घटमें आतम राम, मिलो साहब सना । घरमें प्रेम निधान, चेत मेरे मना ॥ जहाँ नहीं घाम नहिं छाहँ, तहां इन घर करा । अरे हाँ अवधू ! घरकी सुरत बिसार, घसीटनमें परा ॥ ४ ॥

ङङा–(नन्ना) नयन विना नर अंध, द्वन्द्व धोखा धरा । सूझे वार न पार, प्रान परबस परा ॥ नितकै संशय शूल, मूल विसराइया । अरे हाँ अवधू ! नहीं भयो निरशंक, मुक्ति किन पाइया ॥ ५ ॥

चच्चा–चले जात नर नष्ट, चौरासी धारमें । बिन चीन्हे यहि चले, परे भौभारमें ॥ चतुर बिचच्छन होइ कहो कहँवाँ लगे । अरे हाँ अवधू ! पडे चोरके हाथ, चीन्हि नाहीं भगे ॥ ६ ॥

छच्छा–छल व्यवहारके धोखा छाडहू । काम क्रोध अहंकार

कि, लोभ निवारहू। क्षमा शील सन्तोष, सत्य हियमा धरो। अरे हाँ अवधू! परख, बोलता ब्रह्म चीन्ह ताके करो ॥ ७ ॥

जज्जा–जग जीवन जगदीस, जगत गुरु जीव है। जाने जान सुजान, सोई निज पीव है ॥ खोजो जो नव खण्ड, भेद निज कहि दिया। अरे हाँ अवधू! जुग जुग अविचल जीव, कबीर गुरु कहि दिया ॥ ८ ॥

झज्झा–झूठ झगरा छोडु, द्वन्द्वमें कहा परो। झलक मनी उजियार, निकट हियमें धरो ॥ झाड पातको छोड, सार निज ताय ले। अरे हाँ अवधू! कहा झखे मतिहीन, परम गुन गायले ॥ ९ ॥

नन्ना–नाह छोडि नरा, नार चली है जारपै। पियाकी सुरत बिसार, तो आशिक यारपै ॥ नीच बुद्धि मतिहीन, नहीं स्वारथ भयो। अरे हाँ अवधू! जार बसे हिय माँहिं, नरक ताते गयो ॥ १० ॥

टट्टा–टीडी भया जहान, उडा आसमान कूँ। हटा नेह निदान, चला घमसामकूँ ॥ टाराही नहिं टरे, भरम धोखा परा। अरे हाँ अवधू! कठिन, टेक मनमें धरी, तार टूटिया मरा ॥ ११ ॥

ठट्ठा–है ठोरेके ठोरे, दूर धोखा भया। ठोंके सबहिं कपाल, गुसैयाँ कित गया ॥ ठठके बेडा बांधि, पार कोई ना तरा। अरे हाँ अवधू! ठाकुर, बिसराय, काम ठगसों परा ॥ १२ ॥

डड्डा–डसे भुवंगम चोर, बिरह विष बाढिया। डसे जो चतुर सुजान, विरहमें ढारिया ॥ डार पातकूँ छोडि, सिपत सबहिन किया। अरे हाँ अवधू! डंड बाजके हाथ, प्रान अपना दिया ॥ १३ ॥

ढड्ढा–ढोल मारि गुरु कहै, सबन सों टेरिके। ढूंढे सरग पताल, थके सब हेरिके ॥ कहँ ढूंढे मतिहीन, कहाँ भटकत फिरे अरे हाँ अवधू! ढिगही परमानन्द, चीन्हि नाहीं परे ॥ १४ ॥

णण्णा-नन्ना निरगुन निरंकार, निरञ्जन सब जपे। नहिं रूप नहि रेख, ताहीको सब थपे॥ जहां नहीं तहाँ सही, सही तहाँ नहिं किया। अरे हाँ अवधू! नर अज्ञानी असल मिटाय, नकल सिर पर लिया॥ १५॥

तत्ता-तत्त्व यही निज सार, और कछु ना मिले। तुही तुही निज तुही, हिरदामें देखले॥ तिरखावन्त पुनि साधु, तलफ जाकी धरे। अरे हाँ अवधू! सो बोले घट माहिं, और ले क्या करे॥ १६॥

थथ्था-थकित भये नर नारि, सो ढूंढे ना मिले। थिर होय लखै न आप, अहंमें सब गले॥ जहाँ अति अगम अथाह, तहाँ थाह नहीं चले। अरे हाँ अवधू! थित बिन थँभै कौन, बहै भौमें भले॥ १७॥

दद्दा-दूसर कोई नाहिं, द्वन्द्वमें कहाँ परो। दया धर्म सत शील, साधु सेवा करो॥ दिलकी दुबिधा छाडि, काम एता किया। अरे हाँ अवधू! दिव्य दृष्टिसे देख, दरस दिलमें लिया॥ १८॥

धध्धा-धन्य धन्य सो भाग, जाही परतीत है। यही ध्यान धनसार, और विपरीत है॥ धावे सकल जहान, धोखामें सब परे। अरे हाँ अवधू! चहुँ दिस दुंद बहाल, सून्नकूँ सब चले॥ १९॥

नन्ना-निरख देख निज नैन, आपमें आप है। निरभय धजा निशान, अगर फहरात है॥ निसा मान भरपूर, परम सुख पाइहो॥ अरे हाँ अवधू! निसि वासरको सोग, सबै विसराइ हो॥ २०॥

पप्पा-पप्पा पूरण ब्रह्म है, प्रेमते और न कोई। काया बीर कवीर, परम गुरु निहचे सोई॥ पत्थर पूजे प्रेत, पार किन पाइया। अरे हाँ अवधू! पैडा परो न चीन्ह, मूल जहँडाइया॥ २१॥

फफ्फा-फल लागे बड दूर, बीज बकला विना। कौन खवावे तोर,

फहम अकला विना ॥ फिरते रहे भुलान, फिकर दिलमें रही । अरे अवधू ! फिकर मिटे दिल माहिं, फकीरी तब सही ॥२२॥

बब्बा-बिबि अक्षर ठहराय, वृछ जौ राखि हाँ। वेद शास्त्र बहु ग्रन्थ, अदभुत भाखिहाँ ॥ बकता बकत विस्तार, बहु बिधि ले बढा। अरे हाँ अवधू! भीतर भरी भंगार, कनक ऊपर मढी ॥२३॥

भभ्भा-भरमें सकल जहान, कहे यहां कछु नहीं । आपहि फन्द बनाय, भरम कीन्हों सही ॥ डार भग्मकी मोट, भरमना करम है। अरे हाँ अवधू ! भीतर है भरपूर, तो बाहर भरम है ॥२४॥

यय्या-(जज्जा) जो तुम चतुर सुजान, जगत गुरु जानले । जिन सिरजी सकल जहान, ताहि पहिचान ले ॥ एक ज्योति जगमाँहि, जगामग होय रही । अरे हाँ अवधू ! उन थापी निनार, तहाँ कछु है नहीं ॥ २५ ॥

ररा-राम राम सब जपे, राम सो ना मिले । आतम राम विसार, सून्नकूँ सब चले ॥ सून्न सनेही राम, कहो किन पाइया । अरे हाँ अवधू ! जुग जुग आतम राम, कबीर गोहराइया ॥२६॥

लल्ला-लाज बीज पत खोय, भांड मूरख भये । लाधा विष निज मूल, लालसों ना लिये ॥ लगी दवा चहुँ ओर, लपटमें सब परे । अरे हाँ अवधू ! कदहिं न गयो भर्म, सकल सरबस बरे ॥ २७ ॥

वव्वा-वाही की परतीत, वाहि विन और न कोई । वो सबके सिरताज, काज वासे सहि होई ॥ वह नहिं आवे जाय, सबन सो भिन्न है । अरे हाँ अवधू । ऐसी अकल विवेक, सबन किन्ह है ॥ २८ ॥

सस्सा-संसय भयो अथाह, सासत जिवको भई । इहां मिलनको नाहिं, सिपत सबहिन कही ॥ सिद्ध साधु संसार, सबै

सुमिरन करै। अरे हाँ अवधू! सुकृत पडे न चीन्ह, नहीं संसे टरै॥ २९॥

षषा-षोजो खोजी होय, षोज नाहीं मिलै। खोजी खोज सिरी न, कहो तुम कहाँ चले॥ जहाँ मिलनकी मौज, खोज तहाँ ना किया। अरे हाँ अवधू! खायो मूल गँवार, खसम दिल ना दिया॥ ३१॥

सस्सा-सत्य सुकृत सतनाम, सबनमें सांच है। सत रूप जगमाहिं, तो मनसा बाच है। संशय टारन भयहरन, सब कल निधि है सही। अरे हाँ अवधू! जो पूछो सो कही, अब का कही॥ ३२॥

हहा-हाजिर सो हजूर, गाफिली दूर है। हिरदा कमलमें हंस, सजीवन मूर है॥ हँसे हँसावे आप, सबनमें सोइ है। अरे हाँ अवधू! हितकर देख विचार, वचन यह सोइ है॥ ३३॥

छछा-छल जो गया सब छूट, महा आनन्द भया। मिटी जो जमका त्रास, छत्र सिरपर धरा॥ छाप सतकी पड़ी काज पूरन भया। अरे हाँ अवधू! कहे कवीर विचार, विछड मिलना भया॥ ३४॥

सा०-शीलवन्त सुजन जन, हिरदे प्रेम प्रकास।
सत्य टेक शब्दे गहे, सोजन सदा निवास॥

इति चौतीसा पहला।

अथ दूसरा चौतीसा प्रारम्भः २॥

कक्का-काया कुंज करमकी बारी, कर्ता बाग लगाया। किनका तामे अजर समाना, बिन बेली पलुहाया॥ पांच पचीस फूल तहँ फूले, मन अलि तहाँ लुभाना। वा फूलनके लपट विषयरस, रमता राम भुलाना॥

सा०–मनभवंरा यह कठिन है, विषय लहर लपटाय।
ताहि संग रमता बहे, फिर फिर भटका खाय ॥ १ ॥

खख्खा–खलककी खबर नहीं, ख्वाब ख्यालमें भूला ॥ खाना दाना जोडा घोडा, देख जवानी फूला ॥ खासा पलंग सेज बनि तोशक, तकिया फूल बिछाया। नवल नार ले तापर पौढे, काम लहर उमड़ाया ॥

सा०–लागी नारि पियारि जब, छुटा धनीसों नेह।
काल जबै ले ग्रासई, खाक होयगी देह ॥ २ ॥

गग्गा–गुरु कीजे निरख परख के, ज्ञान रहनका पूरा। गर्भ गुमान मदन मद त्यागी, दया क्षमा सतसूरा ॥ गैल बतावै अमर लोककी, गावै सतगुरु बानी ॥ मन गज सिर अकुंश दे बैठे, गुरू ग्यान मल तानी ॥

सा०–पाप पुन्यकी आशा नाहीं, करम भरमको न्यार।
किरतम पाखंड परिहरे, अस गुरु करो विचार ॥३॥

घघ्घा–घन गुरु ज्ञान बिना अँधियारा, मोह तिमिर तन छाया। सार असार बिचारे नाहीं, अमी छोडि विष खाया ॥ घरका घृत रेतेमें डारे, छाछ ढूंढता डोले। कञ्चन देके काच बिसाहै, हर विगराना तौले ॥

सा०–ज्ञान बिना नर अंध है, अंध कर्म मत हीन।
सांच गहै नहिं परखिके, झूठेके आधीन ॥ ४ ॥

ङवां–ङन मत मानो संतो, गहो परमारथ बानी। उपज सुख तब हिये तुम्हारे, जब परखो मम बानी ॥ ऊँच नीच कछु है नहीं, कर्म कहावै छोटा। जिसके करनी अन्दर नाहीं, सोई माल है खोटा ॥

सा०-ऊपर माला जटा जनेऊ, माथे तिलक सुहाय।
संसै सोग घटभीतर, अंदर मैल रहाय ॥ ५ ॥

चच्चा-चित चेतो चतुर चिकनियाँ, चैन कहा तुम सोया। चतुराई सबभार परैगी, जन्म अकारथ खोया॥ चौथा पन तेरो आय लगा, अजहुँ चेत गुरु ज्ञानी। नहिं तो परिहौ खोह अंधियारे, फिर पाछे पछताना॥

सा०-ऐसे पाटन आयकै, सौदा करो बनाय।
जो चूकौ या जन्मसे, तो दुख भुगतो जाय ॥ ६ ॥

छछ्छा-छल बल छिनमें निकसि जायगा, जब छेकै जम आई। छट पट करे मरे विष ज्वाला, तब कहु कौन सहाई॥ जमके मुगदर सिरपर बाजै, तब करिहौ किलकारी। तात मात भ्राता सुत सज्जन, काम न आवै नारी॥

सा०-छूटी सकल सगाई, भया चोरका हाल।
संगी सब न्यारा रहे, आप परै मुख काल ॥ ७॥

जज्जा-जमके पाले जबै परै जिव, तब कछु बात न आवै। तहां कछु चालै नाहीं, सीस धुनी पछतावै॥ जम ले पहुँचे चित्र-गुपित पहँ लिखनी लख बिचारे। दयाहीन गुरु बेमुख ढाढे, अगिनकुण्डमें डारे॥

सा०-जन्म सहस अजगर देवे, विषज्वाला अकुलाय।
पीछे क्रिमि विष्ठा माँही, भूत खान परजाय ॥ ८ ॥

झझ्झा-झाखन झूखन छांड़ो, झमकि करो गुरु सेवा। झांई मनकी दूर बहावो, परख शब्द गुरु देवा॥ झगरा झूठ झांई जग त्यागो, झपट भजो सतनामा। झीन करो मन मेरु मन्दिरमें, गुरु पद पँकज विश्रामा॥

सा०-होइ अधीन गुरु चरन गहो, कपट भाव कर दूर।
ज्यों पतिव्रता पति गही, तकै न दूसर कूर ॥ ९॥

ञञा-इश्क बिना मिले नहिं साहब, केतो भेख बनाये। इश्क मुश्क न छिपे छिपाये, के तो कोइ छिपावे ॥ इत उत यहाँ उहाँ सब त्यागो, निहचे गहो गुरु शरना । याहीसे हो दुख नसै, मिटै जनम औ मरना ॥

सा०-आदि नाम है जा हिये, सोई गुरु है सार ।
क्रीतमको जो ध्यावई, सोई भव लगे न पार ॥ १० ॥

टट्टा-टीम टाम बाहर बहुतेरा, दिल दासीसे बंधा । संख धुन लेकरे आरती, छुटा न घरका धंधा ॥ टिकुली सेंदुर चरखा पूनी, दासीने फुरमाया। कच्चे बच्चेने मांग मिठाई, मगन भये तब लाया॥

सा०-जिन सेवक पूजा दई, ताहि दई आसीस ।
जहाँ नहिं तहां टेढे भये, कहै भसम करो जगदीस ॥ ११॥

ठट्ठा-ठग बहुतेरे भेष बनावे, गले लगावै फांसी । स्वांग बनाये कौन नफा है, जो न भजै अविनासी ॥ ठोकर सहे गुरूके आगे, ठीक ठौर तब पावे। ठकठक मेटे जरा मरणका, जमके हाथ न आवे ॥

सा०-मृतक होय गुरु चरण गहे, ठसक करे सब दूर ।
कायर ते नहिं भगति होय, ठानि रहै कोई सूर ॥१२॥

डड्डा-डगमगसे कछु काज न सरिहै, अडिग नाम गुण गहिये। डर मेटे तब विषय कालको, अछै अमर पद लहिये ॥ डरते रहिये गुरू साधुसे, डिंभ काम नहिं आवै । डिंभ डुबावै भव-सागरमें, जनम मरन दुख पावै ॥

सा०-डेढ दिनाको जीवना डारो कुबुध नसाय ।
डेरा पावो सत्तलोकमें, सतगुरु शब्द समाय ॥ १३ ॥

ढड्ढा-ढूंढत फिरौ तुम कौनकूँ, ढूँढे सो ढिगनेरे । ढोल मारके सबै चिताऊँ, सतगुरु शब्द निबेरे ॥ है तू कौन कहाँ से आया,

कहवाँ निजघर तेरा। केहि कारन तुम भरमत डोडौ, तन तज कहाँ बसेरा ॥

सा०-को रक्षक है जीवका, गहो ताहि पहिचान।
रक्षकके चीन्हे बिना, अन्त होयगी हान ॥१४॥

णण्णा-गुणातीत निर्गुण अविनासी, दयानिधि सुखसागर। निहचल ठौर निरंतर बासा, नाम अनादि उजागर ॥ निर्मल अमी क्रांति छबि अदबुद, अकह अजावन सोई। नख सिख नाभि नैन मुख नासा, श्रवण चिकुर सम होई ॥

सा०-चिकुरनके उजियारमें, कोटिन बुध सरमाय।
कहा क्रांत छबि वरनो, बरणत बरनि न जाय ॥ १५ ॥

तत्ता-ताहि पुरुषके अंस जीव है, धर्मराय ठगि राखा। तारन तरन आप कहलावै, वेद शास्त्र अबिलाखा ॥ तत्त प्रकृति त्रिगुन तन बंधा, नीर पवनकी बारी। धर्मराय यह रचना कीन्ही, जहां जीव बैठारी ॥

सा०-जीवहिं लाग ठगौरी, भूले आपन देश।
सुमिरन करहीं कालका, भुगते कष्ट कलेस ॥ १६ ॥

थथ्था-थकित भया जिव भरमत डोलै, चौरासीके माहीं। नाना कष्ट जन्म त्रास जो व्यापै, जरे मरे पछताहीं ॥ थाह न पावै बिपत कष्टको, बूडै संसै धारा। भौसागरके विषम लहर है, सूझै वार न पारा ॥

सा०-बिकल परे अघ जोयनेमें, बहुविधि करे पुकार।
सतगुरु शब्द चीन्हे बिना, कैसे उतरे पार ॥१७॥

ददा-दुंद वाद है बहुत देहमें, परचे तहां न पावै। नर तन धर सो साहब सुमिरे, तो जम निकट न आवै ॥ दरस कराऊँ सत्त पुरुषका, देह हिरंमर पैहो। सुख सागर सुख बिलसो हंसा, भौजल बहुर न ऐहो ॥

सा०-ऐसा सुख घर छाड़के, आगे दुखका भार।
भर्मवस जिव भेद न जानै, लखै न शब्द हमार ॥ १८ ॥

धध्धा-धर्म धर्मकर सबै पुकारे, धर्महिं चीन्ह न पावै। धर्मराय तिहुँ लोकहिं ग्रासे, जीवत बाँध झुलावै॥ धोखा दे सबको मारे, सुरनर मुनि नहिं बाँचे। नर बपुराकी कौन चलाये, तन धर धर सब नाचे॥

सा०-भक्षक कला दिखायके, पुनि धरि रक्षक भाय।
रक्षक जान जपै जिव, पुनि तेहि भक्ष कराय ॥१९॥

नन्ना-निर्भय नाम लौ लावे, नकल चीन्ह पर त्यागो। नाद विन्दते न्यारा कहिये, सुरत सोहंगम पागो॥ निराधार निहतत्त निहअच्छर, निह संसै निहकामी। निःस्वादी निर्मल अविगत, निहचिंत सुखधामी॥

सा०-रामसनेही चेतो हो, भाषो घरको डोर।
परखोगुरुगम सुरतसे, चलो त्रिन जम तोर॥ २० ॥

पप्पा-पाप पुन्यमें जग अरुझाने, पार कौन विधि पावे। पाप पुन्य भुगते नर धर धर, फिर फिर जम लेजावे॥ प्रेम भक्ति परमातम पूजा, परमारथ चित धारे। पावन जन्म परम पद पावे, पारख शब्द विचारे॥

सा०-प्रीतम विरह वियोग जेहि, परिहर कपट कुचाल।
पिउ पिउ रटन लगावो, पाँव परे तेहि काल॥२१॥

फफ्फा-फरामोसकर फिकर, फहम करो दिल माहीं। परफुल्लित संतन गुन गावो, जम तेहि देखि डराहीं॥ फाजिल सो जो आपा मेटे, फना होय गुन गावै। फांसी काटे करन भरमकी, जमके हाथ न आवै॥

सा०-फेर फेर नर भर्म बस, भर्महिं भटका खाय।
तीरथ बरत लगी जिव भरमें, उस्सर प्यास न जाय॥२२॥

बब्बा-ब्रह्म बसत सरव भूतमें, दुनिया भाव न होई। वर्त्तमान चित चेतत नाहीं, भूत भविष्य बिलोई॥ बड़े बड़े विषम बुद्धि लागे, बोलनहार न जोवे। ब्रह्म दुखित कर पाहन पूजे, बरबस आप बिगोवे॥

सा०-बंध परे नर कालके, बुद्धि ठगाई जान।
बंध छुडा बाहर चलूं, मोहि गहो पहिचान॥ २३॥

भब्भा-भार परे यह देश बिगाना, भवसागर औगाहा। भगत अभगत दोऊ कह बोरे, कोई न पावे थाहा॥ भक्षकने लीला विस्तारी, कला अनेक दिखावे। भक्षकको रक्षक कर थापै, रक्षक चीन्ह न पावे॥

सा०-भछे जाहि सो भक्षक, रक्षक रहे निनार।
परम चक्रमें परे जिव, लखे न शब्द हमार॥२४॥

मम्मा-मन मैंगल मस्त दिवाना, जीवहि उभट चलावे। अकरम करम करै मन आपै, पीछे जिव दुख पावे॥ मोह बस जिव मन नहिं चीन्हे, जाने यह सुखदाई। मार लगे जब मन होय न्यारा, नरक परे जिव जाई॥

सा०-मन गज अगुवा कालको, परखो संत सुजान।
अंकुस सतगुरु ज्ञान है, मन मतंग भय मान॥२५॥

जज्जा-जो जिव सतगुरु शब्द समावे, तो जम होवे चेरा। जुगत जुगत कर मनको जीतो, सहजे होय निवेरा॥ जहँ लग काल जाल विस्तारी, सो सब मनकी बाजी। मनहिं निरंजन राजा कहिये, मन पंडित मन काजी।

सा०-गुरु प्रताप भये जोर जिव, निबल भया मन चोर।
तस्कर लाग न पावई, जो गढपति करै अंजोर ॥२६॥

ररां-रहनी रहै रजनी नहिं चंपे, रमे सतगुरु बानी। रहनी बाती जीत उजियारे, जाते होय न हानी॥ रमता राम काम कर अपना, सपना सब संसारा। रार रोस तजि सतगुरु सेवौ, जासे उतरो पारा॥

सा०-रैन दिवस वा घर नहीं, पुरुष प्रकास अंजोर।
ले राखूँ तेहि ठाँव जिव, जहाँ न झंपै चोर ॥२७॥

लल्ला-लगन लगी जेहि गुरु चरणों, लच्छ प्रगट तेहि ऐसे। लगन लगी तब मगन भया मन, लोक लाज कुल कैसे॥ लाग रहे गुरु सुरत परेखे, निज स्वारथ नहीं सूझै। लागे ठोकर पीठ न देवे, सूरा सन्मुख जूझै॥

सा०-लागे लहर ललक मन बुधकी, निकट न आवे ताहि।
लोटे गुरु चरणन तरे, गुरु सनेह हिय जाहि ॥२८॥

वव्वा-वाके निकट काल नहिं आवे, जो सतनाम समाना। वार पारको संसै नाहीं, बाहीसो मन माना॥ वासिल बाकी काल बली की, ताही हाथ बिकाना। वारिसकूँ सौंपा दिल अपना, सबही दुन्द्व समाना॥

सा०-वाही सों जिव इश्क लगावे, वाजिब सखुन अजूब।
वाबद एक करो बन्दगी, गहो पाक महबूब ॥२९॥

सस्सा-सहर चोर घनघोर करे निसि, सोवै सब घरवारी। सोर न करै भर्म बस सोवै, लागी विषम खुमारी॥ साहबसे फेरा दिल अपना, दुनियाँ बीच बँधाया। ससुरा साला साली सासू, समधी सुजन सुहाया॥

सा०-सतगुरु शब्द पुकारई, समुझि गहै कोइ सूर।
सुमिरि लीजो समरथको, जाना है बड दूर ॥ ३० ॥

षष्षा-षलक तजै षलक मन रोचै, नर षोये जात सब कामा। षबर नहीं घर षर्चै षुटाना, चेतो रमता रामा॥ षोल कपाट चित चेतो अजहूँ, वाहिदसे लो लावो। ष्वाब ष्याल कर दूर दिवाना, हिरदे नाम समावो॥

सा०-षाल भरी है वायुसों, षाली होत न वार।
षेम परे जेहि काममें, सो करु वेगि विचार॥ ३१॥

सस्सा-सहज शील संतोष धीरधर, ज्ञान विवेक बिचारो। दया छमा सत संगत सेवा, शतगुरु शब्द अधारो॥ सुमरण कर सत्त नाम धनीको, सूरा तन गहि रहना। सुमिरो अरि अँजोर परे तब, मनके संग न बहना॥

सा०-सैन कही समुझै कोई, रहनी रहै सो सार।
कहन तरे तो जग तरे, कहनि रहनि बिन छार॥ ३२॥

हह्हा-हिया माहि सत नाम समाना, दया मिहर दिल जाना। हरिके मने बिन तरा न कोई, हरिसे लोक अजाना॥ हरि बिनुस हरि अजर अमर है, हरिमें हरिको बूझै। हाजर छोड़ बुत्तको पूजै, हद्द कर नाहीं बूझै॥

सा०-हम हमार घर छाड़िकै, हक्क राह पहिचान।
हासिल होय मकसद तब, हाफिन अमल अमान॥३३॥

छछ्छा-छैल चिकनिया भया घनेरा, छाका फिरै दिवाना। छय होय जाय अमर नहि कोई, आखिरको पछिताना॥ छर मध्ये निःअच्छर बूझे, समझे गुरु गम धावे। छरमें निःअच्छर जो जाने, निःअच्छर तब पावे॥

सा०-निच्छर गहे विवेक करि, बावन अच्छर भिन्न।
कहे कवीर धर्मदाससे, विरला कोई चिह्न॥३४॥

इति ज्ञान-चौतीसा-कवीर साहबका सम्पूर्ण॥

अथ चौतीसा प्रारम्भः ॥

(बीजक का)

प्रथम ओंकार ॥

ॐ ओंकार-आदिहि जो जानै । लिखिके मेटि ताहि फिरि मानै ॥
ओंकार कहै सब कोई । जिनहु लखा सो बिरलै होई ॥ १ ॥

चौतीसा ॥

कका-कमल किरणिमें पावै । शशि बिगसित संपुट नहिं जावै ॥
तहां कुसुंभ रंग जो पावै । औगह गहिके गगन रहावै ॥ १ ॥

खखा-खख्खा चाहै खोरि मनावै । खसमहिं छोडि दशहू दिशि धावै ॥ खसमहिं छोडि छमा है रहई । होइ अखीन अक्षय पद लहई ॥ २ ॥

गगा-गग्गा गुरुके बचनै मानै । दूसर शब्द करै नहिं कानै ॥
तहां बिहंगम कतहुं न जाई । अवगह गहिके गगन रहाई ॥ ३ ॥

घघा-घघ्घा घट विनशे घट होई । घटहीमें घट राखु समोई ॥
जो घट घटै घटै फिरि आवे । घटही माहिं फिर घटहि समावे ॥ ४ ॥

ङङा-नन्ना निरखत निशिदिन जाई । निरखत नैन रहत रतनाई ॥
निमिष एकलौ तिरखै पावै । ताहि निमिषमें नैन छिपावै ॥ ५ ॥

चचा-चच्चा चित्र रच्यो बहु भारी । चित्र छोडि तू चेतु चित्र-कारी ॥ जिन यह चित्र विचित्र उलेखा । चित्र छोडि तू चेतु चितेला ॥ ६ ॥

छछा-छछ्छा आहि छत्रपति पासा । छंकि किन रहै छोड़ि सब आसा ॥ मैं तोहि क्षण क्षण समुझाया । खसम छोडि कस आपु बंधाया ॥ ७ ॥

जजा-जज्जा ई तन जियतहि जारो । जोबन जारि युगति जो

१ छंकिके रहउ मेटि सब आसा।

पारो ॥ घटहीं ज्योति उजियारी करे। जो कछु जानि जानि पर जरै ॥ ८ ॥

झझा-झझ्झा अरुझि सरुझि कित जाना। हीढत ढूंढत जाय पराना॥ कोटि सुमेरु ढूंढि फिरि आवै। जो गढ गढ़ा गढ़हि सो पावै ॥९॥

ञञा-नन्ना निर्खंत नगर सनेहू। आपन करु निरुवार संदेहू ॥ नहिं देखो नहिं आप भजाऊ। जहां नहीं तहं तन मन लाऊ॥१०॥

टटा-टट्टा विकट बाट मन माहीं। खोलि कपाट महलमें जाहीं॥ रहे लटपटे जूटि तेहि माहीं। होहिं अटल तेहि कतहुं न जाहीं॥११॥

ठठा ठट्ठा ठौर दूरि ठग नीरे। नितके निठुर कीन्ह मन धीरे ॥ जेहि ठग ठगे सब लोग स्याना। सो ठग चीन्हि ठौर पहिचाना॥१२॥

डडा-डड्डा डर कीन्हे डर होई। डरहीमें डर राखु समोई॥ जो डर डरै डरै फिरि आवे। डरहिमें पुनि डरहि समावे॥ १३ ॥

ढढा-ढढ्ढा ढूंढत ई कित जाना। हीडत ढूढँत जाय पराना ॥ कोटि सुमेर ढूंढ फिरि आवै। जेहि ढूंढा सो कतहुँ न पावै ॥१४॥

णणा-नन्ना दुई बसाये गाऊं। रेनन्ना ढूंढे तेरा नाऊ॥ मुये एक जाय तजि घना। मरे इत्यादिक केते गना ॥ १५ ॥

तता-तत्ता अति त्रियो नहिं जाये। तन त्रिभुवनमें राखु छिपाये॥ जो तन त्रिभुवन माहिं छपावे। तत्वहि मिले तत्वसो पावे ॥१६॥

थथा-थथ्था थाह थहो नहिं जाई। इह थोरे वह थीर रहाई॥ थोरे थोरे थिर होहु रे भाई। बिनु थम्भे जस मंदिल थंभाई॥१७॥

ददा-दद्दा देखहु बिनशनिहारा। जस देखौ तस करौ विचारा॥ दशौ द्वारमें तारी लावै। तब दयालको दर्शन पावै ॥ १८ ॥

धधा-धध्धा अर्ध माहि उजियारी। अर्धहि छाड ऊर्ध मन तारी॥

---

१ जो कछु युगति जानि तन जरं।
घटही ज्योति उजियारी करं॥

अर्ध छोडि ऊर्ध मन लावै । आपा मेटिके प्रेम बढावै ॥ १९ ॥
नना-नन्ना वो चौथे मह जाई । रामके गदहा हो खर खाई ॥ नाह
छोड़ किय नर्क बसेरा । नीच अजौं चित चेतु सबेरा ॥ २० ॥
पपा-पप्पा पाप करै सब कोई । पापके करे धर्म नहिं होई ॥
पप्पा कहै सुनहु रे भाई । हमरेसे ये कछू न पाई ॥२१॥
फफा-फफ्फा फल लागो बड दूरी । चाखै सतगुरु देइँ न तूरी ॥
फफ्फा कहै सुनहु रे भाई । स्वर्ग पतालकी खबरि न पाई ॥२२॥
बबा-बब्बा बर बर कर सब कोई । बर बर किये काज नहिं होई ॥
बब्बा-बात करै अरथाई । फलके मरम न जानेहु भाई ॥२३॥
भभा-भभ्भा भर्म रहा भरि पूरी । भमरे ते है नियरे दूरी । भभ्भा
कहै सुनौ रे भाई । भभरे आवे भभरे जाई ॥ २४ ॥
ममा-मम्मा सेये मर्म न पाई । हमरे ते इन्ह मूल गंवाई ॥ मम्मा
मूल गहल मन माना । मर्मी होय सो मर्महिं जाना ॥ २५ ॥
यया-जगत रहा भर पूरी । जगतहुते जज्जा है दूरी ॥ जज्जा कहै
सुनौ रे भाई । हमरेसे ये जय जय पाई ॥ २६ ॥
ररा-ररां रारि रहा अरुझाई । राम कहे दुख दारिद जाई ॥ ररां
कहै सुनौ रे भाई । सतगुरु पूछिकै सेवहु जाई ॥ २७ ॥
लला-लल्ला लुतरे बात जनाई । लुतरे पावै परचै पाई ॥ अपना
लुतुर औरको कहई । एकै खेत दुनौ निर्बहई ॥ २८ ॥
ववा-वव्वा वह वह कह सब कोई । वह वह कहे काज नहिं होई ॥
वह तौ कहै सुनै नहिं कोई । सरग पताल न देखै कोई ॥२९॥
शशा-सस्सा सर नहिं देखै कोई । सर सीतलता एकै होई ॥ सस्सा
कहै सुनौरे भाई । शून्य समान चला जग जाई ॥ ३० ॥
षषा-षष्षा षरा कहै सब कोई । षर षर कहै काज नहिं होई ॥
षष्षा कहै सुनहुरे भाई । राम नाम लै जाहु पराई ॥३१॥

ससा-सस्सा सरा रच्यो वरियाई । सर बेधे सब लोग तवाई ॥ सस्साके घर सुन गुन होई। इतनी बात न जानै कोई॥३२॥

हहा-हहूहा हाय हायमें सब जग जाई । हरष सोक सब मांहि समाई ॥ हकरि हकरि सब बड बड गयऊ ॥ हहूहा मर्म न काहू पयऊ ॥ ३३ ॥

क्षक्षा-छछछा छण प्रलय मिटि जाई । छेव परे तब को समुझाई ॥ छेव परे कोउ अन्त न पाया । कह कवीर अगमन गोहराया ॥ ३४ ॥

इति चौंतीसा बीजकका सम्पूर्ण ।।

अथ विप्रमतीसी प्रारम्भः॥

सुनहु सबन मिलि विप्र मतीसी। हरि विनु बूड़ी नाव भरीसी॥ ॥१॥ ब्राह्मण होयके ब्रह्म न जानै । घरमें जग्य प्रतिग्रह आनै ॥२॥ जो सिरजा तेहि नहिं पहिचानै। करम भरम लै बैठि बखानै ॥ ३ ॥ ग्रहण अमावस सायर पूजा। स्वातिके पात परहिं जनि दूजा ॥४॥ प्रेत कर्म मुख अंतर बासा। आहुति सहित होमकी आसा ॥५॥ कुल उत्तम कुल माहि कहावे। फिरि फिरि मध्यम कर्म करावे ॥ ६ ॥ करम असुचि उछिष्ट खाहीं। मति भरिष्ट जमलोकहिं जाहीं ॥ ७ ॥ सुत दारा मिलि जूठा खाहीं । हरि भगतनकी छूत कराहीं ॥ ८ ॥ नहाय खोरि उत्तम ह्वै आवे। विष्णुभक्त देखें दुख पावे ॥ ९ ॥ स्वारथ लागि रहे वे आढा। नाम लेत जस पावक डाढा ॥१०॥ राम किस्नकी छोडिन आसा। पढि गुनिभै किरतिमके दासा ॥ ११ ॥ करम करहि करमहिको धावे। जो पूछे तेहि करम दृढावै ॥ १२ ॥ निःकरमीकी निंदा करई। कर्म करे ताही चित धरई ॥ १३ ॥ अस हिय भगति

भगवतको लावे। हिरणाकुसको पंथ चलावै ॥१४॥ देखहु कुमति नरक प्रकासा । विनु लखि अंतर कृत्रिमदासा ॥ १५ ॥ जाके पूजे पाप न ऊडे । नाम सुमिरते भवमें बूडे ॥१६॥ पाप पुण्यके हाथहि पासा । मारि जगत जग कीन विनासा ॥१७॥ वै बहनी दोउ बहनी न छाडे । वह गृह जारै वह गृह माडे ॥१८॥ वैठे ते घर साहु कहावै । भितर भेद मन मुसहि लगावे ॥ १९ ॥ ऐसी विधि सुर विप्र भनीजे। नाम लेत पंचासन दीजे॥ २० ॥ बूडि गये नहिं आपु सवाँरा । ऊँच नीच कहु काहि जोहारा ॥२१॥ ऊँच नीच है मध्यम बानी। एकै सबन एक है पानी॥२२॥ एकै मटिया एक कुम्हारा । एकै पवनको सिरजन हारा ॥२३॥ एकै चाक बहु चित्र बनाया । नाद बिंदुके बीच समाया ॥ २४ ॥ व्यापी एक सकलमें जोती। नाम धरेका कहिये मोती ॥२५॥ राच्छस करनी देव कहावे। वाद करे भव पार न पावे ॥२६॥ हंस देह तजि न्यारा होई। ताकी जात कहै धौं कोई ॥ २७ ॥ स्वेद सपेद कि राता पियरा। अवरन बरन कि ताता सियरा ॥ २८ ॥ हिंदू तुरुक कि बूढा वारा । नारि पुरुष मिलि करहु विचारा ॥ २९ ॥ कहिय काहि कहा नहिं माना । दास कवीर सोई पहिचाना ॥ ३० ॥

सा०-बहिया है बहिजात है, कर गहि ऐंचहु ओर ।
समझाये समझे नहीं, दे धका दुई ओर ॥१॥

इति विप्रमतीसी बीजककी ।

कहरा. १

सहज ध्यान रहु सहज ध्यान रहु, गुरुके वचन समाई हो॥ मेली सृष्टि चरा चित राखहु, रहौ दृष्टि लौलाई हो ॥ जस दुख

देखि रहहु यहि औसर, अस सुख होई हैं पाई हो ॥ जो खुट-कार बेगि नहिं लागे, हृदय निवारहु कोऊ हो॥ भुगतिकी डोरी गाढि जनि खैंचहु, तब बझिहैं बड रोहू हो ॥ मनु वहि कहहु रहहु मन मारे, खिजुवा खीजि न बोले हो॥ मानु मीत मिताई न छोडे, कबहूँ गांठि न खोले हो। भोगउ भोग मुक्ति जनि भूलहु, जोग जुगति तन साधहु हो ॥ जो यह भांति करहु मतबलिया ता मतके चित बांधहु हो॥ नहिं तो ठाकुर है अति दारुन करिहै चाल कुचाली हो ॥ बांधि मारि डंड सब लेहीं, छूटहिं तब मत-वाली हो ॥ जबही सावंत आनि पहुँचे, पीठ सांठि भल टुटिहै हो ॥ ठाढे लोग कुटुम सब देखे कहे काहुके न छुटिहैं हो ॥ एक तो निहुरि पांव परि विनवे, विनति किये नहिं माने हो ॥ अन-चीन्हे रहेहु न कियेहु चिन्हारी, सो कैसे पहिचनबेउ हो॥ लीन्ह बुलाय बात नहिं पूछी, केवट गरब तन बोले हो ॥ जाकर गांठि समर कछु नाहीं, सो निर्धनिया है डोले हो ॥ जिन्ह सम युक्ति अगमनकै राखिन, धरिन मच्छ भरि डेहरि हो ॥ जेकर हाथ पांव कछु नाहीं, धरन लाग तेहि सो हरि हो ॥ पेलना अछत पेलि चलु वौरे, तीर तीरका टोवहु हो॥ उथले रहहु परहु जनि गहिरे, मति हाथहुकी खोवहु हो ॥ तरके घाम उपरके भूँभुरि, छाहँ कतहुँ नहिं पायहु हो ॥ ऐसनि जानि पसीझहु सीझहु, कस न छतुरिया छायहु हो ॥ जो कछु खेल कियहु सो कीयेहू, बहुरि खेल कस होई हो ॥ सासु ननद दोऊ देत उलाटन, रहहु लाज मुख गोई हो ॥ गुरु भौ ढील गोन भई लचपच, कहा न मानेहु मोरा हो॥ ताजी तुर्की कबहुँ न साधेहु, चढेहु काठको घोरा हो॥ ताल झांझ भल बाजत आवे, कहरा सब कोइ नाचे हो॥ जेहि रंग दुलहा ब्याहन आये, दुलहिनि तेहि रंग राचे हो ॥ नौका

अछत खेवे नहिं जाने, कैसेक लगवेहु तीरा हो ॥ कहहिं कबीर राम रस माते, जोलहा दास कबीरा हो ॥ १ ॥

कहरा २.

मत सुनु मानिक मत सुनु मानिक, हृदय बंद निवारहु हो। अटपट कुम्हरा करे कुम्हरैया, चमरा गांव न बांचे हो ॥ नित उठि कोरिया पेट भरतु है, छिपिया आंगन नाचे हो ॥ नित उठि नौवा नाव चढतु है, बेरहि बेरा बोरे हो ॥ राउरकी कछु खबरि न जानहु, कैसेके झगरा निबेरहु हो ॥ एक गांवमें पांच तरुनि बसै, जेहि मा जेठ जेठानी हो ॥ आपन आपन झगरा प्रकासिनि, पियासों प्रीति नसाइनि हो ॥ भैंसिन मांहिं रहत नित बकुला, तिकुला ताकि न लीन्हा हो ॥ गाइन माहिं बसेउ नहिं कबहूँ, कैसे पद पहिचनबेउ हो ॥ पंथी पंथ बूझ नहिं लीन्हा, मूढहिं मूढ गंवारा हो ॥ घाट छोड़ि कस औघट रेंगहु, कैसेके लगबेहु तीरा हो ॥ जतइनके धन हेरिन ललचिन, कोदइतके मन दौरा हो ॥ दुइ चकरी जनि दरर पसारहु, तब पैहौ ठीक ठौरा हो ॥ प्रेम बाण एक सतगुरु दीन्हो, गाढों तीर कमाना हो ॥ दास कबीर कीन्ह यह कहरा, महरा मांहि समाना हो ॥ २ ॥

कहरा ३.

रामनामको सेवहु बीरा, दूरि नहिं दुरि आसा हो ॥ और देवका सेवहु बौरै, ई सब झूठी आसा हो ॥ ऊपर ऊज्जरका भौ बौरै, भीतर अजहूं कारो हो ॥ तनके वृद्ध का भौ बौरै, मनुवा अजहूं बारो हो ॥ मुखते दांत गये का बौरै, भीतर दांत लोहेके हो ॥ फिर फिर चना चबाव विषयके, काम क्रोध मद लोभैके हो॥ तनकी सकल वासना घटि गयऊ, मनहिं दिलासा दूना हो॥ कहहिं कबीर सुनो हो संतो, सकल सयानपऊना हो ॥ ३ ॥

कहरा ४.

ओढन मोर राम नाम, मैं रामहिका बनजारा हो ॥ रामं नामका करहुँ बनिजिया, हरि मोर हटवारा हो ॥ सहस नामका करों पसारा, दिन दिन होत सवाई हो ॥ जाके देव वेद पछ राखा, ताके होत हटवाई हो ॥ कानि तराजू सेर तिन पउवा, तुर्किन ढोल बजाई हो ॥ सेर पसेरी पूरा कैले, पासंग कतहुँ न जाई हो ॥ कहहिं कवीर सुनो हो संतो, जोर चला जहंडाई हो ॥ ४ ॥

कहरा ५.

राम नाम भजु राम नाम भजु, चेति देखु मनमांहीं हो ॥ लच्छ करोरि जोरि धन गाडें, चलत डोलावत बांही हो दादा बाबा और प्रपाजा, जिनके यह भुइँ भाँडे हो ॥ आँधर भये हियहुकी फूटी, तिन्ह काहे सब छाँडे हो ॥ ई संसार असारको धंधा, अन्तकाल कोइ नाहीं हो ॥ उपजत बिनसत बार न लागे, ज्यों बादरकी छांई हो ॥ नात गोत कुल कुटुंब सब, इन्हकर कौन बडाई हो ॥ कहहिं कवीर एक राम भजे बिनु, बूडी सब चतुराई हो ॥ ५ ॥

कहरा ६.

राम नाम बिनु राम नाम बिनु, मिथ्या जन्म गंवाई हो ॥ सेमर सेइ सुवा ज्यों जहँडे, ऊन परे पछिताई हो ॥ जैसे मदपी गांठी अर्थ दे, घरहुकी अकिल गमाई हो ॥ स्वादे उदर भरे धौं कैसे, ओसे प्यास न जाई हो ॥ दर्बहीन जैसे पुरुषारथ, मनही मांहि तवाँई हो ॥ गांठि रतन मरम नहिं जाने, पारख लीन्हा छोरी हो ॥ कहहिं कवीर यह औसर बीते, रतन न मिले बहोरी हो ॥ ६ ॥

कहरा ७.

रहहु संभारे राम विचारे, कहता हौं जे पुकारे हो ॥ मूंड मुंडाय फूलिके बैठे, मुद्रा पहिर मंजूसा हो ॥ तेहि ऊपर कछु छार लपेटे, भितर भितर घर मूसा हो ॥ गांव बसतु है गरब भारती, बाम काम हंकारा हो ॥ मोहन जहां तहां ले जइहैं, नहिं पत रहल तुम्हारा हो ॥ मांझ मंझरिया बसे सो जाने, जन होइ है सो थोरा हो ॥ निर्भय भये तहां गुरूकी नगरिया, सुख सोवें दास कबीरा हो ॥ ७ ॥

कहरा ८.

क्षेम कुसल औ सही सलामत, कहहु कौनको दीन्हा हो ॥ आवत जात दोऊ विधि लूटे, सरवस हरि लीन्हा हो ॥ सुर नर मुनि जति पीर औलिया, मीरा पैदा कीन्हा हो ॥ कहां लों गनो अनंत कोटि लों, सकल पयाना कीन्हा हो ॥ पानी पवन अकाश जायँगे, चंद्र जायँगे सूरा हो ॥ ये भी जायँगे वो भी जायँगे, परत न काहुके पूरा हो॥ कुशल कहत कहत जग बिनसे, कुशल कालकी फांसी हो ॥ कहैं कबीर सारि दुनिया बिनसे, रहै राम अविनासी हो ॥ ८ ॥

कहरा ९ .

ऐसनि देह निरालप बौरे, मुवले छुवे नहिं कोई हो ॥ डंडवाकी डोरिया तोरिया तोरि लराइनि, जो कोटिन धन होई हो ॥ ऊर्ध निस्वासा उपजि तरासा, कहराइनि परिवारा हो ॥ जो कोई आवे बेगि चलावे, पल एक रहन न पाई हो ॥ चन्दन चीर चतुर सब लेपें, गरे गजमुकताकी हारा हो ॥ चौंसठ गीध मुये तन लूटैं, जंबुकन उदर बिदारा हो ॥ कहहिं कबीर सुनो हो संतो, ज्ञानहीन मतिहीना हो ॥ इक इक दिना याहि गति सबकी, कहा राव कह दीना हो ॥ ९ ॥

कहरा १०.

हौं सबहिनमें हौंना हो, मोहि बिलग बिलग बिलगाई हो ॥ ओढन मोरा एक पिछौरा, लोग बोलैं एकताई हो ॥ एक निरंतर अन्तर नाहीं, ज्यों ससि घटजल झांई हो ॥ एक समान कोई समुझत नाहीं, जाते जरा मरण भ्रम जाई हो ॥ रैन दिवस ये तहवाँ नाहीं, नारि पुरुष समताई हो ॥ हौं मैं बालक बूढो नाहीं, न मोरे चिलकाई हो ॥ त्रिविध रहों संभनिमा बरतों, नाम मोर रमुराई हो ॥ पठये न जाऊँ आने नहिं आवों, सहज रहों बुनियाई हो ॥ जोलहा तान बान नहिं जाने, फाटि बिने दश ठाई हो ॥ गुरु परताप जिन्हें जस भाख्यो, जन बिरले सों पाई हो॥ अनंत कोटि मन हीरा बेधा, फिटको मोल न पाई हो॥ सुर नर मुनि जाके खोज परे हैं, कछु कछु कबिरन पाई हो ॥१०॥

कहरा ११.

ननदीगेतैं विषम सोहागिनि, तैं निदले संसारा गे ॥ आवत देखी एक संग सूती, तैं औ खसम हमारा गे ॥ मोरे बापके दुइ मेहररुवा, मैं अरु मोर जेठानी गे ॥ जब हम रहलि रसिकके जगमें, तबहि बात जग जानी गे ॥ माइ मोरि मुवलि पिताके संगे, सरा रचि मुवल संघाती गे ॥ आपुहि मुवलि और ले मुवली, लोग कुटुब संग साथी गे ॥ जौं लौं स्वास रहे घट भीतर, तौ लौं कुशल परिहै गे ॥ कहहिं कबीर जब श्वास निकरि गौ, मंदिर अनल जरिहै गे ॥ ११ ॥

कहरा १२.

ई माया रघुनाथकी बौरी, खेलन चली अहेरा हो ॥ चतुर चिकनिया चुनि चुनि मारे, कोइ न राखेउ न्यारा हो॥ मौनी बीर दिगंबर मारे, ध्यान धरंते जोगी हो ॥ जंगलमेके जंगम मारे, माया किनहुं न भोगी हो ॥ वेद पढंते वेदुवा मारे, पूजा करंते

स्वामी हो ॥ अर्थ विचारत पंडित मारे, बांधेउ सकल लगामी हो ॥ सिंगीऋषि वन भीतर मारे, शिर ब्रह्माका, फोरी हो॥ नाथ मछंदर चले पीठिदे, सिंघलहूमें, बोरी हो ॥ साकटक घर कर्ता धरता, हरिभक्ताते चेरी हो ॥ कहहिं कवीर सुनो हो संतो, ज्यों आवे त्यों फेरी हो ॥ १२ ॥

इति कहरा बीजकका सम्पूर्ण ।

अथ चाचरि प्रारंभः

चाचरि पहिला १ ॥

खेलति माया मोहनी, जेर कियो संसार । कटि केहरि गज गामिनी, संशय कियो सिंगार ॥१॥ रचे रंगकी चूनरी, सुन्दरि पहिरै आय । शोभा अद्भुत रूपकी, महिमा बरनि न जाय ॥२॥ चन्द्र बदनी मृगलोचनी, बिंदुक दियो उघालि । यती सती सब मोहिया, गज गति वाकी चालि ॥ ३ ॥ नारदके मुख मोडिके, लीन्हों बदन छिपाय । गरब गहेली गरबते, उलटि चली मुसकाय ॥४॥ शिव अरु ब्रह्मा दौरिकै, दोनों पकड़े धाय । फगुआ लीन छिनायके, बहुरि दियो छिटकाय ॥ ५ ॥ अनहद धुनि बाजा बजे, सरवन सुनत भो चाव । खेलनिहारी खेलि है, जैसी वाकी दाव ॥ ६ ॥ ज्ञानढाल आगे दियो, टारे टरत न पांव । खेलनिहारी खेलि है, बहुरि न ऐसो दाव ॥७॥ सुर नर मुनि भू देवता, गोरख दत्ता व्यास । सनक सनन्दन हारिया, औरक केतिक आस ॥८॥ छिलकत थोथे प्रेम सो, धरि पिचकारी गात । करि लीनो बस आपने, फिरि फिरि चितवत जात ॥ ९ ॥ ज्ञान गाडिलै रोपिया, तिरगुन लिये है हाथ । शिवसन ब्रह्मा लीनिया, और लिये सब साथ ॥१०॥ एकओर सुर नर मुनि खडे, एक अकेली आप । दृष्टि परे छोडै नहीं, करि लिय

एकै छाप ॥ ११ ॥ जेते थे तेते लियो, घूंघट माँहि समाय। कज्जल वाके रेख है, अदग्ग न कोई जाय ॥ १२ ॥ इन्द्र कृष्ण द्वारे खडे, लोचन निज ललचाय। कहै कबीर ते ऊबरे, जाहि न मोह समाय ॥ १३ ॥

चाचरि दूसरी २ ॥

जारो जगको नेहरा, मन बौरा हो। जामें सोग संताप समुझ मन बौरा हो ॥ १ ॥ तन धनसों क्या गरब, समुझ मन बौरा-हो ॥ भसम किरमीको साज, मन बौरा हो ॥ २ ॥ विना नेव-का देवघरा, मन बौरा हो ॥ विन कहगिलके ईंट, समुझ मन बौराहो ॥ ३ ॥ काल बूतकी हस्तिनी, मन बौरा हो ॥ चित्र रच्यो जगदीस, समुझ मन बौरा हो ॥ ४ ॥ काम अंध गज बस परैं, मन बौरा हो ॥ अंकुस सहिया सीस, समुझ मन बौरा हो ॥५॥ मर्कट मूठी स्वादकी, मन बौरा हो। लीन्हो भुजा पसारि समुझ मन बौरा हो ॥६॥ छूटनकी संशय परी, मन बौरा हो ॥ घर घर खायो डांग, समुझ मन बौरा हो ॥ ७ ॥ ऊंच नीच जानै नहीं, मन बौरा हो ॥ घर घर नाचेउ द्वार, समुझ मन बौरा हो ॥ ८ ॥ ज्यों सुवना नलनी गह्यो, मन बौरा हो। ऐसो भरम विचार, समुझ मन बौरा हो ॥ ९ ॥ पढे गुनेका कीजिय, मन बौरा हो। अन्त बिलैया खाय, समुझ मन बौरा हो॥१०॥ सूने घरका पाहुना, मन बौरा हो। ज्यों आवै त्यों जाय, समुझ मन बौरा हो ॥ ११ ॥ नहानेको तीरथ घना, मन बौरा हो। पूजनको बहु देव, समुझ मन बौरा हो ॥ १२ ॥ बिनु पानी नल बूडिया, मन बौरा हो। टेकेउ राम जहाज, समुझ मन बौरा हो ॥१३॥ कहहि कबीर जग भरमिया, मन बौरा हो। छोड़ हरिको सेव, समुझ मन बौरा हो ॥ १४ ॥

इति चाचरि समाप्तम्।

अथ बेलि प्रारंभः ।

प्रथम बेलि ।

हंसा सरवर शरिर हो रमैया राम । जागत चोर घर मूसल हो रमैया राम ॥ १ ॥ जो जागे सो भागे हो रमैया राम । सोवत गैल वियोग हो रमैया राम ॥ २ ॥ आज बसेरा नियरे हो रमैया राम । काल्ह बसेरा दूरि हो रमैया राम ॥ ३ ॥ परेहु बिराने देश हो रमैया राम । नैन मरेंगे ढूंढ हो रमैया राम ॥४॥ त्रास मथन दधि मथन कियो हो रमैया राम। भवन मथ्यो भर पूरि हो रमैया राम ॥ ५ ॥ हंसा पाहन भैल हो रमैया राम । बेधिन पद निर्वाण हो रमैया राम ॥६॥ तुम हंसा मत माणिक हो रमैया राम । इटल न मानेहु मोर हो रमैया राम ॥ ७ ॥ जसरे कियो तस पायो हो रमैया राम । हमर दोष जनि देहु हो रमैया राम ॥ ८ ॥ अगम काटि गम कीन्हो हो रमैया राम । सहज कियो व्योपार हो रमैया राम ॥९॥ राम नाम धन बानिजहु हो रमैया राम। लादहु बस्तु अमोल हो रमैया राम॥१०॥ पांच लदनवा लादि चले हो रमैया राम। नौ बहिया दश गौन हो रमैया राम ॥ ११ ॥ पांच लदनुआ खांगि परे हो रमैया राम । खाखरि डारिन खोर हो रमैया राम ॥ १२ ॥ शिर धुनि हंसा उड़ि चले हो रमैया राम । सरवर मीत जोहरि हो रमैया राम ॥ १३ ॥ आगि लगी सरवरमें हो रमैया राम । सरवर जरि भौ छार हो रमैया राम ॥ १४ ॥ कहैं कबीर सुनु संत हो रमैया राम । परखि लेहु खर खोट हो रमैया राम ॥ १५ ॥

बेलि दूसरी २ ॥

भल सुस्मृति जहँडायहु हो रमैया राम। धोखा कियो विसवास हो रमैया राम ॥१॥ सोतो है बंसी कसि हो रमैया राम ।

सिरके लियो विसवास हो रमैया राम ॥२॥ ई तो है वेद साख्र हो रमैया राम । गुरु दीन्हो मोहिं थापि हो रमैया राम ॥ ३ ॥ गोबर कोट उठायहु हो रमैया राम । परि हरि जैहो खेत हो रमैया राम ॥ ४ ॥ बुद्धिबल तहां न पहुंचै हो रमैया राम । खोज कहांते होय हो रमैया राम ॥५॥ सुनिमन धीरज भैल हो रमैया राम । मन बढि रहल लजाय हो रमैया राम ॥६॥ फिरि पाछे जनि हेरो हो रमैया राम । काल बूत सब आय हो रमैया राम ॥ ७ ॥ कह कबीर सुनु संत हो रमैया राम । मति ढिगहि फैलाहु हो रमैया राम ॥ ८ ॥

अथ विरहुली प्रारम्भः ।

आदि अन्त नहिं होत विरहुली । नहिं जड़ पल्लव पेड बिरहुली ॥ १ ॥ निसि बासर नहिं होत विरहुली । पानी पवन न होत विरहुली ॥ २ ॥ ब्रह्माहि सनकादि बिरहुली । कथि गये जोग अपार विरहुली ॥ ३ ॥ मास अषाढहि शीत विरहुली । बोइन सातौ बीज विरहुली ॥४॥ नित गाडै नित सिंचै विरहुली । नित नव पल्लब पेड़ विरहुली ॥५॥ छिछिल विरहुली छिछिल विरहुली । छिछिल रहल तिहुँलोक विरहुली ॥ ६ ॥ फुल एक भल फुलल विरहुली । फूलि रहल संसार विरहुली ॥ ७ ॥ ते फुल बन्दै भगत विरहुली । बांधिके राउर जाय विरहुली ॥८॥ सो फुल लोढहिं संत विरहुली । डसि गौ बैतल सांप विरहुली ॥ ९ ॥ विषहर मंत्र न मान विरहुली । गाडुर बोलै और विरहुली ॥ १० ॥ विषकी क्यारी बोयो विरहुली । अब लोरत का पछिताय बिरहुली ॥ ११ ॥ जनम जनम अवतरेउ विरहुली । फल यक कनइल डार विरहुली ॥ १२ ॥ कह कबीर सचु पाय विरहुली । जो फल चाखहु मोर बिरहुली ॥ १३ ॥

अथ हिंडोला प्रारंभः ।

हिंडोला पहिला १ ॥

भर्म हिंडोला झूलै सब जग आय ॥ टेक ॥

जहँ पाप पुण्यके खम्भ दोऊ, मेरू माया नाय । तहँ कर्म पटुकी बैठिकै, को को न झूलै आय ॥१॥ लोभ मरुआ विषय भवरा, काम कीला ठानि। शुभ अशुभ बनाय डांडी, गह्यो दूनौ पानि ॥ २ ॥ झूले सो गन गन्धर्व मुनि नर, झूलै सुरगन इन्द्र । झूलत सो नारद सारदा, झूलत व्यास फनीन्द्र ॥ ३ ॥ झूलत बिरंचि महेस-मुनिहो झूलत सूरज इन्दु । आप निर्गुन सगुन होयके, झूलिया गोविन्द ॥४॥ छौ चार चौदह सात इकइस, तीन लोक बनाय चौखानि बानी खोजि देखौ, थिर न कोइ रहाय ॥ ५ ॥ खण्डो ब्रह्मखण्ड खोजि षट दरशन, ये छूटे नाहिं । साधु संग बिचारि देखो, जीव निसतरि जाहिं ॥ ६ ॥ ससि सूर निस दिन संधि, औ तहँ तत्व पांचौ नाहिं । काल अकालौ परलय नहीं, तहं संत बिरले जाहिं ॥ ७ ॥ तहँके बिछुरे बहु कल्प बीतें, परे भूमि भुलाय । साधु संगति खोजि देखो, बहुरि उलटि समाय ॥ ८ ॥ तेहि झूलवेको भय नहीं, जो होय संत सुजान । कहहिं कबीर सत सुकृत मिलै तो, फिरि न झूलै आन ॥ ९ ॥

हिंडोला दूसरा २ ॥

बहु विधि चित्र बनाइके, हरि रच्यो है क्रीडा रास । जाहि न इच्छा झूलवेको, अस बुद्धि केहि पास ॥ १ ॥ झूलत २ बहु कल्प बीते, मन न छोडै आस । रच्यो रहस हिंडोलना, निसि चारिउ जुग चौमास ॥ २ ॥ कबहुक ऊंचे नीचे कबहुंक, सरग भूलौ जाय । अति भरमित भरम हिंडोलना, नेकु नहीं ठहराय ॥ ३ ॥ डरपत हौ यहि झूलवेको, राखु जादव राय । कहै कबीर गोपाल विनती, शरन हौ तुम पाय ॥ ४ ॥

हिंडोला तीसरा ३ ॥

लोभ मोहके खम्भ दोऊ, मन रच्यो है हिंडोर। झूलहीं जीव जहान जहँ लगि, कतहुं नहीं थित ठौर ॥१॥ चतुरा झूले चतुराइया, झूले राजा सेव। चन्द्र सूर्य दोऊ झूलहीं, नाहि न पायो भेव ॥ २ ॥ चौरासी लच्छ जीव झूलैं; रवि सुत धरिया धाय। कोटिन कल्प जुग बीतियां, अजहुं न मानैं हाय ॥ ३ ॥ धरनि अकास दोउ झूले, झूलैं पवनहु नीर। धरी देह हरि आपुहु झूलहीं; लखहिं, हंस कवीर ॥ ४ ॥

इति हिंडोला बीजक ॥

सत्यनाम।

गुरु महिमा।

सा०-सतकवीरके चरण रज, धर्मदास शिरनाय ॥
बार बार विनवन लगे, सतगुरु होहु सहाय ॥

रमैनी १-धर्मदास बिनवै कर जोरी। हे साहब इक विन्ती मोरी॥ बारम्बार आप अस भाषो। गुरु गुरु कहि बहुत अभिलाषो ॥ १ ॥ मुझ किंकर पर दया सुकीजे। दास जानि यही वर दीजे ॥ निसिदिन रहौं चरन लौलीना। पल इक चित्त न होवे भीना ॥ २ ॥ महिमा गुरू कहो समझाई। सुनत जीव भगती दिढ पाई॥ विना ज्ञान नर होय अजाना। संग्रह त्याग न विनु पहिचाना ॥३॥ जब जाने सरधा दिढ होई। विन जाने सरधा नहिं कोई ॥ विन सरधा अनुराग न जामें। विनु अनुराग भगति नहिं तामें ॥ ४ ॥ विना भगति जिव छुटै न फेरा। विना भगति जिव होय अनेरा॥ याते सतगुरु देहु बतायी। गुरु महिमा कहिये अरथायी ॥ ५ ॥

सा०-धर्मदासके वचन सुन, हरषे श्री गुरुदेव।
सुनु धर्मनि अब कहत हौं, गुरु महिमाको भेव ॥

रमैनी २–गुरुने अधिक और कोउ नाहीं। धरमदास परखहु हिय माहीं॥ गुरु दयाल अस हैं सुखदाई। देहिं मुकतिको पंथ लखाई॥ १॥ गुरुते अधिक कोइ नहिं दूजा। भरम तजि कर सतगुरु पूजा॥ तीरथ धाम देवल अरु देवा। सीस अरपि जो लावैं सेवा॥२॥ तौ नहिं वचन कहे हितकारी। भूले भरमे यह संसारी॥ भवसागर है अगम अपारा। तामें बूड़ि गयो संसारा॥ ३॥ पार लगनको सब कोइ धावे। विना गुरू कोइ पार न पावे॥ यह जग जीव थाह नहिं पावे। विना गुरू सब गोता खावे॥ ४॥ जग जीवोंसे कहु गोहराई। सत गुरु खेवट पार लगाई॥ यह जग बूडि जाय मंझधारा। सतगुरु भक्ति भये भव पारा॥ ५॥

सा०–सतगुरु भक्ति न जानई, कहै कवीर बखान।
यह जग भूले बापुरे, गहे न सतगुरु ज्ञान॥

रमैनी ३–जग कर आयु अल्प है भाई। अन्त समै कोइ नाहिं सहाई॥ बहुत पियारि नारि जग माहीं। मातु पिताहु जेहि सर नाही॥१॥ जेहि कारण नर सीस जु देहीं। अंत समय सो नाहिं सनेही॥ निज स्वारथ कहँ रोदन करई। तुरतहिं नैहरको चित धरई॥२॥ सुत परिजन धन सुपन सनेहीं। भीर परे कोइ काम न देहीं॥ निज तनु सम और न आना। सो तन संग न चलत निदाना॥ ३॥ ऐसो को जग दीखे भाई। अंत समयमें लेइ छुड़ाई॥ अहै एक सो कहौं बखानी। जेहि अनुराग होय सो मानी॥४॥ केवल गुरू छुडावन हारा। निश्चय जानो कहा हमारा॥ कालहि जीत हंस लेजाहीं। अविचल देस पुरुष जहं आहीं॥ ५॥

सा०-बिना गुरू उतरे नहीं, भवसागरके पार।
कहैं कबीर सब जीवसे, गहिलो गुरू अपार॥

रमैनी ४-सरगुन निरगुन माहिं पिछानो। निगुराको नहिं ठौर ठिकानो॥ विन गुरु कोई पार न पावे। लोक परलोक महं परगट दिखावे॥१॥ सुकदेव भये गरभ जोगेसर। उन समान नहिं थाप्यो दोसर॥ तपके तेज गये हरिधामा। गुरु विनु नाहिं लहे विसरामा॥ २॥ रोक पारषद जान न पाये। कह सुकदेव करहु कस भाये॥ कह पारषद सुनो मुनि राऊ। विनु हरि आज्ञा जान न पाऊ॥ ३॥ करहु विनती हरिपै जाई। ठाढ द्वार सुकदेव रहाई॥ जबै पारषद हरिपै गयऊ। जस मुनि कहा तस पुनि कहेऊ॥४॥ सुनत विष्णु तब बाहर आये। देखतहीं शुक अति हरषाये॥ विस्नु कहे रिषि कहवां आये। गुरु विहीन तप तेज भुलाये॥ ५॥

सा०-गुरू विना जो तप करे, गुरु विन देवे दान।
गुरु विनु माला फेरते, सबही निसफल जान॥

रमैनी ५-गुरु विहीन नर मोहि न भावे। सो कस हरिधाम सिधावे॥ कह सुकदेव सुनो हरि राऊ। कहि सुपन्थ मोहि राह बताऊ॥ १॥ जाहु पलटि करहु गुरु स्याना। तब पैहो इहवाँ अस्थाना॥ सुनि मुनि सुकदेव वेगि सिधाये। गुरू विहीन तहँ रहन न पाये॥ २॥ ढूंढन गुरु चले मुनि राई। व्यास मुनी तब कह्यो बुझाई॥ मिथला आहि जनक पुर धामा। विदेह जनक तहँ रहत ललामा॥ ३॥ उन सम ज्ञानि न दूसर कोऊ। जाकर शरण गहो तुम सोऊ॥ चले सुनत सुक मुनि तहवाँ। राजा जनक रहत है जहवाँ॥ ४॥ सिष भावले पहुंचे जबहीं। मिलत जनक हरष भय तबहीं॥ जनक विदेह कीन्ह गुरु जानी। हरषि मिले तब सारंग पानी॥ ५॥

सा०-गर्भ जोगेसर गुरु बिना, लागे हरिकी सेव।
कह कवीर वैकुंठसे, फेर दियो सुकदेव॥
जनक विदेही गुरु किया, लागा हरिकी सेव।
कह कवीर वैकुंठमें, उलट मिला सुकदेव॥

रमैनी ६-ब्रह्मा सुत नारद बड ज्ञानी। जिनकर कथा जगत सब जानी॥ हरि करते चौरासी परिया। गुरु किरपाते तुरत उबरिया॥१॥ और देव रिषि मुनिवर जेते। जिन गुरु कीन्ह उतर सो तेते॥ बिना गुरू भवसागर डूबे। उब डुब होय पार नहिं ऊबे॥ २॥ जो गुरु मिले तौ पंथ बतावे। सार असार परख दिखलावे॥ गुरू सोई जो सत्य बतावे। और गुरू कोइ काम न आवे॥३॥ सत्त पुरुषका कहे संदेसा। जनम जनमका मिटै अंदेसा॥ पाप पुन्नकी आसा नाहीं। बैठे अछय वृक्षकी छांही॥४॥ भ्रिंगी मत होवे जिहि पासा। सोई गुरु सत्त सुनो धर्मदासा॥ गुरुते अधिक और कोइ नाहीं। धर्मदास परखहु हिय माहीं॥५॥
सा०-ऐसे गुरुके मिलनसे, आवा गमन नसाय।
बिन गुरु ज्ञाने दुन्द हो, काल फाँसमें जाय॥

रमैनी ७-जीवन मुकति चाहु जो भाई। सतगुरु शब्द गहे सो आई॥ जमसे यही छुडावन हारे। निश्चय मानो कहा हमारे॥१॥ बहुरि न जोनी संकट आवे। जो जिव नाम शरण गति पावे॥ तजि संसार लोक कहँ जाई। नाम पान गुरु होय सहाई॥२॥ गुरुके बचन हिया सुध होई। दीपक ज्ञान परगटे तहँ सोई॥ धर्मनि यह गुरु पद परतापा। गुरु पद गहे भरम तजि आपा॥३॥ सिन्धु बुन्द समावे जाई। कहे कवीर मिटी दुचिताई॥ सरन गहे सब दुख नसाई। विन गुरु शिष्य निरासे जाई॥४॥ गुरु सम दानी और न भाई। आवत सरन सकलो निधि पाई॥

सतगुरु कहैं गुरु व्रतधारी। अगुन सगुन बिच गुरू अधारी॥५॥

सा०-यह भव अगम अथाह है, काल जाल बह धार।
पार होनको द्वार इक, गुरू गिरा कडिहार॥

रमैनी ८-गुरू विना नहिं होय अचारा। गुरू विना नहिं होय भवपारा॥ शिष्य सीप गुरु स्वाती जानो। गुरु पारस शिष लोह समानो॥१॥ गुरु मल्यागिर शिष्य भुजंगा। गुरू परसि शीतल होय अंगा॥ गुरु समुद्र है शिष्य तरगा। गुरु दीपक है शिष्य पतंगा॥२॥ शिष चकोर गुरुको शसि जानो। रवि गुरु कमल शिष्य विकसानो॥ यहि स्नेह सिष निश्चय लहई। गुरु पद परसि दरस हिये गहई॥३॥ गुरू गुरूमें भेद विचारा। गुरु गुरु कहे सकल संसारा॥ गुरू सोई जिन शब्द लखाया। आवागमन रहित पद पाया॥४॥ गुरू सजीवन शब्द लखावे। जाके बल हंसा घर जावे॥ वा गुरुसो कछु अन्तर नाहीं। गुरु अरु शिष्य मता इक आही॥ ५॥

सा०-गुरू गुरूमें भेद है, गुरू गुरूमें भाव।
गुरू सदा सो वन्दिये, सबद बतावे दाव॥

रमैनी ९-सतगुरुकी बलिहारी जावे। अजर दशा जो आन बतावे॥ अमि अजरावलि अजरा धामा। सत्य नाम सत्य पुरुष निजनामा॥१॥ गुरु किरपा करि सो पद पावे। जीवन मुक्त अटल घर जावे॥ निसिदिन सुरत गुरू सो लावे। साधु सन्तके मनहि समावे॥२॥ जिनपर दया गुरूकी होई। तिनका फांस करम सब खोई॥ करनी करके सुरत लगावे। सतगुरु लोक ताहि पहुँचावे॥३॥ सेवा करि मन रखै न आसा। ताका सतगुरु काटै फाँसा॥ गुरु चरणन जो राखे ध्याना। अमर लोक सो करत पयाना॥४॥ जोगी जोग साधना करई। विना गुरू

सो भव नहिं तरई ॥ जो शिष गुरू आज्ञा धारी । गुरुकी कृपा होय भवपारी ॥ ९ ॥

सा०-गुरु मुख गुरु चितवत रहै, जैसे मनी भुवंग ।
कहे कवीर विसरे नहीं, यह गुरु मुखको अंग ॥

रमैनी १०-गुरु भगता जो जिव आही । साधु गुरू नहिं अन्तर ताही ॥ साँचा शिष्य ताहिको माने । साधु गुरू नहिं अन्तर आने ॥१॥ जो स्वारथ पागे संसारी । नहिं गुरु सिक्ख न साधु अचारी ॥ तिनको काल फन्द तुम जानो । दूत अंश काल कर मानो ॥ २ ॥ साधु गुरूको रूप बनायी । बहुते फन्द जीव पर लायी ॥ जिनते होय जीवकर हानी । यह तो अहै काल सहदानी ॥३॥ सोइ गुरू जो प्रेम गति जाने । सत्य शब्दको राह पिछाने ॥ परम पुरुषकी भगति दिढावे । सुरति निरति कर तहँ पहुँचावे ॥४॥ तासो प्रीति करै मनलाई । छाडै दुरमति औ चतुराई ॥ तबहीं निह संशय घर पावै । भव तरिके जग बहुरि न आवै ॥५॥

सा०-करम भरम जंजाल तजि, गुरु पद कीजे नेह ।
गुरु मुख शब्द प्रतीति करि, निज तन जाने खेह ॥

रमैनी ११-गुरु चरननमें रह लपटाई । तजि भरम औ कपट चतुराई ॥ गुरु आज्ञा जो निरखत रहई । ताकर खूंट काल नहिं गहई ॥ १ ॥ गुरु परतीत दिढके चित राषै । मोहि समान गुरू कहँ भाषै ॥ गुरु सेवामें सब फल आवै । गुरु विमुख नर पार न पावै ॥ २ ॥ जैसे चन्द्र कुमोदिनि रीती । गहे शिष्य अस गुरु परतीती ॥ गुरुमुख निरखत शिष्य हिय हरषे । शब्द अमी जिमि बादल वरषे ॥ ३ ॥ नृतक होयके खोजहिं सन्ता । शब्द विचार गहे मग्नु अन्ता ॥ धर्मदास जिमि कीटहिं भेवा । यहि विधि शिष्य गहे गुरुदेवा ॥४॥ मिलै कीट भृंगके पासा । भ्रिंगी गही गुरुगम

परगासा ॥ भ्रिंगी शब्द कीट जो माने। आपा मेटि गुरु सुरत समाने ॥ ६ ॥

सा०-भ्रिंगी मति गहि कीट जस, भ्रिंगी ही होइ जाय।
गुरू शब्द गहि शिष्य तस, गुरुही माहिं समाय ॥

रमैनी १२-जबहीं कीट सौंप तन देवे। भ्रिंगी गहि आपन करि लेवे ॥ शब्द घात करि महि तिहिं डारे। आपन मंत्र निज तहां विचारे ॥ १ ॥ भ्रिंगी शब्द कीट जो गहई। आपा मेटि भ्रिंगी होय रहई ॥ जाति वरण सब पलटे आई। भ्रिंगी रूप तबै परगटाई ॥ २ ॥ कीट पलटि भ्रिंगी जब होई। ताको कीट कहै नहिं कोई ॥ भ्रिंगी शब्द कीट नहिं गहई। तो पुनि कीट असारे रहई ॥३॥ धरमदास यह कीटक भेवा। यहि मति शिष्य गहे गुरु देवा ॥ गुरुके वचन सांच कर माने। आपा ओट न बाद बखाने ॥४॥ तन मन धन अरपे सब ओई। आपा लेश रहै नहिं कोई ॥ मिटै भरम सब दुविधा नासे। गुरु अरु शिष्य एक घर भासे ॥ ५ ॥

छन्द-भ्रिंगी मत दिढकै गहै, करौं निज सम ओहिहो। दुतिया भाव न चित्त व्यापै, सो लहै जिव मोहिहो ॥ गुरु सबद निसचय सत्य माने, भ्रिंग मत तब पावई। तजि सकल आसा सबद वासा, काग हंस कहावई ॥

सोरठा-तजै कागकी चाल, सत्य सबद गहि हंस हो।
मुकता चुगे रसाल, पुरुष पच्छ गुरु गम गमन ॥

रमैनी १३-गुरु कृपा ते साधु कहावे। गुरुकृपा साधक ह्वै आवे ॥ गुरु कृपाते ज्ञान विचारा। गुरुकृपाते भक्ति अनुसारा ॥१॥ गुरु कृपाते सुकर्म कमावे। गुरु कृपा सुकृत कहँ धावे ॥ गुरु कृपाते पुण्य बटोरे। गुरु न मिले तो पाप बहोरे ॥२॥ गुरु

मिले वैराग दिढावे। गुरु मिले तो भगति घर पावे॥ गुरुकी कृपा सकल अंजोरा। गुरु कृपा जिव परै न भोरा॥ ३॥ गुरु मिले तो शब्द लखावे। बिन गुरुके भव भटका खावे। का गिरही बैरागी भाई। गुरु कृपा सकलो तरिजाई॥४॥ सार नाम सतगुरु सो पावे। नाम डोर गहि लोक सिधावे॥ धरमराय ताको सिर नाई। जो हंसा सतगुरु पहँ जाई॥ ५॥

सा०-सतगुरु महिमा अनंत है, अनन्त करै उपकार।
ई भवसिंधु अगाधते, तुरते उतारे पार॥

रमैनी १४-सतगुरु चरननकी बलिहारी। करे सुखी सब कष्ट निवारी॥ चच्छु हीन जिमि पावे नैना। होवै ज्ञान सुनत गुरु बैना॥ १॥ सार शब्द सु विदेह सरूपा। निअच्छर वहिरूप अनूपा॥ कहन सुननको शब्द चौधारा। सार शब्द सो जीव उबारा॥२॥ सो निज शब्द गुरूसो पावै। पाइ शब्द सतलोक सिधावे॥ धर्मदास तुम हंस अंकुरी। मोहि मिले कीन्हे दुख दूरी॥३॥ जस तुम कीन्ह मो सन नेहा। तजि धन धाम नारि सुत गेहा॥ आगे शिष जो यहि विधि करिहैं। गुरु चरनन मन निश्चल धरिहैं॥४॥ गुरुके चरन प्रीति तन धारे। तन मन धन सतगुरु पर वारे॥ सो जिव मोहि अधिक प्रिय होई। तो कहँ रोक सकै नहिं कोई॥ ५॥

सा०-सरवस वारे चरनमें, शरण रहै लपटाय।
सो जिव पावे मोहिको, रहै काल मुरझाय॥

रमैनी १५-सिष होय सरवस नहिं वारे। हिये कपट मुख प्रीति उचारे॥ सो जिव कैसे लोक सिधाई। बिन गुरु मिले मोहि नहिं पाई॥१॥ गुरुसे करै कपट चतुराई। सो हंसा भव भरमें आई॥ जो जन गुरुकी निन्दा करई। सूकर स्वान गरभमें परई॥२॥

चौरासी भरमें सो जाई। नारद साख कहो समझाई॥ नारद ब्रह्मा सुत बड ज्ञानी। अहैं प्रसिद्ध जगत सब जानी॥३॥ सो गुरुको छोट बखाना। ताके मन अभिमान समाना॥ ताते हरि चौरासी दीना। सकलो पुण्य छीन सो लीन्हा॥४॥ छूटन राह कहा करि ओही। विनु गुरु शरण मुक्ति नहिं सोही॥ ओही गुरु सो करे बचावा। दूसर मारग नाहिं दिखावा॥ ५॥

सा०–वेद किताब शास्त्र अरु, पोथी कहत पुरान।
गुरु विन भवसागर महा, छूटे नाहिं निदान॥

रमैनी १६–गुरुकी शरणा लीजै भाई। जाते जीव नरक नहिं जाई॥ गुरु मुख हो परम पद पावे। चौरासीमें बहुरि न आवे॥ गुरु पद सेवे विरला कोई। जापर कृपा साहिबकी होई॥ गुरु बिन मुक्त न पावै भाई। नरक उर्द्ध मुख बासा पाई॥ गुरुकी कृपा कटे यम फाँसी। विलंब न होय मिले अविनासी॥ गुरु विनु काहु न पाया ज्ञाना। ज्यों थोथा भुस छडे किसाना॥ गुरु महिमा शुकदेव जु पाई। चढि विमान वैकुंठे जाई॥ गुरु विनु पढै जो वेद पुराना। ताको नाहिं मिले भगवाना॥ गुरु सेवा जो करे सुभागा। माया मोह सकल भ्रम भागा॥ गुरुकी नाव चढे जो प्राणी। खेइ उतारे सतगुरु ज्ञानी॥ तीरथ वरत अरु सब पूजा। गुरु बिन दाता और न दूजा॥ नौ नाथ चौरासी सिद्धा। गुरुके चरण सेवे गोविंदा॥ गुरु विन प्रेत जनम सब पावै। वरष सहस्र गरभ सो रहावे॥ गुरु विनु दान पुण्य जो करई। मिथ्या होय कबहूँ नहिं फरई॥ गुरु विनु भरम न छूटे भाई। कोटि उपाय करे चतुराई॥ गुरु विन होम यज्ञ जो साधे। औरो मन दश पातक लाधे॥ सतगुरु मिले तौ अगम बतावे। जमकी आँच ताहि नहिं आवै॥ गुरुके मिले कटे दुख पापा। जनम

जनमको मिटे संतापा ॥ गुरुके चरण सदा चित दीजे । जीवन जन्म सुफल कर लीजे ॥ गुरुके चरण सदा चित जानो । क्यों भूले तुम चतुर स्यानो ॥ गुरु भगता मम आतम सोई । वाके हिरदे रहों समोई ॥ गुरु मुख ज्ञान ले चेतो भाई । मानुष जन्म बहुरि नहिं पाई ॥ सुख संपति आपन नहिं प्राणी । समझि देखु तुम निश्चय जानी ॥ चौविस गुरु हरि आपहि करिया । गुरु सेवा हरि आपहि धरिया ॥ गुरुकी निंदा सुने जो काना । ताको निश्चय नरक निदाना ॥ दशवाँ अंश गुरूको दीजै । जीवन जनम सुफल कर लीजै ॥ गुरु मुख प्राणी कोइ न दीजै । ह्रिदय नाम सदा रस पीजै ॥ गुरु सीढी चढि ऊपर जाई । सुखसागरमें रहे समाई ॥ अपने मुख निंदा जो करई । शूकर स्वान जनम सो धरई ॥ निगुरा करै मुक्ति कर आसा । कैसे पावै मुक्ति निवासा ॥ औरो सुक्रित देइ जो पावे । सतगुरु बिन मुक्ती नहिं आवे ॥ गौरी शंकर और गनेशा । सबही लीन्हा गुरु उपदेशा ॥ शिव विरंचि गुरु सेवा कीन्हा । नारद दीक्षा ध्रुवको दीन्हा ॥ सतगुरु मिले परम सुखदायी । जनम जनमका दुख नसायी ॥ जब गुरु किया अटल अविनासी । सुर नर मुनि सब सेवक रासी ॥ भवजल नदिया अगम अपारा । गुरु विनु कैसे उतरे पारा ॥ गुरु विनु आतम कैसे जाने । सुखसागर कैसे पहिचाने ॥ भक्ति पदारथ कैसे पावे । गुरु विनु कौन जो राह बतावे ॥ गुरु मुख नाम देव रैदासा । गुरु महिमा उनहूँ परकासा ॥ तैतिस कोट देव त्रिपुरारी । गुरु विनु भूले सकल अचारी ॥ गुरु विनु भरमें लख चौरासी । जनम अनेक नरकके वासी ॥ गुरू विनु पसू जनम सो पावै ॥ फिर २ गरभ बासमें आवै ॥ गुरू विमुख सोई दुख पावै । जनम जनम सोई डहकावे ॥ गुरु सेवै जो चतुर स्याना । गुरु पटतर कोइ और

न आना॥ गुरुकी सेवा मुक्ति निज पावे। बहुरि न हंसा भवजल आवे॥ भवजल छूटत यही उपाई। गुरुकी सेवा करो सब धाई॥

सा०-सतगुरु दीनदयाल है, देवे भक्ति मुकाम। मनसा वाचा कर्मना, सुमिरो सतगुरु नाम॥ सत्य सबदके पटतरे, देवेको कछु नाहिं। कहले गुरु संतोषिये, हवस रही मनमाहिं॥ अति ऊँड़ा गहरा घना, बुद्धिवन्त मतिधीर। सो धोखा विरचे नहीं, सतगुरु मिलहिं कबीर॥

रमैनी १७-गुरु देवनकी महिमा बरनो। जयगुरुदेव तुम्हारी सरनो॥ गावत जे गुन पार न पावे। ब्रह्मा शंकर सेष गुन गावे॥ प्रथमहीं गुरु ऐसा कीन्हा। तारक मंत्र रामको दीन्हा॥ माथा तिलक दिया सरूपा। जाको बन्दे राजा भूपा॥ ज्ञान गुरू उपदेश बताया। दया धरमकी राह चिन्हाया॥ जीव दया घटहीमें होई। जीव दया ब्रह्म है सोई॥ गुरु आधीन सु चेला बोले। खरा शब्द उर अन्तर खोले। खारा मीठा बचने खमैं। गुरुके चरनों चेला रमैं॥ भीतर हिरदे गुरुसों हिले। ताके पीछे रामहिं मिले॥ गुरु रीझे सो कीजे कामा। ताके पाछे रामहिं रामा। सिस सरसती गुरु जमुना अंगा। राम मिले सब सरिता गंगा॥ चेला गुरूमें गुरुमें राम। भगति महातम नियारा नाम॥ गुरु आज्ञा निरबाहे नेम। तब पावे सरबग्गी प्रेम॥ सरबग्गी राम सकल घट सारा। है सबहीमें सबसो न्यारा॥ ऐसी जाने मनमें रहे। खोजे बूझै तासो कहै॥ गुरुकी महिमा संछेप भनी। गुरुकी महिमा अनंत घनी॥ औतार धरे हरि गुरू करे। गुरु किये तब नारद तरे॥ साख पुरातम ऐसी सुनी। बात हमारी गुरुसों बनी॥ कीडी जैसा मैं हौं दासा। पडा रहा गुरु चरनों पासा॥ गुरु चरनों राखो विश्वासा। गुरुहि पुरावे मनकी आसा॥

सा०—गुरु गोविन्द अरु सिष मिलि, कीन्हा भक्ति विवेक। तिरबेनी धारा बही, आगे गंगा एक॥ गुरुकी महिमा अनंत है, मोसो कही न जाय। तन मन गुरुको सौंपिके, चरणों रहो समाय॥

रमैनी १८—गुरु सतपद भजु अमृत बानी। गुरु बिनु मुक्ति नहीं रे प्राणी॥ गुरु आदि गुरु अन्त त्राता। गुरु हैं मुकति पदारथ दाता। गुरु गंगा कासी अस्थाना। चार वेद गुरु गमसे जाना॥ अरसठ तीरथ भरमि भरमि आवे। सो फल गुरुके चरनों पावे॥ गुरुको तजै भजै जो आना। ता पसुआको फोकट ज्ञाना॥ गुरु पारस परसे जो कोई। लोहाते जिव कंचन होई॥ सुक गुरु किये जनक विदेही। सो भै गुरुके परम सनेही॥ नारद गुरु प्रहलाद पढाये। भगति हेतु जिन दरसन पाये॥ काकभुसुंड संभु गुरु कीन्हा। अगम निगम सबही कहि दीन्हा॥ ब्रह्मा गुरु अगिनको कियेऊ। होम जग्य जिन विद्या दियेऊ॥ वशिष्ट मुनि गुरु किये रघुनाथा। पाये दरसन भये सनाथा॥ कृष्ण गये दुर्वासा सरना। पाये भगति तब तारन तरना॥ नारद उपदेश धिमरसे पाये। चौरासीसे तुरत बचाये॥ गुरु कह सोई है सांचा। बिनु परचे सेवक है कांचा॥ गुरु समरथ सबके पारा। गहे शरण उतरे भवपारा॥ कहैं कबीर गुरु आप अकेला। दशो औतार गुरूका चेला॥

सा०—राम कृष्णसों को बडा, तिनहू तो गुरु कीन्ह। तीन लोकके वे धनी, गुरु आगे आधीन॥ हरिसेवा युगचार है, गुरु सेवा फल एक। तासु पटन्तर ना तुले, संतन किया विवेक॥

गुरुउपदेश महिमा।

दोहा—गुरु संत वन्दन करूं, ऐहै सुखको पूर।
गुरु महिमा बरनन करूं, शिर धरि पद रज धूर॥

संत सबै शिर ऊपरे, निसप्रेही निज नाम।
सबके मस्तक मुकति गुरु, पुरवे मनके काम॥

रमैनी १९-परब्रह्मको आदि मनाऊँ। जिनकी क्रिया गुरु चरनन पाऊँ॥ गुरु सोई सब सिरजन हारा। गुरुकी क्रिया होय भवपारा। गुरु बिन होम जग्य नहिं कीजे। गुरुकी आज्ञा माहि रहीजे॥ गुरु संतनके चरण मनायो। ताते बुद्धि उत्तम मैं पायो॥ सबी इष्टनमें सतगुरु सारा। सो सुमिरावे पुरुष हमारा॥ सरन होय शिष आवैं काई। सहज पदारथ पावै सोई॥ गुरु सुरतरु सुरधेनु समाना। आवै चरन मुक्ति परवाना॥ मन वांछित फल पावै सोई। प्रीति सहित जो सुमिरे कोई॥ तन मन धन अरपि गुरु सेवै। होय गलतान उपदेशहिं लेवै॥ गुरु विनु पदारथ और न जानै। आज्ञा मेटि और नहिं मानै॥ सतगुरुकी गति हिरदे धारे। और सकल बकवाद निवारै॥ गुरुके सन्मुख वचन न कहै। सो सिष रहनि गहनि सुख लहै॥ गुरुसे वैर करै शिष जोई। भजन नाश अरु बहुत बिगोई॥ पीढि सहित नरकमें परिहै। गुरु आज्ञा सिष लोप न करिहै॥ चेलो अथवा उपासक होई। गुरु सन्मुख ले झूठ संजोई॥ निश्चय नरक परै सिष सोई। वेद पुराण भनत सब कोई। सन्मुख गुरुकी आज्ञा धारै। अरु पाछे तै सकल निवारै॥ सो शिष घोर नरकमें परिहै। रुधिर राध पीवै नहिं तरिहै॥ मुखपर वचन करै परमाना। घर पर जाय करै विज्ञाना॥ जहँ जावै तहँ निंदा करई। सो सिष क्रोध अगिन ते जरई॥ ऐसे सिषको ठौहर नाहीं। गुरु मुख लोपत है मनमाहीं॥ वेद पुराण कहै सब साखी॥ साखी सबद सबै यों भाखी॥ मानुष जन्म पायकर खोवै। सतगुरु विमुखा जुगजुग रोवै॥ ताते सतगुरु सरना लीजै। कपट भाव सब दूर करीजै॥ जोग

जग्य तप दान करावै। गुरू विमुख फल कबहुँ न पावै॥ गुरुही जप तप तीरथ कहिये। गुरुते साच अरु मिथ्या लहिये। सतगुरु बिना मुकति नहिं कोई। ऊंच नीच भावे जो होई॥ आतम ब्रह्म गुरू है मेरा। ताके सरने आयो चेरा॥ चार जुगन जे संतहि भयऊ। ब्रह्मरूप होय पारहि गयऊ॥ सो जानहु गुरु संग प्रभाऊ। लोकहु वेद न आन उपाऊ॥

सा०-गुरु आज्ञा जिन जिन लही, सारो सकल विधि काज।
नरक रूप जग दूर धर, श्री गुरू महराज॥

शिष्यकी अधीनता।

रमैनी २०-दोउ कर जोरि गुरूके आगे। करि बहु विन्ती चरनन लागे॥ अति शीतल बाले सब बैना। मेटै सकल कपटके भैना॥ हे गुरु तुम हो दीनदयाला। मै हूँ दीन करो प्रतिपाला॥ बंदीछोर मै अतिहि अनाथा। भवजल बूडत पकडो हाथा॥ दै उपदेश गुरु मंत्र सुनाओ। जनम मरन भवदुःख छुडाओ॥ यों अधीन होय सिष जबहीं। सिष पर क्रिपा करै गुरु तबहीं॥ गुरुसे शिष जब दीच्छा मांगै। मन क्रम वचन धरैं धन आगै॥ ऐसी प्रीति देखि गुरु जबहीं। गुप्त मंत्र कहै गुरु तबहीं॥ भगति मुकतिको पंथ बतावै। बुरो होनको पंथ छुडावै॥ ऐसे शिष उपदेशहिं पाई। होय दिव्य दृष्टि पुरुषपै जाई॥

गुरुसेवा माहात्म्य।

गंगा यमुना बद्रीस समेते। जगन्नाथादि धाम हैं जेते॥ सेवे फल प्राप्त होय न जेतो। गुरु सेवामें पावै फल तेतो॥ गुरु महातमको वार न पारा। वरने सिव सनकादिक अवतारा॥ गुरु महिमा मोपै वरनि न जाई। महिमा अनंत मम मति लघुताई॥

गुरु भावना।

गुरुको पुरुष ब्रह्मकर जाने। और भाव कबहूँ नहिं आने॥

काम क्रोध रहित गुरु मेरा। पाप पुण्यका करत निवेरा॥ काम क्रोध लोभ गुरु जाना। तो शिष जानहु तीन समाना॥ यही दृष्टिसे गुरुको सेवै। तब तन मन धन गुरुको देवै॥ तनकरि टहल करै गुरु सेवा। सो शिष लहै मुकतिको भेवा॥ बचन उचारे पुहुप सम बानी। द्रव्य लगावै गुरुहित जानी॥ ऊँच नीच सबही सुनि लीजै। कवीर बचन प्रमान करीजै॥ मोंहिं और कछू नहिं चहिये। गुरू भावना गुरु हिय लहिये॥

दोहा–सात द्वीप नौ खण्डमें, औ इकीस ब्रह्मंड।
सतगुरु विना न बाचिहौ, काल बडो परचंड॥

रमैनी २१–यही भाव भक्तिका लक्षण कहिये। गुरुके भाव बिन भवजल बहिये॥ जिन बातनसे गुरु दुख पावे। तिन बातनको दूर बहावे॥ वेद पुराण सबै मिलि गावै। नेमी धर्मी चौरासिन जावै॥ अष्ट अंगसो दंड परनामा। संध्या प्रात करै निषकामा॥ गुरुको शिष ऐसे नहिं मानै। तीन ताप जर चारो खानै॥ जोगी जती तप आसरमा। बिनु गुरु कोउ न जानै मरमा॥

गुरुचरणोदक माहात्म्य।

कोटिक तीरथ सब कर आवै। गुरु चरणाफल तुरतहि पावै॥ चरनामृत कदाचित पावै। चौरासी गत लोक सिधावै॥ कोटिक जप तप करै करावै। वेद पुराण सबै मिलि गावै॥ गुरुपद रज मस्तक पर देवै। सो फल तत्कालहि लेवै॥

दोहा–गुरु चरणोदक अनन्त फल, हमते कही न जाय। मनकी पुरवै कामना, लेवे चित्त लगाय॥ सतगुरु समान को हितू, अन्तर करो विचार। कागा सो हंसा करै, दरसावै ततसार॥ गुरु महिमा ग्रंथ यह, कहै कवीर समझाय। पाप ताप सबही हरै, अमर लोक लै जाय॥

इति गुरु महिमाकी रमैनी।

अथ ज्ञानदीपककी रमैनी प्रारम्भ ।

रमैनी १३-का कहिये कछु कही न जाई। तुम पंडित लाओ ठहराई ॥ बाभनकी बेटी जोगीको बेटा । दोनो मिल संजोग संजोटा ॥ अचरज एक भया जिय भारी । कन्या होय पिताकी नारी ॥ माई घर बहिनी जाई । सात पतोह को सौत कहाई ॥ सुन जोगी तैं क्या कर जोगा । घर घर सबके यह संयोगा ॥ कन्याको कंथ कंथको पूता । पिताका कंथ होय सुन दूता ॥ इनको जान पिता नहिं सेवे। पाषाण परतिमा पूजा देवे। बाल-भोग करि पागे लाई । आपे घंट बजाये खाई ॥ अति प्रसन्न जोग वोहि लाया । मगन होय तब आपुहिं खाया ॥ ना कछु लेइ न देवे देवा। कारण कौन करे तू सेवा॥ देव न बोले आपहिं बोले। देव न डोले आपहिं डोले॥ जैसा गुरु सिखावन दीन्हा। तैसा सिष हिरदय धरिलीन्हा ॥

समै–यहि संयोग मुवा सब कोई, कीन्ह न कोइ विचार ।
कहैं कवीर चारो युग करता, सबमें फिरा पुकार ॥

रमैनी १४-केते मगन होय मनमें भूले। केते पंडित पढ गरबहिं भूले॥ केते करते सेवा पूजा। तुही निरंजन और न दूजा॥ केते तजत अन्न औ नारी॥ केते रहते दूधा धारी॥ केते कनफटा कहावत योगी। केते संयोगते होत बियोगी॥ केते तीरथ बरत सुन पावा। केते पीर औ नबी मनावा॥ केते जटा राख सिर धारी। केते भये संयोग बिचारी॥ केते बांग निमाज गुजारा। केते भये नटवा व्रत धारा॥ केते होम जग्य करवावे। केते नित

१--इस रमैनीकी एकही प्रति सत्यलोकवासी सद्गुरु श्री महंत शंभुदास साहबसे स १९६२ में मिली थी जिस परसे यह कापी उतारी गयी थी, काल भगवानकी कृपासे वह मूल भी जाता रहा और इस कापीके भी कुछ पन्ने सड गये इसलिये तेरहवीं रमैनीसे आरंभ होता है। विशेष वृत्तान्त प्रस्तावना और परिशिष्टमें देखना चाहिये।

उठि देव मनावे॥ केते मन भगतीमें दीने। केते सदा रसभोगमें लीने॥ सबहि फंसे तीन लोककी बारी। बिधाता रची भूली सृष्टी सारी॥

सखै०–आस करे सुन्य नगरकी, जहां करता कोय।
कहें कवीर बूझो जिव अपने, जाते भरम न होय॥

रमैनी १९–बोले कवीरा अमृत बानी। बरसे कामर भीजे पानी॥ चले बटोही हाटे बाटा। सोवनहारके सिरपर खाटा॥ तुरसाको नित चीरे बांसा। छेरी बेचे चिकवाके मासा॥ राजा परजा रैयत राई। बिन जंत्री नित बाजा बजाई॥ तर गागर ऊपर पनिहारी। लडकाके गोद खेले महतारी॥ ब्राह्मणकी बिटिया ब्याहे बानी। सिहके घर गऊ भइ रानी॥ बरसे धरती सूरज नहाई। समुद्रका पाना अकासे जाई। चेलाके गुरू लागे पाई। पहिले पुत्र पाछे भइ माई॥ अचरज एक देखो किन कोई। माता भई पुत्र जोई॥

स०–सब जग भूला एक न भूला, भूला सब संसार।
कहें कवीर बूझो तुम ज्ञानी, करके अपन विचार॥
तिर देवा गये जात न जाने, गये साधक अवधूत।
कहें कवीर पहिचानो ज्ञानी, पांचो आतम भूत॥

रमैनी १६–आवो पंडित करो बिचारा। सुत माता संयोग व्योहारा॥ त्रिया चरित्र आदि चलि आया। माता निर्गुन पिता बताया॥ इच्छा सरूप भई इक नारी। गायत्री नाम धरा संसारी॥ ब्रह्मा पढे न और बतावे। भेद अभेद बरन कुल लावे॥ तरपन संध्या करे चित लाई। सुच्छम लिंग जोत ठहराई॥ आप न जाने पूजे देवा। उसको अंधा लखे न भेवा॥ पाहन करि पूजे नित देवा। चेतन होयके करे जड सेवा॥ आप अपन

नहिं चीन्हे कोई। आपहिं करता आपहिं होई॥ जहां नाहिं कुछ तहांकी आसा। सुन्य नगर जहँ कहे ब्रह्म बासा॥

समै-यह दुबधा मिलि दुचित भये, कैसे न चीन्हे मूल।
कहें कबीर तिरगुन गुणा भूले, यही सबनकी भूल॥

रमैनी १७-एक अचंभा देखो आई। गउ अकाश धरती खीर जमाई॥ तुम्बा डूबा सिल उतरानी। बरेड़ी चढे ओरिया-का पानी॥ जे गुरु कहे करे सिष सोई। गुरुका बचन तजे न कोई॥ जोत निरंजन कहे निरंकारा। गुरू मंत्र यह सबन पुकारा॥ परंपरा ऐसी चलि आई। अबहीं औरू कैस चलाई॥ जोगी जंगम जती संन्यासी। सुर नर मुनि सब भये उदासी॥ करता सबका सिरजन हारा। बिना बिचार न उतरे पारा॥ यह करता को रूप तुम्हारा। करता चीन्हो बूझ बिचारा॥

समै-सब जग ढूढे हाथ न आवे, ना है पुरुष बिदेह।
कहें कबीर करता तुम चीन्हों, छोड़ो झूठ सनेह॥

रमैनी १८-जब जिवमें आवे परतीता। तब यह मन होय अतीता॥ भई परतीत मिटा दुख दुंदा। धोखा मिटा भया अनंदा॥ मगन हुआ रहा ठहराई। हंस परमहंसकी संस मिटाई॥ धोखा मिटा भया सुख चैना। किसका नाम जपे दिन रैना॥ सुरत डोरते चेत न अंधा। निसि बासर करे नित धंधा॥ सेवक स्वामी और विचारा। आसा लाय तजा घर बारा॥ करे विस-वास नित पूजे देवा। धोखा भया रैन दिन सेवा॥ धोखा लगि जब तीरथ धावा। दौडि गया तहं देव न पावा॥ भया निरास नहीं कछु पाया। ज्यों छीरते घिव विनसाया॥

समै-चेतो किन तुम चेतो, परमहंस संयोग।
कहें कबीर करता नहिं एते, पांचोंमें सुख भोग॥

रमैनी १९-हरि ब्रह्मा भूले त्रिपुरारी। इन भूलत भूली संसारी॥ सनक सनंदन भूले वोऊ। नारद शारद भूले सोऊ॥ गोरख भूले भूले हनुमाना। मुनि वशिष्ठ तिनहूं नहिं जाना॥ परहलाद पारासर भूले तेऊ। गौतम लोमस भूले एऊ॥ इन्द्र कुबेर भूले बहु भांती। जमदग्नि अत्रि छ भरमाती॥ भूलेपीर नबी औलिया। भूले गौस कुतुब मौलिया॥ भूले यह सब नेजा धारी। इनके संग भूले संसारी॥

समै-देव पैगम्बर रिषि मिलि, इनही माना भूल।
निराकारमें यह सब अटके, यही सबनकी भूल॥

रमैनी २०-कासे कहूं मैं यह दुख रोई जासों कहों सो वैरी होई॥ कहा न माने मोर सुत नारी। कहत कहत मोर रसना हारी॥ गन गंध्रब मुनि माने न देवा। सबते कहा अपन हम भेवा॥ देवी देव बसे सब आई। भूत प्रेत बसें बहुताई॥ गन गंध्रब मुनि तपी संन्यासी। जिया जोनि लाख चौरासी॥ सौ सुत और जो जन्में माया। घर घर तिनका भया बसाया॥

समै-हमारा यह सब कीन कराया, हमहीं बस परगाँव।
कहे कबीर सबको जगह, हमको नाहीं ठाँव॥
हमरे काज हम सब कीना, बसा पुरुष इक आय।
रूप न रेखा अंग विहूना, घट घट रहा समाय॥

रमैनी २१-मैं तोहि पूंछो पडित ज्ञानी। पिरथी अकास रहे नहिं पानी॥ सुक्षम स्थूल रहे नहिं कोई। बिराट सहित परले सब होई॥ तबहि बिराट काहि अधारा। तब वेद जाप जर होवे छारा॥ होय अलोप जब रवि औ चन्दा। तब कापर रहे बाल मुकुन्दा॥ यह अचरज मोहिं निसि दिन भाई। दुरमत मेट मोहिं देहु बताई॥

समै–अमिट वस्तु सब मेटे, जो मेटे सो प्रमान। मिटतन कीन्ह सनेहरा, आपइ मिटे निदान ॥ पैंडे सब जग भूलिया, कहँ लग कहौं समुझाय। कहें कबीर अब क्या कीजे, जगते कहा बसाय॥

रमैनी २२–प्रथम मन्त्र बिरंचि एक कीन्हा। यह आयसु मातु मोहिं दीन्हा ॥ निराकार निरगुन सो देवा ॥ ताका काहू लखा न भेवा॥ पग नाहीं पै सब कहिं जाई। कर नहिं पै सबहिं कराई ॥ हिय नाहीं पै सब कछु बोला। गुण नाहीं पै गुणो अमोला ॥ सरवन नाहिं पै सबे सुनावे। बिन रसना वह सब गुन गावे ॥ बिन नैनन देखे संसारा। बिन नासा ले बास अपारा॥ जीव नहीं पै जियत गुसांई। घट घट पूर रहा दुनियाई॥

समै–ब्रह्मा यह समझे नहीं, विना बीज कछु नाहिं।
कहें कबीर जो उन कहो, सो राखो मन माहिं ॥

रमैनी २३–वेद किताब न झूठा होई। जो न विचारे झूठा सोई ॥ नरकी नारी जो मर जाई। के तो जन्मे की नरक समाई॥ पिंडा तरपन जब तुम कीन्हा। कहो पंडित उन कैसे लीना ॥ कुंभक भरभर जल ढरकावे। जिवत न मिले मरे का पावे ॥ जलसे जल ले जलमें दीन्हा। पित्रन जल पिंडा कब लीन्हा ॥ वनखंड मांझ परा सब कोई। मनकी भटक तजे न सोई॥ आपनके छुवन करे बिचारा। करता न लखा परा भर्म जारा॥ परमपरा जैसी चलि आई। तामें समझ रहा बिलमाई ॥

समै–वेद हमारा भेद है, हम हीं वेदों माहिं। जिस विधि न्यारे हम रहें, सो कोइ जाने नाहिं ॥ हारिल लकड़ी ना तजे, नर नाहीं छोडे टेक। कहें कबीर गुरु शब्द ते, पकड़ रहा वह एक ॥ धरत: बेल लगायके, फल ढूंढत आकास। कहें कबीर

घर छोडके, उजरन लिया निवास ॥ रवि चंदाकी गम नहीं, राई न ठहराय। मन बुध जहँ पहुँचे नहीं, तहँ सकलो जग जाय॥

रमैनी २४–पृथ्वी अकाश पवन नहिं पानी। तब काहे परब्रह्म कहो मोहिं जानी ॥ बीज वृक्ष हता न जहवाँ । देव अदेव न रहते तहवाँ ॥ गन गंध्रब मुनि हते न कोई। चंद्र न सूरज पुरुष न जोई ॥ यह वैराट कहांते आवा। मूल मंत्र किनहू नहिं पावा ॥ करताका कछु लखा न भेवा ॥ मात वचन भूले त्रिदेवा॥

समै–वृच्छ नहीं बीजो नहीं, साखा पत्र न फूल।
तातै यह बैराट भया, यही सबनकी भूल ॥

रमैनी २५– कथा कवित्त बहुत मन मानी। सबहिन राम खिलौना जानो ॥ सो ज्ञानी जो रामहिं जाने। कंठी माला तिलक मनमाने ॥ रामहिं जाने तब सुख होई। राम लखे बिन तरा न कोई ॥ रामहिंका यह सकल पसारा। रामहिं करताके सिरजन हारा ॥ रामके भगत करे ब्रह्मज्ञानी। रामकी गति नहिं किनहु जानी ॥ रामहिं देखे तब सच पाई। राम लखे बिन नरकहिं जाई ॥ दसरथ सुत सो राम न होई। रामहि जाने बिरला कोई ॥

समै–राम राम सब कोइ कहे, रामते बांधा असनेह ।
कहैं कबीर देखा नहीं, पै मरते होय सनेह ॥

रमैनी २६–घर घर होय पुरुषकी सेवा। पुरुष निरंजन कहे न भेवा ॥ ताकी भगति सकल संसारा। नर नारी मिल करैं पुकारा ॥ सनकादिक नारद मुख गावें। ब्रह्मा विष्णु महेश्वर ध्यावें ॥ मुनी व्यास पारासर ज्ञानी। प्रह्लाद और बिभीषण ध्यानी॥ द्वादस भगत भगती सो रांचे। दे तारी नर नारी नाचे॥ जुग जुग भगत भये बहुतेरे। सबे परे काल जम घेरे ॥ काहू भगत न रामहिं पाया। भगती करत यह जन्म गंवाया ॥

समै–भगति २ सब कोई कहे, भगति न आई काज ।
जहँका किया भरोसवा, तहँ ते आई गाज ॥

रमैनी २७–यह अचरज मोहिं निस दिन भारी । वाही देस जात नर नारी ॥ वही देवकी खबर न पाई । काहू वहँ ते कहि न पठाई ॥ हम सुख रहत तुमहुं चलि आवो । कि हम दुख तहां महूं बोलावो ॥

समै–समझो भाई ज्ञानी नर, काहु न कहो संदेस ।
जे गये सो नाहिं न बहुरे, सो वह कैसा देश ॥

रमैनी २८–बूझो पंडित बात हमारी । आधा नारी पुरुष विचारी ॥ कौन नारि को पुरुष कहावे । किसको निसिदिन सब कोई धावे ॥ संयोग लाग निरगुन विन पानी । करता ते फिर क्यों अनखानी ॥ पुरुष संयोग पुरुषको छाया ॥ तब माता पुत्रनको खाया ॥

समै–चारों जुग समझाइया, न समझे सुत नारि । कहें कबीर अब कासो कहिये, अपनी चूकी हार ॥ माताते डांइन भई, लिया जगत सब खाय । कहें कबीर हम क्या करें, जगत नाहिं पतियाय ॥ ससा सिंहको खाइया, हरना चीता खाय । कहें कबीर चींटी गज मारी, बिल्ली मूसा धाय ॥

रमैनी २९–बीज वृच्छकी सार न जानी । कहो पंडित कैसे ब्रह्मज्ञानी ॥ बीज वृच्छका होय विनासा । तब पावे ठाकुरमें बासा ॥ मैं तोहि पूंछो कहो ब्रह्मज्ञानी । कैसे जोतमें जोत समानी ॥ जिवको भेद लखे नहिं कोई । उपनिषद नास कह सब कोई ॥ करता सबका सिरजन हारा । पंडित नाहीं वेद विचारा ॥

समै–बीज वृच्छ दोनों कायामें, कबहुं नास न होय । कहे

कबीर या वृच्छको, बिरला बूझे कोय ॥ बीज वृच्छ एक साथ है, आगे पाछे नाहिं। बीज वृच्छमें वृच्छ बीजमें जानत कोई नाहिं ॥ विना बीज वृच्छ है नाहीं, यह जानत सब कोय। वृच्छ विना बीजो नहीं, यामें संक न होय ॥

रमैनी ३०-यह धोखा है सबको काला। धरती अकाश धोख पताला ॥ धोखाही हंसे धोखाही रोवे। धोखा जगे और धोखा सोवे ॥ धोखा जंत्र मंत्र औ टोना। धोखा रूपा धोखा सोना ॥ षट दरशनमें धोखा छाया। धोखेका सब किया कराया ॥ धोखा पुरुष औ धोखा नारी ॥ वेद स्रुम्रिति सब कहत पुकारी ॥ सनकादिक धोखा मन लाया। चारों जुग धोखाको धाया ॥ बिरला जाने धोखा कोई। प्रगट गुपुत धोखो है सोई ॥

समै-धोखे धोखे सब जग बीता, धोखे गया सिराय।
थित ना पकडे आपनी, यह दुख कहां सिराय ॥

रमैनी ३१-मन खेले मनहीं मन केला। मनहीं बीज वो मन ही बेला ॥ पांच पचीस यह मनके साथा। मनहिं तीन गुण लीन्हे हाथा ॥ मनहिं काल औ मनहीं दूता। मनही राच्छस मनही भूता ॥ मनही पूजे मनही देवा। यह मनकी सब करते सेवा ॥ मनही आदि औ मनही अंता। मनही लीला रचा अनंता ॥ मनही जीते मनही हारा ॥ मन सुमरे औ करे विचारा ॥

समै-नटके साथ जस बेसवा, जियरा मनके हाथ। केतक नाच नचावई, राखे अपने हाथ ॥ मनके हारे हार है, मनके जीते जीत। कहें कबीर तहँ मन नहीं, जहाँ हमारी रीत ॥

रमैनी ३२-बुंदकी खबर न काहू पाई। एक बुंदमें सरब समाई ॥ बुंद बुन्द सकल घट माना। बुंदके मित्र तिरगुन जाना ॥ बुंदे राखे सोई ज्ञानी। बुंदे करत जो बुंदे जानी ॥ पिरथी बुंदे देवे

जोई। बुंदहि ते यह सर्वस होई ॥ इच्छा औ मन जहां न होई। तहां बुंद यह स्थिर सोई ॥ याकी खबर न काहू जानी। यही बुंद सब साज समानी ॥

समै-केते बुंद अलपे गये, केते सुलप वोहार। केते बुंद तन धरि गये, तिन्ह रोवे संसार ॥ सकल साज एक बुंदमें, जानत नाहीं कोय। कहें कबीर जिन जिव भूले परम परे भर्म सोय ॥

रमैनी ३३-महा अपरबल है यह माया। जिसका यह सब किया कराया ॥ मच्छ रूप मथा समुद्र अपारा। संखासुर मारा वेद उधारा ॥ कच्छ माया धरती ले आई। वराह धार दशन धरे भाई ॥ खंभ फार नरसिंह बिकरारा। हरनाकुस नख उदर बिदारा ॥ बावन रूप बन बलिको जीता ॥ परसराम पृथ्वी बस कीता ॥ रामचंद होय रावण मारा। कृष्ण रूप धरि कंस पछारा ॥ निहकलंक कालिंद्रा मारा। और असुर बहुते संघारा॥

समै-माया ते मन उपजा, मनते दस औतार। ब्रह्मा विस्नू धोखे गये, भरम परा संसार॥ करताके नहिं काम यह, यह सब माया कीन्ह। कहें कबीर बूझो माया को, नाव धरो जन कान्ह॥

रमैनी ३ -सुन पंडित यक बात हमारी। तेरा सुत तुमहीको मारी॥ काठ मथके अगिन उपाई। लौट अगिन वह काठे खाई॥ दोउका नास भये एक ठाऊँ। उड गइ भसम लीनका नाऊँ॥ जो मिरगा संग मिरगा बंधाई। त्यों अपना सुत आपुहिं खाई॥ ताते करम काठ उरझेरा। पंडित कहा न मानत मेरा ॥ काठ ते घुन उपजे भाई। लौट काठ वह चुन चुन खाई ॥

समै-ब्रिही खेतहिं खात है, मात सुतन को खात।
कहें कबीर सुत नाती खाये, यह दुख नाहिं विहात ॥

रमैनी ३५-माके ससुरके उपाव बतावे। टोना टांबर बहुत

खिलावे ॥ सब घर लिया चोर बताई। घृतका दीपक धरा बनाई॥ झांझ मंजीरा ढोल बजाया। खेला नावत भरम बताया॥ पता मिलाये सब पतियाने । टोना टांबर बहुत सुखमाने ॥

समै–मूढ हिलावे नावत, भरम भीहा बैठाय। कहें कबीर इन नावत, राखा सब जग भरमाय ॥ चुरैल भूत ना कोई, गन गंध्रव कोइ नाहिं। मनसा डाइन संका भूत, संसार परा भ्रम माहिं॥

रमैनी ३६–जंत्र मंत्र तंत्र है सारा। त्रिभुवन अटका यही बिचारा ॥ नाटक चेटक ते लौ लाया । टोना टांबर बहुत कुछ भाया ॥ जनम विताना याही धंधा । करता आप न चीन्हे अंधा ॥ जहां बचन झूठ सुन पावे। लाभ जानके मूल गंवावे ॥ जंत्र मंत्र सो जग पतियाना। जंत्र मंत्रका मर्म न जाना ॥

समै–बीज ते आये चार गुण, बीचे गये सिराय।
उपज बिनस जाने नहीं, सब जग रहा भुलाय ॥

रमैनी ३७–कथते कथते जनम सब जाई। बिन बूझे कछु हाथ न आई ॥ रतिके कहे त्रिया सुख पाई। विषनी संग विस्वा जारो भाई ॥ सुखके कहे सुख जो होई । नैन कहे सूझे दृष्टि सोई॥ भोजन कहे भूख जो जाई। तो धनके कहे धन घर आई॥ अगिन कहे जरे जो पाऊं। बस्ती कहे उजर बस गाऊं॥ पाथर पूजे मुक्त जो पावे। बिन नर नारी सो सुत जावे ॥ पाप कटे जो तीरथ नहाये। लील दाग कटे न साबुन लाये॥ जलके कहे जो त्रिषा बुझावे। तो जग राम कहे तर जावे ॥ बीज वृक्षका भेद जो पाई। तब यह काया अमर रहाई ॥

समै–राम कहत २ जग बीता, कहूं न मिलिया राम। कहें कबीर जिन रामहि जाना, तिनके भये सब काम॥ यह दुनिया भई बावरी, अद्रिस्ट सो बांधा नेह। कहें कबीर द्रिस्टमान छोडके, सेवे पुरुष विदेह ॥

रमैनी ३८–पाथरकी क्या कीजे सेवा। बोले न चाले कहे न भेवा॥ विन देखेकी झूठी आसा। जल होते क्यों मरे पियासा॥ जब तक ना देखे अपने नैना। तब तक न पतीजे गुरुके वैना॥ शिष्य पियासा गुरुपै जाई। चेलाकी नहीं त्रिषा बुझाई॥ कछु-वन वस्तु अमोल बिकाई। राजा रंक विसाहे जाई॥ वस्तु लीन कछु हाथ न आया। लाभ जान फिर मूल गंवाया॥ सब गुण पूजे निरगुण सेवा। पै नहिं पूजे आतम देवा॥

समै–जहँ नहिं तहँ सब कछू, वहं की बांधी आस।
कहें कवीर ये क्यों न त्रिपत, दोऊकी एके प्यास॥

रमैनी ३९–आपहि वृच्छ आपही बेला। आपहि गुरू आपही चेला॥ आपहि जीवे आपही मारे। आपहि बहे आपही सारे॥ आपहि जती आप संयोगी। आप संन्यासी आप वियोगी॥ आपहिं गिरही आप बैरागी। आपहिं गुनी आप गुन त्यागी॥ आप अज्ञान आप है ज्ञानी। आपहिं आप दूसर कर मानी॥ आप पुजेरी आपहिं देवा। आप अभेद आप होय भेवा॥

समै–आप सबनमें होय रहा, आपन भया निनार।
कहें कवीर एक बूझ बिन, भटका सब संसार॥

रमैनी ४०–मनकी बातें अगम अपारा। मन भटकाया सब संसारा॥ यह मन चोर चुगुल अपकारी। यह मन जीते यह मन हारी॥ यह मन नाचे यह मन गावे। यह मन ताल मृदंग, बजावे॥ यह मन देवी यह मन देवा। यह मन अपनी आप कर सेवा॥ यह मनै पुरुष यह मन जोई। रूप न रेख न यह मन सोई॥ यह मन जागे यह मन सोवे। यह मन हसें सो यह मन रोवे॥ यह मन विरहिन ब्रह्म वियोगी। मनै जती और मनै संजोगी॥ यह मन देव निरगुन आकारा। यह मन सुगम अगम अपारा॥

यहि मनका है नाना रंगा। यह मनके बहु उठे तरंगा॥ यह मन सब जग चुन चुन खाया। यह मन सब जगतको भरमाया॥

समै–राजा रैयत होइ रहा, रैयत लीन्हा पाज। रैयत चाहा सोइ लिया, ताते भया अकाज॥ मूसा चढा बिलार पर, चढी सिंह पर गाय। कहैं कवीर कहत न आवे, सुतकी नारी माय॥ जब जाना तव भरम भया, बिन जाने भया नास। कहैं कवीर पुकारके, मनके झूंठी आस॥

रमैनी ४१–हंसी न जावे आवे न रोई। धोखे मरे पुरुष औ जोई॥ आदि भवानी स्त्री हमारी। हमें छोड भई सुतकी नारी॥ हमरा यह सब कीन कराया। अनख मान उन मनहिं दुराया॥ निरगुण रचा पुरुष एक माया। हमको तज उनको बतलाया॥ अब हम कासों करें पुकारा। हारल बिनवे आपन हारा॥

समै–महा गुननकी आगरी, महा अपरबल नारि। कहैं कवीर यह बड़ा अचंभा, व्याहत भई कुमारि॥ निरगुन आपन उन रचा, लौट भई वह नार। कहैं कवीर अनखायके, रचा पुरुष निरकार॥ निरगुण निराकार करता ठहराया, तिनहुं दिया उप-देश। कहैं कवीर त्रिगुन चले, जहां न चंद दिनेस॥

रमैनी ४२–कोई तीरथ वरत ठहरावा। कोई जप तप कर भरमावा॥ कोई उरझे वेद पुराना। पूजा रची कोउ अरुझाना॥ कोई नाद बिंदमें लागा। सुन्न बिसन्न कोइ चला अभागा॥ कोई बैठा आसन मारी। पंचअगिन कोई तन जारी॥ कोई मूंड़ मुड़ाय भर्मांना। कंठी छाप तिलक मन माना॥ नाना भांति पृथ्वी लागी। विन कर्ता मन भरम न भागी॥

समै–गुरवा संग सब कोइ भटके, करता परा न चीन्ह। कहैं कवीर मनके भ्रम भूले, गुरु सिक्ख जिव दान॥ आगे आगे गुरु

चला, जहां न ससि औ भान। कहें कवीर पाछे चला, गुरुमे यहू समान ॥

रमैनी ४३-रंकार माया जब चीन्हा। यही मंत्र ब्रह्माको दीन्हा ॥ ब्रह्माते शिव विष्नू भाई। यही मंत्र सनकादिक गाई॥ यही मंत्र नारदमुनि पावा। यही मंत्र सुर नर मुनि ध्यावा ॥ यह मंत्र जपा गौतम व्यासा। यही मंत्रका शिव दुरवासा ॥ यही मंत्रका त्रिभुवन चेला। याही मंत्रके बृच्छ नवेला ॥ यही मंत्र कथा वेद पुराना ॥ यही मंत्र सबके मन माना ॥

समै-माता गुरु पुत्र भये चेला, सुतको मंत्र दीन। कहें कवीर माताको वचन, सबहिन चित धर लीन॥ तिसका मंत्र सब जपे, जिसके हाथ न पांव। कहें कवीर सो सुत माको, दिया निरंजन नांव ॥ जपते २ जी गया, काहू मिलिया नाहिं। कह कवीर तउ नाहीं समझे, सब लागे वहि माहिं ॥

रमैनी ४४-जमी असमान तहां नहिं सोई। हता न पुरुष हता न कोई ॥ पांचो तत्त्व हते नहिं भाई। यह विश्वरूप कहां ते आई ॥ कहांते आई आदिभवानी। कैसे रची चंडिका रानी॥ कौनसे जगह राम अस्थाना। श्री सहित कह रहे भगवाना ॥ कौन सरूप कौनसे देशा। पंडित मुझको देहु संदेशा ॥ लौट पंडिता कहें कहानी। भक्त भागवत रहो तहँ आनी ॥

समै-बिस्व रूप सब साथ था, बिस्वरूप यह सोय। जैसे साज पींड़की, आगे पाछे न होय ॥ बहे बहाये जात थे, लोक वेदके साथ। बीचे सतगुरु मिल गये, दीपक दीन्हा हाथ ॥ तुझ-हीसे सब कुछ भया, सब कुछ तुझही माहिं। कहें कवीर सुन पंडिता, तेहि ते अंते नाहिं ॥

रमैनी ४५-बूझो पंडित बात हमारी। वेद पुरान शास्त्र विचारी ॥ बिजनासे पौन कहांते आई। बिजना टूटे कहां समाई ॥ काठते अगिन काठको खाई। लौट अगिन वह कहां समाई ॥ काशीमें धुन उठहिं अपारा। काशी टूटे कहां विचारा ॥ होते बिरवा लीन उखारी। फल औ फूल गये केहि बारी ॥

समै-करता सब घट पूरना, जगमें रहा समाय।
कहें कवीर एक जुगति बिन, सब कुछ गया नसाय ॥

रमैनी ४६-भौ को सागर यह संसारा। सब जिवपर माया की लारा ॥ देव रिषी सुर गये सयाने। त्रिगुन गये जात नहिं जाने ॥ गंध्रब पुरुष औ जोई। असुर मुनी सुर रहा न कोई ॥ पीर पैगम्बर औलिया भाई। ग़ौस कुतुब औ राजा राई ॥ यह भवसागर भव अस्थाना। अंत एक दिन सबको जाना ॥ निरगुन पुरुष रहेगा सोई। त्रिभुवन मरे रहे न कोई ॥

समै-आद अंत अमर हम देखा, जीव मुवा नहिं कोय। यह विश्व रूप ब्रह्मज्ञानी, उतपत प्रलय न होय ॥ मत भूलो ब्रह्मज्ञानी, लोक वेदके साथ। कहें कवीर यह बूझ हमारी, सो दीपक लीजे हाथ ॥

रमैनी ४७-बैठ सिंहासन आद भवानी। तीनों सीस नवायो आनी ॥ भय आयसु सेवा चित लावा। आद पुरातम भेद बतावा॥ हम महामाया मातु तुम्हारी। तीनों मानो बात हमारी॥ लौटि पूछे ब्रह्मा यह बाता। काकी नार कहो तुम माता ॥ निरंकार निरगुन जो देवा। सो मम कंथ कहा यह भेवा ॥

समै-त्रिदेवा सुमरन लगे, पूजा रचा ग्रंथ। तिरिया गई पर पुरुषपै, छोड आपना कंथ॥ त्रिया कंत न माने, कंता ठाढे द्वार। सुतको कंत कीन्ह बरनारी, महा अपरबल नार ॥

रमैनी ४८-इच्छा बिप्रित जबे जिय आई। बीजमें अंकुर तबे दिखाई॥ उठा बीज तीन भय बारा। तीन भये संयोग व्योहारा॥ महामाया महा रीत भारी। कंतापै आई वह नारी॥ रीत माँग रीत दीन नचाई। त्रिया अनखाय पुत्रपै आई॥ धिरज न कीन्ह नारि अनखानी। तजा कंत पुत नारी मानी॥

समै-कर्ता हम कर्ताकी नार, धीरज न कीन उन। निरगुन रचा विचार, धीरजमें सब होत था॥ अधीरज कीन्ह विनास, कवीर अब कछु न कहना। अबकी गूठी आस, काहू विधि बनैना॥

रमैनी ४९-ब्रह्मा पूछे सुनो भवानी। अपने आप तुम कहो कहानी॥ लौट भवानी सुत समुझावे। अपने पार न और बतावे॥ खंड ब्रह्मण्ड मैं रची अनंता। सूर्य चंद्र उड़गन अनंता॥ चौरासी सब हमहीं निरमाई। ओंकार जब ताहि सुनाई॥ आदि अंत मोहि पूजें देवा। करो हमारी तीनों सेवा॥

समै-निर्गुन निर्गुन दोऊ उड़ाइस, आप रही ठहराय। आपहिं पुरुष नारि ठहरानी, ब्रह्मा कहे समझाय॥ ब्रह्माके प्रतीत भई, बांधा वेद ग्रन्थ। प्रगट नैनन देखत नहीं, परा वेदके पंथ॥ मायाते यह वेद भै, वेद मध्य दोय तत्त। निर्गुन सर्गुन दो बतलावे, कहे नाहिं जो सत्त॥

रमैनी ५०-परम मद माते नर औ नारी। जुग गये चार न मिटी खुमारी॥ माते ब्रह्मा विष्णु महेशा। माते नारद शारद शेषा॥ माते सनकादिक सब देवा। माते रिषि मुनि करते सेवा॥ माते नाथ सिद्ध गोपाला। माते शिव नारी बृजबाला॥ माती लच्छमी आदि भवानी। माती सती ब्रह्मा ब्रह्मज्ञानी॥ तीन लोक परम मद माता। सिध साधक है येही बाता॥

समै-महामाया भाठी रची, तीन लोक बिस्तार। कहें कवीर हम

रहे निनारे, पी माता संसार। ब्रह्मा पियत पिया सब काहू, करता अपन न चीन्ह । कहैं कबीर अब कहत न आवे, विरंच इसारा कीन्ह ॥

रमैनी ५१–सबे आस वहांकी ठानी । वहांकी गति काहु न जानी ॥ निराकार सब करे करावे। ज्यों बाजीगर कपिहि नचावे ॥ वाहिके हाथ जीवन औ मरना। ताते वाही पुरुषते डरना ॥ वह सब ठांव सबसे न्यारा । इनहिं कीन्ह यह सब बिस्तारा ॥

समै–कब जैहो वहि देशवा, जहां पुरुष निरंकार। कहैं कबीर हमहूं ते कहियो, जब होय चलन तुम्हार ॥ आगे गये तिन किनहु न कहिया, अब तुम लीजो साथ ॥ जो है तुम्हे भरोसवा, गहो हमारा हांथ ॥ त्रिय देवा जान्यो नहीं, कौन रूप केहि देश। अबहूं चेत समझ नर बौरे, झूठा दिया उपदेश ॥

रमैनी ५२–महामति माया आदि भवानी। पांडव घर द्रौपदी रानी ॥ रुधिर पियासी भइ मह माया। अष्टादस छोनी दल खाया ॥ इतने खायसि तउ न अघानी। पांडव गरे हेवांरे आनी ॥ छप्पनकोट जदुबंस सिधारी। तऊ न त्रिपित भई हत्यारी ॥ सुंभ निसुंभ महिषासुर मारा। हरनाकुश रावन संहारा ॥ सुरनर मुनि सब खोये झारी। कोइ न बांचा यह संसारी ॥

समै–करताते अनखानी माया, आगम कीन्ह उपाय। कहँ कवीर त्रिया चंचल, राखा पुरुष दुराय ॥ केता हम समझाइया, पै ना समझे कोय। उनका कहा जगत मिल माना, हमरे कहे क्या होय ॥

रमैनी ५३–ब्रह्माके घर भई भवानी। शिवके बैठी आद भवानी ॥ विष्णुके भई लछमी नारी । गंध्रवके घर अप्सरा वारी ॥ इंद्रके बैठी होय इंद्रानी। राजाके घर भई पटरानी ॥ जोगीके चेली होय

आई। देवनके देवांगना कहाई॥ तुरकनके तुरकानी खेली। सब घर छला त्रिया अकेली॥

समै-पुरुष अपनते विरची नारी, घर २ कीन्हा ठाँव।
निरगुनको करता ठहराया, मेट हमारा नांव॥

रमैनी ५४-त्रिय देवा मिल पूछे भेवा। कैसे तुम्हे पढायो देवा॥ वह निरगुन तुमहो गुनवंती। निरगुनते कैसे भई जनती। प्रथमे माय होय फिर नारी। यह मेटो तुम संक हमारी॥ निराकार निरगुन है करता। चहिये सो करे चित धरता॥ उनका आदि अंत नहिं पाया। जिन रचि हमको तुम्हे पठाया॥

समै-त्रियदेवा समझे नहीं, भई मायते नार।
उन भूलत भूला सब कोई, कहैं कबीर पुकार॥

रमैनी ५५-वेद शास्त्रको वोहू गुन गावे। नेति २ फिर अथाह सुनावे॥ जोगी गगन मंडलको धावे। देख आप दूजा ठहरावे॥ बैरागी चितमे धारे ध्याना। दरशरूप नारायन ठाना॥ जिंदा कहैं नूर हम देखा। झूठा दरशन नहीं विसेषा॥ करता अपन न चीन्हे कोई। ईसर सुमरे पुरुष औ जोई॥

समै-वेद बरन जो पावें, कहें एक तो बात।
जैसी कुछ माता कही, सोइ कहें दिन रात॥

रमैनी ५६-इच्छा रूप भई एक गाई। सो वह गाय महा हरहाई॥ चार पांव दोय सींग है भाई। पत्र अठारे परम सुहाई। नौ नारीका पीवे पानी। स्वेत सींग बिगरहकी खानी॥ सुर नर मुनी करें नित सेवा। ब्रह्मा विष्णु महेसर देवा॥ गाई बांध बिच दावर लाई। तब वह गाई तोड़ पराई॥

समै-वृक्ष एक छाके नई, फूटी साखा चार।
अठारह पत्र चार फल लागे, फुलवा लेहु विचार॥

रमैनी ५७-सांचा देव झूठ पूजें देवा। वृक्ष नहिं फल चाहे करि सेवा। झूठे पीर पैगम्बर भाई। सांचा देव झूठ लौ लाई॥ झूठे योगी जंगम उरझाने। झूठे हिंदू हरी न जाने॥ झूठे तुर्क अल्लह नहिं पाया। बैरागी झूठे मूड मुडाया॥ झूठा ध्यान लगावे सेवा। लोटारिझाय पुजावे देवा॥ तीरथ जाय पै राम न जाना। झूठ परपंच जगत पतियाना॥ झूठ सन्यासी जटा रखावें। करता का कछु भेद न पावें॥

समै-तुम जो भूले वेद विद्या, करता अपन न चीन्ह।
कह कबीर यहि भ्रममें, सकल सृष्टि जिय दीन॥

रमैनी ५८-जने तीन परपंची देवा। तिनहूं उनकी कीन्ही सेवा॥ सेवा कीन्ह भेद नहिं पाया। उन अनखायके हमें छिपाया॥ जोग जुगत ब्रह्माको दीन्हा। कुंडली साध गगनको चीन्हा॥ काया माहिं एक मंजारी। तेहि संग जोगी जोग बिचारी॥ दिन उपदेश निरगुन ठहरावा। पेंड़ छोड़ डार अरुझावा॥

समै-उनके संग गये तिरदेवा, गया जग उनके साथ।
कहें कबीर अब मरो मसोसन, मल २ दोनों हाँथ॥

रमैनी ५९-भेद अभेद न उनके होई। निर्गुन पुरुष करता है सोई॥ हते न तत्त न त्रिगुन देवा। सकल कीन्ह यह सुन्यते भेवा॥ नाभि कमल होय ब्रह्मा आया। तिन पहिले नारदको जाया॥ फिर ब्रह्माकी इच्छा आई। मानसी पुत्र भये बहु भाई॥ ब्रह्मा जान धरले बैरागा। बिना गहे बजावे रागा॥ साठ कन्या ब्रह्मा ठहराई। कश्यप तिन मिल सृष्टि कराई॥

समै-निहततसे कैसे तत भया, सुन्न ते भया अकार। कस्यप कन्या कहां हती, पंडित कहो विचार॥ पुरुष कामिनि एक संग, कंथ नर संयोग। कहें कबीर सुन पंडिता, पुत्र न कंथ वियोग॥

रमैनी ६०–मैं तोहि पूछो पंडित ज्ञानी। पंद्रह तिथ तैं कहांसे आनी॥ सात दिवसको करे है भाई। राम पाषाण कैसे भय आई॥ चार बरन कहांते आना। जुगन चारका करो बखाना॥ कौन मते भाई बहिन नारी। पुत्र पिता ठहरी महतारी॥ दोय संयोग अनेक होय आया। कहो पंडित कैसे ठहराया॥

समै–पंडित भूला वेद पढि, लखा मूल ना भेद।
एक नारि एक पुरुषते, सकल साजना खेद॥

रमैनी ६१–निरगुन पुरुष निरंजन देवा। सब जग करे ताहिकी सेवा॥ अपन अपन मत कीन्ह विचारी। बात न बूझै कोई हमारी॥ बैरागी कहे लेउ बैरागा। ब्रह्मचारी तीरथ व्रत लागा॥ संन्यासी सर्वनास कराया। जोगी जुगति कर प्रान चढाया॥ जिंदा परा कुरानके फंदा। भा छानबे झूठ पाखंडा। भेष धरी यहि गुरुवा खिलावे। आप गुरू होय जगत बतावे॥

समै–नहिं कंठी नहिं माल है, नहीं तिलक नहीं छाप। नहिं वाके कछु भेष है, नहिं वाके तप जाप॥ जात बरण कछु भेष नहिं, नहिं धोखेकी बात। ज्ञान भया, धोखा गया, ज्यों तारा परभात॥ जो बहा सो बहनदे, ताते चेत शरीर। तैं अपनेको बूझले, कहत पुकार कवीर॥

रमैनी ६२–मन थिर होय बसे घर मेरा। यह मन घर जारे बहुतेरा॥ जहं २ जाय तहां तहं फंदा। किनहु न देखा परम अनंदा॥ जोगी जती तपी सन्यासी। ब्रह्म चार बैराग उदासी॥ तत्त्व जार जीवको नासे। धोखा अपना नाहिं बिनासे॥ धोखा कोइ न बुझावन हारा॥

समै–आपन घर माहुर भयो, छोड छोड पछताय।
कहैं कवीर घर औरके, पूछत पूछत जाय॥

रमैनी ६३-अंते ढूढे सब संसारा। करता निकट न लखे गंवारा॥ आद उपदेश समाध लगाई। अंग बिहूने रहा लौ लाई॥ पांच तत्त्वका नास कराया। निराकार समाध पर आया॥ पांच तत्त्व जीव है सोई। तत्त्व हीनता पुरुष न कोई॥ चार ठौर गुरुवा दिखराया। तेहि धोखे मिल सुन्य समाया॥

समै-पांचतत्त्व निज मूल है, हम करता इन माहिं।
नख सिखते पूरण बना, सो फिर अंते नाहिं॥

रमैनी ६४-धोखे २ गया समाई। धोखा की कछु खबर न पाई॥ धोखे धोखे भया अकाजा। धोखे गया जीव बिन काजा॥ धोखे २ वह भइ न्यारी। धीरज न कीन्ह बिलग गइ नारी॥ धोखे २ सब घर खोया। धोखे बीज धोखे कह बोया॥

समै-हसों तो दाव परखिये, रोवों काजर ढरि जाय।
मनही मन के बूझना, ज्यों काठे घुन खाय॥

रमैनी ६५-हमरा यहै तन जियरा भाई। आस बांध सुन्यमें जाई॥ आसा काल अहेरी आया। तिन मेरे तीनों पुत खाया॥ जहं लग मोर बीज बिस्तारा। तहं लग आसा कीन्ह खवारा॥ केतो चेतावों चेते नाहीं। अचेत पिंड सदा भरमाहीं॥ कहा हमार न मानै कोई। पुरुष अपन आपन मत जोई॥

समै-संसे खायो खेत, केत्र बर लोही भयो। वाय जगतकी रीत, हीरा जर कोयला भयो॥ उपज बिनसमें सब परे, कोई भया न थीर। करता अपन न चीन्हई, कासों कहें कबीर॥

रमैनी ६६-हम ढूंढा यह सब संसारा। कोई न माने कहा हमारा॥ सुन्य सिखरमें मन अरुझाना। सुन्य सेइके सुन्य समाना॥ बिरला बूझै बात हमारी। धोखा न तजे बसे संसारी॥

समै-बहुत मिले बहु भांति, मन अनमिल सब सो रहा।

जाते जियकी पांत, ते जग दुर्लभ पाहुना ॥ जान पूंछ कुंवा न परे, तजा न पुरुष विदेह । कहें कवीर कासों कहूँ जो छोडे झूठ सनेह ॥

रमैनी ६७–चले जात सब रंक औ राया । स्थान रहनको किनहु न पाया ॥ जो समझाऊं समझे न कोई । सुनके वचन वैरी जग होई ॥ मूसाके डर नाच बिलारी । सिह गऊकी करे रखवारी ॥ भैसा न्याव चुकावे भाई । मछरी चढी खजूरपै जाई ॥ केचुआ सरपते कीन्ह सनेहा । घट २ रहा एक पुरुष बिदेहा ॥

समै–रात दिन कछु है नहीं, सुन्य पींजरती है सूवा । कहें कवीर ख्याल यह अटपट, नाहीं जिया न मूवा ॥ जाने नहीं जान जग दीना, जानते भया बिजान । कहैं कवीर बेजानको, अबहुंक परे पहिचान ॥

रमैनी ६८–ग्रह चालको करे बिचारा । पाखंड होय जगत रखवारा ॥ द्वादस रास पृथ्वी परछांई। चौवन अच्छर वसे तेहि आई ॥ रासे रास ग्रह नौ लागे। ग्रह चालमें परे अभागे ॥ गृह-मंदिलकी खबर न पाई । ग्रहन बीच बसे सब भाई ॥ जो देखे सो ग्रहको फंदा । ग्रिहि न देखो को अनंदा ॥ नहिं जानो ग्रह कहांते आया । मोहिं नहि काहू ग्रह बताया ॥

समै–ग्रहन नाहीं पर सब जगत, परे गरहन केरा भाग । मैं नहि जानो पंडित कवे, गरहन ऐहि लाग ॥ चंदा गरहन गरासिया, ऐसे गिरहित लोग । उग्रह होन न पावई, दिन २ बाढे रोग ॥

रमैनी ६ –सुख तजके जग दुख बिसाहीं । आपहिं सुख आपहिं दुखलाहीं ॥ जहां जाय तहं औरहिं रीती ॥ जगकी परी काल सो प्रीती ॥ पंडित मिले ग्रह दशा बतावें। नावत भूत प्रेत सुनावें ॥ ऋषि मुनि कर्म कहें समगाई । वैद्य पित्त कफ बात

बताई ॥ देखव देवी देवत बानी ॥ वात न कछु उन कहिवत जानी ॥

समै–नारायन बैदा भया, रोगी नवा संसार।
राम २ करि पचि मुआ, कीन्ह न अपन विचार ॥

रमैनी ७०–घर सब सोवे कोउ न जागा। रैन चोर घर मूसन लागा ॥ पंडित माते पढ़ें पुराना। ज्ञानी माते कथ २ ज्ञाना ॥ जोगी माते कान फराई। संन्यासी माते जटा बंधाई ॥ जंगम माते घंट बजाया। सेवडा माते दया बताया ॥ अघोर माते मल मुत खाई। भगत माते तिलक लगाई ॥ बैरागी माते सब कछु नासी। जिंदा माते भये उदासी ॥ कामिन माती करी सिंगार। पुरुष माते पढ राम ककहार ॥

समै--मठ अकाश बैठत हैं जोगी, चोरवा मूसे भंडार। वह चोरवाको कोई न चीन्हे, चोरवा ठाढ डुवार ॥ चोरवाको हम चीन्हा, चोरवा हमे न चीन्ह। कहें कवीर वह चोर अपरबल, सबकी वसुधा लीन्ह ॥

रमैनी ७१--चेतन रहे न चोरवा पावे। अचेत पिंड को सदा सतावे ॥ चोरवा एक जुगतते मूसे। चेतन रहे अचेतन विनसे ॥ चोरवाकी बात न जाने कोई। चोर बिडारे सब घर खोई ॥ हम चोरवाको जाननहारे। हम चोरवाते रहें निनारे ॥ जो चोरवाका जाने भेवा। आपुहिं करता आपुहिं देवा ॥

समै--अछै पुरुषका बीज यह, वृच्छ न जाने कोय। ताते चोरवा मूस अब, कछु ओ कहे न होय ॥ आगे हमारे साथ था, अब भा जिवका काल। कह कवीर यह चोरवा चीन्हो, मिटे जीव जंजाल ॥

रमैनी ७२--नैना है पर आंधर भाई । सरवण है पै सुना न जाई ॥ जोगी है पै जुगत बिहूना । बस्ती है पै मंदिल सूना ॥ त्रिया है पै पुरुष न कोई । पुरुष है पै बांह न जोई ॥ पेट तो है पै अन्न न खाई । जीव तो नहीं पै जीवत भाई ॥

समै--पंडित भेद सुनावहू, नहिं तो छांडो गांव ।
मैं पूंछो तोहि पंडिता, निराकार केहि ठांव ॥

रमैनी ७३--कहो पंडित हो मोहि समुझाई । जात बरन कुल कहांते आई ॥ कौन मते भाइ बहिन कहावे । कौन मते ब्याहले आवे ॥ कौन मते सुद्रा ब्रह्मानी । कौन मते वैश्या क्षत्रानी ॥ पाँच तत्त्वका एके भेला । ता संग भयो जीवको मेला ॥ रक्त माँस हाड़ इक गूदा । तिनमें कौन ब्राह्मण सुद्रा । वही नार वही पुरुष बियाई । बिंद चौराय सुपचकी लाई ॥ तब वह केहिकी भई नारी । को भय पूत कहु पंडित विचारी ॥

समै--पंच तत्त्व हम जानत, और न जानत कोइ ।
हमरा भेद जो पावे, तब वह अस्थिर होय ॥

समै--दो संयोग जग भीतरे, कंथ भामिनि नेह । अष्ट धातका युगल तन, एक प्राण दो देह ॥ पढ पोथी भटका मारत, घटकी जानत नाहिं । कह कवीर जो घट लखे, तो फिर घटही माहिं ॥

रमैनी ७४--जोइ नरक सोइ सरग विचारा । जो पृथ्वी सोई पतारा ॥ जो है घट सोई ब्रह्मण्डा । सोई छिद्रम छांनबे पाखंडा ॥ जोइ पुरुष सोई भइ नारी । जोइ पिता सोइ महतारी ॥ जोई गुन अवगुन है सोई । जोई पाप पुन्य है सोई ॥ जोइ निराकार सोई अकारा । जो मारे सोइ पालनहारा ॥ जो खाये सोई ना खाई । राय जोई सोइ रंक कहाई ॥

समै--नरक सरग कोइ और है, करताके नहिं काम।
सुन कहानी तोसों कहों, ऐसे कैसे राम॥

रमैनी ७५--पहले माया फिर आमाया। तमते फिर सुभाव ठहराया॥ सुभावते फिर भया अकासा। अकासते वायु कीन्ह प्रकासा॥ वायु ते अगिन अगिन ते तूवा। तुवा ते पृथ्वी औषध हुआ॥ औषद ते अन्न अन्न ते पुरखा। पंडित जानत और सब मुरखा॥

समै--कहो पंडित कछु न हता, केहिते भया अकार। कहें कवीर कैसे रचा, कहो प्रगट बिचार॥ पांच तत्त्व गुन तीन जो, जियरा तिहि संयोग। संजोगे सब कुछ भया, झूठे बोलत लोग॥ पांचोका भेला पडा, प्रान वसे ता माहिं। कहें कवीर भेला छुटे, फिर यह जियरा नाहिं॥

रमैनी ७६--अवस्था चार मुकति भई भाई। जाग्रित स्वप्न सुषोपति आई॥ तुरिया भई तब ब्रह्म समाना। मेटा फिर उन आवन जाना॥ सालोक सारूप औ भया साजुजा। सामीप भया तब जोत प्रदिजा॥ ज्ञान प्रदीप जबे कछु होई। जोतमें जोत मिले तब कोई॥ चार अवस्था पर जब आई। चार मुकति ले सुन्य समाई॥

समै-सुन्यको होती सब कहो, जहां सुन्य तहां नाहिं।
मुकत अवस्था कुछ नहीं, जिव पर संशय माहिं॥
चार चौकडी संशय गई, संशय तऊ न छूट।
कहें कवीर सोई ब्रह्मज्ञानी, क्या कहूं वैकुण्ठ॥

रमैनी ७७-जीव मुकत निराधार कहाया। पसन मध्यमा बैखरी माया॥ दोनों कीन है दोय शरीरा। ना माया पांच धरे कवीरा॥ ऊपर सोवे वासना बासे। दोऊ शरीरका सोई बिनासे॥

पांच तत्त्वका जात है सोई । नौ तत्त्वका जो राखे कोई ॥ तन छूटे तेहि माहिं समाई । दोहरा नौतम कैसे पाई ॥

समै-कुम्भ भरा जो फूटे, दूसरे में क्यों जाय ।
कहे कबीर सुनो ब्रह्मज्ञानी, कैसे अंत जीव समाय ॥
जीव न अंते जात है, जैसे घटको नीर ।
यह शरीर घट जीवको, समझाय कहें कबीर ॥
सो गुन कबहुं न बीसरे, जो गुन होत शरीर ।
मन भरमत चौरासी, कहहिं पुकार कबीर ॥
स्वेत कृष्ण जिय पीयरा, हरा लाल जिय जान ।
पांच तत्त्वके रंग रंगो, पांचोंको पहिचान ॥

रमैनी ७८-नेम धरम पूजा लपटाना । ज्ञान कथा अस्थान न जाना ॥ अस्थान भङ्ग देखे सब कोई । अस्थान लखे बिन थित न होई ॥ रिषि औ मुनि अस्थान न भाषे । प्रेम धाम अस्थान सो राखे ॥ कथा कवित्त बहुत कुछ गाया । करताका अस्थान न पाया ॥

समै-पांच तत्त्व अस्थान निज, इनहिं बिहूना नाहिं ।
कहें कबीर बूझो ब्रह्मज्ञानी, जनि पर संशय माहिं ॥

रमैनी ७९-तीरथ व्रत रहा लौ लाई । देव दिवाले देव मनाई ॥ पितरके नाम सराध करावे । आपहिं नरक सरग ले जावे ॥ बिनती करके देये मयारू । अबकी बार प्रभु मोहि त्यारू ॥ कहे गुरू मोहिं पार लगाई । ताते गुरुवा मंत्र लियो भाई ॥ गुरु मंत्र लीना जिव जानी । गुरु शिष्यकी न त्रिषा बुझानी ॥ घर २ होय निरगुनकी सेवा । निरगुन मंत्र दियो गुरुदेवा ॥

समै-सिक्ख समाना गुरूमें, निजके लागा नेह । बिलगाये बिलगे नहीं, एक परान दो देह ॥

रमैनी ८०-षट दरशन सुनु बात हमारी। आपन आपन मत कीन निनारी ॥ हरि ब्रह्मा ते कछू न भेवा। भिन्न भिन्न करु काकी सेवा ॥ सब पंडित मिल रहो बिचारी। हरि ब्रह्मा किनके त्रिपुरारी ॥ पिताका कोई खोज न पावे। बिन करता निरगुन बतलावे ॥ पिता नाल का दुर मन आना। भिन्न भिन्न करि भिन्न समाना ॥

समै-प्राण तत्त्वको दुख नहीं, अस्थानेका दोष। कहें कवीर समझ जिय अपने, दूसरका नहीं भरोस ॥ सिंह चले हर माहीं, सीगट बोवे धान। कहें कवीर यह बड़ा अचंभा, छागल भयल किसान।

रमैनी ८१-प्राण अपान व्यान उदाना। पांच वायु यह सहत समाना ॥ श्रवणनेत्र औ रुधिर तुचाया। सर्व अंगका होम कराया ॥ विजिया होम अपनका कीन्हा। परव्रित छोड निरव्रित लीन्हा ॥ निरव्रित भया ब्रह्म लोके जाई। बहुर परव्रिति न कबहूं आई ॥ अपनासे निरगुन ठहरावे। सो ज्ञानी ब्रह्मलोकहिं जावे ॥

समै-निरगुन ठहरा सुन्यमें, आपा डारा खोय। कहो ज्ञानी तोसो कहों, सो मिट कैसे होय ॥ ज्ञानी बूझो आपको, अस्थान बूझले थीत। कहें कवीर नैनन दिसे, ताकी करो प्रतीत ॥

रमैनी ८२-सेवत सुन्य दुख सूना होई। ज्ञानस्वरूपी सिष्टिमें जोई ॥ मान अपमान न वाके भाई। पारब्रह्ममें रहा समाई ॥ वाको मुक्तिकी नाहीं संसा। वह तो सुन्य नगरके हंसा ॥ ज्ञान विज्ञान त्रिपित वह भयऊ। इंद्रिन जीत पार होय गयऊ ॥ सब इंद्रिनको वह बस लाया। आपा खोय निरगुन ठहराया ॥ भौसागर सो उतरा पारा। फिर न आया यहि संसारा ॥

समै-जो चेतन तेहि सब कछु ब्यापे, जड़को व्याप न होय॥
कहँ कवीर बातें यह झूठी, माने वचन न कोय ॥

रमैनी ८३-चलो जांय बसें वही गाऊं। सुन्य शिखर है वाको नाऊं॥ पाप न पुन्य दिवस न राती। सुख न दुख न जात न पाती॥ मुनी ऋषीसुर नहिं देवा। स्वामी सेवक नाहीं सेवा॥ गुन नहिं कर्म बृच्छ नहिं बेला। तुरुक न हिन्दू गुरू न चेला॥ भूख न प्यास पीवे न पानी। राव न रंक नहीं रजधानी॥ बेद न भेद श्रवन न कोई। अनेक न भेष पुरुष न जोई॥ माया मोह न छै मद कोई। निराकार निरगुन है सोई॥ तहां जाय कीने बिसरामा। चलो विगत जै भर्म मुकामा॥

समै-निराकार निरगुन है करता, बाके रूप न रेख। तुम कैसे वही मिलिहौ, समझावो करी विवेक॥ रूप न रेखा निरगुन है साहेब, जब नाहीं वहि देश। वहिके वरण तुमहू होइ जैहौ, बहुरि न मिले संदेश॥ वहां न जावो रहो यहि देसवा, मानो कहा हमार। कहँ कवीर वह झूट संदेसवा, यह सुखका दरबार॥

रमैनी ८४-ब्रह्मपुरी एक ब्रह्म बनाई। प्रेम वियोग तहां नहिं भाई॥ ब्रह्मा विष्णु महेश्वर देवा। वेद विरंचि करें तेहि सेवा॥ सनकादिक औ जनक विदेही। और लच्छमी और ब्रह्मा सनेही॥ द्वादस भक्ता सिद्ध चौरासी। नौ नाथ ऋषि सहस अठासी॥ गण गंध्रब औ किन्नर भाई। जच्छ देव मिल केल कराई॥ चलो जांय बसें वहि देसा॥ भौसागरका न मिले संदेसा॥

समै-पंडित मोही ले चलो, जौन देश वह लोग। ढूँढत मोहि भये जुग चारी, मिटा न परम वियोग॥ सबहीं गये ये हमरे, अविनासीके गाम। कह कवीर करता तुम बूझो, लेव न वाको नाम॥ एक समय हम गये वहि देसवा, वहां मिला ना कोय। बूझ अस्थान गहो जो ज्ञानी, उपज बिनस नहिं होय॥

रमैनी ८५—सुन्य नगर चल देखो आई। जेहि कौतुक मन रहा ठहराई॥ कोट चन्द्रका उदे तहँ होई। कोट भान तहँ तपते सोई॥ कोट ब्रह्मा तहँ पढते वेदा। कोट विष्णु तहँ कहेते भेदा॥ कोट संकर तहं करते सेवा। कर जोरे तैंतीसो देवा॥ कोट भवानी ठाढी द्वारा। कोट धरमराय करत बिचारा॥ कोट राम तहं ठाढे रहहीं॥ कोट कृष्ण कथा तहँ कहहीं॥ कोटिन अनहद बाजे बाजा। पार ब्रह्म तह करे सु राजा॥

समै-चल ज्ञाती मैं चलिहो, यह कोतक जेहि देस।
मेरे जिय एक अचंभा, पार ब्रह्म केहि भेस॥

रमैनी ८६—मारकंडे मरे न भाई। धरती अकास दुनी सब जाई॥ होय अलोप जावे रवि चंदा। अच्छै वृच्छ पर बाल-मुकन्दा॥ दस आंगुल पुरुष होय जोई। तीन लोक जेहि जाय समोई॥ विस्नू सोवें जगें भवानी। नाभि तै ब्रह्मा सुनो ब्रह्म-ज्ञानी॥ मुखने ब्राह्मण भुजा ते छत्री। उदरते वैश्य पगते सुद्री॥ चार ऊपर चौंसठ फिर जाती। सगरी सृष्टि भई यह भांती॥

समै-मैं तोहि पूछों पंडित, तुमहू थे वहि पास। जो यह विधि समझावत, कह कछु वेद औ ब्यास॥ अस पंडित कथ भाषत हम, नाहीं जानत भेद। ब्रह्मा कही ताते हम जानी, सबहिं बतावत वेद॥ वेद ब्रह्मा कहा भवानी, ब्रह्मा कीन्हा ग्रंथ। कहें कवीर करता नहीं, भाषो मायाका यह पंथ॥

रमैनी ८७—दो पच्छ सृष्टि २ की खानी। दोनों पच्छ बूझो ब्रह्मज्ञानी॥ एक मास दो पच्छ है भाई॥ पाप पुन्य दो रहे ठहराई॥ पिता पुत्र गुरू औ चेला। स्त्री पुरुष वृच्छ औ बेला॥ दिन औ रात सूर चंदा। गगन औ धरनि स्वामी औबंदा॥

समै-एक पच्छ अस्थान भंग है, एक लीन्हे अस्थान।
कहें कवीर सुनो ब्रह्मज्ञानी, सो अस्थाने जान॥

रमैनी ८८-सुन्य नगर जाको वार न पारा। इक्कीस सरग ब्रह्मंड अपारा॥ बचन मोर तुम सुनु तिर देवा। आद पुरातम-को यह भेवा॥ ररंकार धुन निरगुन होई। जोग रस कर देखे कोई॥ वाहीकी हम हैं बहुत पियारी। तुम्हरे कारन भई निनारी॥ तुम ना जानो पिताका भेवा। पिता का समझो तुम त्रिय देवा। यह भौसागर महा बिकरारा॥ समझ पुत्र तुम होहु निनारा॥ ध्यान धरो तुम तीनों भाई। सुन्य नगर तुम रहो समाई॥

समै-वहां नहीं पिता तुम्हारो, हम हैं पिता तुम्हार। वे नारी हम उनके पुरुष, बिच राखा निरंकार। माता कहा सोई हम मानत, तुम्हरी झूठी बात। प्रथमे माय हमारी सेवा, जाका यह विस्तार॥

रमैनी ८९-निरगुन पुरुष पुजावे देवा। आवो माता करें हम सेवा॥ माता कहो हमे समझाई। कौन पुरुष ते ध्यान लगाई॥ जो तुम कहो सोई हम जानी। और का कहा न कबहूं मानी॥ लौट माता पुत्रन समझावे। निराकार निरगुन बतलावे॥ हमें मेट ठहरावे देवा। आदि कथाका कहें न भेवा॥

समै-हमे दुराय ठहरावें धोखा, ऐसी त्रिया अनखान।
कहें कवीर मानों त्रिदेवा, माताकी पहिचान॥

रमैनी ९०-हम बूझें ब्रह्मा ते कहानी। कहो का कहा आन भवानी॥ लौट ब्रह्मा निज कहें कहानी। माता बचन निरगुन हम जानी॥ नीरी कोइ न वह सनेहा। पांच तत्त्वकी धरे न देहा॥ निहतत्त्व निरगुण निराकारा। निहकामी बहै वार न पारा॥ बरन न मेख न पीवे न खाई। कर्म रहा सब जग ठहराई॥ वह निहकर्मी त्रिगुन ते न्यारा। गगन मंडल हम देखत अपारा॥

समै-निहततसे कैसे तत्त्व भया, निरगुनते गुणवंत। निहकर्म ते कैसे कर्म भया, कहो समझ व्रितंत॥ रूप रेख वाके कछु नहीं, कैसे आवे ध्यान। कहें कवीर अबहूं क्यों न चेतो, कहा हमारा मान॥

रमैनी ९१-नारद मुनि यह कथा सुनाई। एक समय बैकुंठ गया भाई॥ गदा चक्र पीताम्बर काछे। लच्छमी ठाढी बिस्नुके पाछे॥ तब हम बचन कहे दोय चारी। लौट बिस्नु कछु कहा बिचारी॥ काठ पषाण न तिरथ देवाले। अगिन पवनके नाहिं बिचाले॥ भगत भागवत साधु अस्थाना। तहां बसत मैं सत यह ज्ञाना॥ त्रिभुवन नाथ है त्रिभुवन स्वामी। घट २ रहे निरंतर यामी॥

समै-कौनकी भक्ति करो तुम भाई, को बैकुंठ कहां बस सोय।
कहें कवीर झूठ क्यों भाषा, झूठा सब ना होय॥
तहिया हरि नित मिलत थे, अब क्यों रहे छिपाय।
अब कोइ क्यों बा जावे, ना वह कहे बुझाय॥

रमैनी ९२-ब्रह्मलोक शिवलोक अपारा। विष्णुलोक बैकुंठ द्वारा॥ स्वर्गलोक गौलोक है भाई। इंद्रलोक चंद्रलोक कहाई॥ यक्षलोक देवलोक बताया। महरलोक यमलोक दिखाया॥ अंतरिच्छे एक लोक ब्रह्मंडा। छ दरशन छयानवे पखंडा॥ जेहि २ लोक्की आसा लाई। तौन लोक लोग बहे जाई॥ निरगुण झर कोई लख पावे। सुन्यलोक सोइ जाय समावे॥

समै-चार जुग जात हम देखा, काहु न कहा संदेश।
जैसे देश सुन्य हम जानत, जो वह ऐसा देश॥
बात न कहत २ जिव दीन्ही, लोका लोक न चीन्ह।
कहें कवीर बिना वह देखे, आपन जीव जग दीन्ह॥

लोकालोक अकाश नहिं, झूठे लोका लोक।
कहें कवीर आस जिन बांधो, छांडो जीका सोक ॥

रमैनी ९३–सुन पंडित तैं बचन हमारा। करता सबका सिरजन हारा ॥ कंथ भामिनी कंथ सनेहा। पिताको रूप पिताको देहा ॥ माताको रुधिर पिताको नीरू। दो संयोग मिल धरो शरीरू ॥ पांच तत्त्व गुन तिनके संगा। अष्टधात के जिव रंग रंगा ॥ माटी ते उपज अबहुं किन होई। कारण कौन पुरुष संग जोई॥ मनसा शब्दका होय अकारा। तजो कंथ भामिनि ब्योहारा॥

समै–ब्रह्म कुलाल हर जग मट्टी, रुधिर करे सिंगार।
मानसिक रचना जग रचा, पंडित कहो बिचार ॥
प्रथम उतपत मानसी, फिर भय पुरुष औ जोय।
कहे कवीर सृष्टिक सबकी, बिरला बूझे कोय ॥
तेहि नारी घर मबके, चार बरण जग कीन।
तेरह ते तेरह भई खानी, वेद साख अस दीन ॥

रमैनी ९४–कर्म बस ब्रह्मा पिंड संवारा। करम बस विस्नू पाले संसारा॥ कर्म बस रुद्र करे संहारा। कर्म बस विष्णु लेंय औतारा ॥ कर्म बस चंद्र सूर्य भरमाना। कर्म बस नारद भोग अस्थाना॥ कर्म बस रावण औ गये कंसा। कर्म बस रुघर भये निरवंसा ॥ कर्म बस मरा सकल संसारा। करता करम करम बिस्तारा ॥

समै–करता ते कर्म निहकर्म ते कर्ता, झूठा कर्म सनेह।
कहें कवीर जैसा पड़ा मेला, तैसा जगत करेह ॥

रमैनी ९५–ब्रह्म पाडी सबकी बांटा। सबे लगे अस औघट घाटा॥ पांच देवका थापना कीन्हा। चारों वेद मंत्र लिख दीन्हा॥ देव पांचकी कीन्हा सेवा। तैंतिस कोट और किय देवा॥ तिनहुं

कीन्ह सेवा बहु भाई । अगम अगोचर रहा समाई ॥ कोई ब्रह्म रहा लौ लाई । कोई सुन्यमें रहा समाई ॥ कोई बैठा आसन मारी। कोई ध्यान धर लाया तारी॥ कोई सक्ति ठहरावत माया। कोई सूरज ते ध्यान लगाया ॥ और जो तैंतीसो क्रोरी । सब जग सेवा करें कर जोरी ॥

समै–बिव अक्षर माया जन भाषो, ताते रचो सतंत ।
चार वेद षट दरसन, बुध बल नित निचंत ॥
ग्रंथ रचा गुण कर्म लगाया, नरक सरग विस्तार ।
कहैं कवीर करता नहिं चीन्हो, ये उरले व्योहार ॥

रमैनी ९६–गनपत विष्णु महेश्वर देवा। सूर्य भवानी तिनकी सेवा॥ कर स्नान पवित्र होय आया। चौका करि आसन बिछाया॥ चंदन गार तिलक कियो छापा। देव नहवाय करन लग जापा॥ चंदन घस नैवेद चढाई। पुष्प सुगंध अर्पन कियो भाई॥ अगम अगोचर ध्यान लगाया। कर आवाहन सर्गते बोलाया॥ दो कर जोरके विनती कराई। कीन सुमरण जन दीन पठाई ॥

समै–देव न देखा सेवको, सेवक देव न दीख ।
कहैं कवीर मरे ते देखो, यही गुरू दइ सीख ॥
तेरी गति तैं जाने देवा, हममें सामरथ नाहिं ।
कहैं कवीर यह भूल सबनकी, सब पर संशय माहिं ॥

रमैनी ९७–ज्ञान गूदरी गुरू बिछाई। हरी आसन पर बैठे आई॥ तिलक छाप कंठी औ माला। बैठे आप धर रूप गोपाला॥ मूड़ मुड़ाय मुडियनमें आया। भगत कहाय महंत कहाया॥ मूड मुडाय गुरू होय खेला। नर नारी सब कीन्हे चेला॥ मूड मुड़ाय महंत कहाया। प्रन उपान उपदेश कराया॥ चोला पहरा सेल्ही डारी। टोपी देके पाग उतारी ॥

समै-जेई पान पनवारिया, तेई तम्बोली हाट ।
तेई पान गुरुवा दीन्हा, लायसि औघट घाट ॥
औघट घाटी नर गया, गुरुवाके उपदेश ।
कहैं कबीर कोउ नाही लावे, उनका बहुर संदेश ॥

रमैनी ९८-षट दरशन मिल देखे संदेसा । कोइ न रूप करताके भेसा ॥ हता अकेलकी हता वहि नारी । अकाश हताकी हता संसारी ॥ गृहस्थ हताकी हता बैरागी । गुनवंत हताकी हता गुन त्यागी ॥ सुखी हताकी हता दुखि भाई । देह धरेका बिदेह कहाई ॥ ब्रह्मा विष्णु महेश्वर देवा । संयोग बियोग कहो यह भेवा ॥

समै-निरगुन पुरुष निरंतर देवा, निराकार है सेव ।
यहि बानमें वह नाहीं, बिरला बूझे भेव ॥
पांच तत्त्व गुन तीन धरि, सब गुन धरे शरीर ।
प्रत्यक्ष जगतमें देत दिखावा, कहहिं पुकार कबीर ॥

रमैनी ९९-जप तप पूजा मंत्र बताया । सुन्य मण्डलमें मन ठहराया ॥ पूजा करत करत गये हारी । जोग जुगति ले आसन मारी ॥ संध्या तर्पण आरति गावें । देव न रीझे देव मनावें ॥ जो धंधा नित मन बस भाई । स्वप्ने सूझे धंधा आई ॥ जेहि धंधामें जीव लगाया । अंतकाल तेहि धंध समाया ॥

समै-जप तप दीखा थोथरा, तीरथ बरत बिस्वास ।
सुवना सेम्हर सेइके, उड़ फिर चला निरास ॥
सुवना सेम्हर सेइके, बैठा पलासे जाय ।
चोंच टकोरे सिर धुने, वो उसही का भाय ॥

रमैनी १००-पांच तत्त्व नहिं त्रिगुन देवा । चंद्र न सूर वेद न भेवा ॥ पाप न पुण्य पुरुष न जोई । अस्थान भंग जोहै कर्ता न

कोई ॥ तेहि घर कर्ताको ठहराया। जो नाहीं कछु तासों लौ लाया॥ अगम अगोचर सिरजन हारा। रूप न रेखा वार न पारा॥

समै-सुमरन सुरतिकी गम नहीं, बहुत बिकट वह पंथ।
सुरति निरति तहवाँ नहि पहुँचे, अस कथि भापत ग्रंथ॥

रमैनी १०१-षट दरशन सुनो बात हमारी। छिनमें पुरुष वह छिनमें नारी॥ छिनमें तरुन छिनमें बाला। छिनहि दयाल छिनहि होय काला॥ छिन सुच्छम छिन होय अस्थूला। यह गुण देख जगत सब भूला॥ चंचल चपलकी खबर न पाई। यह वह रूप ठग जग आई। यहीके छंद भूला सब कोई॥ गति नहि पाई पुरुष औ जोई।

समै-मनहरवा नगरवा, घट घट रहा समोई।
यह तो काम नाहीं करताकै, बिरला बूझे कोई॥
जो बूझे सो थीर है, बिन बूझे भरमाय।
कह कवीर एक बूझे बिन, चले रंक औ राय॥

रमैनी १०२-जगत पुजेरी बिस्नु सो देवा। सब कोइ करे बिस्नुकी सेवा॥ प्रथम बिरंच सेव चितलाई। फेर रुद्र ध्यान लगाई॥ सनक सनंदन नारद सेसा। सुखदेव नारद व्यास गनेसा॥ दत्रात्रय जनक विदेही। पारासर आदिक विस्नु सनेही॥ इनहिं देख सब जग भरमाना। करता आपन नाहीं जाना॥

समै-षट दरशन तहवाँ चले, जहां न ससि औ भान।
प्रेमधाम वैकुंठ बिस्नु को, कथत ज्ञान विज्ञान॥
चलते चलते धाम गा, वहां ते फिरा निरास।
कहे कवीर बिस्नु ना मिला, सेवा करत निरास॥

रमैनी १०३-सेवा करत गये जुग चारी। सेवा करत गये नरनारी॥ सेवा करत गये तिर देवा। सेवा कीन्ह लखा नहिं

सेवा ॥ सेवा करत गये औतारा । सेवा करत गये संसारा ॥ षट दरशन सेवा चितलाई । सेवा का कछु भेद न पाई ॥ सेवा पूजा रहा लौलाई । सेवा लेके सुन्न समाई ॥

समै-स्वामी ते दरशन नाहीं, सेवक सेवा लाग ।
कहे कवीर पृथ्वि यह मरगई, हरि ही के बैराग ॥
जीवत मिलना नहिं होय ज्ञानी, मरे न होय सनेह ।
कहे कवीर मिले हरि भाई, जो ना होय बिदेह ॥

रमैनी १०४-छूँछा भरा भरा ढरकाना । आपहि में जग आप हिराना ॥ सात सरग पर सुन्य एक पोरी । तहां बसे छतिसो कोरी ॥ सुन्य नगर जहँ बसे न कोई । बसन चले तहँ पुरुष औ जोई ॥ ऊजर बसि भई वस्ति उजारी । वस्ती छोड चले नरनारी ॥ सुर औ नर मुनि बसे सब कोई । उजर बसेकी खबर न होई ॥ सुन्यकी धुन सुन जगत समाना । क्या पंडित क्या चतुर सयाना ॥

समै-जहां न वस्ती सो बसा, बस्ती भई उजार ।
सुर नर मुनि सब गये बिगूचे, कहें कवीर पुकार ॥
सहर बसंता छोडके, उजर बसाया गांव ।
ना वह बस ना ऊजरा, भया बसेका नांव ॥

रमैनी १०५-सुतके घर माता पटरानी । तुम किन बूझो पंडित ज्ञानी ॥ बिन पुरुष उन तिरगुण जाये । होय जोइ तीनों सुत खाये ॥ यह संसार जीते औ हारे । इन पापिन सब जगहिं संहारे ॥ तिरगुन गये जात नहिं जाने । राजा रंक सब गये सयाने ॥ जोगी जपी तपी संन्यासी । मुंडित चुंडित बैराग उदासी ॥ सुन्य नगरकी राखे आसा । ररंकार धुन कीन बिनासा ॥

समै-अगनी पानी खाइया, अंतर पटको पाय ।
यों जगको माताने खाया, जियरा गया हेराय ॥

अगिन बुझानी बुझ गई, दूध बिनासा घीव।
कहें कवीर इन आस ने, ऐसा बिनासा जीव॥

रमैनी १०६-पुरुष आदिकी नारी माया। तिन नारी पुरुष दोय जाया॥ एक बसा जहां बसे न कोई। एक दुनियामें सब कहुं होई॥ और तीन गुण जन्मे भाई। उन फिर चार बरन उपजाई॥ उन फिर जंत्र मंत्र किया पूजा। जोत निरंजन और न दूजा॥ उन फिर नाटक चेटक कीन्हा। निरगुन मंत्र पाट लिख दीन्हा॥ उन फिर जप औ तप अनुसारा। नेम धर्म तीरथ व्रत न्यारा॥ सब संसार परा इन माहीं। करता पुरुष लखो है नाहीं॥

समै-कहा हमार न माने कोई, इनको कहो परवान।
ये जिव चल धोखे मिला, मिट गया जीव निदान॥

रमैनी १०७-हम करता हम सबके सही। चार युग हम सत्ते कही॥ कोइ न माने कहा हमारा। मैं जगते कहि कहि हारा॥ जो कछु माया दिया उपदेसा। सोई उपनिषद दिया संदेसा॥ जो कछु वेद पाठ लिखवाया। सब जीवन तासो लौ लाया॥ एक होय तो कहि समझाऊं। सकल रिषि ते कहा कराऊं॥ जो नाहीं तासो लौ लाया। जौ है ताको सबै मिटाया॥

समै-जहां पवन नहिं संचरे, रबि ससि उदय न होय।
कहें कवीर जहां हरि नहीं, तहां जात सब कोय॥

रमैनी १०८-नगर एक बसें दोय नारी। सब जीवन डहकावनहारी॥ इनते हारे तपी मुनि देवा। इनका कोई लखा न भेवा॥ इन लीना जीवनको खाई। इनको जीते बिरला भाई॥ गण गंध्रब मुनि बचा न कोई। इनको जाने ज्ञानी सोई॥

समै-बीच ते आई दोय नारी, बीचे कीन अकाज।
कहें कवीर दोनों जग लूटा, यह करताको साज॥

जहां बसें ये दोनों नारी, तहां नहीं बिश्राम ।
कहें कबीर इनको संग छाड़ो, यही तुम्हारो काम ॥

रमैनी १०९—षट दरशन सुनो चितलाई । करताके गुण चेतो भाई ॥ दयावंत शीतल मुख बैना । धर्मसरूप सदा सुख चैना ॥ निहकर्मी निरद्वंद सुधर्मी । सदा संतोषी कर्म सुकर्मी ॥ सब जीवनकी करे नित चिंता । मतबादी धीरज अतिवंता ॥ सदा अनंद धीरज दुख संसा । कोमल बचन सरब गुण हंसा ॥ चेतन सदा सरब कछु सूझे । परगट गुपुत सब ज्ञाने बूझे ॥

समै—अनखाया खानीको पीवे, देखे सुने हजूर ।
नख सिखते पूरण बना, तासो कहत जग दूर ॥
सब गुन भरा सृष्टिका करता, निरगुन कहो न कोय ।
कहें कबीर प्रगट जग भीतर, भर्मत पुरुष औ जोय ॥

रमैनी ११०—षट दरशन सुनो बचन हमारा । उनके गुन हैं अगम अपारा ॥ मिथ्या बचन संसा विपरीता । खज अखजसे बहुत प्रतीता ॥ निर्दया अमती अकर्मा । सदा अधीरज सदा अधर्मा ॥ कामवंत तामसकी खानी । नाटक चेटक अगगमठानी ॥ सदा निलज्ज दयामें हीना । छल औ छिद्र महा प्रवीना ॥ चञ्चल चपल निरमती माया । अधिक गिरामनी सब जग खाया ॥

समै—सुर नर मुनि पशु पंछी मारत, डार आपने जाल ।
कहें कबीर यह महा अपर्बल, बिरले बांचे बिचार ॥

रमैनी १११—करता सबका सिरजनहारा । जान बूझके होते न्यारा ॥ जलगी सदा जलहिंमें रहते । उडरान सदा जल मध्य दिखते ॥ जलगीरी पकड जाल जब आये । जब जलगीरी यहै सब चितलाये ॥ हम जानीकी साथ हमारे । अब हम जाना हते

निनारे ॥ ज्यों कंवला जल परसत नाहीं । त्यों साधू रहते जग माहीं ॥

समै–जग बांधा जंजीर कर्मके, छूटा नाहीं कोई ।
कहें कबीर बंधा नहीं, साध जानिये सोई ॥

रमैनी ११२–गुरुवा सिधु राम कहाई । इन संसार ठगा सब भाई ॥ बैठ एकंत पाखंड बताया । निरगुन सरगुन दोय भेद बताया॥ निरालम्ब आलम्ब न सांगा । कहें जलाते हम बितरागा॥ अंतर भरम मिटे नहीं भाई । निसदिन रहो निरंकार समाई ॥ सब जग मिलके सीस नवावे । तब गुरुवा एक बचन सुनावे ॥ यहि जगते हरि रहा निनारा । बिरला कोई बूझन हारा ॥ ब्रह्मा विस्नु महेश्वर देवा । तिनहू लखा नहीं यह भेवा॥ ऐसा बचन कह जग भरमाया । यहि गुरुवाका भेद न पाया ॥

समै–रामनगर गुरुवा बसा, माया नगर संसार ।
कहँ कबीर यहि दो नगरते, बिरले बचे बिचार ॥
पाप पुन्य गुरू कर्म हरि, बैकुंठ लोक निजधाम ।
ये तो सब ऊपर परे, बूझो आतमराम ॥

रमैनी ११३–जात पांत तज मूँड़ मुँडाया । तिलक छाप दे भगत कहाया ॥ मूँड मुँडाय गुरू होय खेला । नर नारी सब कीन्ही चेला ॥ भये महंत सिखापन कीन्हा । निरगुण मंत्र पाट लिख दीन्हा ॥ सेवा पूजा बहुत बताई । तन मन धन लीन्हो अरपाई॥ करताको अकरता बतलाया । अकरता सो करता लौ लाया ॥

समै–करता ते यहि भयो अकरता, गुरुवाके उपदेश ।
कविरा कोइ लावे नहीं, करता केर संदेस ॥

रमैनी ११४–जो ब्रह्माको दियो संदेसा । सो बिरंच गुरु दियो उपदेसा॥ धाती चौका मंत्र असनाना । फूलसूं भूषण देव रचाना॥

काष्ट पषाण धात ले आये। तिनकी प्रतिमा आप बनाये॥ गुरू होय फिर चेला होई। पूजे प्रतिमा पुरुष औ जोई॥ धातू पूजे धात होय भाई। पषाण पूजे पषाण होय भाई॥ जलके पूजे जल होय जाई। अगिनौ पूजे अगिन समाई॥

समै-रमता रामे छोड़के, जो पूजे पाषाण।
तिन करता नहिं चीन्हिया, अंत पषाण समान॥
जैसा गुरू सिखापना, सिक्ख चला सोइ चाल।
कबिरा इन सब खोइया, वे सब भये निहाल॥

रमैनी ११५—कहो पंडित जो आहि अकरता। तो कैसे भयो जगतका करता॥ कर नाहीं कैसे जग कीन्हा। रसना नहीं कैसे रस लीन्हा॥ पांव नहीं कैसे कहिं जाई। उदर नहीं कैसे कुछ खाई॥ सरवन नहीं कैसेक सुनाई। हिया नहीं कैसेक गुनाई॥ नैन नहीं देखत कैसाही। जीव नहीं कस जीवत गोंसाई॥

समै-जाके पंडित प्रान है, जग कीन्हो बिस्तार।
जो रूप धरे करता अहै, ताको कौन निनार॥
जो करता तेहि नहिं सेवे, यह लोगोंकी बूझ।
कह कबीर आरसीं अंदर, परा अंधेरे सूझ॥

रमैनी ११६ हता आप दूजा परमाना। देख आपको आप भुलाना॥ उझका सिह कूपमें जाई। कांच मंदिलमें स्वान घहराई॥ फटिक सिलामें जग अरुझाना। प्रतिबिंब देख आप भरमाना॥ हता आप दूजा ठहराया। आप तजि दूसर लौ लाया॥ यह तन जीव अकारथ खोया। यह नर चरित्र देखके रोया॥

समै-समाधि लाय सब जग बैठा, चला संग ले प्रान।
कबिरा तब भ्रम ऊपजा, देखा और निसान॥

रमैनी ११७-संग बूझो तुम आपन योगी। संग बूझे बिन भयल बियोगी॥ संग बूझे बिन चढो लै प्राना। घर आपनमें देखु निदाना॥ पांचवाँ ले चढे अकाशा। कहु जोगी क्या होय तमासा॥ सुखमन घाट उतर जब जाई। ब्रह्मंड प्राण ले रहा ठहराई॥ कछु एक दिन तुम वहां खराने। आपन मढी ले आप उड़ाने॥ टूटी डोर चले पंच प्राना। ढूँढत ढूँढत आप हिराना॥

समै-बूझो जोगी आपको, बूझब सो यह देश।
कह कबीर न जाय न ऐवै, बहुर न मिल संदेस॥
बहुत गये सो कोइ न आया, कासो पूछो बात।
कहें कबीर बिना हरि परचे, सकल सृष्टि बही जात॥

रमैनी ११८-समझो योगी आपन भेसा। छोड़ नगर यह चले केहि देसा॥ पूरक कुंभक रेचक पौना। सोहं साथ चले कर गौना॥ दस नारी तज सुखमन घाटा। सहस्रदल पंकज बैठ निराटा॥ अनहद सुन प्रतीत जिय आई। ररंकार धुन दीन सुनाई॥ आप देख दूजा कर माना। चक्र बेध त्रिभुवनको जाना॥

समै-खलबल पड जोगी नगर, छोड़ चला जब गांव।
तेतिस आप रहे न्यारे, सुन्न पडा सब ठांव॥

रमैनी ११९-पंच मुद्राका आसन कीन्हा। जोग जुगत करि निरगुन चीन्हा॥ त्रिबेनी घाट उतर जब गयऊ। प्रतिबिम्बका दरशन भयऊ॥ बाजा बाजे अनहद बानी। कुंडलनी सकती तहां पटरानी॥ धरनि अकासते लागी डोरी। चला दिसंतर होर बहोरी॥ पंच चार तज बैठ निराटा। योगी उतरा अजपा घाटा॥ सोहं तजि मन धर निरबाना। सुन्य नगरजी आय तुलाना॥

समै-खालि देखके भर्म भय, ढूंढ फिरा चहुं देस।
ढूंढत ढूंढत मर गया, मिला न निरगुण भेस॥

बूझ आपको थिर रहे, योगी अमर सो होय।
आप बूझे भरम तजे, आपइ और न कोय ॥

रमैनी १२०—पैतापुरकी लुंवठ रानी। तिन ब्रह्माते कही कहानी॥ अनहद अपजा जोंग अभ्यासी। सुन्न नगर आसन चौरासी॥ पंच वायुमें जग अरुझाना। षट चक्र साधि कीन पयाना॥ तीनसौ साठ स्वास ठहराई। कुंडलनी सकती साध ले जाई॥ प्राणायाम धारना साधी। जोग जुगति तेहि करे समाधी॥ दस अंगा दस करे जो भंगा। पंच चार नौ सोरह संगा॥ छ पर संग दोय पर भाई। आठ बहत्तर बावन आई॥ दो हजार सत्रहसौ साता। चार चार चारकी बाता॥ एक्कीस हजार छै सौ तेहि डोरी। चले दिसंतर होर बहोरी॥ बारहे नासुक सोरहे सेसा। चार ब्रह्म नाभ नौ परदेसा॥ आठ अकाश परम तहँ पाई। ग्यारह भक्ति तेरहे ठहराई॥ एक सौ बीस साठको योगा। तैंतिस कोटि डेढसौ भोगा॥ समाध लायके चला हरि तीरा। जुगत नेत्र त्रिवेनी तीरा॥

समै—जोग करे ते मर गये, दसो दिसा भइ सुन्न।
कहैं कवीर जुगति चीन्हले, जो छूटे वह धुन्न॥
घट फूटा निकसा कुंभते, ढरक गया सब नीर।
घट राखे जल घट रहे, कहहिं पुकार कवीर॥

रमैनी १२१—यह घट रत रतनकी खानी। घटमें आप आप घट ठानी॥ घट बिन जल कहो कहां रहाई। बिन घट जल नहीं है भाई॥ घटमें जल जल घटते न्यारा। घट बूझे घट बूझनहारा॥ घट फूटे जल जाय हेराई। जब लग घट तब लग जल भाई॥ घटको खोजो पंडित ज्ञानी। बिन घट जाने रहे न निसानी॥ घट खोजे घट माहिं समाई। बिन घट खोजे जल बह जाई॥ चेतन

करो घट जाय न फूटी। सुरतकी डोर जाय न टूटी॥ गुन टूटे औ घट बह जैहै। औघट गये घाट न पैहै॥

समै-सहस्र घाट जल भर रखो, फूटे सहस्सर घाट।
घट फूटा तो फूट भय, भया न नर तल पाट॥
घट बाहर घट अंदर, घट है जीवन मूर।
घटमें जल पूर रहे, औघटमें जल दूर॥

रमैनी १२२-जुग २ जोगी जुगत कराई। जुगत लखे विन जम ले जाई॥ जोगी सोई जुगत सो माने। जुगत जान अलख पहिचाने॥ उवाव अनंत जाने भाई। तेहि जोगीको काल न खाई॥ सोहं हंसा हमही भाई। सोहं मिले सोई हम पाई॥ नगरी अपनी सुवस बसावे। प्रजा लोग दुख नाहीं पावे॥ प्रजाके बस होवे ना राऊ। राजा दुख न देवे काऊ॥ सो जोगी सो जुगत सयाना। आप जान दूजा नहिं जाना॥

समै-जेहि पारस ते पारस भये, पारस जानो सोय।
पारस कनक लोहा भया, सो पारस ना होय॥
वह पारस तुम खोजो, जेहि पारस सब खान।
कहँ कबीर सुन पंडिता, पारस ले पहिचान॥

रमैनी १२३-काया नगर सो नगर हमारा। घर अपना हम कीन्ह संसारा॥ घरही में है देव औ देवी। घरहीमें है भेव औ भेवी॥ पाप पुन्य घरहीमें रहते। घरहीमें रैयत औ महते॥ घरहीमें वृच्छ बीज अंकूरा। घरहीमें चंदा औ सूरा॥ तीन लोक घरहीमें छाया। घरते बाहर किनहु न पाया॥

समै-जो घर जावे आपना, करता पडे तेहि सूझ।
कहँ कबीर सुन पंडिता, घर अपनेको बूझ॥

गुह कहते जस ब्राह्मण चले, ग्रह पडा नहिं चीन्ह ।
यहां वहांकी दोउ गंवाई, जीव अकारथ दीन्ह ॥

रमैनी १२४—सब संसार समाधि लगाई । निराकार लो कोउ न जाई ॥ रहिगो पंथ थकित भौ पौना । दशो दिशा उजार भौ गौना ॥ बस्ती छोड जैहो नर कहवाँ । जैहो तो नहिं छैहो जहवाँ ॥ खैहोका वहां अन्न न पानी । बोलिहो कासो वहां नहिं बानी ॥ सुख नहिं भोग दिवस नहिं राती । पांच तत्त्व निरगुन बेदाती ॥ जीव न सीव कर्म न काया । पाप न पुन्य वृच्छ न छाया ॥

समै—चेतो किन तुम चेतो अबहूं, जहाँ नहीं वहाँ गाँव ।
कहैं कबीर अबहीं मिल करते, अब न मिटावो नाम ॥

रमैनी १२५—ब्रह्मा कुलाल गढे संसारा । तिनमा जीव दिये करतारा ॥ जीव देके लिखे बनाई । सोई भोगता भुगते भाई ॥ परालबध संचित कर्माना । अक्षर तीन लिखे भगवाना ॥ चाहे सुता चाहे करबारी । श्रीरामकी बातें न्यारी ॥ चहता सोई कीन्हा करता । चहिये सो दूरम सो हरता ॥

समै—मातु न होती पिता न होता, होता रुधिर औ नीर ।
कहँ ते आवत पंडित, ऐसा अनूप शरीर ॥
तत्त्व भये संयोग दोउ, निहतत नाहीं कोय ।
कह कबीर सो फल उपजे, तत्त्व अधिक जो होय ॥

रमैनी १२६—सुन्य न हता सुन्य सब कीन्हा । जीव न हता जीव सिव दीन्हा ॥ पाँचों तत्त्व हता न कोई । दिवस न रजनी पुरुष न जोई । निरगुन पुरुष हता निरंकारा । तिन सिरजा यह सब संसारा ॥ निराकार निरगुन कस देवा । कैसे सुन्य कहो किन भेवा ॥ लौटके कथा कहें ब्रह्म ज्ञानी । निरालम्ब निरगुनकी बानी ॥ निराकार आकार न कोई । निरगुनते गुनना होई ॥ सुन्य हते

नहिं देखन हारा। यह बिध रचा सकल संसारा॥ जो बीजामें लखा सरीरा। वो था साहेब सुनो कबीरा॥

समै-जो अकार गुण कर्म धरे है, सो निराकार नहिं होय।
फल फूल पत्र औ साखा, बिरला देखे कोय॥
यही सरूप करताको, ज्ञानी अंते नाहिं।
कहँ कबीर परो जन संशय, गगन मंडल कछु नाहिं॥

रमैनी १२७-पवन सरूपी अगम अपारा। सब घट पूरन सबते न्यारा॥ पुहुपकी वास दियाकी जोती। पवन सरूप पिरे तन होती॥ शब्दके रूपमें हरदिकी लाली। विस्नुका रूप ज्ञान गुणचाली॥ काशीकी धुन करो बिनाना। निराकार निरगुन तिन जाना॥ सोहं हंसा जाने सोई। सोहं हंसा सोइ जिव होई॥

समै-बिना पुहुप नहिं बास है, बिना बीज नहिं कोय।
बिना तन सोहं शब्द नहीं, बिरला बूझे कोय॥
जीव ब्रह्म परब्रह्म नहीं, सुंदर धरे सरूप।
कहँ कबीर जाव घट एके, ऐसा ख्याल अनूप॥

रमैनी १२८-ज्ञानी आपन करो बिचारा। जो तुम मानो कहा हमारा॥ चार शरीरको छोडो ज्ञानी। करताका कछु करो बीनानी॥ सूच्छम अस्थूल न कारन महा कारन। चार अवस्था नाहिं निहारन॥ गुण औ कर्मकी करो न संसा। तुम करता निह केवल हंसा॥ देव आद तुम कहो ब्रह्मज्ञानी। करता पुरुषकी साज समानी॥ बूझ बिचार गहो अस्थाना। निरगुन पुरुषका करो न ध्याना॥

समै-निव्रित परव्रिति दोय मारग, तेहि अटका संसार।
कहँ कबीर दोनों नहीं, समझो बूझ बिचार॥

रमैनी १२९-चार फल कौन कहां तुम देवा। अवस्था चार कहां तुम भेवा॥ कौन बृच्छ जेहि यह फल लागा। जेहि कारन

तुम भये अनुरागा॥ अरथ धर्म काम मोच्छ भाई। जाग्रित स्वप्न शुषोपत ताई॥ अछै वृच्छ एक पुरुष अपारा। तहां यह फल है चार निनारा॥ मारग कठिन न कोई जावे। गगन चढै सोई फल खावे॥

समै-केहि कारण करनी करे, कहां वृच्छ फल चार।
सबे पड़े भ्रम जालमें, कहें कबीर पुकार॥

रमैनी १२०-दिनके रैन विषै जब सोई। भूले आप भूले सब कोई॥ नाना विधिके उठे तरंगा। अदभुत ख्याल दिखे बहुरंगा॥ इन बातनकी खबर न जानी। पार ब्रह्म कैसे पहिचानी॥ कैसे खबर वहांकी पावे। अपने घटकी लखे न लखावे॥ औघट घाटी अगम अपारा। सो पावे जो उतरे पारा॥

समै-मन जिवका संजोग तन, मनके अद्भुत रूप।
जाग्रित स्वप्न भरमावे, लीला रचो अनूप॥
जाग्रित जाग्रत सांच है, सोवत सपना सांच।
कहँ कबीर मन ना बसे, जहां तत्त्व नहिं पांच॥
मन यह जागत है नहीं, यह मन यही शरीर।
रैयत होय तिनमें रहे, कहें पुकार कबीर॥

रमैनी १२१-यह है गगन जापर बहु रंगा। नाना विधि को उठे तरंगा॥ चौरासी कहो कौन विधि भाई। कौन अस्थान जीव ठहराई॥ पांच तत्त्व कहो किन भेवा। भेला बांधे निनारे देवा॥ त्रिगुनकी उतपती कहो सोई। निराकार कस करता होई॥ दोमें को जग सिरजनहारा। नांदे बिंदे क्या ब्योपारा॥ सहस्रका कहो का अर्थ बूझा। निराकार निरगुन कैसे सूझा॥ ऐसा ख्याल अनूप हमारा। जो बूझे सो सिरजनहारा॥

समै-सबरा आतम आप हमारा, इनमें नाहिं विसेख।
हम जाने सो यह गुन बूझे, पावे पुरुष अलेख॥

जिन जाना यहि भेदको, रहे सोई ठहराय।
कहँ कबीर सो रहे निनारे, लिया जिन्हे जम खाय ॥

रमैनी १३२- राम कहा यह कहे जो कोई। जो करता सो यहु होई॥ करता रहा जो सबै समाई। वोकर राम रहा बिलमाई॥ पंच तत्त्व करताको बासा। यह विध राम न होय बिनासा॥ बीजमें वृच्छ रहे ठहराई। त्यों यह बूझ एक है भाई॥ सो कत होय यह कहे जो कोई। जल पाषाण अगिनको होई॥ सुरत मरे तो यह मर जाई। दोहरा नौतम कैसे पाई॥ संजोगी जो सृष्टि उपाई। अद्भुत तन जिव कहँसे आई॥ राम न करता करता काहा। यह करता तो बूझन माहा॥ दे शब्द उतपन सुस्थाना। दोऊकी बूझ एक घर जाना॥ बूझ दोऊकी सुन्न समानी। तत्त्व अधिक इच्छा कित मानी॥ जो यह करता सृष्टिको होई। प्रगट गुप्त कहे सब कोई॥

समै-यह करता बिन बूझ हेराना, ताते भया अकास।
तत्त्व न मिला मत समुझा, लीन्हा तहां निवास॥
जो गुन पावे तत्त्वको, तत्त्वे जाय समाय।
कहँ कबीर अमर तब होवे, कहीं न आवे जाय॥
तन जियरा यह तेरा, कबहुं नास न होय।
कहँ कबीर सुरति मिले, यह गुण बूझे सोय॥

रमैनी १३३-परकाया प्रवेस कराया। बाल वृद्ध तन दिखलाया॥ एक रूपमें धरे अनंता। पर दिलकी पहेचाने चिंता॥ पूरवमें परिचय दिखलाई। पृथ्वीते अकास सिधाई॥ धरन ते बाढी जाय अकासा। लीला अनूप रचे बहु पासा॥ ॐ बीज मेघ दिखलावे। धरती बूडे पवन चलावे॥ चाहे जो ले आवे सोई। चाहे पुरुष चाहे होय जोई॥ दसो दिसाकी बातें करई।

चाहे करे जोई चित धरई ॥ जो कोइ मांगे सोई देई । जहां ते जो चाहे सो लेई ॥

समै–अस्थान न जाने जीवका, भगति परी नहिं चीन्ह । यही बिडम्बना भरमके, जीव अकारथ दीन्ह ॥ स्वारथ इनमें कोइ नहीं, ताते रामहिं जान । कहँ कबीर यह भगती बूझले, बहुर न रहे बंधान ॥

रमैनी १३४–जैसे खर औ तैसे गाई । जैसे नारी तैसे माई ॥ जैसे सोना तैसे लोहा । जैसे मोहा तैसे निरमोहा ॥ जैसे कूकर तैसे हस्ती । जैसे ऊसर तैसे बस्ती ॥ जैसे पंडित तैसे चंडाला । जैसे करता तैसे काला ॥ जैसे मुत्र है तैसे पानी । जैसे चेरी तैसे रानी ॥ जैसे पाथर तैसे मोती । जैसे आंधर तैसे जोती ॥ जैसी नदी औ तैसे नारा । जैसे हलाल तैसे मुरदारा ॥ जैसे मीठा तैसे विष होई । जैसे अन्न तैसे मल सोई ॥ जैसे फल है तैसे माटी । जैसे सक्कर तैसे चांटी ॥ जैसे सिंह तैसे बकरी होई । जैसे गुरू तैसे सिख सोई ॥ जैसे असुर तैसे देवा । जैसा फल है तैसे देवा ॥ जैसे बास तैसे कुबासा । जैसे बरहा तैसे धरन अकाशा ॥

समै–एके भया एक कहाया, एके रहा समाय ।
कहैं कबीर नहि करता पाया, जियरा दिया गँवाय ॥

रमैनी १३५–गुन कर्म बिहूना राम न सोई । यह गुन जाने बिरला कोई ॥ काया इच्छक दया सरूपा । मन उपमान स्वेत नहि धूपा ॥ समै पाय बिन तत्त्व न देई । पर चोरी कर बस्तु न लेई ॥ सत्त कहे औ धरमहिं जाने । पर निंदा नहिं जीमें आने ॥ पांचो पवन एक घर लावे । नौ दस बारह तीन मिटावे ॥ तीन राखके तीनों मारे । पचीस पांच षट सात उचारे ॥ सुखमनमें जब बास कराई । प्रगट गुप्त सब अजमत पाई ॥

समै-अजमत कछु हांसी नहीं, अजमत कर्म अधीन। करामात करम चीन्हें, सो ज्ञानी परबीन॥ करना हता सो कर चुका, सब दिखलावे सोय। कहें कबीर करता नहिं जाना, अजमत करे क्या कोय

रमैनी १३६-अजोध्या नगर बसे एक राई। तिनके राम औतरे आई॥ जनक सुताते कीन विवाहा। कैकई बचन गये बन माहा॥ कनक पुरीका रावन दूता। सो बनमें हर लैगा सीता॥ कनक मिरगा राम भुलाने। रोवत वन वन फिरे सयाने॥ पंपानगर सुग्रीव सहाई। कनकपुरी हनुमान चढाई॥ जीते राम रावणा हारा। त्रिभुवननाथके यह व्योहारा॥

समै-करता पुरुष राम ते परे, क्यों भूले भ्रम जाल।
कहें कबीर पूछों तोहि पंडित, काजी जीतो हाल॥

रमैनी १३७-सीताराम सुमरत सब कोई। सीताराम बिन मुक्ति न होई॥ सीतारामकी गति नहिं पाई। सीताराम रहा जग छाई॥ धरती छोंडके बसे अकासा। यह गुन देखो राम तमासा॥ सीताराम रचे संसारा। कंठी माला तिलक लिलारा॥ कनकपुरीका रावन राई। सीता जीता करी लड़ाई॥

समै-आस पास घन तुलसी बिरवा, तेहि बिच सालिग्राम।
हते देव पाथर भये, यह करताके काम॥

रमैनी १३८-रामचंद्रके यह ब्योहारा। पिता पुत्र तिनहु रन डारा॥ बालमीक घर सिया बियानी। लव कुश भये भरत सिय पानी॥ लछमन बूझे सियासे माई। डार हडावर फिरे रघु-राई॥ रामचंद्र कारण कर रोया। दुखी भये दिन रैन न सोया॥

समै-नित बूडे नित ऊछरे, शोभा कहो निहार। आप बुडे मँझधारमें, उतरत सब संसार॥ सब जग डूबा राम नाम कहि, रामके बिन पहिचान। जो तू चाहे अमर भया, तो तैं रामहि जान॥

रमैनी १३९–रामनाम चढ बुड़ा कबीरा। एको हंस लगा नहिं तीरा॥ रामनाम सुमरण चित दीन्हा। रामरूप काहू नहिं चीन्हा॥ एक रामनाम दसरथ गृह आया। सो जगते आकास सिधाया॥ एक राम घरा घर कीन्हा। एक राम सो ना पर चीन्हा॥ एक राम नित पीवे खावे। जगको देखे जगै दिखावे॥

समै–इनमें राम जो सांचा, तेहि राम ले चीन्ह।
रामनौमी भया राम कबीरा, जिसका यह तन कीन्ह॥

रमैनी १४०–रामनौमी भया राम कबीरा। घर घर बाजे झांझ मजीरा॥ सबके पिता पुत्र भै आई। अजोध्या नगर करे ठकुराई॥ उतपत प्रलय जिनकी न होई। उतपत प्रलय आये सोई॥ उपजे न बिनसे आवे न जाई। अजोध्या नगर करें ठकुराई॥ अन्न न खाय पीवे नहिं पानी। आराकार घर उतरे आनी॥ आरति मंगल पढै पुराना। जो जन्मा सो किनहु न जाना॥

समै–निराकार आकार भय, नाम धराया राम। राम कह कह जग गई, काहु मिला ना राम॥ राम भगति जिन जानी, रामे चीन्हे सोय। कहँ कबीर वह भगत भय, आवा गवन न होय॥

रमैनी १४१–मथुरा नगर सो बसे कन्हाई। गोपी ग्वाल जुरे सब आई॥ कंसे मार जमी पर डारा। उग्रसेनको राज बैठारा॥ करताके यह काम न होई। जो जिव मारे दूजा सोई॥ काहुकी अङ्गिया काहूका चीरा। ऐसे काम न करें कबीरा॥

समै–ये तो काम नहीं करताके, यह सब मनके काम।
कह कबीर मनही जे मारा, जीते आतमराम॥

रमैनी १४२–राम मंदिल बृन्दावन कीन्हा। दूधको दान गोपिन सो लीन्हा॥ कहीं तरुण बालक होय जाई। कहीं वृद्ध होय देत दिखाई॥ पलना झूलें मदन गोपाला। दूत कंसको हने

होय काला ॥ तीनों लोक मुखमें दिखलाया । तबहीं जसोदा बहुत डराया ॥ लीला अनंत रचे यदुराई। इन्हें देख सब रहे भुलाई॥

समै-रास मंडलकर सब जग लूटा, मथुरा नगर मँझार ।
कहें कबीर यह बंदा बनके, बिरले बचे बिचार ॥

रमैनी १४३-नगर द्वारिका रुकमिनि रानी । तिनके कंथ श्रीकृष्ण ज्ञानी ॥ तिन भर्माया सब संसारा । काशी नगरमें खलबल पारा ॥ राजा नगर कापर बैठाया । आय राज होय अदल कराया ॥ काशी नगरमें बाजे ढंढोरा । साहूका घर मूसे चोरा॥ चहुं दिशि फिर गई कृष्ण दोहाई। राजा रंक रुजू होय जाई॥ सबका जियरा भरम उरझाना। करता आप न किनहू जाना॥

समै-रैयतते राजा भया, भया साहुते चोर। राजाको वजीर गहि मारा, जोर ते भया बिजोर॥ काग हंसकी पीठपर, नित होवे असवार । भौजल सागर उतरके, भया जग खेवनहार ॥

रमैनी १४४-मथुरा नगर तेहि रास रचाय। रहसमंडलमें सब कोइ आय ॥ पचीस गोपी संग पांच गुवाला । मुकुट धरे तहँ नाचे गोपाला ॥ गावत संग सखा सब आई । सब जग देखके गया भुलाई ॥ नाचे मोर कीर्त तहं गावे । मंजारी मृदंग बजावे॥ बैल झालरी भैंसा मंजीरा । रोज करें तहं जै जै कबीरा ॥ लावा थेइ २ तहाँ मचाई। मृग मसाल दिखावें भाई॥ ससा एक तीकले आय। सकल सभाके मस्तक लाय॥ अहिरी पांच दही ले आई। ताके पीछे फिरें कन्हाई॥ कौतुक देख रास सुख पाया। सिंह को मच्छा गहि लाया ॥

समै-जो जन्मा दस बार प्रभु, सो मनका औतार ।
कहें कबीर बूझो तुम पंडित, श्रीकृष्ण ब्योहार ॥

रमैनी १४५-सुन पंडित एक बचन हमारा। मूस भया बिलार

असवारा ॥ ताके संग बहु चले बराती । पांत पांत सब भांतिन भांती ॥ बाज तीतर संग चला कर जोरी । सिंह गऊ संग मुख नहिं मोरी ॥ बाघ संग छेरी चलि भाई । ससा स्वान संग केल कराई ॥ केचवा सर्प संग कियो ब्योहारा । लोहक नाव पषाणको भारा ॥

समै-जो न हता सो ब्रह्म कहा, जीव भया तहँ लीन ।
कह कबीर जिन ब्रह्म जाना, भए ज्ञानी परवीन ॥

रमैनी १४६-यह अचरज तुम देखो आई । सिंह सियारते करे सगाई ॥ हंस कागते करे सनेहा । देह धरे सो होय बिदेहा ॥ मछरी बैल ते भा ब्योहारा । कुक्कट मोर मिलि जे जे कारा ॥ गिरगिटसे करे सनेह बसंता । सरप नेवरा रचे अनंता ॥ चीता हरिन संग केल मचाई । ससा स्वान मिल बैठे भाई ॥ बगुला बाजते रहस रचाया । राजहिं वजीर पकड ले आया ॥

समै-धरती बेल पताल भय, फल लागे आकास ।
कह कबीर चात्रिक चारो जुग, जलमें मरा पियास ॥

रमैनी १४७-निराकारकी करे नित सेवा । करता का कछु लखे न भेवा ॥ चाहिये दाख बोवे लसोरा । चहिये अंगूर सींचे नीम सहोरा ॥ आम चहिये जग बबुर लगाई । रंभ श्रबैके चाहे मिठाई ॥ करील सींचिके चहे सुपारी । बिना पुरुष सुत जन्मे नारी ॥ नरियर चहिये तुंबरा लाई । बेंत लायके कटहर खाई ॥ चहत करोंदा नाय मकोई । बेंत लाय फल चाहें सोई ॥ अरंड लाये सदा फल खाई । इंद्रवन लायके केरे खाई ॥ ताड लायके चहे छोहारा । यह देखो जगके ब्योहारा ॥

समै-बेल कुढंगी फल बुरा, फुलवा कुबुध गंधाइ । और बिनासी तूंबरी, सो पातो करवाइ ॥ उगरह धरती छोडके, ऊसर बोधे सोय । कहें कबीर वृच्छ है नहीं, कैसेके फल होय ॥

रमैनी १४८-मूसा बिलार संग चहे कुसलाई। त्रिन अगिन संग चाहे भलाई॥ छेरी भेड़िया संग खेला। गाय करे सिंह संग मेला॥ नारका संग मीन भलाई। सरप चहे सुख नेवरा आई॥ काग कुही संग चहे बिसरामा। निराकार संग सब चहे सलामा॥

समै-साजुज्य मुक्तिको सब चले, देख वेदकी रीत।
गये सुन्नमें बहुरि न आये, यह मानो परतीत॥

रमैनी १४९-ऐसा कौतुक सुनो रे भाई। विना वृच्छ फल सब जग खाई॥ देई हिजड़ा कामिनि रितुदाना। घर घर गुंगा बांचे पुराना॥ बिना पुरुष कामिन सुत जाया। बिन पावक बन अगिन लगाया॥ बिना फूल सुख बास बसाई। बिन बूझे नर गये अंधाई॥ बिन पानीके त्रिषा बुझानी। पिंड प्राण बिन बोले बानी॥ बिना दूध घिव निकसे भाई। बिन रवि ससि रैन दिन आई॥

समै-बिना बीज वृक्ष जग उपजा, बिन फूलन फल लाग।
कहँ कबीर या वृक्षहिं जाने, कोइ जाननहार सुभाग॥
ना फल खट्टा ना फल मीठा, नहिं करुवा नहिं सीठ।
बिन देखे बिन चाखे सब, कहैं कबीरा मीठ॥

रमैनी १५०-पांच पचीस सदा सुखदाई। नौ औ तीन मिल राज देवाई॥ कासी नगर बसा एक राजा। राज पाट चारों जुग छाजा॥ प्रजा लोग करे सुख बासा। नगर मांझ सब करें विलासा॥ ठग बटपार रहे नहिं कोई। बिरला करे पुरुष औ जोई॥ राजा परजाको सुख देई। चारों जुग सो राज करेई॥ सुखका नगर कासी यह गाऊं। करता पुरुष बसे तेहि ठाऊं॥

समै-पांच पचीस तीस मिल, दीना अबिचल राज। इनते एक जो बिछूरे, तिनका होय अकाज॥ तैंतिस जेहिके संग नहीं, सो करता नहिं कोय। वह कबिर अंग बिहूना, वहिके जीव न कोय॥

रमैनी १५१-बीज न वृच्छ पात न फूला। साखा कनाईं फल नहिं मूला॥ धरती ऊपर बिरवा न होईं। बिरवा अकास सींचे सब कोई॥ तेहि बिरवामें चार फल लागे। निरफलते फल चहत अभागे॥ सो वह बिरवा सकल जग छाया। साखा मूल न काहू पाया॥ ब्रह्मा विस्नु महेश्वर सेवा। सनकादिक तैंतिस कोट देवा॥ नारद आदि वो जनक विदेही। वसिष्ठ आदिक राम सनेही॥ द्वादस भगत औ सिद्ध चौरासी। नौ नाथ रिषि सहस अठासी॥ यह बिरवा काहू नहिं चीन्हा। परचै बिना जीव सब दीन्हा॥

समै-प्रथमै वृच्छ बिरंचिहि, तेहि पाछे संसार।
कविर वह वृच्छ निरगुन, बिरला बूझन हार॥

रमैनी १५२--बात हमारी बूझे जोई। वह पंडित बड ज्ञानी होई॥ बीज उठा अंकूर कहाया। पौधा भया प्रात पर लाया॥ छोटी डारी सो भइ कनाई। बड़ी भई सो साख ठहराई॥ मध्य पर भया फूल ठहराया। बीज भया तब फल कहलाया॥

समै--जो बोया सोई भया, ठांव ठांव पर नाम। पिता पुत्र एके ज्ञानी, जाव न निरगुन गांव॥ करता माया तीन गुण, पांचों सबल शरीर। न्यारे २ देत दिखाई, कहत पुकार कवीर॥ मन माया औ जीव गुण, धोख कहें सब कोय। गये नहीं औ सब गये, कहत जगत सब रोय॥

रमैनी १५३--वृच्छ भया बीज विन पानी। तेहिका सेवत पंडित ज्ञानी॥ आदि अंत न काहु पाया। परिपूरन सो वृच्छ कहाया॥ फल औ फूल मूल औ डारा। सुंघत पात चहुं दिसि बिस्तारा॥ तेहिका देव अदेवन ज्ञानी। ब्रह्माते कहो आद भवानी॥

समै-वृच्छ एक तीन फल लागे, बडहर बेर मकोय।
वृच्छ कवीरा वह अदभुत, उतपत परले होय॥

रमैनी १५४-बीजा एक वृच्छते आया। बीजामें वह वृच्छ समाया॥ बीज वृच्छको नास न होई। बीजे वृच्छ देखे सब कोई॥ पांच तत्त्व जीव मिलि यक रंगा। साख लिये सगरी यक संगा॥ पृथ्वी अकास पवन औ पानी। आप आपमें सबहिं समानी॥ जिवको जीव मिले जब जाई। यहिके मरे मरेको भाई॥

समै-धरती अम्मर आदि है, अम्मर है पौन। मैं तुहि पूछो पंडिता, इनमें मूआ कौन॥ पांच तत्त्वका वृच्छ है, बीज साथ अंकूर। कह कबीर तजो का जग, रहत जगत भरपूर॥

रमैनी १५५--आदि माया पाट लिखाया। सो त्रियदेवा सबे पढाया॥ सुनके बचन समाध लगाई। अपनी प्रतिमा दीन्ह दिखाई॥ देख प्रतिमा भये निहाला। सबको मन भये निहचाला॥ पांच वायु ले चले अकासा। आपन आपन देख तमासा॥ कछु एक दिवस किया विसरामा। चला बहुरि तजि अपन मुकामा॥

समै-ब्रह्मा करि विस्नुहिं दीन्हा, विस्नु महेसै दीन्ह। शिवते पाया जगत सब, जो माया लिख दीन्ह॥ जौन जुगत माया बतलाई, तीनों चले सो चाल। देखत प्रतिमा आपनी, तीनों भये निहाल॥

रमैनी १५६--माता अपने सुत समझावे। लीन करे तेहि फिर उपजावे॥ ब्रह्मा महेश आप कहाई। मातासे कन्या होय आई॥ स्तुति करन लाग त्रिदेवा। सिद्ध समाधि लगाई सेवा॥ उन भूलत भूला संसारा। निसदिन सेवे जोत अपारा॥ सेवत जोत जोत मिल जाई। कंचन काया दीन गँवाई॥ जाका बीज ताहि न जाना। निरगुनको सब जग लपटाना॥

समै-पांच तत्त्व गुन तीन तेहि, मेट किये यह बात। वेद बिचार

सब पंडित, कथा कहे दिन रात॥ करता आपन न चीन्हे, नित उठ पढे पुरान। सो कबिरा तत्त्व गुण नहीं, ठहरा हरि निरबान॥

रमैनी १५७--ब्रह्मा ते कह आदि भवानी। हमरी बात न कोई जानी॥ चारो जुग हमरी भइ सेवा। हम आपन तुमसों कहि भेवा॥ सकल सृष्टि हम रचे बिचारी। हम जगकी हैं पालनहारी॥ हम जग जीतें हम जग हारें। हम जग पालें हम जग मारें॥ नरक सरग हम दीन्ह निवासा। चारौं जुग हमरी जग फांसा॥

समै--चार पुत्र हम जनमें, बिना पुरुष संजोग। तीन देहधर एक विदेहा, अब तुम करो सुभोग॥ बसें तीन जग भीतरे, एक सुन्न बस गाँव। सकल सृष्टिका करता, जाके हाथ न पाँव॥

रमैनी १५८--पृथ्वी अकास पवन नहिं पानी। तबका पृथ्वी आदि भवानी॥ रवि ससि गन गंध्रब नहिं कोई। ये नर किन्नर पुरुष ना जोई॥ आश्रम मुनीश्वर हते न देवा। तब कासो कहो यह भेवा॥ कहां थे ब्रह्मा विस्नु महेसा। कहांते भयो सकल यह भेसा॥

समै--ब्रह्मा वेद बखाने सृष्टिते, कहै बात यह आय।
अपरंपार अपर गति हरिकी, कौन कहे अरथाय॥

रमैनी १५९--आप पुरुषकी घरनी माया। तिन पापिन यह सब जग खाया॥ तीनो सुतको लीन्हेसि खाई। भाग बचे हम हमें न पाई॥ सोना पहिर ठगा संसारी। रूपा पहिर रूप सिंगारी॥ दोहुन बेठ सिंहासन कीन्हा। सब जीवनका ज्ञान हर लीन्हा॥ लेके बैठी राज औ पाटा। भइ सांपिन जग खेदे खाता॥ ब्रह्मा बूझे न जानत कोई। यहि ते बचा अमर भै सोई॥ यहि जंजाल न कोई जाना। यहिके जाल जीव अरुझाना॥

समै--अगुआ बांधे कसकसे, हेरे करडी डीठ।
ऐसा काल अपरबल, खात जगत तहँ दीठ॥

रमैनी १६०–एक पुरुषकी हती जो नारी। एक छोड़ भई अनंत भरतारी॥ कंथे तजे और पै जाई। अरधंगी पतिव्रता कहाई॥ बार सो रहे नीत सँवारी। नित उठ जीव अनंत संघारी॥ माता ते मेहरी कहवाई। फिर वह भई जगतकी माई॥ अंग बिहूना पुरुष ठहराया। त्रि देवनको जाप बताया॥

समै–तिरदेवाके सुमिरते, सबका भया अकाज।
कहें कवीर कौन यह भुगते, ऐसा अविचल राज॥

रमैनी १६१–सुन्न शिखर एक बसे कवीरा। रंकार धुन उठे गंभीरा॥ माया आनके दिया संदेसा। त्रिगुनको यह भा उपदेसा॥ ध्यान धरो तुम तीनों देवा। समाधि लायके करो तुम सेवा॥ सुन्न नगरते हम तुम आये। निराकार रच हमें पठाये॥

समै–जो कोइ थामे थाप आपनी, तेहिका करो बिस्तार।
ज्यों जाने त्यों हम आने, जेता यह संसार॥

रमैनी १६२–पांच तत्त्व गुन हते न जहवाँ। तब काहे प्रहर रहते तहवाँ॥ दिवस न रजनी पुरुष न जोई। गन गंध्रब रिषि हते न कोई॥ इ नरकी नर हते न देवा। तब कासो प्रभु कहो यह भेवा॥

समै–भयो अबूझ बूझे नहीं, जामे करे न बिचार।
कहें कवीर पढ २ भूले, जेता यह संसार॥

रमैनी १६३–जहां सृष्टि करताकी आई। सो सब सृष्टि करता कहवाई॥ गुदरी पहिर अतीत न होई। करता चीन्हे करता सोई॥ एक करताके पिंड न प्राना। सो वह करता सकल समाना॥ जो करता नहिं पिंड ते न्यारा। तेहि करताका बीज बिस्तारा॥ करता एक दूसर नहिं कोई। जहां बूझ तहँ करता होई॥ बिन बूझे करता नहिं पाई॥ बिन बूझे तन काले खाई॥

समै-बिन देखे करता भयो, बिन देखे लपटान। कहँ कबीर जगत सब वाही माहि समाहि॥ एक समाना सकलमें, सकल समाना ताहि। कविर समाना बूझमें, जहां दूसरा नाहिं॥

रमैनी १६४-आप पुजेरी आपहिं देवा। आपहिं वेद आपही भेवा॥ आप गुरू औ आपहिं चेला। आप संयोगी आप अकेला॥ आपहिं ठाकुर आपहिं दासू। आपहि दाता आपहिं पासू॥ आपहि बीज आप वृक्ष होई। आपहि हँसे रु आपहिं रोई॥ आप करे औ आप निनारा। आपहिं करता सिरजनहारा॥ आप मच्छ संखासुर मारा। आपहि कच्छ दसधरै धारा॥ आप प्रल्हाद हिरनाकुश आपू। आपहि पुत्र औ आपहि पापू॥ आप रावना औ रामहिं रामा। आपहिं कृष्ण आप हरिनामा॥ आप सहस्रा आप परसरामा। आपहिं बावन आप बलिनामा॥ आप अवध औ आप गयासुर। आपहि भया सुर औ असुर॥ आप कलंकी कालीद्रा होई। आपहिं पंछी अहेरी सोई॥ आपहिं सिंह औ आपहिं स्यारा। आपहिं हिंदू तुरुक निनारा॥

समै--आपहिंमें यह जग उरझाना, भरम रहा यह पूर।
कहँ कविर यह अटपटा, है नियरे पै दूर॥

रमैनी १६५--हम करता हम सबके करैया। हम लेता हम सबके दिवैया॥ हम शाखा हम पात औ फूला। हम सुख दुख समझ हम भूला॥ हमही वृक्ष बीज अंकूरा। हम दाता हमही हैं सूरा॥ हम राजा हम परजा लोगा। हमहि करें जग सब सुख भोगा॥ हमहीं छांछ छीर हमहीं घीवा। तत हम हम गुन हमहीं जीवा॥

समै-हमरा यह तन जीवरा, हमरी सब है बेल। करता पुरुष अविनासी, सो वह रहा अकेल॥ हम करता जीव जग मारे, हम करता भय काज। कहें कवीर हम जो चीन्हे, ताका अबिचल राज॥

रमैनी १६६--राम कहत जग गया हेराई। राम कहत गये बाप औ माई॥ राम कहत तन धन खोया। राम कहत दिन रैन न सोया॥ राम कहत तज चला घर बारा। राम कहत बन आसन मारा॥ राम कहत सब जनम गँवाई। राम कहत आप फिर जाई॥ राम कहत मरा संसारा। राम कहत घर बार उजारा॥ राम कहाय राम नहिं जाना। राम लखे विन भया दिवाना॥

समै-राम राम सब कोइ कहे, रामते परिचे नाहिं।
बांझ झुलावे पालना, कहु का सुख वहि माहिं॥

रमैनी १६७--पूजत पूजत जन्म गँवाया। रामका खोज काहू नहिं पाया॥ रमता राम अरमता लागा। रामका खोज न लखे अभागा॥ बस्ती छोड उजार जग जाई। तौहूं राम मिलत नहिं भाई॥ रामकी गत कोइ बिरला जाने। सो ज्ञानी जो राम पहिचाने॥ राम न जाना राम समाया। रामहिं मिला बहुरि नहिं आया॥

समै--आंगनबेल अकास फल, अनब्याईका दूध। ससा सींगका धन ककरी, रमै बांझका पूत॥ खोजत २ दिन गया, मिला न निरगुन वीर। षट दरशन पाखंड छानवे, रहे त्रिय देवन तीर॥

रमैनी १६८--पंडित हाथ ग्रंथ ले आया। राव रंकको पुरान सुनाया॥ अकासके परे वैकुंठ बताया। तहं भागवत रहेस रचाया॥ मानसरोवर है तेहि ठाँय। कल्प वृक्ष एक है वहँ गाय॥ कामधेनु वहां एक गाई। जो चाहे सो केल कराई॥ जप तप पूजा करे जो कोई। वैकुंठ लोक सो प्रापत होई॥ जो कोइ बात अधर्मकी कराई। सो प्राणी यमलोके जाई॥

समै--लै पुरान सब को समझावें, सबहीं लीना मान।
कहें कवीर चला सब कोई, अंधरेकी पहिचान॥

रमैनी १६९--जनम संदेसा पंडित लाये। जमपुरका सब भेद

सुनाये॥ जमकी कहें आन मुख चारी। नरक सरगकी बातें न्यारी॥ चित्रगोपित्र कहें समुझाय। जो कुछ सूरज चंद लखाय॥ न्याव कहत सब रिषि मुनि देवा। पावे सोई कियो जस सेवा॥ सुन यह बात सृष्टि डर खाय। निराकार परम ठहराय॥ आपाकी कछु खबर न पाई। लिखेकी बात सृष्टि भरमाई॥

समै--तीन लोक देख हम आये, पाया न जमपुर गांव। पंडित भरम उपराजिया, राखा जमपुर नाम॥ जिनते जम यह ऊपजा, तिनको लीन्हेसि खाय। कहँ कवीर सोई जन बांचे, बापे चीन्हे धाय॥

रमैनी १७०--कहो पंडित तुम बेद बिचारी। पहिले पुरुष कि पहिले नारी॥ पहले तीर्थ कि पहिले देवा। पहिले बेद कि पहले भेवा॥ पहले कर्ता कि पहले कर्मा। पहले पाप कि पहले धर्मा॥ पहले बीज कि तरवर होई। पहले ज्ञान अज्ञान कि सोई॥ पहले दिवस कि पहले राती। पहले मुख की पहिले जाती॥

समै--बीज वृच्छ एक साथ है, नजहिं देखे कोय।
तैसहिं जीव रु साज सब, आग पाछ ना होय॥

रमैनी १७१--वेद बड़ा कि जिन सिरजाया। ब्रह्म बडा कि जहांते आया॥ तीरथ बडे कि हरिके दासा। देंह बडी कि बडे अकासा॥ कृष्ण बड़े कि बडे हनुमाना। राम बडा कि रामहिं जाना॥ देव बडे कि बड करतारा। धरती बडी कि बडे पहारा॥ देव बडे कि पूजनहारा। विद्या बडी कि पढने हारा॥

समै--तीरथ गये एक फल, साध मिले फल चार।
सद्गुरु मिले अनेक फल, कहें कवीर पुकार॥

रमैनी १७२--सुन पंडित इक बात हमारी। हरि ब्रह्मा एक रची फुलवारी॥ मूल चार छे ताकी शाखा। अठारह पत्र चार फल चाखा॥ बारह कनई फूटी चहुं ओरी। कुंघन बिरोह चहुं दिसि

बहु तेरी॥ सो देखनको चला संसारा। वहां बैठे पंडित रखवारा॥ देख देख सब कोइ भुलाना। षट दरशन सबके मन माना॥ रैन औ दिन करें सब सेवा। वहि बनवारीका लखा न भेवा॥

समै--जेहि बन सिंह न संचरे, पंछी बैठ न डार। सो वन कबिरन ढूंढिया, सिंह समाध बिचार॥ ओंकार नाद यक माया, तहँ लागे गुन तीन। तामे अटका जगत सब, भया वहीं लौलीन॥

रमैनी १७३--देखो देखो जीवके काजा। जात चले तज अविचल राजा॥ ये देखो लोगनकी भूल। सींचत साख तजत हैं मूल॥ मीठा फल तजि कडुवे खाता। जो नहिं तेहि जपे दिन राता॥ बस्ती छोड उजार जग जाई। खांड तजिके खरी जो खाई॥ करिके बिचार तजे जो कोई। जुग जुग यह सुख बिलसे सोई॥ वहांकी खबर सब ले आया। वहां नाहिं कछु मन भरमाया॥

समै--साखा पात सींचे सब, हरियर होय सुखाय। कबिरा सींचे मूलके, डार पात हरियाय॥ आस लाय सिंचत बिरवा, जाके फल नहिं पात। मोहि निसदिन संसा, दिन दिन सो हरियात॥

रमैनी १७४--चारो जुग हम फिरे पुकारी। कोइ न माने बात हमारी॥ कहत कहत मोर रसना हारी। मानत नाहिं मोर सुत नारी॥ हम संजोग कीन्ह व्योहारा। बंस बेलको रचा संसारा॥ जो हम हैं सो पूत हमारा। पिता पुत्र ते नाहिं निनारा॥ हम नित बोलें हम नित चालें। हम करता त्रिभुवनको पालें॥ हम जललें हम करें अहारा। यह सब आतम आप हमारा॥ जो बूझे सो प्राण हमारे। जो नाहीं तिनते हम न्यारे॥

समै--जिसका करता और है, निराकार नहिं होय। जो उपदेश दियो सद्गुरुने, जगत कहे सब रोय॥ अमर तखत अडि आसले, पिंड झरोखे नूर। जाके दिलमें मैं बसूं, सैना लिये हजूर॥

रमैनी १७५--सुन पंडित मैं पूछो तोही। निसदिन संशय व्यापे मोही ॥ चार भुजा जाके पिंड न प्राना। सो प्रभु कैसे भयो पखाना ॥ जाका यह सब कीन कराया। सो प्रभु कैसे गरभमें आया॥ तीन सृष्टिका करता जोई। सो प्रभु कैसे बालक होई ॥ अकास सीस पाताल जेहि पाया। सो संपुट प्रभु कैसे समाया॥ चौदह भुवन लो जो प्रभु छाया। सो अंगुल दस कैसे कहाया॥ नित उठ जो प्रभु सबको देई। सो प्रभु कैसे तुमसो लेई॥

समै--आगु आगु पंडित चले, पाछे लागु संसार।
कविरा सेवक सो भया, पाया जिन निरंकार ॥

रमैनी १७६--यह तन पांच तत्त्वका भेला। इनमें कौन गुरू कौन है चेला ॥ एह तन है एक नगर अपारा। ताकी वस्तु कहो बिस्तारा॥ कैसी बस्ती कैसी चाला। कैसे लोगवा कैसे ख्याला॥ कैसे रैयत कैसे राजा। कैसे हरि यह जग उपराजा॥ यहि बस्तीकी चाल जो पाई। सो अमरापुर नगर बसाई ॥

समै--काजी पंडित पच मरे, पाये गांव न ठांव। कवीरा मोहि अचंभा, नाहिं धरायो नाम ॥ नाम न पाये गांवका, रहे नाहिं ठहराय। कविरा लखे बिन हरिके, आपा दिया गंवाय ॥

रमैनी १७७--बिना विवेक जगत भरमाना। भेष किया पै राम न जाना ॥ बिना विवेक जगत भयो रोगी। भेष धरा जग भया बियोगी ॥ जेहिके घर यह बूझ न होई। तिसके बंस न तिष्ठे कोई॥ बिना विवेक गये त्रिदेवा। भेष धरा पै लखा न भेवा॥ जहां विवेक तहां करतारा। भेषहिं करता रहा निनारा॥ भेष मध्य निराकार समाना। जहँ विवेक तहँ आतम ज्ञाना ॥

समै--कर बंदगी विवेककी, भेष धरे सब कोय।
वह बंदगी बहि जान दे, जहँ शब्द विवेक न होय॥

रमैनी १७८-देखा देखी जग भर्माना। ज्ञान कथा पै राम न जाना॥ काहू तीरथ बरत लौ लाया। कोई सुन्न मंदिलको धाया॥ कोई पीर औलिया सेवे। कोई नित उठ पूजे देवे॥ कोई जोग जुगति अरुझाना। कोई मंत्र जंत्र मन माना॥ कोई मुनि जन काया मारे। कोई जटाधर ब्रह्म बिचारे॥ कोई जन्म कर्म ठहराई। कोई बौध जती कहवाई॥ कोई सकति ते भया संघाती। कोई भगति करे दिन राती॥ कोई ज्ञान करता ठहरावे। कोई भूत प्रेत तन धावे॥ एक मते चले ना कोई। अपनी मत पुरुष अपनी मत जोई॥

सखै--पिता न पाया पुत्र ने, परा भरम जी माहिं। बहुते चित्त लगाइबो, ताते पहुंचत नाहिं॥ हती एककी भई अनेककी, बेस्या बहुत भतारि। कहें कबीर काके संग जरि है, बहुत पुरुषकी नारि॥

रमैनी १७९--नरकी टेक गही नहिं जाई। कोट कबीर रहे समझाई॥ कैसे उन तत गुरू पढाया। गुरू मंत्र ले जी भर्माया॥ रहन गहन जो गुरू पढाई। सो सो जीव टेक जग भाई॥ खांड तजे खारीको खाई। आप नासि दूजा ठहराई॥ आपनी तजि औरकी आसा। जलमें ठाढा मरे पियासा॥

सखै--टेक न कीजे बावरे, टेक माहिं है हानि। टेक तजे सुख पाइये, कहे कबीर निदान॥ टेक करी रावन गये, कंस भया निरबंस। कबिरा छाँडो टेक तुम, बूझ बचावो हंस॥

रमैनी १८०--सब जगका ऐसा प्रसथावा। सब कोइ कहे राम हम पावा॥ कोइ कहे हम जप तप कीन्हां। तहां राम मोहि दरशन दीन्हां॥ कोइ कहे तजा अन्न अहारा। तहं पाये हम राम दिदारा॥ कोइ कहे हम भये संन्यासी। सांख्य जोग करि मिले अबिनासी॥ कोइ कहें कण्ठी छाप बनाई। तहँ हरि दरशन दीन्हों भाई॥ कोइ कहें हम दीन्हों दाना। कोइ कहें हम रामहिं जाना॥

समै--जहँ देखा तहँ रामको, बिन यक राम न कोय।
बातन हमें जगत प्रबोधे, बातन राम न होय ॥

रमैनी १८१--देखो देखो यह नर ज्ञाना। आप तजत पूजत पाषाना॥ कोई सिद्ध करे धुन पाना। कोई रह गोड उलाटे ताना॥ कोई बैठा तज अन्न अहारा। कोइ बैठा आसन मारा॥ कोइ करें नित तरपन जापा। कोई धर्म करें तजि पापा॥ कोई घर तजि भये ब्रह्मचारी। कोई अन्न तजि दूधाधारी॥ कोइ बैठा तन खाख लगाई। कोइ बैठ तन तिलक दिखाई॥ मठ मंडपा कोइ पहुंचा जाई। कोई सुन्नमें रहा समाई॥ कोई चढावें उलटा पवना। कोइ सकल तजि भया सु मौना॥ कोइ श्रुति स्मृति पढे पुराना। कोई तीरथ बरत जो दाना॥ कोई देश दिसंतर जाई। हरि गुन गाई अन्न न खाई॥ कोइ करे काया प्रछाला। कोई डाले फिरे कंठी माला॥ कोइ करता नित राग औ रंगा। कोइ करते देव मुनीका संगा॥

समै-देखा देखी सब जग भरमा, मिला न सद्गुरु कोय।
कहें कबीर कर कर नित संशय, जियरा डारा खोय॥

रमैनी १८२--घट फूटे जल सब बह जाई। काठ जरे पावक सब जाई॥ फूल सुखाने बास न होई। घटमें चंद न पावे कोई॥ दूध बिनासे निकसे न घीव। बिन तन कैसेहु रहे न जीव॥ कांसी फूटे धुन नहिं आई। बिजना टूटे पवन नसाई॥

समै--बिन तन कोई लखे न जियरा, बिन तन झूठा रूप।
कहें कबीर झूठा किन्ह पंडित, ऐसा ख्याल अनूप॥

रमैनी १८३--सीतै सात भई सितलाई। सीतै सीत रोग होय जाई॥ सीतल मिला सो साधु कहाई। सीत बिहूना साध न पाई॥ सीतल होय तब सीतल पावे। सीतल होय तब सीत न जावे॥ सीतै सीत अमर नर होई। सीतल राखे ज्ञानी सोई॥

समै--सींतै मिल सीतल भया, सीतै सित अधिकाय।
सीतल जीव विनासिया, सीतलकी दो बात॥

रमैनी १८४--यहि बिधि बूझो पंडित ज्ञानी। हिय कपारकी दोउ हेरानी॥ बृच्छ एक फल भये अनंता। माटी एक घर भये अतिअंता॥ दो संजोग सृष्टि बहुताई। कंचन एक भूषण बहु भाई॥ सूत एक वस्तर बहु नामा। अन्न एक धरे बहु नामा॥ अनेक जान जिय एके जाने। अलख पुरुषको जो पहिचाने॥

समै--गहना एक कनकते गहना, नाम अनेक धराया।
कहैं कबीर कंचनका भूषण, एक भया जब ताया॥

रमैनी १८५--पंछी एक जाकी सब सैना। बिन तन जीव बोले मुख बैना॥ बिना पंख उड़ सब जग जाई। बिना चोंच जग लीन्हा खाई॥ वहि पंछीका खोज न पाया। जिन पंछी सब भरमाया॥ अकास पताल कीन्ह वहि बासा। घट घट वाका भया निवासा॥

समै--ब्रह्मा विष्णु महेश्वर, असुर मुनी सुर देव। ढूंढत ढूंढत पच मुए, लखा न वाका भेव॥ तिल जैसी है चिरैया, पंखा नौ नौ हाथ। बकोटन मास परोसन वाकी, पूंछ अठारह हाथ॥

रमैनी १८६--सांचा बनिज करो सब कोई। सांच बनिज लाभ बहु होई॥ सब गुन भरे जीव सो देवा। निरफल वृक्षकी करो न सेवा॥ बनखंड मांझ परो जन भाई। शब्द बिचार रहो ठहराई॥ करता पुरुष ते करो सनेहा। देह धरे जनि होहु बिदेहा॥ जहां बूझ तहँ करता माना। साधते करता नाहिं भिनाना॥ करता करे सब जीव जनंता। नित समझावे संत अनंता॥

समै--जो दिल दगा समुद्र है, तेहि बन जाव जिन कोय। सो

दिल सदा बनीजिये, जेहि दिल दगा न होय ॥ जैसा दिल मेरा अहै, ऐसा तेरा होय। कच्चा लोहा ताय करि, संधि लखे नहिं कोय ॥

रमैनी १८७--भौजल नदी महा बिकरारा। मन मलाह तहँ खेवनहारा ॥ काम क्रोध दोऊ घटवानी। ते सबकी कर ऐंचातानी ॥ मोह नाव आसा कँडिहारा। लोभ भौंर तृष्ना लहर अपारा ॥ ऐसी नदी नाव यह आई। तेहि चढ उतरे यह जग भाई ॥ उतर उतरके गये तेहि ठाऊं। मिला संदेस न लीना नाऊं ॥

समै--गुन टूटे बेरा बहे, औघट लागे जाय।
कहँ कबीर मोर यह बिरवा, जड़ पातो गयो सुखाय ॥

रमैनी १८८--वचन हमार तुम सुनो कबीरा। करता सब गुन धरे शरीरा ॥ आदि माया संग केल कराई। केल करत इच्छा जिय आई ॥ दो संयोग भये तिरदेवा। तिनहिन लाई उनकी सेवा ॥ सेवा करत गये जुग चारी। किनहुं न मानी बात हमारी ॥ करताकी कछु खबर न पाई। अंग बिहूना रहा लौलाई ॥

समै--बंस बेलके कारने, करता पास उपाव।
करता छोड अकरताकी नारी, पुत्रते कीन्ह अन्याव ॥

रमैनी १८९--बचन हमारा सुनो अनूठा। वेद किताब कहेको झूठा ॥ बेदको भेद न काहू पाया। झूठा बेद पंडित ले आया ॥ बेद बिहूना न पंडित होई। वेदे जाने पंडित सोई ॥ संध्या तरपन न पंडित जानो। करता लखा सो पंडित मानो ॥ भेद न पाया जग भर्मांया। झूंठा झगरा पंडित लाया ॥ तेहि झगरा सब जग अरुझाना। देव आदिका मरम न जाना ॥

समै--चारो जुग झगरा गये, झगरा तऊ न छूट।
यह पंडित सब जग भर्मावे, कहे कबीर सब झूठ ॥

रमैनी १९०--बाद बिवाद तजो तुम ज्ञानी। बूझो बूझो हमारी

बानी॥ बिन बूझे नाहीं गुन पैहो। बिन बूझे तुम हरिहिं समैहो॥ सत्त होय तेहि तजो न भाई। औ सत तजो जन रहो समाई॥ तजो नहिं बाप तजो नहिं माया। तजो नहिं कर्म तजो नहिं काया॥ छाडो न आपन लोग व्योहारा। छाडों न यह सुखको दरबारा॥ बापहिं चीन्हों चीन्हों फिर माई। ताते चीन्हों तत्त्व समाई॥

समै--जात पात जिन छोडो, छोडो गांव न ठांव। शब्द हमारा न छोडो, जनि फेर धरावो नाम॥ षट दरशन भूले जात पांत तज, मिला न सद्गुरु कोय। कहैं कबीर भर्म ऊपजा, थित काहे ते होय॥

रमैनी १९१--यहि विध बूझो पंडित ज्ञानी। जहां अगिन तहां धूम निसानी॥ जहां जीव तहं होइहै देही। जहां पुरुष तहं होइहै जोई॥ घटके अधार नीर घट होय। जहँ देही तहँ जीव संजोय॥ जहां संशय तहं होइहै रोगा। जहाँ प्रीत तहँ होय वियोगा॥

समै-एक एक ते होय नहीं, जो पै दूसर नाहिं।
दूसर मिला एकै भया, इसमें संशय नाहिं॥

रमैनी १९२--समझो शब्द होय जिय चैना। जिन परछि पाय न देखो नैना॥ षट शास्त्र यह करत लड़ाई। मिमांसा रहा कर्म ठहराई॥ वेदान्त कहे ब्रह्म जग करता। जैन मतै बोध चित धरता॥ करताको ठहराया अन्याई। मंत्र शास्त्र शिव सकती ठहराई॥ पातंजली अनेक ठहरावे। झगरा मेटे जो न्याव चुकावे॥

समै--न्याय करे यह सोय जिन, पाया पुरुष अलेख।
कहैं कबीर सोई जिव मुकुत, जिन यह किया विवेक॥

रमैनी १९३--षट दरशन यह करें बिचारा। निराकार सो सिरजनहारा॥ निराकार दस दिशा बनाई। दसो दिशामें रहा समाई॥ पूरब भगति पच्छिम करे ज्ञाना। उत्तर जोग दच्छिन कर्म ठहराना॥ अग्रे काल वायव्य भई संसा। नित नेम ईसानं

नीवंसा ॥ पाताल भर्म अकाश निराकारा । मृत्युलोकका झूठ पसारा ॥ घरकी नारि तज भया वियोगी । दसों दिशामें भया विरोगी॥समाधलायजोतको ध्याया।अलखनचीन्हाजीवगँवाया॥

समै--दसों दिसा खाली परी, सुन्न ब्रह्म ठहरान ।
कहैं कबीर यह बूझ जगतकी, यहि ठहरा गुरुज्ञान ॥

रमैनी १९४--देव निरंजन पुरुष न दूजा । वेद पुकारे पंडित कर पूजा ॥ मसजिद मुलना करे पुकारा । स्वास वेद करे निरंकारा ॥ जवाब सवाल न पावे कोई । पुकार पुकार जन्म सब खोई ॥

समै--आखंडिया झाईं भई, पंथ निहार निहार ।
जीभड़िया छाले परे, अलख पुकार पुकार ॥

रमैनी १९५--षट दरशन मिल समझो बानी । केहि ठहराया आदि भवानी ॥ अलख बडा कि, जिन अलख लखाया । करम बड़ा कि जिन ककर कराया ॥ दसो दिशामें दस व्योहारा । दिशा बडीकी बूझनहारा ॥ जो सब बूझे करे करावे । तौन बड़ाकी जो नहिं पावे ॥

समै- बीजक बतावे बित्तको, जो विञ्च गुप्ता होय ।
शब्द बतावे जीवको, बिरला बूझे कोय ॥

रमैनी १९६--नरका ढाढस अगम अपारा । गहे न जाय जाय संसारा ॥ जनक आद जिव देह जराई । सनकादिक बसे बन जाई ॥ रावन आदि जिन सीस कटाया । हरनाकुस आदि जिन उदर फराया ॥ बलि आदिक जिन पीठ नपाई । कंस आदि जिन कीन उपाई ॥ गौतम आदि जिन तप कियो भाई । विश्वामित्र आदि सृष्टि करि आई ॥ जमदग्नि आदि जिन तप कीना भाई । जड़भरत आदि जिन सरब गंवाई ॥

समै--षट दरशन ढाढस मरे, गन गंध्रव मुनि देव । कहैं कबीर

ढाढस तजे, लखे सो अविगत भेव॥ जेहि करता तिन दीन ढाढस, ढाढस वहां न होय। अंग बिहूना जो रहे, अहंकार करे सोय॥

रमैनी १९७--नर सा चतुर न दूजा होई। चतुरे चतुर मिला सब कोई॥ पाप न चतुर चतुर व्योहारा। चतुर चतुर ठगे संसारा॥ चतुरे सुत चतुरे मिल जोई। चतुर विहूना मिला न कोई॥ एक न तजे करे चतुराई। माता एक जोनि ठहराई॥ चतुरे मिल चतुरा समझावे। चतुरको भेद चतुर होय पावे॥ एक न चतुर चतुर संसारा। सब चतुरनते करता न्यारा॥

समै--चतुराईको छोडदे, सद्गुरुको मिल बूझ।
कहँ कवीर दीपक बिना, अंधेरे परे न सूझ॥

रमैनी १९८--यह नर उतर पारको जाई। कहो पंडित मोहिं ते समुझाई॥ नाव न करिया न खेवनहारा। नदी बिकट जेहि वार न पारा॥ जल अगाध तहँ लहर गंभीरा। औघट घाट सब उतर कवीरा॥ रैन अंधेरी संग न कोई। आप आप चले सब सोई॥ दिवस न रजनी पुरुष न नारी। हरि ब्रह्मा तहँ नहिं त्रिपुरारी॥ सुख ना भोग गुरु ना चेला। पार उतर जग चला अकेला॥ निरगुन ब्रह्म कछु ना भाई। सुन्न सेयके सुन्न समाई॥

समै--गुन टूटे बेरा बहा, उठ गया खेवनहार। औघट घाटी नर गया, कासों कहों पुकार॥ फुलवा भार न ले सके, कहँ सखिन सो रोय। ज्यों ज्यों भीजे कामरी, त्यों त्यों भारी होय॥

रमैनी १९९–बाट बिकट नहिं कोइ बटवानी। तौने बाट चले ब्रह्मज्ञानी॥ नगर दूर तहं संग न कोई। गैल सलसली उदो ना होई॥ भेद अभेद न त्रिगुन माया। पांच तत्त्वकी हती न काया॥ बोल चाल न पीव न खाई। अंकार नहिं नगरमें रहाई॥ सुख अनंद ना निद्रा भाई। समझ भूल नहिं आवे जाई॥

समै--चिउँटी जहाँ न चढि सके, राई ना ठहराय।
आवागमनकी गम नहीं, तहाँ सकल जग जाय॥

रमैनी २००—वहांकी कोई कहे न बाता। सुन्न नगर की जो कुसलाता॥ पुरुष साथ जरे जो जोई। वहांकी बात कहे न कोई॥ निरगुनमें जो जीव समाया। तेहि की खबर न कोई लाया॥

समै--स्वाद ना पाये कंदका, सब कोइ करे बखान। मीठा मीठा जग कहे, मीठेमें भइ हानि॥ बात पराई को कहे, परदा लखे न कोय। सहना छिपा पयारमें, को कह बैरी होय॥

रमैनी २०१—प्रेम प्रीति सुनत जग आया। सरगुन छोड निरगुन गुन लाया॥ निरगुन पदमें बैठा जाई। निरगुन रहा सुन्न ठहराई॥ निरगुनका गुन लखे न कोई। प्रेम लगाय पुरुष औ जोई॥ प्रेम प्रेम सकल जग बंधा। प्रेमका गुन कछु लखे न अंधा॥ प्रेम प्रेम मुवा सब कोई। प्रेम बूझ प्रीतम है सोई॥

समै--साध बसें हरि भीतरे, हरि बस साधन मांझ।
कहें कवीर देश वह ऐसा, जहां भोर नहिं सांझ॥

रमैनी २०२—सब पंडित मिल कहें बिचारी। केकर बाप काकी महतारी॥ हमना कोइके कोइ न हमारा। उड़ जैहै जब बोलनहारा॥ सुन्न नगरका पवन यह भाई। सुन्न नगरमें जाय समाई॥ संग साथ नहिं कोई आया। बीचहिं माया बीच मिलाया॥ यह कह गुरुवा जग भरमावे। सहर छुटाय सुन्न ले जावे॥

समै--वहां की आसा लाय ना, झूठी यहां की आस।
ग्रह तज घर बन मांडिया, जुग जुग फिरे निरास॥

रमैनी २०३—एक दिवस वो एके राती। सात रैन दिन कहो केहि भांती॥ एक पुरुष वो एके जोई। दो संजोग जगत सब होई॥ एके प्रान वो एके काया। बहुत जीव घर कहां ते आया॥ एक ऊखकी एक मिठाई। अनेक नाम कैसे घर भाई॥

समै--नीवके बिचले सब घर बिचला, अब कछु नहीं वसाय।
कहें कबीर जो कोइ समझे, तेहिको काल न खाय ॥

रमैनी २०४--कहो पंडित तुम निगम बिचारी। काहे ते पुरुष काहे ते नारी॥ कहां ते पुरुष कहां ते राती। काहे ते जात काहे ते पाती॥ कहां ते गुरू कहां ते चेला। काहे ते बृच्छ काहे ते भेला॥ काहे ते हिंदू तुर्क कहाये। काहे ते नरक सरग बतलाये॥ कहो पंडित अनेक व्योहारा। सत्त मिर्तमें है संसारा॥

समै--एके यह तन जीउरा, एक वृच्छ एक बेल।
कहें कबीर एक जो समझे, एक अनंत अकेल॥

रमैनी २०५--अचरज एक सुनो तुम भाई। बिंद चोराइ स्वपचका लाई॥ उठी बेल फल तामे लागा। माय बहिन सब गावें रागा॥ छठी भरी तहं बाजन बाजे। बंदनवार मंडलमें छाजे॥ पर लडका भरम काहु न पाया। तैंतिस कोट देवतन खाया॥ जेहिका सुत तेहि राख दुराई। पर पुत्र पर तात खिलाई॥

समै- पेडे मूल बिगाडिया, सुत आगे भरमाय। कहें कबीर जेहिका सब कीना, तेहिका कछु न बसाय॥ आद भई अब नाहीं, परा बीज पर खेत। कहें कबीर समझे नहिं कोई, विरथा जीव मृग देत॥

रमैनी २०६--भरत भूत एक खेले भाई। ऐसा भूत लखा न जाई॥ दिवस एक भूत लपटाना। दूसर होयके पिंड समाना॥ नावत भौहा करें दवाई। भर्म भया पै भरम न जाई॥ नित उठ पीर वो देव मनावें। आप भरम आप थित लावें॥ जहांते भरम उठा यह भाई। तहां भरम वह जाय समाई॥

समै--मथुरा नगर भरम एक प्रानी, कविराके उपदेश।
कहें कबीर वहां कोइ नहीं, झूठा बहुत संदेश॥

रमैनी २०७--पांच तत्त्व गुन एके भाई। रक्त मांस कछु भेद न पाई॥ नासिका सरवन मुख एके बैना। रोम त्वचा पग कर नैना॥ रक्त मांस हाड एक गूदा। ब्राह्मण क्षत्री वैश्य वो सूद्रा॥ कहो पंडित तुम मोहि समझाई। बरन भेद तेहि देहु बताई॥

समै--एक वृच्छ बहु फल लगे, कौन बड़ा को हीन।
जो जाहीमें संचरे, सो ताही आधीन॥

रमैनी २०८--पंडित खोल देख तुव ग्रंथा। जग संजोग कामिन वो कंथा॥ नांदे बिंद समते है भाई। बालक होय बिरंच बनाई॥ नांद बिंद मिल जग भौ पाडा। ते कैसे कहे माटीको भांडा॥ नांद बिंदकी खबर न जानी। फिर फिर धोखा कहें कहानी॥

समै--बिन संजोग भया कछु नाहीं, ऐसा दिया संदेश।
बिन संजोग जगत सब उपजा, यह आया उपदेश॥

रमैनी २०९--बिन काजे काया जिव जारी। रट रट राम जनम सब हारी॥ रटे रैन दिन गुरु समझाई। रटें राम पै राम न पाई॥ रामहिं जाने रहित तब होई। रामहिं कहे भये जम लोई॥

समै--बिन डाड़ैं जग हांडिया, सोरठ परिया डांड।
बाटनहारा लोभिया, गुरु सो मीठी खांड॥

रमैनी २१०--ले चोरीटा बाभन लावे। दो कर जोरके देव मनावे॥ नारसिंह भैरोंके लाई। हनूमान देवी कहवाई॥ पीर पैगम्बर कहें यह देवा। घर घर होय सबनकी सेवा॥ दूध पूत मांगे जग जाई। कोई कहें कंथ सुत आई॥ कोई कछु कोई कछु कहई। जो जो मांगे सो सो लहई॥ सृष्टि बावरी तेहि दिल लावे। देवी देवका मरम न पावे॥

समै--राम रहे वन भीतर, गुरुकी पूजी न आस।
कहें कबीर पाखंड सब, झूठे सदा निरास॥

रमैनी २११--बिस्व रूप नया न होई । बीज वृच्छ गुन नया न कोई ॥ सत मिथ्या कछु नया न जानो । मती अवस्था नया न मानो ॥ इनही निरगुन सरगुन ठहराया । इनहिं कहा इनहीं लौ लाया ॥

समै--निरगुन पुरुष सरगुनका थापा, निरगुन बसा निनार ।
निरगुनमें यह सब अटके, कहत कबीर पुकार ॥

रमैनी २१२--वोई नैन वो वोई बैना । वोई कंथ कामिन सुख चैना ॥ वोई गुन तत्त्व वोई सब भाई । वोई प्रकृति वोई रस आई ॥ वोई करैं औरहिं ठहराई । पुरुष बिदेही फिर जग समझाई ॥ ऐसी तजे पुरान न पंथा । तत्त्वमा सगरे डारे कंथा ॥ प्रगट जगतमें देत दिखाई । फिर फिर गुरुवा ग्रंथ सुनाई ॥

समै--अपनी सुरत बिसारिके, पढ पढ भया निरवान ।
जो जौन जाके बस परा, सो ताके आधीन ॥

रमैनी २१३--पांच तत्त्व गुण जीव औ देही । पचीस प्रकृति बिकार सनेही ॥ तिनमें चार बरनको भाई । तेहि पंडित मोहिं कहो समुझाई ॥ नांद बिंद जब जाय समाया । जीव सनेही भई यह काया ॥ माटीकी काया क्यों ठहरावे । अवरन बरन गुन बरन लगावे ॥ बरन लगाय गहे नोलावे । कहि कहि पंडित जग भरमावे ॥

समै--जीव ब्रह्म पर ब्रह्म ना, अरजन बरन शरीर ।
हिन्दू तुर्क दोऊ मिल भूले, कहत पुकार कबीर ॥

रमैनी २१४--सब कोइ बात नहीं समझावे । कोइ ना मोहि वह देश दिखावे ॥ उदे अस्त लो वाहीकी बातें । हिन्दू तुर्क कहें कुसलाते ॥ सब जग वाहीते लौलाया । कर्ता न लखा जीव भर्माया ॥ षट दरसन छियानवे पाखंडा । लेके प्राण चढे ब्रह्लंडा ॥ वह देसवाकी खबर न पाई । बेद किताब सबन सुनाई ॥

समै-देव रिषी सुर औ गन गंधर्व, जच्छक किन्नर आद ।
कहें कबीर सब वहीं समाने, कर गुरुवा सो बाद ॥

रमैनी २१५--गुन टूटे बेडा बह जाई। टूटे डोर पतंग न आई॥ घट फूटे जल औघट जैहै। काया गये जिव सुन्न समैहै॥ कला चूके नट जीव गंवाई। आप चीन्हे बिन करता न पाई॥ दूध बिनासे घिव ना होई। पुरुष बिना सुत जने न जोई॥

समै-बिन बूझे धोखे गये, तिरदेवा तिरलोक। थित ना पकड़ी सृष्टि यह, यही भया जी सोक॥ बहते बहते औघट गये, पाया घाट ना तीर। बही सृष्टि सब जात है, कासों कहैं कवीर॥

रमैनी २१६--उतपत प्रलय वहांकी न होई। रूप न रेख पुरुष न जोई॥ सूक्षम स्थूल न वहंके ठाऊं। अर्थ उर्ध निरंजन नाऊं॥ निराकार निरगुन वह देवा। यह उपनिषद देत है भेवा॥ चारो जुग सेवा चित लाया। निरगुन पुरुष न काहू पाया॥ एक होय तो कह समझाई। सकल सृष्टि ते कहा न जाई॥

समै-नारि वह अंग बिहूना, सुत कन्या भइ चार।
माता बिगडी सुतन ते, पंडित लेहु बिचार॥

रमैनी २१७--जेठ मास जल जाय सुखाई। कुम्भका नीर कहांते आई॥ कहो विष सर्प कहांते लाया। कहो मक्खी मधु कहांते पाया॥ गये चारा भीतर घांस कराई। च्छीर कहांते गऊ वह दुहाई॥ अगिन काठमें कहांते आई। पुष्पमें बास कहांते भाई॥ सरमें ज्ञान कहांते होई। करामात कहांते सोई॥ बनखंड माहिं परा संसारा। हैं सब नेरे कहत निनारा॥

समै-नियरे रहा दूर अब भइ, भई वहांकी आस।
कहैं कवीर गया तब तहवाँ, फिरके चला निरास॥

रमैनी २१८--पांच चार बैठे एक तीरा। तहां बसे परमहंस कवीरा॥ पांच चार मिल खेलें पाला। तिनका भया हंस यह बाला॥ पांच चारके है यहते जो जो। किया करे इनका वह

सो सो॥ पांच चारके जो बस आया। ते करताको चीन्ह न पाया॥ पांच चार बस लावें जोई। सुबस बसें सो करता होई॥

समै--पांच चार जग लूटे, कोई लिया न भेद। जग पंडित भर्मावई, पढ पढ चारों वेद॥ बारह मास जुग चारो, नौ नायकके साथ। कहें कबीर किनहीं नहिं चीन्हा, झगरा चला जग हाथ॥

रमैनी २१९--बाजीगिर एक बड़ा अन्याई। आप न नाचे जगहिं नचाई॥ सब जग करे वाहीकी सेवा। घर घर गुरू पुजावें देवा॥ बाजीगरकी कोइ खबर न पावे। नाचे जग जो नाच नचावे॥ बाजीगरको लखे जो कोई। सो बाजीगरका गुरु होई॥ बाजी खेलाय रहा संसारा। बिरला बाजी बूझन हारा॥

समै--बिना रूप बिन रेख बिन, जगत नचावे सोय। मारे जांचे जो नहीं, ताहि डरे सब कोय॥ डर उपजा जिय माहिं डरा, डरते परा न चैन। लेखा रामै देन है, यही कहें दिन रैन॥

रमैनी २२०--तन धरके नर सुख ना पाया। हीरा जन्म बिन काज गँवाया॥ योगी जंगम भया सन्यासी। जती सती बैराग उदासी॥ वनखंडी ब्रह्मचारी ग्रेही। जहां लो जीव धरे जग देही॥ पात पात सब दुखिया भाई। सुखमें दुख जग लीन उठाई॥

समै--सुखका सागर मैं रचा, दुख दुख मेलो पांव। थित न पकड़ी आपनी, चले रंक औ राव॥ दुख न हता संसारमें, हता ना सोग वियोग। सुखहीमें दुख लादिया, बोली बोलें लोग॥ सुख विलसो सुख विलसो, काटो भरमकी डोर। कहें कबीर पुकारिके, जगते होर बहोर॥

रमैनी २२१--सांच कहों तो जग दुख पाई। झूठ कहों तो कहा न जाई॥ सत्त बात झूठ जग जाने। झूठ बात सत्तके माने॥ कहा हमार न माने कोई। पूत धरै है बापकी जोई॥ सरगुन ब्रह्म

निरगुन ठहराई। पिता ते पुत्र होय जग भाई॥ ससुर बहूका भर्ता होई। बहूकी सौत ससुरकी जोई॥ बहिन होय भैयाकी नारी। जो इला लौट होय महतारी॥

समै--ऐसी जगकी चाल, मूल वस्तु माने नहीं।
भरम परा संसार, माने जो जाही कहीं॥

रमैनी २२२--कहो पंडित तुम मोहि समुझाई। छीर गऊ यह कहांते लाई॥ जंत्र होय सब निकसे भाई। मधको कौन दोष लगाई॥ जहँ लग बस्तु पृथ्वी पर होई। पांच तत्त्व बिन उपज न कोई॥ सो नित खाय सकल संसारा। मद माँस दे दोष निनारा॥ जेहिके मन जो चाल जो भाई। सोइ कछु करे वहै कराई॥ पांच तत्त्वका यह विस्तारा। पांचो ते कछु नाहिं निनारा॥ स्वासा बिंद कहो जो नाहीं। वह संयोग वाहिके माहीं॥

समै--आद अटकमें सब परे, अटक तजे नहिं कोय।
कहँ कवीर नर बंधन भया, आवागमन न होय॥

रमैनी २२३--गुरु गुरु करे न गुरुवा पावे। सद्गुरु माहीं जगत समावे॥ सातो गुरुवा मर गये भाई। निहअच्छरमें गये समाई॥ जब जग मर गये लोक सिधाया। निहअच्छरकी खबर न पाया॥ यह अजपासे अजपा नियारा। तहां उठे अनहद झनकारा॥ अधर दीप है वाको नामा। जगत मुवा गया उस ग्रामा॥ बिन कर बिन पग सब कहुँ जावे। नैन बिन देखे बिन मुख गावे॥ बिन हिय बिन सरवन सुनता। रुन झुन सोहं सोहं झुंता॥ बिन नासिका बिन इंद्री भोगा। बिन गुन बिन जिव जोगी जोगा॥

समै--जोगी ऐसो जुगति बिहूना, तासों जनि करु नेह।
कहें कवीर तुम करता, खोजो काल पुरुष विदेह॥

रमैनी २२४--ऐसी सुनी अकथ कहानी। सुर नर मुनि सब

गावें प्रानी ॥ क्षर अक्षर निअक्षर गावे । तत्त्व माहिं निज धर्म बतावे॥ अमी शरीर नांद औ बिंदा । निहअच्छर पुरुष तहँ करे अनंदा ॥ सुन्न परे निज धाम बताया । निरगुन पुरुष तहां ठहराया॥ ब्रह्मा विष्णु महेश्वर थाके। सुर नर मुनि तहां कोइ न राखे॥ सब बातनते रहें निनारा । निहअच्छर पुरुष जान अपारा ॥ हिंदू तुर्क दोऊ यक बानी । निहअच्छर पुरुष न कोऊ जानी ॥ निरगुन सोइ निअक्षर जोई । लखे न वाको चले सब कोई ॥ छर कहे माया अच्छर प्राना । निहअच्छर निरगुन निरवाना ॥ बस्ती उजार उजार बसावे । छर अच्छरकी खबर न पावे ॥

समै--छर अच्छर दोनों नहीं, निहअच्छर निज नाम । सुन्नके परे मुकाम है, सो जानो निज धाम॥ सुन्न परे एक शिखर है, तापर है एक ठांव। तहांते हंसा आइके, जीव धरायो नाव॥ शिखर परे निज धाम है, शब्द उठे गंभीर । तहांते हंसा आइके, भये वीर कबीर॥ घरको छोड़ बाहर चले, निहअच्छर जहं नाम। कहें कबीर पुकारके, द्वादस गये निज धाम॥ निहअच्छर निजधाम है, तो सुन्न परे है नाहिं। सुन्न परे निज सुन्न है, निरगुन पुरुष वहां नाहिं॥

रमैनी २२५--षट दरशन मिल करें बिचारा । आपन आपन मत कीने न्यारा ॥ औ पंथ अनेक हैं भाई । अपन अपन मत सबे बताई॥ अपनी अपनी कथा बतावें । करताका अस्थान न पावें॥ जोगी कहें जोग करो भाई। अलख पुरुष तब देइ दिखाई॥ जैन कहें करो पारस पूजा। पारसनाथ पर देव न दूजा॥ सन्यासी कहें तत्त्व जो जारी । सच्चिदानन्द मिले त्रपुरारी ॥ जंगम कहें करो शंकर सेवा। संकरनाथ पर और न देवा॥ दरबेस कहें चार पर आवें । अल्लह तब लाहूत दिखावें॥ ब्राह्मण कहें वेद जो जाने । वेदकी रीत ते ब्रह्म पहिचाने॥ यहि विधि कहें जहां लो पंथा ।

निरगुन कथ गल डारें कंथा ॥ नौधा भगतिका भेद बतावें। चौका आरति और करावें॥ जमते तिनका बहुर तोड़ावें। शरीर अर्थ नारियर अरपावें॥ निहअक्षर निरगुन निरबाना। लैके जाय जबे निनाना ॥ पान परवान सनंद जब पावे। अधर दीप तब जाय समावे ॥ निरगुन निराकार निज जोई। अलख निरंजन जाने सोई॥ जो परवाना पावे भाई। अमरलोक सोइ जाय समाई॥ सोरहें भान तेज सो होई। वाकी सुरत करे सब कोई॥ ऐसे कह कह जग भरमाया। सबै जीव यहि भांति ठगाया॥ वे ब्योहार सुने मन माना। यही कहें मोहिं वा घर जाना॥ घर घर झालर झांझ बजावें। निहअक्षरकी लीला गावें॥ वहांसे उतर यहां जिव आया। यहां वहां कछु भेद न पाया॥ कहे मैं कहो सो न समझे कोई। शब्द हमार न चीन्हे लोई॥ जो कोइ सुरतवंत होय सांचा। काल मिटावे मनसा बाचा॥ सुवना सेम्हर बहुत दिढाया। ऐसे कह कह मान उतराया॥ सुवना सेम्हर त्यागो भाई। यही छुगली पर बैठो आई॥ सुगना सुरत कीन जिव सांचा। सेम्हर त्यागो मनसा बाचा॥ उड़ सुगना छुगली पर आई। छुगली प्रीत कीन्ह चितलाई॥ वही सेय पाई तहँ हरुना। जबहिं निरासा उड़ सुवना॥ ऐसे जीव भूल भटकाया। आरति चौका बहुत कराया॥ देहै त्याग जैहै यहि लोका। सत्तनाम सुमिरो नहिं सोका॥ बारह बाट कीन जिव भाई। समता नाहीं लोग लुगाई॥ झूठी बनिज करो मत कोई। सांचा शब्द परखो निज सोई॥ जीवन भई भर्मकी फांसी॥ मुये मुकति कौन उदासा। अच्छर अमर वो छर है माया। यहीते सब जगत डराया॥ ज्योंका त्यों छर अक्षर भाई। बिना बूझ सब जगत डराई॥ ये तो सबे चढे ब्रह्मण्डा। भये झूठ सबही पाखण्डा॥

समै--साहेब अंते है नहीं, जेहि सेवे संसार। तुझही ते साहेब तुझहीते बंदा, कहें कबीर पुकार॥ ऊपरकी दोऊ गई, हृदयकी गई हेराय। जाके चारो लोचन गये, तासो कहा बसाय॥ सेम्हर केरे सुगना, छुगले बैठा जाय। सीस पटके सिर धुने, ये उसहीका भाय॥

रमैनी २२६--अगम अगोचर कहें सब ज्ञानी। विरला बूझे हमरी बानी॥ कबीर कबीर कहें सब कोई। जहँ लग सृष्टि कबीरा सोई॥ तामें अनेक विवेक समाना। सो कबीर जिन रामहिं जाना॥ अल्लह राम न दो हैं भाई। अल्लह रामने सृष्टि उपाई॥ एक कबीर समुद्रके तीरा। जलहल बूडा एक कबीरा॥ दोनों एक कबीर कहाया। वैष्नव एक कबीरा गाया॥ एक कबीर कासीमें रहिया। अनंत कबीरको तेरा सहिया॥ अनंत बीज करता कहवावे। देश देश अपनी मत गावे॥

समै--तुर्की अरबी फारसी, संसकृत उनमान।
अपनी अपनी भाषा, सब कोई करे बखान॥

रमैनी २२७–तीन काल बिच खेलो भाई। इक्कीस छै सोलह ठहराई॥ ताते अठोत्र जाप कहाया। नारी पुरुष यहि देख भुलाया॥ छैसौ छत्र जाप जो होई। एक एक ते अंस मिले सोई॥ यह अजपाका जाप बिचारा। एक जपत हैं तत्त्व निरंकारा॥ अधर दीप तेहि साहेब खेला। वहां करें नर नारी मेला॥ तेहि मिल सुन्न यह सब जग धाया। तार एक बिच अगम बताया॥ अजपा अनहद रहे भुलाई। येहीकी गर्ज यहीकी झांई॥

समै--बिनरी बरसे सावन, त्रिबेनीके घाट। झांई झलके सुख करे, पाडीजीकी बाट॥ तन छूटे जो तन लहे, आवागवन न होय। कहें कबीर यह भरम है, यह वह मेटो दोय॥

रमैनी २२८–अधर दीप तेहि नाम धराया। जीव ब्रह्म पर

दूजा गाया॥ तत्त्व बित्त ते गावै न्यारा। पारब्रह्मते नाम अपारा॥ धर्मदासको बहीया कीन्हा। तेहि संग जीव पायन लीन्हा॥ जमते तिनका टोरी भाई। सत्तलोककी पैरी पाई॥ तब वह हंसा लोक सिधारा। भौसागरते भया निनारा॥ यह तन झूटा काम न आवे। सुकरित मिल तब लोक सिधावे॥ ऐसा अचरज एक अनूठा। सबका करता नाम सरूठा॥

समै-अर्ध ऊर्धमें कछु नहीं, अरध सुन्नका नाम।
कहैं कबीर आसा जनि बांधो, झूठा अधर मुकाम॥

रमैनी २२९--अधर मुकाम जगतमें छाया। तीन छोड चौथे लौलाया॥ अमी शरीर तेहि अगर सुबासा। अधर लोकमें करे विलासा॥ सुच्छम शरीर औ सुच्छम अहारा। हंसा खेले पुरुष दरबारा॥ हंसा हंसन दरशन पाये। मिटी काग गत हंस कहाये॥ चौबिस पारस सात सिकारी। भिन्न भिन्न तिनकी गत न्यारी॥ बिन बूझे हुलसे सब कोई। हुलस हुलस जिय डारा खोई॥

समै-जड काटो ता वृच्छकी, जहँ हंसाको बास। कहैं कबीर हंस सब जर गये, करके सुखकी आस॥ हंसा तुम जिन जावो, अधर दीप निज धाम। कहैं कबीर उजाड पडा, बूझो आतमराम॥

रमैनी २३०--तन चौका सतसुकरित वीरा। अधर जोत जहँ जरे कबीरा॥ नरियर मोरा रेखा साता। तेहि नारियर कीन्ह जम घाता॥ पांचो सीखी जर गये भाई। जरा मरण कैसे अंक मिटाई॥ पानमें अंक लिखे कडिहारा। तेहिकी आस उतरे संसारा॥ धर्मदास सो सुनो हमारी। हमरी गत मत सबते न्यारी॥ चार धाम जहँ पुरुष अपारा। खोजे हंसा करें दीदारा॥ यहि बिध भूले सब कडिहारा॥ काया छोड मरा संसारा। गुण औ तत्त्व न तन मन भाई। सुछम रूप सो पुरुष सवाई॥

समै--सुछम २ जनि कहो, सुछम जीका काल। कहैं कबीर करता लखो, सुछम है जंजाल॥ कहा दीप कहा नाम है, कहा पुरुषका गांव। कहैं कबीर जनि भरमो, वहां जीव न ठांव॥

रमैनी २३१--ठांव ठांव सबही मिल करिया। ठांव न चीन्हा भरमि भरमि परिया॥ जैसे कन्या गुडिया बनाई। तेहि संग बहुबिध केल कराई॥ बिरहिन सुता पियाका नाऊं। ढूंढत फिरी सब ठावन ठाऊं॥ प्रेम भगति ते पिया बोलावे। पिया बोलावे पीव न आवे॥ पिय पिय करत अपन जिव दीन्हा। पियाका दरसन कबहुं न कीन्हा॥ आरत मंगल पिया लडावे। ब्राह्मण सो जो दास कहावे॥ कोटिन ब्राह्मण बहे अपारा। कोटिन दास भये संसारा॥ गत मत पुरुषकी नाहीं पाई। भगति बिरहिनी प्रेम लगाई॥

समै--बिरहिन साजे आरती, कंथ पियारे आव। चाहत पिया जो ना मिले, कहो ब्राह्मणको भाव॥ बिरहिन हती तो क्यों ना गई, पिय अपनेके साथ। झूठे नेह सनेहरा, मरे मरोरे हाथ॥ आसा ऐसी जगतकी, ज्यों बिरहिन पिय आस। सेवा करे सबनकी, सोये पियाके साथ॥

रमैनी २३२--चंदा झलके जलके माहीं। जलमें झलके दूसर झांई॥ दोनों झूठे साँचा चंदा। सुख तत्त्व तब होय अनंदा॥ सुख तत्त्व रहे नहिं भाई। कीहे चंदा जो जाय समाई॥ दुतिया भया वहे दुखदाई। सोइ वहे जो देत मिटाई॥ जब लग चार ठौरमें खेले। तब लग भरमत फिरे अकेले॥ तत्त्व नास जनि करो रे भाई। तत राखे बिन जम ले जाई॥ तत्त्व बित्तका एके भावा। परब्रह्म सो ब्रह्म कहावा॥ तत्त्व बित्त ते जो है न्यारा। सो नाहीं तुम्हारो करतारा॥

समै-आसा झूठी मुक्तिकी, झूठा पुरुष दरबार। कहैं कबीर खोजो तुम करता, जिन ढूंढो दीदार॥

रमैनी २३३--दीदार दीदार कहे सब कोई। दीदार कहे दीदार न होई॥ को तुझसे दूजा है भाई। जेहि दीदार प्रेम चितलाई॥ अलम जाहद आरफ जोई। आशक माशूक दीदारको होई॥ आशिक इश्क समाना भाई। प्रेम समाना प्रेम समाई॥ दूजे प्रकृति कहो जो कोई। करता माया एके होई॥ बिन माया करता नहिं भाई। बिन करता नहिं माया आई॥ जो ब्रह्म पारब्रह्म सोई। ब्रह्मते न्यारा पुरुष न जोई॥ सब गुन भरा यह करता तेरा। कहा मान तैं चेत सबेरा॥ तेरी सुरत जो सुरत समाई। जरा मरन कहो को फिर आई॥ जेहि कारन यह सब जग नाचा। ना वह मिला न वहिते बांचा॥

समै--जो न्यारा सो बैरी तेरा, माया ब्रह्म करतार। कहैं कबीर समझो तुम ज्ञानी, मानो कहा हमार॥ तीन मारे तीन राखे, आठ मारे काठ। लौट हंसा नीर पीवे, सुखमनाके घाट॥

रमैनी २३४--रहे समाय जो सुरता कोई। आवा-गवन न ताकर होई॥ बाहर मरे न सुरत समावे। ताते फिर फिर आवे जावे॥ अष्टधात ले रहे समाई। जुग जुग सो सुखराज कराई॥ तत्त्व मध्य त्रिभुवन समाना। तत्त्व मध्य है पवन औ प्राना॥ बिहार पवन कहां ते भाई। जहां ते पवन जीव ले आई॥ बाहर भीतर सोई पवना। समझ न परे कहे आवागौना॥ एक पवन ते अनेक बिचारा। तत्त्व पांचका है टकसारा॥ छत्तिस नारि पचासी पवना। आपन आपन गुन लावे तौना॥ पंचते ढूंढ कर एक निकारी। मूल तीन ऐसा टकसारी॥

सभै--समुद्र समाना बुंदमें, बूंद मध्य बिस्तार।
कहैं कबीर भेद करताका, बूझो यह टकसार॥

रमैनी २३५--तत्त्व बित्त हमरी टकसारा। तेहिका सब जग

करो बिचारा॥ तत्त्व बित्त ते न्यारा जोई। जानो काल तुम्हारा सोई॥ राखे तत्त्व तो तत्त्व समाई। तत्त्व बिना जीव मर जाई॥ देखो तत्त्वमें बित्त समाना। तत्त्व बित्त काहू नहिं जाना॥ तत्त्व बित्त आगम टकसारा। तत्त्व बिना नहिं करता न्यारा॥ तत्त्व बित्तका जाने भेवा। आपहिं करता आपहिं देवा॥

समै--तत्त्व बित्त निज सार है, झूठा अपरंपार। पार उतर कोइ ना गया, परख देख टकसार॥ खंड अखंडित खंड है, खंडित दूजा खंड। कहैं कबीर घरमें रहो, खाली है ब्रह्मंड॥

रमैनी २३६--अच्छर पांच ब्रह्मंड अपारा। तिनही बीच कबीर बिचारा॥ तेहिमें अक्षर एक जो मुकता। तेहिका जाने कोई जुगता॥ मा-के ऊपर क-के नीचे। परखो ज्ञानी तत्त्वके बीचे॥ दूसरे ठौर न वहँ पर कोई। यह बिध जाने मुकता सोई॥ ना जाने यह कोई भेदा। सब जग गावे चारों वेदा॥ बीजहिमें अंकूर समाया। सो अंकूर बीज ले धाया॥ करता माया बीज अंकूरा। बूझो ज्ञानी यह मत पूरा॥ बीज ते रहा अंकूर निनारा। ऐसा देखो राम बिचारा॥ है सबमें और सबते न्यारा। अगम अगोचर कथा हमारा॥

समै--सरवज्ञ ज्ञान प्रज्ञान नहीं, देखो तत्त्व बिचार। पछा पछीमें जन परो, मानो कहा हमार॥ आदि अंत दो मत हैं, तिनमें मता अनंत। कहैं कबीर दोनोंके मध्यमें, देखो हमारा तंत॥

रमैनी २३७--तत्त्व बित्त जो हमरा पावे। चौरासीका अंक मिटावे॥ द्वादस सोडस अष्टादस सोई। सहस्र दो दल औ चतुर बिगोई॥ यही नहीं और जो न्यारा। तेहि गुरुवाका झूठ बिचारा॥ झूठे झूठ मिला सब कोई। झूठी बात बहुत सुख होई॥ सांच कहो तो कहा न माने। बूझ न परे तब झगरा ठाने॥ झगड झगड सब मर गये भाई। झगड झगड सब वहीं समाई॥

समै--मता अखंड पाखंड छियानबे, देखो अपने नैन। कहैं कबीर दरशे बिना, जनि पतियाओ बैन॥ जब आपन करता लखो, सरवज्ञ होय तब ज्ञान। कहैं कबीर करता भया, मेटा सरब ब्याखान॥

रमैनी २३८--देह धरे बिदेह कहावे। करम करे करता न कहावे॥ जगमें रहे औ रहे निनारा। ब्रह्मांड मध्य है नाहिं बिचारा॥ ज्ञान ध्यानमें नाहीं आवे। इच्छा करे न इच्छा पावे॥ सब कछु करे वो नाहीं करता। ना कछु धरे वो नाहीं धरता॥ माता पिता न बंधू भाई। सुख संपतमें रहा समाई॥ है संयोगी फिरे बियोगी। सदा अनंद फिरे कह रोगी॥

समै--देखो तत्त्व बिचारिके, केहि घरमा है करतार।
कहैं कबीर सदा तुझहीमें, कैसे भया निनार॥

रमैनी २३९--निनार निनार कहैं सब कोई। कोइ न देखे वह कैसे होई॥ अविगत पुरुष जो अगम अपारा। परले उतपत नाहिं दिदारा॥ अष्ट लोक सब जगत बतावे। पांच देवका भाव ले आवे॥ करनी सर ठहरावे भाई। जो नाहीं तासों लव लाई॥ दोमें अटका सब संसारा। लोकालोक जहां बिस्तारा॥ लोका लोककी गत है न्यारी। पारस पिया निरंजन धारी॥ दिरग औ बैराग अपारा। स्थूललिंग औ जोत बिचारा॥ सुच्छम औ दस अंगुल कहाया। चतुरभुजी अंगुष्ठ पर लाया॥ सहस्रा रिषि औ अवगत देवा। ताते भया सकल यह भेवा॥ नेत नेत करके ठहराया। निराकार आकार बताया॥

समै-कर बियोग वहि पुरुषको, छांडो यह संसार।
कहैं कबीर न हाका गया, आपन क्यों न बिचार॥

रमैनी २४०--महम्मदका है यह फ़रमाना। एक दिन क्यामत होय निदाना॥ करनायत निकसे अवाज अपारा। रुईसे उडई

वृच्छ पहारा ॥ हफ्त जमींन हफ्त असमाना । धूमसे उडे यही फरमाना ॥ कापर तख्त रहे ठहराई । कहां उम्मत जो रसूल छोडाई ॥

समै--ले फरमान महम्मद आये, उम्मत किया कबूल । कहो अल्लह क्योंकर रहे, बिना साख बिन मूल ॥ आग दोनों घर लागी, कैसेहु नाहि बुझाई । कह कबीर ये दोनों अगुवा, दीन्हा जग भर्माई ॥ बैकुंठ धाम ब्रह्मा रचा, भिस्त महम्मद कीन्ह । ब्रह्मा दीये ब्राह्मनन, महम्मद तुर्कन दीन्ह ॥

रमैनी २४१--दीनके काजे अल्लह पठाया । ले फरमान महम्मद आया ॥ तिन फिर दुसरी राह चलाई । रोजा नमाज़ बांग ठहराई ॥ कलमा कुल मंत्र ठहराया । देहरा फोर मसजिद उठवाया ॥ तिन फिर कीन्हा मक्का मदीना । किबला कावा कुरान सफीना ॥ तिन फिर कीन्हे चार जो यारी । हराम हलाल औ पाये चारी ॥ मुरगी बकरी घोडा गाई । इनके तिन तकबीर बताई ॥ तिन फिर फिर हिंदू तुर्क बताया । हिंदू पर जजिया फरमाया ॥ तिन तन छूटे गोर गड़ाया । पीर औलिया अंबिया ठहराया ॥ तिन बेचून अल्लहको कीन्हा । आप चून हुकुम यह दीन्हा ॥

समै--अल्लहके दोस्त महम्मद, ते लाये फरमान । मुसलमान होवो सब कोई, पेट ते हो मुसलमान ॥ अल्लहका नूर पैगम्बर, नबीका नूर जहान । मुसलमान भिस्त जांयगे, दोजख परे हिंदुवान ॥ खुदा महम्मद एक है, सबही कहो बिचार । सबे परे भर्म जालमें, कहै कबीर पुकार ॥

रमैनी २४२--अल्लह एक महम्मद जाना । अल्लह ते दूर रहा हिंदुवाना ॥ ब्राह्मन ब्रह्मे मिले सब जाई । तीन बरन अधविच रह भाई ॥ अल्लह मुकाम पश्चिमें कीन्हा । राम मुकाम पूरब में लीन्हा ॥ दिवाले बसे चल सालिग्राम । मसजिद अल्लह किया

मुकाम ॥ पूरब राम पश्चिम रहिमाना। और मुलक किसका अस्थाना॥ पूजा रचा बहुत चितलाई। राम न कबहूं दृष्टि दिखाई॥ रोजा निमाज मरा तुर्काना। कबहूं न मिला नबी रहमाना॥

समै--धोखे धोखे सब जग बीता, दो अगुवाके साथ।
कहँ कबीर पडे जो बिगारी, अब काहे न आवे हाथ॥

रमैनी २४३--बेदका भेद न काहू पाया। कहो पंडित जीव कहां ते आया॥ करताका किस घर बिसरामा। काया छूटे कहां मुकामा॥ काजी मुलना पढे कुराना। ब्राह्मन भूले पढे पुराना॥ अपने करताकी खबर न पाई। माया भरम रहा लौ लाई॥ कर्मके बंधन तजे न कोई। ताते बिनसे पुरुष औ जोई॥

समै--लिखा पढीमें सब परे, यह गुन तजे न कोय। सब परे भरमजालमें, डारा यह जिव खोय॥ कुसल बिनासी सब दुनिया, दुनिया कुसले लाग। कहँ कबीर अब ना बूझे, घर घर लागी आग॥

रमैनी २४४--सब तुर्कन मिल कीन्ह विचारा। लाख पैगम्बर भये असी हजारा॥ तिन पर खतंम महम्मद पाई। किताब कुरान अल्लाह पठाई॥ अमर नाहीं औ चार मुकामा। वस्ती छोड़ उजार बिसरामा॥ जबरील हुवा उनका दरमानी। यहां वहांकी कहे कहानी॥ दो इमाम भमे चार यारा। लौलाकलमाका भया पसारा॥ जग करता बेचून कहायो। बीच कुरानके यह लिख आयो॥ यहांकी आस झूठी सब भाई। वहांकी आस लिया तिन खाई॥

समै- सबके पीर महम्मद, मोमन तिनके मुरीद।
दोस्त अल्लहके ये भये, और जहान नादीद॥

रमैनी २४५--काजी एक रवायत लाया। अजरोस सो बुत त्रास कहाया॥ तिसका बेटा हुवा खलीला। मुसलमान भया कहे दलीला॥ यह देखो भूलनकी बाता। एक घरमें दो धरे जाता॥ आगमें परा भया गुलजारा। गिरोह ले गया दरिया पारा॥

हदेहद मरा सब भाई ॥ अल्लहकी गत किनहुँ न पाई ॥

समै--कहते कहते वह गये, मिला न बहुरि संदेश ।
वाही संधिमें सब परे, अगुवाके उपदेश ॥

रमैनी २४६--जब अल्लाह तूफान उठाया । तबहिं महम्मद किस्ती लाया ॥ बैठ किस्ती सब उतरे पारा । नूह भया सो खेवनहारा ॥ पुत्र भया उसका अन्याई । तूफान उठा तेहि दिया डुबाई॥ कहर खुदाका जिस पर आवे। तिस बंदेको कौन बचावे॥ यह आयेत कुरानमें आई । मुसलमान सब रहो लौलाई ॥

समै--इनही बातन सब जग भूला, करता परा न चीन्ह। पढ पढ बहुत किताबें जोही, अपना जी पै दीन॥ जिस वृच्छका बीज था, लखा वृच्छ नहिं सोय। अकरता करता सब मिले, डारा जियरा खोय॥

रमैनी २४७--यह आयत कुरानमें आई । जहांते आया तहां समाई॥ वह साहेब हम बंदा भाई। लाहूत ते सृष्टि किया पैदाई॥ लम यलद व लम युलद कहाया। वह बेचून न लखे लखाया॥ उसका नूर सकल पर छाया । वहांका थाहिं न किनहूँ पाया ॥ बहुर वहाँकी हुकुम ते आया । कुन फैकुन कर पैद कराया ॥

समै--बाहर कोई ना हता, जो कछु लखे नमून । कहें कवीर वह भटकके, नाम धरा बेचून ॥ सब कहते बेचून है, नाहिं बसे वह सुन्न । कहें कवीर कहत न बने, यासे गुन गुन ॥

रमैनी २४८--ऐसी सुनी अकथ हम बानी। काजी मुलना कहें कहानी ॥ यह बेटा अल्लहको कहाया । कुमबइ ज़नी कहि मुवा जिलाया॥ सो बह गये चौथे असमाना। खात मुलना करें बखाना॥ मूसाते नूर अल्लह छिपाया । लितरानीका नूर दिखलाया ॥ देख नूर भया बेहोसा । अकल फहम सब भूले मूसा ॥ जो अल्लहका बंदा कहाई। सो बंदा वह भिस्तमें जाई॥ यही बात तुरुक सब गावें । करताका कछु भेद न पावें ॥

समै--एकके ऊपर एक भया, अपनी चलावे चाल।
कहें कबीर किनहू नाँहि भेजा, यह है अद्भुत ख्याल ॥

रमैनी २४९--तालिब पूजे देव औ देवा। वह परतीत करें नित सेवा ॥ खतमुन्नबी भये तेहि ठाईं। सात तवककी छबीना भाईं॥ जाही खतना सब कछु जानी। दिलते बाहर कछु न आनी ॥ जब जबरईल अल्लहने पठाया। महम्मद सोई आयत ले आया॥ और हुकुम अल्लाहने दीन्हा। खतामन्नबी बूझ तब लीन्हा॥ अब प्रगट होय खेलो भाई। किताब कुरान मददको आई ॥ हिंदू मार करो तुरकाना। करामात सो तत्त्व ठहराना ॥ यह अल्लह फरमान पठाया। लायहला कलमा लिय आया ॥ एत काद सबे मिल कीन्हा। अकलका कलमा महम्मद दीन्हा ॥

समै--यह सब काम मूसाके जानो, बूझे बिरला कोय। झूठी बात सबे पतियाना, जीव अमर कैसे होय ॥ तौरीत अंजील मंसूख करी, ठहरा एक कुरान। ता घर अल्लहको ठहराया, जो है यही इमान ॥ अल्लह पैदा करनेहारा, सो बेचून निदान। कहें कबीर अल्लह यह नाहीं, ठहरा मकां लामकान ॥

रमैनी २५०--रोसन किताब किताब कुराना। सीसी पारेकी आना ॥ अलाह संवासी तहां लिख आई। रोजा नमाज और कछु भाई ॥ सरीयत मिल्लत नासूत तरीका। हकीकत मारफत लाहूत जबरूता॥ एक मकानके मकान बहु कीन्हे। नबी खुदाके पाट लिख दीन्हे ॥ तिनमें अटका सब तुरकाना। मूसक भेद विलार न जाना ॥

समै--ठौर ठौर सब छोडके, गया जहां लाहूत।
कहें कबीर दोनों पछ लूटे, अंसा अंतमें दूत ॥

रमैनी २५१--यह देखो अचरज तुम भाई। किताब कुरान ले

जगत बताई ॥ बीज दरख्त का है लाहूता । साखा वृच्छ कहे जबरूता ॥ मलकूत तिसका पल्लव लिख आया । फलवृच्छका नासूत कहाया ॥ नासूत अल्लहकी कहे जबाना । सो नासूत अटका तुरकाना ॥ ऐसी खबर जबरईल ले आया । पढ पढ मुलना सब भरमाया ॥

समै--वृच्छ नाहीं डार फल लागे, चाखत सब संसार। कहैं कबीर वृच्छ वह अबिगत, नाना फल अधिकार ॥ बीज वृच्छ दोनों नहिं, धरती नाहीं गाँव। तेहि वृच्छ ते वृच्छ ऊपजे, सो फैले सब ठांव ॥

रमैनी २५२--ले किताब काजी समझावे। रूह चार अल्लाहकी बतावें ॥ जमाती एक दूजे हैवानी । नबाती बहुर भये इनसानी ॥ अजब ख्याल अल्लह जब कीन्हा। जीव एक चार जिव दीन्हा ॥ पानी ते जीव रूह नावाती । जीव पवनते रूह जमाती ॥ दौडत जीव रूह हैवानी । लकम खुदाये रूह इंसानी ॥

समै--महम्मद बैठे मक्केपर, दिया यही उपदेश ।
सब जीवनमें खाकी प्यारा, दूर बंदगी भेस ॥

रमैनी २५३--नासूत मुकाम सरेका भाई । मलकूत तरीकत सब समझाई ॥ जबरूत हकीक भया संदेसा । लाहूत मारफत भया उपदेसा ॥ जिक्र तरीकत शुक्र शरीकत । फकर मारफत फिकर हकीकत ॥ प्रथम मुकाम सरेका भाई । दुसरी हकीकत लिया अर्थाई ॥ तिसरा मारफत कहे सब कोई। चौथा हकीकत दिया सोई ॥ इनकी बातनमें सब भूला। भया न लाभ गंवाया मूला ॥

समै--करता अपनेको नहिं चीन्हा, चला जहां नहिं कोय ।
बूझ समानी नाहिमें, डारा यह जिव खोय ॥

रमैनी २५४--यह सब कोई कहें संदेसा। चार चार का दिया उपदेशा ॥ पहले तर्क नफ्सकी करे । तर्क खलक दूजी दिल धरे ॥

तर्क दुनियाकी करे बिचारी। तर्क आखिर करे नर नारी ॥ दो वजूद आदमके गावे। बाज बिलवजूद मुमकीन बतलावे ॥ मुमकिन छोड वाजिबमें जाई। वाजिब जाके फेर न आई ॥

समै--बैठ मुकाम लाहूतके, बेचून दिया उपदेश। करता परा न चीन्हके, झूठा दिया संदेस ॥ झूठे संदेस बहुत सुख उपजा, करके गरव गुमान। कहें कवीर गये सब धोखे, फिरी मुहम्मद आन ॥

रमैनी २५५--तिहेत्तर फिरके करे बिचारा। लामान लाहेको वारा ॥ आप आपमें झगरा ठाना। अल्लहका भेद काहु न जाना ॥ झगरा करत गये जुग चारी। किनहु न मानी बात हमारी ॥ रूह नफस निदी मारक आई। रूह इनसान खेतलाफ कहाई ॥ रूह नवाती लिया अरथाई। जमाती हिया बसाया गाई ॥ दिलमें बसे रूह हैवानी। ले किताब वह कहे कहानी ॥ लामातते आया जब रूत। जबरूत ते फिर आया मलकूत ॥ मलकूत ते लाहूत हिराना। लाहूत ते आया नासूत पयाना ॥ अर्जर भया फिर पकरमें आया। फकरे मुवा न करता पाया ॥

समै--पीर पैगम्बर सब चले, जहं लाहूत मुकाम। कहें कबीर उपदेश नवीके, जीव गये बेकाम ॥ रसूल गया लाहूतको, उमत्ता पाछे लाग। जीव करताके सब मरे, बिरले बांचे भाग ॥

रमैनी २५६--आदम सबका पिता कहाया। तीन गेहूँ भिस्तमें खाया ॥ किया गुनाह जमीं पर डारा। आदम हौवा हुवा करतारा ॥ तिसके भये दो बेटे भाई। एक सुन्नी एक कुफर चलाई ॥ ऐहमकाथ जो किया अजावा। यही खबर दिया कुरानकी तावा ॥ वही असमानते जबरील ले आया। तिनको नवीने जन्म कराया ॥ कुल आलमको दिया उपदेशा। दुनिया चली वाहिके भेषा ॥

समै--आदम अल्लह दो कहे, आव अनासर नाह। रूह फिरस्ते

जनवो आदम, हुकुम ते भये जग माह॥ खबर नहीं अल्लाहकी, कौन रूप कौन भेष। कहें कबीर कहे ना नाहीं, झूठा यह उपदेश॥

रमैनी २५७--वहांकी खबर न कोई लाया। बातन बातन जग भरमाया ॥ महम्मद कबहुं भेद न दीन्हा । मुसलमान कुल ना नहिं कीन्हा॥ एक कोई भया पूछनवाला। कहो वचन तुमनकी रसूला॥ कौन हता आदमके आगे। की यह सृष्टि रही बैरागे॥ खबर दई आदम था भाई । आदम पर आदम गोहराई ॥

समै--मक्के अंदर मूसा था, बिलारका भया दीवाना ।
मूसा सबको खात है, मूसा कोइ न जाना ॥

रमैनी २५८--खबर एक ऐसी हम पाई। सो वह लिखा कुरानमें आई॥ दोनो हद आपन कर खेला। हरगिज एक न दुइ कर मेला॥ तिसकी खबर महम्मद दीन्हा। अल्लह बेहोस वाहिको कीन्हा॥ खबरदार होय दिया संदेसा। मुसलमान सब भयो उपदेसा॥ इसकी खबर कहे नहिं कोई। जीका भरम न डारे खोई॥

समै--करार न था अल्लाहको, लोटपोट कहे बात। कहें कबीर अल्लाहना तहां, जहां नहीं दिन रात॥ अल्लह महम्मद दो कहे, कहे नवी अस बात। कायमको फानी कहें, येही भूलकी बात॥

रमैनी २५९--एक समय कुरानको खोला। आदम खता नसियाँ कर बोला॥ येही आदम खताकी खानी। खताते भया खता यह जानी॥ नापाक आबते पाक यह होई। अल्लह पहचाने औलिया सोई॥ मनकी चाल चले सब चाला। यह मन सबहीका घर घाला॥ यहि मनको कोई नहिं पाया। करता लखा न जीव गँवाया॥

समै--मन सेती जियरा मिला, मन उड़ चला अकास।
मन मिलके धोखे गया, तजिके भोग बिलास॥

रमैनी २६०-तुर्क कहें कलमा पढ भाई। कलमा पढा पै खोट

न जाई ॥ कलमा पर साबूत ले आया। कलमाका कछु भेद न पाया॥ जो कलमा कलमा है सोई। कलमाको चींन्हा नहिं कोई॥ कलमा कहे भिस्तकी तारी। भिस्तकी आस दिया जिव हारी॥ कलमा राह भिस्त ठहराई। कहो कैसे अल्लाहको पाई॥ कलमाते किताब सब भाई। कलमाकी प्रतीत जिव आई॥

समै-कलमा तोड़े कुफर बोले, सो जावे वहि गांव। अङ्ग बिहूना पुरुष वह, कहुं नाहीं वह खाँव॥ आलिम पढ पढ सब मरे, कलमाकी परतीत। कायम कोई ना हुवा, वाव जगतकी रीत॥

रमैनी २६१-जो आया सो फेर न होई। एके दिवस पुरुष औ जोई॥ केते रूह भई हैं भाई। पैदा होत होत रह जाई॥ करके कौल अल्लाह पठावे। काज करे दो घर ले जावे॥ ऐसी भांति अल्लाहकी भाई। महम्मद सब उम्मत बकसाई॥ एक बात अल्लहकी नाहीं। भरमकी बात जगत भरमाइ॥

समै-जिस बिध पैदा सृष्टि भई, तिस बिध कहै न कोय। जस करता तस ना कहे, यही भरम जिय होय॥ एक रीति करता करी, सकल करी सकलाय। कहें कवीर बहु बिध भई, अब कछु नाहिं बसाय॥

रमैनी २६२-मुसलमान पै फरज यह आई। रोजा नमाज निकाह पढाई॥ ईद बकरीद जीव खंखारा। इन बातन ना रीझे करतारा॥ दीन मजहब औ चारो यारा। ईमान भयको तुम निहारा॥ तकबीर करी फातिहा कराई। राजी भये आप लिया खाई॥

समै--मनकी लहर जैसी उठी, तैसी लागे करार। करार पर जो कछु मिला, सो सब ले गये झार॥ जे समझे ते बच रहे, गये जहाँते अजान। कहें कवीर चेतो किन अबहूं, छाडो मनका फरमान॥

रमैनी २६३--मक्का मदीना काबा ठहराया। रूह अपनी काबे पर लाया॥ तहं अल्लहका भया निवासा। रोजा बांग भई मन

आया ॥ मसजिद जाय बांग करे भाई। और ठौर अल्लह नहिं पाई॥ मोमिन कहें दोस्त खुदाया। जिन कारन यह दुनीं बनाया॥ मक्के मदीना हज्ज कहवाई। वहां रहे सो कौन है भाई॥ मोमिनका घर मक्का मदीना। दीन वो मजहब कुरान सफीना॥ हिंदूका वहँ नाहीं कामा। यही नबीका हुवा कलामा॥

समै--मक्के भीतर सब रहे, अल्लह ते भइ ना भेंट।
किबला काबा कर मरे, मनकी परी झपेट॥

रमैनी २६४–कुल आलमीन भया खुदाई। खुल मुसलमीन लिखा न आई॥ क्या बूझ हिंदूको मारो। नातो मुसलमान कर डारो॥ इसका संदेसा देय न कोई। मार घार आल है निरगम होई॥ नाहीं अदली जो अदल चलावे। धोखा मेटि करतहिं लखावे॥ करता आपन चीन्हों भाई। झूंठी बात न जीव गंवाई॥ रोजा नमाज औ चार मुकामा। मक्का मदीना भया विसरामा॥ झूंठा ख्याल तजे जो कोई। आप बिचारो करता सोई॥

समै–बोलत बोलत झगडा पडा, झगड़ा बहुत बकान। कहें कवीर भरमत फिरा, ताते तत्त्व नसान॥ वहे वेचुन बेनमून नहीं, कहे तजल्ला नूर। कहें कवीर नेरे बतलावे, बहुरि बतावें दूर॥

यह अल्लह यही नूर है, यहि ते देख जमाल।
कहे कबीर बातें असमानकी, सो है ख्वाबत ख्याल॥

रमैनी २६५–बहु भाषा जनि बोलो भाई। बोलत बोलत तत्त्व नसाई॥ हिंदू हद देहरा गाई। मुसलमान मक्का ठहराई॥ तीरथ बरत उनके मन माना। रोजा नमाज इनके ठहराना॥ बनके रसूल बखसावन हारा। इनके राम न ये करतारा॥ राम कीन्ह पूरब बिसरामा। अल्लह पश्चिम लिया मुकामा॥

समै–करता आप न चीन्हे, झूठे लागा नेह। पूरब पश्चिम कर

मरे, देहते भया बिदेह ॥ अल्लह राम दो करता, दोउका एक मुकाम । कह कबीर जगत सब, तहां लिया विसराम ॥

रमैनी २६६--क्योंकर भये ब्राह्मन ! ब्रह्मानी । तुम दस कर्म वह एक न जानी ॥ काजी सुनि सुन्नत करावें । घरकी नारी क्योंकर कहवावे ॥ पुरान बेद औ शास्त्र वे देवा । जगत हीन करो फिर सेवा ॥ तुर्क नमाज कुरान भुलाना । पढ पढ मुवा मरम नहिं जाना ॥ वे कहें अल्लह वे कहें रामा । एकही घर दोऊ विसरामा ॥

समै--जो जाके मन ऊपजे, सो वह चितमें देइ ।
कहें कवीर यह बातें झूठी, समुझ हमारी लेइ ॥

रमैनी २६७--कंठी माला इनके मन माना । उनके तसबी पर किया ठिकाना ॥ इन देव पूजा तीरथ ठहरावा । उन नमाजके दिल लावा ॥ इन बैकुंठ किया विसरामा । उन भिस्त चल लीन मुकामा ॥ इनके अगुवा ब्राह्मण भाई । उनके महम्मद रहे ठहराई ॥ इनके धोती चौका असनाना । उनके एकेकै सब माना ॥ इनके दस करम रहे विचारी । उनके खतना सुन्नत संभारी ॥

समै-दो मारग दो करता, कहो कौन केहि देस ।
कहें कवीरा दोनों ते पूछत, उनका लावो संदेस ॥

रमैनी २६८--एक बीज दो वृच्छ कहाई । एक बीज दो क्योंकर भाई ॥ बेद न काहू पेट पढाया । सुन्नत कराये तुरक नहिं आया ॥ माला कंठी तिलक न संगा । तसबी वह लिया न अंगा ॥ हिंदू तुरक हो कोइ न आया । हिंदू तुरक बीच ठहराया ॥ तुरक पश्चिम दिशि चले बिचारी । हिंदू पूरब चले संभारी ॥ हिंदू तुरक कहा बिनाना । यहीं भया औ यहीं समाना ॥

समै बीज वृच्छ नहिं चीन्हे, मरे दोय पद सब कोय ।
कहें कवीर दोनों पच्छ छाडो, करता चीन्हो सोय ॥

रमैनी २६९--गगन गुफा तहं राम हमारा। साध प्रान चला संसारा ॥ हिंदू चले सुन्नको भाई। ला मकान तुर्क लौ लाई ॥ पीर मुरीद दोऊ एक संगा। धोखे गये भये तेहि भंगा॥ षटदरशन छयानबे पाखंडा। सबे मुये चढे ब्रह्मण्डा ॥ सांचा भेद झूठके माना। दोनों मिल झूंठे लपटाना ॥

समै–सहकामी सेवा नहीं, सेवा सो जो निहकाम। धोखा सेवत जनम गँवाया, खोया किया न काम॥ जहं काहूकी गम नहीं, नहीं चंद्र नहिं सेस। तहां कवीरा घर किया, सद्गुरुके उपदेस ॥

रमैनी २७०--दुइ जगदीश जगतमें छाया। मैं नहिं जानो कहां ते आया॥ हजार नाम अल्लाह कहाया। सहस्र नाम रामके गाया ॥ एक सुन्नी एक काफ़िर भाई। अपन अपन गुरु चीन्हो धाई॥ तीरथ मूरत राम निवासा। मक्का मदीना अल्लहको बासा॥ आप आपको दोनों लागे। करता आप न लखे अभागे ॥

समै--गगन गुफा बैठे हते, तिरबेनीके तीर।
कहैं कवीर सबही बैठे, सुन्न सिखर गंभीर ॥

रमैनी २७१--पंद्रह तिथि पंद्रह व्रत भाई। तुर्क मास रोजा ठहराई ॥ तीज दसहरा फाग दिवारी। दाहा सुबरात औ ईंद बिचारी ॥ हिंदू खाया बकरा मारी। तुर्कन बकरी गाय पछारी॥ हिंदूके घर बेद पुराना। तुरकनके ठहरा फरमाना॥ हिंदूके निरगुन निरंकारा। तुरकनके बेचून बिचारा॥ हिंदू नरक सरग ठहराया। तुर्कन भिस्त दोजख बतलाया ॥

समै--एक गांव दो बहिनी, दोनोंका एक नांव।
दोनों पर एक बालक थे, बिन बूझे छूटे गांव ॥

रमैनी २७२--एकादसी व्रत रहा लौलाई। अन्न तजे छीर गऊको खाई ॥ निराधार रहे आतम जारी। करता आप न लखे

बिचारी ॥ रोगी रहे तदवीर कराई । पढे नमाज मासको खाई ॥
दो घडी रात रहे फिर जगहीं । सरगही खाय परे नर तबहीं ॥
जीव हने कहँ खाया खुदाई । उनका उलस लिया हम खाई ॥
पीर पैगम्बर सबहीं खाया । जबह किया फातिया दिलाया ॥
साद भया तब ध्यान पर आया । सब देवनको अरप चढाया ॥
पहले भोग देवको दीन्हा । तब वह खाय आप फिर लीन्हा ॥
वैस्वदेव करे चितलाई । देव पित्तरको दीन खवाई ॥

समै--यहि धंधा दोनों मरे, करता चीन्हे नाहिं ।
बिन समझे जाने सुमिरे, यही भूल जग माहिं ॥

रमैनी २७३--कहो महम्मद मोहि समुझाई । मामा हौवा कहांते आई ॥ आदम किसका पुत्र कहाया । उन कैसे विश्वरूप बनाया॥ पंडित अपना खोल पुराना। विश्वरूपका करे ब्याना॥ ब्राह्मण ब्रह्मा कहांते आय । कैसेके यह सृष्टि उपाय ॥ लौट उमील करे बयाना । ओंकारको दीन प्रवाना ॥ कौन रूप कौनसा गाऊं । कौन देश निरगुनका नाऊं ॥

समै--पुरुष नार एक संग हैं, साथ बीज अंकूर ।
देश विलायत सुन्न पर, परिपूरण सदा हजूर ॥

रमैनी २७४--दोई दीन कहांते आये। कहो कैसे दो दीन चलाये॥ वेद न काहू पेट पढाया । सुन्नत कराय तुरुक नहि आया॥ देव न देहरा रामउ खाये। पीर मसीत न अल्लह बनाये॥ बेद पुरान न राम बखाना। अल्लह न पढा किताब कुराना॥ रोजा नमाज न अल्लह पढाया । पूजा अरचा न राम बताया ॥ पूरब राम न कहा संदेसा ॥ पश्चिम अल्लह न कहा उपदसा ॥

समै--बहे लोग सब जात हैं, दो अगुवाके साथ ।
कहँ कवीर ऐसा कोइ नाहीं, जो गहि राखे हाथ ॥

रमैनी २७५--चार यार मिल किनहु न जानी। बीबी फातमा जो पहचानी॥ दसतार महम्मदी धरा उठाई। नूर महम्मदी दीन दिखाई॥ सकल सृष्टि जो देख न पाया। कुंती जसोदा सोइ दिखाया॥ कृष्णमई देखा संसारा। जिसके बखनका वार न पारा॥ तेहि कारण हिंदू तप साधी। तेहि कारण उन कीन्ह उपाधी॥

समै--मायाके यह सरब गुन, चंचल चपल ब्योहार।
छल छिद्र उनही बन आवे, करता इनते निनार॥
नाटक चेटक अद्भुत अगम, रहा चहुंदिशि पूर।
कहैं कबीर यह भिस्त नहीं है, रहा सो खालिक दूर॥

रमैनी २७६--एक महम्मद एक खुदाई। एक निरगुन एक सरगुन भाई॥ निरवृत साधे लोग ब्योहारा। रोजा नमाज दुनी ते न्यारा॥ चहिये भिस्त चहिये दीदारा। राम चहिये औ सरग द्वारा॥ पीर पैगम्बर औ चार यारी। बीबी फातमा बकसावन हारी॥ देवी देवा आदि भवानी। एक दो नाहीं बहुत जिन जानी॥

समै--एक साधे सब सधे, सब साधे सब जाय।
कहँ कबीर चेतो दोउ भाई, हम दीन्हो समझाय॥

रमैनी २७७--लूटे ब्रह्मा हरि त्रिपुरारी। लूटे गौतम सुखदेव ब्रह्मचारी॥ लूटे सनक सनंदन दोऊ। लूटे अगस्त विश्वामित्र ओऊ॥ लूटे वशिष्ट अत्री दुरवासा। शृंगीरिषि लूटे वन वासा॥ पारासर लूटे माझ मंझारा। लूटे जमदग्नि औ सनतकुमारा॥ लूटे गौस कुतुब बाबानी। लूटे औलिया अंबिया पीरानी॥ महम्मद लूटे राह चलाई। लूटे चार यार जिनकी थी दुहाई॥ लूटे ईसा मूसा मनसूरा। लूटे अरबहिं मदीन के सूरा॥ लूटे गोरख औ जैपाला। लूटे गोपी लूटे ग्वाला॥ माधवाचारज लूटे जनकादे। रामानिज लूटे धर्मादे॥ लूटे हनुवात नारद सपता।

लूटे पांडव औ बलदाता ॥ लूटे नाथ मच्छंदर जोगी। लूटे युधिष्ठिर षट रस भोगी॥ सुर नर मुनि सब लूटे झारी। सब मिल मानो बात हमारी। अष्टभुजी माया आदि भवानी। तिन लूटे ज्ञानी विज्ञानी ॥

समै–पाया सब जग लूटिया, भरम जालमें डार। कहें कबीर क्या कीजिये, ना समझे संसार ॥ ऐंचातानी सब करें, कटे न भरमक डार। चारो जुग सबको समझाया, कहा न मान हमार ॥

रमैनी २७८–एक शब्दका सकल पसारा। एक शब्द सबहीं ते न्यारा॥ एक शब्द सब जीते हारे। एक शब्द सब एक बिचारे॥ एक शब्द नित मरे औ जीवे। एक शब्द खावे औ पीवे॥ एक शब्द सब करे करावे। एक शब्द कहुं जाय न आवे॥ एक शब्द नित बोले चाले। एक शब्द त्रिभुवनको पाले॥ एक शब्दके बाप न माई। एक शब्द निज रहा छिपाई॥ एक शब्द है सरव सनेही। एक शब्दके प्रान न देही ॥ शब्द शब्द जो कहे बिचारी। तो यह आतम मरे न मारी ॥

समै–कह पंडित अस बोल तुम, क्यों भटकावो लोग। कहँ कबीर शब्द एक है, वहि क्यों करो वियोग ॥ अपनेको अपना मिला, दो दो नैना जोय। सरबंगी सबसो मिला, दिलकी दुबधा खोय॥ तिल समान यह जगत है, काहू परा न चीन्ह। कह कवीर सद्गुरु मिले, ज्ञानदीप जिन दीन्ह॥ भली भयी नैनो लखा, मिटी दूरकी आस। जो कोई समझे भले, सोई है धर्मदास ॥

इति ज्ञानदीपककी रमैनी संपूर्ण।

परिशिष्ट।

ज्ञानदीपककी रमैनी जो पृष्ठ ६७२ से आरम्भ होता है, उसीका यह परिशिष्ट भाग है, जिसकी सूचना उसी पृष्ठकी टिप्पणीमें दिया है, । सडे हुए पन्नोंसे जहां तक पडे जा सके हैं यहाँ दिया जाता है--

(पहली रमैनीका पन्ना एक दम नष्ट हो गया)

दूसरी रमैनीकी अन्तिम साखी।

हद हता तब आप था, सकल हता ता माँहिं।
ज्यों तरवरके बीजमें, डार पात फल छाँहिं॥

रमैनी तीसरी ३.

सब गुन पूरन माया रानी। उन फिर ... ...
उन फिर रचा वृच्छ औ ... ...

और सब नष्ट हो गया इसकी अंतिम कडी
और समै बचे हैं सो यह है--

तीन पुत्र तिर विधि गुनकारी। हरि ब्रह्मा तिनके त्रिपुरारी॥
समै--हम संजोग गुन तीनभै, उन्ह पुनि कीन्ह पसार।
हमें छोड गुन तीनते, उन कीन्हा बेभिचार॥

चौथी रमैनीका केवल इतनी अन्तिम कडी शेष है।

ब्रह्मा भूला देख लोभाना। माताते पुत्रन छल माना॥
सुतते मातु ते नारी। पुत्रते पिता मात ते बारी॥
समै--माताते मेहरी भयी, भया पूत ते बाप।
कहँ कबीर बडा अचंभा, ...

पांचवी रमैनीमें इतना शेष है।

मैं कहत हौं पंडित अगम विचारा। ... ...
पुत्र सीख देइ महतारी। ... ...
पिता तुम्हारा रहे निरंकारा। ... ...
कहे ब्रह्मा ते रूप न रेखा। ... ...
अरध न उरध पुरुष ना नारी। ... ...
इतना सुनके बचन भुलाना। ... ...
मातुकी बात ब्रह्मा नहिं बूझे। ताते पैडा नहिं कछु सूझे॥

समै--सुत नहिं माने बात, सेवे पुरुष विदेह।
कहँ कबीर अबहूँ ना चेतो, छाडो झूठ सनेह॥

छठी रमैनीमें इतना बचा--

... ... महा बलिया। एक बार छलके फिर छलिया॥
... ... । अष्ट भुजी माया आदि भवानी॥
.. .. । सावित्री सती लच्छ कुमारी॥
... ... । तीनहु मिल संजोग कराई॥
... ... । सो पुत्रन ते भयी बेभिचारी॥
... ... । फिर महेशते छल बल कीन्हा॥

....

असँख जुग लो कहि कहि हारा। सेवैं सबै सून्य निरंकारा॥
समै--त्रिगुन हेत हती महमाया, हता न वह बिस्तार।
कहँ कबीर भरमु त्रिदेवा, कीन्ह न आप बिस्तार॥

सातवीं रमैनीका बचा हुवा।

सुनु ब्रह्माते आदि कहानी। ... ...
हमहै वहि देसकी नारी। ... ...
कर हम मींजे परे त्रय छाला। ... ...
हमरे पुत्र होय तिर देव। ... ...
समै--ब्रह्मा जननीसे पूछे, ...
कौन बरन वहि पुरुष है, ...
रूप नहीं रेखा नहीं, ...
गगन मंडलके बाहिरे, ...
ध्यान जु धरो गगनका, मूँदिन बज्रकिवार।
देख परतिमा आपनी, तीनों भये निहाल॥
त्रिदेवाके सुमरते, सबका भया अकाज।
ब्रह्माका आसन डिगा, सुनत आपनी गाज॥

आठवीं रमैनीका शेष ।

माया महा आदि भवानी । वेद पाठ शास्त्र जो बखानी ॥
... ... । छनिवंती देवी जयवंती ॥
... ... । नैनबान गहि सबहिं पछारी ॥
... ... । सुरनर मुनि सबके घर खाया ॥
समै--केदली खंभ दोउ जंघा, छबि दोउ कुचन अनार ।
... ... आदर्श अति, झलकत चंद लिलार ॥
... ... सो छल किया, तीनों लीनसि खाय ।
... ... तीनोंके पीछे, जगको छलसि बनाय ॥

नौमी रमैनीका बचा भाग ।

छलबल बहुत कीन वर नारी । दो संजोग भयी संसारी ॥
दो संजोग त्रिभुवन पर छावे । दोउ पर कीन नाहिं लखावे ॥
एक प्रान देखे दो देही । पुरुष न रहे एक सनेही ॥
बीज वृच्छ है एके संगा । वृच्छ बीजका एके रंगा ॥
माया ते मन उपजा भाई । करता जिय ... ... ॥
इच्छा विपरीत भई इक संगति । ... ... ॥
बीज मंत्र सब सृष्टि करतामें । ... ... ॥
करता फिर सबनते पुकारी । माने सो... .. ... ॥
समै--अष्ट धातका पूतला, ... ॥
कह कबीर सुमरो जन क ... ... ॥

दशवीं रमैनीका शेष ।

सुन पंडित तैं बात हमारी । ... ... ॥
मन उपजा इच्छा भइ भारी । भौ संजोग पुरुष औ नारी ॥
ताते भये तीन यह बारा । बिन संजोग नहीं संसारा ॥
अन्तर प्रापति नहिं पाया । धोखा सेवा मूल गंवाया ॥
जाके प्रान नहीं है देही । रूप न रेखा प्रान विदेही ॥

... के पै कोइ न लखावे । पुरुष विदेही सबै बतावे ॥
... ... कहत पुकारा । जीमें कोई न करे बिचारा ॥
... ... छीजे । माने नाता सो का कीजे ॥
समै—... ... करपूतला, करता ताहि सनेह ।
समरो जिन कबहूँ, जो है पुरुष विदेह ॥

ग्यारहवीं रमैनीका शेष ।

... बात हमारी आगम पंथा । स्त्रीके गोद खेलैं कंथा ॥
वहिन ते पुत्री पुत्री भइ नारी । नारी ते फिर भई महतारी ॥
कंथ खेलावे पुत्रके जाने । नारी पुत्र कंथकै माने ॥
पुत्र ते होय संजोगिन माता । पिता ते पुत्र पुत्र ते ताता ॥
यह अचरज कहु कासो कहिये । कहिये तो फिर कहु कहँ रहिये ॥
पंडित पढ पढ वेद सुनावे । नाद बिंदकी खबर न पावे ॥
जोगी जती रंक औ राया । किनहुं नहिं यह भेद बताया ॥
पिता छोडिके निरगुन सेवा । ... ... भेवा ॥
समै--माता ते मेहरी भई, मेहरी ते भइ माय ।
जो नहिं सो सबका करता, अचरज कहा न जाय ॥

बारहवीं रमैनीका बचा खुचा ॥

सुनु पंडितका वेद अरथावे । वेद पढे कछु भेद न पावे ॥ एकादशि बरतसो मन माना । पूजे देव औ पढे पुराना ॥ जिन जिन पिताको चीन्हा भाई । थिर भया ... .. ॥ भूलत फिरी सृष्टि सब धाई । पिता न लखा तजी न माई ॥ जेजे पुत्र पिताको पाये । आप आपमें सबहिं समाये ॥ आपा चीन्हे सो बड ज्ञानी । पिता पुत्र एकै सहिदानी ॥ पिता पुत्रकी एके काया । मातु पिता निरगुन बतलाया ॥ जो जाने यह भेद अनूपा । दुबिधा तजे ते देख सरूपा ॥

समे--जहवाँ नहीं सृष्टिका करता, तहवाँ तकु सब कोय। कह कवीर मानो नहिं ताहि, जो जिय बैरी होय॥ पूतहु ते प्रीतम भया, प्रीतम ते भौ पूत। ... खेल तुम हमरी, चीन्हो आपन दूत॥

इन बारह रमैनियोंके पन्ने सड गयेथे इनके आगे १३ तेरहवीं रमैनी पृष्ठ ६७३ से आरम्भ होती है। बहुत स्थानोंमें ढूंढनेपर भी 'ज्ञानदीपक' की रमैनीकी प्रति किसीके पास नहीं मिली, इसलिये मजबूरन जो कुछ था उसेही छपवा देना पडा। क्योंकि, यह ग्रन्थ भी जब सड गया है तब इसके नष्ट होवे भी क्या देरी है। सज्जनोंको चाहिये कि, इस अमूल्य अपूर्व ग्रन्थकी प्रति जहांसे मिले उससे इसे शुद्ध करनें और कृपाकर मुझेभी सूचित करें तो फिरसे इस रमैनीको छपवानेमें सुभीता हो॥ श्रीयुगलानन्द विहारी.

तत्त्वदर्शन साखियाँ।

मङ्गलाचरण।

जाकी कृपा कटाक्षते, मोक्ष मुक्ति फल होय। सत्य कवीर बन्दन करूँ, काया बच मन सोय॥ १॥ बोधे सो गुरु देव है, सत गुरु सत्य कवीर। बोध लेइ सो शिष्य है, धर्मदास मति धीर॥ २॥ साधन चार सम्पन्न जो, गुरु भक्ति उर जासु। तासु हेतु वर्णन करो, दर्शनतत्त्व विकासु॥ ३॥

शिष्य प्रश्न।

साधन चार विचार जो, मोसे कहु गुरु देव।
सुनत ज्ञान उरमें धसे, मनमें उपजे भेव॥

गुरु उत्तर।

साधन चार सु कहत हो, प्रगट कहत वेदान्त। जाहि लहे जिव होत है, परम सुखी औ शांत॥५॥ विवेक विचार प्रथम अहे, दूजे जानु विराग। षट सम्पति तीजे कही, चौथ मुमुक्षु बड भाग॥६॥

शिष्य प्रश्न चार साधन।

का विवेक वैरागका, षट सम्पतिका गुरुदेव।
मुमुक्षुता कासे कहो, सो समुझावहु भेव॥ ७॥

गुरु उत्तर–विवेकस्वरूप।

नाश मान जग देखिके, मनमें उपजे चाव। सत्य वस्तु जानन चहे, कह विवेक सो भाव॥८॥ पांच तत्त्व गुण तीन मिलि, अष्टंगी तेहि नाम। आठो आठो ते मिल्यो, भयो जगत परिणाम॥९॥

साधारण वैराग्यस्वरूप ।

नाश मान जग जानिके, मनुवा होय उदास ।
मुनिजन कहत विराग सो, नासत विषय विकास ॥ १० ॥

शुद्ध वैराग्य स्वरूप ।

राग गयो मनते जबै, द्वेष न आवै पास ।
शुद्ध विराग ताते कहो, मिटे सकल सतभास ॥ ११ ॥

शमस्वरूप ।

भयो विराग जु मन विषै, मिटी बासना जाहि ।
मन रुक्यो विषयानते, शम कहियत है ताहि ॥ १२ ॥

दम स्वरूप ।

मन रुक्यो विषयानते, इन्द्रिन धारयो धीर ।
दम ताहीको कहत हैं, सत मत गहिर गँभीर ॥ १३ ॥

उपरति स्वरूप ।

मन इन्द्रिनके रुकतही, छूटयो विषय विकार ।
सुधर्म रत तब मन भयो, उपरम ताहि विचार ॥ १४ ॥

तितिक्षा स्वरूप ।

शीत उष्ण क्षुधा तृषा, सुख दुख औरो आहि ।
इनको सहन सुभाव सो, कहत तितिक्षा ताहि ॥ १५ ॥

श्रद्धा स्वरूप ।

सत खोजनकी चाह मन, गुरु शास्त्रन ढिग जाहि ।
दृढ विश्वास तिनके बचन, शरधा कहिये ताहि ॥ १६ ॥

समाधान स्वरूप ।

सद्गुण पा मन थिर भयो, थिरता बलकी खानि ।
समाधान सोई कहो, छूटे मनको मान ॥ १७ ॥
मन इन्द्री तो वश भयो, उपरम तितिक्षा लार ।
शरधाते मन थिर भयो, समाधान कहि सार ॥ १८ ॥

तीसरे साधनकी समझ।

शम समाधान लो कहे, सम्पति षट है सोय।
तीसर साधन ज्ञानको, चौथ मुमुक्षुता होय ॥ १९ ॥

मुमुक्षुत्व स्वरूप।

इहै लोक परलोकलो, बन्धन दीखे जाहि।
मुक्त होनकी चाह जो, मुमुक्षुत्व कहि ताहि ॥ २० ॥
साधन चार विचार भो, हिये जासु परकाश।
तत दर्शनके पावते, होय अविद्या नाश ॥ २१ ॥

गुरु भक्ति शिष्य प्रश्न।

साधन चार जान्यो भले, सुगुरु कृपा निधान।
गुरू भक्ति कासे कहो, ताका करूं बिधान ॥ २२ ॥

गुरु उत्तर-गुरु लक्षण।

गू अँधियारे जानिये, रू कहिये परकास।
मेटि अज्ञानहिं ज्ञानदे, गुरू नाम है तास ॥ २३ ॥
गुरू बहुत हैं जगतमें, परगट देखु विख्यात।
सतगुरुके पाये विना, कबहुँ न भरम नसात ॥ २४ ॥
सत्य वस्तुको ज्ञानदे, भाने भरम संदेश।
आतम तत्त्व लखावई, मेटि अविद्या लेश ॥ २५ ॥

गुरु भक्ति स्वरूप।

ताहि गुरुकी शरणमें, हिये भक्ति निज धार। श्रद्धा युत अर्पण करे, असत सकल संसार ॥ २६ ॥ गुरू होय प्रसन्न जबे, लहे सु आतम ज्ञान। ताते सतगुरु भक्ति करी, लीजे पद निर्वान ॥ २७ ॥ गुरू महिमा अतिशय विमल, संतन कियो बखान। ताहि विचारे बहुत विधि, पावे पूर्ण विधान ॥ २८ ॥ अब आगे

---

१ कबीर धर्मदर्शन ग्रन्थ मालाके प्रथम भागको देखो। जिसमें गुरुमहिमा सत और सत्यसंग महिमा आदिका सुन्दर विवरण है --लिखो--स्वामी युगलानन्द बिहारी--कबीर आश्रम-पो० खरसिया जि० बिलासपुर सी० पी०।

जो पूछहू, सुकृत शिष्य सुजान । सो सब मैं तोसों कहौं, रंच न संशय आन ॥ २९ ॥

शिष्य प्रश्न ।

गुरु भक्तिको भेद अब, जानि परो गुरु देव ।
जाकी कृपा कटाक्षते, मिटे सकल दुख लेव ॥ ३० ॥

तत्त्व स्वरूप ।

अब आगे मोते कहो, तत्व अतत्त्व विचार। जाकेजाने जीव जग, लहै मुक्ति ततसार॥३१॥ तत दर्शन काते कहो, सुनु गुरु दीन दयाल। बिलग बिलग मोसे कहो, मिटे अविद्या जाल॥३२॥ जड चेतन दो वस्तु हैं, अति प्रसिद्ध जग माहिं। इनकी पारख प्राप्ति विन, बन्धन छूटत नाहिं ॥ ३३ ॥

[सत्योपदेशमणिमाला ॥]

शिष्य प्रश्न ।

जड चैतन दोऊ कहो, विलग विलग गुरु राय ।
तुमरी कृपा टाक्षते, भ्रम सकल नसि जाय ॥ ३४ ॥

गुरु उत्तर ।

जड तम पुंज प्रसुप्त सम, अप्रबोध दुख रूप ।
चैतन परमानन्द घन, ज्ञान स्वरूप अनूप ॥ ३५ ॥

[सत्योपदेश मणिमाला ।]

शिष्य प्रश्न ।

अस तम पुंज सु को अहै, जड असत्य दुख रूप ।
पहिले ताहि बतावहू, गुरु ज्ञानिनको भूप ॥ ३६ ॥

गुरु उत्तर ।

पांच तत्त्व त्रिगुण सहित, अष्टंगी जेहि नाम ।
आद्या माया जानिये, दृश्य जगत परिणाम ॥ ३७ ॥

शिष्य प्रश्न ।

पांच तत्त्वका नाम अरु, गुन त्रयनको धाम । माया आदि अष्टंगि जो, दृश्य जगत परिणाम ॥३८॥ बार बार बन्दन करूँ,

श्रीगुरु दीन दयाल। भिन्न भिन्न वर्णन करि, हरहु अज्ञान विशाल ॥ ३९ ॥

गुरु उत्तर।

(अष्टंगी (माया) का कर्म्म)

अव्याकृत अव्यक्त जो, मूल प्रकृति प्रधान। अद्या ताको कहत हैं, सुनु शिष शील निधान ॥ ४० ॥ पांच तत्त्व गुण तीन मिलि, अष्टंगी तेहि नाम। आठों आठो ते मिलो, भयो जगत परिणाम ॥ ४१ ॥

जगतका स्वरूप।

चैतनके संयोगते, पाई शक्ति अपेल।
तनु मात्रा परगट कियो, गुण तीनन जगमेल ॥ ४२ ॥

पांच तन्मात्रा।

शब्द स्पर्श अरु रूप है, रस अरु गन्ध अनूप।
तन मात्रा यही कहत हैं, जाने मुनिवर भूप ॥ ४३ ॥

पांच तत्त्व।

पृथ्वी अप अरु तेज है, वायू और अकाश।
पांच तत्त्व यह जानिये, कारण विश्व प्रकाश ॥ ४४ ॥

तीन गुण।

सत रज तम यह तीन जो, गुण कहियत है तात।
पांच संग यह तीन मिलि, जगत सबै दरशात ॥ ४५ ॥

जगत।

इनहीके संयोगते, भयो जगत सब आय। देह अवस्था कोश पुनि, जीव ईशलो भाव ॥ ४६ ॥ व्यष्टि समष्टिके भेदते, भया जगत प्रकास। जीव शीव सब परगटे, इनहीके दृढ भास ॥ ४७ ॥

जीव—शीव।

व्यष्टि अभिमानी जीव है, समष्टि अभिमानी शीव।
ज्ञान दृष्टि करि देखहू, यही जगतके पीव ॥ ४८ ॥

शिष्य प्रश्न ।

देह अरु अवस्था कही, हे गुरु मुनिवर भूप ।
परगट आप बखानिये, दीजे ज्ञान अनूप ॥ ४९ ॥

गुरु उत्तर-छः प्रकारकी देह ।

दृश्यमान जो जगत है, जानो देह सुजान । तासु भेद अब कहत हौं, सुनो शिष्य दे कान ॥ ५० ॥ षट प्रकारकी देह है, जामें अरुझा जीव । जीव शीवके भेद ते, भयो दास अरु पीव ॥५१॥ स्थूल सूक्ष्म कारण अरु, महाकारण पुनि जोय । कैवल पंचम जानिये, छठी हंस कहि सोय ॥ ५२ ॥

छः अवस्थाके नाम ।

जागृति स्वप्न सुषुप्ति है, तुरिया तुरिया तीत । पूर्ण अवस्था बोध पुनि, छओं देहकी रीत ॥ ५३ ॥ निज निज कर्म प्रतापते, सुख दुख भोगन हेत । स्थूल शरीर प्रगट है, पांच पचीस गहि लेत ॥ ५४ ॥

पंचीकृत ।

तमगुणके प्रतापते, पांचों भेलम भेल । पंचीकृत सोई अहै, स्थूल जगतको खेल ॥५५॥ एक एकते पांच भई, प्रकृति पच्चीस निदान । ताही ते सब परगटे, पिण्ड ब्रह्माण्ड सुजान ॥५६॥

पच्चीस प्रकृति ।

अस्थि मांस नाडी त्वचा, रोम पाँचवों होय । पृथ्विते यह सब प्रगटे, प्रकृति कहावत सोय ॥५७॥ रक्त बीज अरु मूत्र जो, परसेवा युत लार । जल प्रकृति यह पांच हैं, मनमें देखु विचार ॥५८॥ आलस कांति क्षुधा तृषा, निद्रा पंचम जान । अगिन प्रकृति यह पाँच हैं, जाने संत सुजान ॥ ५९ ॥ कटि उदर, हिरदय गला, पंचम शिर आकाश । पांच जानु यह गगनकी, कीन प्रकृति प्रकाश ॥६०॥ भय मोह अरु क्रोध है, काम जानिये लोभ । सूक्ष्म प्रकृति आकाशकी, जाते उपजे क्षोभ ॥ ६१ ॥

सात धातु ।

स्थूल देहमें धातु है, सात कहत परमान । षट विकार पुनि याहिमें, बरनत ज्ञान निधान ॥ ६२ ॥ खाद्य अन्न परिणाम जो, सात रूप धर सोय । सप्त धातु तेहि कहत हैं, मूल देहको होय ॥ ६३ ॥ रस रक्त अरु मांस है, भेद अस्थि पुनि सोय । मज्जा षट बखानिये, सप्तम शुक्र सु होय ॥ ६४ ॥

चार खानि ।

चारि खानि जग विदित है, स्थूल जगत विस्तार ।
अचल उषमज अंडज कही, पुनि पिंडज संचार ॥ ६५ ॥

षट विचार ।

अस्ति जन्म औ वृद्धि पुनि, विपरिणाम क्षय नास ।
षट विकार ये देहके, स्थूल जगत परकास ॥ ६६ ॥

लिंग ।

नारि पुरुष औ नपुन्सक, तीन लिंग प्रधान ।
स्थूल कला सो जानिये, प्रगट करे पहिचान ॥ ६७ ॥

शरीरका लक्षण ।

गोरा श्याम गोहुमना, काला जानु सुजान ।
पीत लाल रंग देहका. प्रत्यक्ष देखु प्रमान ॥ ६८ ॥

शरीरका रङ्ग ।

बौन नाट मंझोल पुनि, लम्बा चार प्रमान ।
गढन स्थूल विचारिये, रूप कुरूप निधान ॥ ६९ ॥

शरीरका वरण ।

अंधा काना पाँगुला, बहिरा गुंग बखान ।
लूला लंगडा कूबडा, स्थूल विशेषण जान ॥ ७० ॥

चार वरण ।

ब्राह्मण क्षत्री वैश्य युत, शूद्र वरण जो चार ।
स्थूल देहके कारणे, भये जगत बिस्तार ॥ ७१ ॥

चार आश्रम ।

ब्रह्मचर्य और गृहस्थ पुनि, वानप्रस्थ संन्यास ।
आश्रम चार बखानिये, देह स्थूल विलास ॥ ७२ ॥

स्थूल देहका प्रमाण ।

स्थूल देह परमान है, हाथ सु साढे तीन ।
लोक सो मृत्यु लोक है, एता वरण प्रवीन ॥ ७३ ॥

स्थूल देहकी सम्बन्धि ।

जागृतमें यहि जीवको, नेत्र अहै अस्थान ।
गुण सु रजो गुण जानिये, सकती क्रिया मान ॥ ७४ ॥

शिष्य प्रश्न ।

जागृतको अब भेद प्रभु, मोको देहु बताय ।
केहि विधि जड स्थूल सो जागृत कहु समझाय ॥ ७५ ॥

गुरु उत्तर सूक्ष्म इंन्द्रियोंकी उत्पत्ति ।

पहिले सुनु शिष भेद अब, अपंचीकृत पसार । जाके परगट होतही, भयो जगत विस्तार ॥ ७६ ॥ अपंचीकृत भूतके, रजगुण अंश प्रपंच । पांच करम इन्द्री भये, भये प्राण सो पंच ॥ ७७ ॥ गुदा लिंग पग हाथ मुख, बिलग बिलग भय आप । कर्म इन्द्री तासों कहें, जपे कर्मको जाप ॥ ७८ ॥

पांच प्राणके नाम ।

प्राण अपान समान है, व्यान उदान प्रमान ।
पांच प्राण यहि कहत हैं, वायु प्रधान बखान ॥ ७९ ॥

पंच उपप्राणके नाम ।

नाग कूर्म किरकल कहे, देवदत्त पुनि जान ।
पंचवें धनञ्जय जानिये, उपप्राण तेहि मान ॥ ८० ॥

पांच अन्तःकरणके नाम ।

अपंचीकृत भूतके, सतगुन अंश मिलाप । अन्तःकरन परगट भये, अन्तर इन्द्री आप ॥ ८१ ॥ मन बुद्धि चित्त हंकाररू, अन्तः करण सुजान । यही पांच सो जानिये, अन्तर ज्ञान परमान ॥ ८२ ॥

पांच ज्ञानेन्द्रियोंके नाम ।

श्रोत्र त्वचा चक्षू कही, जिह्वा जान घ्राण ।
पांचों इन्द्री ज्ञानकी, साधन ज्ञान समान ॥ ८३ ॥

त्रिपुटी व्याख्या ।

अब इन्द्रिनके विषय अरु, देवहुँ कहौं बखान। सुनियो शिष्य सु ध्यान दे, प्रत्यक्ष बचन प्रमान ॥८४॥ इन्द्रीसो अध्यात्म है, विषय जानु अधिभूत। अभिमानी अधिदेव है, सो त्रिपुटी समझूत ॥ ८५ ॥ पांच कर्म पंच ज्ञान रु अन्तःकरणहु जो पांच । इन्द्री पन्द्रह जानिये, कहौं त्रिपुटीं सु बाच ॥ ८६ ॥

पांच कर्म इन्द्रियोंकी त्रिपुटी ।

गुदा विषय मल त्याग है, देव अहै यमराज । उपस्थ विषय सो भोग है, परजापति महराज ॥८७॥ गमन विषय है पांवका, वामन देव कहाय । पाणि विषय आदान है, देव इन्द्र बलराय ॥ ८८ ॥ बाक विषय है बोलना, अग्नि देव अधिकार । त्रिपुटी इन्द्री कर्मकी, मनमें राखु विचार ॥ ८९ ॥

पांच ज्ञानेन्द्रियोंकी त्रिपुटी ।

देव अश्विनी कुमार है, इन्द्री घ्राण प्रमान । विषय गहत है गंधको, इन्द्री ज्ञान समान ॥ ९० ॥ जिह्वा इन्द्री ज्ञान है, देव वरुण पहिचान। ग्रहण करे रसको विषय, अद्भुत कला निधान ॥९१॥ चक्षू देखे रूपको, देव सूर्य भगवान। इन्द्री त्वचा विषय स्पर्श, वायू देव पिछान॥९२॥ शब्दहिं गहै सो श्रोत्र है, देव अहै दिकपाल। त्रिपुटी इन्द्री ज्ञानकी, महा कठिन भ्रमजाल ॥९३॥

पांच अन्तःकरणकी त्रिपुटी ।

अन्तःकरण अध्यात्म है, स्फुरण सो अधिभूत। महा विष्णु अधिदेव है, व्यापक विश्व विभूत॥९४॥ मन जहाँ अध्यात्म है, अहै चन्द्र तहँ देव । कल्प विकल्प अधिभूत है, जगका कारण भेव॥९५॥ बुद्धि स्वतः अध्यात्म है, है निश्चय अधिभूत। ब्रह्मा तहाँ अधिदेव है, अनुभव लागा सूत ॥ ९६ ॥ चित अध्यात्म

चिंतन करे, सो अधिभूत विचार। वासुदेव अधिदेव है, सबका मूल अधार॥९७॥ अहंकार अध्यात्म जो, अधिभूत अभिमान। रुद्र कहो अधि देवता, सकल सृष्टि मंडान ॥ ९८ ॥

त्रिपुटीकी स्पष्ट व्याख्या।

करणसो अध्यात्म अहै, विषय अहै अविभूत।
देव सोई अधिदेव है, त्रिपुटी कहै अवधूत ॥ ९९ ॥

जागृत अवस्था स्वरूप।

अपंचीकृत भूतकी, एती भई संतान। जागृत अवस्था अब कहूँ, सुनूँ शिष्य दे कान ॥ १०० ॥ इन्द्री कर्म अरु ज्ञान पुनि, मन बुधि चित्त हंकार। इनहींकी तिरपुटीसो, ब्यालिस तत्त्व विचार ॥ १०१ ॥ पांच पचीसों संग मिलि, ब्यालिस तत्त्व समुदाय। विश्वात्म जब कारज करे, जागृत सोई कहाय ॥१०२॥

चार प्रकारकी वाणी।

परा पश्यन्ति मध्यमा, सहित बैखरी चार।
वाणी सोई पिछानिये, मूल जगत व्यवहार ॥ १०३ ॥

बैखरी स्वरूप।

बैखरी कहिये बोल जो, मुखसे निकसे आय।
स्थूल जगतमें प्रगट है, सबही देत लखाय ॥ १०४ ॥

सूक्ष्म देह वर्णन।

सूक्ष्म देह अब कहत हौं, सुनु शिष्य दे कान।
भिन्न भिन्न बरनत तेही, सज्जन बुद्धि निधान ॥ १०५ ॥

सूक्ष्म देहके तत्त्व।

सूक्ष्म देहको कहत हैं, पन्द्रह तत्त्व प्रधान। कोइ कहत उन्नीस हैं, कोइ पच्चीस विधान ॥ १०६ ॥ कोइ कहत चालीस हैं, कोइ कहत हैं साठ। सत्तर कोई कहैं, कोई एक सौ आठ ॥ १०७ ॥ छियानवे कोई कहैं, नवहिं बतावे कोय। एक बातकी बात है, बहु विधि वरनत सोय ॥ १०८ ॥

पन्द्रह तत्त्वका सूक्ष्म शरीर।

पांचो इन्द्री कर्म अरु, पांच ज्ञान समुदाय। प्राण पांच पुनि

लीजिये, मन बुधि संग सहाय ॥ १०९ ॥ ऐसे सत्रह तत्त्वकी, सूक्ष्म देह परमान। औरो यहि विधि जानिये, सब जो करत बखान ॥ ११० ॥

उन्नीस तत्त्वका सूक्ष्म शरीर।

उपर्युक्त सत्रह तत्त्वमें, अहं अरु चित्त मिलाय।
उनइस इमि सो भाषते, औरो सुनो बनाय ॥ १११ ॥

पचीस तत्त्वका सूक्ष्म शरीर।

इन्द्री ज्ञान अरु कर्म जो, विषय प्राण समुदाय।
अन्तःकरण सो पाँच मिलि, कहत पचीस मुनिराय॥११२॥

साठ तत्त्वका सूक्ष्म शरीर।

पन्द्रह इन्द्री विषय सहित, पन्द्रह देव मिलाय। पांच विकार दश प्राण युत, भये साठ समुदाय॥११३॥ कारन कारज भेदते, भयो अनेक समुदाय। एक बातकी बातको, बहु विधि मानत आय ॥ ११४ ॥ हेतु सबनको एक है, होय बोध परकास। स्वप्नावस्था जानिके, छुटे अविद्या भास ॥ ११५ ॥

कारण शरीर।

कारण शरीर अज्ञान है, सुषुप्ति अवस्था जाहि। सृष्टि मूल बखानिये, शून्य रूप जहँ आहिं॥११६॥ तत्त्व दर्शन वर्णन किये, सूक्ष्म रूप बखान। सविस्तार सो देखिये, टीका माहि निदान ॥ ११७॥ अध्यात्म दर्शन नाम है, पंची करन विख्यात। बूझे विचारे जो उसे, छुटे अविद्या घात ॥ ११८ ॥ चराचर अनुचर जानिये, युगलानन्द अविधान। हेतु मुमुक्षु सो लिखे, दया धर्म परधान ॥११९॥ जो चाहत जानन अधिक, पंची करन परेखु। आतम दर्शन नाम जिहिं, लेहु मुमुक्षु सरेखु ॥ १२० ॥ कबीर आश्रम विदित है, पोस्ट खरसिया जाहि। जिला अहै विलास पुर, मध्य प्रदेशके माहि ॥ १२१ ॥

इति श्री अध्यात्म दर्शनका प्रथम खंड तत्त्वदर्शन नामक ग्रन्थ
कबीराश्रमाचार्य्य स्वामी श्रीयुगलानंद बिहारी
विरचित समाप्त शुभम्।

शब्दावली-पांचवाँ खंड ।

वसंत प्रारम्भः ।

वसंत १-ऐसो वसंत नहिं बार बार । खेलि लेहु दिन चार चार ॥टेक॥ करि साध संगति गडवा मंझारि। मन मोरि राखि जामें संभारि ॥ प्रीति वसन सो ढाँकि लेह । लै सुमति सखीके हाथ देह॥ सुन्न महले में रचो खेल। चित चोवा परमारथ फुलेल॥ अभै अरगजा लेहु हाथ । तुम या विधि चरचा प्रान नाथ ॥ सुकृत नीरमें नहाय लेह । भरम भार टरै सुध होय देह ॥ कहैं कबीर ऐसे खेले संत । तब कुसल होयगी आदि अंत ॥

वसंत २-तुम देखो सन्तो थिर वसंत । सतगुरु संगति सुख अनंत ॥ टेक॥ थिर वसंत नहिं जानै भेद । पार न पावे सुमृति वेद॥ आदि विष्णु ब्रह्मा महेस। पार न पावे पुरान सेस॥ थिर वसंत नहिं जानै सार। उपजै विनसै बारम्बार ॥ थिर नाहिं जहां झरै है पात। पवन सरूपी जम करै घात॥ निरगुन सरगुन दोय उपाय। षट दर्शन सब येही लौ लाय॥ भँवर जाल फिरि फिरि भुलाय। जंजाल रंग सब मिटि न जाय ॥ जहां निसि वासर नहिं चंद सूर । नही तीन लोक वैकुंठ मूर ॥ नही जहां सून्य नहीं जहां कार। नहीं जहाँ निरंजन निराकार॥ थिर वसंत जहां थिर शरीर। थिर तरवर जहां पात थीर॥ थिर वसंत जो जानै भेद । ताकी भवजल नहीं है खेद ॥ थिर वसंत जो जानै रहै ।

अमर होय पद अमर लहै ॥ कहै कवीर थिर कहो बुझाय। थिर समाय अमृत फल पाय ॥

वसंत ३-अनभै बसंत खेलो सुजान । भरम भाव नहिं होय हानि ॥ टेक॥ प्रथम वसंत मेल्यो शरीर। गुरू संजम मन धरो धीर ॥ पिचकारी करि हेत लीन्ह। काम क्रोधको टारि दीन्ह ॥ दूजे मेरो मन महामंत । ताको काहु न लह्यो अन्त ॥ कुबुधि गुलाल उड़ावै सोय। सुर नर मुनि सब गये विगोय॥ नाद बिंद तहां लागे बंद। यह वसंत थिर होय कंद॥ थिर होय बिंद प्रकासे चंद। परम ज्योति परगट अनन्द॥ कहै कवीर यह परम खेल। सत्सुकृत सो भय मेल ॥ काल जाल सब दीन्ह मेंट। तब पार ब्रह्मसो भई भेंट ॥

वसंत ४-जहां सुरति सुहागनि खेले फाग। पार ब्रह्म तहां करै राग ॥ टेक ॥ अनहद मुरली बाजे तूर । विन रसना सुर ऊठत पूर ॥ ध्वनि सुनि सीतल भयो गात । सरवन रूचत नहीं और बात ॥ लौकर भूषन पहरै अंग। सीलको सिंदुर दियो है संग॥ लखि दर्पन सतगुरुके बैन। ज्ञानको अंजन दियो है नैन॥ लोक लाज सब डारि दीन्ह। प्रेम छाड़ी गह हाथि लीन्ह ॥ सुमति सखीको कियो संग। रच्यो खेल जहां विविध रंग॥ घेरि घारि जब होरी कीन्ह। ब्रह्म अग्नि जहां लेस दीन्ह ॥ सब जरि गई उड़ानी धूरि। ब्रह्म निरंतर रह्यो पूरि ॥ गगनि गली जहां मगन ख्याल। तहां लखि पायो अलख लाल॥ हिलि मिलिकै किन्हौ विलास। जनम जनमकी मिटी भास ॥ रसातल भूतल अरु अकास। प्रेम सुगन्धकी फैली वास॥ कहैं कवीर मोहि भावै संत। जो या विधि खेलै रितु वसंत ॥

वसंत ५-को का को पुरुष को काकी नारि। ये सब संगी दिवस चारि॥ टेक॥ को काको पिता कोउ काको पूत। जन्म जन्मके उरझ्यो सूत॥ जो सुरझावै सोई सुजान। मेरि मेरि करता तजै प्रान॥ को काकी माय को काकी धीय। समझि देखि नर अपने जीय॥ अंत काल जब पहुँचे आय। बांह पकडि जम लिये जाय॥ को काको कुटुम्ब को काकी जाति। अंतकाल कोई संग न साथि॥ यामैं नहीं अपनो है कोइ। सत शब्द सुनि लेहो लोइ॥ हैर ठगौरी बड़ धोखा कीन। झूठी माया संग लीन॥ या बाजीको लखै जु कोय। कहैं कबीर जन भेदी होय॥

वसंत ६-बन माली जाने बनकी आदि। राम भजन बिना जनम वादि॥टेक॥ एक फूल जो फुल्यो रितु वसंत। जामें मोहि रहे सब जीव जन्तु॥ फुलनमें ज्यों वसत वास। ऐसे घट घट गोविंद निवास॥ उड उड रे भौंरा जायओ देस। मेरे हरि प्रीतम सोक हो संदेस॥ चोली पुरानी जीवन भार। मोहि विरह सतावे बार बार॥ ऊंचा पर्वत विषम घाट। अगम पंथ न सूझे वाट॥ पर बेली रात्यो मेरा कंत। मैं का संग खेलौं रितु वसंत॥ रितु वसंतकी परी झूल। अंब मोरे कचनार फूल॥ कहैं कबीर मन भयो आनंद। मोहि हरषि मिले गुरु रामानंद॥

वसंत ७-कोइ है रे हमारा गांवका। जासु परचै बूझूं हाँवका॥ टेक॥ विन बादल बरषै अखंड धार। बिन बीज चमकै अति अपार॥ शशि भानु बिना होय प्रकास। सतगुरूके शब्द लियो निवास॥ वृच्छ एक जहां अति अनूप। जाके साखा पंचम छांह धूप॥ बिन फूलन भौंरा करै गुंजार। फल लाग्यो जाके निराधार॥ ऊंच नीच नहीं जाति पांति। जहां त्रिगुन न व्यापे सदा सांति॥ हरष शोक नहीं राग दोष। सदा आनंद संसै न

सोग॥ अखण्ड पूरी एक नगर नाम। जहां वसिये साधो सहज धाम॥ उपजे न बिनसे आवे न जाय। कहें कवीर तहां रहो समाय॥

वसंत ८-सतगुरू खेले रितु वसंत। परम पुरुष जहां साधु संत॥ टेक॥ तीन लोकते भिन्न राज। जहां अनहद बाजा बजै बाज॥ जहां चहूँ दिशि जोति उगे अपार। तहां विरलो जन कोइ उतरे पार॥ जहां कोटि कृष्ण नवावैं माथ। कोटि विष्नु खडे जोडै हाथ॥ कोटि महादेव धरै ध्यान। कोटि ब्रह्मा जहां पढैं पुरान॥ जहां कोटि सरस्वति करै राग। कोटि इन्द्र फिरै गोहन लाग॥ कोटि दुरगा जहां करै सिंगार। कोटि कुबेर जहां भरै भंडार॥ जहां चोवा चंदन अरु अबीर। पुहुप बास रस गहर गंभीर॥ सुरति सुरंग सुवास लीन्ह। सत्यलोकमें वास कीन्ह॥ अजर द्वीपमें पहुँचे जाय। अजर पुरुषको दरस पाय॥ कहैं कवीर लीजो बिचार। नरक उधारन नाम हमार॥

वसंत ९-या सुन्दर तनमें मनुआ भुलान। जाते जम धरि करै हान॥ टेक॥ कुबुद्धि सखी सो ताको नेह। भरि पिचकारी कुमति देह॥ निसि दिन भ्रमको खेलै खेल। आसा तृष्ना संग मेल॥ दम्भ कपट डफ बाजे ताल। कंठ विषयकी डारि माल॥ नाचत गति लिये और और। करै निरति गति लहै न ठौर॥ आप आपको जानै नाहिं। परचो भरम गति भीर मांहिं॥ सतगुरूको जो संग होय। लहै अमरपद अमर घर सोय॥ छाडो खेल विकार मूल। भरम मांहिं क्यूं रहे भूल॥ कहे कवीर बिचारि देख। सत शब्द गहि कर विवेक॥

वसंत १०-जहां नित वसंत अमृत निधान। सतपुरुष जहां सत्त ध्यान॥ टेक॥ अगम अगाध लीला अपार। सुर नर मुनि सब रहे हार॥ पुहुप अखंडित सेत भास। सत्त पुरुष तहां कीयो

बास ॥ बाजै नाद अखण्ड घोर । ताल मृदंगका बहुत सोर ॥ बिन पग निरति तहां होय नाच । बिन मुख बोले शब्द सांच ॥ फुले वसत बिन पुहुप बेल । सेत भँवर तहां करै केल ॥ नाना बरन अरू नाना रंग । बिन सरवर तहां उठे तरंग ॥ उनमुनिता जो होय नैन । सो लखि पावे संत सैन ॥ कहै कबीर कोई लहै न अन्त । सुख सागरमें सुक्ख बसंत ॥

वसंत ११–ऐसो खेलो संतो मन भये बिसारि । जम जालमकी मेटो रारि ॥ टेक ॥ जहां पांच मवासी घेरे गैल । मन राजा तहां करै खेल ॥ सखी पच्चीस तहां करै सोर । अनहद बाजा बजै घोर ॥ ज्ञान गलीमें बाढे आय । सुरति निरति को संग लाय ॥ करि सनेह जो खेले फाग । भवसागरका करहु त्याग ॥ होय अचिंत जो चिन्ता मिटाय । सतगुरू पद में रहै समाय ॥ कहै कबीर गुरु किरपा कीन । भय छूटा तब फगवा दीन ॥

वसंत १२–तुम सुनियो संतो जुग वसंत । कोई अगम विवेकी बूझै संत ॥टेक॥ बसे नगर तहां उठै घोर । पांच सखी तहां करैं सोर ॥ रंग रंगीली नौऊ नारि । विषम सरोवर रची धमारि ॥ नाना विधि सों करै कलोल । ताल मृदंग अरू बाजै ढोल ॥ चौरासी पिचकारी हाथ । लिये सखी सब फिरै साथ ॥ अहं गुलाल लिये गोद मांहि । सुर नर मुनि कोइ बच्यो नाहिं ॥ मन राजाके सबही संग । बाढे भये तहां जमुना गंग ॥ उततैं आये ज्ञान बीर । सुरति निरति लिये संग धीर ॥ पिचकारी हित प्रेम लीन । सुमति सखीके हाथ दीन ॥ सेत अबीर उडावै हेल । ऐसा अद्भुत अगम खेल ॥ कहैं कबीर कोई लखै साध । जिन त्रिगुन तापकी तजी उपाधि ॥

वसंत १३-खेलत वसंत मन महा मोह। विषय फाँस तन देह छोह॥ टेक॥ आलस महलमें करै केल। आशा तृष्ना संग मेल॥ अहंकार मद मंत्री संग। कुबुधि सखी सुं करै रंग॥ लिये हाथ डफ डिम्भ केर। ब्रह्मादिक जिन लिये घेरि॥ करै उलाहल काम वीर। महादेव कौं मारयो तीर॥ इन्द्रासन लुट्यो बनाय। सुर नर मुनि सब लिये खाय॥ नर नारी नहीं देवै चैन। निसि दिन बोलै विषय बैन॥ सब बन फूले विषय वसंत। ताहि जरावै विवेकी संत॥ उग्र ज्ञान मिलि मता कीन। सुरति सखी तिहि साथ दीन॥ ब्रह्म अग्नि औटावे रंग। विषय बान सब कीये भंग॥ सत्त शील संतोष चैन। सत शब्द मुख बोले बैन॥ सत संतोष सुखमें समाय। गुरू मुख खेलै वसंत गाय॥ कहैं कबीर मिट्यो गरभ जंत। सुख सागर सुख निधि वसंत॥

वसंत १४-मोह निरपति खेलै वसंत। सुर नर मुनि कोइ लहै न अंत॥ टेक॥ काम प्रधान तिहि राव साथ। सकल सभा मिली रच्यो राथ॥ पांच बान पिचकारी लीन। पांचू पांच मिलि खेल कीन॥ संकट करि करि मोरच्यो उजासु। होय अकरष न रह्यो उदासु॥ मोहनी होय सब हर्यो ज्ञान। मार्यो शिवकौ पुहुप बान॥ कुमति सखी तहां खेलै खेल। चौरासी सब दीये ठेल॥ सुभ असुभ तहां गावे गीत। लालच लोभमें सबै भात॥ जोगी वनमें करै जोग। मारे बान तहां जाय लोभ॥ जोग जुगति कछु रहै न थीर। पुहुप बान लग्यो शरीर॥ रावन मार्यो महा मोह। भक्त जना सों कियो द्रोह॥ माया मोह लाग्यो राय। सबकूं मोह नरेस खाय॥ अभिमान बान दुरजोधन लीन। वचन हेत नहिं भयो अधीन॥ ताको लालच लाग्यो बान। मोह नृपतिने मार्यो तानि॥ एक ओर भयो मोह राव। इत विवेकने लायो दाव॥

सुरति निरति पिचकारी प्रेम। शील संतोष अति बचन हेम॥ खेलन लागे मगन होय। तहां मोह पुनि चल्यो रोय॥ छिकत छिमां छबीले रंग। सुमति सखि तहां लीये संग॥ काम क्रोध तहां परे छीन! महा मोह तहां भय हीन॥ खेलैं विवेक संतोष संत। कहैं कबीर सुख निधि वसंत॥

वसंत १५—चल भौंरा जहां नित वसंत। अवसर गये न फिर मिलंत ॥टेक॥ सुख सागर जहां सुख निधान। तहां ग्रीषम नहीं करत हान॥ जहां कुमुद फूले अनंत हो। तहां भँवरा खेलत बसंत॥ कुंज सवन तहां कुहके मोर। प्रेम बुंद सागर हिलोर॥ स्वतः प्रकास सो बन फूलंत। सुख निधान तहां करू बसंत॥ यहि बन विषय विकार भोग! जहाँ व्यापै संसै महा सोग॥ चलो वहाँ यहाँ तजो संत। जहाँ जोग जीत खेलै बसंत॥ तहां यह पुहप अगर महँकै सुवास। सेत गुलाल अरु सेत भास॥ सत पुरुष जहां मिलै कंत। कहैं कबीर तहां करो बसंत॥

वसंत १६—काम कला खेलै वसंत। गिनै न काहू अति मैंमंत॥ टेक॥ नैन सैन पिचकारी लीन। लै इन्द्रिनके हाथ दीन॥ सकल संग ये मारे खाय। सुर नर मुनि सब दिये ढाय॥ देख रूप मन करै भंग। कुबुधि सखी लिय धावै संग॥ बदन देखि मति भये हीन। करै क्रोध सब देह छीन॥ गुन अवगुन कछु गिनै नाहिं। सबही को करै एक राहि॥ अन्त न जानै कहा होय। जम द्वारे लै करे विगोय॥ मोह रूपकी कला बनाय। जहँ तहँ फंदा रह्यो फंदाय॥ मैं तू खेलको करत रारि। बाँह पकडि डारे पछारि॥ तीन लोकमें डारे रोर। व्यापित करै अंधियारै घोर॥ गति मति सबहि गई हिराय। मदन बान तन रह्यो समाय॥ अरे नर मूरख अबकी चेत। अब जानौ कछु याको हेत॥ विष

अमृत निरवारो भेद। छोड़ो बाद विवाद खेद॥ जो विष खाये सो परलय होय। विन अमृत नहिं बाँचे कोय॥ था औसर तू मूढ मान। सत शब्दको गहो प्रमान॥ मिलि सतगुरु सो खेलो खेल। जरा मरनकी मिटे जेल॥ कहैं कबीर गहो सत भाव। बहुरि न ऐसो पावो दाव॥

वसंत १७–बाबासो जोगी जाके सहज भाव। अकलि प्रीति की जिच्छा खाय॥ टेक॥ शब्द अनहद सींगी नाद। काम क्रोध विषीयान बाद॥ मन मुद्रा जाके गुरुका ग्यान। त्रिकुटि कोट मैं धरैं ध्यान॥ मन करनीको करै अस्नान। गुरुको शब्द लै धरै ध्यान॥ काया काशी खोजौ बास। ज्योति स्वरूप जहां भयो परकास॥ ग्यान मेखला सहज भाव। वंक नालि को रसहि खाय॥ जोग मूलका देत बंद। कहैं कबीर थिर होय कंद॥१७॥

वसंत १८–मगन रूप निरखत वसंत। विविधि प्रकास महिमा अनंत॥ टेक॥ सरवन सुनत सोहं ग्यान। रसना बरनत आपु ध्यान॥ नेत्र छकै लखि आप रूप। वरनत अमि छवि अति अनूप॥ भोग नासिका सुखद वास। हिरदय कमलकी लै सुवास॥ तुचा मेल कियो नासा संग। संग समान कियो परसंग॥ ध्यान लिये है प्रेम प्रीति। सेवा बंदन संत रीति॥ विषय पंथ नहिं चाले पाय। सुखित धाम बसि कहूं न जाय॥ दरशन दरसत आप ब्रह्म। जल घटमें जल मध्य बिम्ब॥ तेज जोतिमें जोति तेज। विलसत सुख यह अमर सेज॥ कहै कवीर मन मगन ग्यान। सोधि शब्द लेहु तत छान॥ प्रान पिंडमें पिंड प्रान। शब्द रीति बूझत सुजान॥

वसंत १९–चेतन रूप निरखत वसंत। प्रेम अमीरस आदि अंत॥ टेक॥ मन अज्ञा बस प्रेम संग। बुधि अस्थिर गति एक

अंग ॥ चित अमी रस पिये अघाय। अहं कृत तब चित मिटाय॥ सुरति लिये सोहं जाप। कुमति काम तजि भय संताप ॥ जीव सीव है ब्रह्म आप। सहज मिटि तन मनकी ताप ॥ द्वैत मिटी निज पदको पाय। यह सतगुरु सतपद लखाय॥ तन मन मन तन रह्यो छाय। ततलौ वित वित तत समाय॥ तूं पद ततको छुटचो धंध। पाय धाम पद नित अनंद ॥ कहै कबीर आनंद कंद। स्थिर घर मिलि भान चंद ॥

वसंत २०–सदा वसंत मन राखो थिर। मेटि कल्पना धरो धीर ॥ टेक ॥ काया नगर बसि करि विलास। आपा चिन्हो तजि सकल आस ॥ झूठी आसा तनको नास। ताते जगत है काल ग्रास ॥ कहा भवर होय फिरौ उदास। यहि संपुट देखो कमल वास ॥ चारि पहरको रंग रास। सुरझत कमल करि लै हुलास ॥ केतिक है तेरे जिवको त्रास। धोखे लेत क्यों अनत बास॥ तूही फूल तूही अगर बास। का ढूंढै बन बन होय उदास॥ अजहूं चेत है तन में स्वास। सुरति सुमति गुन राखि पास ॥ सकल मही गुरू है निवास। अटल राज जुग जुग विलास॥ हरष शोक नहीं भूख प्यास। रैन दिवस नहीं सदा उजास ॥ सहीं धाम निरमल शरीर। सदा अखंडित कहै कबीर ॥

वसंत २१–कहा अरुझि रहे मायाके जाल। निसि दिन जीवको संशय काल॥ टेक ॥ अनंत भूप अलेख साध। सिद्धि न पाई गये अगाध ॥ मरम मिल्यो नहिं मिटी व्याधि। ब्रह्म ब्रह्म रटि ठान्यो वाद॥ ब्रह्म कौन कहु मन है कौन। कौन शब्द कहु कौन पौन ॥ भिनि भिनि करि त्यागये मौन। भरम रच्यो जिमि पानी लौन ॥ प्रगट सिष्टिपात लखै जो कोइ। सर्व यथा भरि पूरि सोइ ॥ बीज विरछ यक संग जोय। जस चंदा एक संग

लोय ॥ ब्रह्म वदन धुनि तत रूप । सकल साज सरगुन सरूप ॥ उदित भान यक संग धूप । सरब मूल यक बीज रूप ॥ सोई दृष्टि है सोई नैन । सोई तेज तन मनमें सैन ॥ सोई पेड फल सोई कैन । सुख निधान आनंद चैन ॥ यही जम करताको साज । मरम मिलै तो सरै काज ॥ विना मरम गुरू देत राज । भेद न पायो भयो अकाज ॥ अगम ग्यान चित भरम जान । लख सरूप तजि दूरि ध्यान ॥ कहै कवीर गहो सत्त जान । अमीतत गुरू पान पान ॥

वसंत २२-देखो देखो रे या नरकी भूल । सींचत साखा तजत मूल ॥ टेक ॥ प्रगट ब्रह्म है घट समान । ताहि छांडि पूजै पखान ॥ जल पीवै पाषान धोय । सो तो आदि अंत पाषान होय ॥ स्वर्ग सीस पाताल पाय । सो कैसे सम्पुट समाय ॥ अलख पुरुष आवे न जाय । सो कैसे दिये तुम्हारो खाय ॥ जुगन जुगन मैं कह्यो पुकारि । नर शब्द न चीन्हे करे रारि ॥ कहै कवीर नर कियो न खोज । भटकि मर्‍यो जैसे वनको रोज ॥

वसंत २३-कोई संत विवेकी मनहीं जान । जामें अरूझि रह्यो सगरौ जहान ॥ टेक ॥ मन पंछी होय उड़ै अकास । मनही जल थल सकल बास ॥ मनही चहुं दिशि रहो छाय । कोइ न चिन्हे मन सबको खाय ॥ मनही पाप अरु मनहीं पूजा । मनही रूप धर्‍यो यह इजा ॥ मन मध्य मन आदि अंत । मनही लीला रची अनंत ॥ मनके बस सुर सकल देव । मनहीकी सब करै सेव ॥ मनही धाम जो रच्यो बनाय । मन जनम्यो नौ बेर आय ॥ ब्रह्म फूटि मन भयो अंस । तीन लोक मन कियो विध्वंस ॥ कहै कवीर जो मनही जान । सत शब्द गहि ले पहिचान ॥

वसंत २४-खेलत वसंत तन मन बिरह रंग । भव सागर नाना तरंग ॥ टेक ॥ कोई जोग करे कोइ जज्ञ दान । कोई नेम धर्म

पूजे पषान ॥ कोई गिरही कोई फिरै उदास। कोइ नग्न त्वचा गुफामें वास॥ कोई डंड कमंडल धूमपान। कोई ऊरध तपस्या गोड तान॥ कोई दूधारी पवन ग्रास। कोई अग्नि जरावे चहूं पास॥ कोई छत्र धारी धज निशान। कोइ सूरासन मुख खेत ठान॥ कोई पीर औलिया करै मिजाद। कोई षट दरसनमें करैं बाद॥ कोइ उदय अस्त दहना वल देय। कोई चारि मास जल सैन लेय॥ कोई बहुत भेष धरि करै स्वांग। कोई साधे धतूरा पोस्त भांग॥ कोई ऊरध कपाली आसन राधि। कोई निशि वासरकी निद्रा साधि॥ कोई रिद्धि सिद्धि करामाति जान। कोई जोगी मुद्रा पहिरै कान॥ कोई अलह कहै कोई कहे राम। हिन्दू तुरक दोय धर नाम॥ सकल ब्रह्म समान एक। कहैं कवीर लीला अनेक॥

वसंत २५-ऐसे सबै मद माते कोई न जाग। संगहि चार घर मूसन लाग॥टेक॥ जोगी माते जोग ध्यान। पंडित माते पढि पुरान॥ तपसी माते तपके भेव। संन्यासी माते अह मेव॥ माते ऊधो औ अक्रूर। हनुमत माते लिये लंगूर॥ शिव माते हरि चरन सवे। कलि माते नामा जय देव॥ जैनी माते करम बाद। जंगम माते घंट नाद॥ मुल्या माते देदे बांग। राम विमुख सब भूले सांग॥ राजा माते भरि भंडार। रानी माती करि सिंगार॥ दानी माते दे दे दान। प्रजा माती विषया पान॥ ब्रह्म रटत है चारों वेद। रावन गइयो घरके भेद॥ या मनुवाको अधम काम। ताते कहै कवीर भजु सत्त नाम॥

वसंत २६-नारि नाहिं संतो हरि तुम्हार। बिना मूल जैहो जनम हार॥टेक॥ हरिश्चंद समान नहिं दानी आन। निज रानी सहित पुत्र विकान॥ विन विचार चित लियो है मानि। हरिचंद भरो डोम घर पानि॥ पांडव कहिये सब सौ जोर। तिनका पाँव

नरकमें बोर ॥ राजा बलि करनी जो कीन्ह । बावन रूप छली बाहू लीन्ह॥ रावन भयो चहुँ खंलके राल। तिनको काल कियो पैमाल ॥ मथुरा कंस सिर छत्र ढार । कृष्ण क्रिस्ना काल धरि चोटी मार॥ यही भांति सब गये है बीति। काहु न मानी शब्दकी रीति॥ कहैं कवीर यह हरि बिचार। शिव विरंचि सब खायो झार ॥

वसंत २७--इस घरमें बाबा बाढी रारि। नित उठि लागै चपल नारि॥ टेक॥ एक बडी जाके पांच हाथ। पांचनके पच्चीस साथ॥ पचीस बतावै और और । और बतावै कई ठौर ॥ इक अन्तर बैठि अन्त लेय। इक झक झोरै झोटा देय॥ अपनों अपनों चाहैं भोग । कहुँ कैसेके यह सधै जोग ॥ नियरे रहन न पाऊँ दूरि । चहुँ दिशि बाबरि रही पूरि॥ लाख अहेरी एक जीव। ताते पुकारे पीव पीव ॥ घर बांधु नहिं मांगु भीख । बहुत दिननको लागी सीख॥ अबकी जो कहुं होय बचाव। कहैं कवीर परे पूरा दाव॥२७॥

वसंत २८–मोपै मोह मृग मार्‌यो न जाय। मेरी बुद्धि वारीमें वसो खाय ॥टेक॥ मेरी बुद्धि वारीमें मुकती मैन। मोहि देखत चरि गयो कैन कैन ॥ रहन न पावे फूल पात । सींचत हारी पटकि हाथ ॥ सुरति निरतिके लिये है वान। ग्यान धनुष साधे सधान॥ अब मारूं तो ताकि ताकि। होय विदेह तहां गयो विलाप ॥ सुर नर मुनि सब थके हारि । मोह मृग नहीं सके मारि ॥ कहे कवीर हम दियो टारि । गुरुके शब्दकी करी बारि ॥

वसंत २९–मोहि ऐसे बनिज सो नहिं काज। जामें घटत मूल नित बढत व्याज॥ टेक॥ नायक एक वनिजरे पांच। बैल पचीस वाके संग साथ॥ नौ वहिया दस गौनि आहि। कस निवेहै तरि लागी ताहि॥ सात सूत लै बनिज कीन। कर्म टहलुवा संग लान॥ चारि जगातो माड़ी रारि। ताते नायक चाल्यो हारि ॥ खरच

खुटान बनिज टूट । चहुं दिशि टांडो गयो फूट ॥ कहै कबीर विष यह बनि बादि । पड़ि गौनिको देय लादि ॥

वसंत ३०–ऐसो नगर निरंजन बसो न जाय। जहां धरम राये मांगै धराय ॥ टेक ॥ काया पुर पटन दसूँ दुवार। ऊँची कुलफ दिढ लगे के वाँहू ॥ पांच जना नहिं माने कोय। मुसै चोर घर बेग सोये ॥ तत वदरे आये प्रचंड। घर मोदीको कियो है बंध ॥ भाजि चले पाँचूँ घरधान। ले मोदी गुदरी दीवान ॥ सहली घाट अरु झीनी बाट । द्वरग जगाती रोके घाट ॥ डांड लगैका पूछे मोहि। पूछे जावों कहा देंव तोहि ॥ सब अनाथ मैं कहूँ काय। कहौ कौन विगुचे इहां आये ॥ मैं तो बंदूँ चरन धीर। सुखसागर होय मिले कबीर ॥

वसंत ३१–ऐसो संगवास मोहि वस्यो न जाय । जहां आप स्वारथी पांचू भाय ॥ टेक ॥ अटपट कुनबा बारह बाट। फिरि फिरि जल पीवै दसो घाट ॥ नैन नासिका जीभ्या कान । इद्री स्वाद चाहे आन आन ॥ काम क्रोध को कठिन जार। भवसागर सूझै वार न पार ॥ चहुं दिसि पसरचो माया फांसि। जहाँ मन बंधे करम बास ॥ दुख सुख व्यापे दोनों भांति । काया नगरमें परिहै भ्रांति ॥ कहैं कबीर कहा कथिये ज्ञान । दो तलवारको एकहि म्यान ॥

वसंत ३२–मेरो हार हिरानौ मैं लजांव। सांस दुराचनीं पीव डरांव ॥ टेक ॥ हार गयो मेरो राम धाग । बिच बिच मानिक लाल लाग ॥ तरन पियाला परम जोति । अंतर अंतर लगे है मोति ॥ पांच सखी मिलि हैं सुजान। चलि जइये तीर वेनी नहान ॥ नहाय धोय सिर तिलक दीन्ह। ना जानो हार मेरी कौन लीन्ह ॥

हार हरचो जिन विमल कीन्ह। ले पारोस निहार दीन्ह ॥ तीन लोककी जानै पीर। सब देव सिरोमनि कहै कवीर ॥

वसंत ३३--जिन पतित उधारे सो संभारि। आदि अन्त राखे मुरारि ॥ टेक ॥ यक गनिका होती नगर माहिं। जाको राम कहनकी सुधि नाहिं ॥ खरचे दाम सुवा लियौ मोल। तुम पढौ परबते राम बोल ॥ एक अजा मिल पंडित असाच। सो तो गनिकाकै संग रहगे रांच ॥ राम नारायण पुत्र साखि। सो तो जमदूतनसे लियो राखि ॥ एक बधिक हते कोटिन जीव। जिन सपनेहु नहिं भज्यो पीव ॥ हरिके चरण लखि मारचो बान। सो वधिक चढि गयो विमान ॥ पतित उधारण विरदा तोर। सरन आय लज्जा राख मोर॥ कहै कवीर देवा न देव। सुर नर मुनि जाके लह्यो न भेव ॥

वसंत ३४--नाहि छाडो बाबा राम नाम। मोहि और पढनसों कौन काम॥ टेक॥ प्रहलाद पधारे पढन शाल। संग सखा लिये बहुत बाल॥ कहा पढावे पांडे आल जाल। मेरी पाटीमें लिखिदे श्रीगोपाल॥ कहे पंडित तुम सुनौ राय। तेरो पुत्र चलत है अपने दाय ॥ मैं मारूं डारैं बुझान। ये तो नेक न माने मेरी कान॥ संडेमरके कह्यो जाय। प्रह्लाद बंधायो बेगि आय॥ राम कहनकी छाड बान। अबही छुड़ाऊँ मेरो कहा मान॥ कहा डरावै पांड़े बार बार। जिन जल थल गिरिको कियो प्रहार॥ मार डार भावे देह जारि। राजाराम तजूं मेरे गुरूहिं गारि ॥ काढि खडग कोप्यो रिसाय। तोरे राखन हारो मोहि बताय ॥ कहैं प्रह्लाद कछु शंका नाहिं। मोमें तोमें सकल माहिं॥ खड़ग खम्भमें रहो पूरि। मेरो राखन हारो नाहिं दूरि॥ खम्भ फारि प्रगटे मुरारि। हिरनाकुस माऱ्यो नख विडारि॥ आदि पुरुष देवानदेव। धारचा

भक्त हेत नरसिंह भेव ॥ कहै कबीर हरि भगती प्यार। प्रहलाद उबाऱ्यो अनेक वार ॥

वसंत ३५--बाजि बाजि रे मधुर वा मधुरि तान। तेरी तान मेरो बसो प्रान ॥ टेक ॥ प्रथम सहनाई बाजे नाद। मिटि गये मनके विषै वाद ॥ रूम रूम खुली सुखकी खान। जन्म सुफल कियो अपनो जानि ॥ दूजे घंटा बाजे घोर। तिमीर नासि भयो दिवस भोर ॥ सुकृत बैन भयो थकित गात। बिसरे मनको पांच सात ॥ तीजे संख ध्वनी पड्यो कान। गति पलटी मति भई आन ॥ जन्म जन्मके पाप फंद। नास भये सब दुख द्वन्द्व ॥ चौथे नाद जो बाजे झांजि। कसमल मनके डारे मांजि ॥ अहंकारको काट्यो सीस। चित्त चंचल गति घटत दीस ॥ पाँचवें तंती सुर सोहाय। राग अखंडित गीत गाय ॥ लगै सुहावन होय आनंद। जम जालिमके कटै फन्द ॥ छठवें बाजे मंजीरा ताल। जरा मरनका मिटै साल ॥ पांच सखिनके भयो चैन। सरवन सुनत सुख पीवके बैन ॥ सतवें बाजे सरस बीन। तन हाऱ्यो मन भयो लीन ॥ निगम निरंतर धऱ्यो ध्यान। सुधि विसरी बुधि भई विज्ञान ॥ आठवें तूर मोहि बहुत प्यार। तू मति मोते होय न्यार ॥ साधु संत तेरा ध्यान लेहिं। तेरे सुनत पीव दरश देहिं ॥ नवमें बाजे करनाली भेरि। अगम अगोचर निरखि हेरि ॥ जागत जागत रैन जाय। हेरत हेरत दिन विहाय ॥ बड भागी सुनै दसूं नाद। जिहि सुनि भागै सकल वाद ॥ मेघ नादमें रहै समाय। सुरति निरन्तर अग्र जाय ॥ यकादस बाजे नौबत घोर। गगन बंब बहु उठै सोर ॥ शब्द सुरति तहां करि विचार। पैठि गये गहि मकर तार ॥ द्वादस मध्ये भयो प्रगास। मन मनसाको भयो नास ॥ बाजे अनंत नहिं अंत ओर। सेत पुहुप अरु सेत भौंर ॥ देख्यो

दीप अमान ठौर। थकत भयो मन मिटि दौर॥ जहो सुघर सुरन बाजे रबाब। जोग जीत तहां खेलै फाग॥ अधर दीप अरु अधर वास। सत पुरुष सोहै प्रगास॥ तहां हंस पहुंचे जो कोय। जरा मरनसो रहित होय॥ अमृत फल तहां सदा भोग। मिटि गये क्षुधा तृषा सोग॥ कहैं कबीर गुरू दीयो लखाय। अछय वृच्छ फल रह्यो छाय॥

वसंत ३६–वसंत आरति करि सुजान। भौ सागर नहिं होय हानि॥ टेक॥ गुरू मुख साजो अमी पान। चौदह पवन आरति प्रमान॥ अनहद बाजे घंटा ताल। भवसागर छूटै जंजाल॥ आरति करि खेलो वसंत। जम जालिमको छूटै दंत॥ अधर जोति दीपक निशान। गगन बंब गरजै सुजान॥ घट माहिं उपजो ज्ञान ध्यान। पूरन ब्रह्म सब माहिं जान॥ कहैं कबीर गुरु मिले खेलि। दुर्गदानीको दीन्ह पेलि॥

वसंत ३७–तकि मारचो सतगुरु सुजान। मेरे हिरदे लागो शब्द बान॥ दसहुँ दिसा मन करत दौर। चित न चले मन रहौ ठौर॥ चल न सके मन पांव एक। मेरे कठिन करेजे भयो छेक॥ ऊपर घाव न दीसे कोय। नख सिख व्यापे साले मोय॥ को जाने मेरे तनकी पीर। सो जाने जेहि लागो तीर॥ पलट्यो तन मन पलट्यो अंग। पांच पचीसक लीन्हे संग॥ उलट समाने आपु मांहि। कहँ कबीर बलि जाऊँ ताहि॥

वसंत ३८–चल भौंरा खेलहिं बसंत। पुहुप बास महके अनंत॥ बन मोरे भये हरियर झार। पियरे पियरे पात सार॥ बेल नबेली आस पास। जुग मरनको भयो नास॥ निस चंदा परकास कीन्ह। बासर सूरज गवन लीन्ह॥ अब न मिली गत भये विनास। विकस कँवल देखो प्रकास॥ संपुट खोल भौंरा उड़ान। गई

रजनी जब भये बिहान ॥ रुन झुन भौंरा लाये सोर । पुहुप बास महँ करे घोर ॥ निसि वासर नहिं चंदा सूर । पुरुष रूप अविगत है पूर ॥ सर्व सार रस भिन्न अंग । जम कंटकके छूटे संग ॥ सुख सागर निरभयको धाम । पुहुप अखंडित सत्त नाम ॥ कहैं कवीर ऐसे खेल साध । पुरुष दरस पावे अगाध ॥

वसंत ३९--चल चल रे भौंरा कँवल पास । तेरी भौंरी डोले अति उदास ॥ दिना चारको सुरंग फूल । ताहि देख भौंरा रहो भूल ॥ सब फूलनको लियो भोग । सुख न भयो तन बाढे रोग ॥ जित देखो तित वन पलास । मोहि कतहु न दीसे जीवको बास ॥ बनसपती जब लागी आग । अब भौंरा कहां जैहो भाग ॥ पोहप पुराने गयो सूख । भौंराको लागी अधिक भूख ॥ उड़ न सके बल गयो टूट । भौंरी रोवे सीस कूट ॥ जब मैं बरज्यों बार बार । तोहे बन ढूँढ्यों डार डार ॥ कहैं कवीर यह मनको भाव । सत्त शब्द बिन जमको दाव ॥

वसंत ४०--कहां जइये ग्रह लागो रंग । चित न चले मन भयो अपंग ॥ जहां जाय तहां जल पखान । पूरि रहो प्रभु सबहिं समान ॥ बेद स्मृति सब देखो जोय । उहां जाय सो इहां न होय ॥ एक दिन मनमें भये उमंग । घसि चोवा चन्दन चरजे अंग ॥ पूजन चली सब ठाहिं ठाहिं । ब्रह्म बतावे गुरु आप मांहि ॥ अंजन मंजन तजु विकार । अरसठ तीरथ एक द्वार ॥ काहेको नर अन्ते जाय । घटहीमें तीरथ काहे न न्हाय ॥ सतगुरु मैं बलिहारी तोर । सकल कर्म भर्म मेटो मोर ॥ कहैं कवीर सुन रामानंद । गुरुको शब्द काटे कोट फंद ॥

वसंत ४१--नगर निरंजन बसो जाय । धरमराय मांगे बेध राय ॥ काया पुर पाटन दस दुवार । कूंजी कुलफ दिढ लागे किंवार ॥

पांच जना नहिं माने काहु। मूसे चोर घर बांधो साहु॥ तलबदार आये परचंड। परमोधी पर कीन्हे डंड॥ भाग चले पांचों परधान। ले मोदी गुजरे दीवान॥ आगे अगम है बिषम घाट। दुर्गदानी जगाती रोके घाट॥ दान देहु का पूछो मोहि। रीते जाव की देऊं तोहि॥ सबे अनाथ मैं कहों काहि। को कोन बिगूचे इहां आहि॥ सब सुख चाहो धरो धीर। सुखसागर जब मिलो कबीर॥

वसंत ४२–कोई सन्त विवेकी मनही जान। उरझ रहो सकलो जहान॥ मन पंछी उडि गयो अकाश। जल थल मांही सकल बास॥ मन उरझाय रहो है छाय। कोई न चीन्ह मन सबहीं खाय॥ मनहिं पाप औ मनहीं पुन्न। मन सिरजा देखो तीन गुन्न॥ मनहि धाम जो रचा बनाय। मन जन्मो नौ बार आय॥ मनके ब्रत सुर सकल देव। मनहीकी सब करत सेव॥ मनहि मध्य औ आदि अन्त। मन सिरजो लीला अनंत॥ ब्रह्म फूट मन भयो अंस। तीन लोक मन कियो बिध्वंस॥ कहें कबीर जो मनही जान। सत्य शब्द गहि पद निरवान॥

वसंत ४३–मोहि ऐसे बनिज सो नाहीं काज। घटत मूर दिन बढत ब्याज॥ नायक एक बनजारे पांच। बैल पचीसक संग साथ॥ नौ वहियां दस गोन लाद। कसन बहत्तर लागे तास॥ पाप पुंन दोय बनिज कीन्ह। कर्म पयादे संग लीन्ह॥ तीन जगातीसे मांडी रार। तासों नायक गयो है हार॥ पूंजी खुटायल बनिज टूट। चहुं दिस टांडा गयो फूट॥ कहें कबीर ऐसो बनिज बाद। परि है गौन को देई लाद॥

वसंत ४४–सतगुरु खेले नित बसंत। मुक्त पदारथ मिले हो कंत॥ धरती रथ चढ देखो देस। घर घर देखो नृप नरेस॥ जोजन चार पेंतुरे फेर। बांध मवासी घरमें घेर॥ अधर निअच्छर

गहो ढाल। भाग चले रन छोड़ काल॥ सूर सुध घट गहो कमान। चंद चिता गहि मारो बान॥ साध संगत मिल करहु जोर। तब गढ छोडे चतुर चोर ॥ ऐसी बिध जो लडे सूर। तब काल मवासी होय दूर॥ अधर निअच्छर गहो डोर। जो निज मानो बचन मोर॥ धरती तुरे होय असवार। कहैं कवीर भौ उतरो पार॥

वसंत ४५–देखो देखो रे या नरकी भूल। सींचत साखा तजत मूल ॥ प्रगट निरंजन घटही मान। ताहि छोड पूजत पषान ॥ जल पीवै पाषान धोय। आदि अंत पाखान होय॥ गगन सीस पाताल पांय। सो कस ठाकुर संपुट समाय ॥ अलख निरंजन आवे न जाय। सो कस दिये तुम्हारो खाय ॥ बार बार हम कहा पुकार। शब्द न माने करत रार ॥ कहैं कवीर नर कियो ना खोज। भटक मुये जैसे बनके रोज ॥

वसंत ४६–नहिं नहिं रे संतो हरि तुम्हार। एक मूल बिना जेहो जन्म हार॥ हरि चंद समान कहु कौन दानि। पुत्र सहित जिन बेंचि रानि॥ करनी कीन्ही मनहि जानि। आप नीच घर भरयो पानि॥ राजा बलि भल करनी कीन्ह। बावन रूप हरि छल जो लीन्ह॥ ता कहं दीन्ह पताल बास। देखो देखो रे संतो हरि बिश्वास॥ राय युधिष्ठिर भक्त जोर। ताहूके पांव नरकमें बोर॥ कहैं कवीर सुन हरिके दास। ऐसे मूरख चाहे बैकुण्ठ बास ॥

वसंत ४७–होत ब्याह सतगुरुके द्वार। जहां बरषत शब्द अखंड धार॥ बाहर द्वादश खंभ गाड़। प्रेम प्रीतको मंडप मांड॥ ज्ञान तत्त्व लेकर चढाव। श्वेत मुकुट माथे बंधाव॥ जगमग जोत जहां अति अपार। सुघर पुहुप जहां अति सुवास॥ कहैं कवीर रहु सुमत धीर। ऐसे ब्याह रचे सतगुर कवीर ॥

वसंत ४८-जप जप रे जियरा सुकृत सोर। काहे न गहो निज शब्द डोर ॥ जहां सुकृत तहां अग्र बास। रवि शशि धरनिन बहे बतास ॥ गगन नगर जिन बरसे नीर। सुरत निरत ले रोपो धीर ॥ षट दरशन मिल कथहीं बेद। सिध साधक सब अपने भेद ॥ सुर नर मुनी कोइ गम्म न कीन्ह। औंट मुवे बिन जलके मीन ॥ इकइस खण्ड पृथ्वीको भाव। गन गन्धर्व बीते याही ठांव ॥ कहें कबीर रहु अति अधीन। सत शब्द गुरु कहि जो दीन्ह ॥

वसंत ४९-ब्रह्ममंड धाम रस एक जान। जामें सप्त सिंधु औ चार खान ॥ चर अचर जीव जुग बेद देव। सुर असुर नाग सब करत सेव ॥ बाग वृच्छ सलिता अनूप। फल फूल पात शोभा सरूप ॥ बहे सूर सूरनर सकट साल। रबि चंद बंद है अमल ताल ॥ रिध सिध सरबत्र ऐन। गुरु ज्ञान ध्यान धन मर्म चैन ॥ सरग नरक घर धरन धाम। पाप पुंन नहीं चलन काम ॥ पांचों गुरु मंत्री प्रवीन। भोग नार पचीस कीन ॥ इनके अनंद सुख भौ सुभाय। पूर रहो मोहि प्रगट काय ॥ पांच तत्त्व गुन तीन साज। मन राजा जहां करत राज ॥ ब्रह्म अखंड है सबते न्यार। बेद पुरान न पावे पार ॥ निहतत्त्व अच्छर शब्द सार। किंचक लखे सो उतरे पार ॥ नहिं आवे नहिं धरत देह। कहें कबीर वह है बिदेह ॥

वसंत ५०-मोह मिरग मारो न जाय। यह तन बारीमें बसो आय ॥ बारीमें उपजे मुक्त बेल। देखत चुन गये केल केल ॥ बचत नहीं फल फूल पात। सींचन हारो पटके हात ॥ सुरत निरतके साजो बान। ज्ञान ध्यान साजो कमान ॥ जो कोइ मारे ताक ताक। होत बिदेह बिलाय जात ॥ सुर नर मुनि कोई सके न मार। गन गंधर्व सब रहे हार ॥ कहें कबीर हम दीयो टार। सत्य शब्दके रोपी बार ॥

वसंत ५१—सबही मद माते कोइ न जाग। संगहिं चोर घर मूसन लाग॥ जोगी माते जोग ध्यान। पंडित माते पढी पुरान॥ तपसी माते तपके भेव। संन्यासी माते करि हमेव॥ मुलना माते पढी मुसाफ। काजी माते दे निसाफ॥ संसारी माते माया धार। राजा माते कर हंकार॥ माते सुखदेव ऊधो अक्रूर। हनुमत माते ले लंगूर॥ सिव माते हरि चरन सेव। कलि माते नामा जय देव॥ सत सत कहे सुम्रित वेद। ऐसे रावन मारे घरके भेद॥ चंचल मनको अधम काम। कहें कवीर भजो राम नाम॥

वसंत ५२—जहां बारा मास बसंत होय। परमारथ बूझे बिरला कोय॥ बरषे अगिन अखंड धार। जहां बिजुली चमके अति अपार॥ ससि भान बिना जहां प्रकास। हरियर भौवन अठारा भास॥ बिन पानी आद्र कहै लोय। पवन गये सब मिलन धोय॥ बिन तरवर फूले अकाश। शिव बिरंचि तहां लेय बास॥ सनकादिक भूले भँवर होय। लख चौरासी जिव गये बिगोय॥ जो तोहि सतगुरु सत्त लखाव। कहीं न छूटे करनी भाव॥ अमर लोक फल देखो आय। कहें कवीर जाने सो पाय॥ १६॥

वसंत ५३—सतनाम तत्त्व तीन लोक सार। लवलीन भये सो उतरे पार॥ एक जोगी जुगवे जटाधार। एक अंग भभूत धारे अपार॥ एक मौनी मुखमौन लीन्ह। भ्रमत फिरे जुग जुगन छीन॥ एक आराधे सकती सीव। एक पर दादे दे रटत जीव॥ एक कुलदेवीको जपत जाप। ऐसे त्रिभुवन पति भूले आप॥ एक अन्न छांडके पीवे दूध। हरि न मिले बिन हृदै सूध॥ कहें कवीर चित चेतो अंध। नातो परिहो जमके फंद॥

वसंत ५४—सतगुरु कँवल है सुख निधान। जहां मोरे लागा अछे ध्यान॥ सोहंग तार अखण्ड डोर। बानी मुकतापरगट

सोर ॥ पानी पावै आद अनाद। ग्रह सिंगी सब गयो है बाद॥ जलुवा मलुवा दुनियां चोर। ये सब परे हैं कालके डोर॥ दावन कुत्ता दूत लबार। ध्यान छाडि बकते अपार ॥ अदल नाम चूरा मन ध्यान। ध्यान छाप बिन इष्टज्ञान ॥ साहब कबीर कहें बसंत। ध्यान छाप बिन खेह पडंत ॥

वसंत ५५-सत सुकृत खेलें रितु बसंत। करो अनंद दुख मेटो संत॥ जीवन सांच भल तबहीं होय। गुरुगम भेद लख पावे कोय॥ लख चौरासीको कटे फंद। अमर करो मन छाडो दंद ॥ सोई सोहागिन पियहिं चीन्ह। द्रिष्ट मांहि रहे अति अधीन॥ दरशन शोभा रहे समाय। नहिं बिछुरे लिये संग जाय॥ परष जान जब नाम लीन्ह। रतन पदारथ लेव भीन ॥ कहें कबीर यह खरच थार। अजर अमर घर रहो निनार ॥

वसंत ५६-सतगुरु खेले ऋतु बसंत। परम पुरुष जहां साध संत ॥ तीन लोकते भिन्न साज। सुनिये अनहद बाजे बाज ॥ कोट सूर्य जहां उगे अपार। बिरला जन कोई पावे पार॥ कोट सरस्वति करहिं राग। कोट इंद्र मुन गावन लाग॥ कोट कृष्ण कर जोरे हाथ। कोट विष्णु जहां नावे माथ॥ कोट ब्रह्मा जहां पढे पुरान। कोट शंभु जहां धरे ध्यान॥ अखंड जोत जहां बरे अथाह। बिरला साधू पावे थाह॥ नाना बिध जहां करहिं केल। ते वह लोके रहे मेल ॥ प्रथम बसंत एक राग कीन्ह। सतगुरु शब्द उधार लीन्ह ॥ गन गंध्रब मुनि गने न जाय। तहां प्रभु आप बिराजे आय॥ कहें कबीर ऐसो मत हमार। पतित उधारन नाम सार ॥

वसंत ५७-चल हंसा सुख सागर घाट। तेरी हंसनी बैठी चितवे बाट ॥ सार शब्दमें जाय देख। अति सुंदर तहां अति विशेष॥

तहवां अमृत मोती होय। हंसा भोजन करे सोय॥ अमृत नीर जो पिये अघाय। जन्म जन्मकी तिरषा जाय॥ आवागमनसे होय निश्चित। शब्द माँहि खेलै बसंत॥ जहां अनहद बाजा अति सुहाय। सदा बसंत जहँ अछे छाय॥ षोडश सूरजके प्रमान। हंस एक उजियार जान॥ श्वेत दीप जगमग प्रकास। पुहुप बसंतकी महके बास॥ स्वेत सिंगासन छत्र स्वेत। स्वेत वृक्ष तर हंस स्वेत॥ केहि बिध हंस वा घर जाय। सार शब्दमें जाय समाय॥ शब्द चाल चले शब्द मांह। ले पहुंचे धर्मदास बांह॥ शब्द बिना नहिं पावे बाट। शब्द चूक परे औघट घाट॥ चूके शब्द जम पकर लेइ। फिर नर हमको दोष देइ॥ अपनी चूक जो समुझे नाहिं। ते नर अंध बिगोय जाहिं॥ चेतहु तौ नर खोज लेहु। ना तौ फिर फिर धरहु देहु॥ सत शब्दकी कर प्रतीत। भौजलते चलो निहचे जीत॥ जो कोइ चाल नर चूक जाय। पंच अमीमें ध्यान लगाय॥ सांची सुरत जो संग लेय। सागरमो पहुँचाय देय॥ ऐसी रहन जो हंस होय। सुखसागर देखै सोय॥ अमृत भोजन करे अहार। काया धर मैं कहों बिचार॥ देखे दीपन दीपन हंस। तब नरको सब जाय संस॥ सागर सुंदर अति गंभीर। सतसुकृत सो निर्मल शरीर॥ हंस हंस झरे पुहुप अनंत। कहँ कबीर तहां करो बसंत॥

बसंत ९८–सुखसागर जियरा कर अस्नान। जहां सुर नर मुनि नहि पावैं ध्यान। बिन जल जहँवा उठे हिलोर। बिन परबत जहां कुहके मोर॥ बिन सिंगी जहां सुनिये नाद। सत संगत पावे बड़े भाग॥ बिनकर बाजा सुनिये ताल। परम पखावज अति रसाल॥ बिन वग नटुवा नाचे नाच। बूझो संतो शब्द साच॥

बिन नैनन देखो अति निनार । संतो ऐसो मत हमार ॥ जोत बरे बिन बाती तेल । काह कहों कछु अगम खेल ॥ सुन रामानंद गुरु प्रसाद । निरंतर भावे सुख स्वाद ॥ आशा मेटके गहो ओट । साहेब कबीर दिल नाहीं खोट ॥

वसंत ५९–ऐसो दुरलभ जात है सरीर । भजु अचिंत जेह लागो तीर ॥ गये बेनु बलि गये कंस । दुरजोधनके बुड़ो बंस ॥ पिरथु गये पृथवीके राव । त्रिविक्रम गये रहे न कांव ॥ छौ चकवे मंडलीके झार । अजहूं हो नल देखु बिचार ॥ हनुमत कस्यप जनक बालि । ये सब छेकल जमके द्वारि ॥ गोपीचंद भल कीन्ह जोग । रावन मारेउ करत भोग ॥ जात देख नर सबहि जान । कहें कबीर भजु सतनाम ॥

वसंत ६०–को कौन बिगूचे स्वामी मोर । ऐसे गर्भ प्रहारी नाम तीर ॥ हरिचंद समान नहिं दानी आनि । पुत्र सहित जिन बेचे रानि ॥ उन अपने मन लियो जान । अधम डोम घर भरो पान ॥ बलि बेनू बिधना अजै चंद । लंक दहन रावको अंत ॥ सहज भुजा बन रहे ताहि । गये कौरव दल दुंद मांहि ॥ कौरव पांडव करन द्रोन । सतुवा में के भये लोन ॥ जरासिंध ससिपाल मार । कंस नृपतिको दाप झार ॥ अबके दुबहियां करत रार । केते नृपति गये हाथ झार ॥ कहें कबीर भुमियां करोर । को को न गये कर मोर मोर ॥ हमरे कहलको ना पतियार । आप बूड़े नर सलिल धार ॥ अंध कहे अंधा पतियाय । जस बेस्वाके लगन धराय ॥ सातो कहिये ऐसे अबूझ । खसम ठाढ ढिग नाहीं सूझ ॥ आपन आपन चाहे मान । झूंठा पूजहिं सांच जान ॥ झूठा कबहुँ न करिहैं काज हौ बरजों तू सुनु निलाज ॥ छांड़ो पाखंड मानु बात । ना तो परिहो जमके

घात ॥ कहैं कबीर नल कियो न खोज । भटक मुवै जस बनके रोज ।

बसंत ६१–खेलत बसंत मानो बिरह संग । भौसागर बह नाना-तरंग ॥ कोइ जोग कर कोइ जज्ञ दान । कोइ नेम धरम पूजा पखान ॥ कोइ दंड कमंडल धूम्रपान । कोईं उर्ध तपस्या गोड़-तान ॥ कोइ दानी होय फिरे उदास । कोइ अगिन जरावे चहुँ-पास ॥ कोईं उर्धं कपाली कर आराध । कोइ निसबासर रहे निद्रासाध ॥ कोइ रिद्धि सिद्धिके मंतर जान । कोइ जोगी मुद्रा पहिर कान ॥ कोइ भेष धरी धर करहि स्वांग । कोइ सोधे धतूरा पोस्त भांग ॥ कोइ पीर औलिया करे निमाज । कोइ षट दर्शन में करत बाद ॥ कोइ छत्रधरी घर धजा निसान । कोईं सनमुख सूरा खेतजान ॥ कोईं उदै अस्त लो दहिन देत । कोईं चार मास जल सैन लेत ॥ कोईं अलह कहे कोइ कहत राम । हिंदू तुरक मिल धरहीं नाम ॥ कोईं कहे ब्रह्म समाना एक । कहें कबीर लीला अनेक ॥

बसंत ६२–मन माया खेलत बसंत । सुर नर मुनि जाको लहे न अंत ॥ काम क्रोध मन मिलहि अंग । लोभ मोह साजेसुगंध ॥ पिचकारी तृष्णा तरंग ॥ मनसा सीचे सकल रंग ॥ जोगी भीजे जोगध्यान । पंडित भीजे पढ पुरान ॥ सुरआदिक भीजे असुर झार । ब्रह्मादिक भीजे मनहिं हार ॥ मगन माया कोई बरे भाग । निस बासर गुरु सरन लाग ॥ अब नाहीं भाजनके छोर । कहें कबीर भीजे सोर बोर ॥

बसंत ६३–रसना पढि लेहु श्री बसन्त । पुनि जाइ परिहौ जमके अंत ॥ जो मेरु दंडपर डंक दीन्ह । सो अष्ट कमल परजारि लीन्ह ॥ तहं ब्रह्म अग्नि कीन्हो प्रकास । जहं अरध

ऊरध बहे बतास ॥ तहं नौ नारी परिमल गांव । मिलि सखि पांच तहं देखन धाव ॥ जहं अनहद बाजा रहल पूर । तहं पुरुष बहत्तर खेलैं धूर ॥ तै माया देखि रहलि भूलि । जस वनस्पति बन रहल फूल ॥ कह कवीर यह हरिके दास । फगुआ मांगै बैकुंठ बास ॥

वसंत ६४–आयउ मेहतर मिलन तोहि । रितु वसंत पहिरावहु मोहि । लम्बी पुरिया पाई झीन। सूत पुराना खूंटी तीनि॥ सर लागे तीन सौ साठ । कसनी बहत्तर लागे गांठ ॥ खुर खुर खुर चाले नारि। बैठी जोलाहा पलथी मारि॥ ऊपर नचनी नचि करै कोड़ । करिगह मां दुइ चलही गोड़ ॥ पांच पचीसौ दशौ द्वार । सखी पांच तहं रची धमार ॥ रंग बिरंगी पहिरैं चीर । हरिके चरन धरि गाव कवीर ॥

वसंत ६५–बुढिया हँसि कह मैं नितहीं बारि। मोहि अस तरुनी कहु कौन नारि ॥ दांत गयल मोर पान खात । केस गयल मोर गँग नहात ॥ नयन गैल मोर काजल देत । बैस गैल पर पुरुष लेत ॥ जान पुरुषवा मोर अहार। अनजाने का करहूं सिंगार॥ कह कवीर बुढिया आनन्द गाय। पूत भरतारहि बैठि खाय॥६५॥

वसंत ६६–बूझहु पण्डित कौनि नारि। कोहु न ब्याहल रहलि कुमारि ॥ सब देवन मिलि हरिहीं दीन । तेहि चारियु जुग हरि संग लीन ॥ प्रथमहिं पद्मिनि रूप आय । है सांपिन जग खेद खाय॥ ईश्वर युवति वै बार नाह। अति तेज तिया है रैनि ताह॥ कह कवीर सब जग पियारि। अपने बल कबै रहलि मारि॥

वसंत ६७–माइ मोर मनसा अति सुजान। धन्धा कुटि कुटि करत विहान॥ बडे भोर उठि आंगन बाढु। बडी खांच लै गोबर काढु॥ बासी भात मनुष लै खाय। बड़ घैला लै पानी जाय॥

अपने सैयां बांधी पाट। लै रे बेचौं हाटे हाट॥ कह कबीर ये हरिके काज। जोइयाके ढिग रे कौन है लाज॥

वसंत ६८—घरहीमें बाबुल बाढी रारि। अंग उठि उठि लागे चपल नारि॥ वह बडी जाके पांच हाथ। तेहि पहुँचनके पच्चीस साथ॥ पच्चीस बतावैं और और। वे और बतावैं कइं ठौर॥ सो अन्तर मध्ये अन्त लेइ। झक झोरी झेला जिव देइ॥ सब आपन आपन चाहैं भोग। कहु कैसे परि है कुशल जोग॥ विवेक विचार न करै कोइ। सब खल्क तमासा देखै सोइ॥ मुख फारि हसैं सब राव रंक। तेहि धरन न पावै एक अंक॥ नियरे बतावे खोजे दूरि। चहुं दिसि बागुलि रहल पूरि॥ है लच्छ अहेरी एक जीव। ताते पुकारै पीव पीव॥ अबकी बारि जो होइ चुकाव। कह कबीर ताकी पूरी दाव॥

वसंत ६९-कर पल्लवके बल खेलै नारि। पंडित होय सो लेइ विचारि॥ कपडा न पहिरै रहै उघारि। निरजीव सो धन अति पियारि॥ उलटी पलटी बाजे तार। काहुहि मारै काहु उबार॥ कह कबीर दासनके दास। काहुहि सुख दे काहु निरास॥

वसंत ७०—सिव काशी कैसी भई तुम्हार। अजहूं हा सिव देखु विचार॥ चोवा चन्दन अगर पान। घर घर स्मृति होय पुरान॥ बहु विधि भवनन लागैं भोग। अस नगर कोलाहल करते लोग॥ बहु बिधि परजा निरभय तोर। तेहि कारन चित्त है ढीठ मोर॥ हमरे बालकको यहै ज्ञान। तोहरा को समुझावे आन॥ जग जो जेहि सों मन रहल लाय। सो जिवके मरे कहु कहां समाय॥ तहं जो कछु जाकर होइ अकाज। है ताहि दोष नहिं साहेब लाज॥ हर हर्षित हो तब कहल भेव। जहं हमहीं हैं तहं दूसर केव॥ दिना चार मन धरहू धीर। जस देखो तस कहहु कबीर॥

होरी प्रारम्भ।

होरी १–जिनको सत्संगति प्यारी। अहो खेलत वसंत सुख-कारी ॥टेक॥ कथा अतर सरधा कस्तूरी, जतसत केशरलीनी॥ भाव भक्तिकी गुलाल बनायी, भरि भरि सतगुरु दीनी ॥ ज्ञान भक्ति वैराग दयानिधि, मेलि अरगजा कीनो ॥ सील स्वातिको बन्यो कुमकुमा, ख्याल बन्यो रंग भीनो॥ अनभय अचल भयो अभि अंतर, थकत भयो सब गाता॥ भयो ज्ञान देह सुधि बिसरी, सुनी खेलकी बाता ॥ ऐसो सतगुरु ज्ञान बतावै, जो कोइ शरनै आवे॥ कहै कबीर ऐसो संत विवेकी, क्यों न परम पद पावे॥

होरी २–काया नगर मंझार, संत खेले होरी। गावत राग सरस सुर सोहै, अति आनन्द भयोरी ॥ टेक ॥ चंदन सील सुगन्ध अरगजा केसरि करनी गहरी ॥ अगर अगम सुगम करि लिन्हाँ, अभि उर अंतर धारी॥ प्रीति फुलेल गुलाल ज्ञान करि, लेऊ जुगति भरि भोरी॥ चोवा चित चेतन प्रकासा, आवत वास घनेरी ॥ त्रिकुटि महलमें बाजा बाजे, जग मग जोतिं उजेरी ॥ सहज रंग रंचि रह्यो सकल तन, छूटत नाहिं करोरी ॥ अनहद बाजा बजे मधुर धुनि, विन करताल तंबूरी॥ बिन रसना जहां राग छतीसों, होत महां निधि पूरी॥ सुन्न महल यक रंग मजलिस, कबहूं टरत न टारी ॥ कहै कबीर समझि लेहो संतो, निरगुन कह्यो सदारी ॥

होरी ३–तुम होय निःशंक खेलो सम्हारी। मोह महा बल फंद रचो है, पकडत माया रसरी डारि॥ टेक॥ पाप पुन्य दोऊ मिलि खेलैं, कुबुद्धि सखा सब लिये लारि॥ विसरावत सबहीनकी सुधि बुद्धि, काम क्रोधको गुलाल डारि ॥ डिम्भ कपट मृदंग

डफ वीना, करम भरम बाजे करतार। अधर्म धर्म गावे राग रागिनी, मोह लियो सगरो संसार॥ आसा मनसा संग सहेली, बडी अपरबल तीनऊँ नारी। वास लिये धावत जित तित तै, सुर नर मुनि डारे पछारि॥ त्रिविधि तापकी कठिन ठगौरी, अपनी अपनी करत रारि। नाचत मन संग लिये इंद्रीयन, उपजावत अति बिषय विकार॥ आये विवेक ज्ञान संग लिये, सत शबद गावे धमारि। शील संतोष भरि प्रेम पिचकारी, मदन मस्त को दियो बिगारि॥ पांच पचीस खेलै निरभय होय, हिल मिलिकै ये नौ सारी। रटना लगि सबै ये गावे, प्रेम आनंद होय मंगल चारी॥ मिलि सतगुरू जहां होरी खेलैं, आवागवन को दुख निवारि। कहैं कवीर छाँडि भवसागर, बहुरि न आवे या संसार॥

होरी ४—मन राजा खेलन चले रंग होरी हो। काया नगर मंझार राम रंग होरी हो॥ टेक॥ पांच पचीस मिलि खेलहिं रंग होरी हो॥ मन राजा सरदार राम रंग होरी हो॥ इंगला पिंगला सुषुमना रंग होरी हो॥ तिरवेनीके घाट राम रंग होरी हो॥ ग्यान गली ठाढे भये रंग होरी हो॥ सुरति निरति दोउ लार राम रंग होरी हो॥ सील छमा छिडकत फिरे रंग होरी हो॥ बाढ्यो रंग अपार राम रंग होरी हो॥ मेर डंड छाजे चढों रंग होरी हो॥ उडता प्रेम गुलाल राम रंग होरी हो॥ अनहद बाजा बाजई बाजहिं रंग होरी हो॥ निरति करैं सब नारि राम रंग होरी हो॥ दास कवीर जहां खेलहि रंग होरी हो॥ अविनासीके संग राम रंग होरी हो॥

होरी ५—ऐसे खेलत फाग सबे नारी। जाके हाथ लकुटिया मुख गारी॥ टेक॥ ग्रह ग्रहते निकसी वन सुन्दर। भांति भांति पहरे सारी॥ अबीर गुलाल लिये भरि झोरी। मिलन चली

पियाकी प्यारी ॥ अपने अपने झुंडन मिलिकै। गावत ब्रिध तरुन बारी॥ पहुँची जाय जहां हरि मन्दिर। बर बैठे मूरति धारी॥ एकनि चंदन केसरि छिडकै। एकनि मुट्ठी भरि भरि डारी॥ एक सन्मुख ठाढी कर जोडै। एकनि हाथ चँवर ढारी॥ को चितवै को बोलै कासों। निर्जीव रूप कहुं कारी॥ निहुरि निहुरि सब पांव पडत हैं। यह देखो अचरज भारी॥ सब सहेली बहुरि चली घर। कोई न संग रही प्यारी॥ आपु नहीं भूले नर नारी। प्रान पियाकी गति न्यारी॥ यह सब भरम छाडिदे बोरी। अब जिन जन्म जुवा हारी॥ कहें कबीर अपनपौ चीन्हो। सुखसागरमें सुखकारी॥

होरी ६–जग होरी मच रही है भारी। तुम संतो खेलौ संसारी॥ टेक॥ जड़ चैतन दोऊ रूप बनाये एक कनक दूजी नारी॥ पांच पचीस संग लियै अबला हँसि हँसि मिलि गावैं गारी॥ डिम्भ कपट लिये करमै डफ हूँबड हूँबडकी तारी॥ त्रिगुन ताल तबला बाजे आसा तृष्ना गति न्यारी॥ पाप पुन्य दोऊ भरि पिचकारी छूटत है बारंबारी॥ सन्मुख होय करि जो वह खेले, ताके छीट लगी कारी। चोवा चंदन अबीर अरगजा माथकी गार भरी॥ षट दरशन पाखण्ड छीयानवे पकडि किये सब वेगारी॥ कुमति गुलाल डारि मुख मींडे काम कला पुटरी मारी॥ सुर नर मुनिजन पीर औलिया भजि रही सब संसारी॥ चतुरा फगुवा देदे छुटे मूरखको लागे प्यारी॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधू निर्गुन ग्यान गली न्यारी॥

होरी ७–ऐसे खेलै संत सदा होरी। जहां दुंद उपाधि नहीं कोरी॥ टेक॥ ताल मूल सुर साधि बाट घर। पश्चिम दिशा चढि गहि डोरी॥ खुलै कपाट सहज घर पावों। सुंदर रूप सुरति

गोरी ॥ जहां चतुर सखी नित गावहिं । बाजत तूर देत तारी ॥ सुर नर मुनि सब करत कौतूहल । ग्यान गुलाल उड़त भारी ॥ कोइ निरगुन कोई सरगुन राचे । आप आप विसरे सबही ॥ कहैं कवीर चेत नर प्रानी । शब्द सरूप मिलै अबहीं ॥

होरी ८—म्हारेको खेलै ऐसी होरी । जामें आवा गवनकी है डोरी ॥ टेक ॥ श्रवन न सुनयो नैन नहीं देख्यो । पीया पीया लागि रही लौरी ॥ पंथ निहारत जनम सिरानो । प्रगट मिल्यो नहीं चोरी॥ जा कारन गृह तजिकै निकसी । लोक लाज कुलकी तोडी ॥ चोवा चंदन अगर कुमकुमा का पर डारों रंग रोरी ॥ येकन तो मृगछाला वोढी येकन गुदरी अरु झोरी ॥ येकन बहु विधि स्वांग बनायी । लोगन लागी ठगौरी ॥ जगन्नाथ बद्री रामेश्वर । देश देशान्तर सब दौरी ॥ अरसठ तीरथ पृथ्वी प्रदक्षिना । पुहकर हूमें लट बौरी ॥ वेद पुरान भागवत गीता । चारिउ वरन ढंढोरी॥ कहैं कवीर सद्गुरू दया बिन । भरम न मिटि है ये बौरी ॥

होरी ९—आवो पीया संग खेलो होरी । सुरति शब्द सो लो जोरी॥ टेक॥ नाना रंग सबै बनि आवौ। ग्यान गुलाल भरै झोरी॥ चित चरचा चंदन मन लावौ। केसरि भरि पिचकारी॥ प्रेम प्रीति प्रकास परम गुरू। सत सुकृत वर पायोरी॥ तब मन थिर भयो थिति पाई । आदि अंत दीप लायोरी ॥ तत पद सार संगति सतगुरूकी । कहैं कवीर सम आयोरी ॥

होरी १०—आओ पीया संग खेलो होरी। सुमति सखी सुनि सुनि दौरी॥ टे०॥ करम जंजीर काटि सतगुरु सब। जरा मरनको गयो भौरी ॥ सत संतोष शील मति थिर होय । खेलो फाग विचारोरी॥ अग्र अमी अबीर ले आओ। काम क्रोध तजि दोउरी॥ भाव भक्ति अरु सही सलामति। सो पद पायो नाम उधोरी ॥

सुख आनंद सब होरी खेलो । काल कठन भरम भयो दूरी ॥ कुलकों त्याग मान सब तोरी । कहैं कबीर पिया संग होरी ॥

होरी ११–हरि होरि हो हरि होरी । हरि होरि मैं हरि होरी ॥ कोई साधु संत खेलैं होरी। सतनामको डांड़ो रोप्यौ धरम धजा गहि जोरी ॥ टेक ॥ बाजत ताल मृदंग झांझ डफ । नाचत है तन मन तोरी ॥ वंसी बीन अनहद धुनि बाजै। जसि मति सुमति नाचै गोरी॥ चोवा चंदन और कुमकुमा। अबीर लिये भरि भरि झोरी ॥ उडत गुलाल विसाल लाल रंग । रंग रही गगन गरक गोरी ॥ जब अंतर पट गांठि दइही । अब पायो है पट जोरी ॥ कहैं कबीर अखंडित फगुवा । जुग जुग पावो मति मोरी ॥

होरी १२–सतगुरू संग रचि है धमारि होरी मैं खेलूंगी ॥ टेक ॥ साधु संत मिलि मंगल गावें। लगी शब्दकी मार॥ उडत गुलाल अरुन भयो अंबर । प्रेमकी परत फुहार ॥ चोवा चंदन और अरगजा । पिचकारिनकी मार ॥ दास कबीर स्वामी निरगुन गावे । संतो लेहु बिचार ॥

होरी १३–मेरे सतगुरू दियो बताय मारग नामका ॥ नाम नाम करि जाये पहुँच । पाय अभय पद धामका ॥ टेक ॥ वा मारग मोहि ले चलि सजनी। जहां पियाको देस॥ परसों चरन कमल नागरके । मेरो रहै सुहाग हमेश ॥ आयो फाग वसंत सखीरी। फूले आंब पलास॥ कली कली कलियाँ खुली । सब संतन भयो विलास पांच पटै लनि खेलन निकसीं। सखी पचीसों साथ ॥ खेले फाग वसंत पांच मिलि । अपने अपने हाथ ॥ ज्ञान गुलाल करनी करो। अन भौ करो अबीर॥ अमृत पिचकारी भरो प्रेमसे। छिडको सकल शरीर॥ मैं हारी पीया मारग पायो। ले सतगुरुकी रीति॥ कहैं कबीर सतलोक पहुँचे। साहेबकी प्रतीति॥

होरी १४-प्रीतम आइया हो मेरे सतगुरु दीन दयाल ॥टेक॥ बन्दी छोड मुकतिके दाता। परम सनेही नाम ॥ साधु संतसो अति अभिलाषा सब विधि पूरन काम ॥ जैसे चातक स्वाति बुन्दको। रटत है आठों जाम ॥ जाकी सुरति लगी सतगुरूसे। विसरी सुखके धाम॥ आनंद मंगलचार परम सुख। अमर करत है जीव ॥ सुमिरनदे सतलोक पठाये। ऐसे समरथ पीव॥ चरन कमल सतगुरुकी सेवा। मन चित्तदे अनुराग ॥ कहै कबीर ऐसी होरी खेले। जाके पूरन भाग ॥

होरी १५-ये होरी खेलूंगी मेरे साहेब आवेंगे आज ॥ हंस उबारन जीव निसतारन अधम उधारन नाम ॥ टेक ॥ करनी कलश से जोय सकल विधि। प्रीति पात्रदे डारि॥ चरण प्रछालि चरणामृत लेऊँ। मनकी मनी उतारि॥ तन मन धन सब अरपन करिहुँ बहु विधि आरति साजि ॥ प्रेम मगन होय मंगल गाऊँ विसरी कुलकी लाज॥ धोखा धूरि उड़ाय शरीरते ज्ञान गुलाल प्रकास ॥ पारस पान लेऊं प्रीतमसों मेटि दूसरी आस ॥ दया धरमकी केसरि घोरौं भाव भक्ति पिचकार ॥ सत सुकृत दोउ अबीर अरगजा देऊँ पिया पै डार ॥ साहेब कवीर मोहि मिले सतगुरु फगुवा दीनों है नाम ॥ आवागमनकी मिटि कलपना पाये सुखकी धाम ॥

होरी १६-होरी होरी रंग बोरी बिरहा झकोरि मारी ॥ टेक ॥ चौवा चाल अरगजा रहनी करनी केसर घोरि ॥ प्रेम प्रीतिसों भरि पिचकारी रूंम रूंम रंगी सारी हमारी॥ बाजत ताल मृदंग बिना कर बीना शब्द रसाली॥ खेलत है कोइ सुघर खेलैया योग जुगति लगि तारी हमारी॥ इंगला पिंगला रास रच्यो है सुखमनि बाट बुहारी॥ सुरति निरति दोउ नाचन लागी बढयो रंग रति

अपारी ॥ मैं वारी ॥ या विधि होरी खेली संतो या होरी दिन थोरी ॥ गुरू कवीर आतम परमातम खेलत बहियाँ जोरी ॥ मैं वारी ॥

होरी १७-होरी खेलन न जाने यह मन निपट अनाडी ॥टेक॥ काम क्रोध मद लोभ मोहकी सिर धरि गागर भारी ॥ उठी पैंठ सौदागर आयो का करै बनिज व्यापारी ॥ येक भरै येक भरि भरि लै आवै दूजे भरनकी बारी॥ पियाकी सुहागिनी पिया संग खेलै। और सब भई न्यारी॥ या घट भीतर पांच मवासी और पचीसों नारी ॥ इन्हें मारि होरी खेलैं पियारे काज सुधर जाय सारी॥ छमा दयाको अबीर बनायो सुमतिकी भरि लई झोरी॥ कहैं कवीर सुनो भाई साधो या विधि खेलो होरी ॥

होरी १८-का संग होरी खेलिये हो वालम परदेसुवा॥टे०॥आई ऋतु वसंतकी हो फूलन लागे केसुवा ॥ वसन गीले पहरन लागे विरहिन डारत आंसुवा ॥ भरि गये ताल तलैया सागर बोलन लागै देसुवा॥ उमंगी नदी नाव कहां पै कौनी विधि लिखौं संदेसुवा॥ वहांके गये बहुरे नहिं हो कैसो है वा देसुवा॥ आवत जात लखै नहिं कोई या जिय बड़ अन्देसुवा ॥ बालापनकी अबलौं निबाही अब तो निबहै कैसुवा ॥ कहैं कवीर सुनो भाई साधो मिलि सतगुरू उपदेसुवा ॥

होरी १९-मन लागि रह्यो होरी सत्सुकृत नाम दुलारेसो॥टेक॥ आवागवन मिटै जब प्रानी जब छुटै यम द्वारे सो॥ एक नाम विनु पार न पैहो हिन्दू तुरुक नर नारी सों। स्वासा सार तार निसि-वासर उठत घोर झनकारे सो॥ सतगुरू पद प्रतीत भई है अगर सुहंगम मारे सो ॥ सतगुरू दरश परस पद पइहै मिलि सुकृत

सठि हारेसौं। कालके करम जाल सब छुटैमिलि कवीर मत वारे सो ॥

होरी २०–खेलत फाग वसंत रैन दिन सहज सून्यमें होरी ॥ टेक ॥ सतगुरू दया साधुकी संगति त्रिकुटी महल रचोरी ॥ गुंजत भंवर कोकिला बोले सोहं सोहं सोरी॥ बाजत ताल मृदंग झाँझि अगम निगमकी झोरी ॥ मानों कोटि भान ससि उगे जहां मनुवां विलगोरी॥ सुरति सुहागिनि मन लिये मनुवां दिये सुमतिकी खोरी॥ कहें कवीर मगन भई विरहिनि ब्रह्म ज्ञान झकझोरी॥

होरी २१–हमारे को खेले ऐसी होरी, जामें आवागवन लागी डोरी॥ श्रवण न सुनो नैन नहिं देखो, पिया पिय लागी लौरी। पंथ निहारत जनम सिरानो, प्रगट मिले नहिं चोरी॥ जा कारन तुम गृह तज निकसे, लोक लाज कुल तोरी ॥ षट दरशन मिल स्वांग बनाये, लोगन लाग ठगोरी ॥ अंग भभूत गरे मृगछाला, कोइ लाये गुदर भर झोरी। चोवा चंदन अबीर अरगजा कपड़ा दे रंग रोरी॥ जगन्नाथ बद्री रामेश्वर, देश देशान्तर दौरी। अरसट तीरथ पृथी पैकरमा, पोहकर मैं लट बोरी॥ वेद प्रमान भागवत गीता, चारों बरन टटोरी। कहें कवीर सतगुरुके दया बिन, भरम मिटे नहिं भौरी ॥

होरी २२–कैसी मजा कर डारी, ऐसे होरीके खिलारी॥ भारी भ्रमकी सारी फारी, मानकी बेसर तोरी। लोभ मोहके कंकन फोरी, प्रेमके रंगमें बोरी ॥ ज्ञान गुलाल परो नैननमें, देखत नहिं जग सोरी। त्रिगुन बंद अंगिया टूटे, शब्द कुमकुमा मोरी॥ नित्या नित्य देत है गारी, लाज सरम सब तारी। एकहि भाव बिलास करत है, कौन पुरुष को नारी॥ पूरन प्रेमहि भूल गयो है, ऐसी न देख धमारी। साहेब कवीर परख रंग रंगिये, परखके कीन्हे न्यारी॥

होरी २३–ऐसी होरी खेलो, जामें हुरमत लाज रहोरी ॥ शील सिंगार करो मेरी सजनी, धीरज मांग भरोरी ॥ ज्ञान गुलाल उड़ाव सखीरी, सुमता फेंट गहोरी ॥ होत धमार नगर तेरेमें, अनहद बेन बजोरी । गुरुसे फगुवा मांग सखीरी, हृदया सत्त करोरी ॥ संस्कृत भाषा पढ पढ आये, ज्ञानी लोग कहीरी । मोह मायामें बहि गये सजनी, जमके फंद परोरी ॥ खेती बनिज गऊ औ बाछा, चेला शिष्य करोरी । नाव लगी है पार लगनको, कालीदहमें परोरी ॥ मान मनीकी मटकी सिरपर, नाहक बोझ मरोरी । मटकी पटक मिलो सतगुरु सो, साहब कबीर कहोरी ॥

होरी २४–दिग अंजन नैन सँवार, काहूको मारोंगी ॥ टेक ॥ भौंह बनी बरछीकी नोके, नैन बने खरसान बिरहके बान नैनसे छूटै, गोसा चढी कमान ॥ चंद्रबदन मृगलोचनी माया, कर सोरा सिंगार । ब्रह्मा विष्णु महेश्वर देवा, इनको कीन्ही यार ॥ नरसे नार कियो नारको पुत्रसे साठ पदार । शृंगीरिषि पारासर देवा, इनको कीन्हा ख्वार ॥ जीव उबारन सतगुरु आये, तेरो लगे नहि लार । कहें कबीर सुनों भाई साधू, इनसे रहो हुशियार॥

होरी २५–ऐसा रंग बनाया, मेरे नैनोंमें समाया ॥ टेक ॥ पहिला रंग नबीजीका आया, जिन उमंद बगसाया । अलीजीके नाम रौशन दुनियामें, जीव जीव कलमा पढाया ॥ दीन उनहीने बनाया ॥ दुसरा रंग सोहै हम नैनको, जिनोंने सहादत पाया ॥ वे रनसूर लडे रन भीतर, सन्मुख सीस कटाया ॥ शहर कर्बलेका बसाया । तीसरा रंग सोहै पंजतनका, हूरे मंगल गाया । सिर सेहरा मुख मकना बिराजे, नूरके छत्र फिराया ॥ हाथ कंगन बंधवाया ॥ चौथा रंग रंगीले साहबके, रंग सबके

मन भाया । औलिया अंबिया गौस कुतब, या सब मिल रंग बनाया ॥ ध्यान मौलासे लगाया ॥

होरी २६-मेरे साहब आवन हार, होरी खेलोंगी ॥ करनीके कलस संजोय सकल विध प्रीत पांवडे डार । चरन पखार चरनामृत लेहौं, मनकी मनी उतार ॥ तन मन धन सब अरपन करिहौं, बहु बिधि आरती साज । प्रेम मगन होय मंगल गावों, बिसरी कुलकी लाज ॥ धोखा धूर उडाव शरीरसो, ज्ञान गुलाल प्रकास । पारस पान लेवे सतगुरु सो, मेट दूसरी आस ॥ दया धर्म तन केशर घोरो, भाव भगति पिचकार । सत सुकृत अवीर अरगजा, देउँगी पिया पर डार ॥ साहब कवीर मिले मोहि सतगुरु, फगुवा दीन्हो नाम । आवागमनकी मेट कल्पना, पायो आनन्द धाम ॥

होरी ८-मेरे सतगुरु दीन दयाल, प्रीतम आयो हो ॥टेक॥ हंस उबारन जिव निस्तारन, अधम उधारन नाम । बंदीछोर मुक्तिके दाता, परम सनेही नाम ॥ साधु सन्त औ अति अभिलाषा, सब बिधि पूरण काम ॥ जैसे चात्रिक स्वातिबूंको रटत है आठों जाम ॥ जिनकी सुरत लगी सतगुरु सों, बिसरे सुख ग्रह धाम । सतगुरु दया करत जीवन पर, देकर अविचल बिश्राम ॥ आनंद मंगल उचार परम सुख, अमर कहत है जीव । सुमिरन दे सतलोक पठाये, ऐसे समरथ पीव । चरन कमल सतगुरुके सेऊं, मन चित दे अनुराग । कहें कवीर ऐसी होरी खेले, जाके पूरन भाग ॥

होरी ९-होरी खेलत लालनके संग प्यारी, हम देखी मुसक्यान ॥ टेक ॥ ज्ञान गुलाल अगर कस्तूरी, प्रेम प्रीति पिचकार । क्षमा केशर ले छिरकन आई, सुरति-सोहागिन अविगतनार ॥

पांच सखी मिल मंगल गावें, सुषमन थार सँवार। चंद सूर दोउ दीपक बारैं, ब्रह्म जोत उनमुन उजियार॥ मैं मेरे पियको नितउठ चाहों, जो पिया मोहिको चाहि। आवागमनके फेरे मिटावे, भौसागरमें बहुरि न आहि। शीलकी सेज सँवार महलमें, लौका सिंगार करोरी। साहब कबीर सुरत संयोग, ले, संतलोक गये रसभोगी॥

होरी १०-कायानगरकी पौररी, मन खेलत होरी॥ टेक॥ सुरत ज्ञान डफ बाजन लागे, अनहदके घनघोर री। पांच पचीस बनिता बनि आयी, तेऊ रंगमें बोररी॥ अबीर गुलाल हेत कर सजनी, प्रेमकी चाचर जोररी॥ तन नारी औ मन है नारायन, प्रीतम अंग मरोररी॥ खोल घुंघुट सन्मुख होय खेलो, होनी होय सो होयरी। कहें कबीर औसर नहिं पैहो, फगुवा लेउ न बोररी॥

होरी ११-ऐसे खेलत फाग बसंत, निरंजन सहज सुन्नमें होरी॥ टेक॥ बाजत ताल मृदंग झांझ डफ, अगम निगमकी डोरी। मन एक भँवर कोकिला गुंजे, सोहं सोहं सोरी॥ अष्टकमल दल भीतर मनुवां, त्रिकुटी महल रचोरी। कोटि भानु जगमग उजियारो, जहँ मनुवां बिलमोरी॥ मानसरोवर हंसा डोलै, अति घन पुहुप फुलोरी। जरा मरनकी संसै मेटो, जाति बरन बिसरोरी॥ सुरति सोहागिन संग लिये मनुवां, हाथ सुमतिकी डोरी। कहैं कवीर मगन भई बिरहिन, ब्रह जलमें झकझोरी॥

होरी १२-तुम संतो खेलो संभारी, जग या होरी मच रही भौभारी॥ टेक॥ जड चेतन दो रूप बनाये, एक कनक दूजी नारी। पांच पचीस लिये संग अबला, हँस हँस मिल गावें गारी॥ दुरमति डिंभ गहे करमें डफ, हों बड हों बड दे तारी। त्रिगुन तार तमूरा बाजे, आशा तृष्णा गत न्यारी॥ चोवा चंदन अबीर

अरगजा, मायाकी गागर भारी। षट दरशन पाखंड छानबे, पकर किये सब बेगारी॥ लोभ मोह दोउ भर पिचकारी, छूटत है बारं बारी। जो कोइ सनमुख होयके खेलै, उनको छींट लगी कारी॥ कुमति गुलाल डाल मुख मींडे, काम कला पुटरी मारी। सुर नर मुनि औ पीर औलिया, भीज रहे सब संसारी॥ चतुरन फगुवा दे दे छूटे, मूरखको लगी प्यारी। कहें कवीर सुनो भाई साधू, निरगुन ज्ञान गली न्यारी॥

होरी १३—ऐसी खेलत फाग सबै नारी, जाके हाथ लकुट मुखमें गारी॥ टेक॥ ग्रिह ग्रिह ते निकसीं बनि सुंदरि, भांतिन भांति पहिर सारी। अबिर गुलाल लिये भरझोरी, मिलन चलीं पियको प्यारी॥ अपने अपने झुंडसों निकसीं, गावत तरुन ब्रिध बारी। बैठीं जाय हरिमंदिरमें जहां, बैठे वर मूरत धारी॥ एकन मूठी चोवा चंदन चरचे, एकन मूठी भर मारी॥ एक खडे सनमुख कर जोरे, एकन हाथ चँवर ढारी। को बोले को चितवे कासों, निरजीव रूप कहो कारी॥ निठुर निठुरके पांय परत हैं, ये देखो अचरज भारी। सबै सहेलरी मुरक चली हैं, कोई न संग गई प्यारी॥ आपहि नर नारी होय बैठे, प्रान पियाकी गत न्यारी॥ ये सब भर्म छोड दे बौरी, अबकी जन्म जुवा हारी। कहैं कवीर अपनपौ खोजो, सुखसागर सुखकी क्यारी॥

होरी १४—अब कहां जात बेदरदा हो, मोपे गरदा झारके॥ टेक॥ आये बसंत सबै बन फूले, बन बन हो गये जरदा। जबसे लागी बसंत पंचमी, सब बन होगये मरदा। लोक लाज कुल कान बिसर गई, अंदर खुल गई परदा॥ चलोरी सखी मिल चौसर खेलें, पासा पर गये नरदा। कहे कवीर सुनो भाई साधू, गुरु चरननकी सरधा॥

होरी १५-जग या दुई खेलत होरी, बनी हंसनकी जोरी ॥ टेक ॥ सतगुरु तो सतलोकसे आये, बांधोंमें फाग मचोरी । धरमदास उठि चरनन लागे, ये दोई मेल रहोरी ॥ सो तो नहिं जात कहोरी-जग या दुइ-गुरू शिष्य मिल होरी खेलें, संत खलें चहुं ओरी । प्रीति परस्पर सांची कहिये, ज्ञान ग्रंथ गठजोरी ॥ सो तो सुरझावत कोरी-जग या दुइ-धर्मदास आमिन समुझावे, सब मिल चरन गहोरी । बडे भागसे सतगुरु आये, सब मिल चरन परोरी ॥ यामें कछु नाहिंन खोरी-जग या दुइ-कहैं कबीर सुनो भाई साधू, जीवन भाग जगोरी । नाम पान परवाना पाये, फगुवा मिलो भरझोरी ॥ जनमसो तिनुका तोरी-जग या दुइ-बोलत होरी ॥

होरी १६-रंग खेलत फाग सुघर नारी, हाथ सुमति लिये पिचकारी ॥ टेक ॥ पांच पचीस सखी संग निकसीं, सुकित रूप पहिर सारी। धीरज अंजन सीमाकी बेंदी, शीलसिंदूर मांग भरी ॥ बाजत ताल मृदंग झांझ डफ, सब मिल गावें मंगल चारी । ज्ञान गुलाल अनंद अरगजा, सहजे अबीर उड़त भारी ॥ दया धरमको केसर घोरी, प्रेम प्रीति छुटे पिचकारी । शब्द छडी जबही कर लीन्हें, समुझे संत पर जाय मारी॥ सुंदर फाग खेले चेतन सों, एक महलमें पिय प्यारी । कहैं कबीर छबि कहँ लग बरनो, सुमति पर कोटिन मुकता वारी ॥

होरी १७-रितु फागुन नियरानी, कोई पियाको मिलावो ॥ टेक॥ सोई सुंदर जाके पियाको बरत है, सो पियके मन मानी । खेलत फाग अंग नहिं मारे, सतगुरु सों मन ठानी॥ पियका रूप कहां लग बरनो, पियके रूप लुभानी। सुर नर मुनि जाको ध्यान धरत हैं, सो संतन मिल जानी ॥ एकहि खेल गई गृह अपने,

एकहि कुल उरझानी। एकहि नाम बिना डहकावे, हो रही ऐंचा-तानी॥ तुम जिन जानो एही फाग है, ये कछु अकथ कहानी। कहें कबीर सुनो भाई साधू, बूझे बिरला ज्ञानी॥

होरी १८-या मन निपट अनारी, होरी खेलन न जाने॥टेक॥ काम क्रोध औ लोभ मोहकी, सिर पर गठरी भारी॥ या नगरीमें पांच मवासी और पचीसों नारी॥ इन्हें मार होरी खेलो पिया संग, बात सुधर जाय सारी॥ सखी सहेली होरी खेलैं पिया संग, कुमति सखी रहु न्यारी॥ कहें कबीर ऐसी होरी खेलो, हाथ सुमति लिये पिचकारी॥

होरी १९-गगन मंडल उरझानी, नित फाग मची है॥ टेक॥ ज्ञान गुलाल अबीर अरगजा, सखियां ले ले धांई। उमँग उमँग रंग डार पिया पर, फगुवा देव बहाई॥ फगुवा नाम मिले मोहि सतगुरु, तनकी तपन बुझाई। शब्द डार जहां अगर उड़त है, शोभा बरनि न जाई॥ गगन मंडलमें होरी मची है, गुरुगम झर लख पाई॥ कहें कवीर मगन भई बिरहिनि, आवागवन नसाई॥

होरी २०-ऐसे नाम उजागर, होरी खेलन बर आये॥टेक॥ कासीमें सतगुरु प्रगट भये हैं, नीरूके गृह आये। रामानंदके शिष्य भये हैं, निरगुन पंथ चलाये॥ कथ निरगुन निज नाम अभय पद, सुन पंडित रिसियाये। षट दरसन मिल बादको आये, जीत न काहू पाये॥ एक दिना सब प्रपंच बहु कीन्हें, नारद आन लदाये। सबे लुटाय कछू नहीं राखी, लीन्हें साधु बुलाये॥ कपड़ा बुने बेंच ले आवें, तामें सबको देई। लाख टका कोई आन चढावे, ना काहूको लेई॥ साह सिकंदर परचे लीन्हा, करामात दई तीन्ह। कासी तज प्रभु मगहर आये, तब कछु

चितवन कीन्ह॥ जलमें बोर अगिनमें डारे, बिनशत नाहिं शरीर। मस्ता हाथी आन झुकाये, निरभय सत्य कवीर ॥

होरी २१–बीतो जात बहार, होरी खेलन आई॥ टेक॥ पांच पचीस बनिता बन आई, खेलत धूम धमार। अपन पिया संग होरी खेलो, मेट सकल भ्रम जार॥ आतम रंग सुरंग बनाये, प्रेम प्रीति पिचकार। कहें कवीर ऐसी होरी खेलो, आवागवन निवार॥

होरी २२–होरी खेलन तो जाग सखीरी, फिर ऐसा दाव न पाइये॥टेक॥ मनको तार बिरहमिरदंग, बाजत हरिगुन गाइये॥ तन कर मटका मन कर केशर, शीलको रंग जमाइये॥ चोवा चंदन अबीर अरगजा, सांचेको टीको लाईये॥ जप कर मंजन तप कर संजम, दरशन फगुवा पाईये॥ कहें कवीर सुनो भाई साधू, नाम पदारथ धाइये ॥

होरी २३–अपने पिया संग होरी खेलो, सुमति सखी संग लाय ॥ टेक ॥ खेलों मै होरी अंगना मेरो, तन मन सुरति लगाय। प्रीतम पास आस भई पूरन, राखों मैं हिरदै समाय ॥ दुबधा दुरमति दूर परानी, जब देखो निरताय। परसत अंग रंग भये अबिचल, तनकी तपन बुझाय॥ अजर अखंड अमान अभै पद, कौन सकै गुन गाय। गुनवंती निर्गुन गुन राखो, गुरुगम प्रीतम पाय॥ प्रीतम पास सेज सुख विलसो, यह सुख बरनि न जाय। धर्मदास ऐसी होरी खेलो, सब संशय मिट जाय ॥

होरी २४–हेरे प्रीतमजी की बाट, ठाढी अलबेली ॥टेक॥ गंगा जमुना बहे सरस्वती, तिरवेनीको घाट। अर्ध उर्धके मध्यमें मूरख पाई सांट। सगरे पंथ बिच दोय गली जहां, भर केशरको मांट॥ कुमति करार होय रही अभागिन, मत कर मनकी आंट। पिया दरसनको प्यास भई है, चली जगतसे फाट॥ काम क्रोधकी मूठ

त्यागके, जगसों भई उचाट। कहें कबीर मिलो पिय प्यारी, सतगुरु खोल कपाट ॥

होरी २५–छाये प्रीतमजी परदेश, मैंने अब जानी ॥ टेक ॥ अंग बिभूति रमाऊं निसि दिन, स्वेत जटा भये केस। घर घर अलख जगावत डोले, धर जोगिनको भेश ॥ मैं भौसागर भूल रही हों, लिखना भयो संदेस। ऐसे सतगुरु नाहिं मिलै, मेरी सुर्त करे परवेस ॥ जाको ध्यान धरे ब्रह्मादिक, ध्यावत शंकर सेस। नाम लेत भौसागर छूटे, कट गये करम कलेस ॥ जेठ देवरके मोह त्यागके, पियसे बांधो लेस। कहें कबीर मिलो पिया प्यारे, छूटे सकल अंदेश ॥

होरी २६–तू कैसे रूस रहीरी, नहिं रूसन वारी ॥ टेक ॥ कबकी मैं ठाढी तोहि मनाऊं, तू नहिं चितमें धारी। गगन मंडलमें धूम मची है उठ चल वेग संवारी ॥ इँगला पिंगला हाथ छरी ले, सुषुमन केशर गारी। पांच पचीस भई एक ठौरी, गावे दे दे तारी ॥ जरद कसबका लँहगा सोहै, और कसूंमल सारी। कहे कबीर ऐसी होरी खेलो, निरतत सुषुमन नारी ॥

होरी २७–खेलो खेलो सुहागिनि होरी ॥ टेक ॥ चरन सरोज पिया हित जौलों, रजकी केशर घोरी ॥ भरम अबीर उडाव सखीरी, लोक लाज कुल तोरी ॥ सोहम् नार जहां रंग राची, बीच सुषुमना डोरी ॥ पुरुष पंच गली एक जानो, एकहि संग ढंढोरी ॥ शब्द सजीवन ख्याल पीवका, गहि लीजे निज डोरी ॥ रंग अनंग सखी मत राचो, पियके पांव परोरी ॥ कहैं कबीर ऐसी होरी खेलो, मिटै जमके झगरोरी ॥

होरी २८–पियके रंग रंगी कोई, मेरो काह करेगो ॥ टेक ॥ पिया मेरे सजनी मैं पियकी, पियके पांव परोरी। पियकी सेज

सँवारत सजनी, सर्व सोहाग भरोरी ॥ कर सिंगार मगन भई ठाढी, बिरहिन रूप खड़ी । साहब कबीर पिय पाये सजनी, सबको काज सरी ॥

होरी २९-कोई मोपै रंग न डारोरी, मैं तो भई हों बावरी ॥टेक॥ एक तो बौरी दूजी बिरहकी माती, तीजे नेह लगायोरी॥ ज्ञान गुलाल अगर कस्तूरी, प्रेम प्रीति पिचकारोरी॥ पांच सखी मिल होरी खेलैं, और सुहागिन नाररी॥ अपने पिया संग होरी खेलो, यही वसंत यही फागरी ॥ कहैं कबीर ऐसी होरी खेलो, आवागमन निवाररी ॥

होरी ३०-अहो मन सा मदमाती खेलो रंग भरी ॥ टेक ॥ आस पास सब सखी बिराजें, ता बिच आप खडी॥ चंचल चपल चातुरी बोलैं, नैनन सैन करी ॥ इन्द्रहि जाय आप बस कीन्हे, ब्रह्मा चले पराई । तिनहूं जाय काम बस कीन्हा, सकुच रहे सिरनाई ॥ शंकर ध्यान छूटे ना कबहूं, बहु बिध कीन्ह उपाई । देखो रूप मोहनी केरे, पीछे काम जगाई ॥ सुर नर किन्नर जच्छ गुनीजन, कोई धरे नहिं धीर । साहब कबीर आप अबिगत है, माया जीत शरीर ॥

होरी ३१-आज पियाके मिलनको मैं गेंद भई॥टेक॥ घरसों निकस अँगन भई ठाढी, ले चौगानमें डार दई ॥ ज्ञानकी गेंद सुरतको डंडा, जित चाहो तित ढरक गई। पांच पचीस खेलैया ठाढे, घाट बाट फिर रोक लई ॥ सतगुरु ढोला दियो शब्दके, तैंतीसोंके बस न भई। कहैं कबीर सुनो भाई साधू, निहाल भई जब हाथ लई ॥

होरी ३२-अहो सोई नार सयानी, प्रीतमके मन मानी ॥टेक॥ प्रीतम हमको पतिया पठाये, देखतही मुसकानी। पातीके बांचत

छाती जुडाई, रूपमें रूप समानी ॥ रंगमहलमें आय पुन बैठी, यही वस्तु निज जानी । गगन मंडलमें खेल रचो है, सोई देख ललचानी॥ परम पुरुष अबिगत अविनाशी, ताकी अकथ कहानी। कहैं कवीर सुनो भाई साधू, शब्दमें सुरति समानी ॥

होरी ३३–सतसुकृत खेलें होरी, अभय नगर अस्थान ॥टेक॥ इतसों आये ज्ञान लाडले, उतसों आई मन बौरी । त्रिबेनी तट खेल रचो है, खेलत हो हो होरी॥ इतसे पांच सखी उठ धाईं, कोइ स्यामल कोइ गोरी। त्रिगुन पिचकारी हाथ लिये सब, खेलत हो हो होरी॥ इत सों क्षमा सखी उठ धाईं, शील सुमति दोउ जोरी। प्रेम पिचकारी रंग रोस सहित, झगरत खेलत होरी॥ ताल मृदंग झांझ डफ बाजे, अनहद शब्द करोरी। सुषुमन नारी राग अलापत, गावत मंगल होरी॥ सुरति निरति द्वै मता बनाये, चलो अगम संग होरी । मेरुदंडके छज्जे चढके, खेलत हो हो होरी ॥ मूल कमलते रंग बढो है, बंकनाल निज ठोरी। सुरतिनाल चढ बाहिर आये, खेलत हो हो होरी॥ खेलत खेलत जहां गयी है, सतगुरु शब्द किये सोरी। साहब कवीर दयानिधि सागर, खेलत हो हो होरी॥

होरी ३४–होरी खेलैं संत सुजान, आतम राम सों ॥ टेक ॥ घरि घरि पल पल छिन छिन खेलैं, निस दिन आठों जाम ॥ योगी खेलैं योग ध्यानमें, दुनियां भूत पखान॥ पंडित खेलैं चार वेदसे, मुलना किताब कुरान॥ पति बरता खेलैं अपने पिया संग, वेश्या सकल जहान॥ महा प्रचंड तेज मायाको, सब जग मारा बान ॥ कामी खेलैं कामिनिके संग, लोभी खेलैं दाम ॥ साहब कवीर खेले संतनसों, और न काहू काम ॥

होरी ३५–मेरी उमर आई होरी खेलनकी, पिया मोसे मिलके बिछुर गयेरी॥टेक॥ पिय हमारे हम पियकी पियारी, पिय मोसे

अंतर कर गयेरी॥ पिया मिलै तो जीऊं मोरी सजनी, पिय बिन जियरा निकस गयेरी॥ अबीर गुलाल लिये भर झोरी, पिय प्यारी संग रंग रहेरी॥ धर्मदास बिरहिन पिय पाये, चरन कमल चित लाग रहेरी॥

होरी ३६–प्रथम फाग वसंत पञ्चमी, सतगुरु मेहर करोरी॥ टेक॥ अब पकडो छूटे नहिं कबहूँ, पियसों जाय मिलोरी॥ प्रथम गुफामें बैठके सजनी, नाभी आड दईरी॥ दूजे बंद कंठ ले छेदो, सूखी नाल भईरी॥ करम भरमके बरुवा काटे, चेतन अगिन दईरी॥ दियो जराय कुबुध कलेसको, उडके अकाश गईरी॥ चोवा चंदन अबीर अरगजा, केशर कीच भरोरी॥ धीरज ध्यान प्रेम कुमकुमा, रंग सतसुधि न रहोरी॥ आपहि खेल खेलारी साहब, आपहि ज्ञान गुनोरी॥ दिना चार मायाको ख्यालैं, खेलत आप धनीरी॥ इहँ उहँ बाहिर भीतर सबमें, जानैं जान गुनीरी॥ ज्ञान गुलाल लगावो सखीरी, सतगुरु संग चलोरी॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधू, एकहि फूल फुलोरी॥

होरी ३७–या मन जालिम जोर रे, बरजो नहिं माने॥ टेक॥ निसि बासर सो चलत रहत है, सांझ गिनै नहिं भोररे॥ कोटि जतन कर तनमें राखों, भागे सांकर तोररे॥ सात द्वीप इकइस ब्रह्मांड लों, जहां लग याकी दोररे॥ सुर नर मुनि औ पीर औलिया, काहू न पायो चोररे॥ ब्रह्मा विष्णु महेसुर कहिये, एहि कटे चित चोररे। कहैं कबीर जुगतसे राखो, गुरु चरननकी बोररे॥

होरी ३८–ये फागुन दिन चारी, होरी खेल मनारे॥ टेक॥ दया धरमको केशर घोरी, प्रेम प्रीति पिचकारी। बाजत ताल मृदंग झांझ डफ, अनहद धुनि झनकारी॥ उड़त गुलाल लाल भये बादर, बरसत रंग अपारी। बीच बीच मुरली धुनि बाजे,

रोम रोम लगी तारी॥ दस दरवाजे घेर मन पकरो, दुरमति खैंच उतारी। घूंघुटके पट खोल गये हैं, लोक लाज सब झारी॥ होरी खेल उलट घर आवे, सो तिरिया पिय प्यारी। कहैं कवीर टरे नहिं टारी, परम पुरुषकी नारी॥

होरी ३९—फागुन आयो दुख देन सखीरी, मेरो पिया घर नाहीं॥ टेक॥ अपने अपने भवनसो निकसे कामिन कंथ। मेरो पिया परदेस सखीरी, मोको कैसे बसंत॥ चोवा चंदन अबीर अरगजा, का घसि लाऊं अंग। सुध बुध मेरी गई सब सजनी, वाही पियाके संग॥ तेरो पिया समीप सखीरी, तू तो हिलमिल खेल। नाहीं वर मेरोरी सजनी, गयो है ऊभी मेल॥ एक संदेशा सुनरी सजनी, पिया घर आवेंगे आज। दुबरी बिरहिन भई बावरी, अजहुँ न आवे लाज॥

होरी ४०—खेलो सइयां संग होरी, रंग भीनी पिया सों॥टेक॥ निरगुन रूप लियो घट भीतर, मनसा हौंदे भरोरी। चित चोवा बुध केशर कहिये, भाव अरगजा घोरी॥ शील संतोष ज्ञान उजियारो, पिचकारी भक्ति भरोरी। कहें कवीर ऐसी होरी खेलो, जाते भाग जगोरी॥

होरी ४१—फागुन मेरोरी मैं कैसे भरों दिन रैन॥ टेक॥ परकी फाग पिया संग खेली, अबीर गुलाल उड़ाय। आसोंकी फाग पिया घर नाहीं, खेलोंगी हमरी बलाय॥ हमरे आंगन चंदनके बिरवा, जहँ चढ बोलै काग। झूंठे सगुन तुम्हार सखीरी, झूठे बनके काग॥ उड़ उड़ काग सुलछना, जो पिय आवैंगे आज। असी कोस मोरे पिया बसत हैं, सो कस आवैंगे आज॥ हमरे बालम फुलवारि लगाई, मृगा चुन चुन जाय। मारोंगी मृगा गुलेलसों, नयन कमान चढाय॥ अपने बलमाको पतिया भेजों,

नयन कज्जल मसि लाय। बीच बीच बिरहा लिख भेजो, दुख सुख लिखो न जाय॥ सतगुरु आये कंठ लगाये, मिट गइ तपन हमार। गुरु प्रताप ताप गई तनकी, धर्मनि कहैं पुकार॥

होरी ४२–मैं तो आन परी चोरनके नगर, सतसंग बिना जिव तरसे॥ टेक॥ हाथके हीरा डार दियो, का मूठी भरी कंकरसे। होरी खेलनकी यही बेर है, फिर चौरासी मंदिलसे॥ अपने पिया संग होरी खेलों, और न काहू मनसे॥ कहैं कवीर यह मोहिं लखाया, क्या छोड़ चले हो फिरसे॥

होरी ४३–मैं तो अब कैसे खेलोंगी होरी, मोहि लागी शब्दकी डोरी॥टेक॥ या होरीका सकल पसारा, लोग कहे थोरी थोरी॥ होरी खेलो जो अपने पिया संग, या होरी मेरे अंग बयोरी। निशि दिन खेलों अपने पिया संग, टूटत नाहिं न डोरी॥ धर्मदास सतगुरु सों माते, साहेब कवीर भ्रम तोरी॥

होरी ४४–गुरु लाये मुकतिके पान, प्रीतम आये हो॥ टेक॥ पान परवाना देत जीवनको, वे पावै सुख धाम। चौदा लोक पर जोत निरंजन, तीन देव परमान॥ तीरथ व्रत औ चार वेदमें, इनमें जगत भुलान। सात सुरतिके ऊपर कहिये, सोइ पुरुष पुरान॥ सही छाप गुरु उहांसो लाये, समरथके फुरमान। सतयुगमें सतसुकृत कहिये, त्रेता मुनिंदर नाम। द्वापरमें करुणा-निध स्वामी, कलियुग कवीर निधान। कालको जीव कही नहिं माने, कोट सुनै जो ज्ञान॥ जैसे लाख अगिनमें पिघले, बिछुरत काठ समान। जे करतासे सब जग उपजो, भूले ठौर ठिकान॥ जुगनके जुगनके बिछुरे हंसा, भेटे पुरुष पुरान। तेरह पीढी ज्ञान रजधानी, दोऊ दीन ले पान॥ राजा रंक सकल फिर आवे, छोड़े कुल अभिमान। पांच हजार पांच सौ बीते, चलि है पंथ

निशान ॥ घर घर सत्य शब्द जो फैले, सतजुग बरते आन । साहब कबीर आये निज घरसो, फगुवा दीन्हे नाम ॥ निरगुन भगतीरूप कलजुगमें, वेद मरम नहिं जान ॥

होरी ४५–मेरे मन परदेसी मीत, होरी खेलिये ॥ जब जैहो घर आपने, तब कौन तुम्हारे साथ ॥ टेक ॥ बाहिर खेलन नाहीं पैहो, आनि गहे जमराज । बांह पकर जम ले चले, धरी रहे सब साज ॥ जो तुम काज आपनो चाहो, नाम गहो बहु भांत । अजहूं चेत अचेत बावरे, जन्म सिरानो जात ॥ ज्ञान पुटरिया बांधके हो, सुरत अबीर उडाव । जाय लगो पियके हिये, अब खेलनको दाव ॥ पांच नार तुमको सजी, पांच हुए कै जात । वे रस चाहें आपनी, अपनी अपनी भांत ॥ साहब कबीर होरी रचो, मचो कुलाहल सोर । समुझ देख नर बावरे, येतो होरी कैसे भोर ॥

होरी ४६–तेरो है घर कंथ सुजान, खेलो रंग भरी । जनम जनमकी मिटी कल्पना, पायो जीवन प्रान ॥ टेक ॥ पांच सखी मिल मंगल गावें गुरुगम शब्द बिचार । बाजत ताल मृदंग झांझ डफ, उठत शब्द झनकार ॥ खेलन चली पंथ प्रीतमके, तनकी तपन बुझान । पिचकारी छूटे अति अदभुत, रसके कीच बहान ॥ सतगुरु मिल आपा बिसरावै, लागी खेल अपार । जित कित होहो होय रही, रटना लगी हमार ॥ सुख सागरमें न्हाइये, निरमल भये शरीर । आवागमन तब मेटिया, जब फगुवा पाये कबीर ॥

होरी ४७–तज काम क्रोध मद मोह होरी खेलिये ॥ टेक ॥ ज्यों पंकज जलमें रहे, जल नहिं परसत देह । डर माया मन परहरी, सतगुरुसे कर नेह ॥ ज्ञान सुगंध गोद भर लीजे, कुबुध गुलाल उड़ाय । सत्यनाम गुन गाइये, जश को डफ बजाय ॥

मानुष जन्म दुरलभ है संतो, खेलो फाग सुभाव । कहें कबीर चित चेतो हंसा, बहुर न ऐसो दाव ॥

होरी ४८-मिल खेलो बिमल बसंत, प्यारे कंथसो । खोल अंधेरी कोठरी, मिल बैठो महल एकंत ॥ टेक ॥ गगन मंडल दीपक धरे महल करो उजियार । छैल छबीले कब मिलो, मेरे जीवन प्रान अधार ॥ गंग जमुनके अंतरे, चंद सूरके बीच । अर्ध उर्धके मध्यमें जहां मची अरगजा कीच ॥ बिन पग निरत होत है, बिन कर बाजे ताल । बिन नैनन छबि देखिये, विना सरवन झनकार ॥ जहां सुरंग रंग रहो, हिल मिल एकहि ठांव । धर्मनि भेटे भावसों, गुरु पाये अपने नाव ॥

होरी ४९-खेलत फाग वसंत रैन दिन । सहज शुन्यमें होरी ॥ टेक ॥ सतगुरु दया साधुकी संगति । त्रिकुटी महल रच्योरी ॥ गुंजत भवंर कोकिला बोले । सोहं सोहं सोरी ॥ बाजत ताल मृदंग झांझि । अगम निगमकी झोरी ॥ मानो कोटि भान ससि ऊगे। जहां मनुवां विलमोरी॥ सुरति सुहागिनी संग लिये मनुवां। दिये सुमतिकी खोरी ॥ कहैं कवीर मगन भई विरहिनि, ब्रह्म ज्ञान झकझोरी ॥

फाग प्रारम्भ ।

फाग १-मेरे सतगुरु आये आज खेलन फागरी। वानी बिमल सुगन सब बोले अति सुख मंगल रागरी॥ टेक ॥ चाँचर सरस सखा संग बोलै । अनहद बानी रागरी ॥ शब्द सुनत अनुराग होत है । कहा सोवे उठि जागरी॥ पानी आदर पवन बिछौना। बहुत करूं सन्मानरी॥ देत अशीस अमर पद लेऊँ । अब चल युग युग राजरी ॥ चरन प्रच्छालि चरनोदक लेहु । उठि उनके

पग लाग री॥ पांच सखी मिलि मंगल गावे। पीव अपने संग लाग री ॥ पांच अमृत भोजन लेवै। प्रेम प्रीति भरि थार री ॥ महा प्रसाद संत मुख पावे। आनि खुले मेरे भाग री॥ चौरासीकी बंध छुड़ावन। आये सतगुरु आप री॥ पान प्रवाना देत जीवनको। वे पावें सुख बास री॥ चोवा चंदन अरगजा कुमकुम। पुहुप माल गल हार री ॥ फगुवा माँगि मुक्ति फल लेवौं। जीव अपनेके काज री॥ सोलहो सिंगार बत्तीसो आभरन। सुरति सिंगार सँवाँर री॥ संत कवीर मिले सुख सागर। आवा गवन निवार री ॥

फाग २-मिलि खेलो विमल वसंत। प्यारे कँत सों ॥ खेली अंधेरी कोठरी मन। बैठो महल इकंत॥ टेक॥ गगन महल दीपक धरा हो। भवन कियो उजियार ॥ छैल छबीलो ना छीपे। मेरे जीवन प्रानाधार ॥ विन पग नटवा निरति होत है। विन कर बाजे तार॥ विन नैन जहां देखिये। विन श्रवण सुनि झन्कार॥ गङ्ग जमुनके अंतर है। चंद सुरजके बीच॥ अरध उरधकी संधिमें। जहां मची अरगजा कीच ॥ रंग सुरंग रङ्ग रंगि रहे हो। हिलि मिली एकै ठांह॥ धर्मनी भेंटे भावसों हो। मिले पुरातम नाह॥

फाग ३-जहां मन पावे विसराम, संगति साधुकी। साधु संत मिलि होरी खेलो, निशि दिन आठों जाम॥ टे०॥ होरी हरिको नाम है हो। लीजिये गाय बजाय ॥ फगवा बारह मास है हो। तुम मति विसरो ताहि ॥ पिचकारी नासा बनि हो। स्वासा केसर रंग॥ भरि भरि डारै सुषमना। धुनि अनहद ताल मृदंग॥ तीन रंग एकै भयो है। पीत श्याम अरु सेत॥ होरी खेले आत्मा। परमातम कंत समेत॥ कवीर बलि गुरुदेवकी। पद परसत राजा राम॥ जापर दया भई सतगुरुकी। जुग जुग अविचल धाम॥३॥

फाग ४–करि सुमरन सुरंग होरी खेलिये हो। ज्ञान पिचकारी ध्यान केशर भरि ॥ या विधि मनको लहिये हो ॥ टे० ॥ पांच सखी मिलि उठि उठि धावै । इनकी लुकट बचइये हो ॥ काम क्रोध अरु लोभ मोह सब । अबीर गुलाल उड़इये हो ॥ बाजत ताल मृदंग झांझि डफ। अनहद नाद बजइये हो ॥ सुरति निरति और राग रागिनी । अनचित चितसो गइये हो ॥ चोवा चंदन अरु अरगजा । रसकी कीच मचइये हो ॥ कहै कबीर तब साध कहावैं । गुरूसों फगुवा पइये हो ॥ ४ ॥

धमार प्रारम्भ ।

धमार १–नित मंगल होरी खेलिये हो । अहो मेरे संतो नितही वसंत नित फाग ॥ टेक ॥ दया धरमकी केशर घोरो । प्रेम प्रीति पिचकारी ॥ भाव भगत सों भरि सतगुरुको । सुफल जनम नर नारी ॥ छिमा अबीर चरच चित चंदन । सुमरन ध्यान धमारि ॥ ज्ञान गुलाल अगर कसतूरी । उमंगि उमंगि रंग डारि ॥ चरणामृत प्रसाद चरण रज । अपने शीश चढाय ॥ लोक लाज कुल कानि मेटिके । निर्भय निशान बजाय ॥ कथा कीर्त्तन मग्न महोछब । करि संतनकी भीर ॥ कबहूँ ना काज बिगड़ है तेरो । सत सत कहैं कबीर ॥ १ ॥

धमार २–कोई नाम सनेही खेलै वसंत । अहो मेरे संतो कुलकी हो कानि निवारी ॥ टेक ॥ सत्संगति अरु दया भावसों । लागो प्रेम गुरू संग ॥ आसा मूल निराश विसारी । बाजत नाद मृदंग ॥ डिम कपट गुलाल उडे जब । लागो रंग अपार ॥ पांच सखी मिलि मंगल गावे । लागि रही इक तार ॥ खेलन चली पंथ प्रीतमके । अति ही उलास आनंद ॥ भव विसारि कछु शंक न

कीन्ही । सुरति शब्द गठि बंद ॥ चाचर रचि संग प्रीतमके । खुलिया ज्ञान भंडार॥ पीवत नाम महारस छाके। निरखत रूप अपार ॥ कहैं सुनै कछु वनती नाहिं । जो खेलै संत सुजान ॥ अजर अमर अविनाशी साहेब निर्भय नाम अमान। जरा मरण भय संशय छूटी। छाड्यो विष संसार॥ दास कबीर ऐसे खेलिये हो । आवागवन निवार ॥

धमार ३-निज नाम रंगीले रंग रंगे हो । अहो मेरे संतो छाडो हो कर्म अपार ॥ टेक ॥ छाडौ कनक कामनि बहु रंगा । याते कपट विकार ॥ जनम जनमके फंद कटत हैं । सतगुरु शब्द सम्हार॥ जम पाटनको करम निवारो । हंस हो निरबान॥ माया आस विचारि तजो जीव। बहुरि न भरम समान॥ चेतो रे नर मूरख प्रानी। ये जम बड वरियार॥ सार शब्द निश्चय उर धारो। भाग चले जम धार॥ सत्सुकृतको निजकर सुमिरो। गहो अगमकी डोरि ॥ सतगुरू सेती परिचय पाइये । छूट्यो जमको जोर ॥ पारस परस अमर घर पायो। हंस भये अस्थीर ॥ सदा करारी जुरा न व्यापे । ता रंग रंगे है कबीर ॥

धमार ४-कोई नाम रंगीले रंग रंगे हो। मेरे साधो गहो शब्द टकसार ॥ टेक ॥ प्रेम ते गगन पखावज बाजे । सुनिये छतीसौं राग ॥ आवरन वरन गुलाल बहु रंगी । बहु रंगी पांचो राय ॥ बीस पांच अरु तीन सहेली। खेल त्रिकुटीमें आन॥ अगर अबीर कुमकुमा केशर। अष्ट कमल परमान॥ गगन मंडलमें खेलत हौं होरी। तत मता गल तान॥ फगवा लेन भरली विधि आवो । पावे मुक्ति फल दान॥ कहै कबीर ऐसी होरी खेलो। पांच पचीसों मारि ॥ नाम गहे ते परम पद पावे । पुनरपि जनम निवारि॥

धमार ५–सतगुरू संग होरी खेलिये हो। अहो मेरो साधो जाते जरा मरण भरम जाये॥टेक॥ ध्यान जुगतकी करि पिचकारी। छमा चलावन हार॥ आत्म ब्रह्म जो खेलन लागे। पांच पचीस मंझारि॥ ज्ञान गलीमें होरी खेले। मची प्रेमकी कीच॥ लोभ मोह दोऊ कटि भागे। सुनि सुनि शब्द अजीत॥ त्रिकुटी महलमें बाजा बाजै। होत छतीसों राग॥ सुरति सखी जहां देख तमाशा। सतगुरू खेलत फाग॥ इंगला पिंगला सुषुम्ना हो। सुरति निरति दोउ नारि॥ अपने पिया संग होरी खेलों। लज्जा कानि निवारि॥ शुन्य शहरमें होत कुतूहल। करें राग अनुराग॥ अपने पुरुषका दरशन पावे। पूरन प्रेम सुहाग॥ सतगुरू मिलि फगवा निज पायो। मारग दियो है लखाय॥ कहै कवीर जो ये तत पावे। सो जीव लोक सिधाय॥

धमार ६–ऐसे निर्गुण होली खेलिये हो। अहो मेरे साधो जहां पुरुष विसराम॥ टेक॥ मूल शब्दका बजे नगारा सहज उठे झन्कार॥ असंख्य पाखंडीकौ लोक रच्यो है। बहु शोभा विस्तार॥ वाकी आभा कायामें रहियो। गगन मंडलमें वास॥ ताही सुमिरि हंसा पग धरिहो। काल न आवे पास॥ निःअछर विहंगम जुग कीन्हा। वास धरे अस्थूल॥ सब जीवन पर दया जु आई। प्रगट पुकारे मूल॥ धरमदास तुम निज करि मानो। यहि घर रहन हमार॥ ऐसा मूल प्रताप जोरावर। चलत होय उजियार॥ यहि प्रताप लोक पहुंचावै। सुरति निरति लिया साथ॥ कहैं कवीर सोई भल वंचे। मूल लेखा जिन हाथ॥

धमार ७–ऐसे प्रभु संग होरी खेलिये हो। अहो मेरे साधो जैसे खेले हैं ध्रुव प्रह्लाद॥ टेक॥ बालापनै खेल खेलहि खोयो।

जवानीमें जोबन जोर ॥ यह मन भल कह्यो नहि माने । सांझ गिने नहीं भोर॥ सनकसनंदन सुखदेव खेले। खेले शेष महेश॥ कुलकुँ छाडि विभीषण खेलै। कीन्हे हैं लंक नरेश॥ अविनाशी संग विनसत नाहिं । जिनकी कथा अपार ॥ साधु समुझि मूल गहि बैठे। सब जग लाग्यो डारि॥ विरध भयो कोइ नाम लैहै। समुझि देख मन कूर ॥ निर्भय होरी खेल कवीर जी । घटहीमें हाल हजूर ॥

धमार ८–ऐसे खेलको कहा खेलिये हो । अहो मेरे साधो जामें आवागमन बसेर॥ टे०॥ निशि बासर जहां मिरतक व्यापे। भवसागरमें वास॥ पांचों चोर छठो मन राजा। निश दिन करत विनास ॥ घर माटीको भीत झाँझरी । अष्ट धातको जडाव ॥ नव दरवाजे रहत मलीने। काहेको करत उपाव॥ प्रकृति पचीसों संग जंजाली। काम क्रोध कोटवाल॥ इतने कटकमें राजा भूलो। खेलत भरमको ख्याल ॥ भरम छाँड़ि अजहुँ किन चेते। कहैं कवीर समुझाय॥ कहा हमारा जो कोइ माने। आवागवन नसाय॥

धमार ९–अविनाशी दुलहा कवीर कब मिलिहो। अहो मेरो साधो सब संतनके रक्षपाल ॥ टेक ॥ जल उपजी जलसों नहिं नेहा । रटत प्यास प्यास ॥ मैं विरहिनि ठाढी मग जोहूँ। राम तुम्हारी आस ॥ दिवस न भूख रैन नहीं निद्रा । गृह आंगन न सुहाय ॥ सेजरिया वैरन भई हमको । जागत रैन विहाय ॥ छांड्या गेह नेह लाग्यो तुमसो। भयी चरन लवलीन॥ तुम विनु जियरा यूँ तलफतु है । जैसे जल विनु मीन ॥ हमतो तुम्हारी दासी हों प्रभुजी। तुम हमरे भरतार॥ दीनदयाल दया कर आवो। साहिब सिरजन हार ॥ कै तो प्रान तजति हूं साहेब। कै अपनी कर लेव ॥ दास कवीर विरह अति बाढी। हमको दरशन देव ॥

धमार १०—कैसे जीवेगी विरहनी पिया विनु हो। अहो मेरा साधो कीजे हो कौन उपाय॥ टेक॥ दिवस न भूख रैन नहिं सुख है। जैसे कलिजुग जांम॥ खेलत फाग छाडि चलि सुंदर। तजि चलि धन अरु धाम॥ बन खंड जाय नाम लव लावो। मिलि पिया सुख पाय॥ तलफत मीन विना जल जैसे। दर्शन दीजे हो धाम॥ विना अकार रूप नहिं रेखा। कौन मिलेगा आय॥ आपन पुरुष समुझिले सुन्दरी। देखो तन निरताय॥ शब्दसरूपी जब पिया बुझो। छाड़ो भरमकी टेक॥ कहै कवीर आन नहिं पूजा। जुग जुग हम तुम एक॥

धमार ११—खेले तेरी माया मोहिनी हो। अहो मेरे साधो जिन जेर कियो संसार॥टेक॥ चंद्र वदन मृगलोचनी माया। विदँलो दियो है लिलार॥ जती सती सब मोहि लियो है। गज गति वाकी है चाल॥ हरे रंगकी चुँदरी हो। माया पहिरे ताही॥ शोभा अद्भुत रूपकी हो। महिमा वरनि न जाय॥ जेते तेते लिये हो। घूँघुट मांहि समाय॥ आँजन वाकी रेख हो। अदग गयो नहिं कोय॥ छिड़कत थोथे प्रेम सुमाया। भरि पिचकारी गात॥ सनकसनंदन कहत हैं। औरकी केती बात॥ अनहद ध्वनि बाजा बाजे हो। सरवन सुनत भयो चाव॥ खेलन हारे खेलिहै हो। बहुरि न ऐसो दाव॥ ज्ञान डगा पग रोपिया हो। टारचो टरत न पांव॥ बाँस लिये कर आपने हो। फिरि फिरि झूरत जाय॥ ब्रह्मा शंकर वश कियो माया। दोऊ पकडे जाय॥ फगुवा लीन्हो आपनो हो। बहुरि दियो छिटकाय॥ नारदको मुख मोरिकै। माया लीन्हो बसन छुटाय॥ गर्व गहेली गरबते हो। बहुरि चली मुसकाय॥ सुर नर मुनि एक ओर भये हैं। एक अकेली आप॥ सन्मुख कोऊ ना रहै हो। मारि लियो एक धाप॥ इन्द्र सकुच

ठाढे गढौ भयो हो । लोचन ललित अंजाय ॥ हरि अविनाशी उबरे हो । कहै कबीर गुण गाय ॥

धमार १२–भरम भुली माया जग मोहै हो । अहो मेरो साधो खेलत भ्रमको ख्याल ॥टेक॥ कटि केहरि गज गामिनी माया । संशय कियो सिंगार ॥ राखे रोकि सब मोह नदीमें कोऊ न उतरचो पार ॥ ब्रह्माको चित्त चोर लियोहै । शिवको लीन्हों साथ ॥ बस किय विष्नु विश्वके ठाकुर इंद्र नवायो माथ ॥ तैंतीस कोटि छले मुनि देवा । डारचो भरम गुलाल ॥ बरन फेरि अवरन होय नाची । ऐसी अलबेली नारि ॥ पंडित आंखिन आँजन आँज्यो । मूरख आंखिन धूरि ॥ जती सती सब बाँसन मारे सुरनर मुनि किय चूर । गोपीचंद भरथरी गोरख । खेलन आये फाग ॥ शृंगी ऋषि पाराशर लुटे ॥ छांडि छांडि वैराग॥ सात दीप नौखंड तिहुपुर । फगवा सब सो लीन ॥ ठाढी विनती करै कबीरसों, हम तुमरे आधीन ॥

धमार १३–तुम दीन दस खेलों साजना हो । अहो मेरो संतो बहुरि न ऐसो दाव ॥ टेक ॥ रितु वसंत माया संजोरी । कछुक करो अनुराग ॥ फिरि पीछे पछतावगे संतो बीति जायगी फाग॥ ग्यान डगा तुम रोपि हो । सन्मुख रहो सम्हारि ॥ मारेगी चित चोरकै हो । मोहिनि चंचल नारि ॥ हरि सुमिरनकी गारी दीजे । गुरूके वचन संम्हाँरि ॥ साधु संगति तुम जोरिकै हो । कबहु न आवेगी हारि ॥ अनहद बाजा बाजे सखीरी । नौतम प्रीतम ठांय॥ केशरि चरचो प्रेमकी हो । जुग जुग रंग न जाये॥ कहै कबीर ऐसी होरी खेलो । तीन तीसको मारि ॥ नाम गहेते परम पद पइये । आवागमन निवारि ॥

धमार १४–कर मन संग भरमत केई जुग गये । अहो मेरो

साधो उपज्यो न केवल ज्ञान ॥ टेक ॥ कबहुंक बन चर तुम भये हो । कबहुंक तिन चर रूप ॥ कबहुँक सिंह दहारत वनमें। कबहुंक मींडक कूप ॥ कबहुंक नरपति तुम भए हो । कबहुंक मांगत भीख ॥ कबहुंक गज होय घूमंत डोले । कबहुंक मस्तक लीख॥ कबहुंक विकत तुम भयो हौ। कबहुंक गये फंदे जंजाल॥ कबहुंक उडिके गये गगनकूं । कबहुं गये पाताल ॥ कबहुंक सुर पति तुम भये है। कबहुंक नरक निदान ॥ कहै कवीर ऐसे भरम डोलै । जैसे सूकर स्वान ॥

धमार १५-ऐसे पिया संग होरी खेलिये हो। अहा मेरो साधो सुरति सुहागिन नारि ॥ टेक ॥ पांच पचीस सखियनकी संगति तत मत सखी लिया साथ ॥ अरस परस पियाके संग राची । सहज लकुटिया हाथ ॥ गगन मंडलमें होत कुलाहल । उठत राग अनुराग ॥ बाजत ताल मृदंग झांझि डफ। बहु विधि भयो सुहाग ॥ ग्यान गुलाल अनहद अरगजा। चित चोवां मन लाय ॥ कर-करनी केशरि रंग भीनी । विन रसना गुन गाय ॥ धन सतगुरु धन साधुकी संगति । धन हमारे भाग ॥ सांची फाग भगति सतगुरुकी। कहैं कवीर सुहाग ॥

धमार १६-अभि अंतर अनहद मुरली बाजे । अहो मेरो साधो चलो न देखन जाय ॥ टेक ॥ काया कुंज गली वृन्दावन। अनुभव जमुना नीर बैन बजाई बीचमें मोहन नाभि कमलके तीर ॥ सुधि बुधि विसार गई सब श्यामा । सुनि मुरलीकी टेर॥ उलटी सिंगार कियो हैं आतम। पहरचो हैं अम्बर फेर ॥ मुरलीको शब्द सुनत सब गोपी। भूलि गई परिवार ॥ पांच पचीस॥ सखी सँग राधो । भेटन चली है मुरार ॥ आस पास गोपियनको मंडप । विचि विचि परमानन्द ॥ भयो उछाह प्रेम अति

बाढ्यो। ज्ञान उदय जिमि चंद ॥ थाके चंद सुरगुन मारुत। वहैं न जमना नीर ॥ मुनि मुनिवरको ध्यान डिग्यो है। बछा न पीवै क्षीर ॥ घट घट रास रच्यो वृन्दावन। घट घट गोपी कान्ह ॥ घट घट राम रमे अविनाशी। जाने कोई संत सुजान॥ सतगुरुके प्रताप सखीरी। वरनि सुनायो रास ॥ मानुष जन्म सुफल भयो साधो। विं धनि धरमदास ॥

धमार १७–अहो अविनाशी दूलहा कब मिलिहो हो ॥ हो भाई साधो मिलिहो सनेही आय ॥ टेक ॥ जल उपजे जलसो नहिं नेहा, रटत पियास पियास। मैं बिरहिन ठाढी मग जोहों, पिया मिलनकी आस॥ दिन नहिं चैन रैन नहिं निद्रा, घर अंगना न सोहाय। सेजरिया बैरन भइ हमको, जागत रैन बिहाय ॥ हूं तो तुम्हरी दासी साहब, तुम हमरे भरतार। दीन दयाल दया करो जन पर, साहब सिरजन हार ॥ आमिनकी बिनती सुन साहब, रहूं चरन लौ लीन ॥ तुम बिन जियरा ऐसे तलफे, जैसे जल बिन मीन ॥ की हम प्रान तजत हों साहब, की आपन कर लेव। साहब कवीर बिरह रस भोगी हमहूं को दरशन देव॥१॥

धमार १८–अहो ऐसे गुरु संग, होरी खेलिये हो हो ॥ हो भाई साधो हो, जरा मरन भ्रम जाय ॥ ज्ञान जुगतकी कर पिचकारी, छमा चलावन हार। आतम ब्रह्म संग खेलन लागे, पांच पचीस मंझार ॥ ज्ञान गलीमें खेलैं होरी, मची प्रेमकी कीच। लोभ मोह दोउ कुढि कुढि मरैं, सुनि सुनि शब्द अजीत ॥ त्रिकुट महलमें बाजा बाजे, हो छतीसो राग। ज्ञान ध्यान दोउ देखैं तमाशा, सतगुरु खेलैं फाग ॥ इँगला पिंगला सुषुमन रोको, सुरति निरति दोउ नार। अपने पिया संगहोरी खेलो, लज्जा कान निवार ॥ सुन्न महलमें होत कुतूहल, करहिं राग

अनुराग। अपने पियाके दरशन पाऊं, पूरन प्रेम सुहाग॥ सतगुरु फगुवा पाइया हो, मारग दियो बताय। कहैं कबीर जो यह तत्त्व पावे, सो जन लोकहिं जाय॥

धमार १९–अहो साहब संग होरी खेलिये हो॥ हो भाई साधो हो खेलो तन मन वार॥टेक॥ धोखेकी एक होरी बनाई, भवको डांडो गाड। दुबधा की जार लाय इत उतसों, लज्जाको देउंगी जार॥ प्रेम पावक ले होरी दागों, कर्म बरूला डार। भावर दे दे मंगल गावों, त्रिगुण फंद निरवार॥ समुझकी झोरी सुमतिने पकरी, होरीकी भस्म लई झार। जित कित धूर उड़ाय जगत पै, कुल पर डारोंगी छार॥ करनी को केशर घटमें घोरों, रहन करो पिचकार। परख पतंगके रङ्ग उतारों, देउंगी मन पर डार॥ दया अबीर गुलाल धर्म कर, चित चंदन लेइ गार। सतगुरु मुख पर डारों, प्रीतिसों, पांचौ चोरन मार॥ जो कछु चाल होय गुरु समरथ, पहिले देहु तिखार। आमिनकी बिनती सुन साहब, फगुवा देहु हमार॥ कहैं कबीर सुन धर्मनि नागर, अब है राह बिचार। अमी अंक परवाना पावे, पहुंचे पुरुष दुआर॥

धमार २०–अहो बैरागी नागर होरी खेलिये हो हो॥ हो भाई साधो हो, खेलो निरगुन नाह॥ गढ बांधोंमें चाचर खेले, निरगुन नाम विचार। संगन सनेह, हंस परबोधो, जमसो जीव उबार॥ सूर सनेह गहो निशि बासर, सुषुम वेद टकसार। निरगुन नाम निअच्छर गावो, जुग जुग शब्द पुकार॥ मंदिरसों निकसी एक सुंदर, कर पग शीश न छंद। बिन नैनन देखिये वाकी सुरत, दिन दिन परम अनंद॥ बिन जुगबंध काल छोडे, बहु बिधी भेष बनाय। जब लग जमकों चिरे न कागद,

काल धरी धरखाय ॥ पिंड न प्रान देह नहिं सुंदर, बिन रसना गुन गाय । ऋग यजु साम अथर्वण थाके, बिन गुरु कौन लखाय ॥ जोजन तीन चले बिन चरनो, करपलो परमान । सुर नर मुनि जाको मर्म न जाने, निरगुन चतुर सुजान ॥ तेंतीस कोटि देव नहिं जानें, निरगुन भेद नियार । कहें कवीर मुक्तिके दाता, परख परख टकसार ॥

धमार २१–अहो करनाटक नागर होरी खेलैं हो हो ॥ हो भाई साधो हो खेलैं जो राय बंकेज ॥ टेक ॥ एक समय गज अस्थल आये, करनाटकके लोग । बिहँसि बिहँसि सब मंगल गावें, बहुत करहिं सुख भोग ॥ राय बंकेज हंसनके राजा, गज अस्थल कडिहार । हंसन पार उतारहीं, परख परख टकसार ॥ हंस हंस युग बांधहीं, जम सों जीव छोडाय । सत्य शब्द दे लोक पठावै, अभय निशान बजाय ॥ ज्ञान सुगंध धरो घट भीतर, कुबुधि अबीर उडाय । सुरति शब्द जीवनको दीन्हे, हंस लिये मुकताय ॥ भये लवलीन हंस मुकताहल, सतगुरु बांह चढाय । कहैं कवीर मुक्तिके दाता, तबहिं अभय पद पाय ॥

धमार २२–अहो भर्म भारी माया जग मोहे हो हो ॥ हो भाई साधो हो जेर कियो संसार ॥ टेक ॥ कटि केहरि गजगामिनि माया, संशय कियो सिंगार । रोक रही सब मोह नदी में, कोई न उतरे पार ॥ ब्रह्माके चित चोरी माया, शिवको लीन्ही साथ । बस कीन्ही बसुधाके ठाकुर, इंद्र नवावे माथ ॥ तेंतिस कोटि छले मुनि देवा, डारी बिरह गुलाल । बरन फेर अबरन होय नाचे, ऐसी अबला नार ॥ पंडित आंखिन अंजन दीन्हे, मूरखके मुख धूर । जती सती सब बांसन मारे, सुर नर मुनि किये चूर ॥ गोरख गोपीचंद भरथरी, आये खेलन फाग । शृंगीऋषि पाराशर

आये, छांड़ छांड़ बैराग ॥ सात द्वीप नौ खंड तिहूंपुर, सो सो फगुवा लीन्ह। साहब कबीरसों अरजी करत हैं, तुम मोहिं कछू न दीन्ह ॥ ६ ॥

धमार २३–अहो गुरुगम सों होरी खेलिय हो हो ॥ हो भाई साधो हो शब्द सुरति लौ लाय ॥ टेक॥ कोई एक नाम निरंजन ध्यावे, कोई कहे निरधार । जोत सरूपी अलख कहत है, राँचि रह्यो संसार ॥ कोइ दुर्गा शिवको जानै, कोई जाने भूत । कोई यंत्र मंत्रसों राचे, मूल बिसारो सूत ॥ कोईक नवली कर्महिं साधे, पवना देइ चढाय। बिंदहि साध मगन होय फूले, सतगुरु शब्द न पाय ॥ अजपा सुन्न जपे सब कोई, छर अच्छर लग दौर । मारग भूल फिरे भटकाना, मन आवत नहिं ठौर ॥ कोई ओहं कोई सोहं ध्यावे, कोई एक नहिं ठहराय। घटमें ज्ञान कथे सब ज्ञानी, तन छूटे कहँ जाय ॥ पूरन ब्रह्म कहे सब कोई, सो जग करे अहार । तन छूटे कहु मिले ब्रह्मको, जनम जु होत खुवार॥ ऊर्ध तपे बन खण्ड जात है, खात वृच्छके पात । जोगी जंगम औ दरबेसा, भेष धरे संसात ॥ कथनी बकनी पार न पावे, सतगुरु शब्द अकाल। अच्छरमें निःअच्छर दरशे, सतगुरु होहिं दयाल ॥ युक्ति जान खेलै जो कोई, शब्द डोर चढ जाय । अमर लोकमें पुरुष बिदेही, सत कबीर लौ लाय ॥ ७॥

धमार २४–अहो कोई नाम रंगीला सतसंगी हो हो॥ हो भाई साधो हो गहो शब्द टकसार ॥ टेक ॥ प्रेमसो गगन पखावज बाजे, बिन कर बाजे ताल । रुनक झुनक अनहद धुनि बाजे, उठत छतीसों राग॥ अरुन बरुन गुलाल बहुरंग। बहुरूपी पांचौ राव। इन पांचौं विश्वास न लीन्हे, खेलै त्रिकुटी भाव ॥ प्रेमके रंग सींचत रहै, अष्ट कमल परकास। ज्ञान गली छूटे पिचकारी,

भँवर गुफा निज बास ॥ गगन मंडलमें होरी खेलैं, तत्त्व मता गलतान । फगुवा नाम लिये बन आवै, पावै मुक्ति फलदान ॥ कहें कबीर ऐसी होरी खेलो, तीनों तापको मार। निगम ये जावो परमपद पावो, पूरन जन्म निवार ॥

धमार २५-अहो सतगुरु संग होरी खेलिये हो हो॥ भाई साधो हो बहुर न ऐसो दाव॥टेक॥ खेलत हंस बंस कर लीन्हे, मिट गये बिषय बिकार। भाव रचेउ रंग संग निज पायो, खुलगये दशहू दुवार ॥ गगन गुलाल उड़ाव रैन दिन, भर पिचकारी शील। खेलत हंस परमपद पावै, बिमल हंसनकी भीर॥ गगन मंडलमें हंसा खेलै, चढे सवाया नूर। खेलै हंस सोहंगम डोरी, वर पाये भरपूर ॥ सोरह सुतका एक तत्त्व है, जासों न्यारा बीज। कहें कबीर हम निश दिन खेलैं, सतगुरु दीन्हा चीज ॥

धमार २६-अहो नित मंगल होरी खेलिये हो हो ॥ हो भाई साधो हो, नितही बसंत नित फाग॥ दया धरमकी केशर घोरो, प्रेम प्रीति पिचकार। भाव भक्ति भर भर सतगुरु सो, सुफल जनम नर नार॥ छमा अगर छिरक चित चन्दन, सुमिरन ध्यान धमार॥ ज्ञान गुलाल अगर कस्तूरी, उमँग उमँग रंग डार। चरनामृत प्रसाद चरन रज, अपने शीश चढाय। लोक लाज कुल कान तोरके, निरभय निशान बजाय॥ कथा कीर्तन मगन महोत्सव, करे संतनकी भीर। कबहुँ न काज बिगरे नर तेरो, सतगुरु कहें कबीर ॥

धमार २७-मन रंगी राजा खेलै धमार ॥ काहूको पाताल पठावे, काहूको देत अकाश। काहूको बैकुंठ पठावै, फिर फिर नरकमें बास ॥ ब्रह्मा विष्णु महेश्वर बांधे, माया रसरी डार। सुर नर मुनि सबहीको बांधे, कोइ न सके निरवार॥ जोगी जती

तपी संन्यासी, दिगंबर दरबेस। सनक सनंदन सबही बांधे, काहु न पायो भेश ॥ तेंतिस कोटि देवता बांधे, माया रसरी डार। कहैं कबीर तेई जन बांचे, चीन्हा शब्द हमार ॥

शब्द चाचर।

चाचर मची अब हो हो खेल जिन चाचर माहीं ॥ टेक ॥ चाचर खेलें दोय जने एक मन औ माया। पंथ चलन नहिं पावै बहु द्वन्द्व मचाय॥ लोभ मोहकी पिचकारी मारो चतुरा ज्ञानी। सुर नर मुनि सबही छले जेते अभिमानी ॥ डफ कपटही बाजे सही बहु जग भरमाई। तृष्णा लागे खेलई सम्हरा नहीं कोई॥ काम क्रोधकी अरगजा सब अंग लगोई। आशा तो चहुँ दिशि फिरे सब सुधि बुधि खोई॥ नाना रंग बनायके नाचे मन माया। ठांव ठांव फंदा रचे कोई जान न पाया॥ अंग अनेक दिखायके सबही जग खाया। मचे खेलके आंधरे काहू मरम न पाया ॥ षट् दरशन सब खेलहीं बहु भेष बनाई। मन रंगीके खेलमें सबही बिलमाई ॥ पंडित वेद पुरानको पढ पढ अरथावैं। शेष सहस मुख गावहीं कछु भेद न पावैं ॥ तीरथ व्रत जग लागिया धावै चहुं ओरा। देवी देवल देवता खेलैं सब ठोरा ॥ सुख संपतिके कारने अरुझा सब कोई। अंतकाल औसर परे कोई संग न होई॥ पछा पछी सब खेलहा बहु भरम भुलाने। वार पारकी सुधि नहीं कथनी लपटाने॥ जाके जो कछु मन बसे वह वाही माने। सत शब्द चीन्हें नहीं बहु झगरा ठाने ॥ सांचेको माने नहीं जिह्वाके लपटी। वादिनकी कछु सुधि नहीं जम मारे झपटी॥ मन मायाके रंगमें सबही ये भूले। चौरासीके खेलमें सदा जोनी झूले ॥ सतगुरु शब्द पुकारिया खेलै जो कोई। भौसागरके भय नहीं फिर

जन्म न होई ॥ कहैं कबीर बिचारिके खेलो तुम साधो । न्यारा सबही खेलते जाको अवराधो ॥ १ ॥

सत्यनाम ।

अथ कहरा प्रारम्भः ।

कहरा १-मतसुन मानिक मतसुनु मानिक मतसुनु मानिक सब धारेरे । मगन हुआ जब घर उठिचाला गुरूके चरन चित तुव धारेरे ॥ बगला पक उछारी मच्छी सो धिमरा कैसे पावेरे ॥ वंसी टूटि पडी पानीमें है कोई गांठ जुरावैरे ॥ तीन लोक धिमरा फिरि आया सिमरीके अन्त न पावैरे ॥ चारी चरन सिमरीके कहिये नो पंखुरी पखानारे ॥ नाका तोड़ि बैठ उर अंतर सतगुरू जुगति लखानारे ॥ दो मुख शब्द पडे टकसारा बूझै संत सुजानारे ॥ सुर नर मुनि और औलिया ब्रह्मा विष्णु महेसा रे ॥ कहै कबीर शब्द विन परखै पार न पाया सेसा रे ॥

कहरा २-अरे मन मिहरा करहु तयारी विलंब करे भल नाहि रे ॥ बेगहि सुरति करो तुम धुरकी दिन सब वीते जाहिरे ॥ पांच कोटि और नौ हैं नारे वे सब वेगि सुखैहैरे ॥ यह तन नदी झूर हुइ जैहै मंछा हाथ न ऐहैं रे ॥ धीरज करी तुम डारौ वंशी इस विधि मंछा ऐहैरे ॥ नातर तो मगरा हरि खैहै जीव अकारथ जैहैरे ॥ निरति सुरति करि धागा बांटो शब्द सुई पहिरावोरे ॥ अंतर कबहुं रहन न पावै ऐसा जाल बनावोरे ॥ शब्दकी डोरि तहां गहि राखो इस विधि जाल पसारोरे ॥ पांच पच्चीसो सिमरी भमरी सोई वेगि धरि मारौरे ॥ ए मन मिहरा वेगि मथौ तुम पवन महर ले साथारे ॥ इक मत हुईके चढोना उपर सिमरी आवै हाथारे ॥ वा सिमरीको लखै न कोई जहां मनसा जाई रे ॥

पिछले महरा जहँ लग होते खोजत रहे भुलाईरे ॥ नौ दरवाजे हैं सिमरीके जे सबहि तुम रोकोरे ॥ पिछली प्रीति बिना कर जोरे दास पठावे छेकारे ॥ जिस सिमरीके रूप न रेखा नहिं बरन नहिं मेषारे ॥ जा खोजत सुरनर मुनि भूले कोई विरले पेखारे। झिलमिल नीर तिरवेनी संगम तहां ब्रह्मका बासारे ॥ कहै कबीर सुनो तुम साधो एक नामकी आशारे ॥

कहरा ३-नाम सुमिर मन नाम सुमिरि मन नाम सुमिर मन मेरारे ॥ आवत जात बहुत दुख पैहो धरि धरि तन बहु तेरारे ॥ बालापनके गुनह करम सब प्रगट कहौं सुनिहौरे ॥ सुखसे भेंट भयी नहिं कबहूँ बहु दुख दारुण कीयारे ॥ सरवन कथा सुनी नहिं कबहूँ वचन सुचि मानारे ॥ नयना सुंदर रूप लुभाना यही करत मन माहिरे ॥ जीभ्या तेरी षड्रस राती है अंतर रस मानीरे॥ नासा तेरी वासकी बासे विशेष विशेषारे ॥ सरवन तेरे रागके भीने अनहद शब्द न परेखारे ॥ कामी पड़े कामके वशमें छीतज दिन औ रातीरे ॥ एक घडीके सुखके काजै खोवे कुल और जातीरे ॥ संगी तुम्हरे गुप्ता महरम लाजत नाहिं लबारारे ॥ राग बाग तन कस करि बांधो शब्द गहो हथियारारे ॥ गहि हथियार खेत मत छांडो रहियो खेत मंझारारे ॥ सूरा पनकी गति है न्यारी जाने संत कोई सूरारे ॥ पांच पचीस पकड़ि वश कीने जूझे गगन दुवारारे ॥ शूरा होयसो सम्मुख जूझे दरसै अलख अपारारे ॥ समदृष्टिको सतगुरू दरशै परसे अपरम पारारे ॥ ऐसी रहन रहै कोइ हंसा आवै लोक हमारारे ॥ कहै कबीर नाम को कहरा परख शब्द टकसारारे ॥

कहरा ४-निहुरि नाच मन निहुरि नाच मैं तेरी दुलहिनियारे॥ निहुरे नाचे शब्द विचारै चित्र विचित्र रहिनियारे ॥ कुंवटा एक

पांच पनिहरियाँ पनियां भरै पतलवारे ॥ बात सखीनसों चित गगरी सों चित सों गगरी न छूटे रे ॥ चित्त छुटै तो गगरी फूटै पनियां खिर गगरी फूटे रे ॥ पानीके प्यासे पीरेवा उर बैठि शब्दकी छहिरे रे ॥ आगि लगै तेरी मथुरा नगरीया कान्ह पियासे जैहैंरे ॥ ज्ञान धनुईयां सुमति तीरले तृष्नासों विधि मारै रे॥ कहै कवीर नामको कहरा महरम कोई विचारैरे ॥

कहरा ५-मूल छांडि ते डारन लागा ते नर परम अभागारे ॥ सोइ सोइ सब रैन गँवाई भोर भये नहिं जागारे ॥ शब्द पुकारत जागत नाहीं जनम जनमके सुतारे ॥ बांधे गरे रहटकीसी घडिया आवत जात विगूतारे ॥ पूरब जाऊँ तो राम बखाना पश्चिम अल्लाह मकानारे ॥ दोनों दिन खोजि हम देखे सतनाम मन मानारे ॥ देवल जाऊँ तो पत्थर पूजा तीरथ जाऊँ तो पानीरे ॥ आसपास परिक्रमा दीनी पत्थर न बोला बानीरे ॥ ओछी बुद्धि अगोचर बानी सो गति विरले जानीरे ॥ गुरुका सबद बसै जिस घरमें सोई सतब्रह्म ज्ञानीरे ॥ तुरक मसीत देहरा हिन्दू दो बिच राम खुदाईरे ॥ तहां मसीत देहरा नाहिं जहां अगम ठकुराईरे ॥ विन गुरु ज्ञान भरोसा किसका सरनो किसके रहियेरे ॥ कहैं कवीर एक तरवर फूला उपजी अनहद बानीरे ॥

कहरा ६-पंछी एक चौंच विन पगका विन पंख उडि आवैरे ॥ अलष अलेष लषै तन मनमें जोरे तनक हुइं जावैरे ॥ गगन मंडलमें उसका वासा अनहद नाद बजावैरे ॥ दुइकै बीच ब्रह्मका वासा सतगुरु होय लषावैरे ॥ मांको मारि बापको बांधै घरमें अगिन लगावैरे ॥ काम क्रोधका करै पियाला निरत सुरत ठह-रावैरे ॥ सलिल न्हाई देखि जमुना कौं भंवर फाकौं धावैरे ॥ नाभ कमलकौं समकरि राखै अठसठ चार मिलावैरे ॥ बंक

नालकौं गहि कर पकरै सुषमन सिखर चढावैरे ॥ घरके घेरि घेरि घरही में उलटि उलटि परचावैरे ॥ अनहद बाजै मधुर धुनि गाजैं आपा सब विसरावैरे ॥ परम हंस जहां केल करत हैं सत-गुरु सहज लषावैरे ॥ हुइ निहचंत चिंता सब तजिके सब अल-मस्त कहावैरे ॥ कहैं कवीर ज्ञान गुरगमसैं अटल हुआ लौला-वैरे ॥

कहरा ७–अगम अगोचर ऐसारे । मैं कहि बतलाऊँ कैसारे ॥ जो कहिये सो हइये नाहीं है सो कहा न जाईरे ॥ सैना बैना कासौं कहियै गूँगेका गुठ भाईरे ॥ दिष्ट न आवै मुष्ट न आवै बिनसैं होइ न न्यारारे ॥ ऐसा ग्यान कथौ गुर गरुए पंडित करौ विचारारे ॥ काजी हाथ कितेब न बांचै पंडित वेद पुरानारे ॥ वह तो अक्षर लिखा न जावै मात्रा लगै न कानारे ॥ कोई धावै निराकारको कोई धावै अकारारे ॥ वह तो सत दोउन तैं न्यारा जानै जाननहारारे ॥ समझा होइ सो सबद विचारै अचरज है अनजानारे ॥ समझ न परै ग्यान मतहीना आवागमन समा-नारे ॥ रागी वाणी पढना गुनना बहु चतुराई भीनारे ॥ उतपत परलै कबहुँ न आवै सो सत विरले चीन्हारे ॥ जिन चीन्हा सो लोक समाने अमरलोक निज सूझैरे ॥ कहैं कवीर नामको कहिरा महिरा होइ सो बूझैरे ॥

कहरा ८–ऐसा मंदिल रचा विनानी सो गत विरले जानीरे॥ अष्टधातका किया गिलावा दरज अनूठी ठानीरे ॥ दोनों खंभ दसौ दरवाजा चौका सचौक पुरायारे ॥ पाँचो करी पचीसौ की रचना ऐसा महल बनायारे ॥ दस दिगपाल देहके माहीं जिनकी दस दस नारीरे ॥ निस दिन केल करे घट भी इच्छा सकलर विचारीरे ॥ नौके परैं निरंतर शोभा तहां सरस इक छाजारे ॥

दिष्ट मुष्ट तैं अगम अगोचर ऐसा गढका राजारे ॥ कोट गियान सबद तहां उचरैं सुनौ सत परवानीरे ॥ कहैं कवीर बदर नहिं चीन्है बादकी करावे ग्यानीरे ॥

कहरा ९–संसा मेटि लगो गुरचरनौ सतनाम मुख बोलौरे ॥ या तरवर एक बसे पखेरु आ चुगत जुगन लिये डोलैरे ॥ यह पंछी कोई मोहि बतावै जो घट माहीं बोलैरे ॥ याकी संधि लखै जन कोई कौन ठमहिं बोलैरे ॥ आवै संझ उडि जाइ सवेरा गम न काहू देवैरे ॥ दरमत छांड अनंद घर छावै पंछी बसेरा लेवैरे ॥ दुइ फल चाखि नषर वह आगैं और नहिं दस दीसारे॥ कहै कवीर साध कोई जानै सतनामकी आशारे ॥

कहरा १०–सुनो संत इक निरगुन कहरा महरा होय सो बूझैरे ॥ तनसे न्यारा मनहुसे न्यारा देउ दिष्ट होइ सूझैरे ॥ विन नैनन जहां सब कछु दीखै बिन सरवन सुनै बानीरे। विना नाशिका वास सुवासा षट रस पावै ग्यानीरे ॥ विना जिभ्या जहां अमृत भोजन विन इंद्री संजोगारे। पांच पचीस जहां हैं नाहिंनहीं संजोग बिजोगारे ॥ रूप रेख विन निरगुन नामा सत गुरू लखावैरे। कहैं कवीर नामकी महिमा ग्यानी होय सो पावैरे ॥

कहरा ११–वा घरकौं कोई मोहि बतावो जा घरसैं ब्रह्म आयारे ॥ काया छांडि चले जब हंसा तब ब्रह्म कहां समायारे ॥ मैं मेरी ममताके काजैं बारहिंबार ठगायारे। समझ न परत ग्यान मति हीना फिरि फिरि भटका खायारे ॥ अब मेरी प्रीति नामसौं लागी उलटि निरंतर धायारे ॥ सहजै सुषुमनि पांउ पलौटे निज धर्नी अपनायारे ॥ नहीं जहां चंद्र नहीं जहां सूरा जहां जाइ मठ छायारे ॥ कहैं कवीर ग्यान धुनि मांहीं सहजैं सहज समायारे ॥

कहरा १२-जोरा जोर रचा जुग ऊपर संतौ करौ बिचारारे॥ एक ओर सुरनर मुनि ठाढे एक अकेली मायारे ॥ पारारिषको पानपटारी सिर ब्रह्मोको झाहींरे ॥ नाथ मछंदर पीठि दे भागे गोरख पैज सम्हारीरे ॥ नारद केरि निशान ठवाये हनमत हांक हकारीरे ॥ ऋषि से वनमें लूटे शंकर नेजा धारीरे ॥ वृन्दावनकी कुंज गलिनमें लूटे कुंज विहारीरे ॥ कहैं कवीर पाषरिया लूटे रइयत कौन विचारीरे ॥

कहरा १३-मन मतवारा नाम रस पीवै गगन मँडल गुन गावैरे। नाम सुधा रस भर भर पीवै सुषुमन सुरति मिलावैरे॥ ग्यान सुराही भरै कलवरिया छकि २ मोहि छकावैरे। साध संत मिलि पीवन लागै अनहद धुनि सुनि पावैरे ॥ सतगुरु दया बहु कीनी घट घट अलख लखावैरे। दास कवीर कहरा गावै महरा होय सो पावैरे ॥

कहरा १४-चुनरी हमारी पियनै सुधारी ओढैगी पिय की प्यारीरे। हूंठ पैंडकी बनी चुनरियां या चौपाट अपारीरे॥ बिनहीं ताना वनी है चुनिरिया बहु विधि रूप सम्हारीरे। चांद सूरज दोऊ अबलां लगाये जगमग जोति उज्यारीरे॥ पांच पचीस वाके पैबंद लागे ओढैगी री झनवारीरे। कहैं कवीर साधु भल सोई एक नाम व्रत धारीरे ॥

कहरा १५-गगन गुफामें पैठि क्यों न देखो जहां पुरुष इक ऐसारे। दिष्ट न मुष्ट न अगम अगोचर जाने जो तैसारे॥ तामैं हम सोई हम मांही पकरि देहुं क्या भैसारे। सतगुर सबद परष जब आवै परषन कौं क्या पैसारे॥ समझे सबद समझ घट आवै वह जैसेका तैसारे। कहैं कवीर सुनो तुम साधो है हम मैं हमहै सारे॥

कहरा १६-अबगत नगर बसौं भाई हंसा आवागवन मिटाईरे। काल अकाल जंजाल न व्यापे तिहि पुरवतन कराईरे॥ उदे नहिं अस्त दिवस नहीं रजनी पाप पुन्न नहीं होईरे। मोक्ष न मुकति जनम नहिं बंधन उपजे मरे न कोईरे॥ ब्रह्म सहर जहां निर आलम है अलष पुरुष किंधु होईरे। कहैं कवीर अमरपुर वासा इह सुख जाने सोईरे॥

कहरा १७-जिनके सुभाग भाग बड़ पियासौ सोई नारि सुहागिनरे। जो तूं पियकी आज्ञा माने कबहू न होत दुहागिनरे॥ जो पिय मारै पाऊँ न टारै सहई कठिन कसौटीरे। जो पिय मारै गहि झिझकारै पियके चरन पलोटैरे॥ उलटि घटा अनहद घहरानी बाजत अनहद तूरारे। सरग उडि कागदकी गुडिया सुरत डोर कर पूरारे॥ जो कबहुं छुटि जाई हाथसौं तौ सब होत बिगारारे। उर अन्तर निरबान पुरुष है पुहुप दीप उजियारारे। ताहि लखै कोई संत विवेकी सुषमन सुरति लगावैरे। दास कवीरका निरगुन कहि रामहि रम होई सो पावैरे॥

कहरा १८-पुरुष पुरातम वसै अपारा ताहीं सै नेह लगावौरे। पुदगल रूप दियो करतानै शील कंकन पहिरावौरे॥ भाउ भगतका करौ चोलना ग्यान भूत रमावौरे। या घट भीतर ब्रह्म विचारौ खोज अगमका पावौरे। शील संतोष ग्यान धुनि लागी अधिक नेह नहीं छूटैरे। जो कहूं छूटि परै भै माहीं पकरि जम तब लूटैरे॥ चांद सूरजकी बनी पलकिया चढि चलौ देश हमारारे। अमर लोक हंसनका बासा दरसै दरस अपारारे॥ अमृत फलका भोजन पावे हुइहै मगन दिवानारे। कहै कवीर नामको कहिरा बूझे संत सुजानारे॥

कहरा १९-तेरे तौ कारन मेरे मन मोहन ढूंढा देश विदेशारे।

सब फिरि आया कहूं न पाया किनी तपसी की भेसारे ॥ तीरथ वरत बहु विधि कीना धूप शीत तन गारारे । तेरे कारने मेरे मन मोहन पांचो इंद्री जारारे ॥ सरवन सुनले बिषकी बातें अब इमरत चितधारारे । नाहीं विषकी वास सुहाती अब सत सबद सुवासारे ॥ नैन विषै रस माते फिरते अब निज रूप निहारारे। जिभ्या षट रससे लुभानी अब तो नाम रस पीयारे ॥ पांचो इन्द्री विषै रस मानी लाज कान नहीं कायारे ॥ त्रिपति भई सब पांच पचीसौ घरही बैठे आयारे ॥ गुर गम नाम अमीरस प्याया पियत परमपद पायारे । दास कबीर सुषमना वासी गगन पयाना दीयारे ॥

कहरा २०–धागा टूटा गगन विनसि गया हंसा कहां समाई रे । इह अचरज मोहि निसि दिन व्यापै कोई न कहे समझाईरे॥ घर नाहीं घरन नाहीं धरावन हारा नाहीरे । इंगला पिंगला सुषमन नाहीं यह गुन कहाँ समाहीरे ॥ सबद अतीत रहै संग रमता यह गुन कहाँ समाईरे । टूटी जुरै जुरी फिरि टूटै जब तब होइ विनासारे । तबको साहिब अबको सब कहु काको बिसवासारे । सीषै सुनै कहै कहा होई जो नहिं पदहिं समानारे । कहैं कबीर गगन नहिं विनसै यौ धागा उन मानारे ॥

कहरा २१–सुनौं सियानी अकथ कहानी पिय अपनेका लेवो रे। जो धन तुमको पियने सौंपा सो धन बाद न पौवो रे॥ गहि मारै और धरि झिझकारै कैसे सहो कसौटी रे ॥ जो मारौ तौ पाउ न टारौं अबै सुरति लौ लाऊँरे॥ घरमै रहौं कै आँगन ठाढी सतसौं नेह न छांडौरे॥ कागद गुडिया सरग उडानी सुरति डोरि मति डांडौरे ॥ जो कबहुं छुटि जाइ हाथसौं तौ सुख नींद न सोवौरे॥ एक सतवंती पिय संग गवना रहत पियाके संगारे॥

एक सतवंती पिय संग जरई झरत न मोरै अंगा रे॥ पांच पचीस संगके रोवैं वह सुख मंगल गावै रे॥ पूरवको सूरज पछिम दिस ऊगे सतिया सत न छाँडे रे॥ बूढी बैस सुहागन सोहै बालम हाथ न आवै रे॥ दास कबीर पढै यह कहिरा महिरम होइ सो पावै रे॥

कहरा विलरी २२—विलरी विलोइ तंत मथ हंसा आगे करौ पयाना हो। झंडा रोपि गमन कर हंसा पावौ अगम निसाना हो॥ सूरजका द्वार उलटि गहु हंसा चंद लगन गहु बाटा हो। दुइ विलरी दुइ दिसा समनिया निरषै इक घाटा हो॥ इस विधि विलरी सधि चल हंसा सुरति कमलकी जोटा हो। बजर सीला जब उघरै हंसा निकसि जाइ सब षोटा हो॥ मध्य अकार धरमका आसन बाजन बजै अपारा हो। उठै धूम जहां तुरही बाजै नरसिंघा झनकारा हो॥ उठै तरंग जहां नौबत बाजै भांति भांतिके रागा हो। जहां बैठे हैं हंस वरन वरनके अति अनूप सब वागा हो॥ सात सुन्न पर सत्रह बाजा कँगुरा कँगुरा छाजा हो। जिहि सब करी पसारा चीन्ह चलौ हंसा राजा हो॥ आदि पुरुष जहाँ बैठे विदेही जगमगजोति अपारा हो। वामैं यह निज हंस उबारन धरि मन करहु विचारा हो॥ यही सबद तुम निज करि चीन्हौ उतरौ भौजल पारा हो। कहैं कवीर त्रिवाचा पालौ सांचा सबद अपारा हो॥

कहरा विलरी २३—सब संतन मिलि सुरति विचारी सतसैं प्रीति लगाई हो। अमृत गहिके अमृत सुधारे दुरमति दूर विहाई हो॥ चित्त चौका संतोष बैठका प्रीतिकी पातरि लावौ हो। ग्यानैं गारि छान पट गाढ़े भावको भात बनावौ हो॥ प्रेमकी खांड परोसौ हितकै ततको तंत मथावौ हो। लौकौं लेवौ जुगतकौं जैवो सब संतन मिल पावौ हो॥ मानकी कपटी दीन दही कर जोरो संग छगावौ हो। निहनो नोंन पीसकर लावौ तामैं तुरत मिलावौ हो॥

बिरहको बरा बनाइ जतन सौं पानी पूरन भिजावौ हो। हित करि इत हिये हिरदेसौं नीको बरा जिमावौ हो॥ वकनाल सूधा कर बौरी जिन इह बरा बनावो हो। भाव कर भेंटा शील कर सेमी पापर आवा लावो हो॥ याही तंतसैं हंसा आवे पहुचे लोक हमारो हो। कहैं कवीर सुनो तुम साधो यह निज तंत समारो हो॥

कहरा २४–अब नहीं तजौ भजौं नहीं कबहूँ जो था सो पहिचानैरे। करौ करम भरम गति पाई भरम बिझका फूटा रे॥ पाप पुन्नतैं रहौ निरंतर करनी संसै छूटा रे। थाके जतन गये छुटि बंधन विधि निषेध परिहरिया रे॥ उत्तम मध्यम कासौं कहियै तत अखंडित भरिया रे। चंचल अचल चलाचल थाके सुषमनि सुरति समानी रे॥ कहैं कवीर स्थिर पद दरसै मिटिगइ आवा जानीरे॥

कहरा २५–ना मैं धर्मी ना मैं अधर्मी ना मैं कामी अकामीरे॥ ना मैं श्रोता ना मैं वकता ना मैं सेवक स्वामीरे॥ ना मैं गुपता ना मैं मुकता ना निरबंधी सरबंगीरे। ना हम काहुते न्यारे रहते ना काहूके संगीरे॥ ना हम सुरग लोकको जाते ना हम नरक सिधारें रे॥ सबै करम हमहीने कीने हम करमनतैं न्यारेरे॥ इह विवेक कोई विरला बूझै जो सतगुरुको भेटैरे। मत कवीर काहूको थापै मत काहूको मेटैरे॥

कहरा २६–दिष्ट परैसो मायारे दिष्ट परै सो मायारे॥ वह तो अचल अलेष एक है दिव्य दिष्टि मैं आयारे॥ सतगुरू दियो लखाई आपमें है माही सत सोईरे। दूजो किरतम थापि लियौ है मुकति कहांते होईरे॥ काया पराई त्रिगुन ततकी विनसि जाई छिन माहीरे। निरगुन ब्रह्म लखौ घट अंतर जो विनसनमें नाहींरे॥ ऐसे सदा देहगति सबकी महरम कोई उचारैरे। आपही होइ न्यायी करि न्यारो इहि विधि माया विचारैरे॥

सहजै रहै समाइ सब रूपैना कहूं जाइ न आवैरे। धरे न ध्यान करे नहिं जप तप राम रहीम न गावैरे॥ तीरथ वरत दोऊ फल त्यागे सुन्न दौरि नहीं धावैरे। यह संसै जब समझ परैगी पूजै काहि पूजावैरे॥ जोग जुगतिसौं करम न छूटे जो पै आपा आपन सूझैरे॥ कहैं कवीर ते जन गरुये जे कोइ समझै बूझैरे॥

कहरा २७-मनषा जनम सुधारो संतो धोखै कहा विगावोरे॥ गुड गुडीका ख्याल छांडि देहु आतम तत लौ लावौरे। जब लग घटमें परचै नाहीं तब लग कछू न पावौरे॥ नेम वरत और जप तप संजम यह करनी मति भूलौरे॥ करम फन्द जुग जुग गल पहिरै फिरि फिरि जोनी झूलौरे॥ ना कुछ नहाये ना कुछ धोये ना कछु घंट बजायैरे। ना कुछ नेती ना कुछ धोती ना कछु नाचे गायेरे॥ से लीन सिंगी जटुआ न बटुआ आप स्वांग से न्यारारे। कहैं कवीर मुकति तब पावौ गहौ जु सबद हमारारे॥

कहरा २८-वंझा एक सुपनमें सूती पूत जना अति लोनारे॥ बहुतक दान दिये विपरनकौं बहु रूपा बहु सोनारे॥ फिरि सुपनेमें सुपना देखा व्याहि पूत घर आनारे। आवत ही मरिगया पूत हूआ रोवन पीटन ठारीरे॥ यह संसार सुपनसम देखा कहैं कवीर विचारीरे॥

कहरा २९-अरे मन महरा करहु सिताबी बिलम किये भल नाहीरे। एक नवरिया पांच खिवटिया धरमराइको साहीपीरे॥ पहिली धारा वेद कितेबा हिंदू तुरक मिलि धाईरे। दूजी धारा काम किरोधा ओहीमें बहि जाईरे॥ तीसरी धारा कर्मकी फांसी जाइ लगा संसारा रे। चौथी धारा नौ औतारा राम किसन गुनवारारे॥ पचवीं धारा जोतिसरूपा हिंदू तुरुक मिलि धायारे॥

घटवरिया मोहि जान न देसी घाटहीमें लेख चुकायारे ॥ कहैं कवीर मेरा साध विवेकीषी धारासे रहा हुइ न्यारारे ॥

कहरा ३०–वा घरकी कोइ मोहि बतावौ जा घरसैं ब्रह्म आयारे ॥ काया छांडि चले तब हंसा तब ब्रह्म कहां समायारे ॥ ब्रह्मा विष्णु महेश न होते आदि न होती मायारे । रज वीरज दोनौं नहीं होते तब ब्रह्म कहां रहायारे ॥ पवन पानी मिलि दही जमाया अगिनिका जामन दीयारे । चंद सूरज दोनों करत षवासी घोर मथन घृत कीयारे ॥ मैं मेरी ममताके कारन बारहीं बार ठगायारे । अजहुं समझि ग्यान मति हीना फिरि फिरि भटका खायारे ॥ सुरति सुहागिन चरन पलोंटे धनी आपना पायारे ॥ जिनकी सुरति लगी सत सबदे उलटि निरंतर धायारे ॥ चांदौ सूरज दिवस नहीं रजनी जहां सुरति लौलायारे॥ कहैं कवीर ग्यान धुनि उपजी सहजे सबद समायारे ॥

कहरा ३१–आपही आप इच्छना धारी इच्छा बेल पसारीरे॥ आप अपारू इच्छा धारू बहु विधि रूप सम्हारीरे ॥ इच्छा मांहि बीज त्रिस्तारा मूल पत्र औ डालीरे । पेड और डाल फूल फल सबही वा माहीं है सारीरे ॥ चौसठ चौक पूर जब करकै ले आपुन आप माहीरे। कहैं कवीर यहएकम एका और दूसरा नाहीरे॥

कहरा ३२–अविगत अगम अपार अशेषा रूप वरन नहीं भेषारे दिष्ट न मुष्ट लषा नहीं जाई न काहुन पेषारे ॥ वाकी महिमा कहांलौ वरनौ मो पै वरनि न जाईरे ॥ ऐसा अलष लषै नहिं कोई ना काहू दिया दिखाईरे ॥ अपरमपार अपार अखंडा घटमें रहा समाईरे ॥ जिन कछु खोज पिंडका कीया सैनहि सैन बताईरे ॥ ब्रह्मंड नौ षंडपिंड मांहि पूरि रहा गुर पूरारे॥ कहैं कवीर गगन धुनि माहीं बाजत अनहद तूरारे ॥

कहरा ३३-तन धरि सुषिया कोई न देखा जो देखा सो दुखियारे ॥ ऊगन आथनकी बात कहत हौ सबका किया विवेषारे ॥ ब्रह्मा विष्णु महादेव दुखिया जिन यह राह चलाईरे ॥ सुखदेव आचारी दुखके कारन गरभहि माहि छपाईरे ॥ राजा दुषिया रानी दुषिया एक दुषी धनहीनारे ॥ जोगि दुखी और जंगम दुखिया कपटीको दुख दूनारे ॥ आशा तृष्ना सब घट व्यापै कोइ महल नहीं सूनारे ॥ घाट वाट तो सब जग दुखिया क्या गेही पढगीतारे ॥ कहे कवीर यह सब जग दुखिया कोई संत सुखी मन जीतारे ॥

कहरा ३४-सतगुरु आइ करी निज दाया अब हम आया चीन्हारे ॥ निज बुध रूप पिरापत नितही अचरज सहीजु कीन्हारे ॥ ना हम मनुष देवता नाहीं ना गेही वन षंडीरे ॥ ब्राह्मन छत्री वैसहू नाहीं ना हम सूदर डंडीरे ॥ ना हम जोगी ना हस जंगम ना हम तपी सन्यासी रे ॥ ना वैरागी ना ब्रह्मचारी ना हम जपी उदासीरे ॥ ना हम ज्ञानी चतुर न मूरख ना पंडित न पोथीरे ॥ ना हम शायर ना मरजीवा ना हम सीप न मोतीरे॥ ना हम गगन सुन्न भी नाही ना हम तेज न पानीरे ॥ मन बुधि चित अहंकार भी नाहीं ना हम वेद न वानीरे ॥ ना हम अमर मरै नहिं कबहूँ हम कवीर ज्योंका त्यौंहीरे ॥ व्यास कपिल और वामदेव ऋषि सबकी अनुभव यौंहीरे ॥

कहरा ३५-ग्यान विचारन ग्यान विचारन ग्यान विचारन जोगीरे ॥ रहै उदास सबसै सबहुनमें सुषमनि सुरति संजोगीरे॥ जैसे कमल रहै जल भीतर जलसे रहत निनारारे ॥ ऐसे साधु रहै जगमाहीं परम तत्व निखारारे ॥ जैसे धाइ बालको पोषै अपनो जानत नाहीरे । करम करै करता न कहावै यौं साधु जग

माँहीरे ॥ उदै भयो तिमर सब खोया अंधकार सब नासारे । कहै कबीर विचार अभै पद निहतत निजवासारे ॥

कहरा ३६–हम तो भरम बिसारि डारिकै एक एक करि जानारे । दूजा कहै गहीकै दूजा जिन नाहीं पहिचानारे ॥ एकै पवन पावक औ पानी और पानी एकै जुत संसारारे ॥ एक खाख गढे बहु भांडे एकै सिरजन हारारे ॥ जैसा बढई काठे काटै अगिनि न काटै कोईरे ॥ ऐसे व्यापि रह्यो अभिअंतर धरैं सरूपा सोईरे ॥ माया मोहकरि जगत भुलाना अर्थ देखि पतियाना रे ॥ होइ निरशंक कछू नहीं व्यापै कहैं कबीर गियानारे ॥

गौरी प्रारम्भ ।

गौरी १–संतो मन चीन्हो रे भाई । मन चिन्हे विना परलैतर जैहो जीवको जमले जाई ॥ टे० ॥ मन चिन्हे ते हंस हमारा । तजै खलककी आस ॥ छूटै पिंड काल नहिं पावै । पावे मुक्ति निवास ॥ मूल लेखामें जीव जो आवे । दुविधा दूर बहाइ ॥ पुरुष नामको सुमिरन करिकै । अगर डोरि चढि जाइ ॥ निशि दिन सुरति करै साहिबसों । सबद हेत लिय बोले ॥ कहैं कबीर सुनो भाई संतो । सो जीव कबहूँ न डोले ॥

गौरी २–जा दिन मन पंछी उडि जैहै । तेरो नाम न कोई लैहै ॥ ॥टेक॥ सूखै ताल नीरकैं निबडै सूखे कमल कुंमलैहै ॥ सूखे पुरइन सरकी शोभा । जित तित धूर उडैहै ॥ जब लग तेल दीप में बाती । दिष्ट पडे सब कोई ॥ निपटै तेल बीत गइ बाती । जग अंधियारा होई ॥ जा प्रीतमसो प्रीति करत हैं । ताहीको अंग डरिहै ॥ दूर करों मंदिरसों बाहिर । प्रेत भया धरिखैहै ॥

दिन दोय चार नाम भजि लेहू। काल अचानक खैहै॥ कहैं कबीर जगतका वासी। निकस पयाना दैहै॥

गौरी ३-मन रे जागत रहिये भाई। गाफल होय वस्तु मत खोवै॥ चोर मुसै घर जाई॥ टे०॥ षट्‌ चक्रकी कनक कोठरी वस्तु भाव है सोई॥ ताला कुंजी कुलफ कर लागै उघड़त बार न होई॥ पांच पहरवा सोय गया है वस्ती जगवा जागी॥ जरा मरन व्यापै कछु नाहिं गगन मंडल लव लागी॥ कर विचार मन ही मन उपजी ना कहुँ गया न आया॥ कहै कबीर संशय जब छूटे नाम रतन धन पाया॥

गौरी ४-डग मग छाडि दे मन बौरा॥ अबतो जरै बिन आवै लीन्हो हाथ सिधोंरा॥ टे०॥ पहिर जंजीर पैठि रन भीतर जूझ मरै नहीं भागे॥ जन्म मरनकी आशा छोड़े सो पग धारे आगे॥ होय निःशंक मग्न होय नाचो लोभ मोह भरम छाडो॥ सूर कहां मरन सो डरपै सती न सांचौ मांडौ॥ अग्नि जरै सो सती न कहावे जूझ मरै नहीं सूरा॥ ब्रह्म अग्निमें यह तन होमैं सो पद पावे पूरा॥ लोक लाज कुलकी मरजादा येही गलेमें फांसी॥ आगे होय पग पीछे धरि हैं होय जगतमें हांसी॥ ये संसार सकल जग मैला नाम भजे ते सूचा॥ कहैं कबीर हरि भक्ति न छांडो गिरत परत चढि उंचा॥

गौरी ५-नट होय नाच रे मन मेरा जो रीझै साहिब तेरा॥ टेक॥ ज्ञानको ढोल बजाय रैन दिन शब्द सुनै सब कोई॥ राह केत गह जब कोपै जम घर बंधन होई॥ द्वादश तिलक बनाये बांस चढि जग तजि होय रहो न्यारा॥ सहस कला होय नाचे मन मोरा रीझेगा साहेब प्यारा॥ जो रीझै जगदीश जगतगुरु देगा दान बुलाई॥ भरी सभामें चोला बकसे फाटि कबू नहिं

जाई ॥ जो तू कूदि जाये भवसागर कला बता दूँगा तेरी ॥ कहैं कवीर सत व्रत साधो, नव निधि होय रहै चेरी ॥

गौरी ६–जगमें काहु न मन वश कीन्हा। भारत खंडमें भरतसे ग्यानी मृग सुत मन हर लीन्हा ॥ टे० ॥ शृंगी ऋषि सो वनमें रहते, विषय विकार न जाने ॥ पठई नारि भूप दसरथने, पकडि अजोध्या आने ॥ सूखे पत्र पवन भखि रहते पाराशरसे ज्ञानी ॥ भरमैं रूप देखिकै गनिकाको काम कंदला वानी ॥ जमदग्निकी नारि रेनुका, गयी यमुना जल लेने ॥ भरमि देखि भूपको मन्दिर, थकित भये दो नैने ॥ सोई सुरपति जाके नारी सुचीसी, निश दिनही संग राखी ॥ गौतम घर काम निहोर वसि, निगम कहत है साखी ॥ पार्वतीसी पत्नी जाके, ताके मन क्यों डोले ॥ खलित भये छबि देखि मोहिनी, हाहा कह कह बोले ॥ येक ही नाल कमल हित ब्रह्मा, जग उपराज कहावैं ॥ कहैं कवीर एक मन जीते विना, जीव विसराम न पावे ॥

गौरी ७–मनसा बिन दौडे न रहैरे। जो मैं राखों जग जुगति सो, छिन छिन मोहि दहैरे ॥ टे० ॥ यह गयंद पांचों मद मातै, आँकुशको न सहैरे ॥ नाम सुने रंग राते नाहीं, विषकी वेल गहैरे ॥ समझत नाहिं मूढ मारगको, उबट राह बहैरे ॥ अरध मास भादोंकी नदिया, वे मरजाद बहैरे ॥ सीखे सुने गावे बहु तेरे, कोइ यक राह न रहैरे ॥ कहैं कवीर यह भगत दुहेली, विरला जन निबहैरे ॥

गौरी ८–मन तू थकत थकत थकि जाइ। विन थाके तेरा काज ना सरिहै, फिर पाछे पछिताई ॥ टे० ॥ जब लग तू सरजीव रहत है, तब लग परदा भाई ॥ टूटि जाये ओट तिनकाकी, जो मन शिखर दह जाई ॥ सकल तेज तजि होय नपुंसक, या मति

सुनि तू मेरी ॥ जीवन मृतक दशा विचारे, पावै वस्तु घनेरी ॥ याके परे और कछु नाहिं, यह मत सबसूँ पूरा ॥ कहै कवीर मारि मन मैंगल, होय रहै जस धूरा ॥

गौरी ९-मन तू चेतन होरे भाई। जाते काल फांस मिटि जाई ॥ टे० ॥ घटमें सिन्धु सिन्धुमें जल है। तामें कमल विराजे ॥ तामें जोति प्रगट परमेश्वर। सिखर घरावर बाजैं ॥ रवि शशि और सकल तारायन। गंगा जमुना दो धारा ॥ तामें जोति वरे पावककी। त्रिभुवन भया उजियारा ॥ सात अरु पांच चतुर्दश तामें और बहत्तर थाना। ज्ञानी गुनी जानि जिव अपना। घटमें सिंधु समाना ॥ तैंतीस तीन चार ताहि खोजैं। शंकर पार न पावै॥ कहैं कवीर बलि बलि सतगुरुकी। घटही माहिं लखावै॥

गौरी १०-मन तू पार उतरि कहां जैहै। आगे पंथी पंथ न कोई, कुछ मुकाम न पैहै॥टेक॥ नहिं तहां नीर नाव नहीं खेवट, ना गुन खैंचनहारा ॥ धरनि गगन कलप कछु नाहिं, ना कछु वार न पारा ॥ नहिं तन नहिं मन नहिं अपनपौ, सुन्यमें सुधि न पैहै॥ विलैमान होय जाय फूटि घट, याहू ठौर विन होयहो॥ बार बार विचार देखि मन, अन्त कहूँ नहिं जैहो ॥ कहैं कवीर सब छाँड़ि कल्पना, ज्योंका त्यों ठहरैहो ॥

गौरी ११-या मनको खोजोरे भाई। तन छूटै मन कहां समाई॥ टे० ॥ शिव विरंचि नारद मुनि ज्ञानी। मनकी गति उन्हुँ नहिं जानी ॥ ध्रुव प्रहलाद विभीषन शेषा। तन भीतर मन उन्हुँ न देषा ॥ सनक सनंदन जय देव नामा। भक्ति करि मन उन्हु न जाना॥ या मनका कोइ लहै न भेव। रंचक लीन भया सुखदेव॥ गोरख भरथरी गोपीचंदा। या मनसौं मिलि करै अनंदा॥ एकलि निरञ्जन सकल शरीरा। या मनसौं मिलि रहा कवीरा॥

गौरी १२–है कोई भूला मन समझावे। यह मन चंचल चोर पाहरू छूटा हाथ न आवे॥टे०॥ जोड़ि जोड़ि धन औंडे गाडे, जहां कोई लेन न पावे॥ कंठ कपोल आनि जम घेरै, दे दे सैन बतावे॥ खोटा दाम गांठि लिय डोलै, बडी बडी वस्तु भुलावै॥ बोवै बबूल दाख फल चाहै, सो फल कैसे पावे॥ गुरूकी दया साधुकी संगति, ये दोउ मति विसरावे॥ कहैं कवीर सुनो भाई साधो, बहुरि न भौजल आवै॥

गौरी १३–मन तू क्यों भूला रे भाई, तेरी सुधि बुधि कहां हेराई॥ टे०॥ जैसे पंछी रैन वसेरा, बसे वृच्छ में आई॥ भोर भये सब आप आपको, जहां तहां उठि जाई॥ सुप्नामें तोहि राज मिल्यो तहाँ है, हाकिम हुकुम दुहाई॥ जागि पड्यो जब लावन लसकर, पलक खुले सुधि आई॥ मात पिता सुत बंधु तिरिया, नाती सगो सगाई॥ यह तो सब स्वारथके संगी, झूठी लोक बडाई॥ सागर माहिं लहरि उठत है, गिनती गिनी न जाई॥ कहैं कवीर सुनो भाई साधो, दरिया लहरि समाई॥

गौरी १४–मनुवा नाहिं मानत मोरा। बार बार मैं कह समझायो, जगमें जीवन थोडा॥ टे०॥ या कायाका गर्व न कीजे क्या श्यामल क्या गोरा॥ भजन विना तन काम न आवे, कोटि सुगन्ध चढ़ोरा॥ या माया जनि देखत भूलो, क्या हस्ती क्या घोडा॥ जोडि जोडि धन बहुत विगूचै, कोटिक लाख करोड़ा॥ उवध्या उरमति और चतुराई, जन्म गमायो बौरा॥ लेत उपाय गिरत भव परियो, जैसे बालक भौंरा॥ अजहुं आय करो सत्संगति, हरि भजि मानि निहोरा॥ कहैं कवीर मन चितराखो, ज्यों रे सुई बिच डोरा॥

गौरी १५–मन तू मानत क्यों न मना रे। कौन कहनको कौन सुननको, दूजा कौन जना रे॥ टे०॥ दर्पनमें प्रतिबिंब जु भासे, आप चहुँ दिशि सोई। धोखा मेटि एक जब होवे, जो लखि पावे कोई॥ जैसे जलते हेम बंधत है, हेम घूम जल सोई॥ तैसे या तत वा तत सो, फेरि यह अरु वह सोई॥ जे समझे ते खरी कठिन है, ना समझे तो खोटी॥ कहैं कबीर दो उपाधि त्यागे, ताकी मति है मोटी॥

गौरी १६–साधो भाई आतम सत प्रगासा। ज्यों सूरजमें नहीं अंधेरी, ऐसे सत्य उजासा॥ टेक॥ ज्ञान स्वरूप महा अति सूच्छम, करन कहै विज्ञाना॥ अंधाको सूरज नहिं सूझे, भूल्यो सकल जहाना॥ बदलीमें सूरज जिमि छिप जाई, माया ब्रह्म लुकाना॥ ऐसे आतम सत प्रकाशा विरले साधू जाना॥ आपहिं एक अनंत पुनि आपही, नरक स्वर्ग तहां नाहीं॥ कौन तरे कौन काको तारे, भूलि रह्यो बाहिर माहीं॥ करता काल कर्म नहिं माया, आपही है सब जागा॥ जन्म मरन नाहिं कछु धोखा, आप चीन्ह भ्रम भागा॥ बिन चीन्हे कौनसो कहिये, दुतिया होये बताऊँ॥ जाकी वस्तु गई सो ढूंढे, गई नहिं क्या पाऊँ॥ आदि अनादि पार के पारा, वार पार सब एका॥ कहैं कबीर बूझिये भाई, साधू करै विवेका॥

गौरी १७–जब ते आत्म तत्त्व विचारा। तब निर्वैर भया सबहीते, काम क्रोध गहि डारा॥ टेक॥ सबमें आपमें आपमें सबहीं, आप आपमें मेला। नाना भांति घड़े बहु भांजन, रूप धरे धरि खेला॥ पूरन ब्रह्म सकल घट कहिये, को पंडित को जोगी। राजा रंक कौनसों कहिये, कौन वैद कौन रोगी॥ चारूं दिशा

ढूँढि हम आये, निरगुन कोइ न बतावे । कहैं कबीर कोई दास निज निर्गुनी, और सब लीला गावे ॥

गौरी १८-आपन पौ आपनहींमें पायो । शब्दही शब्द भयो उजियारा, सतगुरु भेद बतायो॥टेक॥ जैसे सुंदरी सुत लै सुती, स्वप्ने गयो हेराय ॥ जाग परी पलंगपै पायो, ना कहुँ गयो ना आय॥ जैसे कुँवरि कंठ मनि हीरा, आभूषन विसरायो॥ संगकी सखी मिलि भेद बतायो, जिवको भरम मिटायो ॥ जैसे मृग नाभि कस्तूरी, ढूँढत बन बन धायो । नासा स्वाद भयो जब वाके, उलटि निरंतर आयो॥ कहा कहूँ वा सुखकी महिमा, ज्यों गुंगैं गुड खायो। कहै कबीर सुनो भाई साधो, ज्योंका त्यों ठहरायो॥

गौरी १९-राम विना कछु नाहिं साधो, राम विना कछु नाहिं॥ रामहिं आगे रामहि पीछे, रामहिं बोले माहिं॥टे०॥ उत्तर राम दक्षिन राम, पूरब राम पश्चिम रामा ॥ स्वर्ग पताल महीतल रामा, राम सकल विसरामा ॥ ऊठत राम बैठत राम, जागत सोवत रामा ॥ राम विना कछु और न दरसे, सकल राम के कामा ॥ सब चराचर सम्पूरन रामा, निरखो शब्द सनेहि ॥ कायम सदा कदेहुँ नहिं विनासे, बोलन हारा एहि॥ एक रामको भजे निरंतर, येक राम मिलि गावे ॥ कहें कबीर रामके परसे, आपा ठौर न पावे ॥

गौरी २०-आये राम भतारा, हम घर आये राम भतारा। दुलहिन गावो मंगल चारा ॥ टे० ॥ तन रति करहु मन रति करिहु पांचों तत्त्व बराती । राम हमारे पाहुन आये हम जोबन मद माती ॥ शरीर सरोवर वेदी रचिहुँ ब्रह्मा वेद उचारा । राम देव संग भावर फिरहुं धनि बड़ भाग हमारा ॥ सुर तेंतीसों

कौतुक आये मुनि जन कोटि अठासी। कहै कवीर हम व्याह चले हैं पुरुष एक अविनाशी ॥

गौरी २१–आनन्दके घर पायो, अब हम आनंद घर पायो। जबते दया भई सतगुरुकी, अभय निशान बजायो ॥ टेक ॥ काम क्रोधकी गागरि फूटी, ममता मोह बहायो ॥ तजि प्रपंच विविध बिधि किया, चरन कमल चित लायो॥ प्रेम प्रीति किया तन गुदडी, सुरतिको टोप बनायो ॥ हद घर छाडि वेहद घर आसन, गगन मंडल मठ छायो॥ चंद न सूर दिवस नहिं रजनी, जहां जाय लाड-लड़ालाहायो॥ कहै कवीर कोइ पियाकी प्यारी, पिया पिया रट लायो ॥

गौरी २२–बात लगे मोहि नीकी प्यारी, तेरी बात लगे मो नीकी। जो कोई कोटि भांति समुझावे, सबही लगे मोहि फीकी॥ टेक ॥ जलको मीन पलंग ले राख्यो, ले अमृत जल सींची। तलफ तलफ तजत पलंगपै, सुधि बुधि विसरचो जिवकी ॥ स्वातीको स्वाद पपीहा जाने, को जाने वाके जिवकी॥ पियाको मरम सोइ भल जाने, जाके चोट विरहकी ॥ हीराकी परख जौहरी जाने, चोट सहै सिर घनकी ॥ कहैं कवीर जहँ प्रेम वसतु है, छिपी न रहै वा जनकी ॥

गौरी २३–संतो बोलनहारा राम रजा। पिंड ब्रह्मांड रहे भर पूरा, आप अकेला बांधि धजा॥टेक॥ जैसे बुंद परी जल माही, जलहीते बुद बुद उपजा ॥ मिट गया बुद बुद जलही समाना, होय गया एक सरूप सजा ॥ कोटिक कुम्भ भरै जल झलके, तामें दीसे चंद सजा ॥ विनशै कुम्भ चंद नहिं विनशै, शब्द स्वरूपी अमर अजा ॥ जामें हम सोई हम माहीं, मैं ते ते मैं

गगन गजा ॥ कहैं कबीर कछु संशय नाहिं, तत्त्व लखा जब भ्रम भजा ॥

गौरी २४-संतो भाई हरिसा हीरा लाधा, देखत ही मन मगन भयो है, गिन गिन गांठी बांधा ॥ टेक ॥ पल पल परखों छिन छिन निरखों, राखूं छांनै छांनै ॥ भेद काहुपै मानू नाहिं, परयो रंककै पानै ॥ तोल न मोल अमोलक कहिये, फोरेहु नहिं फूटै॥ कहैं कबीर यह खुल गइ गठरी, खोले नहिं खूटे ॥

गौरी २५-जप जप अजपा जाप भला । सुरति न विसरूं एक पला ॥ टे० ॥ येही राह वहै सतगुरुकी, पंछी मारग मीन चला ॥ हंसा मारग सोध चले हैं, जा खोजत जम मान दला ॥ सतलोक सतगुरूका आसन, सुरति निरतिकी बांधि कला ॥ अगम डोरि नगरीके निरंतर, मकर तार तहां सोधि चला ॥ भया सुचेत सुरति लव लागी, कहैं कबीर जब होय भला ॥ सतगुरू शब्द विलोय कह्यो है, मन छाडै जब नाम मिला ॥

गौरी २६- साधो भाई नाम ध्वजा फहराई। लोक वेदकी चाल मिटाई, सो निज देखो आई॥टे०॥ कहा पढै पंडित वेद पुराना, भेद न हिरदे समाई॥ खसम छोडि भयी बिबचारिनी, बातें करत बनाई ॥ वेद पढै पुनि भेद न पावे, फिर फिर भटका खाई ॥ कोइ कोइ संत विवेकी विरला, रहै राम लव लाई॥ नाम प्रताप सदा सिर ऊपर, दरशन पाय नसाई ॥ जाको काल सदा सिर नावे, दूरि दूरि होय जाई ॥ कहूँ कहा कछु कहत न आवै, सब घट रह्यो समाई॥ नाम प्रतीति भई जा जनको कहैं कबीर समझाई॥

गौरी २७-गुनका भेद न्यारा न्यारा, जानगो जानन हारा ॥ टे० ॥ सोई राज राजकुल मंडन, जाके मस्तक मोती ॥ और सकल ये भार लदनियां मैहका सुतके गोती॥ सोइ भुवंग जाके मस्तक

मणि हैं, जोति उजारै खेले॥ और सकल स्रावनका कीडा, जगत पावतरि पेलै॥ सोई सुमेर जो उदय उजागर, जामें धातु निवासा॥ और सकल पाषान बराबर, टांकी अग्नि प्रकासा॥ सोई पतिव्रता पियाव्रत साधे, आज्ञा कानि न लौपे॥ और सकल ये स्वान सूकरी, सुंदर नाम न ओपे॥ कहैं कबीर सोई जन गरुवा, नाम भजन अधिकारी।और सकल साहिबको बाना, देख्यो तत्त्व विचारी॥

गौरी २८-देखे एक सतगुरु संत सिपाई। प्रेम प्रीतिका पटा लिखाया, अभय जगीरी पाई॥ टे०॥ सुरति सिगड़ी साज समझको, तनकी तुबक बनायी॥ दारू दम सहजका सीसा, ज्ञानको गज ठहकायी। शील सोपता प्रेमकी पथरी, चित चकमक चमकाई। जुगति जाम बुधिका मंदिरा, प्रीति पियाले पाई॥ सतनामका उठत पलीता, हरि ही होत हवाई॥ गम गोला गढ भीतर लागा, भरमकी बुरज ढहाई॥ सतसमसेर जुगति जम धर, छमाकी ढाल बनाई॥ मोह मोरचा पहले तोडा, माया भाग नशाई॥ मन मेंवासी गठपतिराजा, जाकी फिरत दुहाई॥ शब्द स्वरूप सदा सिर ऊपर, सुरति सुरंग लगाई॥ अकल गरीबी दावा दीना, लिया विवेक गढ आई॥ संत सूरमा गढ मेरा डाका, पकडे गढके रोई॥ पकडै स्वान जान नहिं पावे, पकडी ममता बाई॥ साहिब कबीर चढै गढ ऊपर, जीति निशान बजाई॥

गौरी २९-पूछे कोई संत सुजान सन्देसा। सतगुरु दियो उपदेश सबनको, चलो अपने देसा॥ टे०॥ अगम संदेश अगोचर महिमा, नहिं जहां रूप निशानी॥ जीवन ब्रह्म सुरति नहिं मन गति, ऐसा पद निरवानी॥ या नगरी कोई रहन न

पावे, भय चिंता दुख खानी ॥ सुन्दर रूप देखि मत भूलो, छिनमें जात विलानी ॥ अब एक शब्द हमार सुनिये, निरखि परखि दिल दीजै ॥ सून्यके मिले सून्य होय जैहो, अजर अमर तहां जीजै ॥ जो कछु तुम्ह तुम बिन कछु नाहिं, सरजीव जमा संभारो ॥ कहैं कबीर एक हम तुमहिं, घट घट रूप निहारो ॥

गौरी ३०-मिलो प्यारे संत सुजान सनेही । बहु दिन बीते तुम बिछुडे को, चेतो बेरिया एही ॥ टे० ॥ या अवसर जीव जमा संभालो, दुरलभ मनुखा देही ॥ अबही समझि रहो घट भीतर, जन्म सुफल कर लेही ॥ निरखो शब्द सदा सुखदाई, जुग जुग हम गोहराई ॥ दया सरूप रहो नितसंगही, अन्त कहूँ नहिं जाई ॥ खोलो दिष्टि उघाडौ निर्मल, चीन्हो वचन हमारा । कहैं कबीर सुखसागर तजिकै, कहा मन लग्यो तुम्हारा॥

गौरी ३१-सौदा राम निरंतर भाई ॥ टेक ॥ ज्ञानका गोन सुरति बनजारा, लौकी लार लगाई ॥ गमका बैल वालदी मनवा, हरि भजि हा हा हाई ॥ मनसा तोडि मोल करि महंगा, हित करि वेच विचाई ॥ जन जन सेती साटन करिये, गाहक लेगा आई ॥ पूरी .... बनिकै उतरि, शंका रही न काई ॥ कहैं कबीर सुनौ भाई साधो, सतगुरुकी शरनाई ॥

गौरी ३२-अवसर बहुत भलोरे भाई, मनुषा देह देवनकौ दुरलभ, सोई देह तैं पाई ॥ टेक ॥ तजि अभिमान झूठ प्रपंच-को, छाडु गुमान बडाई । मात-पिता स्वारथके संगी, माया जाल बंधाई ॥ जब लग जरा रोग नहिं तेरे, ले गुरु ग्यान भलाई ॥ साधु संगति मिलि भजु सतगुरुको, सोई सकल सुख-दाई ॥ कहूं पुकारि चेत नर अंधा, यह तन आन गवाँई । कहैं कबीर देही कांचको कूप, विनशत बार न लाई ॥

गौरी ३३–बन्दे नाम साहेबको लेरे। नाम विना तेरो काज न सरिहै फिर पीछे पछतैहै रे ॥ टेक ॥ एक लख पुत्र सवा लख नाती, संपति थिर न रहै रे ॥ लंकासे कोट विनसि गये, छिनमें ऐसी ब्यार वहै रे ॥ नदी नाव संजोग बनो है, ऐसे मिलना हैरे। ना कोइ तेरा ना तू काहूका, पैडे खलक बहैरे ॥ ये तो सब स्वारथके गरजी, गुरू बिन सुख न लहैरे ॥ छनिक माहिं तन विनसि जायगा फिर कछु कर न सकैरे ॥ ताते बेगि सम्हार अपनपौ, सत कवीर सत्य कहैरे ॥

गौरी ३४–जिवरा तू जायगो मैं जानी। आवेगी कोई लहर लोभकी, बूडेगो बिन पानी ॥ टेक ॥ राजकरंते राजा जायगा, सेज संजती रानी। बेद पठनले पंडित जायगा, कथा सुननते ज्ञानी ॥ जोग करन्ते जोगी जायगा और जायगा अभिमानी। कहैं कवीर सत् भगति न जायगी, आदि अन्त ठहरानी ॥

गौरी ३५–अब तो ऐसेही बनि आई। भावे कोई निंदो भावे कोई वन्दो, छोड़ी लोक बडाई ॥ टेक ॥ कुलसे निकसि भई जब गनिका, बहुरि न कुलै समाई ॥ केहारे कोटि करै जु लंघन, भूखा घास न खाई ॥ भव सागर तरबेके कारन, नामकी नाव बनाई। हलके हलके पार उतरि गये, बूडे मान बडाई ॥ जैसे मृग नाद धुनि सुनिकै, प्रान तजत है आई। जैसे मीन मरै विन नीरा, जल विनु रह्यो न जाई ॥ परगयी छाप भक्ति अनुभवकी, उर अंतर लपटाई ॥ दास कवीर डिगै नहिं कबहूं, वाढी अमिट सगाई ॥

गौरी ३६–धोखा सबको मारे साधो, धोखा सबको मारे ॥ ऐसो है कोई संत विवेकी निरमल ज्ञान विचारे ॥ टेक ॥ कोई खोजै शिव सकतीको कोई खोजै काया ॥ कोई खोजै सून्य

मंडलको, ऐसे जग भरमाया ॥ कोई मुनिजन मनको खोजै, उलटी पवन चढावे। कोई खोजै भवँर गुफा, अजपा सो लौ लावे॥ कोई सिद्ध होय आसन साधे, कोई सीख सयाना। कोई देश देशान्तर डोलै, तीरथ व्रत लपटाना ॥ करम भरमकी सांकर काटै, पार ब्रह्मको सेवै। कहैं कवीर सोई जन गरुवा, सिरपै बोझ न लेवै ॥

गौरी ३७-साधो भाई मनका धोखा भागा। बहुत दिननका भमरत फिरिया, सोया था अब जागा ॥ टेक ॥ लोग कहैं यह काल बली है, सब काहूको खावे। हम जाने यह अलख पुरुष है, आपा माहिं समावे जैसे बेयार बगूरा होई, धूर उडावै भारी। खुली गांठि जब पवन भई है, सो गति भई हमारी। जैसे लून भया जल सेती, सब कोई कहँ सारा। उलटि जु लून आप संग मिलिया, मिटिगा नाम विकारा ॥ ज्यों बहनी काष्टमें होई, कर न सके परगासा। जब काष्ट वहनीमें आया, छूटि गया भरम पासा ॥ भरम छाडि निह भरम भया है, निज तत्त्वसो पहिचाना। कहैं कवीर सुनो भाई साधो, मिटिगा आवन जाना ॥

गौरी ३८-पंडित सत पद जपरे भाई। चरन कमल विन सब नर बूडे, नरक पडी चतुराई ॥ टेक ॥ ज्ञान न उपज्यो ब्रह्म न चीन्हो, आप कहांसे आई ॥ एक बुंद सो चारि वरन भै, ब्रह्म देह कहँ पाई ॥ शूद्र शरीर ब्रह्म तेहि भीतर, भिन भाव जहाँ नाहीं। लख चौरासी जीव जो इनमें, वरत रह्यो सब मांही ॥ नौगुन सूत उरझि नहिं सरुझे, तीन गिरह दे आनी। ताको जनेऊ कबहूं नहिं टूटे, दिन दिन बारह बानी ॥ ब्रह्म गायत्री गुरू अस्थाना, अजपा जाप थिर माहीं। संझा तरपन तहवां कीजे, कुश पानी जहँ नाहीं ॥ रिग जजु ग्यान ध्यान धरि

पशुवा, साम अर्थवन सोई ॥ सुसम बेदको भरम न जाने, केसे ब्राह्मन होई ॥ कहैं कबीर निज ब्रह्महीं चीन्हो, पास जनेऊ सोई। पाखंडकी गति सबही छूटै, तब निज ब्राह्मन होई ॥

गौरी ३९-पंडित अपनी अगिन बुझावो। हम तो अपनी राह चलत हैं, तुम काहे दुख पावो ॥ टे० ॥ को तुम कौन कहां से आये, अंत कहां तुम जाई। यहां तो तुम ब्रह्मन होइ बैठे, चौरासी बिसराई ॥ दशों मास औंधें मुख रहिया, सत धातु रस पीया ॥ जहां तो तुम चौका करि जीमो, वहां चौका किन दीया ॥ ना मैं चीन्ह हारि मत चालो, अनंत अनूप उघाडो ॥ क्रोध चंडाल सदा संग व्यापे, ताको मूल उखाडो ॥ कुल अभिमाना आनकी पूजा, यहो विथा तोहि लागी। जो यह जाति बडी है पांडे, सुखदेवने क्यों त्यागी ॥ पांच तत्त्वको सकल पसारा, जहवाँ जीव दुख पावे ॥ कहैं कबीर सोई सत ब्राह्मन, उलटा ब्रह्म समावे ॥

गौरी ४०-पांडे बूझि पियो जल पानी, तोही छूति कहां लपटानी ॥ टेक ॥ जल सूतक थलभी सूतक, सूतक पवन रसोई ॥ जनम मरन दोऊ भी सूतक, सूचि कहांते होई ॥ न्हाय धोयके चौके बैठा, बहुत करी सुथराई ॥ उडि माखी चौकेमें बैठी, बूडि गई चतुराई ॥ मक्खी एक अखज भखि आयी, हसती ऊँट अरु घोडा ॥ उडि माखी पनवारे बैठी, ताको करो निबेडा ॥ पीर' मुये पेगम्बर गाडे, सहस अठासी पांडे ॥ जलि बलि राख भये धरनीपर, उस माटीके भांडे ॥ पाँचो कपडा एक सूतका, जुलहे एक बनाया। कपडा लेकर अलगे राखो, धोती चौके लाया ॥ हाड़ झरै झर चाम झरेझर, दूध वहां सो आया ॥ सोई दूध तुम पीवन लागे, चपिया छूत लगाया ॥ नदी एक जो जल बहिआया,

एक रेत जल सरिया। मगर मच्छ जो जलमें ब्याए, जल सूतक से भरिया॥ तुमतो पहरि जनेऊ बैठो, मेहरी को क्या पहिराया॥ वहि कहिये बारेकी सूद्दर, उन परसी तुम खाया॥ चार अचार छाडिदे पांडे, रहो तत्त्व लौ लाई। कहै कवीर सुनो हो पांडे, गहो संत सरनाई॥

गौरी ४१–पांडे ना कर वाद विवादं। या देही विन सबद न स्वादं॥ टेक॥ खंड ब्रह्माड पिंडभी माटी, माटी नय निधि काया। माटी खोजत सतगुरु भेटा, तिन कछु अलख लखाया॥ जीवत माटी मुए भी माटी देखो ज्ञान विचारी। अंत काल माटीमें बासा, लोटे पांव पसारी॥ माटीकी भीत पवनका थम्भा, बिंद संजोग उपाया। भांडे गोढे सँवारे सोई, या साहबकी माया॥ माटीका मन्दिर ज्ञानका दीपक, बाती पवन उजियारी। जाहि जिया सब जग सूझे, कहै कवीर विचारी॥

गौरी ४२–पंडित मिथ्या करत विचार। नहिं तहां सृष्टि न सिरजनहार॥ टेक॥ सुन्न अस्थूल पवन नहिं पावक, रवि शशि धरनि न नीरं। ज्योति स्वरूपी काल न तहिया, नाही वचन शरीरं। भरम करम वहां कछु नाहिं, नाहीं वेद विचारं। हरि हर ब्रह्मा शिव सकती नाहीं, नहिं तीरथ आचारं॥ गोरख राम वहां कछु नाहीं, नहीं मन्त्र नहिं पूजा॥ सज्जन असज्जन भावभी नाहीं, कौधू एककि दूजा॥ माय बाप गुरू नहिं वाके, ओ तो पुरुष अकेला॥ कहै कवीर जो अबकी समझे, सो सतगुरुका चेला॥

गौरी ४३–पंडित कहो मोसो समझाई। अरथ धर्म काम मोक्ष फल, कौन दिशि है भाई॥ टेक॥ उत्तर दच्छिन पूरब पच्छिम,

सरग पाताल भूमाहीं। बिना ब्रह्म खाली नहिं कितहूं, नरक पडे सो काहीं॥ अन समझै को नरक सरग है, ततदरसीको नाहीं। जा डरसो संसार डरत है, सो डर हमरे नाहीं॥ पाप पून्यकी करूं न आशा, सरग नरक नहिं जाऊँ॥ कहे कवीर सुनो भाई साधो, जहँ पद तहँ ठहराऊँ॥

गौरी ४४–भगतकी हांसी करो मत कोई। जाको हँसे महा दुख होई॥ टेक॥ पहिली हांसी करी हिरनाकुश, नखसे उदर विदारो। बाँह पकडि भुजा उपाडी, ले धरतीमें डारो। दूजो हांसी रावन कीन्ही जनम तीन तिहिं मारो। भगत विभीषन राज दियो है, अजहुँ टरत न टारो॥ भीषम करन द्रौन दुर्योधन, ये हांसी करि हारे। कौरव कुटुम्ब निकंदन कीन्हो, भगत चूकसे मारे॥ जिन जिन हांसी करी भगतकी, सो २ नर नरक सिधारे॥ तिन पतितनको नरक दियो है, कहैं कवीर पुकारे॥

गौरी ४५–हरितो भगतनके बस भाई। जाति वरन कुल रीझत नाहीं, ना रीझै चतुराई॥ टेक॥ सेवरी जाति भीलनी होती, वेर जूठले आई। प्रीति जानि वाके फल पाये, तीनों लोक बडाई॥ करमा कद आचार कियो थो, हरिसे प्रीति लगाई॥ छप्पन भोग पाछै आरोगे, पहिले खिचडी खाई॥ तिर लोचन और नामा पीपा, हरि पेठे विकराई। सेन रूप होय मर्दन कीन्हो आप भये हरि नाई॥ सहस अठासी जग्यमें जीमें, तबहुँ घंट नहिरे बाज्यो। कहैं कवीर स्वपचके जीमे, संख मगन होय गाज्यो॥

॥ इति गौरी ॥

राग कल्याण प्रारम्भः।

राग कल्याण १–पल पल बलि मैं गुरुके जाऊँ, जिनरे किरपा करि नाम दियो है, गुरूकी पटतर काहि लगाऊँ ॥ टेक ॥ सुखदेव दियो वैकुंठ फेर। बिन गुरू नाहिं भयो निवेर। जनकको जाय कियो गुरूदेव। ताहीते पायो अलख अभेव ॥ नारद निंदा गुरूकी कीन्हीं। ताहीते चौरासी दीन्ही ॥ रंचक उन गुरु दया जु करी। गुरू प्रताप चौरासी टरी ॥ गुरू समान दाता नहिं कोय। भगति दान गुरू दियो मोय ॥ कहैं कबीर सुनो नर लोई। गुरूको भगति बिनु मुकति न होई ॥

राग कल्याण २–गुरू मेरे बुटिया अजब पिलाई। भया सचेत मिटी दुचिताई ॥ टे० ॥ नाम औषधि रसन कटोरी। ताहिके पीवत कुमति गइ मोरी ॥ सुषुमनिके घर भयो अनंदा। मिटि गई तिमिर उदय भौ चंदा ॥ सुरति सुहागिनि भरि भरि लाई। पीवत अमृत कबहुँ न अघाई ॥ सुषुमनि सुरति भई मतवारी। कबहु न लागै विषय खुमारी ॥ ब्रह्मा नारद रहे लुभाई। खोजत शम्भु ध्यान लगाई ॥ प्रेम प्रीति भरि पिया जु कोई। कहैं कबीर अमर भै सोई ॥

राग कल्याण ३–भाग बडे जाके संत पधारे। करि सुमिरन भवसागर तारे ॥ टे० ॥ आये संतको आदर कीजे चरन धोय चरनामृत लीजे ॥ येही संत हैं पर उपकारी। सरन आयेको लेत उबारी ॥ साहबको घर संतन माँहिं। साहेब संत कछु अन्तर नाहिं ॥ कहैं कबीर संतन भले पधारे। जनम जनमके कारज सारे ॥

राग कल्याण ४–जबते मन प्रतीति भयी। दिन दिन अवगुन छूटन लागे, बाढन लागी प्रीति नयी ॥ टे० ॥ सुखसागर सुख

मंजन कीन्हीं, स्वाती बूंद निज सीपलई। मानिकपुरमें मोती निपजे, हीरा हंसा भेट भई॥ सुरति दोऊ ज्ञान जौहरी, निरखि परखि निज वस्तु लईं। थोड़ा बनिजन वस्तु भइ भारी, उपजन लागी लाल मयी॥ पायो दाव भाव बनि आयो, सतगुरु मिले बड साहु सही॥ बाढ़ी बढै घटै नहिं कबहूं परम तत्त्व ले मनोतहीं॥ अगम निगम तत खोज निरंतर, गुरू नाम निज मूल दयी। कहैं कबीर दया सतगुरुकी, हती कुमति सो दूर गयी॥

राग कल्याण ५–सुमिरन सार साधो सुमिरन सार। सुमिरि सुमिरि जन उतरे पार॥ टेक॥ सुमिरनहीं शिव शंकर जोगी। सुमिरनही इंद्रादिक भोगी॥ सुमिरनही प्रह्लाद उबारे। खम्भ फाड़ि हिरनाकुश मारे॥ सुमिरनही ध्रुव निहचल कियो। सुमिरन राज विभीषन दियो॥ सुमिरन द्रोपदीचीर बढायो। गजके काज पयादेइ धायो॥ सुमिरन नाम देवकी छानि छवाई। मंदिर फेरयो गऊ जिवाई॥ सुमिरन नामदेवकूं दरशन दियो। बांह पकडी मंदिरमें लियो॥ कहैं कबीर सुमिरन है ऐसा। अपनी करनी करो कोइ जैसा॥

राग कल्याण ६–करन मतै सो करै करता। और सकलका झूठ मता॥ टे०॥ पूतना कहां कमाई कीन्ही, अघ मोचन जांकी दूरि गता॥ वाहि वैकुंठ पाताल पठायो, बलि राजामें कौन खता॥ कबहुँक सैलपर सागर, कबहुँक सोखे सब सलिता॥ कबहुं भूपतितैं करै भिषारी, तनहांके सिर छत्र धरता॥ एक रहै मायामों शीतल, एक फिरै माया जलता॥ एकनके घर बैठेही आवे, एक फिरै घर २ मँगता॥ एक पुत्रकों नृप पचिहारे, जाके हती बहुत बनिता॥ साठ पुत्र नारदको दीन्हा, माया त्यागि फिरैं विर-

कता ॥ पंच भरतारीकी लज्जा राखी, लंछन लगायो पति वरता॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधो वा साहबकी अगम गता ॥

राग कल्यान ७-सब अवगुनके सिर अभिमान । दुरजोधनके मेवा त्यागी, दासी सुत घर आये, भगवान ॥ टे० ॥ याही चूक बलि गयो रसातल, मारचो बालि एकहि बान ॥ याही चूक गयो लंकापति, काटी शीश दसरथ सुत आन ॥ सुखदेव मुनिसे को बड होई, इन्द्री जीति बिष डारचो भान ॥ वैकुंठमें आदर नाहिं, कृपा भई गुरु लागे कान ॥ राजसू जग्य रच्यो पंडवनके, सुर नर मुनि कियो जलपान ॥ संख पंचायन जबहीं बाज्यो, स्वपच भगत रस लीयो सान ॥ जोग रु जग्य नेम व्रत संजम, चारिवेद अरु पढैं पुरान । कहैं कबीर जब लगि मैं मेरी, तब लगि भगति नहीं परमान ॥

राग कल्यान ८-जाहूं मैं या जगकी चतुराई । प्रभुजीको नाम विसरजन कियो, जिन या जलसो जुगति बनायी ॥ टे० ॥ जोरत दाम काम अपनेको, हम खैहैं लडक व्योसायी । सो धन चोर हाकमा लेनो, रहो सहो ले जात जमाई । या माया कलवारिन कहिये, मद पिवाय राखे बौराई एक जे परो धूरिमें लेटे, एक कहैं चौका देरी माई ॥ या माया सुरनर मुनि बहके दयी देवता सब धरि खायी। कोइ कोइ लागि रहे गुरु चरना, तिनको माया फिरि पछिताई ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधो, ले फांसी हमहुँ पै आई । गुरु प्रताप साधुकी संगति, अब हम रहे निशान बजाई ॥

राग कल्यान ९-अजहूं प्यारे चेत मना, समुझि विन जीवना कछु ना ॥ टे० ॥ धन जोवन दारा अरु बारा, ये तो रैनका है सुपना । तन सुन्दर छवि देख न भूलो, यह तन रहन न एक

छिना ॥ जेते तेते ध्यान लगावें, अँखियन देखा सरवन सुना ॥ सुमिरन भजन करे सब कोई, बिन दरशन सबही भरमना ॥ शब्द विचारि रहो तुम सन्मुख, अखंड स्वरूपी अजर घना । कहैं कबीर आप लखि आपे, जुग जुग शब्द सरूप बना ॥

राग कल्याण १०–मैं बौरी मेरा राम भतार । जा कारन रचि करूं सिंगार ॥ टेक ॥ जैसे धोबिया रज मिलि धोवे, हमरा पाप यूं निंदक खोवै ॥ निंदक मेरा प्रान अधार । बिन बेगार चलावे भार ॥ निंदक मेरा माय अरु बाप । जनम जनमका काटे पाप ॥ कहैं कबीर निंदक बलिहारी । आप रहे जन पार उतारनी ॥

राग कल्याण ११–साधू घट शील संतोष विराजे ॥ दया स्वरूप सकल जीवपै, शब्द सरोतर गाजे ॥ टेक ॥ जहां जहां मनकी मनोरथ दौड़े, ताके संग न धावो । आसन अटल छिमा धीरज धरि, तन तजि अनत न जावो ॥ सत्यवादी सतगुरु पहिचाने, आतम दिष्टि परगासा ॥ निरमल दसा सरब सुख-दाई, आनंद घर रहिवासा ॥ सूधी चाल सदा शीतल गति, निसि दिन सबद विलासा । कहैं कबीर ऐसे संत विवेकी, जहां हमारा वासा ॥

राग कल्याण १२–जनको दीनता जो आवे । सौं पद देऊँ दास अपनेको, ब्रह्मादिक नहिं पावे ॥ टेक ॥ औरनको पूरा करि जाने, आपन बोझ कहावे । अवधू तुमसे सत्य कहत हौं, सो मेरे मन भावे ॥ एकै ब्रह्म सकल घट देखै, दुविधा दूरि कहावै॥ इन पांचन तैं तोरि सनेहा, जब गोविंद गुन गावे ॥ होय आधीन प्रेम लवलीन, कुल अभिमान मिटावै ॥ सहज सुन्यमें रहै समाई पढि गुन सब विसरावै ॥ गुरुकी दया साधुकी संगति,

भाव भगति चित लावै। कहैं कबीर सुनो भाई साधो, क्यों न परम पद पावै॥

राग कल्याण १३-भजनमें होत आनंद आनंद। बरसत शब्द अमीके बादल, भीजत है कोइ संत॥ टे०॥ अगर वरन जहां ततकी नदियां, मानो धारा गंग। करि अस्नान मगन होय बैठे, चढ तब शब्दको रंग॥ रोम रोम जाके अमृत भीना, पारस परसत अंग। शब्द गहो जिव संशय नाहिं, साहेब है तेरे संग॥ स्वासा सार रचो मेरे साहिब, जहां नहिं माया सोहंग। कहैं कबीर सुनो भाई साधो, जपो सोहंग सोहंग॥

राग कल्याण १४-क्यों न हमारे आये केसो, क्यों न हमारे आये। षट्रस व्यंजन छांड़ि रसोई, साग विदुर घर पाये॥टे०॥ जहां अभिमान तहां हम नाहीं, वह व्यंजन विष लागे। सोई मुनिजन पूरा कहिये, जो अभिमानीको त्यागे॥ जाति हीन जाके कुल नाहिं, है दासीको जायो। जाकी टपरिया तुम जइ बैठे, कहा बड़ापन पायो॥ सत सत वचन कहो दुर्योधन, सुन लो बात हमारी। विदुर हमारे प्रानसों प्यारे, तुम विषिया बेकारी॥ पुरातन कथा तुम्हारी प्रभुजी, वनमें छाछ मंगाई॥ ग्वालनके संग भोजन करते, सो मति तुम मैं आई॥ प्रेम प्रीतिके हम हैं भूखे, अभिमानी नहिं भावै। कहैं कबीर साधुकी महिमा, हरि अपने मुख गावै॥

राग कल्याण १५-कौन तुम्हारे आवै राजा, कौन तुम्हारे आवै। ऐसो हेतु विदुरको कहिये, सोई गरीब मोहि भावै॥टे०॥ तुमरो दूध विदुरको पानी, अमृत करि करि जानी। तुमरी मेवा विदुरकी भाजी, रस भर एक न आनी॥ भोजन तो दोऊ विधि राजा, विपत्ति परकी प्रीती। तुम्हारे प्रीति न हमरे

आपदा, एही बडी अनरीती ॥ खीर समान साग हम पाये, गावत रैन बिहाई। कहैं कबीर दासकी महिमा, आप श्रीमुख गाई॥

राग कान्हरा आरम्भः।

राग कान्हरा १–जा कुल भक्त भागवत होई। गिनिय न अवरन बरन रंक धन, विमल वंस मानिये निज सोई ॥ टेक ॥ ब्राह्मन छत्री वैश्य सूदलौं, नारि चंडाल मलेच्छ जो होई। होय पुनी तजे भगवंता, आप तरै तारै कुल दोई॥ धन वही गांव ठांव सोइ पावन, होत पुनीत संगके लोई। सुर पंडित अरु निरपति पादसाह, भगत बरोबर तुलै न कोई ॥ गहत सार पद पीवत ग्यान रस, तजि संसार जानि जस छोई। पुरइन पत्र समान रहत जल, कहैं कबीर जगमें जन सोई ॥

राग कान्हरा २–बहुत दिननसों प्रीतम पाये। भाग भले घर बैठहिं आये ॥टे०॥ मंगल चारि माँहि मन राखूँ। राम रसायन रसना चाखूँ ॥ मंदिर माहिं भयो उजियारा। ले सूती पिया अपना पियारा ॥ मैं जो निरासी जो निधि पाई। हमरो कहा पिया तुमरी बड़ाई ॥ कहैं कबीर हम कछु नहिं कीनो। सहज सुहाग राम मोहि दीनों ॥

राग कान्हडा ३–अब तोहिं जान न देऊँ रामा प्यारे। ज्यों भावे त्यों रहो हमारे ॥ टे० ॥ बहुत दिननके बिछडे पाये। भाग भले घर बैठहिं आये ॥ चरन लागि करूँ बरियाई। प्रेम प्रीति राखूँ उरझाई॥ आय बसो मन मंदिर चोखे। कहैं कबीर परो मति धोखे॥

राग कान्हडा ४–अब मोहि राम भरोसो तोरा। को काहू का करै निहोरा॥टेक॥ जाके हरि अस ठाकुर भाई। सो क्यों अनत पुकारन जाई॥ तीन लोक जाके सिर भारा। क्यों न करै जनकी प्रतिपारा॥ कहैं कबीर सेवो बनवारी। सींचो मूल फलै सब डारी॥

राग कान्हडा ५-चल मन हरि चटसाल पढाऊँ। जात कुमार मारग लाऊँ ॥ टे० ॥ पाटी प्रीति सुरतिकी लेखन, ररां मम्मा दोय अंक लिखाऊँ॥ गुरूकी साटि शब्दकी औपटि, बिच बिच सहज समाधि लगाऊँ॥ बावन भिन्न रहत जोइ अच्छर, सो पद परसि बहुरि नहिं आऊँ॥ कहैं कवीर सुनो भाइ साधो, हेलो मारि कहि समझाऊँ॥

राग कान्हडा ६-नाम मोर पूंजी नाम मोर धना। या पूंजीसे लगो मेरो मना॥ टेक॥ या पूंजी है अगम अपारा। कोई इक बनिजै साहूकारा॥ अगिन जरै न ईली खाय। राजा डंडे न चोर लेजाय॥ खेती करै न बनिजन जाय। नाम खजीना बैठा खाय॥ कागद चढै न कूता होय। कहै कवीर धन पाया सोय॥

राग कान्हडा ७-भजन विन तीनों पन विगडे। चेतो रे नर जीवन थोडा, काल करत नित झगडे॥ टे०॥ बालपना बालपन खोये, अरू तरूण पन टेडे। बिरध भयो तब काल गरासे, अंध होय निवेडे॥ मन भुजंग मायाको मातो, बोलत है करडे। जबहिं हंसा देत पयाना, मांढी होय निवडे॥ मानुष देह धरि काहेको, पशु न भया कहुरे। कहैं कवीर सुनो भाई संतो, कोई संतहि ध्यान धरें॥

राग कान्हडा ८-अब देखो विसरी गया इहाँ आय। अति मंद मस्त मोह तन छाकै, फिरत लटेम कराय॥टेक॥ जननीके गरभ उरध मुख झूल्यो, तहां रहे दुख पाय॥ अति संकट तहां भाठी औटै, मलमें मूँड गडाय॥ ता दिन तेरे कौन संग था, खान पान पहुँचाय। जाको पिता प्रान पति कहिये, ताको क्यों विसराय॥ अति मति हीन बुधि तुच्छ तनमें, सब विधि हाथ पराये। कहैं कवीर मृग सर लागा, वालि विषैके खाये॥

राग कान्हडा ९–जाय रे दिनहिं दिन देहा। करिले बावरे राम सनेहा॥ टेक॥ बालापन गयो जौबन जासी। जरा मरन भव संकट आसी॥ पलटे केस नयन जल छावे। मुरख चेत बुढापो आवे॥ राम कहत लज्जा नहिं कीजे। पल पल आयु घटै तन छीजे॥ लज्जा कहै मैं जमकी दासी। एक हाथ मुद्गर दूजे फांसी॥ कहैं कबीर तिन सरबस हारा। राम नाम जिन मना बिसारा॥

राग कान्हडा १०–कहा मांगू कछु थिर न रहाई। देखत नैन चला जग जाई॥ टे०॥ एक लख पुत्र सवा लख नाती। ता रावन घर दिया न बाती॥ लंका सो कोट समुद्रसी खाई। ता रावनकी खबर न पाई॥ सोनेदा महल रूपेदा छाजा। छोडि चला नगरीका राजा॥ को कर महल को कर टाटी। उडि गया हंस पडी रहि मांटी॥ आवत संग न जात संघाती। कहा भयो द्वारे बांधे हाथी॥ कहैं कबीर अन्तकी बारी। हाथ झारि जस चले जुआरी॥

राग कान्हडा ११–सोइ रे अजीत जो कालहिं जीते॥ टेक॥ निरख होय तो शब्दहिं पावे, शब्द कहै मोहि दिढ करि लीजे॥ बहुरि नहिं कछु दोष हमारा, अपने अवगुन आपही छीजे॥ जारसो रहै खसम सों रूसे, कहो सुहागि कैसे कै दीजे॥ जार रूठे तब जाय मनावे, हमहिं देखि कछु परदा दीजै॥ सब कोइ साधु कहे चलनेको, चल न सके तेहि कैसे कीजै॥ इन बातन सो अमर घर चाहे, कहो अमर घर कैसे दीजे॥ यही उछाह कहै सब कोई, जानि बूझिकै अंतर भीजै॥ कहैं कबीर सोई हंस निरखियो, शब्द हमारा हमहिं पतीजे॥

राग कान्हडा १२–कहा भयो मुख राम कह्यो रे। ज्यों भुजंग मंत्रन वस कीनो, अन्तर्गत वाको विष न गयोरे॥ टेक॥ माला तिलक भेष धरि हरिको, मांगत मांगत जन्म गयोरे॥ जैसे बधिक

ओट टाटी की, बहु जीवनको दाव दियोरे॥ अन्तर कपट बचन मुख शीतल, तन अधीन मन तऊ न नयोरे॥ कहैं कबीर ताको संग न कीजे, बिन बिवेक जिन भेष लयोरे॥

राग कान्हडा १३-जो तैं हिरदयमें राम न जान्यो। तसबी गहे कहा भौ भाई, कहा कितेब बखान्यो॥टेक॥ स्याही गई सफेदी आई, दिल सफेद अजहुं न हुआ॥ हुजरे निमाज बांग क्या दीजै, हुजरे भीतर पैठि मुआ॥ आन्यो जीव पछाड्यो परबस, गला काटि सिर भार लिया॥ जीवता मारि मूर्दार किया है, ताको कहै हलाल किया॥ अपना किया न बूझै मुगधा, कहै हमारो बडेन किया॥ उनकी खून तुम्हारी गर्दन, जिन तुमको उपदेश दिया॥ जाहि मांसकुं तुम पाक कहत हो, ताकी उत्पत्ति सुन भाई॥ रज वीरजते मांस उत्पाने, मांस न पाक लखाई॥ वेद पढै पढि पंडित भूला, काजी पढि रहु कुराना॥ कहैं कबीर ते नर नरक पडेंगे, जिन आतम राम न जाना॥

राग कान्हडा १४-कहा पंडिताई भूलो रे प्रानी। सतनाम जप अमृत वानी॥ टेक॥ घरही पंडित युधिष्ठिर केरा। काहे न घंट बज्यो तेहि वेरा॥ कोटिन विप्र जिमायो राजा। सुपच भगत विन घंट न बाजा॥ पढि लिय भारत चारिवों वेदा। विन सतगुरु नहिं पायो भेदा॥ सुपच भगत कीनी जिवनारा। बाज्यो घंट भई झनकारा॥ कहैं कबीर हम सब कछु जाना। देखत गनिका चढी विमाना॥

राग कान्हडा १५-सतगुरू अहिरन अजब बनाया। एक मढीके दस दरवाजा, सरब तत जहँ लपटाया॥ टे०॥ अहरन आनि अग्निमें पटकी, घनवां पांच लगाया॥ सुरति सँडासी हरष हथोडा, अकिल आँकडा लाया॥ स्वांस उस्वांसकी नाल बनाई, उलटा

पवन चलाया ॥ करम काठका कोयला झोंक्यो, अकरम कीट जलाया॥ मन लोहाको इस विधि ताया, ताव भला बनि आया॥ सील साँचकी चांडी रोपी, तामैं आनि बुझाया ॥ तोल न मोल हलकों नहिं भारी, ऐसा रतन निपजाया॥ कहैं कवीर बलि बलि सतगुरूकी, लोहा करि पारस लाया ॥

राग कान्हडा १६-मन नटनीको निरत विचारी॥टे०॥ गागरि पांच धरी शिर ऊपर, वरत चढी यक नारी ॥ तन मन दियो बरतके ऊपर जैसे भरै पनिहारी॥ आडो बाँस सलिया कर तोलैं, दाबी पांव तर थारी॥ आपन नाचै रिझावे जगको, आप जगतसों न्यारी ॥ गुरूका शब्द गहे कर दंतै, कटिसों बांधि कटारी ॥ नौ नारी मिलि खेल रचो है, तन मन हो हुशियारी॥ जैसे मकडी उलटि तारसों, पलटि गहे फिर तारी ॥ ऐसी कला नाच मन मोरा, तरत न लागे बारी॥ तीन लोक चौथे मतवारी, छर अच्छर सो न्यारी॥ कहैं कवीर सुनो भाइ साधो, पंचे रीझ भई भारी॥

राग कान्हडा १७-अब हम सकल कुसल कर जाना। सती भई जब सहज समाना ॥ टेक ॥ तनमें होती कोटि उपाधी । उलटि भई सुख सहज समाधी ॥ बैरी उलट भया है मिकता, साकट उलटि भयो है संता॥ जमतें उलटि भया है रामा । दुख विसरा सुख किय विसरामा ॥ आप जानि उलटि लै आया। तब नहिं व्यापै तीनों तापा ॥ अब मन उलटि सनातन हूवा । तब हम जाना जीवत मूवा॥ कहैं कवीर सुख सहज समाऊँ। आप डरूं नहिं और डराऊं ॥

राग कान्हडा १८-अब हम एक एक करि जाना । दूजा कहै ताहिको दोजक, जिन तू नहिं पहिचाना ॥ टेक ॥ पवन पावक पानी पृथ्वी नभ, एक जोति संसारा ॥ एकहि खास घडै बहु

भांडा, एकहि सिरजन हारा ॥ जैसे बढई काठहिं काटै, अगिन न काटै कोई। ऐसे व्यापक है सबहिनमें, रवि स्वरूप है सोई॥ माया मोह करि जगत भुलाना, गरंथ देखि गरबाना ॥ होय निःशंक शंक नहिं व्यापै, कहैं कबीर दिवाना ॥

राग कान्हडा १९–अब मैं पायो ब्रह्म ग्यान। सहज समाधी सुखमें रहिबो, कोटि कलप विसरान॥ टे० ॥ गुरू कृपाल कृपा जब कीन्हा, हृदया कमल बिगासा ॥ भागा भरम दसों दिसि सूझा, परम ज्योति परगासा ॥ मृतक उठी धनुष कर लीन्हा, काल अहेरी भागा॥ उदसिया सूर निसि किया प्याना, सोवतते तब जागा॥ अविगत अकल अनूपम देखा, कहता कहो न जाई॥ सैन करै मनही मन राखे, गुंगै जान मिठाई ॥ पुहुप बिना एक तरुवर फलिया, बिन कर तूर बजाया॥ नारी विना नीर घट भरिया, सहज रूपसो पाया ॥ देखत कांच भया मन कंचन, बिन बानी मन माना॥ उडा विहंगम खोज न पाया, ज्यों जल जलहि समाना ॥ पूजो देव बहुरि नहिं पूजूं, नहाय उदक न नहाऊँ॥ भाग्या भरम एकहि कहता, आप बहुरि नहिं आऊँ॥ आपामें जब आप निरखिया, आपनमें आपहिं सूझा॥ आपहिं कहत सुनत पुनि आपै, आपनमहिं आपा बूझा॥ अपने परिचय लागी तारी, आपनमें आप समाना ॥ कहैं कवीर जे आप विचारे, मिटिगा आवन जाना ॥

राग कान्हडा २०–कौन मरै जन्मे को आई। सुरग नरक कौन गति पाई ॥ टेक ॥ पांच तत्त्व अविगत तै उपजा, ये कै किया निवासा॥ विछुरा तत्त्व फिर ततै समाना, रेषहिं रही न आसा॥ जलमें कुंभ कुंभमें जल है, बाहर भीतर पानी ॥ बिनसा कुंभ जल जलहि समाना, यह तत कथै सु ग्यानी ॥ आदे गगना मधे

गगना, अंतहि गगना भाई॥ कहै कबीर करम काहे लागै, झूठौ सकल उपाई ॥

राग कान्हडा २१-ताहि विचारो पंडित लोई। जाके रूप बरन नहीं होई ॥ टेक ॥ पिंडमें प्रान कहां तैं आवे, मुवा जीव कहु कहां समावै ॥ इंद्री कहां करै विसरामा। सों कित गया जो कहता रामा ॥ पांच तत्त्व जहां सबद न स्वादा। अलख निरंजन विधी न वादा॥ कहैं कबीर मन मनहि समाना। अगम निगम झूठ करि जाना ॥

राग कान्हडा २२-मन मेरा पंछी विलमत हीरारे। गुरुका सबद एक अजर अमर है, धूप छांह दुख दुंद नहींरे ॥ टेक ॥ अमर लोक हंसनका बासा, सुख सागर सुख लेत तहींरे ॥ तहँके गए बहुरि नहीं आवै, करत अनंद दुख दुंद नहींरे ॥ कपटकी पांघ दूरि निरवारो, जो ले उडत विकार महीरे ॥ सुरतिकी चांच संवारि सबैरे, नाम चुगै चुग रहु ढिगहीरे॥ निरमल नाम जपौ हिरदामें, बार बार मैं तोहि कहीरे॥ आवागमन मिटै तब तेरो, बहुरि न या जग जनम लहीरे ॥ सदा आनंद होत है वा घर, कबहुं न होत उदास वहींरे॥ कहैं कबीर जहां बधिक जाल नहीं, गुर मारग चलि जाय तहींरे ॥

राग कान्हडा २३-हरिजन हंस दिसा लिय डोलै। निरमल नाम चुनि चुनि बोलै॥ टे० ॥ मान सरोवर तटके बासी। राम चरन रति आन उदासी॥ मुकताहल बिन चोंच न लावै। मौन रहे कै हरिगुन गावै॥ कौआ कुबुधि निकट नहिं आवै। सो हंसा निज दरशन पावै॥ कहैं कबीर सोई जन मेरा। नीर षीरका करै निबेरा॥

राग कान्हडा २४-धोषैही धोषै डहकायो। समुझ न परी सनद सतगुरकी, बहु फंदनमें आय फदायो॥टे०॥ सुवना एक अंबके

भोरे, सेवा करन आक की आयो॥ मारी चोंच जब रूओ उडायो, छीर शरीर अंग लपटायो ॥ रातो फूल देखि सेमलको सुवना, अंत वासों नेह लगायो॥ मारी चोंच फल गयौ टूटि जब, उडि गयौ तूर तिवारो आयो॥ उडि न सकै बहु परचो झोलमैं, तातै नाम फिर ज्वो कहायो॥ कहै कवीर नीचकी संगति, जाति गई औ जनम गवाँयो ॥

राग कान्हडा २५-नाम विना धिक धिक नर नारी। कहां तै आय कियो संसारी ॥ टे० ॥ धिग वो रसना धिग वो कामा। चीन्हो नाहीं आतम रामा ॥ जा कुल पुत्र न भक्ति बिचारी। जनमत क्यों न मरी महतारी॥ भरम मुचे मुच रही क्यों न बंझा। सुकरी रूप फिरै जग मंझा॥ बिधवा नारी करत सिंगारा। शोभा न पावे बिन भरतारा॥ वेश्याके पुत्र पिता कासो कहै। बिन गुर चेला ग्यान कैसे लहै ॥ राज बिना कैसी रजपूता। ग्यान बिना फोकट अवधूता॥ जा कुल नाही हरिको दासा। सो कुल जानो ढाक पलासा ॥ कहैं कवीर भक्ति निज सारा। जो चीन्हे सो उतरै पारा ॥

अथ राग काफी प्रारम्भः।

राग काफी १-मैं तेरा दीदार हो दीदार दिवाना। घडी घडी तुझे देखा चाहों, सुनु साहेब रहमाना॥टे०॥ पडा रहूँ दरबार तुम्हारे, ज्यूं घरका बंदी जादा॥ नेकी कुलाह लिये सिर ऊपर, गलै प्रेमका धागा ॥ हुआ अलमस्त खबरि नहिं तनकी, पिया जो प्रेम पियाला॥ ठाढे होय करि झुकि झुकि परते, तेरै रंग मतवाला॥ तसबी और निमाज़ न जानूँ, ना धरि जानौ रोजा॥ बंग जिकिरि जबहीसैं बिसरायो, जबते तन मन खोजा ॥ कहैं कवीर कजा

नहीं करना, दिलहीसे दिल लाया॥ मक्का हज्ज हिय बिच हिजरत, पूरा मुरसिद पाया ॥

राग काफी २—सतगुरु हो महराजा मोपै राम रंग डारा ॥टेक॥ सबदकी चोट लगी मेरे तनमें, बेधि लिया तन सारा॥ औषध मूरि कछुओ नहिं लागे, का करे बैद बिचारा॥ सुर नर मुनिजन पीर औलिया, कोइ न पावै पारा॥ दास कबीर अब रंग रंगिया, सब रंगन रंग न्यारा॥

राग काफी ३—दूर नहीं रहमाना कोई सबद विचारो, दूर नहीं रहमाना॥ दूर भटक नहीं मरना रे यारो, नेरेही मन माना ॥टे०॥ एक जो खोजिया रे, दूजा दिलहि समाना॥ खोजत खोजत थकित भये हैं, हिन्दू मुसलमाना॥ कहा पढि लीये वेद पुराना, कहा कथ लीये ग्याना॥ गुरू पीरसो पाईये तब, पहुँचे जाय ठिकाना॥ सबद विचार रहो तुम सन्मुख, नेरैही मन माना॥ बंदे तू करे बन्दगी, तोहि साहब पै जाना॥ एकम एका होय रहा है, ज्यों जल जलहि समाना॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधो, लगा निरंतर ध्याना॥

राग काफी ४—नैना आशिक मेरा महबूब तूही है। जित देखूं तित याही मूरति है, यामें अनंत चितेरो॥ टेक॥ ऐसा नैन लालची मेरा, तुमही मैं खूब खूबैरा॥ जब देखूं मैं अपनी मूरतको, निकट बिराजत नेरा॥ ऐसी प्रीति लगी तुम मांहीं, जैसे चंद चकोरा॥ देखत देखत उलटि परी है, यूं मन लग्यो जु मेरा॥ गांसी सार सबदकी, घायल लेत घुमेरा॥ उरझि पुरझि रह्यो बंक नालमें, सुरझत नाहिं सुझेरा॥ लगन लगी कोई लाख कहोरे, छूटत नाहिं हटेरा॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधो, मिटि गौ सकल अंधेरा॥

राग काफी ५-नैनन माझ बसाऊँ जो मैं साहिब पाऊँ ॥टे०॥ नैननमें मेरा साहेब वसदा, डरती पलक न लगाऊँ ॥ एक टक ठाढी पंथ निहारौं, पलकसौं पलक न लाऊँ ॥ त्रिकुटी महल में बना है झरोखा, जहां सुख झांकी पाऊँ ॥ अकह महलमें चवँर ढुराऊँ, सुखकी सेज बिछाऊँ ॥ पियाको परसि भई पटरानी, आनंद मंगल गाऊँ ॥ कहैं कवीर सुनो भाइ साधो, सिंधु बुंद मिलि जाऊँ ॥

राग काफी ६-लेखा तेरा लीजैगा रे सुनु दिल महरम यार॥टे०॥ चलना दूरि अभी क्यूं थाक्यो, पंथ खड्गकी धार॥ हकहि साखी न्याव जो होयगा, वा सांचे दरबार॥ धरम राय जब लेखा मांगे, परत गुरजकी मार॥ घरकी नारी प्रान सों प्यारी, सो न चलै तेरे लार ॥ कहैं कवीर सुनो भाइ साधो, हरि भजि उतरो पार॥

राग काफी पंजाब ७-साहबसों लौ लाव हो मन गरब गुमानी ॥ टे० ॥ आज कालि अरु पांच दिनामें, आवैंगे जमदानी ॥ हाथमें मुगदर लोहका, तेरी खूब करैं मिजमानी॥ पल पल आयु घटै छिन छिनमें, ज्यों अंजुली जन पानी॥ अब तू समझि देख दिल अपने, सुरति करो पहिचानी॥ हस्ती घोडा छत्र सिंहासन, दुनियां देखि लुभानी ॥ बाँह पकडि जम ले चले जब, होयगी ऐंचा तानी॥ भयो नर अंध मगन मायामें, ज्यूं कपि मूठ बंधानी॥ कर्म डोरि बाजीगरके बस, घर घर नाच नचानी ॥ हिल मिल एक जो होय रहै, सबदमें सुरति समानी ॥ अग्रदास दीदार दिवाना, दरिया बूंद मिलानी ॥

राग काफी ८-येही हाल फकीरा हंदा, सुन लीजो सब कोई बे ॥ सुरग मिरत पताल लोककी, फिकर फकीरौ खोई बे॥ टोपी तत स्रवनी चितवन, सींगी अनहद सोई बे॥ नाम निरंतर चोला पहिरै,

सेली सुरति समोई बे॥ जत कोपीन सत आडबंद, मगन पतंगा होई बे। सिरजनहार तिलक सिर ऊपर, सुमरन कंठी पोई बे॥ भिच्छा भाव सहजकी चीपी, झोली अकल जुढोई बे। जो देवै जाइपै लेवे, ऊँच नीच नहिं कोई बे॥ सेज भोम अकास ओढना, जोति चंद्रमा जोई बे॥ पवन रैन दिन करै षवासी, दिढ आसना परि सोई बे॥ धुनी ध्यान धकावै रैन दिन, फिकर फावडी होई बे॥ आशा तृष्ना इंधन लकरी, धूंनी मांहिं धकोई बे॥ उन मुनि दिष्ट उदास जगतसे, निस प्रेही निरमोही बे॥ तरक त्यागबैराग धारना, राव रंक नहिं जोई बे॥ एका एकी रहै अवनि पर, दिलकी दुरमति खोई बे॥ कहैं कबीर अलमस्त फकीरा, आय निरंतर सोई बे॥

राग काफी ९-वाह वाह गुजरान फकीरी दी॥ टे०॥ कबहुंक सौड निहाली पथरिया, कबहु भूत सरीरौ दी॥ कबहु टुकडा बासी कूसी, कबहुंक खीर मलीदौ दी॥ कबहुंक ओढै मल मल खासा, कबहूँ गुदडी लीरों दी॥ कबहुंक मैडी कबहुंक मन्दर, कबहुंक आसन चौडो दी॥ कहैं कबीर परवाह न किसी दी, एक परवाह गुर पीरो दी॥

राग काफी १०-रस मगन भया जब क्या गावै॥ टे०॥ दिल दरियाव सदा जल निरमल, अनत नहावनकूँ कहँ जावे॥ जाग्रत सुपन सुषोपति तुरिया, भँवर गुफामें घेर छावे॥ इंगला पिंगला सुषमन नारी, वंक नालकी सुधि पावै॥ त्रिकुटी ऊपर ध्यान लगावे, अविनाशीकूँ लखि पावै॥ कहैं कबीर सिष पर बैठा, आवागवन जब मिटि पावै॥

राग काफी ११-मेरा दिल लगा फकीरीमें॥ टे०॥ जो सुख पायो नाम भजनमें, सो सुख नाहिं अमीरीमें॥ भली बुरी सबकी

सुनि लीजे, करि गुजरान गरीबीमें ॥ प्रेम नगरमें रहन हमारी, भली बनि आई सबूरीमें ॥ कहैं कवीर दया सतगुरुकी, पाई भगति जगीरीमें ॥

राग काफी १२-दिल मगन भया जब क्या बोलैं ॥टे०॥ तेरा साहेब है तुझ माहीं, बाहर नैना क्या खोलै॥ मान सरोवर हंसा बासी, डाबर डाबर क्या डोलै॥ सुरति कलाली भयी मतवाली, अमृत पाया बिन तोलै ॥ हस्तीकी चाल चलु मन मेरा, बाहर भीतर क्या डोलै ॥ कहैं कवीर अलमस्त फकीरा, साहेब पायो तिन ओलै ॥

राग काफी १३-दिल मगन भया अनहद बासी॥टे०॥ अड-सठको फल जान लियो है, खोजि लई काया कासी॥ अष्ट सिद्धि नौ निधि आगे ठाढी, जुगन जुगनकी है दासी॥ बिन ब्याई जहाँ काम धेनु है, दूझत है बारह मासी॥ कहैं कवीर सुनो भाई साधो, गगन मंडलका है बासी ॥

राग काफी १४-मेरी लगन साहेबसो लागी है॥टे०॥ बन्धन काटि किया गुर मुकता, जरा मरन भरम भागी है॥ जबसे दया भई सतगुरुकी, लोक लाज कुल त्यागी है॥ गुरुकी दया साधुकी संगत, अमर लोक लौ लागी है ॥ सुरति निरति दोउ भइ मत-वारी, प्रेम सुधा रस पागी है ॥ एक नाम बिन और न दूजा, कहैं कवीर बड भागी है ॥

राग काफी १५-फकीरोंदा हाल यह हानी ॥ टे० ॥ गोदडी गुरु ज्ञान दी हो, दया दी कफनी । कमर मतंगा जतदा, माथे तिलक उनमुनी॥ धूनी धीरज ध्यान दी हो, सेली सुरति अपार। फावडी गुरु ज्ञान दी हो, चित्त लगदा दसवें द्वार॥ अन्तर तुरिया झूलदा हो, मरम न जानै कोय। जग विच दीसा बावरा हो,

टुक हंस दे टुक रोय ॥ माता हस्ती झूलदो हो, आठूँ पहर खुसाल। चेला दास कबीरदा, पद गावे कमाल ॥

राग काफी १६—गलताना मता जब आवैगा, तब जीवड़ा सुख पावैगा ॥ टे० ॥ अचार विचार छुटे या जिवका, दुरमति दूर नसावैगा ॥ माया मोह भरमके बादल, परदा खोलि बहावैगा॥ पांच पचीस करो बसि अपने, सतगुरु सबद लखावैगा ॥ रहनि गहनिकी नाव सवारी, तब भव पार सिधावैगा॥ हंस सुजन जन बहुरि मिलैंगे, साहिबका गुन गावैगा॥ अमरलोक इम्रतकी काया, तहां बड़ा सुख पावैगा ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधो, यह तत विरला पावैगा ॥

अथ मंगल प्रारम्भः।

मंगल १—तन मन सुरति विचारि तो बात जनाइये। तुम प्रभु दीन दयाल सो ब्याह रचाइये॥ वेद बुधि करि विधिसों चौक पुराइये। विषम भरम सब मेंटिकै कलश धराइये॥ त्रिकुटी छाजै बैठि नगर खलबल परी। गावत मंगल चार लगन हाथै धरी॥ काम क्रोध दोउ काटिके खम्भ बनाइये। सत्सुकृतके बाँसन मंडप छाइये॥ सुरतिको घुडिला पलानि चित चाबुक लियो। अनहद बाजो बजायके ब्याहन चढि चल्यो ॥ शीलको खड्ग बँधाय छिमाको मौरिया। चलै अमर पुर जाय धनीकी पौरिया ॥ ब्याहै सदगुरू आप सवारे हेतियो॥ कहै कबीर सतिभाय अमर घर चेतियो ॥

मंगल २—दीननके हो दयाल भगतिकी पन करौ। सरन आयकी लाज गई साहिब जिनि करो॥ नऊ द्वार बिकार थार नौका वगै। मेरी सुरति नहीं ठहराय लगन कैमे लगै॥ पांच तत गुना तीनका सावर साजीया। जम राखै बिलमाय तो फंदन फांदिया॥ त्रिगुन

फांसि फंदि आय माया मद जालमें । भवसागरके बीच महा जंजालमें ॥ मोक्ष मुक्ति जब होय दया जनपै करो। मेरो काटो कर्म विकार दास अपनो करो ॥ साहेब कवीर बंदी छोर अजर इक मानिये । हमसे पतित उधारि सरन साहिब आनिये ॥

मंगल ३-जो तुम आये हो सरन बचन इक मानियो। तजियो खलककी आस, सुरति ऐसे जानियो ॥ ज्यूं जल मीन सनेह, सदा जलमें रहै । जल बिछूरत तजै परान, लगन ऐसी लहै ॥ तजो नीर पीवो, खीर लप नहिं लावई। ते नर हंस हमार, सुरति ऐसे धावई ॥ काग वचन तुम छांडि दे, हंस गति लावई । तेरे पुनि पूरन करि देउँ, बहुत सुख पावई ॥ काटूँ करम विकार, भार सिर लेइहौं। हंसा तो में रहूं समाय, आप सम करि गहौं॥ कहैं कवीर धरमदाससों, तत मतसार ॥ हंसा बेगे लोक मंझार नाम आधार है ॥

मंगल ४-मूल कमलमें बैठि धरनिको बंध दयो॥ सप्त अगरासी कोटि सबदको वस भयो ॥ मूंदे सप्त पताल मेरु मंडल हले । गरजो गगन अकास अमीसागर झले॥ नई भई पहिचानि नवल भयो नेहरा। अगर जोति सिरमौर विराजे सेहरा॥ उठो सुहागिनि नारि महलको गम करो। वजर पौर उघारि पुरुषसो तुम मिलौ॥ परम ज्योति प्रकाश निरंतर राजई। मिलो सुहागिनी नारि तो पुरुष रिझावई॥ देख्यो सबद रूप विहँसि सुंदरि मिली। त्रिकुटी नगर मंझार मदन मूरति लगी। धरमदास चित चेति चरन चित लाईये ॥ सतगुरु कवीर कहि दीन तो दीप जगाइये ॥

मंगल ५-सतगुरु आनंद मंगल आरति बोलिये। जुग जुग कहो पुकारिकै परदा खोलिये॥ अलख निरंजन राय तो चरित्र बनाइया। संसामें छिन भंगु सुपनौ दिखाइया॥ यह संसार सराय तौ बाट

बरानिया। उठ चले अपने पंथ न काहू जानिया॥ सुन धरमदास सयान पुकार जो कीजिये। निंदा अस्तुति त्यागि पिया चित दीजिये॥ पंथ दुहेला नांहिं कोई सत संगिया। सायर बुंद बिनोद प्रेम चित मंडिया॥ नाहि करो संशय सोग जीवन सब धुन्ध है। अजर अमर एक आत्मा अमृत्त बुंद है॥ पांच तत्त्व सम बुंद पचीस सुहाना। अष्ट धातुको जुगल सो पियाको खेलावना॥ पिया है प्रगट बिचारि नाहिं कोई बुझिया। अंत सुहागिनि नारि तत्त्व नहिं सुझिया॥ अछरमें गम राखि निःअछर जानिये। शब्द मंत्र गुरू भाषि सुरति पहिचानिये॥ हरष शोकते भिन्न बूझ प्रवीन हैं। जोग विवेकतैं दरसै जोति अधीन हैं॥ जग मग दीप बनाय आरति कीजिये। घट घट जोति परगास दरस सुख लीजिये॥ यहां वहां भरिपूर न दुनिया भावना। गुरुगम परचे होत तो इस विधि पावना॥ कहै कवीर धर्मदाससों मूल उचारिये। यही विधि आरती साजि शवद निरवारिये॥

मंगल ६–मनुषा देही पाये सुकृतको धाइये। सुरति जो अषन कुवाँरि हंसको ब्याहिये॥ सतगुरु विप्र बुलाय तो लगन लिखाईये। वेगि करि लेहु ब्याह ढील नहिं लाइये॥ मिलौ पचीसौ नारि तो मंगल गाइये। चौरासीका दुख बहुरि नहिं पाइये॥ सुरति जो सज्यो सिंगार पियापै जाइये। जन्म कर्मके अंक तो तुरत मिटाइये॥ हंसै कियो विचार सुरति सो यों कही। जुग जुग अछन कुँवरि एता दिन क्यों रही॥ सुरति जु करि सलाम पीया तुम सत कही। मोहि सतगुरु मिलिया नाहीं कुवाँरि यों रही॥ परम पुरुषकी सेज अखंडित खेलना। अमृत प्याला पाइ अधरही झेलना॥ पान परवाना पाय तो नाम सुनावई। सतगुरु कहैं कवीर जीव गति पावई॥

मंगल ७–पीहर रही भुलाय घना दिन बापके। कर सतगुरुको संग चालु घर आपके॥ मामा और ममसाल भुवा दस बेहनरी। तजि उनहूँको संग जाय सन्मुख अरी॥ मात पिता सुतवीर तजो परिवारको। उभा छोड़ लोग चली है पारको ॥ बहुरि न मिलना होय पीहरि प्यारा लोग सो। चली है अपने देश पूरवला जोग सो ॥ लंघिया औघट घाट कमल सब छेदिया । भँवर गुफाके घाट निरंजन भेदिया ॥ चढी कलश पर जाय अगम गम्य जहँ किया । निराकार निरलेप पयाना तहँ दिया ॥ अगम महलमें जाय मिलिहै पीवसो। ब्रह्म कियो भरतार पर हरिया जीवसों॥ अधर दीपके मध्य पुरुष यक सार है। सांची कहै कबीर सोई भरतार है ॥

मंगल ८–समुझि सुमिर सतनाम जीव गति पाइये। नाहिं न आन उपाय चरन चित लाइये ॥ जहाँ गुरूको अस्थान तहां चलि जाइये। कोटि भान परगास सुरति तहाँ छाइये॥ तन मन होय अनंद हरषि गुन गाइये । खुलिहैं ग्यानके नैन ध्यान धरि धाइये॥ कहैं कबीर सतनाम जीव गति पाइये। अविगति अलख लखाय निरखि सिर नाइये ॥

मंगल ९–सतगुरु दीन दयाल काल भय मेटिया। दीन्हां दीपक ग्यान अमर बर भेटिया ॥ हरि देखनको चाव गई सतसंगमें । बाढो अधिक सनेह भिजोई हरि रंगमें ॥ देख्यो अलख अपार अखंडित पूर है। झिलमिल होय सोई हरि नूर है॥ अगिन जलै जल माहिं सिंधु बिन पाल है। चहूं भानु गम नाहिं जहाँ मेरा लाल है॥ एक सुन्य दोय सून्य सून्य लख चारि है। जाने कोई गुरूमुख संत विवेक विचारि है ॥ कहैं कबीर विचारि संत भल पावई । बसे अमर घर जाय बहुरि नहिं आवई ॥

मंगल १०—यहि जग को न आपन का संग बोलै हो । जस तरवर मैदान अकेलै डोलै हो ॥ चारि पवन झख झोरै कोउ न सहायक हो । जस पुरइन पर नीर थीर नहिं पायक हो ॥ मन तारै मन बोरै मनहिं नचावै हो । मन आवै मन जाय नाम सब गावै हो ॥ विष बोयउ संसार अमृत कहां पावौ हो । पुनिरपि जनम तुम्हार दोष केहि लावौ हो ॥ मायाके विस्तार नींद नहिं आवै हो । कहँ राजा कहँ रंक दोऊ मिलि रोवै हो ॥ कहै कबीर सुन संतो मन निरवारो हो । बूझहु करहु विचार बहुरि नहिं आवो हो ॥

सत्यनाम ।

अथ तीसा यंत्र प्रारम्भः । ❋

बन्दी छोर कबीर गुरु, धर्मदास शिष जासु ।
तासु चरण बन्दन किये, होय अविद्या नासु ॥

इन्दव छन्द—सोय रह्यो नित मोह निसा महँ, जानि परो नहिं राम पियारो । जन्म अनेक गये सपनांतर, एकहु बार न जागृत

❋ यह तीसा यंत्र किसी निर्पक्ष विचारवान् महात्माने परोपकारार्थ प्रकट किया है । इसमें निर्पक्ष सुन्दर विचार और उपदेश होनेके कारण, तथा सद्‌गुरु कबीरकी भी, प्रायः साखियाँ इसमें आनेके कारण कबीर पंथियोंको अत्यन्त प्रिय होनेसे, शब्दावलीके संग्रह करनेवालोंने इसे भी, अपनी शब्दावलीमें सम्मिलितकर लिया है । हस्त लिखित या छपी जितनी प्रति मिली सबमें—इसका नाम तो तीसाही यन्त्र लिखा है, किन्तु गिन्तीके उपदेशी प्रश्नोत्तर के बल अट्‌ठाइस ही लिखे हैं, इस लिये उसकी पूर्तिके लिये अन्तके दो प्रश्नोत्तर शामिल कर तीस पूरे कर दिये गये हैं, आशा है कि, मेरी इस सभ्य धृष्टताको शिष्टगण क्षमा करेंगे ।

इसकी एक प्रति, दिल्ली खारीबावलीके श्रीमहंत सुखलालदासजी साहबने बहुत दिन हुए मुझे दी थी जिसका नाम तीसा यंत्र न होकर शिक्षा दर्पन लिखा है । इसको किसी शैव संन्यासी महात्माने अपना करके छपवाया है । कबीरपन्थियोंके पास जो प्रतियां हैं, उसमें मतमतांतरसे रहित उपदेश मात्र हैं किन्तु शैव महात्माने इस यंत्रको शैव बनानेके लिये. बीच बीचमें अपने अनुकूल कई दोहे मिलाकर यंत्रको अपना बनानेका प्रयत्न किया है । इस प्रकार के कार्य अनुचित होनेपर भी साम्प्रदायिकताके कारण लोगोंसे भूल हुआ ही करती है । इसी लिये सद्‌गुरुने कहा है--

धारो ॥ आदि गुरु तब देखि दया करि, तीसा यंत्र शब्द उचारो।
चारहु वेद पुरान अठारह, सोधि कह्यो यह तत्त विचारो ॥
सा०-जीव किरतारथ कारने, भाषा कीन विचार।
तीसा जंतर बूझिके, नर उतरे भव पार ॥
कलिमें जीवन अलप है, करिये बेगि सम्हार।
तप साधन नहिं हो सके, केवल नाम अधार ॥

प्र० जगाइये क्या? उ० प्रेम.

प्रेम जगावे विरहको, विरह जगावे पीव।
पीव जगावे जीवको, वही पीव वहि जीव ॥ १ ॥

प्र० कीजिये क्या? उ० पूजा।

पूजा गुरुकी कीजिये, सब पूजा जेहि माहिं।
ज्यों जल सींचे मूलको, फूले फले अघाहिं ॥ २ ॥

प्र० परखिये क्या? उ० शब्द।

परखो द्वारा शब्दका, जो गुरु कहे विचार।
विना शब्द कछु ना मिले, देखो नैन निहार ॥ ३ ॥

प्र० लीजिये क्या? उ० नाम।

नाम मिलावे रूपको, जो जन खोजी होय।
जब वह रूप हिरदे बसे, क्षुधा रहे ना कोय ॥ ४ ॥

प्र० करिये क्या? उ० सत्संग।

करिये नित सतसंगको, बाधा सकल मिटाय।
ऐसा अवसर ना मिलै, दुरलभ नर तन पाय ॥ ५ ॥

प्र० बोलिये क्या? उ० मीठा।

मीठा सबसे बोलिये, रस उपजे चहुँ ओर।
बसी करन यह मंत्र है, तेजो बचन कठोर ॥ ६ ॥

पछापछी कारने, सब जग गया भुलान।
निरपछ होयके हरि भजे, सोई संत सुजान ॥

जिनको अपना कल्याण करनाहै उन्हें सदा ऐसी साम्प्रदायिकताओर मिथ्या अभिमानसे अलग रहकर सत्यकेही खोज और ग्रहणमें रहना चाहिये।

संग्रहकर्ता-श्रीयुगलानन्द बिहारी,

प्र० होइये क्या ? उ० दास।

होय रहै जब दास यह, तब सुख पावै अंत।
देखि रीति प्रह्लादकी, सबमें निरखो कंत॥ ७॥

प्र० मानिये क्या ? उ० सबकोसत्य.

मानिये सबको सत्य है, जाको व्यवहार।
जियन मरत दोऊ लगा, थिर होय देखु विचार॥ ८॥

प्र० बराइये क्या ? उ० झगरा।

झगरा नित्य बराइये, झगरा बुरी बलाय।
दुख उपजे चिंता बढै, झगरामें घर जाय॥ ९॥

प्र० खाइये क्या ? उ० गम।

गम समान भोजन नहीं, जो कोइ गमको खाय।
अम्बरीष गम खाइया, दुरवासा बिललाय॥ १०॥

प्र० राखिये क्या उ० निज धर्म।

राखिये निज २ धर्मको, दिढ गहिये सब काल।
निज धर्म आपन राखते, सहजे भये निहाल॥ ११॥

प्र० त्यागिये क्या ? उ० सब कुछ।

त्याग तो ऐसा कीजिये, सब कुछ एकहिं बार।
सब प्रभुका मेरा नहीं, निश्चय किया विचार॥ १२॥

प्र० छोडिये क्या ? उ० अभिमान।

छोडि झूठ अभिमानको, सुखी होय यह जीव।
भावै कोई कछु कहै, हिये बसै निज पीव॥ १३॥

प्र० पाइये क्या ? उ० सुख।

सुख पइये निज रूपमें, द्वैत भाव करि त्याग।
निरखो आपा सबनमें, रहै न दुखको लाग॥ १४॥

प्र० देखिये क्या ? उ० आत्मराम।

देखै सबमें राम है, एकहि रस भरपूर।
ऊषहिते सब बनत है, चीनी शक्कर गूर॥ १५॥

प्र० मिटाइये क्या ? उ० भ्रम।

भरम मिटा तब जानिये, अचरज लगे न कोय।
यह लीला सब रामकी, निरखे आपा खोय ॥ १६ ॥

प्र० निरखिये क्या ? उ० निजरूप।

निरखत अपने रूपको, थीर होय सब अंग।
कहन सुनन कछु ना रहे, ज्योंका त्योंहि अभंग ॥ १७ ॥

प्र० सुनिये क्या ? उ० गुणवार्ता।

सुनिये गुणकी बार्ता, औगुन गुनिये नाहिं।
हंस छीरको गहत है, नीरस त्यागत आहि ॥ १८ ॥

प्र० साधिये क्या ? उ० इन्द्री।

साधे इन्द्री प्रबलको, जिहिं ते उठे उपाध।
मन राजा बहकावते, पाँचो बडे असाध ॥ १९ ॥

प्र० मारिये क्या ? आशा।

मारिये आशा साँपिनि, जिन डसिया संसार।
ताकी औषध तोष है, यह गुरु मंत्र विचार ॥ २० ॥

प्र० दीजे क्या ? उ० दान।

भूखेको कछु दीजिये, यथा शक्ति जो होय।
ता ऊपर शीतल बचन, लखी आत्मा सोय ॥ २१ ॥

प्र० बडा पुण्य क्या ? उ० दया।

दया पुण्य सबसे बडा, सबके ऊपर भाख।
जीव दया चित्त राखिये, वेद पुराण है साख ॥ २२ ॥

प्र० बडा पाप क्या उ० हिंसा।

बडा पाप हिंसा अहै, ता समान नहिं कोय।
लेखा मांगे धर्म जब, तब सब नौबत होय ॥ २३ ॥

प्र० खुशबूई क्या ? उ० यश।

खुशबूई यशकी भली फैल रही चहुँ ओर।
मल्या गिरि सम गंध है, प्रगट बसे जग सोर ॥ २४ ॥

प्र० दुर्गंध क्या? उ० अपयश।

अपयश सम दुर्गंध नहीं, नीका लगे न सोय।
जैसे मलके निकटमें, बैठ सके ना कोय॥ २५॥

प्र० धारिये क्या? उ० धीरज।

धीरज धरिके जानिये, समुझि सबनकी रीति।
उनकी औगुन आपमें, कबहुँ न लइये मीति॥ २६॥

प्र० ठहराइये क्या? उ० मन।

मन ठहराये जानिये, अनसुझ सबै सुझाय।
ज्यों अंधियारे भवनमें, दीपक बारि दिखाय॥ २७॥

प्र० होनी क्या? उ० होनहार।

होनी सोई होत है, होनहार जो होय।
रामचन्द्र वनको गये, सुख आवत दुख जोय॥ २८॥

प्र० विचारिये क्या उ० निज तत्त्व।

जो निज तत्त्व विचारिके, राखे हिये समोय।
सो प्रानी सुखको लहै, दुख नहिं दरसे कोय॥ २९॥

प्र० तौलिये क्या? उ० बोली।

बोली तो अनमोल है, जो कोइ बोले जान।
हिये तराजू तौलके, तब मुख बाहर आन॥ ३०॥

प्र० सर्वोपरि क्या? उ० गुरुकी दया।

सर्वोपरि गुरुकी दया, जो हारी भव खेद।
गुरु भगता सो जानई, और न पावे भेद॥ ३१॥

सवैया—भाग जगे जब पूरबको तब, श्रीगुरुदेव दया करि हेरी। ज्ञान कपाट उघार दियो जब, मोह निशाके मारग फेरी॥ थोरेइमें समझाय दियो तब, धीर भयी चंचल मति मेरी। सूझ परो सबही घट साहब, छूटि गयी सब तर्क घनेरी॥

इति तोसा यंत्र॥

शब्दावली-छठा खंड।

अथ शब्द प्रारम्भः।

शब्द १-संतो सतगुरु अलख लखाया। जासो आप अपन दरसाया॥ बीज मध्य ज्यों वृच्छ देखिये, वृच्छ मध्य ज्यों छाया॥ परमातममें आतम जैसे, आतम मध्ये माया॥ ज्यों नभ मध्ये सुन्न देखिये, सुन्न मध्य ऊंकारा॥ अच्छरमें निःअच्छर दरशे, छर अच्छर विस्तारा॥ ज्यों रवि मध्ये किरन देखिये, किरन मध्य परकासा॥ पारब्रह्मते जीव ब्रह्म है, इमि जीव मध्यमें स्वासा॥ स्वासा मध्ये शब्द देखिये, अर्थ शब्दके माहीं॥ ब्रह्मते जीव जीवते मन है, न्यारा मिला सदाही॥ आपे बीज वृच्छ अंकूरा, आप फूल फल छाया॥ सूरज किरन प्रकाश आपही, आप ब्रह्म जिव माया॥ आतममें परमातम दरसे, परमातममें झांई॥ झांईमें परझांई बोलै, लखे कबीरा साई॥

शब्द २-संतो गगनमंडल लगी तारा। खोलैंगे कोई संत जौहरी कोटन मध्य बिचारा॥ प्रथमें सोहं ध्यान लगावें ता बिच सुरत करै पैठारा॥ तब आगेकी सुध कीजिये, ता भीतर निज रूप हमारा॥ मंडल भीतर पुरुष बिराजे, कुलफ तीन तहां अगम अपारा॥ ताकी कूंची गुरुगम मांहीं, ज्ञान ग्रंथसो न्यारा॥ जुगभर जोग समाध लगावे, कोटन करे बिचारा॥ पुरुष रूप कबहूं ना दरसे, जो गुरु मिलै न सारा॥ जब गुरु वहियां होय

दया निधि, निज मति खोल सुधारा ॥ तबै हंसको मारग सूझै, खोलै कुलफ किवारा ॥ ता गुरुपै तन मन धन वारे, छोड़ कपट व्यवहारा ॥ तब गुरु होय कृपाल जीवपै, कागाते हंसा कर डारा ॥ कही हमारी मानो हंसा, या मति कोट ज्ञानसो न्यारा ॥ जीवत हंसा लोक समावे, जो यह शब्द बिचारा ॥ अजपा ध्यान गगनमें दरसे, है सबहीसों न्यारा ॥ कहैं कवीर सुनो हो संतो, भेंटो निज करतारा ॥

शब्द ३-संतो वह घर सबते न्यारा। जहां पूरन पुरुष हमारा ॥टे०॥ जहां न दुख सुख सांच झूठ नहिं, पाप न पुन्य पसारा ॥ ना दिन रैन चंद ना सूरज, बिना जोति उजियारा ॥ ना तहां ज्ञान ध्यान ना जप तप, बेद अहै नहिं बानी ॥ करनी धरनी रहनी गहनी, ये सब वहां हेरानी ॥ धरना अधर न बाहिर भीतर, पिंड ब्रह्मांडौ नाही ॥ पांच तत्त्व गुन तीनों नाहीं, साखी शब्द न ताही ॥ मूल न फूल बेल ना बीजा, बिना वृच्छ फल सोहै ॥ वोहं सोहं अर्ध उर्ध नहिं, स्वासा लेखत को है ॥ ना निरगुन ना सरगुन भाई, ना सुच्छम अरु अस्थूला ॥ ना अच्छर ना अविगति भाई, या सब जगके भूला ॥ जहां पुरुष तहंवां कछु नाहीं, कहें कवीर हम जाना ॥ हमरी सैन लखै जो कोई, पावे पद निर्वाना ॥

शब्द ४-संतो वह घर ऐसा जाना। जहवां है पुरुष ठिकाना ॥टे०॥ जब कछु रचना ताहि धनीका, आद न अंत पसारा ॥ रूप रेखा ना वरन अवरन, तबकी समुझ बिचारा ॥ ईच्छा एक भई सम्रथसों, ताका सब मंडाना ॥ फिर नहिं साहब ईछा आये, ईछा यहां लुकाना ॥ ईच्छाते शब्द सुरत नौतम भये, इनके कुंभ बनाया ॥ कुंभै उपजे कुंभै बिनसे, ईच्छा आवे जाया ॥

सब नर चाहै बाहर भीतर, नख सिख ईच्छा खेला॥ ईच्छा भेद लखे जो कोई, पावे पुरुष सुहेला॥ ज्यों जब त्यों अबही है संतो, समुझ जुगत सो पावे ॥ कहैं कबीर शब्दते न्यारा, इस विधि पुरुष रहावे ॥

शब्द ५–संतो दृष्टि परे सो माया ॥ वह तो अचल अलेख एक है, ज्ञान दृष्टिमें आया ॥ सतगुरु दिये बताय आपमें, है माहीं सत सोई ॥ दूजा कीतम थाप लिया है, मुक्त कौन विध होई ॥ काया झांईं त्रिगुन तत्त्वकी, विनसे कहवाँ जाई ॥ जल तरंग जलहीसो उपजे, फिर जल मांहि समाई ॥ ऐसी देह सदा गत सबकी; मनमें हरदम कोइ उचारे ॥ आपे भयो नाम धर न्यारा, इस विधि माया देख विचारे॥ आपे रहै समाय समुझमें, ना कहुँ जाय न आवे॥ ऐसी स्वासा समुझ परे जब, पूजे काह पुजावे ॥ धरै न ध्यान करै ना जप तप, राम रहीम न गावे ॥ तीरथ बरत सकलो भ्रम छोडे, सुन्न दौर ना जावे॥ जोग जुगतसो कर्म न छूटे, आप अपन ना सूझे॥ कहैं कबीर सोइ संत जौहरी, जो या समुझे बूझे ॥

शब्द ६–संतो तन चीन्हे मन पाया ॥ तनही मन है मनही मन है, मनही निरंजन राया ॥ मन गुन तीनों पांच तत्त्व है, मनका सकल पसारा ॥ जैसे चंद उदकमें दीसे, है मांही सत न्यारा ॥ जागृत सुपन सुषोपत तुरिया, चारों मनके झांईं ॥ मन औतार असंख्य कला होय, मनते दुसरा नाईं॥ आद हता सो अब है संतो, सतगुरु भेद बताया॥ कहैं कबीर कंचनके भूषण, एक हुवा जब ताया ॥

शब्द ७–संतो ज्ञान कौनसे कहिये, कौन ध्यान विज्ञान कौन है, कैसे निज पद लहिये ॥ को है जीव ब्रह्म कहु को है, को

अच्छरसे न्यार ॥ को है नाम अनामी को है, को कहिये औतारा ॥ चार अवस्था पांचौ मुद्रा, जोग करे सो कवना ॥ मुक्त नाम काहे सो कहिये, कौन सार निज पवना ॥ कहो शब्द कहांसे आया, करत अवाज अमोला ॥ काट कसर होत अंदरमें, कौन राह होय बोला ॥ बाहर भीतर व्यापक को है, सकल ठौरमें बासा ॥ उतपति परलै कौन करत है, को कर सबे तमासा ॥ येता जुग्त लखे सो को है, अलख नाम है काको ॥ कहैं कबीर सुनो हो संतो, खोज करो तुम ताको ॥

शब्द ८–संतो सुनो शब्दका ज्वाबा ॥ करिहो छान जान जब पैहो, हासिल सबे हिसाबा ॥ ज्ञान सोई जो आतम चीन्हे, और ज्ञान कछु नाहीं ॥ चार दिसाकी छोंड आसरा, मगन रहे मन माहीं ॥ ध्यान सोई जो उनमुन दरसे, बालक सम विज्ञाना ॥ या रहनीमें चूके नाहीं, चहे न मान गुमाना ॥ जीव सोई जो जुग जुग जीवे, उतपति परलै माहीं ॥ देही धर भरमैं चौरासी, निरभय कबहूं नाहीं ॥ ब्रह्म सोई जो सब घट व्यापक, निअच्छरको छय नाहीं ॥ ऊंकार आद सबहीके, त्रिगुन तत्त्व ता माहीं ॥ नाम सोई जाके है रूपा, निअच्छर निज नामा ॥ राम कृष्न औतार आदि लो, धरे निरंजन जामा ॥ शब्द सोई जो सबते न्यारा, त्रिकुटी मो टकसारा ॥ कंठद्वार होय बानी बोलै, निकसे मुखके द्वारा ॥ मनहिं अवस्था मनही मुद्रा, मन करता तिहुँ लोका ॥ मुक्त नाम वाहीसो कहिये, मिटगये धंधा धोखा ॥ सार पवन सबहीके ऊपर, पंचासीके पारा ॥ उतपति परलै काल करत है, तासो है वह न्यारा ॥ कहै कबीर यह लेख बताऊं, संत होय सो बूझे ॥ गुप्त प्रगट औ बाहर भीतर, सकल ठौर तिहिं सूझे ॥

शब्द ९–संतो काम सकल जग खाया ॥ टे० ॥ स्वादी जीव

कोई ना बांचे, पर घर गमन कराया॥ काम लहर काहू ना चीन्हा, कहो कहांसे आया॥ जासों भयो ताहि घर खायो, खाता विलंब न लाया॥ अद्यारूप ब्रह्म छय कीन्हो, तन दे नाथ गिराया॥ ब्रह्मा विष्णु मुनिजन जोगी, सकल जीव भरमाया॥ स्वर्ग मृत्यु पाताल कामवस, चार खान रहु छाया॥ कहे कबीर काम जोरावर, तीन लोक घर खाया॥

शब्द १०–संतो निरंजन जाल पसारा॥ टे०॥ सरग पाताल रचा मृत्युमंडल, तीन लोक बिस्तारा॥ ब्रह्मा विष्णु शंभु प्रकट कर, तेही दीन्हो सिर भारा॥ ठांव ठांव तीरथ वरत रोपे, ठगवेको संसारा॥ चौरासी लक्ष जीव फंदाने, कबहुं न होय उबारा॥ जारि बारि भसम करि डारी, फिर फिर दे औतारा॥ आवागमन रहे उरझाई, बूडे भौ मंझारा॥ सतगुरु शब्दके बिना चिन्हारी, कैसे उतरे पारा॥ माया फांस सकल जिव फांसे, आप भये करतारा॥ अजर लोक जहां पुरुष बिदेही, जहांके मूंदो द्वारा॥ ब्रह्मा विष्णु महेश्वर देवा, ये ओइले व्योहारा॥ जो साहबसे निरंजन प्रगटे, सो सबहीसे न्यारा॥ महाकालसे बांचा चाहो, गहो शब्द टकसारा॥ कहै कबीर अमर कर राखों, जो निज होय हमारा॥

शब्द ११–संतो माया तजी न जाई। जैसे बेल वृच्छ लपटाई॥ टे०॥ काम तजे तो क्रोध न छूटे, क्रोध तजे तो लोभा॥ लोभ तजे तो आशा मांडे, मान बडाई शोभा॥ ग्रह तजे तो मठी बनावे, उदै अस्त दे फेरी॥ कुटुम्ब तजे सिख साखा चाहै, मन मायाने घेरी॥ देखत पैसा हाथ न छूवै, फूटी फावरी ताके॥ आदर मान कछू ना चाहै, दीनी माया झांके॥ कर्म संजोग भया ना पावत, तौ लग माया त्यागी॥ आशा तृष्ना मिटी

न मनकी, का ग्रेही बैरागी ॥ स्वामी सिष सखाके कारन, सौ जोजन चलि जावे॥ जो छूटे तो सीधे छूटे, हिरदै ज्ञान समावे॥ माया त्यागे मन बैरागी, सबदमें सुरत समानी ॥ कहें कवीर सोई संत जौहरी, जिन झूठी कर जानी ॥

शब्द १२–संतो सहज समाध भली है ॥ जबसो दया भई सतगुरुकी, सुरत न अनत चली है॥ टेक ॥ जहँ जहँ जाउँ सोई परिकरमा, जो कछु करों सो पूजा॥ ग्रह उद्यान एक करि लेखों, भाव मिटाऊँ दूजा ॥ शब्द निरंतर मनुवा राचे, मलिन बासना त्यागी ॥ जागत सोवत ऊठत बैठत, ऐसी तारी लागी ॥ आंख न मूँदो कान न रूँधो, काया कष्ट न धारों॥ उघरे नैनमें साहेब देखो, सुंदर बदन निहारों ॥ कहें कवीर या उन्मुनि रहनी, जो प्रगट करि गाई॥ दुख सुखके वह परे परमपद, सोई सुख रहा समाई॥

शब्द १३–संतो एक पंथ दोय बाटा ॥ आगे अंतरगत एक दुबिधा, तहांसो मारग फाटा ॥ टेक ॥ हिंदूके हद गऊ देहरा, तीरथ व्रत स्नाना ॥ बकरी मार मांस मुख मेलै, कहो रामका जाना॥ रोजा बांग निमाज गुज़ारे, मक्के मसीद भुलाना॥ तसबी फेर ततबीर न छोडे, कहो अलह का जाना॥ अपनी बुधसो छेदे काना, सुन्नत वही कराई॥ जोरे हुकम अल्लहके होता, कटी क्यों ना आई ॥ तुरुक सुन्नत ईंद्रीका कीन्हा, मूल न काटे मीयां ॥ विन सुन्नत बीबी घर मांही, क्यों राखे बिन कीया॥ हिंदूकी दया मिहर तुरकनकी, दोनों घटसे भागी॥ वे हलाल वे झटका मारें, आग दोउन घर लागी ॥ सूकर गऊके एकहि लोहू, एक हाड़ इक चामा॥ कहे कवीर हम दोनों त्यागे, सब घट आतमरामा॥

शब्द १४–संतो ऐसी भक्त निरासा ॥ जो कोइ चाहैं मुक्ति पदारथ, छांडै सबकी आसा॥टेक॥ जो माया परपंच न होता,

नृप जंगल क्यों जाता ॥ दे पाहन पारस तेली घर, दत्तखरी क्यों खाता॥ रतन जडित सुखसेज साहके, नामदेव जलहि बहाया॥ गोरख कनक कूपमें डारे, गुरू कहँ चानक लाया ॥ गरभवास शुकदेव महामुनि, महासुमत होय जागे॥ होय अनुराग ब्रह्मसो झगडे, मनबांछित फल मांगे॥ साहेब कवीर भक्त परमारथ, अम्मर बेचन आये ॥ ब्रह्मरूप होय शब्द सुनाये, देत गहर ना लाये ॥

शब्द १५-संतो मेहीं होय सो पावे ॥टे०॥ खांड जो बिखरी रेतमें, हस्ती चुनी न जाय॥ या बूरेका यही महातम, चींटी होय चुन खाय ॥ मोटे काते बिने गूझनी, मिहीं कहांसे पावे ॥ वा कोरीको दोष न दीजे, मिही बिन मिहीं न पावे ॥ मोटे माटी बसे कुम्हारके, मुगदर मार दिवावे॥ मोटेको जब मार परत है, तब तिहिं कौन छुडावे॥ कूट काटके ले जल बोरे, मुकियन लात लगावे ॥ मिही भई कुम्हार मनमानी, कर गहि चाक फिरावे॥ कहैं कवीर मिहीं कर मनुवां, और मिहीं कहँ पावे ॥ मरजीवा होय जलमें पैठे, मानिक मोती लावे ॥

शब्द १६-संतो मोहि कोई समुझावे॥ जीव ब्रह्म एकही दोई, या मति मोहि बतावे ॥ टे० ॥ एक कहेते जाय न संशय, दोय कहेते न बनि आवे॥ कहुँ कहुँ एक कहूँ कहुँ दो है, शास्त्र दोऊ बिधि गावे॥ ब्रह्म सनातन भूतक कहिये, श्रीमुख गाय सुनायो॥ जीव सदा उपजे औ बिनसै, सो क्यों ब्रह्म कहायो॥ जीव कहांते आया संतो, कहो कहां को जाई ॥ आवत जात चार जुग बीते, गति न काहु लखि पाई॥ या संशय सतगुरु बिन संतो, को कर कृपा मिटावे॥ ब्रह्म अनादि जीव मायामें, प्रगट कवीर लखावे॥ ❋

शब्द १७-संतो अब हम आपा चीन्हा। निज स्वरूप प्राप्त है नितही, अचरज सहित सो कीन्हा॥ टे०॥ ना हम मनुष देवता

नाहीं, ना ग्रेही बनखंडी। ब्राह्मण क्षत्री बैसहु नाहीं, ना हम सुद्र न दंडी॥ ना हम ज्ञानी चतुर न मूरख, ना हम पंडित पोथी। ना हम सागर ना मरजीवा, ना हम सीप न मोती॥ ना हम सरगलोकको जाते, ना हम नरक सिधारें॥ हम सब रूप सबनते न्यारा, ना जीता ना हारे॥ ना हम अमर मरे ना कबहूं, हम कबीर ज्योंका त्योंही॥ ब्यास कपिलमुनि नामदेवऋषि, सबका अनुभव योंही॥ ❀

शब्द १८-संतो शब्द साधना कीजे। जाहि शब्दसे राम प्रगट भये, सोई शब्द लिख लीजे॥ टे०॥ शब्दहिं वेद पुरान बखाने, शब्दहि शब्द ठहरावें॥ शब्दहिं सुर नर मुनिजन गावैं, शब्दका भेद न पावैं॥ शब्दै गुरु शब्द सुन सिष भये, शब्दै बिरला बूझै॥ जोई गुरु सोई सिष आतम, अंतरगत जब सूझै॥ शब्दै शब्द शब्द बहु अंतर, सार शब्द मथ लीजे॥ कहै कबीर जेहि सार शब्द नहिं, धृक जीवन जग जीजे॥

शब्द १९-संतो नैन बान है गाढे। जा तन लगे सोई तन जाने, परे चैन नहिं ठाढे॥ निस दिन व्याकुल फिरत रैन दिन, कामकलासो बाढे॥ आगे समुझ परेगी तोको, जब जम होइ हैं ठाढे॥ साहेब कबीर मिले गुरु पूरे, भौसागर सो काढे॥

शब्द २०-अवधू छर अच्छरसो न्यारा, तुम ताका करो बिचारा॥ टे०॥ खैंच पवन जो गगन चढावो, करो गुफामें बासा॥ गगन पवन जब दोनों विनसे, कहां रहे जोग तमासा॥ जब बिनसे वह ईडा पिंगला, रवि शशि सुषमन नारी॥ जो उनमुन सो तारी लावो, सो कहां रहे तुमारी॥ मेरुडंड पर डार दुलीचा, जोगी तारी लावै॥ सो सुमेरकी खाख उडेगी, काचा जोग कमावै॥ जो या जोति गगनमें दरशे, पानी मद्धे तारा॥ निघटे नीर बिनस गये

तारे, निकसो कौन दुवारा ॥ दोय तत्त्वके मध्य बीचमें, अटके मुनिवर जोगी ॥ अच्छरहूकी खबर बतावे, सोई मुक्त बियोगी ॥ वो तो पद दोनोंसे न्यारा, छर अच्छर ना हेरा ॥ कहैं कबीर ताहि लखि गोरख, बहुर न होय जग फेरा ॥

शब्द २१-अवधू कहि बतलाऊँ कैसा । एक अगम अगोचर ऐसा ॥ टे० ॥ जो कहिये सो हैबी नाहीं, है सो अगम न जाई॥ सैना बैना कासो कहिये, ज्यों गूंगे गुड खाई ॥ काजी हाथ किताब कुराना, पंडित वेद पुराना॥ वह अच्छर लिखवेमें नाहीं, मात्रा लगे न काना ॥ दिष्टि न आवे मुष्टि न आवे, बिनस न होय नियारा। ऐसा ज्ञान कथै जग गुरुवा, संतो करो बिचारा॥ कोई ध्यावे निराकारको, कोई ध्यावे ओंकारा ॥ वह तो पद दोऊसैं न्यारा, जानैं जाननहारा ॥ नाद वेद लों पढना गुनना, औ चतुराई भीना ॥ कहैं कबीर वह कबहुं न परले, जो सत बिरले चीन्हा ॥

शब्द २२-पी ले अवधू होय मतवाला, प्याला प्रेम अमी रसका रे ॥ पाप पुन्य दोउ भुगतन आया, कौन तेरा और तू किसका रे ॥ जो दम जीवो नाम गुन गावो, धन जोबन सपना निसिका रे॥ बालापन सब खेल गवाँया, तरुन भया नारी बसका रे ॥ वृद्धा भया कफ वायुने घेरा, खाट परे तन जात सकारे ॥ नाभि कमलमें है कस्तूरी, कैसे भरम मिटै पशुका रे ॥ विन सतगुरु इतना दुख पाया, जैसे भटकि मुवा मिरगा रे ॥ लख चौरासी उबरन चाहो, तो छाडो कामिनि चसका रे॥ कहे कबीर सुनो भाई साधो, नख सिख रूप भरा बिषका रे ॥

शब्द २३-करमनते सो करे करता रे ॥ टे० ॥ कबहूं सैन करे सागरमें, कबहूं सोषै सब सरिता रे॥ कबहुं रावसे करत भिखारी,

कबहूं रंक सिर छत्र धरता रे ॥ पुतना को न सुकृत कर आई, गुन औगुन वाके सब हरता रे ॥ ताहि मार बैकुंठ पठाई, बलि-राजासे कौन खता रे ॥ एक पुत्र बिन नृप पचि हारे, ताके हते बहुत बनिता रे ॥ साठ पुत्र नारदको दीन्हे, माया त्यागि रहे विरक्ता रे ॥ पंच भ्रतारीके पन राखे, दोष लगाये पतिबरता रे ॥ कहैं कबीर करतासे डरिये, और सकलके झूट मता रे ॥

शब्द २४–करन हारसे डरते रहिये, करतन लागे घडी अरु पल रे ॥ टे० ॥ पलमें देखे महल बावडी, पलमें देखे टीबा थल रे ॥ पलमें मेह बरसते देखे, पलमें देखे चलता हल रे ॥ पलमें पवन अंधेरी चालै पलमें चालै पातल दल रे ॥ दो तपसी जहां खडे पुकारै, ताको दीन्हे अमृत फल रे ॥ पलमें पच्छी बन बन बोलै, पलमें आन कटाया गल रे ॥ पलमें घरसे बाहर काढे, जैसे काढे राजा नल रे ॥ जो कछु किया सो ध्रुवने पाया, किया राज अरु भया अटल रे ॥ साहेब कबीर अवधूसे बोले, तिनहु न पाई पलकि गैल रे ॥

शब्द २५–अवधू सो जोगी गुरु सांचा। प्रभुजीको सेवो मनसा बाचा ॥ टे० ॥ सीलकी मुद्रा सहजकी झोरी, सुरत निरत ले खेलै ॥ ज्ञान भभूत सबही तन लागा, साहेब अंतर खोलै ॥ क्षमा दंड संतोष मेखला, अम्मर प्याला पीवे ॥ अविनाशी घर भिच्छा मांगे, ऐसे जोगी जीवे ॥ मन थिर राखै आगम खोजे, दुनियाँ संग न लावे ॥ कहे कबीर या जोग जुगतसो, अविनाशी को पावे ॥

शब्द २६–अवधू ऐसो ज्ञान बिचारी। यामें कौन पुरुष को है नारी ॥ टे० ॥ ब्राह्मणके घर नेती धोती, जोगीके घर चेली ॥ कलमा पढ पढ भई तुर्कनी, ताते रहत अकेली ॥ नां मैं ब्याही नहिं मैं कुँवारी, पूत जना जन हारी ॥ कारे मूंड कोई ना छांडचो,

अजहू बाल कुवाँरी॥ ससुर हमारा बाला भोला, सासू बाल कुवाँरी॥ सांई हमारा पालन झूलें, हमहिं झुलावन हारी॥ ना जाऊं ससुरार न नैहर रहुं मैं, कोउ पुरुष संग नाहि नसाऊँ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधू, नहीं अंगसे अंग मिलाऊँ ॥

शब्द २७-हंसा छोड करमकी आसा। कर्मकाल सब जगत नचावे, फिर फिर करे गरासा ॥ टे० ॥ उपजन बिनसन कर्महिं कहिये, कर्महिं जगत बिनासा॥ कर्महिं काल व्याल पुनि कर्महिं, कर्महिंका सब त्रासा॥ जप तप कर्म बांधि जग राखे, पाप पुन्य बिस्वासा॥ कर्महिं देवल तीरथ कहिये, कर्महिं अलह उदासा॥ कर्महिं जोग ध्यान तप पूजा, कर्म चढावे दासा॥ कर्महिं दुख सुख जड चेतन है, तीन लोक परकासा॥ कर्महिं देय लेय पुनि कर्महिं, यज्ञ दान रहिवासा॥ प्रतिमा भूत कर्मके बस है, सुविचार अचार निवासा ॥ कर्म दुखी दालिद्री कहिये, कर्महिं भोग बिलासा ॥ कर्म बिकार राह तज बैठो, कहैं कबीर सुख बासा ॥

शब्द २८-हंसा त्रिगुन कर्मकी मोट। राजस तामस और सतोगुन, बिषम कालके चोट ॥टे०॥ द्वादस बान बंध्यो तीनोको, कोई बडे कोइ छोट। चित बुध अहं मोह मद माया, मार चराचर चोट ॥ राग द्वेष भौं बान कामके, अहि रैन दिन कोट। जरा मरन माहुर बंधायो, मरे विषनके चोट॥ एके दिष्टि बान सर ताने, चक्रदेव गन कोट ॥ जप तप कोट साधना पूजा, चढे मांस मद रोट ॥ नाना अमल मात जिव माते, ज्ञानहीन तन खोट। कहें कबीर बिन सतगुरु सेवा, करमन बांधल पोट ॥

शब्द २९-हंसा कर ले शब्द बसेरा॥ रोम रोम जमदूतन घेरो, ज्यों कांटे ढिग केरा॥टे०॥ अहिनिस बसो शब्दके मांहीं, गुरुमुख शब्द निबेरा॥ गुरुके बचन शिष्य जो माने, शब्द सुरति सो हेरा॥

शब्दसार गुरु बचन संदेसा, ताहि मध्य कर डेरा॥ गुरू शिष्यको पार उतारै, मिटै सकल जग फेरा॥ गुरुके शब्द हिये गहि राखै, त्रास करै बहुतेरा॥ ताके खुले नैन हिरदेके, दिव्य दृष्टि सो हेरा॥ सदा अधीन रहे संतनसो, जस भृंगी ब्रन फेरा॥ दरसे ताहि शब्द निसि बासर, जैसे चित्र चितेरा॥ निसि वासर जागे औ लागे, सिर पर शब्द उजेरा॥ कहैं कबीर जो सतगुरु सेवे, सो सतगुरु हित तेरा॥

शब्द ३०–हंसा करले शब्द नवेरा। देह धर करे अनेक चातुरी, मुवें कहां घर तेरा॥टे०॥ आपा मेट आपको खोजो, आपै मध्य बसेरा। आपा मेट आपको देखो, मिटे सकल जम जेरा॥ छाडौ कपट चातुरी तामस, छाडो कुमति बसेरा॥ ज्ञान गयंद चढो गुरु गमसो, काल होय तब चेरा॥ क्षमा शील संतोष धरन धर, शब्द सुरति कर मेला॥ भव बारिधि जब सहजे बांधो, बांध लेहु दिढ बेरा॥ सैन उलंघत चले मोह तज, सुखसागर कर डेरा॥ कहैं कबीर भव बारिध लांघो, दरस होय प्रभु केरा॥

शब्द ३१–हंसा निंदक जनि मुख आनो। निंदकके संगत मत बैठो, जनि अमृत विष सानो॥टे०॥ साधु जहां तहां निंदा नाहीं, शीलवंत निरबाना॥ दया प्रीत दीनता बरते, सतसुकृतको ध्याना॥ मात पिता सुत नारि बंधु हित, इतने संतत जानो॥ संकट हरन साधुके बाना, सत्त वचन फुर मानो॥ साध सनेह देह सुख पावे, दिन दिन उपजे ज्ञाना॥ दीन दुखीमें रहै उजागर, जागृत साध प्रमाना॥ निंदा करे औ साध कहावे, सो निंदक अज्ञाना॥ आप नष्ट औरनको घाले, जमपुर जाय निदाना॥ सात पांच नौ नेह बिसारे, भँवर गुफा अस्थाना॥ आवागवन मिटे चौरासी, कहैं कबीर प्रमाना॥ ❀

शब्द ३२–हंसा निंदकका भल नाहीं। निंदकके तो दान पुन्य व्रत, बहु प्रकार छै जाहीं ॥ टे० ॥ जा मुख निंदा करै संतकी, ता मुख जमकी छांहीं ॥ मज्जा रुधिर चले निसि बासर, कृमि कुबास तन मांहीं ॥ शोक मोह दुख कबहुं न छूटे, रस तजि निरघिन खाहीं ॥ बिपत बिपात कष्ट बहु पीरा, भौसागर बहि जांहीं॥ निंदकके रच्छक कोऊ नाहीं, फिर फिर अनल तन डाहीं॥ गुरु द्रोही साधनको निंदक, नर्क मांहिं बिहसाहीं ॥ जेहि निंदे सो देह हमारी, जो निंदे सो काही॥ निंदक निंदा कर पछतावे, साध संत हम आही॥ धरम दया संतोष समावे, क्षमा शील जेहि मांहीं॥ कहैं कबीर सोइ साध कहावे, सत गुरु संग रहाहीं ॥ ❀

शब्द ३३–हंसा आपमें आप निवेरो॥ आपन रूप देख आपहिमें, नौ निधि होवे चेरो ॥ टे० ॥ जागृत रहो सदा दिलमाहीं, ज्ञान रसिक ढिग हेरो॥ आपा मध्ये आप निहारो, आपा मेट सबेरो॥ सुरति आगे निरति करले, सिद्धि मिले बहुतेरो ॥ गृह बन बैठे काम धाममें, राह चलत पग हेरो॥ जागत लागो सोवत सपने, फहम करे फल केरो॥ सुषमनके घर फहम करे जब, तुरिया चित्त चितेरो॥ फहम आगे फहम पाछे, फहम दहिने डेरो॥ फहम पर जो फहम देखै, सो फहम है मेरो॥ आठो सिधि नव निधि पावै, सतगुरु फहम निवेरो॥ कहें कबीर भृंगीके कीडा, बहुर न कीटहि घेरो ॥ ❀

शब्द ३४–हंसा परख शब्द टकसारा। बिन पारख कोइ पार न पावे, भूलि मुवा संसारा॥टे०॥ बड बड साध जौहरी कहिये, पारख काहु न पाई॥ आये थे बैपार करनको, घरकी जमा गँवाई॥ बड बड साधू बानी छानी, राम भाग द्वय कीन्हा ॥ रा अच्छर पारख कर लीन्हे, म माया तजि दीन्हा ॥ राम रतन प्रहलाद

पारखी, जिन दिढ पारख कीन्हा ॥ इंद्रासन सुख आसन कीन्हे, सार वस्तु ना चीन्हा ॥ मुनि शुकदेव पर्मतत दरसी, आतम लीन न माया ॥ परआतम अजपा गहि चेते, न्यारा भेद न पाया ॥ अब सुन लेव जौहरी मोटा, खरा खोट जे बूझा ॥ शिव समान गोरख है जोगी, तिनहूँको ना सूझा ॥ जो कोइ जगमें होय पारखी, सो या पदको बूझे ॥ तीन लोक औ चार लोकलों, सबै ठौर तेहि सूझे ॥ कहैं कवीर हम सबको देखा, सबे लाभको धावै ॥ सतगुरु मिलै तो परख बतावै, ठीक ठौर तब पावै ॥

शब्द ३५–हंसा पूरण गढ चले भाई ॥ कच्चा कोट पक्का दरवाजा, गहिरे जंजीर लगाई ॥ टे० ॥ मस्त हाथी आन झुकाये, दुरमति लेत लडाई ॥ ज्ञान ध्यान दोय अनी बरोबर, यह दोय अदल सिपाई ॥ हिरदय ढाल राव सुमिरनका, जमकी चोट बचाई ॥ गगन घन धुन अनहद बाजे, बिन सीढी कहँ जाई ॥ पांचो मार करे बस अपना, तापर अदल चलाई ॥ सत्य शब्दको दिढ करि राखै, अनुभव कथा सुनाई ॥ कहैं कवीर जो अजपा जपते, तिन्हे काल नहिं खाई ॥

शब्द ३६–मनमीता गीता पढ सोई । बिन रसना अश्लोक यादकर, जामें अच्छर अंक न होई ॥ टे० ॥ सुसुम बेदका भेद समुझले, जा पढ पंडित निरमल होई ॥ बाहर भीतर अगम अगोचर, द्वादस आंगुर बांचे सोई ॥ जो पुन ग्यान ब्रह्म बिध धारे, आतम तत्त्व रख मुख गोई ॥ एक स्वासमें सकल पसारा, अछै नाममें सूरति समोई ॥ कहैं कवीर सोई सत जोगी, सायर गगन मिलावे दोई ॥

शब्द ३७–मन रे तू अबकी बेर सम्हारो । जन्म अनेक दगामें खोयो, बिन गुरु बाजी हारो ॥ टे० ॥ बालापनमें ज्ञान न तनमें, जब जनमें तब बारो ॥ तरुनापन तामसमें खोयो, वृथा किये

कूच नगारो॥ सुत दारा मतलबके साथी, ताको कहत हमारो॥ तीन लोक औ भुवन चतुरदस, सबहिं कालको चारो॥ पूर रह्यो जगदीश जगतगुरु, मिले रहे औ न्यारो॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधू, सब घट देखनहारो॥

शब्द ३८-मन तू समुझके लाद लदनियां॥ पीना होय इहां तू पी ले, आगे देश निपनियां॥ टे०॥ सौदा होय सो इहां कर लेना, आगे हाट न बनियां॥ बड बड नायक लाद गये हैं, तेरी बात कितनियां॥ जमराजाके दूत फिरत हैं, तोरि डारे गरदनियां॥ घरके लोग जगाती होके, छीन लेत परदनियां॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधू, शब्दमें सुर्त समनियां॥

शब्द ३९-मन रे तू मनहीमें उलट समाना॥ टे०॥ या मन हस्ती जंगल बासा, खोज सकल फल खाता॥ जो बस परे महावत केरे, दे अंकुश मुरकाता॥ या मन जोगी या मन भोगी, या मन देवी देवा॥ या मन उलट होत बैरागी, करै गुरूकी सेवा॥ मनके खोज कोई ना पावे, शिव सनकादिक ब्रह्मा॥ अपरंपार पार नहिं पावे, अगम अगोचर महिमा॥ नियरेके दूर दूरके नियरे, जिन जैसा अनुमाना॥ ओरियवतियोके चढे बडेरी, जिनरे पिया तिन जाना॥ अनुभव कथा कौनसे कहिये, है कोई संत विवेकी॥ कहैं कबीर गुरु दिये पलीता, वा घर विरला पेखी॥

शब्द ४०-मन तोसे केतक बार कहा। समुझ न गहे गुरुकी शरनागत, औरै रंग रहे॥ टे०॥ ना गुरु भजन ना साधू सेवा, एकौ ना निबही॥ तू ना लहुवे चतुर विवेकी, पय तजि पित्रत मही॥ मन मतंग फिरै कुजनमें, अंकुश शूल सही॥ हीरा रतन अमोल छोडके, कांचसो करत सही॥ जैसे माखी जतन करत है, तनके आड दई॥ आयो व्याधा सब रस ले गयो, आंखिन छार

दई ॥ लापर लंपट औ परनिंदा, या तेरी न गई ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधू, सुख तिहुँ लोक नहीं ॥

शब्द ४१-मन रे तू धीरज क्यों न धरे। शुभ औ अशुभ कर्म पूरबिले, रतिओ न घटै बढै ॥ टे० ॥ होनहार होवेसो होवे, चिंता काहू करे ॥ पशु पंछी औ कीट पतंगा, सबकी खबर करे ॥ गर्भ वासमें रच्छा कीन्ही, सो कैसे बिसरे॥ तुमतो हंस वहि साहेबकी, भटकत काह फिरे॥ सतगुरु छोड औरको धावे, काज तो नाहिं सरे॥ मात पिता सुत संपत दारा, मोहके झार जरे॥ समुझ देख मन कोइ न अपना, धोखामें काहि परे॥ संतन सरन गहो मोरे मन, कोटिन व्याध हरे ॥ कहै कबीर सुनो भाइ साधू, सहजे सहज जीव तरे ॥

शब्द ४२-मन रे तू बूझ सबद उपदेसा। सार सबद औ गुरुमुख बानी, ताका गहो संदेसा॥ टे० ॥ जाहि तत्त्वको मुनिवर खोजे, ब्रह्मादिक सो ज्ञानी॥ सोई तत्त्व गुरु चरनन लागे, भक्ति हेतकर प्रानी॥ प्रथमें दया दीनता आवे, हांसी मिथ्या त्यागी॥ आतम चीन्ह परातम जाने, सदा रहे अनुरागी ॥ पद प्रतीत औ शब्द कसोटी, निस दिन बिरह बिरागी ॥ जहांको अर्थ तहां लो बूझे, जहां लागी जहां लागी ॥ कहे कबीर यह तत्त्व जो बूझे, मानै सीख हमारी॥ काल दुकाळ तहाँ ना व्यापे, सदा करों रखवारी॥

शब्द ४३-मन रे तूं सपनेमें सुख पाया ॥ टे० ॥ अगम पंथ गुरुगमका चढना, बिन गुरु पंथ नसाया। सतगुरु शब्द कहा न माने, मारग कौन बताया ॥ ईहां आपने हेत जानके, जगमें करत बडाई। एक दिन होय कालका पहरा, बिन गुरु कौन छुडाई॥ या तन जान जरे जस लकरी, सब मिल देय जराई॥ लोग कुटुम मरघटके साथी, हंस अकेला जाई॥ झूठ मोह तजि देरे गवांरा,

करले नाम सगाई । निहअच्छर लख नाम धनीका, कहें कवीर समुझाई ॥

शब्द ४४–गगन बिच मनको रमना है ॥ टे० ॥ राखत नाद बिंदको बस कर बंक नाल चढ गमना है॥ बांधत मूल बिराजत आसन, उलट पलट सुषमना है॥ आवे न जाय रहे ना अस्थिर, उलट बहा तब जमना है ॥ कहें कवीर सुनो भाई साधू, जोग जुगतसो मलना है ॥

शब्द ४५–राम तेरो नाम बिना दुख भारी। ताते संतन यही बिचारी ॥ एक बेद कितेबा राते । एक मायाके मदमाते ॥ एक देश देशांतर डोले। एक बहु ज्ञानी हो बोले॥ एक नागा दूधाधारी। ताते मोहि अचंभा भारी॥ एक मौनी औ बिसवासी। ताते कटी न जमकी फांसी॥ एक काया कसत अपारा। एक मरत स्वरगके धारा ॥ एक किये ग्रुफामें बासा । जानो बहु जीवनकी आसा ॥ कोई आदि जुगादी जागे । जाके जरा मरन भ्रम भागे ॥ कहें कवीर बिचारी । भवसागर उतरो पारी ॥

शब्द ४६–राम रासो पंडित मोहि भावे, बिन जिभ्या बेद पढावे ॥ टे० ॥ एक कायथ गुनी कहावे । वह बिन मसी अंक बनावे॥ वह बिन मशि अंकम होई। तब बहुरि लिखे ना कोई॥ एक धोत्री धोवनहारा। वह बिन जल करत पखारा॥ वह बिन जल निर्मल होई । तब बहुरि न धोखे कोई ॥ एक बढई बहुते ज्ञानी। वह छीले बिना रुखानी॥ बिन काठके खंभ बनावे। तब बहुरि न जगमें आवे॥ एक खेवट बहुत बिदानी। वह खेवत है बिन पानी ॥ जब नइयामें नदियां समावे। तब उलटा डंड चढावे॥ एक पारधी चतुर सयाना। वह तो घात करे असमाना॥ बिन पिंडके सावज लावे। जब मनहिमें उलट समावे ॥ एक

माली चतुर बिदानी। वह सींचत है बिन पानी॥ बिन मूलके फूल ले आवे। तहवाँ मन मधुकर बिलमावे॥ एक सूई सीवन हारा। वह सीवत है बिन तारा॥ जब सुई सुमेरु समाना। कहैं कवीर तबै मन माना॥

शब्द ४७–भाई रे अनी लडे सो सूरा। दोय दल बिच खेले गुरु पूरा॥ टे०॥ जहां जन्म नहीं तहां मरना। जम आगे लेखा भरना॥ जमदूत खडे बैरी तेरे। का सोवत नींद घनेरे॥ जे बांध पांच हथियारा। गुरू ज्ञानके खर्ग सँवारा॥ जे मारे पांचों बाना। तब साहेब भये अगवाना॥ जहां तीर तुपक ना छूटे। उहां शब्दोंसे गढ लूटे॥ गढ भीतर हाकम होई। गढ गढ लूट सके ना कोई॥ जहां बजे जुझाऊ बाजा। सब कायर उठ उठ भाजा॥ कोई शूर लडे मैदाना। जे मार किया घमसाना॥ मनमार अगम गढ लीन्हा। सत्यब्रत पर डेरा दीन्हा॥ जहां बजे कवीरका डंका। तब जीत लिया गढ बंका॥

शब्द ४८–भाई रे मुसलमान सोई दीन। जाको पीर मिले परवीन॥ टे०॥ बकरी पांच बसे घट भीतर, ममता मुरगी तीन॥ इनको मारे जीव उबारे, घटहीमें मक्का मदीन॥ कहता है मुरदा नहिं खाते, कर हलाल सो खाना। घट भीतरसे जीव निकस गये, सो मुरदा परवाना॥ जिस कपडेमें छींटा लागे, उसको कहत नपाक। जो मुरगी कीडा चुन खाती, सो कैसे भइ पाक॥ किया पेशाब उदरके भीतर, जासो जिव उतपानी। जीव मारके मांस भखत है, सो कैसे मन मानी॥ परघाती पर पीर ना जाने, सो काफिर बेपीरा। कहैं कवीर अंध नर भकुवा, कैसेके लागे तीरा॥

शब्द ४९–भाई रे मुसलमान होय भूला। मुसल्लमदीन छोडके ऐसा, कुफर माहिं दिल फूला॥ टे०॥ मुसलिम सोई कुफर सब

छाडे, जीव दगा ना देवै। दीन ईमान दया दिल धरिके, इलम इलाही लेवै॥ आला इलम नहीं दिल आया, क्या अल्ला गोहराया॥ हल किया हक ना हाज़ा, छूरी हलक हिलाया॥ रब्ब रहीम करीम काहेका, अकरम कफ़र कराया॥ रोजा वजू निबाज नबीका, सो ऐसा डहकाया॥ हैदर हैदर करता डोलै, दर दर भया दिवाना॥ जिस घरसे वह हैदर आया, तिस घर खबर न जाना॥ का हैदर कादर है दरका, का हजरत का हक्का॥ जियरत करे जहां जुल्मतकी, खबर नहीं दिल मक्का॥ कबर मुकरबा महजिद मुरदा, पूज मलीदा सेती॥ मुरगी बकरी गाय जबह कर, भया जाय जम हेती॥ भया मुरीद न मुरदा छूटा, कैसा पीर तुम्हारा॥ बदबखती बद बाद गई ना, गयो इमान खुवारा॥ सुन्नत ज़बह न किया महम्मद, जे कुरान जग लाया॥ रोजा वजू निमाज बंदगी, कलमा पांच पढाया॥ मिहरबान दिल भया महम्मद, मारत जीव बचाया॥ हिरनी और फाखता फांसी, जामिन देइ छुडाया॥ तुमको कौन सिखाया ऐसा, किया आप मनभाया॥ दोजक जुबाँ स्वादके खातर, जीव ज़बह कर खाया॥ जो कोइ कहे इब्राहीम, कीन्ह तो ऐसा ना कीन्हा॥ हक्क हुकुम हक्कके खातिर, बेटाका गल दीन्हा॥ आंख मूंद बेटा गल देते, दुम्मा बदले आया॥ मरा नहीं हरामी बोला, गुसा इब्राहिम लाया॥ छूरी फैंक दई असमाने, उहां टीडी गल दीना॥ परी आय छुरी जल भीतर, दियो आय गल मीना॥ दुमा टीडी मछली तीनो, बदलेमें गल दीन्हा॥ फजल भया फरजंद बचाया, फिर ऐसा ना कीन्हा॥ अपने बदले जो गल देवै, ताहि मार क्या खाना॥ कहें कबीर सुनो भाइ मुसलम, रहिमत कहां समाना॥

शब्द ५०–जोगियासे मेरा दिल लागा॥ टे०॥ जबसो प्रीति

लगी जोगियासे, भयउं हंस रहेउं ना कागा॥ जोगियाके कारन जोग कमाऊं, आठ पहर रहों जागा ॥ जब तब जोगिया मौज करत है, पाय अमर पद धागा ॥ कहें कवीर सुनो भाई साधू, जरा मरन भ्रम भागा ॥

शब्द ५१–जोगी नाम न जाना हियेसे॥ टे० ॥ काह भये गल कंठी डारे, काह तिलक सिर दियेसे॥ काह भये सिर जटा बढाये, का गुदरीके सियेसे ॥ काह भये बन बनके डोले, का दूबी रंग पियेसे ॥ काह भये काशीके वासे, का गंगाजल लियेसे ॥ कहें कवीर सुनो भाई साधू, का रे बहुत दिन जियेसे ॥

शब्द ५२–प्रभु तो भगतीके बस भाई। जात बरन कुल रीझत नाहीं, ना रीझे चतुराई ॥ टे० ॥ करमा को न अचार कियो है, कब काशी करिआई॥ छप्पन भोजन पीछे लागे पहिले खिचड़ी पाई॥ सेवरी जात मुसहरिन कहिये, जूठ बेर ले आई॥ प्रीति जान ताके फल खाये, तीनों लोक बडाई॥ ब्याधा कबें अचार कियो है, कब गीता पढ भाई॥ तुरत गोपालको पकरि ले आया, घरी न दुसर बिताई ॥ तिरलोचन नामदेव पीपा, हरिसों हेत लगाई ॥ सैनरूप होय मरदन कीन्हे, आप भये हरि नाई॥ सहस्र अठासी मुनी जग्यमें जेवैं, तबहुँ न घंटा बाजे॥ कहें कवीर सुपचके जेंवे, घंटा मगन होय गाजे ॥

शब्द ५३–अब हम जानो काया बुढानी॥टे०॥ हाड सूख गये मांस सूख गये, पांव परे जैसे ऐंचातानी ॥ आंखिन आगे सूझत नाहीं, लार गिरे जैसे ओरियक पानी॥ धीया पूता कोई काम न आवे, देत न बुंदभर पानी ॥ कहें कवीर सुनो भाई साधू, का सोचो दिन आय सिरानी ॥

शब्द ५४-जगमें गुरु समान नहि दाता, अरे मन ऐसो जान रे ॥ टे० ॥ आगे दिन पाछे गये, किये न हरिसों हेत। अबके चेते का भये, जब चिरिया चुन गई खेत ॥ बनजारेके बैलवा, लदे देसंतर जाय। एकानके पूरे भये, एकन मूल गँवाय॥ कहैं कबीर सुन केसवा, तेरी गत अगम अपार। साधुन लादे नाम धनीका, बिष लादे संसार ॥

शब्द ५५-चुनरिया पचरंग, मोहे ना सुहाय ॥ टे० ॥ पांच तत्त्वकी बनी चुनरिया, नाम बिना रंग फीक दिखाय॥ या चुनरी मोरे मैकेसे आई, अपने गुरुसे लई बदलाय॥ चुनरी पहिर धनि गई बजरवा, काल निगोडा ले पछुवाय॥ कहें कबीर सुनो भाई साधू, को मोरे आवे को मोरे जाय ॥

शब्द ५६-कौने रंगरेज रंगी मोरी चूनरी॥ टे० ॥ धागा पांच पचीस यामें लागे, हाथ परी परमारथ डुलरी ॥ चौकी चार प्रेमका बूटा, पहिरत या धनि होगई पिडरी॥ पहिर ओढ धनि भई सतमारग, समुझ समुझ भई दिन दिन दुबरी ॥ कहैं कबीर अजब रंगरेजवा, साधु संगति गहि चरनन उबरी ॥

शब्द ५७-संतो चुनरी मेरि नई ॥ टे० ॥ पांच तत्त्वकी बनी चुनरिया, सतगुरु मोल दई ॥ भौ सागरमें पहिर न पाऊं, रंग बदरंग भई॥ दिना चारके पहिरे ओढै, मैली बहुत भई॥ मैं अपने जिव लाज मरत हौं, अबकी रंग दई॥ या चुनरीको बडो भाग है, सतगुरु मिले सही॥ जो चुनरीकी मरम बताई, प्रेममें डुबाय दई॥ साहेब कबीर या रंग बनाये, तामें बोर दई॥ जन्म जन्मकी छूटी मलामत, चटकमें चटक भई ॥

शब्द ५८-मेरी रंगसे चादर भीनी॥टे०॥ पांचतत्त्वकी चादर हमरी, तीन गुनन ले बीनी ॥ धोबिया देव हाथ नहिं लागे, रंग

मैली तन झीनी ॥ दास मलूक सलूकसे ओढे, रघुवर टुकरी लीन्ही ॥ धनि धर्मदास जुगतसे ओढे, गढ बांधो चौका कीन्ही ॥ साहेब कवीर शब्दसे ओढे, जस लीन्ही तस दीन्ही ॥

शब्द ५९–जोगी चेतन नगरमें रहुरे ॥ टे० ॥ प्रेमप्रीति रंग ओढो चादर, दिलकी तसबी गहुरे ॥ अजपा जाप जपो दोय अच्छर, काल भरम सब डहुरे ॥ नामकी धूनी अंदर बारो, भेद न परगट कहुरे ॥ आसन मार गुफामें बैठो, नाम धनीका भजुरे ॥ सोहं शब्द समाय सबनमें, स्वासा संग धुन गहुरे ॥ कहै कवीर सुनो भाई साधू, भौजल पार उतर रहु रे ॥

शब्द ६०–सोवे जोगिया कौन जगावे ॥ टे० ॥ गढ परबत जोगी कुटी बनावे । मृगछाला जोगी झाड बिछावे ॥ अन्न न खाय जोगी पानी न पावे । ये जोगिया जग रूप दिखावे ॥ जीव न सीव स्वासा सुर नाहीं । जाय गगन बिच ध्यान लगाहीं ॥ कहैं कवीर सुनो साधो । या जोगियाको कैसे समुझाई ॥

शब्द ६१–संतो धोका सबको मारे ॥ टे० ॥ ऐसा है कोई संत बिवेकी, निरमल ज्ञान विचारे ॥ कोई खोजे शिवशक्तीमें, कोई खोजे काया ॥ कोई खोजे सुन्न महलमें, ऐसे जग भरमाया ॥ कोई मुनीजन मनको मूंडे, कोई उलटा पवन चढावे ॥ कोई जंत्र मंत्र कोई ओषद खोजे, कोई काशी करवत लावे ॥ कोई जंगम जलमांहिं नहावे, कोई कोई सेष सयाना ॥ कोईकोई देश दिसंतर डोले, कोई तीरथ ब्रत लपटाना ॥ कोई कर्म भर्मकी सांकर काटे, कोई पारब्रह्मको धावे ॥ कहें कवीर सोई जन मेरा, सिर अपने भार न लावे ॥

शब्द ६२–हंसा सुरत करो ठहराई ॥ जासों जिव परले ना जाई ॥टे०॥ साख रमैनी बहुत कहतहो, कथ कथ गये अपारा ॥ राई भर

अमृतके पाये, हंस भये ततसारा॥ राईभर है वस्तु हमारा, अरध राई अस्थूला॥ लहर लहर घट भीतर होवे, सोई पुरुष निज मूला॥ सेत पान पुरइन पर चौका, जहां एक पुरुष है सौरा॥ असंख पंखुरीके लोक बना है, सिर ढुरत अग्रके चौंरा॥ कहैं कवीर हम शब्द कहा है, कछू न राखी गोई॥ है अनमोला शब्द हमारा, लख पावै जन सोई॥

शब्द ६३-अवधू भजन भेद है न्यारा॥टे०॥ का मुद्रा मालाके पहिरे, का चंदन घिसे लिलारा॥ मूंड मुडाय का जटा रखाये, का अंग लगाये छारा॥ का गाये का लिख पढ लाये, का भरमे संसारा॥ संध्या का तरपन का कीन्हे, का षट कर्म अचारा॥ का पानी पाहनके पूजे, का कंद मूल अहारा॥ तीरथ व्रत का संजम कीन्हे, जो नहिं तत्त्व बिचारा॥ कर परचे स्वामी होय बैठे, कर विवेक व्योहारा॥ दया धरमके मरम न जाने, ठाने बेद ऊंकारो॥ फूंके कान कुमत अपनीसों, यह बोझे वह भारा॥ विन सतगुरु गुरु केते बहि गये, लोभ लहरकी धारा॥ भेष अभेष बधिककी टाटी, लिये फिरे विष चारा॥ ज्यों बाला ध्यान धरे जल भीतर, अपने अंग विकारा॥ गहिर गंभीर पीर जो पावे, खज अखजसों न्यारा॥ भये सुदिष्ट पार चलनेको, सहज मिटे भ्रम भारा॥ निर्मल जोत आतमा जागे, है निज नाम अधारा॥ कहैं कवीर जानेसे कहिये, मैं तैं तजे बिकारा॥

शब्द ६४-सो जन मतवाला, जिन पिया पुर्सका प्याला॥ ॥टे०॥ मूल कँवल पर बंद लगावे, उलटा पवन चढावे॥ अमृत पिये मगन होय बैठे, बिन रसना गुन गावे॥ बिन धरतीके मंदिर दीसे बिन सरवर जहँ पानी॥ बिन दीपक जग मग उजियारा, गुरुमुख बोले बानी॥ इंगला पिंगला, सुषुमन सोधे, उनमुनके

घर मेला ॥ षट दल चक्र एक कमल बिराजे, जहां पुरुष अलबेला ॥ चंद सूर जो घरको लावे, सुषुमुन सुरति समावे ॥ कहें कवीर कायाकी बातें, सतगुरु मिले लखावे ॥

शब्द ६५–गलतान मता जब आवेगा। तब जियरा सुख पावेगा ॥टे०॥ चार अचार मिटे जब तनकी, तब साहब सुख पावैगा॥ ज्ञान ध्यानमें निसदिन राचे, आप अपन समुझावेगा ॥ अनहद बाजा बजे सुहेला, हरदम खबर मँगावेगा ॥ कहें कवीर तत्त्व जब दरसे, मैं तें दूर बहावेगा ॥

शब्द ६६–मेरी सुरति सोहागिन जाग री ॥ का सोवे पंडित लोभ मोहमें, उठ गुरुके चरने लाग री॥ चित दे सरवन सुन दोय अच्छर, उठत मधुर धुन राग री ॥ का तू अटकी लोभ मोहमें, उठ गुरुके शब्दसो लाग री ॥ कहें कवीर सुनो भाई साधू, यह जगत परा जम जाल री ॥

शब्द ६७–पंडित मिथ्या करो बिचारा । तब नहिं सृष्टि न सिरजनहारा॥ सुन्न अस्थूल पावक जग नाहीं, पवन न रवि शशि धरना ॥ जोत सरूप निरंजन नाहीं, नहिं भाषा नहिं बरना ॥ गोरखदत्त राम तब नाहीं, नाहीं तीर्थ पखाना॥ हरि ब्रह्मा नाहीं शिवसकती, नाहीं बेद आचरना ॥ कर्म भर्म दोजख तन्न नाहीं, नहीं मंत्र नहिं पूजा॥ बैकुंठ मसीत भाव तब नाहीं, ना तब एक न दूजा ॥ मात पिता कुल वाके नाहीं, वह तो पुरुष अकेला ॥ कहें कवीर या पद को बूझे, सो सतगुरुका चेला ॥

शब्द ६८–रामुरा भौंरा कँवल ना पावे । ताते जनम जनम डहकावे॥ टे० ॥ सुच्छम खेत बिजूका रोपा, मिरगा चरन नहिं पावे ॥ भर्महि मारे भरम पछारे, ताते निकट न आवे॥ पुरइन पेड बसे एक दादुर, स्वातीके स्वाद न पावे॥ कँमल बास भौंरा

जब वेधे, सहजेही चल आवे ॥ भक्ति करत चौबिस जुग बीते, कोई सुरति समाध लगावै॥ कहे कबीर सुनो भाई साधू, बहुरि न भौजल आवै ॥

शब्द ६९-बांका गढको लीजे मन भाई, जामें बेवड कोट औ तेवड खाई ॥ टे० ॥ काम किवारी दुख सुख दरवानी, पाप पुन्य दरवाजा ॥ क्रोध प्रधान काल उमराऊ, मन मवासी राजा ॥ पांच पचीस बडे उमराऊ, आडी प्रेमल माया ॥ मोहि गरीबके जोर चले नहिं, मैं का करों रघुराया॥ सेना सदा तोप ममताके, कुमति कमान चढाई॥ तृष्ना नीर बहे घट भीतर, सो बुध हाथ न आई॥ तनकी तोप सुरतके हवाई, ज्ञानके गोला भराई॥ प्रेम पलीता सहज प्रजारे, एकै चोट गढ ढाई ॥ शील संतोष दोउ लडने लागे, तोडा दस दरवाजा॥ सार संतनकी भीर भगतनकी, पकरा गढका राजा॥ साधुके संगत गुरुके परतापे, कटी करमकी फांसी॥ साहेब कबीर चढे गढ ऊपर, राज लिया अविनाशी॥

शब्द ७०-संतो तनका मन रखवारा। कोई जाने जाननहारा ॥ टे० ॥ मनही देव देहरा मनही, मन सेवा मन पूजा ॥ मनही मन ले पाती तोरै, मनही मनके साजा ॥ मनही ऊठे मनही बैठे, मन भेगा मन न्यारा ॥ मनही ताता मनही शीतल, मन मीठा मन खारा॥ ध्यान लगाय बैठे घट भीतर, तज दे विषय बिकारा॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधू, सो जन जगसों न्यारा ॥

शब्द ७१-अवधू सो जोगी गुरु सांचा। प्रभुजीको सेवो रे मनसा बाचा॥ टे०॥ शीलकी मुद्रा सहजकी झोरी, सुरति निरति ले खेला। ज्ञान भभूत सबे तन लागा, साहेब अंतर हेला॥ क्षमा डंड संतोष मेखला, अंम्मर प्याला, पीवे। अविनाशी घर

भिच्छा मांगे, ऐसा जोगी जीवे॥ मन थिर राखे अगमको खोजे, दुनियां संग न लावे। कहैं कवीर यह जोग जगतमें, अविनाशीको पावै॥

शब्द ७२-इश्क नहीं आसान यारो। इश्क नहीं आसान ॥टे०॥ हरदम शीतल या दम सूखा, जान करों कुरवान ॥ प्रेम कटारी या तन मारी, निकल गया यह जान॥ आपन पिया खोज दिल अंदर, आशक इश्क इमान ॥ कहैं कवीर फकीरी मानो, जब साहेब मेहरबान ॥

शब्द ७३-हमारे देश रहो कहिं अचरज ख्याल ॥ टे० ॥ उमड़ घुमड़के आवे बदरिया, रिमझिम बरसे मेहा। परे रहों चौगान चौहटे, भीजत नाहीं मेरी देहा ॥ हमारे देशमें उर्धमुख कूंवा, सांकुर वाकी खोरी। सुरति सोहागिन है पनिहारी, ना गागर ना डोरी॥ हमारे देशमें नित उठ पूनो, कबहु न होत अमवासिया। छांह धूप व्यापे ना कबहूँ, ना ग्रीषम ना पावसिया ॥ हमारे देशमें बाजा बाजे, अजगेबी होत अवाजा। साहेब कवीर टुक मगन भये हैं, बैठ गगन गढ छाजा ॥

शब्द ७४-पंडित अपनी अगिन बुझावो। हम तो अपनी राह चलत हैं, तुम काहे दुख पावो॥टे०॥ गरभवास औंधे मुख झूले, सप्तधात रस पीया। अब तुम चौका देके बैठे, उहां चौका को दीया ॥ कौनहो तुम कहांसे आये, अनेक जनम फिरि आये। अबतो तुम ब्राह्मन होय बैठे, चौरासी बिसराये॥ कुल अभिमान आप विप्र पूजा, यही कुमत तोहे लागी॥ जो तेरी जात भली थी, पंडित शुकदेव काहे त्यागी॥ पांच तत्त्वका सकल पसारा, तामें जिव दुख पावे। कहैं कवीर ब्राह्मन सत सोई, उलटा ब्रह्म समावे॥

शब्द ७५-परम गुरु सोई दया कर दीन्हा। ताते अनचीन्हे हम चीन्हा॥टे०॥ बिन पग चलना बिन पर उडना, बिना चोंचके

चुगना ॥ बिना नैन जहां देखन पेखा, तहां मृतक होय रहना ॥ चंद न सूर दिवस ना रजनी, तहां जाय सुरति मिलाई ॥ बिन जिभ्या जहां अमृत अचवे, बिन जल तृषा बुझाई ॥ जहां कुछ नहीं तहां सब कुछ देखा, या सुख कासों कहना ॥ कहें कवीर बल बल सतगुरुकी, धन्य शिष्यका लहना ॥

शब्द ७६--ऐसा कोई प्रेमका देखा मतवाला हो ॥ टे० ॥ छाक चढी क्षुधा बीसरी, पिया प्रेम पियाला ॥ पीवत तेहि तन वीसरी, सो जगतसे न्यारा ॥ कान सुना देखा नहीं, वाते मतवाला ॥ सो छाका निज नामसे, सतगुरुका प्याला ॥ गोली लागी ज्ञानकी, कसनी बहुते दीन्हा ॥ जीवतही मृतक होय रहे, जिन गुरुगम चीन्हा ॥ नामरसायन जो पिये, जग बहुर न आवे ॥ कहें कवीर कोई छका, जेहि कछु और न भावे ॥

शब्द ७७–एक दिन होयगा प्रान बिगाना ॥ टे० ॥ जो लग प्रान बोले घट भीतर, तों लग करत गुमाना ॥ निकसे प्रान बाहिर कर डेरा, घरके लोग डराना । काठके ठठरीमें लेके चढावे, लै जमुना पहुँठामा ॥ पांच जने मिल फूँक दिये हैं, जर गये सुखके ग्रामा । कहे कवीर सुनो भाई साधू, या पद है निरबाना ॥ पद निरबान चीन्ह ना पावे, अंतकाल पछताना ॥

शब्द ७८–निस दिन माला जुगतकी फेरे ॥ टे० ॥ रवि शशि बांध मन धागा करे, गहि गहि तार सोहंगम घेरे ॥ बंक नाल चढि गिरवर तरवरे, जब टकसार गगन गढ पैरे ॥ अर्ध उर्ध बिच अजब रंग कहिये, बरषे शब्द अमीरस झरे ॥ कहें कवीर सुनो भाई साधू, ऐसा ध्यान कोइ बिरले धरे ॥

शब्द ७९–हंसनके नाह तुम तबहीं कहाये हो ॥ टे० ॥ काशीमें केवल नाम माडौ है, उडीसा धाम पंडो पग जरत, देखत वहीं

बुझाये हो ॥ साहू सुमरन कीन्हा तबहीं दरशन दीन्हा, उदधि उबारन वोहित बचाये हो॥ तुम साहब दया जोय जीवनको दिये पान ताके तन छूट गयो हांसी कराये हो॥ तुम साहेब मेरी गत राखो घट बांधो पतधर्मनी, दुखित जान कबीर पिया आये हो॥

शब्द ८०-जंगलमें भोंदू का फिरे, तेरे घरहीमें ठग लूटे ॥ जानेगा कोई सूरबीर, सांचे मतसे छूटे ॥ टे० ॥ का जप का तप का संजम, का का कर दिखलावे॥ साहबसे परचे नाहीं, का बहु भेष बनावे॥ चलरे मन सेहरापुर पाटन जइये। भजिये त्रिभुवन नाथको निरभै हो रहिये॥ अमर नहीं संसारमें, विनसे या देही॥ कहैं कबीर एक सांच, ले राखो नाम सनेही ॥

शब्द ८१-नाम सनेही साधवा, मुखपाट न खोले॥ नाम जपे निरबान पद, बूझे सो बोले॥ टे०॥ जो बोलै सो सत कहे, मुख असत न भाखै॥ कलह कलपना मेटकै, चरनों चित राखै॥ धुनमें ध्यान लगाय रहे, बिसराम न छांडे ॥ बिन बूझे जो आपतें, बकबाद न मांडे ॥ सार शब्द संग्रह करे, त्यागे सब छोई ॥ कहैं कबीर तिहुँ लोकमें, तत्तवेता है सोई ॥

शब्द ८२-भींजे सुर जन माहीं हो नागर॥टे०॥ धरन अकाश नीर नहि पवना, अमृत बरषे ताही॥ सौ जोजन जहां बादर नाहीं, घटहि माहि घहराई ॥ बिन घटवार घाट ना छूटे, निजमें जाय समाई॥ बारा मास कमरिया भीजे, शीतल अंग बुझाई॥ आदि महल विदेही नामा, आवागमन मिट जाई॥ बरषे गगन नदी सब सूखी, प्यासे बूडे ताही॥ प्रीतम छाड चले सब ऊपर, जरा मरन मिट जाई ॥ सदा रहे इनही बिच गौना, द्वादशहीते न्यारा ॥ कहैं कबीर सो प्रीतम साथी, जो परखे टकसारा ॥

शब्द ८३-निरखो निरगुन निरबानी ॥ टे० ॥ अमर मूरत

मरे ना कबहूं, सो मूरत मनमानी। लखत बने तो भलसुख उपजे, ज्ञानरतनकी खानी॥ जाका आहि सकल जग रचना, इछाते भइ अनहद बानी। कहे कवीर सुनो भाई साधू, उलट दिष्ट जाकी सुरत समानी॥

शब्द ८४–अजब रंग लागारे गुलजार ॥ टे० ॥ चलो सखी जहां देखन चलिये, निरत करे करतार। मिली सोहागिन परम पुरुषको, जुगन जुगनके यार॥ झिलमिल जोत निरंतर दरसे, बिच बिच मोतिनके हार। कहें कवीर सुनो भाइ साधू, सतगुरु कवीर अपार॥

शब्द ८५–निरख निज नामहिं चीन्हो हो॥टे०॥ नाम बिना बहुते दुखी वे तीनों देवा हो। गन गंधर्व मुनि देवता, सब कालके भेवा हो॥ पानी तज पय अचवे, सो हंसा कहिये हो। सो हंसा ना बिछुरे, जिन या मति लहिये हो॥ भेष धरे पाखंडका, करता नहिं चीन्हा हो। मिथ्या जनम गवाँइया, जम कागद भीना हो॥ काम क्रोध मद त्यागके, निरमल कर लीन्हा हो। कहें कवीर सुख अमर दे, दुख बनिज न कीन्हा हो॥

शब्द ८६–संतो तो उतरे भौ पारा। मनकी ईंद्री सबही त्यागे, छांडे विषै बिकारा॥ टे०॥ धीर गंभीर औ सहज भावसों, गहै सतनाम पियारा। प्रेमभाव उपजे हिरदेमें, साध संगत आधारा॥ दया धीर संतोष धरे जिव, सुरति निरति चित धारा॥ ज्ञानदृष्टि सबहीको देखे, गहे शब्द टकसारा। सत सुक्रितके नावपैं चढिये, ज्ञानगुरू कडिहारा॥ कहें कवीर सुनो भाई साधू, उतरो भौजल पारा॥

शब्द ८७–संतो अब मेरा मन माना। सतगुरु राह बताय दई है, चीन्हो आतम रामा॥ जो उपदेश दियो मोहि सतगुरु,

ताहि कियो पहिचाना। घाट वाट कोई रोकि सके नहिं, हाथ दियो परवाना॥ सो हंसा निज घरको पहुँचे, दीन्हा ज्ञान दमामा॥ डंका बाजे शब्द बिराजे, शिरपर छाजे नामा। श्वेत ध्वजा फहरात धनीकी· निरभै अनहद धामा॥ कहैं कवीर बलिहारी गुरुकी, दई अविचल विसरामा॥

शब्द ८८-संतो नायक राम हमारा। जाका सब जग है बनजारा॥ टे०॥ पाप पुन्य दोउ बैल लदाये, तृष्ना गोन भराई। पांच जने मिल लादन लागे, गोनी लाद न जाई॥ आशा थाकी मनसा थाकी, थाकी कंचन काया। सुरति निरति वह दोनों थाकी, एक न थाकी माया॥ या संसार हाटका लेखा, सब कोई बनिजे आई। कहैं कवीर जिन जैसी लादी, तिन तस करी कमाई॥

शब्द ८९-गुरु मोही घुँटिया पिलाई॥ टे०॥ जबसे गुरु मोही घुँटिया पिलाई। भई सुचित मिटी दुचिताई॥ ज्ञान ओषदी रतन कटोरी। सो भर पिवत कुमति गई मोरी॥ ब्रह्मा पिये विष्णु लौलाई। शिवशंकर रहे ध्यान लगाई॥ कहैं कवीर सुनु साधो भाई, गुरुके चानपर ध्यान लगाई॥

शब्द ९०-बेग गहो गुरु सरना हो, भटक मर जाइ॥ टे०॥ या संसार कागदका पुतरा, बूंद परे गल जाना हो॥ या संसार अगिनकी चिनगी, भूल परे जल जाना हो॥ या संसार कांटेकी बारी, समुझ समुझ पग धरना हो॥ कहैं कवीर सुनो भाई साधू, निरख परख गुरु करना हो॥

शब्द ९१-भला रे गुनी ऐसो गजब न कीजे॥ टे०॥ गरब किये रतनागर सागर, जल खारा कर डारा रे गुनी॥ गरब किये लंकापति रावन, मरद गरद कर डारा रे गुनी॥ गर्ब किये जंगलके घुंगची,

मुँह कारा कर डारा रे गुनी॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधू, गर्ब किया सो हारा रे गुनी॥

शब्द ९२–प्रेम बान जोगी मारा हो, कसके जोर मोर॥ टे०॥ जोगियाकी लाली लाली अंखियां हो, जैसे कँवलके फूल॥ हमरो सुरंग चुनरिया हो, सोहै तालमतूल॥ जोगीको लेवे मृगछाला हो, हमरो पट चीर॥ दोऊ मिल सींवे गुदरिया हो, होइजाय फकीर॥ गगनमें बंसी बजावे हो, चितवे चहुँ ओर॥ जोगी अजब रंग भीना हो, मन हर लीन्हा मोर॥ जोगिया अमर मरे नहीं, पुरवे मेरी आश॥ पुरब जनम फल पायेऊं हो, गावै धनी धर्मदास॥

शब्द ९३–जिव जिन मार मुवा मत लावो, मांस बिना मत आवो हो॥टे०॥ पैल पार एक बेल वृछवा, वृछामें पत्र नहीं है हो॥ सोई पत्र चुग जात मिरगवा, मिरगाके शीश नहीं है हो॥ उरबिन खुरबिन चरन चोंच बिन, पंख बिहूना हंसा हो॥ सो सावज मोहि मार देखावो, जाके रकत न मेसा हो॥ धनुष बान ले चलो पारधी, धनुषमें पनच नहीं है हो॥ सोई धनुषसे मारे मिरगवा, मिरगाके घाव नहीं है हो॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधू, या पद है निरबाना हो॥ जो या पदके अरथ लगावे, सोई संत सुजाना हो॥

शब्द ९४–झडाका सुमरनसे मन लागा॥ टे०॥ मथुरा आम बोवाइया, जगन्नाथ गई डार। फूल फुलाने द्वारका, फल लागे बद्रीद्वार॥ पोस्ताकेरे खेतमें फूल बना सब हेत। कोई कुदरती लाल है, और सेतका सेत॥ आगे दिन पीछे गये, किये न हरिसे हेत। अब पछताये का भया, जब चिरिया चुन गई खेत॥ आग झरे लोहा झरे, झर झर परे जंजीर। गुरु रामानंदके फौजमें, सनमुख लडे कबीर॥

शब्द ९५–साहेब बाग लगाया है कोई अजब तरेका॥ टे०॥

चार खूंट चौरासी क्यारी, ता विच फूल फुलाया है। मोहके क्यारा बागके भीतर, बारमबार सिंचाया है ॥ सूख गये कँवल भँवर जब उड चले, लालचसे फिर आया है। कहैं कबीर सुनो भाई साधू, साहेबका फुरमाया है ॥

शब्द ९६–कोई दिन याद करोगे, रमता राम फकीर ॥ टे० ॥ कोइ दिन सोवे कोइ दिन जागे, कोइ दिन सांईकी जगीर॥ कोइ दिन ओढे साल दुशाला, कोइ दिन भगवां चीर ॥ कोइ दिन पावे मेवा मिठाई, कोइ दिन अचवे नीर ॥ कोइ दिन बैठे घोडे पालकी, शिरपर अबदागीर॥ कोइ दिन जंगल कोइ दिन बसती, फिरते लाल फकीर ॥ कहैं कवीर सुनो भाई साधू, गुरुके चरन रहु थीर ॥

शब्द ९७–चरखा तोर डारो हो, भजो रामके राजी ॥ टे० ॥ चरखा तेरा रंग बिरंगी, पोनी लाल गुलाल । कातनवारी छेल-छबीली, तन मन डारे तार ॥ छोटकी ननदिया चीकन पीसेछे, वडकी भरेछे पानी ॥ वो दहिजरवा लीटी लगाइस, हम चरखा तर रहली॥ जाये गवाँये गँवार परोसिन, हम चरखेकी रानी ॥ एक वेर चरखा कातन पाऊं, दोहरी नथनी गढानी ॥ सात सेरकी सात बनाये, चौदा सेरकी एकै॥ वो दहिजरवा सातो खायस, हम कुलवंती एकै॥ कहैं कवीर सुनो भाई साधू, या पद है निरबानी॥ जो या पदके अर्थ लगावै, ताको मुकति निशानी॥

शब्द ९८–अवधू मनमथ करम न होता। तब धर अधर कहांते होता॥ टे० ॥ मात पिता मिल बेरा साजे, करी कर्मकी पूजा। पहिले पिता अकेले होते, पूत भये भय दूजा॥ अलख रूप आतुर होय खेला, नादहिते बिंद छूटा। ताका सकल पसारा कहिये,

ब्रह्म किच होय फूटा ॥ याको निंदे वाकों बंदे, सो तो निगुरा कहिये । याते न्यारा वाते न्यारा, न्यारा न्यारा रहिये ॥ कहैं कवीर सोई सुख कीन्हा, आप आपमें मेला । रचि जनि रहो बिरचि जनि छांड़ो, संग मिल रहो अकेला ॥

शब्द ९९-अवधू निरख परख गुरु करना । तन मन कछू हाथ ना आवें, काहेको पच मरना ॥टे०॥ काल न छूटो जंजाल न मेटो, भयो न मनको सूरा । कुलको बास करो मत कोई, जो गुरु मिलै न पूरा॥ अष्ट धातका पिंजरा बनाया, तामें जुगतका सूवा। सतगुरु मिलै तो कालसे बांचे, ना तो परलै हूवा॥ कंद्रप रूप कायको मंडन, मिथ्या काह उलीचें। कहें कवीर समुझ नर भोंदू, अमी अरंड का सींचे ॥

शब्द १००अवधू जोग अपूठो पैडो । पहुँचेगा कोई गुरुका बालक, निगुरा भूला गैडो॥ टे०॥ पोदी झटक बाज गहि लीने, छेरीने सिंह खाया । चीतेकी गरदन हरन दबाई, खलक तमासे आया ॥ खोजेके घर बालक उपजे, गगनमें सिंगी पूरी । ले मरघट मुरदा पर जारे, तस कर ऊपर सूरी ॥ कहें कवीर सुनो हो अवधू, अकथ कथा यह भाखी । जानेगा कोई जाननहारा, नार पुरुष पर राखी ॥

शब्द १०१-अवधू सो जोगी पद बूझे, जाको अगम अगोचर सूझे॥टे०॥ काया हमारी शब्द बोलिये, ज्ञान भभूत प्रकाशा । सुरत हमारी सवता कहिये, अलख हमारो बासा॥ सिंगी शब्द अनाहद बाजे, उनमुन शब्द समाना। प्रेम पियाला पीवे जोगी, धुनमें अधर अमाना॥ मीच बिन मरन नीर बिन तरना, राग बिन रंग अपारा। सोवे सदा जागे निशिवासर, ऐसा शब्द बिचारा॥

कहैं कबीर सुनो हो अवधू, सबद कहां तुम पाया । सत्य शब्द सतगुरुको चीन्हो, माया जग भरमाया ॥

शब्द १०२–कैसे बोलो स्वामी, गगन नहिं धरनी। चंद न सूर दिवस नहिं रजनी ॥ टे० ॥ जड़ नहिं मूल वृच्छ नहिं बेला । सबद न स्वाद गुरू ना चेला ॥ उपजे न विनसे आवे न जाई । जरा मरन वाके बाप न माई॥ नहायवेको न तीरथ न परसवेको देवा। कहैं गोरख सुन अलख अभेवा ॥

शब्द १०३–ऐसे बोलो अवधू गगनमें धरनी । चंदमें सूर दिवसमें रजनी॥ जरमें मूल वृच्छमें बेला । शब्दमें स्वाद गुरूमें चेला ॥ उपजेमें बिनसे आवेमें जाई । जरा मरन वाके बापहिमें माई ॥ नहायवेको तीरथ परसवेको देवा । कहैं कवीर सुनो गोरख भेवा ॥

शब्द १०४–रामुरा ऐसा को बैरागी । आठ पहर लग रहे सबदसो, कलह कल्प विष त्यागी ॥ टे० ॥ ब्रह्मा एक सृष्टिका करता, नाम कुलाल धराया । बहु विध भांडे उनही गढिया, मायाको अंत न पाया ॥ तरवर एक नाना बिधि फरिया, जाके पत्र न साखा । भौजल भूल रहे सब प्रानी, सो फल किनहु न चाखा ॥ कहैं कवीर सुनो भाई साधू, मिथ्या दुनियां अंधी । माटीमें माटी मिलजासी, सबद गुरुका संधी ॥

शब्द १०५–ऐसे राम कहे का होई, जोपै मनकी दुविधा न खोई ॥ टे० ॥ राम कहि कहि नरक परत हैं, पढ पढ वेद पुराना ॥ राम कहि कहि सबे गये हैं, मिटे न अवाजा ॥ राम कहि कहि सती जरत हैं, साधनमें न समाई॥ डाक परी लिये हाथ सिधोरा, मृत्तकसे लौ लाई ॥ वेद पढे पर भेद न जाने, पढ पढ लोक रिझावे ॥ कालपुरुषका मरम न जाने, घर जरे घूर बुझावे ॥

लोगनके राम हंसी खेलौना, सबके प्रान अधारा ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधू, काहु न कीन्ह बिचारा ॥

शब्द १०६-राम भजे सो जानिये, जाके आतुर नाहीं॥ शील संतोष लीन्हे रहै, धीरज मन माहीं॥ टे० ॥ काम क्रोध व्यापे नहीं, तृष्ना न जनावे॥ फर फुल्लित आनंद सदा, हरषित गुन गावे॥ दुरमति दुरासा परिहरे, या मद हंकारा ॥ साधु भया तब जानिये, जो तजे बिकारा॥ पर निंदा भावै नहीं, मुख असत ना भाखे॥ कलह कल्पना मेटिके, चरना चित राखे॥ समदृष्टी शीतल सदा, दुबिधा नहिं आने ॥ कहैं कबीर ता दाससे, मेरा मन माने ॥

शब्द १०७-राम हमारा मूवा हम निहचेके बांचे॥ छूटे सब जंजाल भरमके, होनाहता सो हुवा॥टे०॥ राम नाम जप जन्म गवाँया, जैसे सेमर सूवा॥ फूले फले पाके फिर फूटे, उड़े भरमके भूवा॥ प्रेमनगरको राह बिकट है, जो जावे तो जूवा॥ पूरा परे दाव तब लागे, कहैं कबीर तब हूवा ॥

शब्द १०८-पंडित सत पद जप रे भाई। चरन कमल बिन सब नर डूबे, नरक परी चतुराई॥टे०॥ ज्ञान न उपजे ब्रह्म न चीन्हे, आप कहांते आये। एक जोनीते चार बरन भये, ब्रह्म देह कहां पाये॥ शूद्र शरीर ब्रह्म ता भीतर, भिन्न भाव तहँ नाहीं। लख चौरासी जिया नोनमें, वरत रहा सब माहीं॥ नौगुन सूत संजोग बिचारो, तीन गिरह दे आनी। ताके जनेऊ कबहुँ न टूटे, दिन दिन बारह बानी॥ ऋगु यजु वेद ज्ञानके पशुवा, साम अथरबन सोई। सुसुम वेदकी खबर न जाने, कैसे के ब्राह्मन होई॥ बाराबेदी ब्रह्म बिचारे, सोरा सक्ति समानी। संध्या तर्पन तहवां कीन्हा, जहवां कुश नहिं पानी॥ ब्रह्म अगिन गत थिर न रहे मत, आप अगिन गहि आनी। ब्रह्म अगिनको नाम न लीजे, लीजे ब्रह्म

पहिचानी ॥ कहैं कबीर गुरु ब्रह्म चीन्हो, जात जनेऊ सोई। पाखंडकी गत सबे मिटावे, तब निज ब्राह्मन होई ॥

शब्द १०९–पंडित पढ पुरान का कीन्हा। साध संतकी सेवा कीन्ही, भूखेको अन्न न दीन्हा॥टे०॥ पूज सिला चंदन घस लावे, बक ज्यों ध्यान लगावे। अंतरगतके राम न चीन्हे, थोथे घंट बजावे॥ काम न बिसरो क्रोध न छूटो, लोभ न बिसरो देवा। परनिंदा ते हृदै न बिसरी, निरफल गइ तेरी सेवा॥ दोष लगाय घर मूस पराया, पेट भरे अपराधी। जो निंदा तोहे साधन बरजी, सो हिरदे आराधी ॥ कहैं कबीर संतनकी महिमा, परम पुनीत सुनाई। आपा मेट आपको चीन्हो, तबे परमपद पाई ॥

शब्द ११०–पंडित होय तापहिं भारी। जाके चित्र गुप्त लिख धारी ॥ टे० ॥ जीवत जीव ब्रह्मको दुखवे, खून करा घर माहीं। तृष्ना कारन जीव बधत हो, बूड रसातल जाही॥ चौका दे शुचि संजम कीन्हा, सुनो महातम लोई। जो मर सुनके अन्न तजत है, सो मर तपे रसोई ॥ कर अस्नान तिलक कर बैठे, कांधे त्रिगुन जनेऊ। हंडिया हाड हाड थारी मुख, अब षटकर्म बनेऊ ॥ घाटी उतर भई सब माटी, मन धीरज धर रहिये। कहैं कबीर ये विषके लाडू, खाय पीर कोन सहिये ॥

शब्द १११–मियांजी देखा अजब तमाशा। सांची बात कही ना माने, झूंठा लगे खुलासा ॥ टे० ॥ कहे हक्क पर हक्क न बूझे, नाहक जीव सताया। हाथ पांव बरबसके बांधे, गल बिच छुरी चलाया॥ खासे दोस्त नबी साहबके, जिव बध नहिं फरमाया। एक मिस्वाक मास शश्य करते, वृक्षों नाहिं सताया ॥ भूखेको वे भोजन देते, प्यारुको पानि पिलाया। उमर तमाम बंदगी कीन्ही, जो सिवाय नहिं खाया ॥ फक्का फकर फकीरी खुसकी,

खसे कछू न चाहा। शब्द कबीर खोज दिल अंदर, तब पावे कुछ लाहा ॥

शब्द ११२-मियांजी बोले नाम न आवे। दूधको दूध पानीको पानी, जोरे करे सो पावे ॥ टे० ॥ हो मिस्कीन खुदाई बंदा, तू जियरा जस भावे। असल खोदाय दीनको साहब, जोर नहीं फरमावे ॥ रोजा रहै निमाज गुज़ारे, कलमा भिस्त न होई। सत्तर काबे हैं घट भीतर, जो लख पावै कोई॥ धनीकी जासकी आस कर बंदे, मान मनी कर दूरी। आपा मेट औरको खोजो, तब पावो कछु मूरी॥ माटी एक बने बहु भांडे, सबमें नूर समाना। कहैं कबीर ऐसी भिस्त छोडके, दोजक सों लपटाना॥

शब्द ११३-मुलना खूब नजर दिल दीजे। हाजिर नाजिर है घट भीतर, जबह काहेको कीजै ॥ टे० ॥ पकर हलाल हाथ कर लीन्हा, पांचों पीर मनाया। हलाल हता तो खोय गया अब, मुरदे सींख लगाया॥ पैगम्बर महिं रकतसों राजी, आपहि सजल सँवारा। फेर दरेग कयामत तांई, दामनगीर तुम्हारा ॥ कर निमाज सिर भुइँमें मारे, मैं बंदा खोदाई। करे खून तृष्नाके कारन, साहबका फ़ुरमाई॥ का तसबी दानेके फेरे, पढ पुरान का बूझा। दिलके नैनन अंध भये हैं, परम तत्त्व नहिं सूझा ॥ जो जेहि मारे सो तेहि काटे, मिटे न भौजल फेरा। कहैं कबीर तुम जोर करत हो, कहा न मानो मेरा ॥

शब्द ११४-देखो बनी आदमकी बातें। सांची बात कही न माने, नरक परत हैं ताते ॥ टे० ॥ ओछी बुद्धी त्वचा चामकी, ओ थोरे धन माते। थोरी उमर गुमर बहु भारी, अड्या काम कलाते ॥ हरचा ज्ञान ध्यान मम भूला, दृष्टि लगी अबलाते। वे तो आठे दसमी जागे, बेकरे बार वफाते ॥ अंगुरी नाय कान

दोउ मूंदे, पढे बंग सलवाते। रोजा करे निमाज गुजारे, सत्रह पढे रकाते॥ साझ परे खानेकी बेरा; उमड करे जिव घाते। करें खून बंदगी ठाने, पाक कहें कलमाते॥ भूले दीन दया तज भागे, दृष्टि लगी विषयाते। भीतर भरी भंगार भरमकी, ऊपर माजे गाते॥ जानत नहीं आप अपनेको, आय गये धों कहांते। दरद न जाने पीर पराई, चलत फिरत इतराते॥ कहें कवीर यह अजब तमाशा, इनको भिस्त कहाते॥

शब्द ११५-सेखजी बंदा मुरीद केहे केरा। इस पदका करो निबेरा॥ कबकी बात कही पैगम्बर, हती कौनसी बेरा॥ क्या महम्मद तुम्हें गुप्त सुनाई, किताबें नो हजारा॥ का तुम राखी का तुम प्रगटी, हजूर कहिके परदा॥ खोजा खोज करो तुम अजहूं, वह औरत है की मरदा॥ कौन बिलायत कौनसी जगह, बैठे थे किस ठाईं॥ औवल सफा हकीकत बोलो, तुम जानत हो की नाहीं॥ का फरमान हुवा बंदे पर, की तुम कहो बनाई॥ कहें कवीर साहब फरमाई, के बीचहि कल्पाई॥

शब्द ११६-काहूने फिर न कही वह बातें। जो नर यहां ते सुकृत कर गये, ता फलकी कुसलाते॥ सूर चले सनमुख रन जीतन, दे सनमुख उर घाते। वाके स्वाद पूछिये कासों, सहत सेल सिर सांटे॥ सती जरे पिया अपने संग, बिरह प्रेम रस माते। वाके स्वाद पूछिये कासों, सीरे जरी कि ताते॥ यह संसा उठे उदभुद जो, आय गये धों कहांते। कहें कवीर देह गत ऐसी, जान परी है याते॥

शब्द ११७-नर तू पार उतर कहां जैहो॥ आगे पंथ पंथी ना कोई, कूच मुकाम न पैहो॥ टे०॥ नीर नाह नहिं खेवट किरवा, ना गुन खेवनहारा। धरती अकाश कल्प कछु नाहीं, ना कछु वार न पारा॥ यह तो आपी आपा कहिये, सुन्न सोध ना पैहो।

विलैमान हो जाहु छिनकमें, याहू ठौर बिन होइ हो ॥ बारंबार बिचार सोच जिय, अपने माहिं समैहो। कहें कवीर मुकति नहिं आगे, ज्योंका त्यों ठहरैहो ॥

शब्द ११८-नर तुम कियो न एकौ काजा। काम क्रोध तृष्नाके बांधे, लूटत है जमराजा ॥ टे० ॥ बनखंड जाय जोग तप कीन्हा, कंदमूल फल खाया । होते ज्ञानी परम सुख ध्यानी, पाती काह लिखाया ॥ चार वेद तुम हित कै राखे, फीकी उनकी आशा । काल भच्छ सब दुनियां सिरानी, इनहीके विस्वासा॥ प्रेम भगति हिरदे ना आवे, नाच काछ मन दीन्हा। राग रागिनी डिंभ धरीधर, तिन हरसों का लीन्हा ॥ फिरै काल अनंत लोकमें, मध्य लखे मुनि ज्ञानी। कहें कवीर ते भये खालसे, रामभक्ति दिढ जानी॥

शब्द ११९-नर तुम झूठे जनम गवाँया । उस झूठेका कोई अंत न पाया ॥ टे० ॥ झूठेके घर झूठा आया, झूठे ते परचाया । झूठी थारी झूठा भोजन, झूठे ले सब खाया ॥ झूठेके घर झूठा आया झूठे व्याह रचाया। झूठा दूलह झूठी दुलहिन, झूठे व्याहन आया॥ झूठे नर सब झूठी नारी, झूठे बालक जाया। झूठी छाती झूठी कोखी, झूठी दूध पियाया॥ सांच कहूं मैं झूठ न बोलूं, सांचेको झूठाया। कहें कवीर सोई जन सांचा, अपने मांहिं समाया ॥

शब्द १२०-सुन राजा हरचंद भुवनके, सत्त तुम ठानी। विप्र एक काल होय प्रगटो, तुमहूं असत्त न छानी ॥ टे० ॥ पतनी सहित राज तुम दीन्हा, हाटो हाट बिकानी। जो यह सत्त भली पुन होती, करत नहीं कुल हानी॥ जेहि कारन तुम नीच डोम घर, भर लाये घट पानी। बसहीके तुम चीर छोडाये, उलटी मत तुम ठानी ॥ अगम अगोचर मूल ब्रह्मको, सो तुम कितहु न पाई । सत्य कर तुम नीच बुध घर, फिर फिर जोनी आई॥ भरम छांड

सत्य तुम चीन्हों, सत धोख न कहाई। सत्त सरूप जबे तुम पावो, यह सत चित्त न आई॥ मैं तो तुमरे भले कहत हों, सत्य सरूप बिचारो। कहैं कबीर वह सत्त समुझके, आवागवन निवारो॥

शब्द १२१-देखो अलख पुरुषकी करनी, बडे बडे धरा बिगूचे॥ टे०॥ हरचंद चले मिहरी बेचनको, पूतहि खायो सांपा॥ वाकी अम्मा जरावन लागी, जरन न देतो बापा॥ दशरथके दोय पुगरा कहिये, औरत सो चित दीन्हा॥ बडा बियोग भया रघुपतिको, रावन गा सिर छीना॥ सोरा सहस आठ पटरानी, एते कान्हर आनी॥ बडे उज्जीर हते पाठनमें, तिनहूंकी हुरम लुटानी॥ पांचो पांडव छठी द्रौपदी, और बिगूचे केता॥ लेके हाड हिमारे गारे, जन कबीर जग जीता॥

शब्द १२२-धर्म सुत काहे न देख बिचारी। सत्त बोलते राज तुम्हारे दीन्हों देश निकारी॥ टे०॥ पांच पूत कुंतीके कहिये, एकोतरसौ गंधारी। एकै बूंद पिताके होते, काहेको मांडी रारी॥ ब्रह्मज्ञान अरजुन तब चीन्हें, धनुष बान दिये डारी। छल प्रपंच कृष्न एक कीन्हे, दीन्हा बदन पसारी॥ पांच भइयाकी एकै नारी, सबही संग सुख कीन्हा। जीवदान भीम तब मांगे, कृष्न सहित आधीना॥ भारथ भरीके अंडा राखे, तुम कुरुक्षेत्र कराये। गोत्रघाव दाव नहिं जानो, ताते हिमाल पठाये॥ कुंजल एक हतो रन भीतर, तुमसो झूठ बोलावे। नरकबास दिखलावे तोही, जब सुरपुरहिं पठावे॥ सोई सत्त दो परदी कहिये, जाकी भक्ति तुम ठानी। कहैं कबीर सुनो हो पांडव, हिरदै करो बिलछानी॥

शब्द १२३-संतो परी अरुझन भारी। कहे सुने कछु हाथ न आवे, अबिगतकी गत न्यारी॥ टे०॥ कोई कहे हम निरगुन सेवै, निरगुनका गुन कैसा। को निरगुन को सरगुन कहिये, एही

बडा अंदेसा॥ निरगुन कहिये नाम महातम, सरगुन संत विराजे। गुन बिन निरगुन हाथ न आवे, औगुन देखे भाजे॥ निरगुन सरगुन एक रूप है, बिरला जन पद परसे। हंस शब्द एक चित होवे, अमी सुधारस बरसे॥ कहें कबीर अंतरकी करनी, परगट होय तब सांची। अपने पति केर पतिबरता, गगन मगन होय नाची॥

शब्द १२४-सो तो अबिगत अगम अपार, पार कस पावै॥ टे०॥ जा खोजत ब्रह्मादि भुलाने, तिनहुं न पाये भेव। जा खोजत शिव मगन भये, शनकादिक शुकदेव॥ सतजुगमें सतबरता, द्वापर पूजा पान। त्रेता होम जज्ञ व्रतसंजम, कलजुग केवल नाम॥ सेस सहसमुख निस दिन गावे, अस्तुत करे मुरार। ऋग् यजु साम अथर्बन थाके, कर न सके निरवार॥ जोगी जती तपी संन्यासी, दिगंबर दरवेस। चुंडित मुंडित और जटाधर, ये उरझे बहु भेश॥ तीरथ गये ते एही महातम, तब कोइ पूजे पानी। एको सुमत हाथ नहिं आवै, कर गय मुनिजन ज्ञानी॥ धरती अगिन पवन औ पानी, भिन्न भिन्न विस्तारा। आवे न जाय मरे न जीवे, सबते रहत निनारा॥ जो कहिये सबहीमों साहब, मौत कहांते होई। कहें कबीर तिनके जिव डोलै, पिंड प्रान बिन सोई॥

शब्द १२५-हैरे अडोला कहिं डोलत नाहीं॥ गगनमें चंदा जलबिच झांई, मीन गहे मुख आवत नाहीं॥ टे०॥ चंदन काठ सूख जो जाही। ताकी बास ताहीमें रहाही॥ मिरगा नाभि बसे कस्तूरी। तन नहिं खोजत खोजत मूरी॥ कहें कबीर मन मिलिया होई। शब्द सुरतमें राख समोई॥

शब्द १२६-कोई जन जानेगा हो अबिगत नाथ मतो॥ भंजन घडन सँवारन आपे, अलखपुरुष रहतो॥ टे०॥ ईंद्रदवन ऐसे होते, नित घृते होम करतो॥ अजगर कीन्हे कूपजलको, पवन भखी

भख रहतो॥ राजा नल ऐसे होते, नित सहस गऊ देतो॥ कजरीबनके कुंजर कीन्हे, हरी डार चरतो॥ राजा हरिचंद सतवादी, नित सत्यहिसे रहतो॥ ढोये नीर नीच घरहीको, भये मरघटके मँगतो॥ दस मस्तक बीस भुज वर रावन, रात दिवस बकतो॥ छिनमें मार पछारिया, गये लंकासे रीतो॥ राजा बलि ऐसे होते, नित सहस जज्ञ करतो॥ ताहि पताल पठाइया, जहां शेशनाग रहतो॥ अजामेल ऐसे होते, नित गनका संग करतो॥ ताहि बैकुंठ पठाईया, ऐसी उलटी रीत करतो॥ पांडवसुत ऐसे होते, नित छपन भोग करतो॥ ताहि मार पठाइया, ऐसे प्रीत तोर बिचरतो॥ जिन खोजा तिन पाईया, कोई साधूजन लहतो॥ संतन सदा समीप बसत है, गावें जन कवीर भगतो॥

शब्द १२७-संतो कोई जन शब्द बिचारा॥ शब्द भेद आद सतगुरुका, परख लेव टकसारा॥टे०॥ शब्दै सुन सुन भेष धरत है, शब्द कहे अनुरागी॥ षट दरशन सब शब्द कहत है, शब्दै कहै बैरागी॥ शब्दै वेद पुरान कहत है, शब्दे शब्द ठहरावे॥ शब्दै मुनिवर साध कहत है, भेद न कोई पावे॥ शब्दै येही जग उपजाया, शब्दै केर पसारा॥ कहें कवीर जहांते शब्द उपजो, ताका भेद नियारा॥

शब्द १२८-संतो जिन जाना तिन माना॥ शब्दहि चाल चले कोई बिरला, कथनी कथ लपटाना॥टे०॥ शब्द निराधार जीव आधारी, कहु कैसे रहि जाई। बीचहि अटक रहै बैपारी, भेंट सबनकी खाई॥ रहे सरगुनमें कहें निरगुनकी, दुनियाभाव न जाई। निरगुन सरगुन दोउ पछ भारी, फिर माया लपटाई॥ ईंद्री भोग आपनी जाने, दोजकसों मन माना। कहें कवीर जिभ्याके लंपट, माया हाथ बिकाना॥

शब्द ११९-कहे सुने कछु नाहीं संतो, कहे सुने कछु नाहीं ॥ जब लग जीव जंजाल न छूटे, विषै बिकल तन मांहीं ॥ टे० ॥ करत अनीत मगन मायामें, कहें अगमकी बानी । सो प्रतीत जो साध न मानी, मुष्ट माहली जानी ॥ सीखे साख ब्रह्म होय बैठे, निरभै बिषै कमावे। पूछेते परपंची प्रानी, साख अगमकी लावे॥ पद साखी सिध साधिक दीसे, ईंद्रिन हैं अपराधी। जो घट नाम नहीं निज निर्मल, देह दशा को साधी ॥ जो कछु किये ज्ञान अज्ञाना, सोई समझ सयाना । कहें कबीर तिनसो का कहिये, देखत दृष्टि भुलाना ॥

शब्द १२०-संतो कथनी कहे ते खोटा॥ जों लग कर्म बिकार न खोवै, कोयला कपट जिय औटा ॥ टे० ॥ ज्ञान ग्रंथ कब चातुर कीन्ही, बांधे विषके मोटा। तज अनरीती औ कुलके लालच, जगमैं बडे घर लूटा ॥ सांचे शब्दकी चाल न आवे, हिरदै नहीं है हेता ॥ ऐसी भक्ति मुक्ति ना पावो, साहब है नहिं काचा ॥ कहें कबीर अंतरकी करनी, निकसे जिभ्या मुख वाटा ॥ सार शब्दकी परख न आवे, झूठा लागे मीठा ॥

शब्द १२१-मनको चीन्होरे नर भाई॥ आतम मार पखानहि पूजे, बहो सकल जग जाई ॥टे०॥ आगे आगे पंडित पाछे सब दुनियां, अचरज कही न जाई ॥ सबे गये मोहि यही अंदेशा, बहुर खबर नहिं पाई॥ एक दोय होय तो कहि समझाऊं, जगसों कहा न जाई॥ वैद्य अनेक स्वान जो लागे, पूंछ न मिटै टेढाई ॥ सांच कहों तो सब जग खीजे, झूठा कहा न जाई॥ समझ कबीर रहो घट भीतर, को पच मरे बलाई ॥

शब्द १२२-भरममें भूल रह्यो संसार। बीज बस्तु कैसे के पावे, जाका सकल पसार ॥टे०॥ कीतम नाम जान बहु थापे, करता

रहो नियार। एक दिष्टि चितवत नहिं तनमें, को है सिरजनहार॥ वेद पढे पर भेद न जाने, कथनी कथे अपा। आपर न बूझे जगहिं बुझावे, सूझे वार न पार॥ मृगानाभि बसे कस्तूरी, ढूंढे घास उजार। कहें कवीर वा घट परगट, है कोई बूझनहार॥

शब्द १३३-जगमें करता काल कहावे॥ निराकार जग बाडा बांधे, बाहर जान न पावे॥ टे०॥ तीन लोक बाडा बिच कीन्हे, ठौर ठौर रखवारा। ऊपर कोऊ जान न पावे, आप करे संघारा॥ साधे बान धनुष धर लीन्हे, दूतन बाहिर पठावे। भागे जीव ठौर ना पावे, फिर फिर मुखमें आवे॥ सुन्नमें वर्धक जात सरूपी, बैठे घंट बजाई। सुनके जीव सबे उठ दौरे, परे कालमुख जाई॥ सोई रैन उजियारी, देख जीव सब धावे। इनको मारत बिलम न लागे, उसे दरद ना आवे॥ कहें कवीर जो सतगुरु चीन्हे, सो यह भेदहिं पावे। बाडा तोर बाहिर ले निकसे, निहचल घरहिं पठावे॥

शब्द १३४-संतन ज्ञान लहर धुन माडी॥ शब्द अतीत अनाहद राचे, या विधि तृष्ना खाडी॥ टे०॥ खाड बुने कोरीमें बैठा, भौ खूंटा दे गाडी। ताना वाना परो उनासा, सुत कहें बुन गाडी॥ वनके ससे समुंदर कीन्हा, मक्षा चढी पहाडी। शूद्र पिवे ब्राह्मण मतवाले, फल लागे बिन डारी॥ मूसा तपे बिलारी सेवै, स्यार सिंहको खाई। एक अचंभा देखो भाई, जलमें अगिन रहाई॥ कहें कवीर सुनो भाइ साधू, अगम ज्ञान पद माहीं। गुरुप्रताप सुईके नाके, हस्ती आवे जाई॥

शब्द १३५-सहज एक ऐसी हूल परी॥ भागे शिव शनकादिक नारद, मोहे अचेत हरी॥ नौ दस भाग भगे तैतीसौं, चौरासी सगरी॥ भेख अभेख करे को लेखा, काहु न जान परी॥ ब्रह्मा

आदि इंद्र सब भागे, सुध बुध सत बिसरी ॥ ये सबहीके देखा-देखी, दुनिया भगी बपुरी॥ धीरज राख रहे ना कोई, छांड भगे नगरी ॥ कहें कबीर हटको नहिं माने, धौखेकी बिडरी ॥

शब्द १३६-संतो काल रची जग बाजी॥ वेद पढे पढ पंडित भूले, पढ कुरान भूले काजी॥टे०॥ आप न बूझे जगत बुझावे, शब्द वेद अरथावे। अमृत विषहिं एक कर माने, भेद न कोई पावे ॥ आप कहे जग काल अपरबल, आपहि धारे ध्याना। जिन जिव दियो सोई जिव लेवै, सबका एही ज्ञाना ॥ वेद पढे औ अरथ बिचारे, सूझ बूझ न पावे। जरा मरनके आस बंधे सब, फिर फिर जोनी आवे ॥ जोगी तपसी मुनिवर कहिये, संत साध सब धावे। आवत जात जन्म बहु बीते, अस्थिर घर ना पावे॥ पीर औलिया गोस कुतबिया, फिर फिर यही पुजावे। मेहनत करे सोई फल भुगते, पाक साहब ना पावे॥ उतपति परले पेठ लगाई, सकल जीव भरमावे। भँवरजाल कियो भौसागर, पार न कोई पावे ॥ कहें कबीर जो सतगुरु चीन्हैं, सो यहि भेदका पावे। आवागमन दोऊ दुख मेटै, निहचल घरहिं पठावे ॥

शब्द १३७-माया काली नागनि जिन डसिया सब संसार ॥ टे० ॥ इंद्र डसे ब्रह्मा डसे, नारद डसिया व्यास। बात कहत शिवको डसी, जाके छिन एक बैठी पास॥ कंस डसे सिसपाल डसे, रावन डसिया जाय। दस मस्तक जाके भूमि परे, ताकर लंका दई लुटाय॥ बड़ बड़ गारुड सब डसे, कोइ न कीलनहार। कच्छ देश गोरख डसे, जाका जोग अपार॥ चुन चुन मारे चतुर सूरमा, जाकी करे जग आर। तोसे गरीबकी कौन गिने, कहें कबीर बिचार ॥

शब्द १३८-रामगति पार न पावे कोई॥ चिंतामन प्रभु निकट

छोडके, भरम भरम बुध मत खोई ॥ टे० ॥ नेम धर्म व्रत संजम पूजा, बहुत भांत हर सोधे। सत्य सोहाग कैसेके पावे, अच्छर कंथ बिरोधे॥ नारी पुरुष रहत एक संगा, निस दिन जात अबोले। तजि अभिमान मिलत नहिं पियको, बन बन ढूंढत डोले॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधू, बूझे बिरला सोई। प्रेम प्रीत अंतर कछु औरे, कहा न माने कोई ॥

शब्द १३९—खाय लिये सब दुनिगां देवनियां ॥ टे० ॥ घेर घेर सकलो जग खाये, घर घर सांपनियां ॥ देश देशके राजा खाये, गांव गांव भुमिनियां ॥ सरग पताल लोक सब खाये, तिहुं पुर पाटनियां ॥ जैनी जती नाथ सब खाये, शीश धुनी धुननियां ॥ स्वामी सब उपदेसित खाये, निरधन औ धननियां ॥ तीरथ भवंते भोंदू खाये, कनक औ कामनियां ॥ जोगी जंगम तपसी खाये, खाये मुनि बाधनियां॥ शंकरके समाध छुडाये, माया मोहनियां॥ चार बरन चारों जुग खाये, दोऊ दीन दुननियां ॥ षट दरशन पतिबरता खाये, बीन बीन बिननियां ॥ दोय एक बांच रहे हैं, राम नाम गुननियां ॥ कहें कबीर एक सांच प्रचे, नहिं बांचे सब दुननियां ॥

शब्द १४०—बाजीगर बाजी रची, माया बिस्तारा॥ बाजीसों बाजी रमैं, बाजीगर न्यारा ॥ टे० ॥ अहं बांस ममता गडो, नौ डोर पसारी । मोह ढोल बाजे सदा, नाचे नर नारी ॥ काम क्रोध हंकारका, ले डमरू बजाया। जल थलमें जिव किते, माया भरमाया॥ दुख सुख गोता ऊचरे, माया मद पीया। ब्रह्मा विष्णु महेशको माया बस कीया ॥ चंचलते निहचल भया, अमर घर आया। कहें कबीर बाज़ी तजी, बाजीगर पाया ॥

शब्द १४१-मायाके गोविंद है, गोविंदकी माया॥ माया औ गोविंदके, काहू अन्त न पाया॥ टे०॥ राजकुँवारी द्वारे सोहई, माया बिन नंगी। माया घर चंडालके, सोहत अति चंगी॥ जेते बेद किताब है, माया बिन फीके। जेते देवी देहरा, माया सो नीके॥ शेख सैयद मुनि जना, सब मायाके वारी। ऊपर त्यागी सब कहैं, अंतरकी प्यारी॥ आगेसे माया चली, पीछे भी माया। कहैं कबीर साधू बिना, कोई अंत न पाया॥

शब्द १४२-भज भगवंत भूल मत जावो रे॥ मानुष जन्म को एही लाभो रे॥ गुरुसेवा कर भक्ति दिढाऊं। ताते मानुष देही पाऊं॥ जो देहीको सोचे देवा। सो देही कर हरिकी सेवा॥ अब न भजो भजो कब भाई। आवे अंत तोहि भजो न जाई॥ सतगुरु मिले तो होय ततसारा। फिर पछतैहो बारंबारा॥ जौलौं काल न ग्रासे काया। तौलों जरा मरन नहिं आया॥ जौलों हिये परो नहिं बान। तौलों भजो नर सारंगपान॥ एही तेरो औसर एही तेरो दाव। घटहीमे एक शब्द चेताव॥ कहैं कबीर जीत भावे हार। बहु बिध कहों पुकार पुकार॥

शब्द १४३-सत गुरुदेव दया करो बिधि देहु बताई॥ जीव ब्रह्म कैसे भयो, केहि पूछों जाई॥टे०॥ सुनो संत चित लायके, यह खेल अपारा। आवत जात लखे नहीं, यह अचरज सारा॥ जा घरते जिव आइया, सो तुम्हें लखाया। पवन डोर चढ संचरे, जल सिरजी काया॥ पूरब पश्चिम दछिन, उत्तर फिर आया। दिव्यदृष्टि पावे नहीं, घर घर भरमाया॥ दश दरवाजा प्रगट है, चार कुलफ लगाये। दोय दरवाजा ऊघरे, हंसा सचु पाये॥ पांच तत्त्व एकतत भये, नौ खंड बनाया। तामें भौंर बिलंबिया, नख सिख लौ लाया॥ कुंभके जल सायर मिला, जल जलहिं समाया॥

सो जल कैसे काढिये, बिधि देहु बताया॥ सतगुरु खेवट साथ ले, जिन अथाह थहाया। कुंभके जल कुंभे मिला जल, जलहि समाया॥ कहैं कवीर धर्मदाससों, मैं कहों पुकारा। एक नाम चीन्हे बिना, अटके जमके द्वारा॥

शब्द १४४-तुम सब घट पूरन साँईं, मेरी ओर चितवत नाहीं॥ टेक॥ या घटके कोई ना जाने मेहरम साँईं॥ अबकी बार चितवो नेक मोपर, जिवकी कल्पना जाई॥ सेवा सुमिरन कछू न जानो, औगुन है गुन नाहीं॥ हमसे पतित तुम केते उबारो, हमहूंको तरु गोसांई॥ अधम उधारन सुन यह बिनती, अरजी बिसर न जाई॥ साहब कवीर अधमको तारो, तुम्हरो बिरद लजाई॥

शब्द १४५-बोलनहारा राम रजा है॥ पिंड ब्रह्मांड रहा भरपूरी, आप अकेला बांध धजा है॥ टेक॥ जैसे बुंद परो जल मांहीं, जलहीते बुदबुद उपजा है॥ मिट बुदबुद जल माँहिं समाने, हो रहो एक सरूप सजा है॥ जैसे कुंभ भरो जल माहीं, सबमें दरसे चंद सजा है॥ विनसे कुंभ चंद ना बिनसे, शब्द सरूपी अमर अजा है॥ जामों हम सोई हम मांही, वाही तत्त्वमें गगन गजा है॥ कहैं कवीर संशय कछु नाहीं, तत्त्व लखा तब भस्म भजा है॥

शब्द १४६-बैरागी रामा गांव ठांव, खोजे सचु पाऊंगा॥टे०॥ तीरथ जाऊं न जलमें पैठों, जीव जतन सत पाऊंगा॥ सकल तीर्थ गुरु घटमें बतायो, तामें पैठ नहाऊंगा॥ पानी ढोरों न पाहन पूजों, देव देवल नहिं जाऊंगा॥ व्रत अखंडल मंडल ऊपर, अनहद बीन बजाऊंगा॥ बेद किताब सुमृति ना मानों, गीत कवित्त न गाऊंगा॥ पांच सोहंग करों नहिं पूजा, भला भला न कहाऊंगा॥

बैठ नाम निहछत्र सिंगासन, अविगतसों लौ लाऊंगा ॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधो, सहज समाध लगाऊंगा ॥

शब्द १४७-तुम चलो तो चाल निगोडा, मैं तो गंगा न्हाऊंगी ॥ टेक ॥ इमनी बेचूं तिमनी बेचूं, सेर दस गेहूं लाऊंगी ॥ पांच सेरकी करों कडाई, मंजिल मंजिल पर खाऊंगी ॥ छोरा पटकूं छोरी पटकूं, घरमें आग लगाऊंगी ॥ सुनियोरी मोरी पारपडोसन, दिना चारमें आऊंगी ॥ गंगाजीके तीर जायके, अजपा जाप जपाऊंगी ॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधो, मूंड मुंडाय घर आऊंगी ॥

शब्द १४८-कायागढ नगरियासे, गगरिया भरके लावो रे ॥ टेक ॥ पवनके इनरवासे, सुरति डोरिया लावो रे ॥ नौ नारी पनिहारी आई, लागा पूरा दावो रे ॥ पांच पचीसो रंगे चंगे, मनके माते भावो रे ॥ निरगुनके इंडरोया धारे, हौले हौले आवो रे ॥ गगन अटरिया चढके देखो, सबका भावो रे ॥ सदरद दिवाने खडे दुवारे, दरसे वाके पावो रे ॥ साहब कबीर गुरु भर भर लावे, संतनको पिलावो रे ॥ जन्म मरन भौ संशय नाहीं, ऐसा कहरा गावो रे ॥

शब्द १४९-नइया बिच नदिया डूबी जाय, कहीं देखेहो मिसरजी ॥ टे० ॥ एक अचंभा हमने देखा, कुवामें लागी आग ॥ जल हता सो जर गया, मछली न लागी आंच ॥ नदी किनारे नइया लागी, नदिया डूबी जाय ॥ ये माया भगवानकी, ताहीसे डबियाय ॥ चीटीं चली सासरे, नौ मन काजर लाय ॥ हाथी मार बगलमें दाबे, ऊंट लिये लटकाय ॥ एक चीटीके मुवले, खाये गिध हजार ॥ बाकी बचे सो काकरे, चील रही मड़राय ॥ एक चीटीके मूतमें, बह गये नदिया नाल ॥ पंडित पछारे धोतियाँ, धीमर डारे जाल ॥ गगन मंडिलमें गऊ वियानी, धरती दही जमाय ॥ बाछा वाके

पेटमें, माखन हाट बिकाय ॥ एक अचंभा हमने देखा, गदहाके सिर सींग ॥ चींटीके पग डोरी लागे, खैंचे अर्जुन भीम ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधू, या पद है निरबान ॥ या पदका कोई अरथ लगावे, सोई संत सुजान ॥

शब्द १५०बानी छोडदे अभिमानी ॥ टे० ॥ जे भईयाके गरब करत थे, सोई भये अगवानी ॥ जे सायरके गरब करत थे, तापै सिला उतरानी॥ जे लंकाके गरब करत थे, सोई भये धुरधानी॥ कहे कबीर सुनो भाइ साधू, शब्द लेउ पहिचानी ॥

शब्द १५१-अवधू कौन देश निज डेरा। तेरो हंसा लेत बसेरा ॥ टे० ॥ कौन देश है कौन दिशा है, कौन आपहो सांई॥ कौन महलकी टहल करतहो, कहो खबर केहि तांई॥ नर नारीके गरभ भोगते, सहजे काया पाई ॥ की तुम जनमें मात पितासे, की बीचहि आन समाई ॥ चित्रगुप्त जब लेखा मांगे, बहु बल रूप सँवारा ॥ गोच केबार बांध फटकारे, अगिन कुंड ले डारा ॥ मझधार नइया डोलन लागी, अजहूं खेव सबेरा ॥ कह कबीर अबकी बेर चेतो, तब मिटिहैं जम जेरा ॥

शब्द १५२-दोय दिन खेल ले यह खेला॥ ये तो नदी नावको मेला ॥ टे० ॥ कौडी कौडी माया जोरे, संग न जाय तेरे धेला॥ और जनम बहुतेरे पावौ, मानुष जन्म दुहेला॥ मात पिता सुत कुटुम्ब कबीला, संग न जाय तेरे भेला॥ चार बेद षट शास्त्र पुकारें, संत न देहैं हेला ॥ कहें कबीर सुनो भाई साधो, गतीका बिरद दुहेला ॥

शब्द १५३-तुझे बोलनकी सुध नाहीं रे ॥टे०॥ चंद चढे कुल आलम देखे, मैं देखों तेरे तांई रे ॥ दुनियां पूजै पीर पैगम्बर, मैं पूजों गुरु सांई रे॥ काम क्रोध अभिमान भरो है, कालके फांस

पराई रे॥ नारिको यार माते मदिरासे, बिके बिराने हाथाई रे॥ जो तनका तूं गर्ब करत है, सो तन नहीं रहाई रे॥ अजहूं चेत मुगध नर मूरख, सतगुरु होय सहाई रे॥ अरे मतिमंद जनमके अंधा, किन ऐसी मति दहाई रे॥ कहें कबीर अबकी बेर चेतो, योंही न जन्म गवांई रे॥

शब्द १५४–क्या लडना बिराने भागोंसे॥ टे०॥ एक जु खाते दूध बतासे, एक गुजारे सागोंसे॥ एक जु चढते हाथी घोडा, एक लगे वाके बागोंसे॥ एक जु पहिरे मखमल खासा, एक गुजारे आगोंसे॥ जो लिखनी बिधने लिख दीन्हा, सो न टरे वाके भागोंसे॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधो, सतगुरु चरन दीदारौंसे॥

शब्द १५५–मायाका गुलाम गेदी क्या जाने बंदगी॥ टे०॥ साधुसे धूमधाम, चोरनसे करे काम। धींगनसे हाथ जोरे, कपटकी बंदगी॥ कपटके माला लीन्हे, पाखंड तिलक दीन्हे। आधारंगी धोती पहिरे, करत मिजाजगी॥ होद न सके बंदगी, किया चाहे सिद्धगी। कहें कबीर धिक्कार ऐसी जिंदगी॥

शब्द १५६–गाफिला साईंका नाम बिसारा॥ टे०॥ पानीके बुंदसे पिंड प्रगट भये, ऐसा सिरजनहारा॥ नीचे शिर ऊपर पग तेरा, जब तूं किया पुकारा॥ नौ दस मास गर्भ प्रतिपाले, वहां तोहि दिया अहारा॥ जठर अगिनमें राख लियो है, ऐसा राखन-हारा॥ कौल बोलके बाहिर आये, यहां भये वटपारा॥ कहें कबीर समुझ नर अंधा, कौलको करो संभारा॥

शब्द १५७–दोय दिन पडाव हैंदा भाई॥ टे०॥ हिंदू शूवर घेरके मारे, मुसलमान काटे गाई॥ घड पखानके मुरत बनाये, ता पूजन दुनिया धाई॥ मुरदा गाड मसीत बनाये, तासों पीर कहे भाई॥ कहें कबीर सुनो भाई साधो, बिन समुझे परलै जाई॥

शब्द १५८-सोवें मन मेरा जगे न जगायेसों॥ आलस अमलरस मदरस पायेसों॥टे०॥ ऐसो पापी मन पंचो, ठग न ठगायेसों॥ गुरुमुख बात न सुनै सुनायेसों॥ आगे बात न बनिहै बनायेसों॥ गुरु उपदेश न सुनै सुनायेसों॥ फिर नहिं बात आगे बनिहै बनायेसों॥ छूछी भरी गगरी करम ढरकायेसों॥ का सोया बहुत न सुने गोहरायेसों॥ कहैं कबीर सुन या जग आयेसों॥ अमृत छोंड बिषैरस पायेसों॥

शब्द १५९-मेरे सतगुरु गह लई बांह, नहीं तो मैं बहे जाती॥ टे०॥ जग झूठा बदनाम है, मन ज्ञानी अभिमान। सतगुरु बोली बोलिया, जासे झनक परी मेरे कान॥ बारू नग पैदा किया, धन कारीगर तोहि। सिकलीगर सतगुरु मिले, दरस दिखावो मोहि॥ माया मार ममता तजे, शब्द सनेही होय। लोभ लालच ये सब तजे, सतगुरु परसे सोय॥ काम क्रोध जो त्याग है, तिन घट ब्रह्म समाय। कहैं कबीर ते बांचहीं, ना तो जमपुर जाय॥

शब्द १६०कित गया रे पंछी बोलता॥ टे०॥ अन भी खाता पंछी पानी भी पीता, उड तरवर पर बैठता। सेत सुपेती नरम गेंदरा, तापर पंछी पौढता॥ लटपट पाग बांधे मूंछ सँवारे, ले दरपन मुख देखता। कहैं कबीर सुनो भाई साधो, रती रती कर भेजता॥

शब्द १६१-साँईके चरन चित लाव मना॥टे०॥ उदर भरनके कारने, सुरही वनको जाहिं। त्रिन चरे चहुँ दिस फिरे, वाके सुरत बछरुवा माँहिं॥ पांच सात सहेलरी, हिलमिल पनियां जाहिं। दै तारी मुख वे हंसी, वाके सुरत गगरिया माँहिं॥ नटनी नाचे चौहटे, लोग करत हैं शोर। सुरति बांध चढी बांससे, वाके चित्त डगे कहुँ और॥ ज्वारी राचे जुवामें, कामी राचे काम। कहैं कबीर धर्मदाससों, तुम या बिध सुमरो नाम॥

शब्द १६२-हमारे पिया मिले ब्रह्मज्ञानी॥ टे० ॥ काग बरनते हंसा कीन्हे, दीन्हा शब्द निशानी ॥ सुंदर रूप सोहावन मूरत, पूरन है ब्रह्मज्ञानी ॥ सेज सँवारो गुरुज्ञानकी, सुरति निरतिसे आनी ॥ कुमत जराय कियो हम काजर, प्रेम प्रीतसों आनी ॥ शील संतोष पहिर दोय कंकन, हो रही मगन दिवानी ॥ इतना सिंगार कियो जब बिरहिन, तब पियाके मन मानी॥ ऐसे पिया मोहि कबहुं न मिलिया, देख सुरत ललचानी ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधू, तनकी तपन बुझानी ॥

शब्द १६३-तोहे बान पर गई देखनकी, दो नैननके बीचमें ॥ टे० ॥ ररा मम्मा अच्छर दोई, भूल गई सुध लेखनकी ॥ बहदा खूब दोई घट साहब, जान परें कोई भेषनकी ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधो, संत निशानी टेकनकी ॥

शब्द १६४-सतनाम हीरा सार, हिरदे लगाय राखो रे॥ टे०॥ मनकी रे मनोरथ माला, मनको पहिरावो रे ॥ कपटके कँठुला उतार डारो रे ॥ मनका रे मनोरथ धोबी, मनको नहिं धोया रे ॥ दिलके दगवा, छुटाय डारो रे ॥ प्रेम प्रीतके बिरछा, ले अमृत सींचो रे, बिषके बेली उपार डारो रे॥ कबीर अपने तनमें, दिल अंदर खोजो रे, सूरतसे मूरत मिलाय राखो रे ॥

शब्द १६५-छाडो मन मेरा जगतके खटका ॥ टे० ॥ बैद तो बैदाई करे, नारी मन अटका॥ पिंजरासे सुवटा कौन बिधि सटका॥ पंडित तो पंडिताई करें, पोथी मन अटका। औरनको राह बतावे, आप खाय भटका॥ गुनियां मांगे पान फूल, देवी मांगे झिटका। कितना माँगे और और, आवत काल कोई ना हटका ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधो, काल कला घर आवत नटका ॥

शब्द १६६-बाबा सांईजी ए तो ख्याल तुम्हारा ॥ टेक ॥

असमानी एक बाज उडा है, कडवा तीर चलावे ॥ जद बकरीने बाघ पछारा, उसको कौन छुडावे ॥ चूहाने तो बिल्ली पकरी, मुरगा घर घर रोवे ॥ बंदरके घर धूम मची है, ऊंट बिसुन पद गावे॥ गूंगा कहे बधिरसों बातां, अंधा पुरान बांचे॥ जद ठूँटा मृदंग बजावे, लंगडा क्या खूब नाचे ॥ कहैं कवीर यह उलटा पद है, बिरला जाने ज्ञानी ॥ सतगुरु घरका पूरा होई, सो यह बात पिछानी ॥

शब्द १६७–संतो अचरज एक मोहि लागे ॥ कुलकी रीत सदा उर धारे, सत्यशब्दसो भागे ॥ टे० ॥ कुलकी रीति भगति ना होई, ये सब बिषै व्योहारा॥ मन मायासो अटके प्रानी, सूझे वार न पारा॥ औरनसों कहैं त्यागो भाई, आप सर्वस लपटाने॥ जो लग जोग जुगत ना आवे, सकल काल घर जाने॥ बांस बडाई छांडत नाहीं, ढिग चंदनके बासा ॥ आप तजे न बांस बडाई, ताते गयो निरासा॥ जोपै लोक हमारा चाहो, धर्मनि तजो बडाई॥ सतगुरु शब्द खोजके देखो, करम भरम छै जाई॥ कहैं कवीर मैं कहों पुकारी, सुनो संत निज बैना ॥ जब लग कुलकी रीत न छूटे, तब लग फूटे नैना ॥

शब्द १६८–कितने दिननके ठानो ठाठ ॥ टे० ॥ जो देहिया तुम निशदिन पालो, सो देहिया मिले माटी माट ॥ परनपखेर नगर एक काया, ना जानो जाये कोने बाट॥ मर मर जैहो फिर फिर ऐहो, सौदा कर सतगुरुके हाट ॥ कहैं कवीर सुनो भाई साधो, अब का करिहो कागद फाट ॥

शब्द १६९–माली सींचता फुलवारी ॥टे०॥ ऊपर माली घर किया है, नीचे राखी द्वारी ॥ पानीसे जिन पिंड रचा है, ऐसा

अविगत प्याली॥ नौका बैठे रहट चलावे, सींचत काया बारी॥ कहें कबीर सुनो भाई साधो, सतगुरुकी बलिहारी ॥

शब्द १७०–लगी न छूटे चाहे जिय जाय॥टे०॥ सारके भाले सार रहे, गुरु ज्ञान कमान चढाई॥ सतगुरु केवल वहियां, कोई अंदर भाल रमाई ॥ ध्रुव लागी प्रहलादे लागी, लागी बिभीषन राई ॥ बिप्र सुदामाको ऐसी लागी, कंचन पुरी बसाई ॥ गोरख गोपीचंद भरथरी लागी, मीरा बाई ॥ पीपाजूको ऐसी लागी। कूद परा दह मांहीं॥ रंका लागी बंका लागी, लागी सदन कसाई॥ साह बलखको ऐसी लागी छाड चला बदसाई ॥ शेख फरीद कुवा बिच लटके, कागा चुन चुन खाई॥ वाजिदाको ऐसी लागी; दौलत सबै लुटाई ॥ पैडेमें एक घायल पडा, वाके घाव नजर नहिं आई ॥ पाव पलककी खबर न जाने, गहरी नींव दिवाई॥ भौसागरमें नाव परी है, पार लगावो सांई ॥ कहें कबीर दया सतगुरु बिन, कायर बूडा जाई ॥

शब्द १७१हीरा जनम न बारम्बार, समुझ मन चेत करो॥टे०॥ पूरन परमानंद किया सब ताका होई। जब तब राखनहार, तरन तारन है सोई॥ संग आवै संग जांयगे, अजहू संग रहाय। संग तुमारा छोड़के, अंत न कतहूं जाय॥ ठहर अगिनकी आंच तहां, प्रभु सिरजे अंगा। तहवां रच्छा करी आप, तुम्हारे होय संगा॥ एक बुंदके साजमें, ऐसा किया बनाव। सरवन नैन मुख नाशिका, छबि दिये चलनको पांव ॥ कीट पतंग पखान भये, तरवर पशु पंछी। जलतरंग शिव भये, भये मगरा औ मछी ॥ अंग उघारे ते फिर, कतहुँ न पावे सुक्ख। एक नाम जाने बिना, जनम जनम बहु दुक्ख ॥ बूडे दुख बिहाल जबे, औंधे मुख झूले। सो दिन बेग सँभार, कहँवा जाते अब भूले॥ मन ममताके कारने, कीन्हे

नरक निवास। मुगध रूप हो रहे, तब जीव गरभ दस मास ॥ इन दुखनसे काढि, प्रगट बाहेर प्रभु कीन्हा। भगति अंगकी छांप प्रभू, दस्कत लिख दीन्हा ॥ उनको नाम न ले सके, जिन पठये भव मांह। रंचक सुखके कारने, विसर गये निज नाह ॥ बालक बुध अजान, कहा कछु मर्म न जाने। खेले सहज सुभाव, जहां वाके मन माने॥ अधिक हठीले हो रहे, ना काहूको मान। भला बुरा चित ना धरे, बारा बरस अजान ॥ नौ दस भीतर आय जान, जब जुरी सगाई। नारीते पहिचान, नाम बद कीन्हे भाई ॥ पुरुष नाम ना ले सके, जिन पठये भौ माहिं। येहू उमर भूले फिरे, देख कुटुम्बकी बांह ॥ जोबन जोर झकोर, मसी जब मुखपर आई। अंग सुगंध लगाय, शीश पगिया ढरकाई ॥ अंध भये सूझे नहीं, फूट गये जो चार। झूठे काम पतंग जो, देख बिरानी नार॥ जैसे रंग कुसुम, बहुत दीखतके नीके। भावे दिन दस चार, अंत लागेंगे फीके॥ माया निकट बुलायके, देवै छाती बाढ। लीन्हे रंग निचोयके, ज्यों कोल्हू तिल काढ ॥ नाम जो रंग मजीठ लगे, छूटे ना भाई। रचे रच रहे शरीर, सबे दिन दिन अधिकाई॥ बारम्बार धोवाइये, देव करारी धोय। ज्यों ज्यों फटे पिछोरा, दिन दिन ऊजल होय ॥ जोधा अजर अजीत, पलट पुहमी पग धरते। दुशमन रहत डराय जाहि छल बल कर गहते॥ सौ जोजन मरजाद है, सिंधु करत एक फाल। हांथन परबत तौलते, तो धरि खायो काल ॥ जिन बांधा बलबीर, देव तेतीस करोरी। तिनके बिगरे राज, जरत जस फागुन होरी॥ देखो दिष्टि पसारके, नर तुम्हरे केतिक बात। देखतही तुम जावगे, ज्यों तरवरके पात ॥ सोवत हौ केहि नींद, मूढ मूरख अज्ञानी। अंत समय पछताव, हंस जब देय पयानी ॥ काहे खोटी करत हो,

तुम्हारा बड़ा अभाग। लेखा मांगे वह धनी, तब का देहु जबाब॥ झीनी भाषा बोल, चेत चित कामिन चोरी। छिन छिन प्रीत बढाय, नामसे नाता तोरी॥ लीन्हे अंग संग करी, रही ठगोरी मेल। या बिध भंवर बिलंबिया, कँवल रहे मुख फेर॥ माया खोटी हाट, समुझके सौदा कीजे। खोटा खरा बिचार, परख अपने दिल लीजे॥ तुम जिन खोवौ बावरे, हरि हीराकी सांट। कितने नर डहका गये, इन साहुनके हाट॥ जोबन जोर झकोर, नहीं डर अंतर बाड़ी। होहु संत हुशियार, परख निज बांधो गाढी॥ दे गजगीरा प्रेमको, मूदो दसों दुवार। वहि साहबके मिलनको, पलक न लागे बार॥ सोवत हो केहि नींद, मूढ मूरख अभिमानी। भोर भये पछताव, हंस जब देह सिरानी॥ छूटत है यह अंगते, ज्यों सरवरके वार। अब मैं सांची कहत हों, उडिहो पंख पसार॥ ना जाने केह हेत, भये मानुष तन येहा। मन बच करम बिचार, जान निज चेतो देहा॥ लख चौरासी भरमके, पाये मानुष देह। सो तन पाय न खोइये, झूंठे प्रेम सनेह॥ बिदा भये पछताव, जबें तीनों पन हारो। समुझ पुरानी प्रीत, बोल लागे तब प्यारो॥ लचक धनुहियां जब गई, केस भये सब श्वेत। बोल बचन आवे नहीं, लूटे लियो घर प्रेत॥ नांव झांझरी लाद, साज बैठे बैपारी। बोझे लोह पखान, मोहिं डर लागत भारी॥ मांझ धार पर भँवरमा, आन परी तब भीर। एक नाम जाने बिना, को गहि लावे तीर॥ सौ भइयाके बांह तपे, दुर्जोधन राना। परे नरायन बीच, भूमिमें विग्रह ठाना॥ युद्ध रचा कुरुक्षेत्रमें, वानन बरसे मेह। तिनहुंके अभिमान गा, गीध न खाई देह॥ छत्रपती महिपाल रहत, देखा नहिं कोई। दिन दस गये बजाय, अंत गरदहु मिल सोई॥ परिहो नर्क अघोरमें,

तब का चेतो अंध। एक नाम जाने बिना, परो कालके फंद॥ ऊंट सलीता बहुत बहुत, हाथी ओ घोडा। चलत वारके समय, न लागे एको डोरा॥ कंचन महला धर रही, और सुंदरी नार। जो आये सो जात हैं, चले दोऊ कर झार॥ ऐसा यह संसार जान, जस रहटके घरिया। एक आवे एक जाय, एक पुन आवे भरिया॥ उपज उपज बिनसत फिरे, फिर फिर करे गरास। एही तमाशा देखके, चितमें भये उदास। खेत बिराने लागे मृगा, एक बनसे गाधा। नित प्रति चर चर जाय, एक दिन आया व्याधा॥ छूटन चाहे बल करे, मनही मन पछताय। अब कैसेके छूटनो, जब धनी पहुँचा आय॥ ऐसा यह संसार जान, जस गुडकी मखी। लागी चाखन बैठ, बाझ गये दोनों पंखी॥ पंख मरोरै शिर धुने, मनही मन पछताय। वह मलयागर छोडके, यह दुख पायेउ आय॥ काह कहूं कित जाउं, आन चहुं दिशसे घेरा। मात पिता पुचकार, हाथ चोटीसे फेरा॥ मोह फांसमें बांधके, छूट न पावे जान। नारी तो बैरी भई, पुत्र भये निगमान॥ यहां दूधका दूध, और पानीका पानी। सुनो संतो चित लाय, कछु यह अकथ कहानी॥ कँवल कली बिगसित भई, अनभौ शब्द उचार। यह लीला है मुकतिका, कहैं कबीर बिचार॥ ❋

शब्द १७२–हीरा तन पाय तूने सुमति गँवाई॥टे०॥ नौ दस मास गरभमें राखे, नरक योनि भुगताई॥ नरक योनिसे बाहिर काढे, मात पिताकी सुध बिसराई॥ बालापनमें खेल गँवाये, पीछे ज्वानी आई॥ जो माताने दूध पिलाई, सो माताको लात चलाई॥ वृद्ध भये कफ आवन लागे, द्वारे खाट बिछाई॥ पार-परोसी सब जुर आये, घरके कहैं यहि मौत न आई॥ भवसा-

गरकी अगम बात है, जाके पार न पाई॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधू, छोड चले सबही ठकुराई॥

शब्द १७३-संतो करो साहबी तनमें॥ टे०॥ पांच पचीस फौज या मनकी, खेलैं भीतर घरमें॥ भरम मोरचा साहब काटे, बैठ जुगतके घरमें॥ मूल कँवलकी खोल किवारी, प्रेम मगन भये दिलमें॥ श्वेत फूल निश बासर फूले, लेत लहरिया जलमें॥ बंकनालको धावा देवे, चढ गया सूर गगनमें॥ घाट पाट सब औघट देखे, आवे तखत नजरमें॥ ताल पखाल मृदंग जो बाजे, शोभा नगर महलमें॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधो, छायो नाम अधरमें॥

शब्द १७४-मैं सत्तनामका बैपारी॥ टे०॥ काह लादे कांसा पीतर, काहू सामर खारी॥ संतन लादे नाम धनीका विष लादे संसारी॥ पूंजी न टूटे नफा चौगुने, वनिज किया एक भारी॥ गैल जगाती रोक ना सके, है निरभय राह हमारी॥ हाल हजूर रहत साहबके, पटा चढो दरबारी॥ जब साहबने पंजा रोपे, जम पर अदल हमारी॥ हीरालाल घटहीमें उपजे, सुक्रिति लगी किवारी॥ नाम साहबका लाद चले हैं, धर्मदास बैपारी॥ लख चौरासी जिया जो इनसे, इनसे राह नियारी॥ कहैं कबीर एक बनिज किया है, कबहुं न आवे हारी॥

शब्द १७५-अलमस्ता जोगी नाम अमल रस चाखा॥ टे०॥ याही तनकी कूंडी करले, शब्दके करले घोटा। भरम भांगको निशदिन घोटो, ज्ञानका साफी छनौटा॥ आव संत जुर-मिलके पीवो, प्रेम मगन विस्वासा। सुरत समेट धरौ हृदैमें, छूट जाय भरम फासा॥ रतन कटोरा भर भर पीवो, पांचों ईंद्री साथा। रोम रोममें छाय गया है, का ठंढा का ताता॥ गुरुका शब्द

अगिनका टनका, जब लागा तब चेता। सार शब्द खांडेकी धारा, सब हारा कोइ जीता ॥ सिरके सांटे भगत कबूले, का तनकी कुसलाता। साहेब कवीर मगन होय गावे, का संध्या परभाता ॥

शब्द १७६-साहब तेरा भेद न जाने कोई ॥टे०॥ पानी ले ले साबू लेले, मल मल काया धोई। अंदर घटका दाग न छूटे, निरमल कैसे होई ॥ जा घट भीतर बैल बंधे हैं, निरमल खेती होई। सुखिया बैठे भजन करत हैं, दुखिया दिल भर रोई॥ या घट भीतर अगिन जरत है, धुवां न परगट होई। कै दिल जाने आपना, के सिर बीती होई॥ जर बिन बेल बेल विन तूंबा, वे फूले फल होई। कहें कवीर सुनो भाई साधू, गुरु बिन ज्ञान न होई ॥

शब्द १७७-साहब मेरा मैं द्वालीबंद तेरा॥टे०॥ पांच हथियार कमर कस बांधो, ठग ठाकुर बहुतेरा॥ हनमस्ता चौकीपे राखो, चोर न मूसे डेरा॥ सब दिन जीन छुटन ना पावे, चरन न पावे घोडा ॥ निश दिन लडे धनीके आगे, रनमें लडत अकेला ॥ पांचों मार पचीसों बसकर, जब मुजरा है तेरा ॥ मुजरा तेरा होन न पावे, लुटन लगे सब डेरा ॥ काया गढमें फिरे दोहाई, दुतिया रहन न पावे॥ कहें कवीर ताहिको मारो, जो कोइ शीश उठावे ॥

शब्द १७८-ग्वालिन दधि बेच न जाना। मेरा सतगुरु दुहत दुहाना॥टे०॥ मूल चक्रपे रोपी मटकिया, सुषमन खेंच मथाना॥ सुरति निरतिकी करो कडनियां, धीरज फुलका भवना॥ माखन खैंच छाछ कर न्यारी, त्रिकुटि महलमें छवना॥ गुहिज कमलमें कुपीका बासा, माखन उलट समाना ॥ उलटके मीन चढी गिरवरको, कहें कवीर पहिचाना ॥

शब्द १७९–संतो अमल करे सो पावे, बिन समुझे का गावे ॥ टे० ॥ जैसे सुराही लिये हाथमें, पल पल दरस दिखावे ॥ औरन आगे करत उजेरो, आप अंधेरे जावे ॥ बनी समाध रूपी घट भीतर, दिलवर दिलहि मिलावे॥ चढो नसा उतरे ना कबहूं, नैनन बीच रमावे॥ बांचे पोथी अरथ उचारे, जगको कथा सुनावे॥ जानत नहीं कहां हम जैहैं, घर जरे घूर बुतावे ॥ ध्रुव प्रहलाद नामदेव छाके, मुरदा गाड़ जिवावे॥ कहैं कवीर देख सदनाको, एकै घरे तुलावे ॥

शब्द १८०–हों जग जाहिरा मेरा नाम कवीर॥टे०॥ तीन लोक ताना तनों, खूंटी है असमान॥ पानी पवन सरूप हमारा, या बिधि रचों जहान॥ अनहद नाद गगन धुन गाजें, लागी सोहं तार॥ ब्रह्मबीज हमहींते आयो, हमहीं सिरजनहार॥ गगन मंडलमें रहन हमारी, त्रिकुटी है अस्थान ॥ सुर नर मुनिवर पार न पावे, है कोई संत सुजान॥ जम बंधनसे जाय छुडाऊँ, निरभै करों शरीरा॥ मुक्तिभेद ताहीसे भाखों, जो मत गहिर गंभीरा॥ वेद किताबसे रहते न्यारा, ऐसा मतको धीर ॥ कहैं कवीर सुनो भाई साधू, दोई दीनको पीर ॥

शब्द १८१–तुम बिन कौन गरीब निवाजे॥ त्रिनसे बज्र बज्रसे तिनका, जोई करे सो छाजे ॥ टे० ॥ जलमें थल थलमें जल कीन्हो, बिगरी फेर संभारे॥ नरते नार किये नारदको, अजामिलसे तारे ॥ मत कोई गर्व करो करनीको, करता क्रितम बिचारे ॥ कहैं कवीर करतासे डरिये, मत कछु औरन टारे ॥

शब्द १८२–संतो पानीमें रजधानी। पानी पिंड ब्रह्मांड सकल सब, पानीकी मंडानी ॥ टे० ॥ पानी खेत बीज है पानी, पानी सांचे ढारा। नाद बिंद संजोग समाना, जुगल स्वरूप सँवारा ॥

पानीमें उपजे, पानी बिनसे, पानीके पंडित ज्ञानी। दस औतार पीर पैगंबर, पानीमें चारों खानी॥ पानीके यह सकल रंग है, ताहि देख नर भूला। चिंता तेज कलप नहिं छूटे, फिर फिर संकट झूला॥ पानीके रे सकल भोग हैं, पानी सुखके रासी। जो पानीका मरम न जाने, सो भरमें चौरासी॥ पानी ताता पानी सीरा, पानी खट्टा मीठा खारा। पानी झलक सपेद जरद है, लाल हरा औ कारा॥ हिंदू तुरुक कहें हम दोनों, एक पानीते सिरजे। आपुसमें दोऊ लड़े मरत हैं, दुबधामें दोऊ उरझे॥ पानी काया पानी माया, जित देखो तित पानी। पानीको करता घट भीतर, बोलत अमृत बानी॥ जोग यज्ञ तीरथ व्रत संजम, ज्ञान ध्यान ले आया। कहैं कबीर एक समुझे बिन, काहू कछू न पाया॥

शब्द १८३—मेरी प्रीत लगी गुरु नामसो॥टे०॥ जैसे प्रीत है चंद चकोरकी, एकटक नैना ध्यानसो॥ जा तन लगी सोई तन जाने, कठिन चोट गुरु ज्ञानसो॥ जैसे मीन नीरके बिछुरे, तन मन तलफत प्रानसो॥ भामिन प्रीत करि सतगुरुसों, छोड विरह रस कामसो॥

शब्द १८४—दया करी गुरु जुगत बताई। आपा चीन्हे भरम नशाई॥ टेक॥ आपा चीन्हे त्रिभुवन सूझे। गुरु प्रताप कालसे जूझे॥ बहुर न भटको रे नर भाई। पाप पुन्यको बीज नशाई॥ पाप पुन्य दोनों कस बाती। जनम जनम इन जारी छाती॥ काम कसाई क्रोध चंडाला। आशा बैरन तृष्ना काला॥ लोभ डौमरो निद्रा डारा। मनसा चोर दियो दुखभारा॥ कनक कामिनी कलहुको भोंडो। इन ठगनोने सब जग डाँडो॥ कैसे छूटे मोहको फंदा। कैसे खिजमत पावे बंदा॥ कैसे भँवर कमल जो पावै। कैसे जग जंजाल नशावै॥ जब सतगुरुने सार मत दीन्हा। बडे

भागसे आतम चीन्हा ॥ बडे भागसे आतम जागे। कहैं कबीर जबही भरम भागे ॥

शब्द १८५-साधू यो संसारमें, कमला जल माही ॥ सदा सर्वदा संग रहे, जल परसत नाहिं॥टे०॥ जुगत जान जलकूकरी, जल मध्य रहाई। पानी पंख न लागई, कछु कसरत पाई ॥ मीन तरे जल ऊपरे, कछु लगत न भारा। आड अटक माने नहीं, पैरे जल सारा ॥ जुगत जमूरा पाइया, सरपे लपटाई। वाको बिष व्यापे नहीं, गुरुगम्य बताई॥ खीर खांड घृत भोजना, करसो लपटाई। जिभ्याको लागे नहीं, वाका चिकनाई॥ भगल कला नट खेलई, घर न्यारा न्यारा। खंड बिहंडल होरहे, ज्योंका त्यों सारा॥ जैसे सीप समुद्रमें, चित धरत अकाशा। ऐसे पपीहा स्वातीको, नित प्यासा प्यासा॥ कुंज ग्रह का संचरे, वाका को रखवारा। भौमें गलते राखिया, ऐसे गुरू हमारा॥ बंबीमें बिषधार बसे, कोई पकर न पावे। कहें कबीर गुरू मंत्रसो, सहजे चलि आवे॥

शब्द १८६-वा घरमें तुम घर करो, घर बहुर न होई ॥ कोट कल्प जुग बीतिया, बिनसे नहीं कोई ॥ टे० ॥ सेतन नीव गहरी दई, दे विवेकको गारा। सार शब्द ईंटे दई, गुरू राज हमारा ॥ भक्ति महल ऊंचे बने, धीरज घर पाटे। सत सुक्रित छहियां करो, पावे सिरके साटे ॥ प्रेम संदला गारके, गच प्रीतिसों डारे। शील दुलीचा डारके, साधुन बैठारे ॥ दया क्षमा चौकी करो, राखो घर बारा। कहे कबीर सतगुरु मिले, तब होय उबारा ॥

शब्द १८७-गुरुजी समुझ पकडियो बांहीं॥ जो बालक झुनझुनियां खेले, सो बालक हम नाहीं॥टे०॥ हमतो लेहीं सत्तका सौदा, परपंच पूजत नाहीं। चौदासो चेला तुम जो कीन्हे, ले धरिहो केहि ठाहीं॥ जियत ठिकानो सबहिं बतावे, मुए ठिकानो

काहीं। जो तुम्हरे कछु उद्यम नाहीं, भीख मांग किन खाहीं॥ मूल सजीवन जानत नाहीं, मत परबोधा काहीं। नाव तुम्हरी करिया नाहीं, लहर उठे बिकरारा। गुरू सहित सब चेला बूडे, कौन उतारे पारा॥ सूखे काटे जो घुन लागे, लोहे लागे काई। बिन परतीत गुरू का कीजे, काल घसीटे जाई॥ अमृतकुंड सदाकी चौकी, बेली बेला राखे। नेवर देखे बिषहर कंपे, चपल अमीरस चाखे॥ माया आय चौकमें बैठी, नवल विवाहन आहीं। दये कपाट महलमें पौढे, अब कछु संशय नाहीं॥ समझ न होय तो समझो गुरुजी, नातर होत बिगारा। कहैं कवीर सुनो रामानंद, यह सिख लेउ हमारा॥

शब्द १८८—नगरीया बौरी कोई चतुर न पावे पार॥ टे०॥ साकट सूकर कूकरा, तीनोंका मत एक॥ कोट जतन परबोधिये, तऊ न छाडे टेक॥ तास नाम बेगमपुरा, बसे सो बेगम होय॥ या नगरी जो घर करे, बहुरि न आवन होय॥ जात बरन यहां है नहीं, दरस दिवाना देश॥ जतन जतनसों पाइये, बहुरि नहीं धरे भेश॥ पांच तत्त्व तत्त्वहि मिले, पदहि समाने प्रान॥ ज्ञान ध्यान पैंडे थके, ततका ना गलतान॥

शब्द १८९—जिनकी गगन घटा घहरानी॥ चमको बीज भयो उजियारो, मिट गई तिमिर निशानी॥ टे०॥ ज्ञान ध्यानके बैल चराये, खेत जोत निरबानी॥ दुबिधा दूब खोद किन डारो, फिर बोवो नामकी धानी॥ अपनी अपनी बंधिया बांधो, बहि न जाय कहु पानी॥ चित चेतन रखवारे राखो, चरि न जाय मिरगानी॥ उपजे खेत नाज घर आवे, आनंद मगन किसानी॥ कहैं कवीर सुनो भाई साधो, तृष्णा तपन बुझानी॥

शब्द १९०-चलोरी वहि देशवा जहां बरषत रंग अपार। वहि देशकी औघट घाटी, बिरले पावे पार॥टे०॥ सतगुरु सिंधु नाम पहिचानो, तन मन धन सब वार॥ वहि देशमें नौबत बाजे, तत मत झीनो तार॥ सरवन सुनत कटे जम बाधा, साध सबद अधार॥ वहि देशमें जगमग जगमग, वहि शोभा उजियार॥ तहवां हंस करे कौतूहल, पुरुषको रूप निहार॥ एक हंसकी बरनों शोभा, षोडस रवि छिटकार॥ भोजन सुधा पुहुपकी सज्या, आनंद अखंड अपार॥ उबरे नाम पायते जगते, भगते होय नियार॥ कहें कबीर सुनो भाई साधो, आवागमन निवार॥

शब्द १९१-यो मन ऐसा नीच संघाती॥ डोलत फिरत नीच नीचनमें, आठ पहर दिन राती॥टे०॥ बिषकी बात लगत अति शीतल, हरि चरचा लग ताती। शुभ करमनको भगे पीठ दे, कुकरमन रोपे छाती॥ वे जीव जाय परत नरकमें, मन सुख बांधे गाती। कहें कबीर सुनो भाइ साधू, जाको जोन सजाती॥

शब्द १९२-भले आये सतगुरु मैं बलिजाय। आतम अंध जगायो आय॥ टे०॥ अंधरी आतमके भरम भगाय। लख चौरासीकी बंद छुडाय॥ अंधरी आतम जब उतरे पार। कोट करम फंदा भरमजार॥ पूरन सतगुरु प्रगटे आय। नौ लख तारे गये छिपाय॥ पूरे गुरुनकी पूरी कला। और कला दीसे ना भला॥ और कला त्रिगुनकी ओट। सतगुरु कला परम संतोष॥ येही कला मन राखो थीर। जनम जनमकी मेटो पीर॥ दस मास जननीको मारो बोझ। भगति बिना भये बनके रोझ॥ साहब कबीर गुरु जीत लियो सार। पाये हम सतगुरु दीनदयाल॥

शब्द १९३-माई मैं जनम जनम अहिवाती॥टे०॥ अब हम रांड होवें ना कबहूं, वर पायौ अविनाशी॥ तुलसीकी माला

रूच रूच पहिरों, कांचकी चुरिया लजाती॥ काजर सिंदुर मनहि न आवै, द्वादश तिलक बनाती ॥ कहें कवीर सुनो भाइ साधू, अमरलोकको जाती ॥

शब्द १९४-नाचरे मन मेरा नट होय ॥ टे० ॥ ज्ञानके ढोल बजाव रैन दिन, शब्द सुने सब कोई। राहु केतु नवग्रह कंपै, जम घर बंदन होई ॥ द्वादश तिलक बनावे बांस चढि, जगते होरहु न्यारा। सहस कला होय नाच मन मेरे, रीझे साहब तेरा॥ जो रीझे जगदीश जगतगुरु, देहैं दान बुलाई। भरी सभामें चोला बगसे, फाट न कबहू जाई॥ जो भवसागर कूद परोगे, कला न बदिहों तेरा। कहें कवीर सतोव्रत साधो, नौ निधि होवे चेरा॥

शब्द १९५-भव भंजन गुन गाऊं, रमता राम रिझाऊं॥ टे०॥ तन कर घोडा मन कर चाबुक, सुरत लगाम लगाऊं॥ पांच पचीस बखतरिया मारो, फिर मुजरेको आऊं॥ ना मैं पूजों देवी देवा, ना मैं देवल बनवाऊं॥ पांच मवासी इस नगरीमें, मान गुमान बहाऊं॥ देवल जाते पत्थर पूजा, तीरथ भगती पाऊं॥ इस कायामें कोटन तीरथ, जहवाँ बैठ अन्हवाऊं॥ आगे आगे ओट दुलीचा, पीछे नौबत बाजा॥ दस्तके ऊपर लाल बन्दूके, फिर बैरीको साजा॥ लोभ मोहकी गरदन मारौं, ज्ञान कमान चढाऊं॥ कहें कवीर सुनौ भाइ साधू, बेद बिमल जस गाऊं॥

शब्द १९६-तेरा रोकनवाला कौन, सुरतसों आव चली॥ लोकलाज कुलकी मरजादा, सिरतें डार अली॥ टे०॥ पटको भार मोह मायाको, सन्मुख डगर धरी॥ काम क्रोध हंकार कल्पना, दुरमति दूर करी॥ मन अभिमान दोऊ घर पटके, निरभै राह गही॥ क्षमा शील संतोष धीरज धर, कर गहि ज्ञान छही॥ अगल बगलकी झार मार सब, होय निहशंक चली॥

पांच पचीस करे बस अपने, गहि लई ज्ञान गली॥ करत बिलास रहत संतनमें, आनंद प्रेम भरी॥ सबर विवेक चुनरिया पहिरी, घरकी खबर करी॥ कपट किंवार खुले जब तनके, सतगुरु मिहर करी॥ दया धरम हिरदय कर राखो, कर उपकार चली॥ दया स्वरूप सकल जीवन पर, ज्ञान गुमान भरी॥ समझ बिचार करो जिय अपने, कर सिंगार चली॥ भये हुलास मिलन जद पियको, फूली कमवँल कली॥ दीपक ज्ञान धरो घट भीतर, जगत बिसार चली॥ निरखत बदन मदन छबि लाजत, आनंद प्रेम भरी॥ कहैं कबीर मिली जद पियको, पिय हिय लाग रही॥

शब्द १९७-अपने लाल मनाइले, सुन आतम प्यारी॥ टे०॥ पहिले पहरे रैनके, गुडियन संग साजे॥ सो प्रीतम मन भावते, तेरे निकट बिराजे॥ दूजे पहरे रैनके, कछु मरम न जाना॥ जोबन मँहगे मोलके, तुम विषमें साना॥ तीजे पहरे रैनके, तुम बहु बिध चूकी॥ अंग न दियो सुजानको, तुम बहु बिध भूली॥ चौथे पहरे रैनके, शशि जोत समानी॥ कहैं कबीर धर्मदाससों, सुंदरि पछतानी॥

शब्द १९८-औगुन कहा निहारो स्वामी, ओर आपनी हेरो॥ टे०॥ होवे नहीं निवेरो तन सब, भरे कर्मके ढेरो॥ वस्तु लई सो लई कृपानिधि, अब का लेकर फेरो॥ कहि सुख लाल कहाया जगमें तेरो, तेरो तेरो॥ वस्तु लई सो फेर न दीजे, लगे बातमें बंटा॥ यह दुकान कोई फेर न आवै, उठ जैहैं यो टंटा॥ ताते सुनो कृपानिधि स्वामी, साख राखिये हंटा॥ अधम उधारन नाम टेरके, लिख दीन्हे है संटा॥ जग जिव अंधे लखे न वाको, जो सब आप खुदी है॥ वह अखंड सो व्यापे घट घट, परघट नहीं मुंदी है॥ निरगुन सरगुन मास एकपै, जैसे बदी सुदी है॥

जगत जात औ आप गात सों, वह कछु बात जुदी है ॥ सतगुरु बिना कौन दरसावे, जाको सब घट तेजा॥ सुर नर मुनि औतार आदि सब, वाही थानक रेजा ॥ सो नर समुझ उसीको गहना, जिसने जगमें भेजा॥ गहिये अविचल खान पुरुषकी, सत्तपुरुषकी सेजा॥ गरभवास प्रतपाल साहेबा, तिसपै कपट गुढे है॥ सुन बे सुमर उमर गुजरानी, बाला ज्वान बुढे है ॥ बिना बिवेक देख ढिग अपने, जमकर वृथा सुट्टू है॥ तिसपर नहीं सीखता अंधे, तुझको मूढ तुट्टू है॥ निश दिन बिषै बासमें भूला, प्रभुकी खबर बिसारी ॥ औसर परे कहत है तिसपर, लेवेगा खबर हमारी ॥ माया हिरदै मोहकी फांसी, हांसी आवत भारी ॥ पहिरे अंग टाटकी चोलिया, कर नवाबसों यारी ॥ कंठी तिलक छाप उर धारे, बिषै बासना गौरे ॥ भगत कहाय जुगत ना जानी, परम धामकी लौरे॥ ना प्रभु भजन ना गुरुकी सेवा, एको नाहीं भौरे॥ फिरत लगावत ऐसे अंधे, अंडन मांझ बिजौरे ॥ बेद पुराना बांच ना बूझा, प्रभुको भारत जुल्ला॥ जहांसे सबे तिसे नहि जाना, भये आप कुछ कुल्ला॥ सुर नर मुनि सब एक ठीकसे, ऐसी भूलनि भुल्ला ॥ या जग अंधा फूट मसीदी, मिले अंधेरे मुल्ला ॥ ऊंचे नीचे फिरे करमसे, कर्म कीचमें कुलबुल्ला ॥ खबर नहीं कुछ या कायाकी, है मायाके तुललुल्ला ॥ गहि निज नाम तजे नहिं या जग, महाकालकी भुलभुल ॥ करत घेंसुवा फिरत बटोई जैसे अंधी बुलबुल॥ माया जोर किया सबहीको, जपी तपी बहु भेखो॥ कर बनवासा ऋषि दुरबासा, अजब तमाशा पेखो॥ सुर नर मुनि औ पीर औलिया, नर निहारके देखो ॥ जगत ज्वालमें बरत गांजसे, कह पूरनको लेखो॥ सिरजनहार ताहि बिसराया, जग सिर भार लिया है॥ उरझे बृथा जगतके ज्वाला, प्याला बिषै पिया है॥

तो अब दुक्ख देख क्यों डरपे, जो पैराहि किया है॥ मूसर चोट ओट का भाई, उखरी मूंड दिया है॥ पांच तत्त्वका पिंजरा तेरा, दिन दिन होवे हाने ॥ बाला ज्वान वृद्ध फिर होवे, सो क्या तू नहिं जाने॥ सुन समझाय कहत हों तिसपर, इसपर गरब गुमाने॥ माया महल जान ये धुवना, सुवना सीख सयाने॥ सतगुरु चरन सरन गहु बंदे, सीधी देही जाती॥ क्या लख भूला जात पांतमें, तात मात सुत नाती ॥ ये सब ख्वार जगत है सपना, भोर होत ज्यों राती ॥ माया रंग अंग ये कांचा, सांचा नाम संघाती ॥ नर निहार ये कहां गये सब, माया सघन बटोरा॥ घोडा हाथी लाल जवाहिर, लाखन कोट करोरा ॥ सो समुझाय कहत हों तिसपर, जीवन जगमें थोरा॥ जग जंजाल कालको फंदा, लागो प्रभुकी ओरा॥ इत जग लाज उते जिय कारज, दुई दुबीचा मूवा॥ यह अनिष्ट निज इष्ट मिलतही, सिष्ट उठाव न हूवा॥ पीछे भौजल बिरह भयानक, आगे दीसे हूवा ॥ तिसपे नहीं सूझता मुझपे, तुजपे आशिक हूवा ॥ श्रीगुरु सत्तनामका प्याला, भरिके घूंट घुटका ॥ काम क्रोध मद मोह भार शिर, ये भी डार पटक्का ॥ जो कुछ हतो कालको लशकर, लख निज नाम सटक्का॥ सुख-लालदास साकटते कोरे, तोरे खूब घटक्का॥ काल कराल दुखहै भारी, व्यापे राजा परजा ॥ देखतही मुख सूख जायगा, भूल जायगा तरजा॥ इंद्री फिरे लगाये अनुवां, मनुवां नेक न बरजा॥ उस दिन कहा करेगा बंदे, जिस दिन जम शिर गरजा ॥

शब्द १९९-अछा निरंजन बनमें, कोई उलट समाना तनमें॥ टे०॥ का पहाड़पर धुनी लगाता, जिसकी भसम चढाता है ॥ अंचला कोपीन कछू न वाके, सेवा दिगंबर कराता है॥ तन कर कूंडी मन कर घोटा, ज्ञानकी गुदरी लगाता है ॥ पांच पचीसों

घटके भीतर, जिनहूंको भर भर पियाता है॥ तत्त्वकी रोटी सबते मोटी, तेहिते पिंड चलाता है॥ गंग जमुनके निर्मल नीरा, ठाकुर भोग लगाता है ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधो, भूमंडल बिचलाता है ॥

शब्द २००-नैनन आगे ख्याल घनेरा॥ जा कारन जग भरमत डोले, सो साहब ढिग लेत बसेरा ॥ टे० ॥ पूर रहो असमान धरनलों, जित देखो तित साहब मेरा ॥ लखत बने कछु कहत न आवे, जाने दिल बिच महरम हेरा ॥ अर्ध उर्ध बिच मनुवां राचे, का संध्या का रैन सबेरा ॥ माला एक दई मोहि सतगुरु, कहैं कबीर बिनहीं कर फेरा ॥

शब्द २०१-गगनमें अवाज होती झीनी। कोई सुनता है गुरुज्ञानी ॥ टे० ॥ पहिले आया नाद बिंदसे, पीछे जमाया पानी॥ सब घट पूरन पूर रहा है, अलख पुरुष निरबानी॥ वहांसे आया पटा लिखाया, जगमें कछु न आनी ॥ अमृत छोड बिषै रस चाखे, उलटा फांस फँसानी॥ राज करंते राजा जैहैं, रूप धरंती रानी॥ वेद पढंते पंडित जैहैं, जैहैं मुनिवर ज्ञानी॥ सोहं सोहं बाजा बाजे, त्रिकुटी जाय समानी॥ इंगला पिंगला बीचहिं छोडे, सुन्न धजा फहरानी ॥ दीद पदीद न जरा देखो, है यह अमर निशानी ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधो, यही आदकी बानी ॥

शब्द २०२-प्रीतम आपुहीमें पायो ॥ जनम जनमकी मिटी कल्पना, पूरे गुरू लखायो॥टे०॥ जैसे कुँवर मन बिसर गई थी, अभरन कहां गँवायो ॥ एक सखीने बताय दिये तब, मनको तिमर नशायो॥ जो युवती सपने सुत ढूंढत, बालक कहां गमायो॥ जाग परी जेहूंको तेहूं, ना कहूं गयो न आयो ॥ मृगा पास बसे कस्तूरी, ढूंढत बन बन धायो॥ नासा स्वाद परो जब वाके, फिर

आपुन पहँ लायो॥ कहैं कवीर मगन भये मनुवां, ज्यों गूंगा गुड खायो ॥ वाके स्वाद कहे अब कासों, मनही मन मुसकायो॥

शब्द २०३सतगुरु शब्द है अगम अगोचर, रहन गहन बिन लख न परे ॥ टे० ॥ अनहद तार गगनमें बाजे, बिन समुझे कछु लख न परे॥ सुरत समेट धरो घट भीतर, सहजे सरवन अवाज परे ॥ उठत तरंग नाना बिध बानी, भिन्न २ झनकार करे ॥ सुर गंभीर राग अनुरागी, चितदे सुनै ताको काज सरे॥ सुन अनहद मनको बस करले, निरख परख निरधार करे॥ सुन्न सिखर छाजेके ऊपर, मगन हुवा जम काह करे॥ आदि अधर अस्थान पुरुषको, जहां वह बैठ कलोल करे ॥ सदा समीप रहत समरथके, हंस हिरंमर चँवर ढरे ॥ छबि निरखो समरथकी मूरत, कोट भान परकाश करे॥ कहैं कवीर निज बानी दरसे, जब सतगुरु दिव्य दिष्टि करे ॥

शब्द २०४–नाम बिना धिग धिग नर नारी। तुम कहँ आय कियो संसारी ॥ टे० ॥ धिग वह रसना धिग वह ज्ञाना। आतम राम नहीं पहिचाना॥ गरभ मुची मुच भई किन बंझा। सूकर स्वान फिरे गुलमुंझा॥ जेहि कुल पुत्र ना भक्ति विचारी। बिधवा काहे न भई वह नारी॥ गनिका पुत्र पिता कासों कहई। बिन गुरु चेला ज्ञान न लहई॥ बिधवा नारी करे सिंगारा। शोभा न पावे बिन भरतारा ॥ राज बिना कैसो रजपूता। ज्ञान बिना कैसो अवधूता॥ कहैं कवीर हम कहत न डरहीं। अंधे ना सूझैं तो हम का करहीं ॥

शब्द २०५–मेहदी–देवराके पिछवार रोचन, मेहदी हम भई मोरे लाल॥ टे० ॥ या काया नगर मंझार, माया रूप बजार है मोरे लाल॥ काम क्रोध मद लोभ तृष्णा, एक अनूप है मोरे लाल॥

तृष्नाको सब कोई लेय दया धरम नहिं चीन्हें मोरे लाल॥ या मनुवां है मुगध गँवार ओछी संगत लेरहो मोरे लाल ॥ पांच पचीसको खेल निरगुन, काहु न चीन्हे मोरे लाल॥ या त्रिकुटी सोहंगम नार, सोहं सोहं होत है मोरे लाल॥ कहे कबीर बिचार संतन, पार उतारो मोरे लाल ॥

शब्द २०६–पावस रितु जबही जानवी आई॥ टे० ॥ जब तेरी निज दसा पलटी है, दुरिहै नहीं दुराई ॥ खेत कुखेत वंजर औ भाटो, बरन भेद मिट जाई॥ जब या तनकी तपन बुझेहै, गगन गरज बरसाई॥ कहे कबीर रबिउला ढांकिये, नदिया बार अघाई॥

शब्द २०७–गुरु दीजो दरस दीदार, जामें मन मगन रहे॥ टे०॥ काहेके डंडिया करो, काहेके अजगर खंभ। तन तरवर डंडिया करो, मन कर अजगर खंभ ॥ काह छवाऊं गुरुके झारझरोखा, काह छवाऊं चौपार। पानन छवाऊं गुरुके झार झरोखा, फूलन छवाऊं चौपार॥ बाहरसे गुरु भीतर आये, जगमग जोत अपार। धरम किंवरिया खोलो मेरे सतगुरु, हंसा ठाढे द्वार ॥ प्राननाथ एक बानी बोले, छत्रशाल बलिहार ॥ ❀

शब्द २०८जियरा जायगा हम जानी ॥ टेक ॥ पांच तत्त्वके पींजरामें, जामें वस्तु बिरानी॥ लोभ लहर बिच आयके, बूड मरे बिन पानी ॥ तन भी जैहै मन भी जैहै, जैहै मखमल खासा ॥ लाख टकाकी जिंदगी जैहै, एक दिन जंगल बासा॥ दस भी जैहै बीस भी जैहै, जैहै वरस पचासा॥ बीसा सौ कोई बिरला रहिहै, फिर मरनेकी आशा॥ राज करंते राजा जैहै, रूप धरंती रानी॥ वेद पढंते ब्रह्मा जैहें अरु जैहें अभिमानी॥ चंदा जैहें सूरज जैहें, जैहैं पवन औ पानी ॥ कहें कबीर ते संत न जैहें, जिनकी मत ठहरानी ॥

शब्द २०९–मेरा हो प्यारे सतगुरु सांइयां ॥टेक॥ बह्यो जात थो भौसागरमें, गह लीन्ही प्रभु बहियां ॥ अगम निगम जाको पार न पावे, अगम पंथ दरसहियां ॥ सबद सरूप सो जिन रित मानी, ते भौजल निधि पहिया ॥ संतदास सो सतगुरु महिमा, और जतन नहिं लहियां ॥ ❀

शब्द २१०–दिन दिन जोबन जात हैं, पियसो मिल नार ॥टेक॥ दिनते रैन रैनते रजनी, घरि घरि पल छिन होत अवार ॥ मिलना होय तो अबही मिलले, तन छुटे कछु वार न पार ॥ माझ धार नावरिया अटकी, पल ना लगे इहां कहधो बिचार ॥ जाना तुझे पारको चहिये, इहां खेवट सबही मतवार ॥ तेरो पिया तोहीमें दरसे, ज्ञान रतन ले सांचे ढार ॥ काशीराम काम साहब सो, सतगुरु खेइ लगावौ पार ॥ ❀

शब्द २११–जोगी मन ना रंगावे, रंगावे कपडा ॥टे०॥ तिल तिल जोर सरी बनाये, सिरजनहार नहीं पकरा ॥ या ठिकराके मरम न जाने, भटकत फिरे जंगल सेहरा ॥ सब सुख छाड जंगलमें बैठे, काम जराय भये हिजरा ॥ आसन मार डिंभ धर बैठे, दाढी रखाय भये बकरा ॥ कहें कवीर सुनो भाई साधो, साहेब छोड पुजे पथरा ॥

शब्द २१२–जोगीजन जागत रहिये भाई ॥ जागत रहिये चौकस करिये, चोर मूस ना पाई ॥ टे० ॥ तस्कर तरन रहन मन चित कर, कंद्रप लेत चुराई ॥ चितके चले मन चले मुनिनके, तनके चले व्रत जाई ॥ रस कस लेत चुराय नागिनि, बुध बल करके खाई ॥ ऊषहिते छोई कर डारी, नेकु न रहे मिठाई ॥ श्रृंगीऋषि बन भीतर लूटे, लेगइ संग लुगाई ॥ घृत पावक नर-नार संग रहु, बिरला जन ठहराई ॥ जोगी जती तपी सब लूटे,

तिहुपुर फिरी दोहाई ॥ कहें कवीर सुनो भाई साधो, मारत ढोल बजाई ॥

शब्द २१३–भजन कब करिहो जनम सिरान ॥ टे० ॥ गरभ बासमें भगति कबूले, बाहर आयके गये भुलान ॥ बालापनमें खोय गँवाये, तरुनामें अभिमान गुमान ॥ वृद्ध भये तन थाकन लागे, शिर धुनि धुनि मनुवां पछतान ॥ कहें कवीर सुनो भाई साधो, जमके हाथमें गये बिकान ॥

शब्द २१४–भजन बिन दिन रे बीता जात ॥टेक॥ करले भजन भलो तन पायो, भजन बिना सुख पाया किन रे॥ उपजत बिनसत जुग चारों गये, बेद बिचारत गये गन मुनि रे॥ पलमांहीं परलै हो जैहै, बिनसत लगे घरी ना छिन रे ॥ कहे कवीर भजन कर वाके, पानीसे पिंड सँवारा जिन रे ॥

शब्द २१५–भजन कर निशि दिन टूटे न तार ॥ टेक ॥ एक ब्रह्मका सकल पसारा, घरि घरि पल पल लिजे संभार॥ या मन मिलिया साधन सो रे, सोहं शब्दकी लगी लगार ॥ निश दिन भजन करो सतगुरुके, काया मधे है ततसार ॥ कहे कवीर सुनो भाई साधो, बिन सतगुरु ना होय उबार ॥

शब्द २१६–भजन कर जगमें जीवन सार ॥ टेक॥ नर देहीको गरब न करिये, जर-बर होय छिनमें छार ॥ पांचों मार पचीसों बस कर, जमराजाकी चोट संभार॥ नदिया गहरी नाव पुरानी, बिन सतगुरु कैसे उतरे पार ॥ कहें कवीर सतगुरुके भजन कर, भौसागरसे उतरो पार ॥

शब्द २१७–भजनको भाई रे ऐसो तन पायके॥ टे०॥ नाहिं रहे लंकापति रावन, नाहिं रहे दुर्योधन राई रे ॥ मात पिता सुत भाई बंद ठाढे, आइ जमराज पकर ले जाई रे ॥ लाल खंभ पर

देत ताडना, बिन सतगुरु को होत सहाई रे॥ धरमदासके अजर गोसाईं, नाम कवीर कहो गोहराई रे ॥ ❀

शब्द २१८–जनम यह देखा देखी जात॥टेक॥ ज्यों अंजुरीको नीर घटत है, ज्यों तरवरसे टूटै पात ॥ चार पहर धंधेमें खोये, रैन गँवाये सोवत खाट॥ जब जमराजा आन गहेगा, पकर जीभ तोहि मारे लात ॥ कहें कवीर सुनो भाई साधो, कहालो कहों तेरी उतपात ॥

शब्द २१९–तकसीर भई है कैसे, मैं पियाको मनाऊं॥टे०॥ पांच पचीस मोहि रोकत टोकत, तीनों गुनसे बचाऊं ॥ लिख लिख पतियां भेजों अमरपुर, मरजी होय तो आऊं॥ दीनदयाल दया कर जन पर, साहेब दरशन पाऊं॥ धरमदासने पाये कवीर गुरु, करमचूक बगसाऊं ॥ ❀

शब्द २२०–कैसे जाउं महलमें अटपट अगम चढाई ॥टेक॥ दश दरवाजा बने महलके, सात सिंधु सोरा खाई ॥ चांद सूर दोय इत उत लागे, सुखमन सेज बिछाई॥ सतगुरु बहियां नाम-सनेही, बांह पकरि ले जाई ॥ धरमदासने पाय कवीर गुरु, सबद सुरत मिल जाई ॥

शब्द २२१–जो मैं साहब पाऊं, नैनोदी मांझ बसाऊं॥टे०॥ नैनोदी मांझ बसे मोरे प्रीतम, उरसे पलक न लाऊं ॥ एकटक ठाढी चरण निहारों, पलपल चौंर ढुराऊं॥ त्रिकुटी महलमें बने झरोखा, दीदारोंदी सेज बिछाऊं ॥ रोम रोम पिया संग राची, आनंद मंगल गाऊं ॥ बिछुरे प्रीतम जो मैं पाऊं, तब स्यानी होय जाऊं॥ धरमदासके अरज गोसांई, सिंधुमें बूंद समाऊं॥ ❀

शब्द २२२–गुरु मोरे बहियाँ जनि छाडो पकरके ॥ टेक ॥ बहे जात थी भौसागरमें, काढ लियो जिन अपनो करके॥ ध्रुव

प्रहलाद बचे करनीसे, तिनहूको लूटे छलबल करके॥ शृंगीऋषि पाराशर लूटे, शंकर लूटे बन बन करके॥ साहेब कवीर मिले गुरु पूरे, रख लेहु साहब आपन करके॥ ❀

शब्द २२३–गुरु दरियाव नहाना हो, जाते दुरमत भागे॥ टे०॥ गुरु दरियाव सदा जल निरमल, पैठत उपजत ज्ञाना हो॥ जौ लग गुरु दरियाव न पावे, तौ लग फिरत भुलाना हो॥ कोटिन तीरथ गुरुके चरनन, श्रीमुख आप बखाना हो॥ कहें कवीर सुनो भाई साधो, अजर अमर घर जाना हो॥

शब्द २२४–दिल मगन हुवा जब को बोले॥टेक॥ हंसा पाये मान सरोवर, ताल तलैयाको डोले॥ तेरा साहब है तुजहींमें, बाहर नैनाको खोले॥ सुरत कलारी मन मतवाली, प्याला पीवे अनतोले॥ धर्मदासके अरज गोसांई, साहेब पाये तन बोले॥ ❀

शब्द २२५–धुन सुनके मनुवा मगन हुवा॥ लागसमाधि रहो गुरु चरनन, अंदरका दुख दूर हुवा॥ सार सबदकी डोरी लागी, ता चढ हंसा पार हुवा॥ सुन्न सिखरपैं झालर झलके, झरत अमी रस प्रेम चुवा॥ कहें कवीर सुनो भाई साधो, चाख चाख अलमस्त हुवा॥

शब्द २२६–गावत कहां गायबो सुन रे॥ टे०॥ बाजत ताल पखावज बीना, निरतत अगम निगम नहिं गन रे॥ अपने कहे कछु काम न आवे, मानत नहीं अपरबल मन रे॥ सुन चातुर यह बचन हमारा, बिन सतगुरु लख पाया किन रे॥ कहे कवीर सुनो भाई साधू, जब लख परी अगमकी धुन रे॥

शब्द २२७काया गढ जीतो रे भाई, तेरो काल अवध टर जाई॥ टेक॥ भरमकोट चहुँ ओर फिराये, माया ख्याल रचाई॥ कनककामिनी फंदा रोपे, जन राखे उरझाई॥ पचीस जाल जाके

निशदिन व्यापे, काम क्रोध दोय भाई ॥ लालच लोभ खडे दरवाजे, सोह करे ठकुराई॥ पांच मोरचा गढके भीतर, इन्हे नांघ जो जाई ॥ आशा मनसा तृष्ना कहिये, त्रिगुन बंधो है खाई॥ ज्ञानके घोडा ध्यानके पारख, जुगतकी जीन बंधाई॥ सत सुक्रित दोड सिरके ऊपर, बिवेक लगाम लगाई ॥ चेतन सुरत चढी ताजीपर, सतगुरु सांग गहाई ॥ मूल कमल सो दौर करी है, कुमतिको मार भगाई ॥ मूल कमलपर डेरा डारे, गुरुको शीश नवाई॥ छऊ कमल एक सुरमें बेधे, चढे गगन गढ जाई॥ सात कमल त्रिकुटीके ऊपर, तहवां पहुँचे जाई ॥ जोत निरंजन तहां बिराजे, वेद नेति कहि गाई ॥ आवागमन वेद ना जाने, कुरान रहे ठहराई॥ आवे न जाय मरे ना जीवे, ताकी खबर न पाई॥ बंकनालकी घाटी कहिये, तहां न पग ठहराई ॥ सोहं सुर लागे जहां दोहरे, अजपा नाम सहाई ॥ कोटि चंद्र सूर तारागन, छत्रकि छांह छहाई ॥ जोजन एकके पैले कहिये, पुरुष बिदेह रहाई ॥ स्वेत चंदेवा स्वेत सिंहासन, स्वेत चौंर फहराई ॥ स्वेते फूल फूले निशि बासर, शोभा बरनि न जाई॥ द्वादश ऊपर सुन्ना फेरे, मन पौना थक जाई ॥ कहें कवीर सुनो भाइ साधो, अमर लोकको पाई ॥

शब्द २२८-गगन गढ जीतो रे भाई जहां संत करें बादशाही ॥ टेक ॥ कच्चे कोट पके दरवाजा, गहरी जाकी खाई ॥ और मोरचा लगे बत्तीसों, उनमुन तोप झुकाई ॥ तनके बंदुक मनके जामा, प्रीतका प्याला पियाई ॥ अधर छात कुदरतका बंगला, गुरु बिन लियो न जाई ॥ गुरु बिन फौज किलेमें बाढी, अहंकार ठहनाई॥ नेम धरम ले चल भाई गौरा, छिनमें देत ढहाई॥ उलटी

नेह गगनको दौरी, भली बनी चतुराई। साहेब कबीर मिले गुरु पूरे, अदले अदल चलाई ॥

शब्द २२९गगन गढ गैब निशान गड़े ॥ टे० ॥ गाडी मेख सेष शिर ऊपर, डेरा अदल खडे। चन्द्रभान एक तंबू ताने, रवि शशि जोत अडे ॥ संत सिपाही करत चाकरी, सो दरबार लडे। कहैं कबीर सुनो भाइ साधो, शब्दमें सुरति मडे ॥ ❁

शब्द २३०–मिसलपर जाना होगा ठिकाना ॥ टे० ॥ आया प्यादा तलब तजीरा, जल्दी होगा जाना। माल तुम्हारा जपत हुवा है अदली देत बिराना॥ जहांके माया तहां लुटाये, बचे न एकौ दाना। साहेब तुम्हारा खफा हुवा है, टोटा परा खजाना॥ मुंशी दरोगा पकर मँगावे, भगती होगा भरना ॥ जो भगतीमें चूक परेगा, डार देगा बंदखाना। कहैं कबीर सुनो भाइ साधो, या पद है निरबाना ॥ जब मोहर पर छाप चढेगी, छूट जायगा बंदखाना ॥ ❁

शब्द २३१–सत मत खेल ले मैदाना ॥ शब्द सिरोही बांध कमरसे, त्रिगुन तीर कमाना ॥ टे० ॥ कडाबीन कमरसे बांधे, माया मोह निशाना ॥ फांका फरी ज्ञानका, गदका बांध बनेटी बाना॥ सन्मुख जाय कालसो लड़ई, सोई सूर मरदाना॥ रंजक नाम ज्ञानका पेटी, बेद बरूद खजाना ॥ तोप धर्म्मका भर भर मारे, लूटत मुलक विराना॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधू, ढालीबंदे मस्ताना। सत्तलोकमें डेरा दीन्हा, सतगुरु हनत निशाना ॥

शब्द २३२–अब तू खबरदार रहो भाई॥ टे०॥ सतगुरु दीन्हा माल खजाना, राखौ हिये लगाई ॥ पाव रतीभर घटन न पावे, दिन दिन बढत सवाई ॥ तन बंदूक सुरतके सिंधरो, ज्ञान गजा ठहराई ॥ प्रेम पलीता हरदम चमके, कर पर राखु चढाई॥ क्षमा

शीलके बखतर पहिरे, जुगतके लांग चढाई ॥ नाम टोप माथेपे धरके, जौ भर अनी न आई ॥ पहरेदार सिपाही सांचे, वो नहिं सोवे भाई॥ कहें कबीर सुनो भाई साधू, छिन पल देत जगाई॥ ❀

शब्द २३३-सतगुरु निरबानी निरबानी, जाके मुक्ति भरत है पानी ॥ टे० ॥ अष्ट सिद्ध नौ निध करत मजूरी, और बिधाता रानी ॥ चंद सूर दोउ बरे मसाले, सुरत गगन ठहरानी ॥ अर्थ धर्म और काम मोक्ष फल, बैल फिरे ज्यों घानी॥ तहवाँ है एक अगोचर, निगम नेति ना जानी॥ चार वेद नौ व्याकरण कहिये, अष्टादशौ पुरानी ॥ सत्य भगति बिन चार पदारथ, काग विष्ट सम जानी॥ अवरन वरन रूप सब वाको, गरज गगन घहरानी॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधो, अजरा अमर निशानी ॥

शब्द २३४-सतगुरु अबिनाशी अबिनाशी, जाके मुक्ति रहत है दासी ॥टे०॥ ब्रह्मा जाको पार न पावे, निरंजन करे खवासी॥ सेष सहस्र मुख निशि दिन गावें, सो भी पार न पासी ॥ शंकर जाको ध्यान धरत हैं, कहिये जोग उपासी॥ चार वेद जाके भेद न जाने, खोज खोज मर जासी॥ ओंकारमें भरमत डोले, विष्णु फिरै उदासी॥ नाम पदारथ हाथ न आवे, परे कालकी फांसी॥ अजर अमर वे परम पुरुष हैं, कहिये फूल सुबासी॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधो, अमरलोकके बासी ॥

शब्द २३५-सतगुरु आदि संदेसी आये ॥ सोरा असंख जुग बीत गयो है, भेद न काहू पाये॥टे०॥ दुनियां रही भुलाय ख्वाबमें, सोवत नींद जगाये ॥ दया भाव औ नाम पान ले हंसन पार लगाये ॥ काशीमें सतगुरू प्रगट भये हैं, नाम कबीर कहाये ॥ कहें कबीर सुनो भाई साधो, जीवन फंद छुडाये ॥ ❀

शब्द २३६–जपो मन सतगुरु सत्त कबीर ॥टेक॥ भौसागरसे जीव उबारे, जमके कागद चीर ॥ साह दमोदर बुडत बचावे, रतनागरके तीर ॥ ईंद्रमतीको लोक पठाये, काटे जमके पीर ॥ साहब कबीर मिले गुरु पूरे, देखत मन भौ थीर ॥

शब्द २३७–सतगुरु ज्ञानकि गांसी मारा। तीर न मारा तरवार न मारा, शब्दके मारा न्यारा ॥ टेक ॥ आंखभी अंधा कानभी बहरा, पांव अपंग कर डारा॥ औषद मूल कछू ना लागे, का करे बैद बिचारा॥ कच्चा कोट पक्का दरवाजा, घायल आन पुकारा॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधो, तीर निकसगौ पारा ॥

शब्द २३८–हमारे मन बस गये साहब कबीर॥टेक॥ काशीमें गुरु प्रगट भये हैं, गुनके गहिर गंभीर॥ काशी तज मगहरमें आये, दोई दीनके पीर॥ एक दिन साहेब बेन बजाये, कालिंद्रीके तीर॥ सुर नर मुनि सब छकित भये हैं, छक गये जमुना नीर॥ कोई गाडे कोई अगिन जरावे, कोई न धरना धीर ॥ चार दागसे न्यारा साहब, बिनसत नाहिं शरीर ॥ जगन्नाथके मंदिर थापे, हट गये सागर नीर॥ दास मलूक सलूक कहत है, खोजो खसम कबीर॥ ❀

शब्द २३९–पढो मन ओंनामासिधं ॥ टेक ॥ ओंकारते सब जग सिरजा, है वाहीका रंग॥ वो तो पुरुष सबनसों न्यारा, कर वाहीका संग ॥ नाम निरंजन नैना माते, नाना रूप धरंग ॥ निरंकार निरगुन अबिनाशी, निरखत सबके अंग ॥ माया मोह मगन होय नाचे, माते मत्त मतंग॥ माटीके तन थिर ना रहता, मन मायाके संग ॥ शील सुभाव दयाके दरपन, सदा सम्हारो अंग ॥ साधुके बचन सत्त कर माने, सिरजनवाला संग॥ धत्ता ध्यान धरो दिल अंदर, लिख ले नाम अनंद ॥ गोरख जोगी मिले सतसंगी, नाम कबीर सोहंग ॥ ❀

शब्द २४०–सांई मिलना नहीं आसानका ॥ टे० ॥ सांईका मिलना बरतके चढना, चित चूके किस कामका ॥ सतीको सत्त सूरमाको रन है, सनमुख घाव सहे बानका ॥ कहे सुने कछु काम न आवे, भर्म न मिटे जिव जानका ॥ कहँ कवीर सुनो भाइ साधो, कठिन पंथ गुरुज्ञानका ॥ ❀

शब्द २४१–सांई तेरा नाम बिना न उबारा ॥टे०॥ काम क्रोध औ लोभ मोहसंग, ये चारों बटपारा ॥ इनके बस जीव भुलाने, कैसे उतरे पारा ॥ आशा तृष्ना मनसा डाकिन, खाये जग संसारा ॥ कनक कामिनिके बस परिया, का करे जीव विचारा ॥ साधुके संग परम आनंदा, सहजे उतरे पारा ॥ सतगुरु खोज संतसे बूझो, कहँ कवीर बिचारा ॥ ❀

शब्द २४२–सांई तेरे तकियामें जाना जरूर ॥ टे० ॥ खांड चिरोंजी मन नहिं भावे, सांई तेरे टुकरा कबूल ॥ शाल दुशाला मन नहिं भावे, सांई तेरी गुदरी कबूल ॥ कोट अटारी मन नहिं आवे, सांई तेरे झुंपडा कबूल ॥ कहँ कवीर सुनो भाइ साधू, साहेब हाल हजूर ॥ ❀

शब्द २४३–सांई तेरे मत बिन नर नहिं छूटे ॥ जौ लग पंथ न गहे पियाके, जम गये बडे घर लूटे ॥ टे० ॥ आयो नेम प्रेम परकाशा, छाडो कुल व्योहारा ॥ सरगुन निरगुन दोउ छोडके, समुझके होजा न्यारा ॥ जैसे काग रहत वोहितमें, तैसे जगके प्रानी ॥ तज अनरीत प्रीत कुल लज्जा, सुरत फिरे भटकानी ॥ जौ लग सत साहेब ना चीन्हे निहअछर लख आवे ॥ घटवरिया तोहे जान न देहै, सब तकलीफ बनावे ॥ है अजगैब गैब होय आया, ताहि कहो करतारा ॥ कहे कवीर चेत नर अंधा मैं बहु भांत पुकारा ॥ ❀

शब्द २४४-पानी बिच मीन पियासी॥ मोहि देखत आवे हांसी ॥टे०॥ ब्रह्मज्ञान बिना नर भूला, का मथुरा का काशी॥ घरकी माया मनहि न आवे, बन बन फिरै उदासी ॥ है हाजरको दूर बतावै, दूरकी आश निरासी ॥ जल बिच कमल कमल बिच कलिया जहां, पुरुष अविनाशी॥ कहें कवीर सुनो भाइ साधो, सिरपर काल मवासी ॥

शब्द २४५-तेरी पानी बिच प्यास न गई॥टेक॥ बाहर आयके का सुख पाया, अंदर लहर न लई ॥ ऐसे सुखसागरके पाये, आश न पूरन भई ॥ अरे मन मूरख मीन अनारी, किन तोहि दुरमति दई॥ कहें कवीर सुनो भाई साधो, हो रहो आनंद मई॥

शब्द २४६-पानी बीच बतासा संतो तनका एही तमाशा है ॥ टेक ॥ का ले आया का ले जायगा का बैठे पछताता है ॥ मूठी बांधे आया बंदे, हाथ पसारे जाता है॥ किसकी नारी कौन पुरुष है, कहांसे नाता लाया है॥ बडे बिहाल खबर ना तनकी, बिरही लहर बुझाता है ॥ एक दिन जीना दो दिन जीना, जीना बरस पचासा है॥ अंतकाल बीसा सौ जीना, फिर मरनेकी आशा है ॥ ज्यों ज्यों पांव धरो धरनीमें, त्यों त्यों काल नियराता है॥ कहें कवीर सुनो भाइ साधो, गाफिल गोता खाता है ॥

शब्द २४७-साधु घट शील संतोष बिराजे॥ दयासरूप सकल जीवनपर, शब्द सरोत्तर गाजे ॥ टेक ॥ जहवां मनकी मनोरथ दौरे, ताहि संग ना जावे ॥ सत्तबादी सतगुरु पहिचाने, आतम दृष्टि दिखावे॥ निर्मल दशा सरब सुखदाई, आनंद घर रहिवासा॥ शुद्ध सुचाल सदा शीतल गति, निश दिन शब्द बिलासा ॥ सतगुरु गहे निशि बासर, सत्त नाम परकाशा॥ कहें कवीर कोइ संत बिवेकी, तहां हमारो बासा ॥

शब्द २४८–जगमें या बिधि साधु कहावे। दया सरूप सकल जीवनपर, और दृष्टि ना आवे॥टे०॥ झलकत दशा ब्रह्मके जामें, सबहीके मन भावे ॥ शीतल बचन सर्व सुखदाई, आनंद प्रेम बढावे ॥ जाको निशदिन प्रेम भगति है, दूजा देव ना ध्यावे ॥ कहैं कबीर हम वा घर परगट, आप अपनपो पावे ॥

शब्द २४९–साधुका होना मुसकल है । काम क्रोधकी चोट बचावे, सोई निज साधू है॥टे०॥ काया मद्धे धुनी रमावे, रमता राम गहै ॥ सत बिस्वास हृदयमें राखे, जगसो न्यार रहै ॥ या माया झूंठ परपंचिन, जगमें दौर करै ॥ जीव जंत जितना धर पावे, सबको जपत करै॥ माला तिलक औ बाना बांधे, ममता दूर करै॥ आठ पहर गुरु ज्ञान भजनमें, कम्मर बांध लरै॥ मोटी माया सब कोई त्यागे, झीनी तजी न जाय ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधू, झीनी सबको खाय ॥

शब्द २५०–ठगनी क्या नैना झमकावे, तेरे हाथ कबीर न आवे ॥ टेक ॥ कद्दू काट मृदंग बनावे, निंबू काट मजीरा ॥ झिंगा तुरैया मंगल गावे, नाचे बालमखीरा॥ रूपा पहिरके रूप दिखावे, सोना पहिर ललचावे ॥ गले डार तुलसीकी माला, तीन लोक भरमावे ॥ मूसोंकी सभा सरप एक नाचे, मेंडक ताल लगावे ॥ चोलनी पहिरके गदही नाचे, ऊंट बिस्नुपद गावे ॥ बृच्छ चढी मछली फल तोरे, कछुवा भोग लगावे ॥ कहें कबीर सुनो भाई साधो, बिरला अर्थ लगावे ॥

शब्द २५१–या तन धनकी कौन बडाई, देखत नैनों माटी मिल जाई ॥ टेक ॥ कंकर चुन चुन महल बनाया । आपन जाय जंगल बसाया॥ हाड़ जरे जस लाकर झूरी। केस जरे जस घासकी

पूरी॥ या तन धन कछु काम न आई। ताते नाम जपो लौलाई॥ कहें कवीर सुनो मेरे मुनियां। आप मुवे पाछे डूबगइ दुनियां॥

शब्द २५२–ऐसे लोगनको बहि जाने दे॥ टेक॥ हंस हंस मिल चले सरोवर, बकुलन मछरी खाने दे॥ हंस गयंद चले मदमाते, कूकर लोग भुसाने दे॥ हंस हंस मिल चलो अमरपुर, कागा आमिख खाने दे॥ कहें कवीर सुनो भाइ साधो, सत्य शब्दमें काने दे॥

शब्द २५३–साहेब कैसे करों तोहे राजी। चाकरी चोर नेवाला हाज़िर, ऐसा बंदा पाजी॥ टे०॥ पांचों चोर करैं कुफराना, इन संग दीन गमाऊँ। इन संग लडूँ कि करूं बंदगी, किन किनका समुझाऊँ॥ इन संग रहों तुमें ना पाऊं, घटके बीचमें गासा। तखत तरेका पेंडा मारे, याका अजब तमाशा॥ काह कहों कछु कहन न पाऊं, देत जगत मोहि गारी। दोजक भिस्त दोऊ हम त्यागे, रहूं पनाह तुम्हारी॥ कहें कवीर सुनो भाई साधो, ये सब झूठी बाजी। नाम बिना कोई पार न पावे, का पंडित का काजी॥

शब्द २५४–देखो दुरमत या संसारकी। नामसो हीरा छांड हाथसे, बांधत मोट बिकारकी॥ टे०॥ कोइ खेती कोइ बनिजे चाले, कोइको हवस हथियारकी॥ अंध धुंदमें जनम गँवाये, सुध बिसरी करतारकी॥ जान बूझके पंथ चलत है, सुन सुन बिप्र लबारकी॥ आपन हाथ गलेमें डारी, फांसी माया जारकी॥ नाना बिधके कर्म कमावे, खबर नहीं शिर भारकी॥ झूठी साखमें राँच रहे हैं, फूटी आंख गँवारकी॥ बारंबार पुकार कहत हौं, मोहि शरम सिरजनहारकी॥ कहें कवीर या बिनस जायगी, छिनमें काया छारकी॥

शब्द २५५-कोई पिये पियाला प्रेमका, दया दुलीचा ऊपर बैठो, तिमर नाश गये नैनका ॥ टेक ॥ ज्ञानकी कुंडी बिवेकका घोंटा, छानो उत्तम नेमका॥ पांच पचीस घोटके काढो, औबल चाखा प्रेमका॥ आठो जाम रहो मतवाला, अनलपछि कोई गगनका॥ रोम रोम भरपूर रहा है, मार लिया दल मनका ॥ जल तरंग जलहीसे उपजे, धोखा मिट गये फैनका ॥ कहें कबीर दया सतगुरुकी, ठौर पाये सुख चैनका ॥

शब्द २५६-काया चलत प्रान काहे रोई ॥ टे० ॥ तुम्हरे संग बहुत सुख कीन्हा, नित उठ मल मल धोई ॥ तुमतो हंस चले घर अपने, हमको चलत बिगोई ॥ हंस कहै सुन काया बौरी, मेरो तेरो संग न होई॥ तोसे घट बहुतेरे छोडे, संग न लागे कोई॥ लट छरियाय वाके माता रोवे, खाट पकर वाके भाई॥ आंगनमें जाके तिरिया रोवै, हंस अकेला जाई ॥ शिव शनकादिक औ ब्रह्मादिक, शेष सहस मुख जोई॥ जिन जिन देह धरी दुनियामें, थिर ना रहिया कोई॥ पाप पुन्य दोउ जनमसंघाती, समुझ देख नर सोई ॥ कहें कबीर प्रभु पूरनकी गति, बूझे बिरला कोई ॥

शब्द २५७-करमगति टारिहु नाहिं टरे॥ गुरु वशिष्ठ महामुनि ज्ञानी, लिख लिख लगन धरे॥टेक॥ सीता हरन मरन दशरथको, बन बन बिपति परे॥ कहां वे राहू कहां वे रवि शशि, आन संजोग परे॥ सतबादी हरीचंद राजा, नीच घर नीर भरे॥ दुरबासा ऋषि श्राप दियो है, जदुकुल नाश करे ॥ पंडवनके हरि सदा साथी, सोभी बन बन बिचरे॥ तीनों लोक कर्मगतिके बस, जीवनसे काह सरे ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधो, भूला भटक मरे ॥

शब्द २५८-नामको या बिधि ध्यान धरै। जैसे अमली अमलको चाहे, छिन छिन सुरत करै ॥ टे० ॥ जो लग अमली

अमल न पावै, तो लग तलफ मरै॥ फनि मनियां भुई काढ धरत है, फैलके ओस चरै ॥ कछू चरै कछू मन तन चितवे, बिछुरत तलफ मरै ॥ जैसे सती जरै पियके संग, नेक न सोच करै ॥ आपन चरि पियाको लेके, विहँसत जाय जरै॥ जैसे सुरत गगनको चाहे, महलन खोज करै॥ कहैं कवीर सुनो भाइ साधो, भूला सो भटक मरै ॥

शब्द २५९-रस भँवर गुफामें अजर झरै ॥टे०॥ गंगा जमुना मध्य सरस्वति, नाद बिंदसे गांठ जुरे ॥ आसन मार अमृतरस चाखे, दिलकी दुविधा दूर करै॥ दस दरवाजे तारी लागी, कोइ कोइ हंसा ध्यान धरै॥ कहैं कवीर सुनो भाई साधो, अजर अमर कबहुं न मरै ॥

शब्द २६०-कूंची घडाय लावो बिन लोहराके ॥ टेक ॥ नरम निहाय नरम है औटन, ज्ञानके हथौरासे चोट घलाय लावो ॥ खालहि खाल खालपर सोहै, वोहं सोहं दोय पवन डोलाय लावो॥ संसे खीच बज्रको पकडे, पानी बानी जायके डुझाय लावो॥ साहेब कवीर कूंची घड लाये, खोल किंवरवा दरस कराय लावो ॥

शब्द २६१-जाय रे दिनही दिन देहा। कर ले बावरे तू नाम सनेहा ॥ टेक॥ बालापन गये जोबन जन जासी। फिर फिर या जोनी संकट आसी ॥ पलटे केस नैन जल छाये। मूरख चेत बुढापा आये॥ नाम लेत लज्जा ना कीजे। पल पल अवध घटै तन छीजै॥ सत्त नाम जे चितहिं बिसारा। कहें कवीर सोई जन हारा ॥

शब्द २६२-जारों भैया जगकी चतुराई। प्रभुको नाम लेत ना कबहूं, जिन यह देही जुगति बनाई ॥टेक॥ जोरत दाम काम अपनेको, हम खैहैं लरका बिलसाई॥ सो धन राजा चोर ले जैहैं,

रहो सहो ले जात जँमाई ॥ या माया कलवारन कहिये, मद पिवाय राखै बिलमाई ॥ एक जे परे घरनमें लोटे, एक कहे चोखा दे माई ॥ या माया सुर नर मुनि डसिया, देवा देवा बैठी खाई॥ कोइ कोइ भाग बचे शरनागत, जासो माया रही लजाई ॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधू, ले फांसी हमहूं पर धाई॥ गुरु प्रताप संतनकी संगति, अब हम रहे निशान बजाई ॥

शब्द २६३-ऐसी रहन रहे सो बैरागी। सदा उदास नाश मायासे, सत्तनाम अनुरागी॥टे०॥ क्षमाकि कंठी शील सुमिरनी, सुमति सुमरती जागी॥ टोपी अभयगत माथेपै, कलह कलपना त्यागी॥ ज्ञानगूदरी मुकति मेखला, सहज सुई ले त्यागी ॥ जुगत जमात कूबरी करनी, अनहद धुन लौ लागी॥ शब्द अधार अधारी कहिये, भीक दयाकी मांगी ॥ कहें कबीर प्रीति सतगुरुसे, सुरति निरंतर लागी ॥

शब्द २६४-कोई दोष न दीजे, करमकि बात नियारी ॥टेक॥ काहे बकुला स्वेत बरन भये, काहे कोयल कारी॥ काहे कूप जल मीठो लगत है, काहे समुंदर खारी ॥ काहे मूरख राज करत है, पंडित काहे भिखारी॥ कहें कबीर सुनो भाई साधो, गुरु चरनन बलिहारी ॥

शब्द २६५-अब मोहि ऐसेही बनि आई ॥ भावे कोई निंदे भावे कोई बंदे, छोडेउं लोक बडाई ॥ कुलसो निकस भई जग गनिका, फिर ना कुलहिं समाई॥ हाथीको दंत कढे मुख बाहिर, फिर ना मुखमहँ जाई ॥ कोटन लंघन करत केहरी, भूखे घास न खाई ॥ सौ जोजन मरजाद सिंधुकी, जल अचवे ना भाई ॥ सो जल पीवे कोई संत बिवेकी, जिनकी भरी तलाई॥ भवसागर तरबेके कारन, नामकी नाव बनाई॥ हलके हलके पार उतर गये,

बूडे जो गरुवाई॥ जैसे मिरगा नाद धुनि सुनके, प्रान तजत है भाई ॥ ऐसे मीन मरे बिन नीरा, जल बिन रहो न जाई॥ लागी छाप भक्ति निरभयकी, अब ना दूर-दुराई ॥ कहें कवीर छूटे ना कबहूं, ऐसी अटल सगाई ॥

शब्द २६६–बानेका मरद दुहेला है ॥ टेक ॥ आगे चले पाछे ना चितवे, सोई शूरोंका मेला है । चढे तुरंग जब बाग सँवारे, कूद परे रन पेला है ॥ गहे टेक छूटे ना कबहूं, भगति हंसी ना खेला है। कहें कवीर सुनो भाई साधो, सो सतगुरुका चेला है॥

शब्द २६७–अबकी भली बिसाहन बन गई॥टेक॥ जनम जनमके टोटा बाढो नाम, नफा गुरू कर दई ॥ दीपक बार दिये मोहि सतगुरु, बस्तु अगोचर मिल गई॥ दुष्ट जगाती निकट न आवे, अटल छाप गुरु कर दई ॥ कहें कवीर सुनो भाइ साधो, सकल भरमना मिट गई ॥

शब्द २६८–अपने घट दीपक बास री॥ तत्त्वको तेल दयाकी बाती, ब्रह्म अगिन उजास री॥ टेक॥ निरमल जोत निहार गगनमें, तन मन धन सब वार री ॥ सुरत सोहागिन जोग ध्यानमें, गुरु-गमपंथ सुधार री॥ काम क्रोध मद लोभ मोहकी, झोंको ये सब भार री ॥ कहें कवीर सुनो भाइ साधो, अपने कंथ निहार री ॥

शब्द २६९–काह कहों अनकही भली है ॥ टे० ॥ उहवां वेद शास्त्र कछु नाहीं, उहां अकथ ईहां कथा चली है ॥ जहवां मूल बीज कछु नाहीं, ना तरवर ना सुमति फली है ॥ जहवां नहीं घाट औघट, ना खेवट ना तीर सई है ॥ कहें कवीर सुनो भाई साधू, सो है हंसा सर्व मई है ॥

शब्द २७०–कैसे कैसे मिलाव बालम परदेसिया, रोकत दोय दरबानी हो ॥ टेक ॥ पांच पचीस बैठे रखवरिया, इन मोरी राह

बिगारी हो॥ दिल ना चैन रैन निश बासर, अपने अपने बारी हो॥ नैन हमार महा दारुन है, स्वास स्वास जमुहाई हो॥ जब जब करव प्रीतमसो गह गह पलकन पारी हो॥ दसहुं द्वार रोक जम बैठे, सुमति किंवाड लगाई हो॥ जिन दुख दीन्ह मान गढ ऊपर, पकर जंजीर भराई हो॥ गहो गुरु चरन दया कर उपजे, ज्ञानके खरग बनाई हो॥ होय निहशंक नाम गुन गावे, ममता दूर बहाई हो॥ अर्ध उर्ध बिच तार लगाई, जहवां सुरति समाई हो॥ कहैं कबीर वा घरका भेदी, बहुर न भौजल आई हो॥

शब्द २७१—गांठ परी पिया बोले न हमसे॥ टेक॥ नित उठ देखों पिया तुम्हारी सेजरिया, लग गई नींद निकस गये घरसे॥ जो मैं जानति पिया रिसियैहैं, काहेको प्रीत लगाती ऐसे ठगसे॥ अपने पियाको फेर मनाऊं, सौ तकसीर होत हरिजनसे॥ धर्मदासकी अरज गोसांई, साहेब कबीर पिया पाये बडे तपसे॥

शब्द २७२—कैसे बोले अधरमें बोलवा रे॥टेक॥ या बोलवाके सकल पसारा, घट घट करत किलोलवा रे॥ या बोलवासे तीन देव भये, ब्रह्मा विष्णु महेशवा रे॥ या बोलवासे तीन लोक भये, चंद सूर तारागनवा रे॥ कहैं कबीर बोलवाको चीन्हे, उतर जाय भौपरवा रे॥

शब्द २७३—ऐसी लगन लगाय कहां जासी॥टेक॥ मूढ सुवा सेम्हर एक सेयो, छांड चला संग साथी॥ फूल झरे जबही फल लागे, सुवना भये हुलासी॥ चोंच मार सुवना पछताने, लाग गले बिच फांसी॥ हमतो जाने अमृत फल है, लाल फूल बिसवासी॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधो, सुवना भये निरासी॥

शब्द २७४—को सिखवे अधमनको ज्ञाना॥टे०॥ जहांसे आया ताहि बिसराया, फूटी आंख भयो निज काना॥ गुरू साधकी

कही न माने, चाहत है हमरो परवाना ॥ गीता और भागवत बांचे, ना लागे गुरु उनके काना ॥ मारहिं मार होरहे जमद्वारे, साहेब कवीर देख मुसकाना ॥

शब्द २७५–बिन सतगुरु नर फिरत भुलाना ॥ टेक ॥ एकके हरिसुत लाय गडरिया, पोष पालके कियो सयाना ॥ रहत अचेत फिरत अजयन संग, अपना हाल उनहु ना जाना ॥ एक केहरि सुत आय जंगलसे, देखत ताहि बहुत सकुचाना ॥ बकरन भेद तुरत उन दीन्हा, आपन दशा देख मुसकाना ॥ मिरगा नाभि बसे कस्तूरी, वह मूरख ढूँढत चौगाना ॥ करत सोच पछतात मनहिं मन, या रे सुगंध कहांसे आना ॥ अधर उधर बिच डोरी लागी, रूप छका गहि जात बखाना ॥ कहँ कवीर सुनो भाई साधो, उलटा राह सूत हम ताना ॥

शब्द २७६––बाबुल मरियो हो दइया मारे, कूर को दीन्ही ॥टे०॥ कूर अरोसी कूर परोसी कूरै भई सगाई॥ कूरे कूर बराती आये, कूरे मिले संघाती ॥ अकवारेमें गदहा दीन्हे, द्वारे दीन्हे घूस॥ मंडवा तरमें दीन्ह लुखरिया, लंबी लंबी पूंछ॥ दाल बनाये भात बनाये, बरा बनाये कच्चे॥ सबे बराती जेवन बैठे सारसके-से बच्चे ॥ मंडवौ जरगे दुलहौ मरगे, दुलही भई अहवाती ॥ कहें कवीर सुनो भाइ साधो, नाचत चले बराती ॥

शब्द २७७–जियरा पराये बसनमें ॥ टे० ॥ सास ननद मोरी जनमकि बैरन, चरचा करे दसनमें ॥ काम क्रोध मद लोभ मोह बस, नफा नहीं है इसमें॥ पांच पचीस घट भीतर, टरे नहीं निश दिनमें ॥ कहँ कवीर सुनो भाई साधू, सतगुरु चरन हियेमें ॥

शब्द २७८–निश बासर मोहिं नींद न आवै, लगा शब्दका तीरा हो ॥ टे० ॥ गांसी मारी सार शब्दकी, बिंध गइ सकल

शरीरा हो ॥ अंतरधान भये जब सतगुरु, छिन छिन व्याकुल शरीरा हो ॥ अब यह प्रान कौन बिधि राखों, कठिन बिरहकी पीरा हो ॥ कहें कवीर सुनो भाइ साधो, गुरुके चरन होय थीरा हो ॥

शब्द २७९–नाम अमल कहां पाये हो, देखो देखो सखीरी ॥ टे० ॥ सोवत थी मैं लोभ मोहमें, ज्ञानके दिष्ट जगाये हो ॥ बिषकी लहर उठी घट भीतर, अमृत बूंद चुवाये हो ॥ बंदी छोर मुकतिके दाता, जीवन बंध छुडाये हो ॥ साहेब कवीर मिले गुरु पूरे, तनके तपन बुझाये हो ॥

शब्द २८०–जिनको लगी शब्दकी चोट ॥ टे० ॥ का बरछी का छुरी कटारी, का ढालोंकी ओट ॥ का नदिया का कुवा बावडी, का खाई का कोट ॥ का भाई का बाप महतारी, का तिरिया का सोच ॥ कहें कवीर सुनो भाई साधो, बचे गुरूकी ओट ॥

शब्द २८१–दिलकी गुढिया खोल, सतगुरू भला करेगा ॥ टे० ॥ पांच तत्त्वकी या तन गुढिया, लगी पवनकी डोर ॥ इस गुढियामें दस दरवाजा, जतन जतनसे खोल ॥ इस गुढियामें लाल अमोलक, बे प्रमान ता मोल ॥ कहें कवीर सुनो भाइ साधो, बांध अगमकी डोर ॥

शब्द २८२–सुरत मतवाली राजा मोहि लिया ॥ टे० ॥ शील दयाका बना घाघरा, तत क्षमाकी सारी ॥ त्रिगुन तारकी अंगिया सोहै, तापर भौंर गुंजारी ॥ कर कंकन बाजूबंद सोहै, दुलारी दया सँवारी ॥ हिये हार हिरदे बिच सोहै, जे हर शब्द अगारी ॥ रतन जतनके महल बना है, सुक्रित लगी किंवारी ॥ भौंर गुफामें सेज बिछी है, पौढी सुषमन नारी ॥ अपने पियाको सनमुख देखों, भर लोचन अधिकारी ॥ कहें कवीर भरम जब छूटे, उपजे भगति करारी ॥

शब्द २८३-बोलन लागी तूती सांची बोल॥टे०॥ दया धरमकी या तन कुंडी, तापर करत किलोल॥ भूल गई सब झूठी बतियां, अब जो भई अनमोल॥ सत्त नामकी सांची मिसरी, पी गइ जलमें घोर॥ सुरति निरतिके बने पायडे, आडा सुरति अडोल॥ अष्ट कमल ये आठ पंखुरी, दस खिरकी भइ गोल॥ छुटगौ तूती गरभ बसेरा, मिट गये डामाडोल॥ कहें कवीर सुनो भाई साधो, अब का तेरो मोल॥

शब्द २८४-लोगवा मतलबके गरजी, अब मोहि जान परी॥ टे०॥ जौलौं बैल लदे बनियांके, तौलौं चाह धनी॥ थकित भया कोइ बात न पूछे, फिरता गली गली॥ मोह भरमसे सती होत है, पियके फंद परी॥ हरदम साहब ना पहिचाना, मुरदा संग जरी॥ हरे वृच्छ पंछी दोय बैठे, किया मनोरथकी॥ पंछी उड गये पत्ता झर गये, यही रीत है जगकी॥ कहें कवीर सुनो भाइ साधो, मनसा विषै भरी॥ मनुवा तो कहुं अंते डोलैं, जपता हरी हरी॥

शब्द २८५-सूरत मूल ठिकाना जानो। ताहि चीन्हके डोर संभारो, दिव्य दृष्टि पहिचानो॥ टे०॥ का भय पिंड ब्रह्मांडके खोजे, का भय पवन चढाये॥ का भय त्रिकुटी ध्यानके कीन्हे, का भय भँवर गुफाके पाये॥ वह तो सबनसो न्यारा, कायासे भिन्न पसारा॥ मूल डोर पुरुष सहिदानी, हंसन करे उबारा॥ बिन गुरुगम शिक्षा ना पावे, फिर काया ठहरावे॥ जो लग संधि हाथ ना आवे, तो लग भटका खावे॥ गुरु जौहरी भेद बतावे, औघट घाट लखावे॥ सुरति निरति औ शब्द सहायक, गुरुमुख लोक सिधावे॥ कोट ज्ञानसो भिन्न पसारा, कहौं मूल निज बानी॥ जेहि प्रतापसे हंसा बांचे, सो है अगम निशानी॥ मूल ज्ञान

सबही सो न्यारा, संत लेव पहिचानी॥ कहैं कबीर धर्मनि निज मानो, मिटे नरककी खानी ॥

शब्द २८६–अनुरागी निरगुन जोखो हो। जो तुम सुकित अंश हमारे, यह निजज्ञान समोखो हो॥टे०॥ वह सकल घट व्यापक, घट घट रहो समाई ॥ उठत राग अनुराग सरूपी, ताको लखो बनाई ॥ जहां मूल उच्चार होत है, बिगसित मधुरी बानी ॥ गरज घुमड अंजोर होत है, चूवत फूही अग्रानी ॥ अगम पंथ जहां पांव टिके नहिं, सो मारग है झीनी ॥ तिल प्रमान जहां लगी किंवारी, तहां सुरति गम कीनी ॥ जब वह मारग प्रगट उघरिहै, सुनो अमरकी बानी ॥ कहैं कबीर धर्मनि निज मानो, मिटे नरककी खानी ॥

शब्द २८७–निजगत कहिये मोही। गुन निरगुन दोनोंकी महिमा, बूझत हैं गुरु तोहि ॥टेक॥ को निरगुनको सरगुन कहिये, को करंत को करता ॥ लख चौरासी जिया जूनमें, सर्व मई होय बरता ॥ सुनो संत निरगुनकी महिमा, बूझे बिरला कोई ॥ निरगुन फांसमें सबे फंदाने, सुर नर मुनिवर लोई ॥ आदि ब्रह्म निरगुन निहअछर, सो सबहीसे न्यारा ॥ सरगुन सकल व्यापक है माया, ये उलझे व्योहारा ॥ गुरु कबीर तव चरन मनाऊं, सब संतन सिरताजा ॥ धरमदास पर दयाजु कीजे, बांह गहेकी लाजा ॥

शब्द २८८–समुझ बिन लाज नदीमें बोरे। जहां लाज तहां नेह न उपजै, शील समाधी फोरे ॥टेक॥ संकुच सनीप हीनता घेरे, मन मलीन झकझोरे ॥ क्रोध अगिन मोह घन उपजे, ममता मंडल घेरे ॥ लाज लहरकी उठे तरंगा, विरह बूंद विष घोरे ॥ लाज समाय कुमत झरबरसे, कुपथ कुसंगत डोले ॥ ज्ञान देश की राह बिसारे, सतसंगत हित फोरे ॥ सतगुरु खोज लाज तज

दीजे, बीरघटा मन मोरे ॥ कहँ कवीर सतसंगति कीजे, सुमति तरंग हिलोरे ॥

शब्द २८९–जतन बिन तन अभिमान उजारे ॥टेक॥ ताते कीजै शील किंवारी, मन बदलहर निवारे ॥ ममता मान महातम भारी, बिरहबान फटकारे ॥ बरषतकाम घट अंधियारी, लाजित मुख बिध टारे ॥ हांक डांक माया मद गरजे, जटाझार झरडारे ॥ डमडम गावे असत जगावे, लालच लहर फंवारे ॥ चारमास चारे पन बरसे, त्रिगुन तत्त्व गुन डारे ॥ पांचो तत्त्व पांचरंगबरसे, पन पन रंग किनारे ॥ बाल किशोर तरुन बृद्धापन, पल-पल चढत उतारे ॥ रंगकी लहर तरंग फुँहारे, सरसंधान संभारे ॥ प्रेम भक्ति लौ लीन रहे मन, सुरति निरति संभारे ॥ कहैं कवीर जो सतगुरु सेवै, सो अभिमान बिडारे ॥

शब्द २९०जतन बिन मोह दोहाई पारे ॥टेक॥ पशु पंछी सुर नर मुनि गंधर्व, मोह फांस ना टारे ॥ मोह महामद बिरह बिकारी, समता धीर बिडारे ॥ मन मकरंद कंद सबहीके, रज तज बिरस सुधारे ॥ लालच ललित कुपंथ कुबानी, कुकरम कुमति पसारें ॥ लाज सकुच तृष्णाके बांकुरी, सत्य सुमति मतवारे ॥ पाखंड हेत कठोर मूढमत, शीलकी रास बिडारे ॥ जड अज्ञान दशा अतिचंचल, क्षमा धीरज झझकारे ॥ सतगुरु खोज शब्द सरसाजे, मोह बांकुरी फारे ॥ कहैं कवीर सतगुरु पदपरसे, आप तरे औ तारे ॥

शब्द २९१–जतन बिन मिरगोंने खेत उजारे । पांच मिरगवा, पचीस मिरगनी तामे तीन शिकारे ॥टेक॥ अपने अपने रसके कारन, चरत हैं न्यारे न्यारे ॥ अति बलवंत बदै ना काहू, बिड-

रत नांहिं बिडारे॥ तन कर बारी मन कर बिझुका, गुरुका शब्द रखवारे॥ कहें कवीर सुनो भाई साधो, मानो शब्द हमारे॥

शब्द २९२–पतिबल जनके मोह निवारे छाडो दुख जंजाल सुमतिधर, माया मदहिं बिसारे॥ टेक॥ मोह तजे निरमोही होवे, मोह फंद सब टारे॥ तजे प्रपंच जोग तब पूजा, तीनों ताप संभारे॥ तीरथ बरत प्रतिमा अस्थापन, डिंभ कपट सब जारे॥ तज प्रपंच बिकार बाजी सब, जंत्र मंत्र बिकारे॥ विद्या वेद पुरान नाद मद, छंद बंद निरवारे॥ नट नाटक तज भगति अराधे, तीनों पछ उबारे॥ चार अचार वरन आश्रम तज, केवल भक्ति सुधारे॥ कहें कवीर सतगुरु बल बांचे, उतरि जास भौ पारे॥

शब्द २९३–अपना काम संभारो भाई। सतगुरु शब्द गहो चितलाई॥टेक॥ मन औ काम कालके फंदा, एही फंदो संसारा॥ बिरला संत कोउ काम संभारो, पहुंचे लोक मंझारा॥ नारी अपनी नार पराई, नार नार सब एका॥ अपना नार दोष कछु नाहीं, सुक्रित करो विवेका॥ नार पराई अपनीकै देखै, सो नर पार न पावै॥ पूरे ठीक पिंडसे छूटे, चौरासी भरमावे॥ नार पुरुष हमहीं रच लीन्हा, जीवन जुगन बँधाया॥ कहें कवीर कोई संत विवेकी, तनके काम बहाया॥

शब्द २९४–तेरी काया मद्धे सार। सतगुरु पाया दीन दयाल ॥टेक॥ इस बोलतेका खोज करना, जीवतेही उलटा मरना काहे को जमडंड भरना॥ उत्तर पेलै पार। महलकी जब सुधपाई, चीन्ह लीन्हा प्रान भाई॥ अनंत मूरत दिष्ट आई, होगये निहचल मिटे दुचिताई॥ ऐसा तत्त्व बिचार॥ कंद भीतर नाद गाजे॥ जरा मरन उपाधि भाजे॥ सुन्न महलमें उनमुख साधे॥

पावे पद निरबान ॥ ये तीनों है जमकी बाजी, अगम पंथ बैठे अबिनाशी ॥ कहें कवीर सुन गोरख जोगी, चीन्ह ता निज-सार ॥

शब्द २९५-साहब ऐसा अपरंपार जाका सत्यशब्द आधार ॥टेक॥ ब्रह्मा जाको खोजत धावे। बेद किताब पार नहिं पावे। सुर नर मुनि बहुते पछतावे ॥ अस्तुति करे पार न पावे। बिना विवेक विचार ॥ पिंड ब्रह्मंड कथे ब्रह्मचारी। जबलग कायाके मंझारी ॥ काया जरबर होवे छारी। जाके आगे बस्तु अपार ॥ पावे तन मन पार ॥ षट दरशन मिल कथे जो ज्ञाना। अस्थिर घरका मरम न जाना। फिर फिर जोनी आय तुलाना। जमके हाथपरे पछताना ॥ कियो न तत्त्व बिचार॥ जो लग रहे कामिनि अरधंगा। चरचा करे क्रोधके संगा ॥ इनसे भक्ति होत है भंगा॥ जौलग नहिं पांचो एकसंगा ॥ छूटे न कपट लबार ॥ ये तीनों परपंची देवा। जीव लगावे अपनी सेवा ॥ करे प्रपंच लखे ना भेवा। उन जीवनको लगे न खेवा ॥ बूडे कालीधार ॥ जहां नहीं मन मनसा दोई। आशा तृष्णा लखै न कोई ॥ पाप पुन्य तहां एक न होइ। निरभय नाम जपो नर सोई ॥ छूटे सकल बिकार॥ सतगुरु मिलैं तो लागे तीरा। जम जालिमके मेटे पीरा ॥ हंसा होय ऐसे मतके धीरा। निरभय पद सतनाम कवीरा ॥ आवा-गमन निबार ॥

शब्द २९६-ऐसा जानता कोई ख्याल ऐसा ॥टेक॥ धरती बेध पतालहिं जावे। शेषनागको बसकर लावे ॥ बासुक अहै सत्यका सारा। निश वासर जाका विस्तारा ॥ कमठ पीठपर साल ॥ पूरबमें पछमको लावे। अंधाधुंधका भेद मिटावे॥ दच्छिन

शिला द्वार दे राखा। उत्तर दिशा सजीव न चाखा॥ चार दिशाको हाल॥ दिनके सोध रैनमें लावे। रैनके भीतर भानु जगावै॥ भानुके भीतर शशिखा बासा। शशिके भीतर दिवस प्रकाशा॥ ताबिच सार न तार॥नौको सोध सिलसिला लावे॥ एक बार सुमेर डुलावे॥ मेरु दंडपर आसन लावे। मन मुख धागा सुरति गहावे॥ गगन गुफाके हाल॥ गगन गुफामें अति उजियाला। अजपा जाप जपे तहां माला॥ वीना शंख सहनाई बाजे॥ चहुँदिश राय निरंजन गाजे॥ हीरा जनम मोहाल॥ कहें कवीर कोइ बिरला पावे। जाको सतगुरु अलख लखावे॥ क्षमा शील संतोष समाई। दया गरीबी आवे भाई॥ सो चले हमारे नाल॥

शब्द २९७-शब्द जहाज चढो रे मन भाई॥टेक॥ कर करता से कौल गरभमें लिया बसेरा॥ माताको दुख दिया मास नौ रहा अकेला। शिर नीचे पग ऊपरे॥ करतासे करे पुकार॥ त्रिगुन फंद निरवारो स्वामी। अब ना आऊं यह देश गोसाईं॥ बालापनमें भूल नाम, हिरदे ना लीन्हा॥ तरुनापन जब लगा, मोह त्रियासे कीन्हा॥ आये बुढापा बावरा मुखसे कहे न नाम॥ तीनों पन ऐसेमें खोई, नर देही बेबाद गवाई॥ भगति करै कछु आपतरे, औरनको तारे इतनी मनकी दौर॥ दरशन मिले न साधको, निशदिन रहे उदास॥ ले बैठारो अजर अमर घर, बहुर न आऊं यह देश गोसांई॥ धर्मदासकी बीनती, सुनियो सत्त कवीर॥ एक बार एको ना रहिहै, फिर करता कछु और उपाई॥

शब्द २९८-चेत सबेरा चलना बाट। यह जग देखा झूठा ठाट॥टे०॥ चलनेकी तजबीज न कीन्हा। मजलोंकी खर्ची ना

लीन्हा ॥ अच्छी राह ताहि ना चीन्हा । अब का सोता गाफल खाट ॥ चंचल मनका घोड़ा कीन्हा । ज्ञान लगाम ताहि दे दीन्हा ॥ होय होशियार बाग गहि लीन्हा । भौसागरके चौडा पाट ॥ मित्र कुटम कोई ना तेरा । यह सब है स्वारथका बेरा ॥ यहां नहीं तेरा निहचल डेरा । इनसे चलना वेग उचाट ॥ मग-मांहीं ठगवाग लगाया । वह तंबूसा छप्पर छाया ॥ औरनको ठग लड्डू लाया । मार लिया स्वादोंका घाट ॥ तन सरायमें मन अरुझाना, भटयारीके रूप लुभाना ॥ निश वासरसो मनमें दीन्हा । सौदाकर सतगुरुकी हाट ॥ कहें कवीर दयासे पावे । अपनो ज्ञान तोहि समुझावे ॥ तेरे भलेकी राह जनावे । जम कूचलकी पेंच न आवे ॥ बार-बार कहो तोसे डाट ॥

शब्द २९९मन नेकी करले दो दिनका मिजमानरे ॥ टे० ॥ जोरू लडका कुटम कबीला, दो दिनका तन मनका मेला ॥ अंतकाल उठ चला अकेला तज माया मंडानरे ॥ कहांसे आया कहां जायगा, तन छूटे मन कहां समायगा ॥ आखिर तुझको कौन कहेगा, गुरु बिन आतम ज्ञानरे ॥ कौन तुम्हारा सच्चा सांई, झूठी है यह सकल सगाई ॥ कहां मुकाम कहां ठिकाना, का बस्ती का नामरे ॥ रहट माल पनघट जो भरता ॥ आवत जात भरा औ रीता, जुगन जुगन तू मरता जीता ॥ क्यों करता अभिमान रे ॥ लाख चौरासी छेखे तासा, ऊंच नीच घर लेता बासा ॥ कहें कवीर सुनो भाइ साधो, जपना गुरुका नामरे ॥

शब्द ३००–मन मौला जाने गुजर गई गुजरानरे ॥ टे० ॥ कोइ दिन रूखा सूखा रांधा । कोइ दिन दूध मलीदा छांदा ॥ कोइ दिन पत्रपरायल कांदा । कोइ दिन रहें हैरानरे ॥ कोइ दिन शाल दुशाला अंगे, कोइ दिन फाटेनंगे ॥ कोइ दिन खासे रंगे

चंगे, कोइ दिन तोरे तानरे ॥ कोइ देवल कोइ दिन महजित ॥ कोइ दिन बाग बगीचा बाडी, कोइ दिन रहे वृक्षकी छांहीं ॥ कोइ दिन रहे मैदानरे ॥ हिलमिल रहना देखे खाना ॥ नेकी बात सिखाते रहना ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधो, जपना निर-गुन नामरे ॥

शब्द ३०१-मारगमें लूटे पांच जनी ॥ टे० ॥ पांच पचीसने रोके बाटा, साधू चढगये औघटघाटा जाय लिया उन उबट बाटा, जो न उबारो आप धनी ॥ आशा तृष्ना नदिया भारी, बहिगये संत बडे ब्रह्मचारी ॥ जो उबरे सो शरन तुम्हारी, शिर-पर चमके सेल अनी ॥ संकट लूटे नेजाधारी, उनकी रइयत कोन बिचारी ॥ त्रिदेवा लूटे सब झारी, चमके निरगुन तीन अनी ॥ बनमें डसलिये मुनिजन नागा, डसलियो ममता उन उठ भागा ॥ जाके कान गुरू ना लागा, शृंगीऋषि सो आन बनी ॥ मारग बांका पंथ दुहेला, रामानंद कीन्हें तहँ मेला ॥ साहेब कबीर देत जहां हेला, सुनिये सिरजन आप धनी ॥

शब्द ३०२-देखके मगन भये गगन बहारवा ॥ टे० ॥ रतन-सिंहासन पुरुषबिराजे, कोट भानु छबि निरखत लाजे ॥ माथे क्रीट मनोरथ राजे, चात्रिक भई लख दरस अपार वा ॥ बिन-पग निरत होत जहां रुमझुम, घुंघुरु बाजे छुमछुम ॥ ताथेइ ताथेइ नाचे ठुमठुम, तबला बाजे गुमगुम ॥ उठत राग छत्तीस उचरवा ॥ अरर अरर जहां अरबी बाजे, झरझर झरझर झालर साजे ॥ किडधो किडधो नौबत गाजे, शब्द सुहावन मुरली बाजे ॥ सहनाई सुर बजत विशालवा ॥ भरो अमोलक अमी-सरोवर, पीवत हंसा करे कुतूहल ॥ लगी सुधा जहां झुरझुर झुरझुर ॥ मन भौंरा जहां करत गुंजारवा ॥ लीला देखि भयो

मन अस्थिर ॥ विषय वासना छूटी ततपर ॥ मोतीदास कहैं धनधन सतगुरु उलट अभी पी पायो निजघर ॥ सत्यनाम सोई है निज सारवा ॥

शब्द ३०३-मनुष तन पायके तुस । भजलो सिरजन हार ॥ टे० ॥ कैसे रहे अचेत कबै फिर औसर पैहो ॥ फिर न मिले ऐसो दाव, बहुर पाछे पछतैहो ॥ लखचौरासी जियाजूनमें, मानुष जन्म अनूप ॥ ताहि पाय चेतत नाहींरे, कहा रंक भूप ॥ गरभ बासमें कौल किया मैं, भजिहौं तोही ॥ निशदिन सुमरों नाम, कष्टते काढो मोही ॥ एकनामको जानके, रहों नाम लौलाय । नेक न तोहि विसारिहौं, या तन रहे की जाय ॥ इतना किया करार काढ प्रभु, बाहर कीन्हा ॥ भूल गये वह बात भये माया आधीना ॥ भूली बतियाँ वा दिनकी, आय गई मत आन ॥ बाराबरस तो ऐसे बीते, खेलत फिरत नदान ॥ तरुनापन जब लगा, देह जोबन मदमाता ॥ चलत निनारे छांह, तमकके बोले बाता ॥ चोवा चंदन लायके, पहिरे बसन बनाय ॥ गलियारे झांखत फिरे, परत्रिया देख मुसकाय ॥ तरुनापन गये बीत, बुढापा आय तुलानो ॥ कंपन लागे शीश, चलत दोय चरन पिरानो ॥ नैन नासिका चूवन लागै, मुखसे न आवै स्वास ॥ वात कफने घेर लिया है, छूट गया तन आश ॥ माता पिता सुत नार, कहो काके संगलागी । तन मन धन बरजत नहिं, कामिन होत सुभागी ॥ एकदिन काल गरासई, परिहो जमके दाव ॥ बिन सतगुरु ना बाँचहू, कोटन करो उपाय ॥ सुफल भई या देह, नेह साहेबसो कीजे ॥ सतगुरु दाता आहि, मुक्तपद उनसे लीजे ॥ सुफल भई मनकामना, सुमरन लागे पीर ॥ यह लीला है मुक्तिकी, गावे साहेब कवीर ॥

शब्द ३०४-का सोचत बारमबारा, प्रभुका नाम न लेत गँवारा ॥ टे० ॥ बाजीगर डंक बजाया, सब लोग तमाशे आया ॥ बाजीगर डंक सकेला, तब रहगये आप अकेला ॥ मनुवां जहां हाट लगाया, दुनिया सौदागर आया ॥ सौदागर सौदा कीन्हा, बिरले सौदागर चीन्हा ॥ जब पार उतरना चहिये, तब खेवटसे मिल रहिये ॥ जब उतर गये भौपारा, तबको हमको संसारा ॥ जब वस्तु अगोचर चहिये, तब दीपक बारत रहिये ॥ जब वस्तु अगोचर पाई, तब जोतमें जोत समाई ॥ जब मुखडा देखन चहिये, तब दरपन मांजत रहिये ॥ जब दरपन लागी काई, तब दरशन कहांते पाई ॥ जब फूल पत्र फल चहिये, तब बिरवा सींचत रहिये ॥ जब फूल पत्र फल लागा, तब दिलका दुविधा भागा ॥ साहेब कवीर कहे हम जाना, जानेसे मेरा मन माना ॥ कहनेसे नांहि पतीजे तो मूरखसे का कीजे ॥ ❋

शब्द ३०५-कोई लोढ़ैरे संत सुजान, काया बन फूल रही ॥ टे० ॥ एकहि एक मिले गुरुपूरा, मूलमंत्र जो पावे ॥ साधु संतकी बानी बूझैं, मन परतीत बढावे ॥ दूजे तनकी दुविधा मेटे, दूजा भाव न लावे ॥ भीतर बाहर एक देखे सो वह संतहिं पावे ॥ तीजे तीनों गुनसे न्यारा, तिरबेनी अस्नाना ॥ त्रिकुटी महलमें आसन मारे, अनहद धुन सुन काना ॥ चौथे चंचल बसकर राखे, चतुराई सब त्यागे ॥ चढके प्रेम हिंडोरा झूले, गुरुसो भगति वर मांगे ॥ पांचे पांच तत्त्व प्रकासे, पांचो इंद्री साधे ॥ पकड पवनका परचे करके, मनओ पवन गहि बांधे ॥ छठयें छऊ चक्रको बेधे, षट दल होय प्रकाशा ॥ इंगला पिंगला मारग सोधे, करै गुफामें बासा ॥ साते सत बचन परकासे, सत्य सुरत लखि आवे ॥ मकरतारकी डोरी गहिके, अजर अमर घर

पावे ॥ आठे अष्ट कमल दलफूले, घट उजियारी होई ॥ आतम होय परमातम चीन्हे, संत कहावे सोई ॥ निरख देख नोमीके द्वारा, जब गुरु पूरा पावे ॥ अहै संधि कायासे न्यारी, जो गुरु संधि लखावे ॥ दसएँ दसो द्वारको पावे, पढले एक पहारा ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधो, बहुतन साधो आरा ॥

शब्द ३०६–दोय नैनोंके बीच मुसाफिर रमरहुरे ॥ ॥ टे० ॥ धोबी धोवे कापडा, झांझ मऊके घाट ॥ मछरी साबुन लेगई रे, धोबिया गा बारह बाट ॥ धोबिनियां लुट गईरे ॥ कोठी ऊपर कोठरी, जहां चढ बोले मोर ॥ मोर बिचारा का करे, घरमें घुसगा चोर ॥ सबी धन लुटि गयोरे, सँराक कुवा पताल जल-पानी, लंबी लागी डोर ॥ थरहर कंपे बाला जियरा, को प्रेमी लेत निचोर ॥ सुघर घर होय रहोरे कहैं कबीर सुनो भाइ साधो, सौदा करले हाट ॥ हाट उसल गये सौदा बिक गये, होगये बारा-बाट ॥ जहांके तहां होय गयोरे ॥

शब्द ३०७–मिलना कठिन है मैं कैसे मिलों पिय जाय ॥टे०॥ अगम भूमि जहां महल पियाको, हमपे चढयो न जाय ॥ औघट घाट गैल रपटीली, पांव नहीं ठहराय ॥ सावधान पग धरो पंथ-पर, बार बार डिगजाय ॥ अति बारीक पंथ बहु झीना, सुरति झकोरा खाय ॥ लोकलाज मरजाद जगतकी, देखत मन सकु-चाय ॥ जो या बात नये जोबनकी, लाज तजी ना जाय ॥ दूजे सतगुरु मिले पंथपर, मारग दिये बताय ॥ साहेब कबीर मुक्ति के दाता शीतल अंग लगाय ॥

शब्द ३०८–सोहागिन चेत करो तोरे आवागमन नगिचाय ॥ टे० ॥ बालापनमें खेल गँवाये, चलिया चाल कुचाल ॥ कोन जबाब देहु मोरि सखियां साहेब पूछ हवाल ॥ समुझ बिनका

करवे ।। सतसुकृतकी चूनरि पहिरो, सत मत रंग रंगाव ।। प्रेमतत्त्वके मांग सँवारो, निरभे सिंदुर लाव ॥ घुंघट पट खोल चलो तुम ससुरे, नैहर नाहिं निबाह ।। नैहर नेह पैहों सखियां, मत तुम भरम भुलाव ।। भुलाने पिया न पैहो ।। आगे इत भौसागर, गहिरा सूझे वार न पार ।। किस बिध पार उतरबे सखिया, बिन खेवट कडिहार ।। खेवइया बिनका करबे ।। कहें कवीर सोई सहवाती, पियरंग राजी होय ।। अमर लोक अस्थाना पावौ, तब तोर अटल सोहाग, मंडल बिसराम करो ।।

शब्द ३०९-सबका साक्षी मेरा सांई । ब्रह्मा विष्णु रुद्र ईश्वरलो, औ अव्याकृत ताँई ।। टे० ।। पांचपचीस सो संचै करले, ये सब जग भर माया ।। अकार उकार मकार मात्रा, इनके परे बताया ।। जागृत सपन सुषोपत तुरिया, इनते न्यारा होई ।। राजस तामस सात्त्विक त्रिगुन, इनते न्यारा सोई ।। सूछम अस्थूल आनंदमय कहिये, इन मिल भोग बखाना ।। राजस तेज प्रकाशहि कहिये, इनते न्यारा जाना ।। परा पसंति मधमा बैखरी, चौबानी प्रपंच प्रमानी ।। पंचकोश नीचे कर देखो, इनमो राम न जानी ।। पंचज्ञानके पंच कर्म हैं, दस इंद्री मानो ।। चतुष्ट अन्तहकरन बखाने, इनसो राम न जानो ।। कुर्मसेष किरकला धनंजय, देवदत्तहू देखो ।। चौदा देव इंद्रिया चौदह, इनमें अलख न पेखो ।। तत पद त्वं पद और असि पद, बाच्य लच्छ समुझावे ।। कहें कवीर सोई गुरु पूरा, न्यारा कर बतलावे ।। पं ❀

शब्द ३१०-सब औगुनका सिर अभिमान। तेउ न मूढ तजे अज्ञान ।। टे० राजस जग्य नृपतिने कीन्हे, सुर नर मुनि अचवे जलपान ।। संख पंचायन तबहीं बाजे, सुपचभगत रस लीन्हों सान ।। यही चूक चूके लंकापति, काटे शिर दशरथ सुत आन।।

दुर्योधनके मेवा त्यागे, दासी सुत घर गये भगवान् ॥ झूठे बेर सेवरी के खाये, प्रेम प्रीत हित अपने जान ॥ शुकदेव मुनिसे को बड होई, इंद्री जीत विष डारो छान ॥ वैकुंठमें आदर नाहीं, कृपा भई न सुने गुरुज्ञान ॥ जोग जग्य व्रत तप कर संयम, चार बेद औ सुने पुरान ॥ कहें कवीर थीर नहिं लागै, जौ लग संत नहीं पहचान ॥

शब्द ३११–धनहो धन्य बलखके मीरा । अपने जीव मुक्ति के कारन, सब तज भये फकीरा ॥ टेक॥ तखतहु छोड दुलीचा छोडा, अंमारीके मीरा ॥ कोटन कोट खजाना छोडा लाल जँवाहर हीरा ॥ जाके पग हुरमनसे मलते, ऐसे नरम शरीरा ॥ बिन पादत्रान बन बन डोले, कसकत नहीं शरीरा ॥ सोरा सहस सहेलरि छाडे, खासा मखमल चीरा ॥ तुरी लाप अट्ठारा छांडे, लगा शब्दके तीरा ॥ धन्य तुम्हारे मात पिताको, जाके पिये तुम छीरा ॥ धन तेरी करतूत कमाई, धन तेरे गुरुपीरा ॥ ज्यों-ह्वारिल लकरीको पकरे, यों मत गहिर गंभीरा ॥ कहें कवीर ऐसी लौलावे, साहेब हाल हजूरा ॥

शब्द ३१२–सुलतानसोबलकबुखारेका ॥ जाके खाना अजब सरहना, मिसरी कंद छोहारेका ॥ टेक ॥ जाकी सुरति लगी कदमसो; अल्लह पीर पियारेका ॥ जाके सेज फूलसो बिछती, करते सुख तन सारेका ॥ अब तो घास बिछावन लागे, मुठी एक गलियारेका ॥ जाके संग कटक दल बादल, झंडा न्यारे न्यारे का ॥ माल मुलक तज लई फकीरी, धनसो कीन्ह विचारेका ॥ जो तनके चोला जोबनते, सवा टंक सब सारेका ॥ सो तो बोझ उठावन लागे, मन दस गूदर भारेका ॥ जामुख चीज नेवाला खाते, करते जीव अहारेका ॥ सो अब रूखा पावन लागे, टुकरा

शाम शकारेका ॥ आदमसे होगये औलिया, एक शब्द निरबारेका ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधो, फक्कर आद अखाडेका ॥

शब्द ३१३–दिवाने बंदे का गावे घर दूर ॥ टे० ॥ अनल हक्क हक्ककर बोले, सूली दिया मनसूर ॥ सेख फरीद कुवामें लटके होगये चकनाचूर ॥ साह सुलतान बलख तज निकसे, छांडे सोरहसौ हूर ॥ गोरख गोपीचंद भरथरी, शिरमें डारे धूर ॥ नानक नामा औ बाजिंदा, झिलमिल दरसे नूर ॥ खोजत खोजत उमर सिराने, ना पहुंचे रहे दूर ॥ या कलियुगके नर पाखंडी कबहुं न रहत हजूर ॥ इनके मनमें कुफर बसत है, मायाके मग रूर ॥ गोरख काया खोज भुलाने, ना पाया भरपूर ॥ कहैं कबीर दया सतगुरुकी, सब घट दरसे नूर ॥

शब्द ३१४–अबहम सबही मध्य विराजें ॥ दोय दल जोर दिखावैं कौतुक, हम जूझें हम भाजैं ॥ टे० ॥ हस्ती चीटी लख चौरासी, लघु दीरघ इत खेलैं ॥ उतपति परले खेल हमारा, आप पसा रस केलैं ॥ त्रिभुवन सार सकल रसभोगी, घटघट हमरी पूजा ॥ सरग नरक दोउ खेल हमारा, हम बिन और न दूजा ॥ हमही देव असुर सुर राच्छस, हम ऋषि मुनि हम देवा ॥ हमही ठाकुर आप पुजारी, हम साहब हम सेवा ॥ अवनि अगिन जल पवन सूर शशि, हम जगसें प्रगटाया ॥ कहैं कबीर तत दरसी जानै, कहेसे को पतियाया ॥

शब्द ३१५--मेरे जान मुझे न दिलसे भूल ॥ टे० ॥ डार डारमें, पात पातमें तुम्ही रंगीला फूल ॥ है हाजरको दूर बतावे, का नियरे का दूर ॥ मक्का ढूंढा मदीना ढूंढा तबहुं न मिलत रसूल ॥ स्याही गई सपेदी आई, कर चलनेका सूर ॥ कहैं कबीर सुनो भाई साधो, सब घट दरसे नूर ॥

शब्द ३१६-सांईका अरस तखत है दूर ॥ बिन मुरसद कोई भेद न पावै, भटक मुए सब कूर ॥ लाज छोड जिन काज किया है, भया कदमका धूर ॥ चौदा तबक ख्वाबकी रचना, ज्यों आतसका फूल ॥ जो निजके कोई समुझे बूझे, इसमें नहीं सहूर ॥ नासूतमें माया खड़ी, मलकूत गुन अस्थूल ॥ जबरूतमें जंजालहै लाहूत अछर फूर ॥ हाहूतमें अचिंतपुर, बाजत अनहद तूर ॥ वेद पुरान कुरान कहिये, इहां लौं खबर हजूर ॥ सात सुन्न दोय बेसुन कहिये, दसो धाम निज मूल । ईछा सोहं उहांसो आये, घट घट व्यापक नूर ॥ कहें कबीर हम खुदके अहदी, लाये हुकम हजूर ॥ सब रूहनके दर्द जानके, संग्रथ वचन कबूल ॥

शब्द ३१७-जगतमें काहु न मन बस कीन्ह ॥ टेक ॥ भरथ खंडमें भरथ जोगी, मृग सुत मन हर लीन्ह ॥ ता कारन नर दोष लगाये, भरथ देह दोय दीन्ह ॥ सूखे पत्र पवन भख रहते, पारा सुरसे ज्ञानी ॥ तिनहूँ रूप देख बनिताके, कामकंदला ठानी ॥ शृंगीऋषी बन भीतर रहते, बिषै बिकार न जाना ॥ पठई नार भूप दशरथने पकर अजोध्या आना ॥ पारबतीसी पतनी कहिये, तिनके मन क्यों डोला ॥ छकित भये शिव देख मोहनी, हाहा करके बोला ॥ सोरा सहस उरवसी जाके, ताका मन बौराना ॥ गौतम ऋषिकी नार अहिल्या, ताहि देख ललचाना ॥ नारद मुनिसे तपसी कहिये, कन्या हाथ दिखायो ॥ मांग्यो रूप भूपश्रीपतिको, स्वांग बंदरको लायो ॥ जमदग्नी जाके नारि रेनुका, जात जमुना जल भरने ॥ मोही देख भूपके मंदिर, छकित भये दोयनैने ॥ एकहि नाल कमलसुत ब्रह्मा, जग उपराज कहायो ॥ कहें कबीर एक नाम भजन बिन, जिव बिसराम न पायो ॥

शब्द ३१८-अलख हमारे राजा जाके बाजत अनहद-बाजा ॥ टेक ॥ शंकरसे जाके जोगी कहिये, ब्रह्मासे ब्रह्मचारी ॥ सुरपतिसे जाके सुरता कहिये, कृष्णसे औतारी ॥ सात समुंदर शायर कहिये, अनगिनती नदि नारा ॥ अठरा भार रोमावसि कहिये, गिरि परवतसे भारा ॥ भूपति एक महाबलि राजा, चहुँ दिशि फिरै दोहाई ॥ अनंत कोट करताके बागो, यहां प्रगटे ठकुराई ॥ तन बिन मेख तारबिन तंबू, ऐसा तंबूताना ॥ कहें कवीर सुनो भाई साधू, तंबू मांहि समाना ॥

शब्द ३१९-पाछे समुझ परेगा भाई ॥ टेक ॥ इहां अहार उदरभर कीन्हें बहुविधि मांस कढाई ॥ जीव जंत बहु झटका मारे, यह लेखा सब जाई ॥ इहवां लूट खावत तुम परधन, गले फाँसरी लाई ॥ सात सिपाही आगे पाछे, पल पल खबर जनाई॥ या जग आये राज कराये, पातुर भांड नचाई ॥ एक बुंदके कारन मेरे, कुलके धरम नशाई ॥ ईहां तो कीन्हें साधुकि निंदा सातो जनम नशाई ॥ पैग पैग जम कांटा गाडे, उलटा फांस लगाई ॥ सांच कहों तो मारन धावे, झूठा जग पतियाई ॥ कहें कवीर सुनो भाई साधो, भरम भूल दुनियाई ॥

शब्द ३२०-निगम सुत कोन ऋषी उबरे ॥ टेक ॥ प्रथमें ब्रह्मा विष्णु भुलाने, जननी सो बिगरे । सत्यभक्ति जाने बिन दुरलभ, कहु कोने उबरे ॥ नारद मुनि जो दुरमति कीन्हें, बनचर रूप धरे । पराशरऋषि कुहरा उपराजे, पुत्रीसों बिगरे ॥ आसन मार जंगलमें बैठे, बृच्छके चाम चरे । सो भगवान भोगके कारन, शृंगीऋषि बिगरे ॥ दूब अहार कीन दुरबासा, अन्नको त्याग करे । ममता जोर रहे कायामें, इंद्रसभा बिगरे । गुरुगनेश बुद्धिके सागर, शिवके पास खडे । चले अजोग जोग

के कारन, नीरंजन बिगरे ॥ चौदालोक बेदको मंडल, जहां लग व्यास पढे । सोरा खंड अच्छर भगवाना, उपजके बिनस मरे ॥ सत्राखंड पर अधर दीप जहां, शब्द अतीत खडे । ताके आगे चार धाम है, रैन दिवस न टरे ॥ लोमस हंस मिले साहेबसों, चहुं जुग मुक्ति भरे, कहें कवीर सुनो मतिमंदा, सो हंसा उबरे ॥

शब्द ३२१–नानक ऐसा न्याव निवेरो । कलह कालकी ज्वाल न झंपे, मिटे भरमके फेरो ॥ टेक ॥ जो तन तंबू बहु बिस्तारा, बिनही मेख लगाना ॥ महातत्त्वका लकडा गाडो, पांच सदर ले ताना ॥ जैसे घटा आवमें डूबे बिन सीझेना बाजे ॥ पांच तत्त्वके मिश्रित लागी सहजे करत अवाजे ॥ जैसे जंत्री जंत्र बजावे, बाजे सोई बजावे ॥ बाजत है पर दीसत नाहीं, ताकौ कहा लखावे ॥ चाम महलमें बानी बोले, रूप सवाया रानी ॥ ना जानो यह कहांसे आया, बिनसे कहां समानी ॥ तत है वितमें वित है ततमें, तत बित कहिये सोई ॥ पहले देखै ब्रह्म आरसी, दूजा धोखा होई ॥ कहें कवीर फकीर फिकर तज, न्याय सहित रहो भाई ॥ आवा जाई झूठ कल्पना, सहजे रहो समाई ॥

शब्द ३२२–मन हरना बड हुशियार एकदिन चोरवा आवेगा ॥ टेक ॥ तबल तीर तलवार वरछी, ना बंदूक चलावेगा ॥ आवत जात लखे ना कोई, घरमें ढुंद मचावेगा ॥ ना गढ तोरे ना गढ फोरे, ना कछु रूप दिखावेगा ॥ नगरीसे कछु काम नहीं है, तुम्हें पकर लेजावेगा ॥ नहीं सुने फिरियाद सकल पुनि, ऐसा तस्कर आवेगा ॥ लोग कुटम परिवार घनेरे, खोजी खोज न पावेगा ॥ ऐसा है कोई संत विवेकी, नाम भजन गुन गावेगा ॥ कहें कवीर सुनो भाइ साधो, खोल किंवारी जावेगा ॥

शब्द ३२३–अन घडिया देवा कोन करे तोरि सेवा ॥ टे० ॥ घडे देवको सब कोई पूजै, जस भीतीका लेवा ॥ जाकी सकलो सृष्टि रची है, ताहि लहे ना भेवा ॥ को निरगुन को सरगुन कहिये को किरतम को करता ॥ आपमें सर्व सर्वमें व्यापक, सर्व मई होय बरता ॥ ब्रह्मा बिष्नु महादेव कहिये, तिनहूंको लागी टंकिया ॥ पूरन ब्रह्म अखंडित न्यारा, सो करता अन घडिया ॥ दस औतार निरंजन कीन्हा, सो करता ना होई ॥ वे तो आपन करनी भुगते, करता औरे कोई ॥ जोगी जती तपी संन्यासी, आप आप मिल मुडिया ॥ कहें कबीर सुनो भाई साधो, अलख लखै सो तरिया ॥

शब्द ३२४–ननदी जाहुरी महलनको, अपनो बीरन जगाव ॥ ॥ टे० ॥ बीरन जगाये ना जगेरी, लग न सके कछुदाव ॥ काया गढमें भई अंधियरिया, कोन करे वाके भाव ॥ भरमके ताला लगो महलमें, कीमत कुंजी लगाव ॥ कपट किंवारिया खोलके तुम, या बिधि पियको रिझाय ॥ भक्ति घाघरा चित्त चुनरिया, चोली चाल सियाव ॥ कर्म मसीकी काजर करले, या बिधि पिया को रिझाय ॥ ज्ञानके दीपक कर गह लीजे, बातीबार लगाव ॥ ततको तेल डार दीपकमें, मगन मसाल जराव ॥ सुरतिके बिजनी करगहि लीन्हा, सेवा सेज बिछाव ॥ शीतल चँवर ढार प्रीतमपर, प्रीति पिछोर उढाव ॥ बारंबार मिले नहिं या तन, भूल कोई मत जाव ॥ कहत कमाल कबीर के बालक, फिर ना मिले ऐसो दाव ॥

शब्द ३२५–काह भये मुखराम कहेसे ॥ टे० ॥ अंतर कपट बचन मुख चातुर, अति अधीन होय मनन कियेसे ॥ जैसे भुजंग ओट टाटीके बहु जीवनको हतन कियेसे ॥ जैसे बधिक

ओट टाटीके बहु जीवनको हतन कियेसे कहैं कवीर वाके संग न करिये, बिनती विवेक जिन भेख लियेसे ॥

शब्द ३२६–मोको कहां ढूंढै बंदे मैं तो तेरे पासमें ॥ टेक ॥ ना मैं बकरी ना मैं चिकवा, ना मैं छुरी गड़ासमें ॥ ना हों मैं खाल पूंछमे, ना हड्डी ना मासमें ॥ ना मैं मिलों जोग तप कीन्हें, ना बिराग संन्यासमें ॥ खोजी होय सो तुरत मिलावे, पलभरके तह्लासमें ॥ ना देवलमें ना महजिदमें, ना काशी कैलाशमें, ना मैं आऊं अवध द्वारका, मैतो सांचे आसमें ॥ मैं बसता सैरतमें तेरी, मेरी पुरी मवासमें ॥ कहै कवीर सुनो भाई साधो, सब स्वासनके स्वासमें ॥

शब्द ३२७–गाफिला क्यों बिसराया धनी, तेरी सुंदर काया बनी ॥ टेक ॥ काल करंते आजुई करले, आजु करंते अबही ॥ शिरपर तेरा काल खडा है, मुरक जात जस आनी ॥ धीरे धीरे पाँव उठावो, सिढिया है अति घनी ॥ या तन तेरी खास मिलेगी, कीरति रहेगी बनी ॥ या भौसागर अगम भरा है, नाव लगी अति झीनी ॥ गुरु मुख गुरुमुख पार उतरगये, निगुरा बूडे अनी ॥ बालापन तरुनापन बीते, देखलेव दरपनी ॥ कहैं कवीर सुनो भाई साधो, भली बिसाहन बनी ॥

शब्द ३२८–खबर नहिं जगमें पलकी। सुकृत करले नाम सुमिरले, को जाने कलकी ॥ टेक ॥ कौडी कौडी माया जोरी बात करे छलकी ॥ पाप पुन्यकी बांध पोटरिया, कैसे होवे हलकी ॥ तारन बीच चंद्रमा झलके, जोत झला झलकी ॥ एक दिन पंछी निकस जायगा, मट्टी जंगलकी ॥ मात पिता परि-वार भाई बंधु, तिरिया मतलबकी ॥ माया लोभी नगर बसत-

है, या अपने कबकी ॥ या संसार रैनका सपना, ओस बुंद झलकी ॥ कहैं कवीर सुनो भाई साधो, बातें सतगुरुकी ॥

शब्द ३२९–महेरम होय सो लखि पावे, संतो ऐसा देश हमारा ॥ टेक ॥ बेद किताब पार ना पावे, कहन सुनन सो न्यारा ॥ जात बरन कुल किरिया नाहीं, संध्या नेम अचारा ॥ बिन घन वादर बिजली चमके, बिन सूरज उजियारा ॥ बिन नैनन जहां मोती पो है, बिन सुर सबद उचारा ॥ जैसे बुंद परे दरियामें, ना मीठा ना खारा ॥ सुन्न सिखरपर गजल संगीता, किंनरी बीन सितारा ॥ जो जो गये ब्रह्म तेहि दरसे, गहु अच्छर तत सारा ॥ कहैं कवीर सुनो भाइ साधो पहुँचे गुरुका प्यारा ॥

शब्द ३३०–संतो मूलन बेटा जायो, जिन खोज कुटुम्ब सब खायो ॥ टे० ॥ जनमत खाई ममता भाई, दुख सुख दोनों भाई ॥ पाप पुन्य पारोसी खाये, औ तृष्नासी दाई ॥ काम क्रोध दोय काका खाये, मन अभिमानी मामा ॥ मोह नगरके राजा खाये, तब पहुंचे सुखधामा ॥ हम बड दादा तुम बड दादू, देखतही मन मूवा ॥ आनंदरूप बधाई बाजे, तब वह बालक हूवा ॥ ज्ञानी नाम धरे लड़काको, उनकी महिमा गाई ॥ कहैं कवीर सुनो भाइ साधो, सुखमें रहो समाई ॥

शब्द ३३१–हंसा उड चल आपन देश, प्रीति पुरानी भयली नारे ॥ टे० ॥ हंसा सिंगलदीपके, उडि आये यहि देश ॥ बेधे मोती ना चुगे, हीडे आपन देश ॥ उड हंस कोदवारी लागे, मूरख बिडारे जाय ॥ अरे अरे मूरख बावरा, कहीं कोदवा हंस न खाय ॥ ना हंसाके खेती बारी, नहीं बन जावे पार ॥ अनबेधे मोती चुगे, सो पुरवे करतार ॥ शशि झंपे दरियावमें, मीन चढी अकाश ॥ जानेगा कोइ संत जौंहरी, कहैं कवीर कोइ दास॥

शब्द ३३२–जो कोइ निरगुन झर लख पावे ॥ टे० ॥ निरखत कूप कूप बिन वारी, बिन कर रहट चलावै ॥ जल बिन शीश शीश बिन वारी, सो जल आन पियावे ॥ बिन करताल पखावज बाजे, बिन रसना गुनगावे ॥ गावन हारके रूप न रेखा, सो पद आन मिलावे ॥ कदलीपत्र जहर जंगलमें, बिन गुरुके नहिं खावे ॥ उठत सनेह मरमना पावे, आगमके गोहरावे ॥ जोगी जती तपी संन्यासी, नाहक भेख बनावे ॥ बिना नामके भौंरा घूमै, सुख सपने नहिं पावे ॥ पुरइन पत्र बसे नित दादुर, सोऊ सवाद न पावे ॥ कमल कलीके भौंरा लोभी, सौ जोजन उडजावे ॥ काजी हाथ किताब न आवे, मुलना बांग न भावे ॥ वेद पुरान विप्र ना भावे, राजा राज न भावे ॥ कर बिन कलम कलम बिन कागद, बिन मसि अंक बनावे ॥ कहैं कवीर सुनो भाइ साधो, सतगुरु मिले लखावे ॥

शब्द ३३३–संतो समुझेका मतन्यारा, जो आतम तत्त्व बिचारा ॥ टे० ॥ औरनसो कहैं आपा खोजो, आप अपन ना जाने ॥ मुख कछु आन हिये कछु आना, कैसे राम पहिचाने ॥ औरनसो कहैं मोह न कीजे, निरमोही होय रहिये ॥ माया मोह सकल आपहिमें, या दुख कासो कहिये ॥ औरनको कहे तजो बडाई, आप बडाई चावे ॥ जोर बडाई छूटत नाहीं, झीना पीर कहावे ॥ औरनसो कहैं पछ न कीजे, आपा पछ न छूटे ॥ कहन सुननको साधु कहावे, सांच कहे रिस छूटे ॥ जौं लग राग द्वेष मन माहीं, अस्तुति निंदा भावे ॥ तब लग तीनों ताप ना छूटे, कहा भये बहुगावे ॥ पद साखी औरन समुझावे, आपा समुझत नाहीं ॥ कहें कवीर राम क्यों दरसे, मैं तैं छूटत नाहीं ॥

शब्द ३३४–करोरे बंदे वा दिनकी तदबीर ॥ टे० ॥ लाल

खंभपर देत ताडना, सहि न सके शरीर ॥ मारमार मुगदर प्रान निकासे, नैनन भर आवे नीर ॥ रंगमहल एक कामिनि बैठी, कर शृंगार गंभीर ॥ दुनियां दौलत महल संग न जात शरीर ॥ भौसागरके राह कठिन है, नदिया अति गंभीर ॥ नाव न बारे लोग घनेरे, खेवनवाला बे पीर ॥ जब जमराजा पकर मँगावे, पाँयन परे जंजीर ॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधो, अब ना करु तकसीर ॥

शब्द ३३५–नाम गत पार न पावे कोई ॥ टे० ॥ मच्छ कच्छ बाराहौ मर गये, नरसिंह रूप जो होई ॥ परशराम बलिबावन मरगये, कहो कहा कह रोई ॥ रघुबर मरे मरे वे दशरथ, भरथ शत्रुहन दोई ॥ रावन मार बिभीषन थापे, उनहूके लक बिगोई ॥ जदुपति मरे मरे दुर्योधन, एक रात ना होई ॥ पांच पंडवा सिझे हिंमाले, मुक्त कहो नरलोई ॥ अंमरीष औ व्यास परीच्छित, मरत देर ना होई ॥ अज फल खाये धनंतर मर गये, तिनहूकी सुदबुद खोई ॥ कहें कबीर सुनो नर भोंदू, तुमरी कौन गत होई ॥ उपजत बिनशत जुग चारों गये, रहत न देखा कोई॥

शब्द ३३६–जुगवे निशवासर जोग जती ॥ टे० ॥ जैसे ब्रह्मा वेदको जुगवे, शिवको जुगवे पारबती ॥ जैसे सुनार सोनाको जुगवे, घटन न पावे पाव रती ॥ जैसे नार पुरुषको जुगवे, बरत अगिन हो जात सती ॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधो, का राजाका छत्रपती ॥

शब्द ३३७–बैरागी रामारे मगन फकीरी तेरी पूरी ॥ टे० ॥ हाथ कमंडल बगलमें सोटा, चारों मुलक जगीरी ॥ दिल अंदर दीदार करोगे, आठों, पहर हजूरी ॥ रूखा सूखा साग अलोना

टुकरा, राखत सदक सबूरी ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधो, जोगियाको जुगत जहूरी ॥

शब्द ३३८–जग देखा ठाठ तम्बूरेदा । पांच तत्त्वका बना तँबूरा, त्रिगुन तार सहूरेदा ॥ टे० ॥ बाजत है पर दीसत नाहीं, इस मनही सहूरेदा ॥ टुट गये तार उखड गई खूंटी, मिल गये धूरम धूरेदा ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधो, साहेब हाल हजूरेदा ॥

शब्द ३३९–सौदा कर सोई जाने, कायागढ खूब बजार ॥ ॥ टे० ॥ या काया गढमें हाट लगी है, लालच लोभ दलाल॥ या काया गढमें हीरा मोती, परखेगा परखनहार ॥ या काया गढमें काजी मुलना, निशदिन करत पुकार ॥ या काया गढमें धनी बिराजे, तृनके ओट पहार ॥ या काया गढमें सात समुंदर, कोइ मीठा कोइ खार ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधो, गुरु बिन जग अंधियार ॥

शब्द ३४०–मेरा दिल साहेब जाने गूदरिया गलतान ॥टे०॥ पांचतत्त्वकी बनी गुदरिया, परी रहै मैदान ॥ अछै वृच्छ तर आसन मारा, गुरु मूरतको ध्यान ॥ अर्ध उर्ध बिच डोरी लागी, अनहद चढी कमान ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधो, पाया पद निरबान ॥

शब्द ३४१–चितवत चितवत नैन दुखित भये, अजहुं न आये साजनवा ॥ टे० ॥ निहारे बार अपार भई, सखि छूटो शिंगार सब दरपनवा ॥ पियाकी सोच रमोरी मनमें परी, सखि नीको न लागे जेवनवा ॥ एक पग ठाढी तोहे मनाऊं, ठाढी पछताऊं सखि आंगनवा ॥ धरमदासकी अरज गोसाईं, गावत पद सखी निरगुनवा ॥

शब्द ३४२-ना कीन्हा तैने हरिका सुमरन, सब दिन यो ही गयेरे ॥ टे० ॥ बालापन तो खेल गमाये, अबतो तरुन भयेरे ॥ वृद्ध भये कफ वायने घेरे, दुख नहिं जात सहेरे ॥ चार पहर धंधेमें खोये, अबतो सांझ भयेरे ॥ का गफलतमें सोता प्रानी, संगी निकस गयेरे ॥ मूंड मुंडाये जटा बढाये, जोगी राज भयेरे ॥ परमारथकी राह न जानी, अध बिच लटक रहेरे ॥ सुंदर देह देख मत भूलो, नाहक भार भरेरे ॥ कहै कवीर सुनो भाइ साधो, तेरी जननी बोझ मरेरे ॥

शब्द ३४३-सखी सुन सतगुरु तान, नींद नहिं आती बिरहा-पर सूरति गयी पछारे खाती ॥ टेक ॥ सखी हिरदे भयो अंधियार भरमकी राती ॥ सखी बिना नाम अंजार होत कस पातो ॥ सखि नैन सैनसे खोज पिया ढूँढलाती ॥ सखी पिया मिले सुख चैन नाम गुन गाती ॥ सखी मान सरोवर चल हंसनके पांती ॥ छबि देखत भये निहाल काल पछताती ॥ सखी जरा मरनके बात सबे मिट जाती ॥ जो धर्मनि कहें पुकार सीप मिल स्वाती ॥

शब्द ३४४-सोला कला मन बिचार देखो पद पावे निर-बानीं ॥ टे० ॥ पहिले कलामें, बुंद डारदे दूजे धूर जमाई ॥ तीजे कलामें अंग फरूके चौथे मिट्टी बनाई ॥ पांचे कलामें पांचों मिल गये, आठे आगम जानी ॥ नवे कला नौखंड बिराजे, दसएँदस दरवाजा ॥ इग्यारहें कलामें साहेब राजी, बारह बाजत बाजा ॥ तेरह कलामें तिरगुन मिल गये चौदसजासी ॥ पूनो प्याला पूरन पाये, कहें कवीर अविनाशी ॥

शब्द ३४५-बाबा कवीर गुरु पूरा है ॥ टे० ॥ पूरे गुरुके जाउँ बलिहारी, जाका सकल जहूरा है ॥ सबमें व्यापक सबते

न्यारा, हरदम रहत हजूरा है ॥ स्वेत ध्वजा फहरात गगनमें, बाजत अनहद तूरा है ॥ नाम कबीर जपे जन सूरा, नानक चरनके धूरा है ॥

शब्द ३४६-कर नैनो दीदार महलमें प्यारा है ॥ टे० ॥ नौ दरवाजा परगट दीसे, दसवां द्वारा मूंद कुलफ जडतारा है ॥ उलट सर्पनी गगन सँवारै, षटचक्रकी सोध बिचारे मेरु डंडपर सीधा पवन दो धारा है ॥ चंद सूर दोउ एक घरलावे, सुषुमन सेती ध्यान लगावे, तिरबेनीके घाट उतर भौपार है ॥ गगन मँडलमें उर्ध मुख कूवा, सूरा होयसो भरभरपीवा, निगुरा जात पियासे, हिये अंधियारा है ॥ नेती धोती वस्ती पाई, आसन पवन जुगत ठहराई, गम घोडा असवार, भरमसे न्यारा है ॥ शब्द विहंगम चाल हमारी, कहें कवीर सतगुरु ले तारी, खुलगइ भरम किंवारी, सार शब्द झनकारा है ॥

शब्द ३४७-जबसे मन परतीत भई । मेरे गुरुने सजीवन मूरदई ॥ टे० ॥ दिन दिन औगुन छूटन लागे, बाढन लागी प्रीति नई ॥ पावे दाव भाव बन आवे, मिलगये सतगुरु साहेब सही ॥ सुरति निरति दोय ज्ञान जौंहरी, निरख परखके वस्तु लई ॥ थोरे बनज लाभ भो भारी, उपजन लागे लाल मई ॥ मानकपुरमें मोती उपजे, हीरा नगसो भेट भई ॥ आगम निगम नित खोज निरंतर, गुरुने नाम निज वस्तु दई ॥ सुखसागर असनान जो करले, स्वात बूंद सो भेट भई ॥ कहें कवीर सुनो भाई साधो, हती बिकार सो दूर गई ॥

शब्द ३४८-बालापन वांके बतिया हंसा सुध करो ना॥टे०॥ दसो दिशाके गम जहां नाहीं, संकट परे दिन रतिया ॥ बारबार तुम कौल किये हौ, बसुधामें करव भगतिया ॥ गरभहिसे

बाहिर प्रभु कीन्हा, माया घेरे दूनो अंखिया ॥ पांच पचीस कंठ चढ बैठे, परले तू मौज लफसिया ॥ बालापन बलहीमें बीते, तरुनीमें कडके छतिया ॥ काम क्रोध दस इंद्री जागे, ना सूझे जात न पतिया ॥ अंतसमैं में जान परी है, जब जम घेरे दुरिया ॥ देवा देवी एको ना लागे, झूंठी होवे जडियासे बुटिया॥ केसो दुख समुझके गावे, गुरुजीसे करे बिनवतिया ॥ श्याम बिहारी समुझके चेतो, अंतमें कोऊ ना संघतिया ॥❀

शब्द ३४९ तुम कौन हो मियां कहांके ॥टे०॥ कहांसे आये कहां जावोगे, किनने भेजा कौन काम है, नई नगरिया झांके॥ आतेही तुम रोय दिया, का लायेथे सो खोय दिये, किस जिगरमें हो किस फिकरमें हो, आंखे खोलो का ढाँके ॥ वतन तुम्हारा कौन ठामहै, बडा शहर वोहै कोई गाम । उत्तर दखिन पूरव पश्चिम, नैरितके हो ईशानके ॥ आये हो इस नगरीमें, कुछ मौज साईका सुख देखो. अब ऐसी ना कीजिये, ना ईहांके हो ना उहांके ॥ हिंदू या मुसलमीन हो, दुनियां दार फकीर नदान, कहें कबीर सुनो भाइ साधो, तिरछे हो के वांके ॥

शब्द ३५०—हम तो सदा बने रंगलाल । लंडी दौलत का है पाल ॥टे०॥ चार खूंट जागीर हमारी, गल बिच तुलसी माल॥ काम धाम सब लिया बगलमें, कोई न पावे हाल ॥ अन जल आटा सब कुछ मिलता, घी गुड चावल दाल ॥ बहुत खजाना पास भरा है, देता है गोपाल ॥ खुसीसे भिक्षा लेते है हम, नासिर फोरी चाल ॥ साई खातर लिया फकीरी, झूठी माया जाल ॥ दया धरम कुछ करले बंदे, निकल जायगी खाल ॥ जितनी संपत उतनी बिपत, नाहक बजावे गाल ॥ सत्तनामका दिया है डंका, हाथ जोडता काल ॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधो, लगा भजनका ढाल ॥

शब्द ३५१-कोन गुरु कालसो बांचे। जोतसरूपी नाथ बनाये, तामो सब नाचे॥ टे०॥ इछा सुरती जपते उपजी, भई जगत कांचे॥ सत्तर जुग गये एक पलमें, ताही ब्रह्मा राचे॥ कर षट दरशन चार संपदा, सब जगको बांधे॥ एकइस पुरी अखंड बसुधा, को कहु कैसे नाधे॥ दान पुन्यका बडा भरोसा, या जुगमें सांचे॥ पंडराजसे को बड़ दानी, दुंदकाल महँ फांसे॥ केवल ब्रह्मको सबे भुलाने, चले जोत जांचे॥ अंधधुंधमें सुरति भुलाने, फिर भागे पीछे॥ घाटे घाटे चौकी बैठी, कठिन काल ग्रासे॥ शब्द बिना कोइ जान न पावे, ताहि पकर तरासे॥ जोतके आगे सतगुरु साहेब, अजर अमर सांचे॥ कहें कबीर हम आवें जावें, हंस लिये साथे॥

शब्द ३५२-कोई सफा न देखा दिलका। कहीं कुत्ता कहीं बकुली देखा, कहीं साप देखा बिलका॥ टे०॥ कहीं पंडित कहीं काजी देखा, मुलना देखा अकिलका॥ कहीं पूरब कहीं पश्चिम देखा, उत्तर देखा दखिनका॥ ऊपर मनसे कथनि कहत है, भीतर गोला पथरका॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधो, एही हाल खिलकतका॥

शब्द ३५३-काया नगरीमें कोनसा पुरुष॥ टेक॥ आपहि गरजे आपहि बरसे, आपहि पवन झकोरता फिरत॥ आपहि माली आप बगीचा, आपहि कलियां तोरता फिरत॥ आपहि तखरी आपन राजी, आपहि सब जग तौलता फिरत॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधो, आपहि घट घट बोलता फिरत॥

शब्द ३५४-मेरा हीरा हेरागये कचरेमें॥ टेक॥ कोई पूरब कोई पछिम बतावे, कोई बतावे पानी पथरेमें॥ पंडित वेद पुरान बतावे, उरझ रहे जग झगरेमें॥ सुर नर मुनि और पीर

औलिया, भूल गये सब नखरेमें ॥ धर्म दास गुरु हीरा पाये, बांध लिये निज अँचरेमें ॥

शब्द ३५५-गरीबी है सबमें सिरदार ॥ टे० ॥ उलटके देखो ज्ञान गरीबी, जाकी पैनी धार ॥ भौं भंजन सुखदायक जनको, कहर बिडारन हार ॥ सतयुग त्रेता द्वापर कलियुग, परलै टारन हार ॥ कहें कबीर सुनो भाइ साधो, हंस उबारन हार ॥

शब्द ३५६-छकोरे मन गगन गली, जहां बजत बीन सुर झीनी ॥ टे० ॥ रुनक झुनक अनहद धुन गरजे, झिलमिल दरसे जोती ॥ बिन बादल जहां बिजली चमके, वरषत हीरा मोती ॥ अधर देहरा अधर पुजारी, अधरे सकल बनाया ॥ अधर बैठ मन निहचल कीजै, ब्रह्ममें जीव समाया ॥ स्वेत सिंहासन स्वेत छत्र सिर, स्वेत ध्वजा फहराई ॥ हरो लाल पीरो असमानी, बहुरंगी दरसाई ॥ साहब मोमैं मैं साहबमें, झिल मिल दरसे नूर ॥ कहें कबीर दया सतगुरुकी, बैठे हाल हजूर ॥

शब्द ३५७-मेरे दिलदा सौख फकीरी । धन सतगुरु उपदेश दियो है, सुरति भई मेरी थोरी ॥ टेक ॥ सुन्न सिखर पर गजल संगीता, रहता सत्त सबूरी ॥ सत्त अवाज करो दरगाहमें, भिछा मिले भरपूरी ॥ पांच उमराव हजूर बंदगी, आठो पहर उजीरी ॥ अजब ख्याल देखा दरगाहमें, बाजे रबाब नफीरी ॥ काम क्रोध दोनों दल जीते, दृढ आसन तत सीरी ॥ सब घट साहेब समकर जाने, ऐसी रहन गंभीरी ॥ मांगो न भीख डरो ना, दो मेरे दिलकी सीरी ॥ कहें कबीर दया सतगुरुकी, सहज भई घर मेरी ॥

शब्द ३५८-तेरे कायामें गुलजार, बागों मत जा रे ॥ टेक ॥ मन माली परमोधके, संजमकी कर बार ॥ दया पौद सूखे नहीं, क्षमा शील जड डार ॥ करनी क्यारी बोइये, रहनी कर रखवार ॥

दुरमतिका गढ ढायकै, देखो अजब बहार॥ चित्त चमनके बागमें, फूलरही फुलवार॥ मुक्ति कली सदा खिलरही, पहिर गुंज गल-हार ॥ अष्ट कमल दल ऊपरे, शोभा अगम अपार ॥ कहें कबीर चित्त चेतियो, आवागवन निवार ॥

शब्द ३५९-संतो सुनत ज्ञान गलताना। अब सो पद पदहि समाना॥टे०॥ अगम भूमिसों सतगुरु आये, रूप धरे कुरमाना॥ ढूंढत ऊंट महलमें डोले, बूझत साह बिहाना ॥ या तो महल हमारा है रे, तैं पंथी कित आना ॥ दूजे रूप खवास धरे जब, फूलन सेज बिछाना॥ कोडा तीन मार तिन खायो, मारत चोट हेवाना ॥ कहे खवास सुनो इब्राहिम. कैसे खलक पत खाना ॥ एक घडी सेज्यापर पौढे, तनकी चाम उडाना॥ हेत हुशन सब दूर हुये हैं, दरस तखत हीराना ॥ गैब खवास भये तिहिं वारी, कंपन लगे पराना॥ उतरी चीरी भई फकीरी, फारा तोसे खाना॥ मखमल खासा दूर बहाये, अलफी पहिर निमाना॥ सोला सहस सहेली छांडी, अठारा लाख तुराना ॥ सतगुरु शब्दे लई फकीरी, हरखित तजे निशाना ॥ हीरा मोती मुक्ता त्यागे, अरबों खरब खजाना ॥ सत्तर खान उमराव बहत्तर, तजे अमीर मस्ताना ॥ मेवा पान मिठाई त्यागे, अमृत भोजन खाना ॥ नंगे पैरों भये पयादे, इब्राहीम सुलताना॥ चढत गयंद इंद्रके नांई, सूरज अस्त छिपाना ॥ सैना सकल भीर दल बादल, गरद उडे असमाना॥ दसों दिशा मक्काको फेरा, चरनों बांध कुराना॥ दास गरीब कबीर पुरुषने, अमर किये सुलताना ॥ ❀

शब्द ३६०-अवधू जोग अध्यातम जोई। एकै ब्रह्म सकल घट दरसे, और न दूजा कोई॥टेक॥ प्रथम कमल जान चतुरदल, देव गनेसको बासा॥ रिधि सिधि दोय संग उपासे, जाप छैसो

परगासा ॥ षट दल कमल ब्रह्माको बासा, सावित्री संग सेवा ॥ षट सहस्र जाको जाप जपत है, इन्द्र सहित सब देवा ॥ अष्ट दल कमल हरि संग लछमी, तीजै सेवक पौना ॥ षट सहस्र जाको जाप जपत है, मिट गये आवागौना ॥ द्वादस दल कमल शिवको बासा, पारबती संग सेवा ॥ षट सहस्र जाको जाप जपत है, लखो ज्ञानके भेवा ॥ षोडस कमलमें जिवको बासा, सकती अद्या जानी ॥ एक सहस्र जाको जाप जपत है, ऐसा भेद बखानी ॥ त्रिदल कमलमें सरस्वति बासा, उज्वल कमल निवासा ॥ एक सहस्र जाको जाप जपत है, होय ज्ञान परकासा ॥ भँवर गुफा जहां दोय दल कमला, परम हंसको बासा ॥ सहस्र जाको जाप जपत है, करम भरमको नासा ॥ सहस्र दल कमलमें झिलमिल दरसे, आपहिं ईश अपारा ॥ जोति सरूप सकलमें वरते, अलख निरंजन सारा ॥ सुरति कमल सतगुरुको बासा, एक जाप जपे सोई ॥ छैसो इकईस जाको जाप जपत है, चीन्हे बिरला कोई ॥ जो चीन्हे सो गुरुमुख होवै, भेद अगोचर भाई ॥ जो गुरुमुख सो शब्दहिं पावे, कहें कबीर समुझाई ॥

शब्द ३६१-सुरत मेरी नामसे अटकी ॥ करम भरम औ वेद बडाई, या फल सो सटकी ॥ टेक ॥ नामके चूके पार न पैहो, जैसे कला नटकी ॥ जागत सोवत सोवत जागत, मोहि परे चटसी ॥ जैसे पपिहा स्वात बूंदको, लाग रही रटसी ॥ भरमकी मटकी शिरके ऊपर, सो मटकी पटकी ॥ हम तो आपनि राह चलत हैं, औरनको उटकी ॥ प्रीति पुरानी नई लगन है, या दिलमें खटकी ॥ और नजर कछु आवत नाहीं, ना माने हटकी ॥ प्रेमकी डोरी मो मन लागी ज्ञान, डोर झटकी ॥ जैसे सरिता सिंधु समानी, फेर नहीं पटकी ॥ गहो निजनाम खोज हिरदैमें, चीन्ह परे घटकी ॥ कहें कबीर सुनो भाई साधो फेर, नहीं भटकी ॥

शब्द ३६२–सतगुरु अगमकी राह उघारी॥ टे०॥ जतन जतन कर तन मन साधो, सुखमन सुरति संभारी॥ मिट गइ तिमिर दरस भयो तिनको, पाइ परमपद भारी॥ हीरालाल जौहर तहां दरसे, हरदम नाम निहारी॥ निश दिन पल पल नाम सो लागे, ऐसो अमल करारी॥ महा बारीख मुकुतिको मारग, पच्छिम खुली किंवारी॥ नौपत नाम ध्वजा फहरावै, चढ गइ सुरत अटारी॥ याही चाल मिलो सतगुरुसो, मानो सीख हमारी॥ कहैं कवीर सुनो भाइ साधो, चेत लेहु नर नारी॥

शब्द ३६३–थोरे थोरे खाऊंगी, मैं अंत न जाऊंगी॥ गुरुके शब्द लेके सहज समाऊंगी॥ टेक॥ खाई मैं ननद दुलहे भुजा मरोरी सासु, मैं खाई दोय पग तोरी॥ खाऊं मैं देवर खाऊं मैं जेठ। पुनि मैं खाऊं ससुरा ठेठ॥ खाऊं मैं माई खाऊं मैं भाई। पुनि मैं खाऊं घरक जँमाई॥ खाऊं मैं पांच कुटुमके लोग। कहैं कवीर तब सीझा जोग॥

शब्द ३६४–हरि मोहिं एक अचंभा भावे। सासुको बहुवा खिलावे॥ टे०॥ बहुवाके घर ससुरा जाई। सासु बधैया ले घर आई॥ मूसाके सभा सरप एक नाचे, मैंडक ताल बजावे। कौवा बैठे सगुन बिचारे, भैंस बिसुन पद गावे॥ बिना बीजके बृच्छ लगाया बिन, पानी पलुवाया। ऊपर मूल नीचे भइ डारी, अमृत फूल फुलाया॥ कहैं कवीर सुनो भाइ साधो, जो या शब्द बुझावे। जो या पदको गाय बिचारे, सोई सदा रहावे॥

शब्द ३६५–नइया मेरी नीकी चलने लागी। आंधी मेह कछू ना व्यापे, चढे संत बड भागी॥ टेक॥ उथल परै तो डर कछु नाहीं, ना गहिरेका साँसा। उलट जाय तो बार न बाँका, याका अजब तमासा॥ औसर परे तो परबत बोझो, तेऊ न लागे भारी।

धन सतगुरु जे जुगति बताई, ताकी मैं बलिहारी॥ सार शब्दकी नइया बनी है, मोहकी मकरिया लाय। गुन सहासकी हाजत नाहों, ऐसा साज बनाय॥ कहै कबीर जो बिन शिर खेवै, सो यह संत बखाने। या वोहितकी अकथ कथा है, बिरले खेवट जाने॥

शब्द ३६६-मन मौजी बैरागी। आवना मन भावना॥टे०॥ पांच तत्त्वके या तन गुदरी, सुरतिकी तोप चलावना॥ इंगला पिंगला सुषुमन नारी, त्रिकुटी ध्यान बसावना॥ अनहद बाजा निश दिन बाजे, भँवर गुफा ठहरावना॥ गगन मंडलको किये पयाना, कहैं कबीर समुझावना॥

शब्द ३६७-बाबा शरनागत ताकी है॥ सुरति सोहागिन भई मतवाली, नाम सुधारस छाकी है॥ टेक॥ नाम अमोल अपार साहबका, ताहीके संग राची है॥ निरख परख चरनों चित लागे, उझक झरोखा झांकी है॥ अंतरगतिमें भई उजियारी बिन, दीपक बिन बाती है॥ कहैं कबीर सुमर सत नामैं, आदि अंतसो थाकी है॥

शब्द ३६८अहो कब मिलोगे सनेही आय॥टेक॥ चलो सखी जहां देखन चलिये, जहां पुरुष निरबान॥ हंस हिरंमर चौंर ढुरावे, तनकी तपन बुझान॥ चारों जुगके हंस उबारे, अजहुँ उबारे आय॥ जाकी सांची सुरति लगी है, सो वा घरको जाय॥ भौसागर औगाह अगम है, सूझे वार न पार॥ सतगुरु साहब हंस उबारन, बांह पकरके तार॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधो, शब्द रहो लौलाय॥ नाम पान पानी मिल लैहो, तब सतलोक सिधाय॥

शब्द ३६९-भला परदेसिया तू मेरी कही मान रे॥ टेक॥ जुगन जुगन तोहि कहि समझाऊं, आद संदेसी मोहि जान रे॥

त्रिगुन तत्त्व ता इक बावरे, कारजमें सकल जहान रे॥ पांच पचीस तोहि निशदिन व्यापे, ताको रंग पहिचान रे ॥ पांच पचीससो रहे निरंतर, पावे निरबान रे ॥ झिल मिल जोत झलक एक निर्मल, रंग सुरंगी जान रे॥ कहैं कवीर संत सोइ आला, जापर भगति निशान रे ॥

शब्द ३७०–गोरख हम तबसे भयेउं बैरागी। मेरी सुरति आदसे लागी ॥ टे० ॥ धुंधीकाल धुंधका मेला, नहीं गुरु नहिं चेला ॥ ताही दिन हम मूंड मुंडाये, जब वह पुरुष अकेला॥ धरती नहीं जब टोपी दीन्हा, ब्रह्मा नहीं तब टीका॥ महादेवका जनम नहीं हतो, जबते योग हम सीखा॥ सतयुगमें हम लीन फाउरी, द्वापर लीन्हें डंडा ॥ त्रेतामें हम आडबंद खैंचे, कलऊ फिरे नौखंडा॥ काशीमें बिसराम कियो है, रामानंद चेताया ॥ कहैं कवीर सुन गोरख जोगी, हंस उबारन आया ॥

शब्द ३७१–सुरतसो देखले वह देश। देखत देखत दीसन लागे, मिट गये सकल अंदेश ॥ टे० ॥ ना उहां चंदा ना उहां सूरज, नहीं पवन परवेश॥ ना उहां जाप नहीं उहां अजपा, नहिं अच्छर लवलेश ॥ उहांके गये बहुर ना आये, ना कोइ कहत संदेश ॥ कहे कवीर सुनो भाई साधो, गहु सतगुरु उपदेश ॥

शब्द ३७२–कोई कछु कहे दिल लागा है। तन भी लागा मन भी लागा, ज्यों सुई बिच धागा है ॥ टे० ॥ मेरे मन लागा नाम भजनमें, हटकत लोग अभागा है ॥ बरत अगिनमें कंचन डारे, सोनामें मिलत सोहागा है ॥ हंसकी बानी हंस पहिचाने, क्या जानेगा कागा है॥ कहैं कवीर सुनो भाइ साधो, जीव ब्रह्म होय जागा है ॥

शब्द ३७३-एक दिन साहब बेन बजाई ॥ टेक ॥ सब गोपी

मिल धोखा खाई, कहे जसोदाके कन्हाई ॥ कोई जंगल कोइ देवल बतावे, कोइ द्वारका जाई ॥ कोइ अकाश पताल बतावे, कोइ गोकुल ठहराई ॥ जमुना बिमल प्रवाह थकित भये, पवन रहे ठहराई ॥ सोरा बसुधा एकइश पुरलो, सब मुरछित होय जाई ॥ सात समुन्दर जबे घहराने, तेतिस कोट अघाई ॥ तीन लोक तीनो पुर थाके, इंद्र उठे अकुलाई॥ दस औतार कृष्नलौ थाके, कूर्म बहुत सुख पाई ॥ समुझ न वार पारलों, यह धुन कहांसे आई ॥ शेषनाग औ राजा वासुक, वाराह मुर्च्छित होय जाई ॥ देव निरंजन अद्या माया, ये इनहूं शिर नाई ॥ कहें कवीर सतलोकके पूरष, शब्द केर सुर नाई॥ अमी अंकते कुहुक निकारी, तीन लोक रहु छाई ॥

३७४-अपने पियाके मैं प्यारी सबसौं न्यारी ॥ टेक ॥ एक कंचन दूजे कामनी इन जग मोहा॥ ऐसा कोइ न देखिया इनते बांचा ओहा ॥ कामदेव एक भूप है सबको लागा ॥ केते तपसी बन गये बनमें जागा ॥ गोपीके कारन कृष्नजी बन बन नाचा॥ सीताके कारन राम रावन रन माचा॥ ब्रह्मलोक ब्रह्म डिगे कन्या मोहा ॥ सुर नर मुनि सब पच मरे बांधे लोहा ॥ गगन मंडल बिच बैठके, सुनले बाजा॥ कहें कवीर गुरु ज्ञानसे आतम जागा॥

शब्द ३७५-याद करो दिन बाद जाता है, सतगुरु शब्द सनेह बिना रे॥ टेक ॥ जठर अग्निमें बूंदे जमाया, पानीसे पिंड किया रचना रे॥ उहां तुझे खान पान पहुंचावे, ऐसो साहब है अपना रे॥ नौ दस मास गरभ प्रतिपाले, कर कर कोटि जतना रे॥ नाम लेत तोहि लाज लगत है, मायामें भूल रह्यो मना रे ॥ बालापनमें खेल गँवाये, तरुनामें कछु रूप बना रे॥ ब्रिध भये तन आलस उपजे, जीवन मरन रैन सपना रे॥ अवध घटे जब काल गरासे,

उठगये हाट तब कछु न बना रे ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधो, मूल गँवाय चले अपना रे ॥

शब्द ३७६-निज घर जान बेजाना। दगाबाज बटपार बटोही, इनका लगा जमाना ॥ टेक ॥ अपने दिलका कोइ न मिलिया, मिलिया लोग बिगाना॥ भूला लोग फिरे बेअक्कल, इनका नहीं ठिकाना॥ सेमर फूल जगत इक फूला, ताहि देख लोभियाना॥ मारत चोंच रुवा उधराने, फिर पाछे पछताना ॥ कहैं कबीर सुनो भाइ साधो, या पद है निरबाना ॥ जो या पदको समुझे बूझे, पहुँचे पुरुष ठिकाना ॥

शब्द ३७७-अब हम सोई परम पद जाना ॥ टेक ॥ ना उहां सिद्ध नहीं उहां साधक, दूसर कहत दिवाना॥ न उहां चंद नहीं उहां सूरज, ना रजनी ना भाना॥ मकरीको तार स्वेत है झीनी, तहां मेरो मन माना ॥ कहैं कबीर चीटीके खुरमें, पिंड ब्रह्मंड समाना ॥

शब्द ३७८-अजगैबी बंदा गैब नगरसे आया ॥ टेक ॥ गैबी आया गैबसे, इहां लगाया ऐब॥ उलट समाना गैबमें, छूट गया सब ऐब ॥ आप रहा जब रहा न कोई, एकहि एक कहाया ॥ जात बरन कुल रूप न रेखा, जिन यह राह चलाया॥ पांच तत्त्व गुन तीन ना पहुँचे, सो वह देश कहाया॥ ब्रह्मपुरीते इछा उलटी, निरगुन नाम धराया ॥ षट दरशनके बंद छुडाये, इब्राहिमहि चेताया ॥ कहैं कबीर सुनु गोरख जोगी, जिन ढूंढा तिन पाया॥

शब्द ३७९-जो बूझे सो बावरा। क्या उमर हमारी॥ असंख्य जुग आगे गये, तबके हम ब्रह्मचारी ॥ टेक॥ तीन देव जाने नहीं, सोई आदि हमारी॥ कोट आये परमातमा, परलोक सिधारी॥ हम तो सदा मौजूद है, प्रगटे जुग चारी ॥ कोटन ब्रह्मा हो गये,

दस कोट कन्हाई ॥ अनंत कोट विष्णु गये, मोरे एक पलाई ॥ सात कोट शंभू गये, मुहम्मद कोट चारी ॥ देवतनकी गिनती नहीं, का सृष्टि बिचारी ॥ बलि बावन केते भये, कौरव दल भारी ॥ लंकापति रावन गये, रघुपति कइ वारी ॥ ना बालक ना वृद्ध हों, ना पुरुष न नारी ॥ कहें कवीर सुन गोरख, यह उमर हमारी ॥

शब्द ३८०-तुज बिन मेरा कोई नहीं, मैं किसे भजोरे दिवाना ॥ टे० ॥ मूल कमल चौकी गनपतकी, सुध बुध सबैं हेराना ॥ लोक लाज कुल पांचो मिलिया, हिलमिल मंगल गाना ॥ नाभ कँमलते लहर उठत है, सुनियो संत सुजाना ॥ इंगला पिंगला सुषुमन नारी, उनमुनके घर लाना ॥ बंकनालते अमीरस झरिया, चाखे संत सयाना ॥ चंद सूर दोय आसन कीन्हे, अनहद घोर निशाना ॥ कहें कवीर सुनो भाइ साधो, तत्त भेद अब जाना ॥ जो कोइ होय नामका भेदी, नामहि सो लौ लाना ॥

शब्द ३८१-मेरे मन बस गये गगन अटरिया ॥ टेक ॥ गगन अटरिया पियाको बासा, ज्ञान पुरुष मठ धरिया ॥ जापर सुरस नगारा बाजे, उठत शब्द धुनकरिया ॥ त्रिकुटी महलमें ध्यान लगावे, जहां अमीरस झरिया ॥ कहें कवीर जेहि शब्द न वेधे, तापर हनत कटरिया ॥

शब्द ३८२-तैं व्रतधारी नामका, तोहे और न भावे । कांच बांधके का करें, कंचन जो पावे ॥ टे० ॥ जप तप तीरथ संजमा, कोई काम न आवे ॥ विषै पियासे ना बुझे, नल का समुझावे ॥ स्वात बुंदके कारने, चात्रिक लौ लावे ॥ सोई बुंद मोती भये, का सागर नावे ॥ राई ते लख नाम है, गुरुकृपा ते पावे ॥ कहें कवीर धावत वने, तो गरभ न आवे ॥

शब्द ३८३-देखो रे घट जंतर बाजे, कौन बजावन हारा ॥ टे० ॥

तनकी तांत सरंगी बाजे, केहि बिधि गावन हारा॥ उग्र गीता बांच सुनाऊं, जाने दास हमारा॥ टूटो तार फूटगो तूंबा, जंत्री होगये न्यारा॥ अपरंपार पार पुरुषोत्तम, ताका करो बिचारा॥ जंत्री बिना जंत्र ना बाजे, बाजे सोई बजावे॥ कहें कवीर सुनो भाइ साधो, शब्दमें सुरति समावे॥

शब्द ३८४-यह संसे मोहि निशदिन व्यापे, कोई ना कहे समुझाई॥ दीपक जोत औ प्रान आतमा, ना जानो कहां जाई॥ टेक॥ नाहीं ग्रह द्वार जहां नाहीं पांच तत्त्व जहां नाहीं॥ इंगला पिंगला सुषुमन नाडी, बिनसे कहां समाहीं॥ जल जरे तृण जहां बांचे, ले बैसंदर सीचे॥ भीतर मूल फूल फल बाहिर, समुझ परे कहु कैसे॥ सीखे सुने पढे का होई, जौलो पद ना परसे॥ कहें कवीर गगना बिनसे, ज्यों धागा उनमुनमें दरसे॥

शब्द ३८५-अपने साहबसों मिल रहिये॥ टेक॥ जो काहूकी भली न आवे, बुरी काहेको कहिये॥ जो कोइ संत मिले बड भागी, दुख सुख उनसो कहिये॥ जो कोई बादी बाद बढावे, चार बात सुन रहिये॥ कहें कबीर सुनो भाई साधो, गुरुके चरण चित गहिये॥

शब्द ३८६-मेरे मन लागा बान सुरंगी॥ टे०॥ जा तन लगी सोई तन जाने, का जाने जगत पतंगी॥ ध्यानका धनुष ज्ञानका तुक्का, घायल पांचों संगी॥ धन सतगुरु उपदेश दियो है, कीटते हो गये भृंगी॥ कहें कवीर सोई जन बिरही, निशदिन प्रेम उमंगी॥

शब्द ३८७-धन हो धन साहब बलिहारी। दाया कर जिव राख लिये हौ, सुनिये परम उपकारी॥ टे०॥ प्रथमैं प्रगट भये मथुरामें, तारे गोप गँवारी॥ विप्र मधूकर लोक पठाये, काल रह्या झक मारी॥ तक्षक आय डसे रानीको, बिषम चढे अति भारी॥

सुमिरत प्रगट भये द्वापरमें, लीन्हे हंस उबारी ॥ एक समैं हरि जाचन आये, लीन्हा बसन उतारी ॥ अंमर देत बार ना लाये, राखे लज्जा भारी ॥ पांडव यज्ञ सुफल ना होने, बहुतक जुरे अचारी ॥ तुमरे भक्त जब ग्रास उठाये, अधर घंट झनकारी ॥ हरिके मंदिर उठे न पावे, सिंधु लहर अधिकारी ॥ शब्द देयके सिंधु हटाये, कृतम चले संसारी ॥ साह सिकन्दर कसनी लीन्हा, अगिनमें दिये झुकाई ॥ मस्ता हाथी आन झुकाये, सिंहरूप दिखलाई ॥ मगहर जाय लीला एक कीन्हा, हिंदू तुरुक व्रतधारी ॥ दोनों दीन प्रतिज्ञा दीन्हे, मिट गये झगरा भारी ॥ काशी प्रगटे हांसी कराये, सँग गनिका मतवारी ॥ हरिके पंडा जरत उबारे, आपन चरन जल ढारी ॥ जो जस सुमरे तहां तस प्रगटे, काह पुरुष को नारी ॥ साह दमोदर बूडत बचाये, राखे सिंधु मझारी ॥ जो जो सरन गहे सतगुरुकी, जिन जन सुरति संभारी ॥ धर्मदासपर दाया कीन्हे, राज दिया लिख भारी ॥ जो सुमरे तेहि लोक पठाये, धर्मनि कहे पुकारी ॥ साहब कबीर परम सुखसागर, हमहूको लेव उबारी ॥

शब्द ३८८-लखे कोई बिरला पद निरबान ॥ टे० ॥ करम काट जब भरम नशान ॥ सतगुरु चरन कमल धर ध्यान ॥ बिन रसनाके अंतर ध्यान ॥ ता बिच दरसे पुरुष पुरान ॥ तीन लोकमें काल समान ॥ चौथे लोकमें नाम निशान ॥ रामानंद गुरु कीन्ह बखान ॥ साहेब कबीरके निरमल ज्ञान ॥

सत्यनाम ।

अथ शब्द बीजक प्रारम्भः ।

शब्द ३८९-संतो भगति सतो गुरु आनी । नारी एक पुरुष दुइ जाये, बूझहु पंडित ज्ञानी ॥ टे० ॥ पाहन फोरि गंग यक निकरी,

चहुँ दिशि पानी पानी। तेहि पानी दुइ परबत बूडे, दरिया लहरि समानी॥ उडि मक्खी तरवरको लागी, बोलै एकै बानी। वहि मक्खीके मक्खा नाहीं, गरभ रहा बिन पानी॥ नारी सकल पुरुषहिं खायो, ताते रही अकेला। कहहिं कबीर जो अबकी समुझे, सोई गुरु हम चेला॥ १॥

शब्द ३९०–संतो जागत नींद न कीजे। काल न खाय कल्प नहिं व्यापै, देह जरा नहिं छीजे॥ टे०॥ उलटि गंग समुद्रहि सोखै, शशि औ सूर ग्रासै। नौ ग्रह मारि रोगिया बैठे, जलमें बिंब प्रकाशै॥ बिन चरननको चहुँ दिशि धावै, बिन लोचन जग सूझै। ससा उलटि सिंहको ग्रासै, ई अचरज को बूझै॥ औंधे घडा नहीं जल बूडे, सीधे सो जल भरिया। जेहि कारन नर भिन्न भिन्न करै, गुरु प्रसादसे तरिया॥ पैठि गुफामें सब जग देखै, बाहर कछुव न सूझै। उलटा बान पारथिहिं लागै, सूरा होय सो बूझै॥ गायन कहै कबहुं नहिं गावै, अनबोला नित गावै। नटवत बाजा पेखनी पेखै, अनहद हेत बढावै॥ कथनी वदनी निज कै जोहै, ई सब अकथ कहानी। धरति उलटि अकाशहिं वेधे, ई पुरुषन की बानी॥ बिना प्याला अमृत अचवै, नदी नीर भरि राखै। कहैं कबीर सो जुग जुग जीवै, राम सुधारस चाखै॥२॥

शब्द ३९१–संतो घरमें झगरा भारी। राति दिवस मिलि उठि उठि लागैं, पांच ढोटा एक नारी॥ टे०॥ न्यारो न्यारो भोजन चाहैं पांचौ अधिक सवादी। कोइ काहूकों हटा न मानै आपुहिं आप मुरादी॥ दुर्मति केर दोहागिनि मेटै ढोटे चांप चपेरे। कहहिं कबीर सोइ जन मेरा घरकी रार निवेरे॥३॥

शब्द ३९२–संतो देखत जग बौराना। सांच कहौं तो मारन धावै झूठे जग पतियाना॥टे०॥ नेमी देखे धरमी देखे प्रात करै

अस्नाना। आतम मारि पखानहिं पूजे उनमें कछूव न ज्ञाना॥ बहुतक देखा पीर औलिया पढे किताब कुराना। करि मुरीद तदबीर बतावै उनमें इहै जो ज्ञाना॥ आसन मारि डिम्भ धरि बैठे मनमें बहुत गुमाना। पीतर पाथर पूजन लागे तीरथ गरब भुलाना॥ माला पहिने टोपी दीन्हे छाप तिलक अनुमाना। साखी शब्दै गावत भूले आतम खबरि न जाना॥ हिंदू कहै मोहि राम पियारा तुरक कहै रहिमाना। आपसमें दोउ लरि लरि मूये मरम न काहू जाना॥ घर घर मंत्र जे देत फिरत हैं महिमा के अभिमाना। गुरुवा सहित शिष्य सब बूडे अंतकाल पछिताना॥ कहहिं कवीर सुनो हो सन्तो ई सब भरम भुलाना। केतिक कहौं कहा नहिं मानै सहजै सहज समाना॥ ४॥

शब्द ३९३-सन्तो अचरज एक भौ भाई। कहौं तो को पतियाई॥ टे०॥ एकै पुरुष एक है नारी ताकर करहु विचारा॥ एकै अंड सकल चौरासी भरम भूल संसारा॥ एकै नारी जाल पसारा जगमें भयो अंदेसा। खोजत काहू अंत न पाया ब्रह्मा विष्णु महेशा॥ नाग फांस लिये घट भीतर मूसि सकल जग खाई॥ ज्ञान खड़्ग बिनु सब जग जूझै पकरि काहु ना पाई॥ आपहि मूल फूल फुलवारी आपुहि चुनि चुनि खाई। कहहिं कवीर जन उबरे जेहि गुरु लियो जगाई॥ ५॥

शब्द ३९४-सन्तो अचरज एक भौ भारी, पुत्र धरल महतारी॥ टे०॥ पिताके संग भई बावरी कन्या रहल कुमारी॥ खसमहि छोडि ससुर संग गवनी सो किन लेहु बिचारी॥ भाई के संग सासुर आई सासु सौतिया दीन्हा। ननद भौज परपंच रच्यो है मोर नाम कहि लीन्हा॥ समधीके संग नाहीं आई

सहज भई घरूवारी। कहहिं कबीर सुनो हो सन्तो पुरुष जनम भौ भारी ॥ ६ ॥

शब्द ३९५–सन्तो कहौं तोको पतियाई। झूंठा कहत सांच बनि आई ॥टे०॥ लोके रतन अवेध अमोलिक नहिं गाहक नहिं साई। चिमिक २ चमकै दृग चहुँ दिशि अरब रहा छरियाई ॥ आपहि गुरू किरपा कछु कीन्हा निरगुन अलख लखाई सहज समाधि उनमुनी जागै सहज मिले रघुराई ॥ जहँ जहँ देखो तहँ तहँ सोई मन मानिक बेध्यो हीरा। परम तत्त्व यह गुरू सो पायो कहै उपदेश कबीरा ॥ ७ ॥

शब्द ३९६–सन्तो आवै जाय सो माया। है प्रतिपाल काल नहिं वाके ना कहुं गया न आया ॥ टे० ॥ क्या मकसूद मच्छ कच्छ होना संखासुर न संहारा। अहै दयाल द्रोह नहिं वाके कहो कौन को मारा॥ वै कर्ता नहिं बराह कहावै धरनि धरै नहिं भारा॥ई सब काम साहेबके नाहीं झूंठ कहै संसारा ॥ खंभ फोर जो बाहर होई ताहि पतीज सब कोई॥ हिरनाकुश नख उदर विदारे सो नहिं करता होई बावन रूप न बलिको जांचे जो जांचे सो माया। विना विवेक सकल जग जहँडे माये जग भरमाया॥ परशुराम छत्री नहिं मारा ई छल मायहिं कीन्हा। सतगुरू भगति भेद नहिं जानै जीव अमिथ्या दीन्हा ॥ सिरजन हार न व्याही सीता जल पषान नहिं बधा। वै रघुनाथ एककै सुमिरै जो सुमिरै सो अंधा ॥ गोपी ग्वाल गोकुल नहिं आये करते कंस न मारा। है मिहरबान सबनको साहेब नहिं जीता नहिं हारा ॥ वै करता नहिं बौध कहावै नहीं असुरको मारा॥ ज्ञान हीन करता कै भरमें माया जग संहारा ॥ वै कर्ता नहिं भये निकलंकी, नहिं कलिगहि मारा। ई छल बल सब मायै कीन्हा, जत्त सत्त सबटारा॥

दस औतार ईसरी माया कर्ता कै जिन पूजा। कहहिं कबीर सुनौहो सन्तो उपजे खपै सो दूजा ॥ ८ ॥

शब्द ३९७-सन्तो बोले ते जग मारै। अनबोलेते कैसे के बनिहै शब्दै कोइ न विचारे ॥ टे० ॥ पहिले जन्म पहिले जनम पूतको भयऊ बाप जनमिया पाछे ॥ बाप पूतकी एकै नारी ई अचरज को काछे ॥ उंदुर राजा टीका बैठे विषहर करै खवासी। स्वान बापुरा धरनि ढाकनो बिल्ली घरमें दासी ॥ कार दुकार कार करि आगे बैल करै पटवारी॥ कहहि कबीर सुनो हो सन्तो भैसे न्याव निवारी ॥ ९ ॥ १ पाठ भेद-(कागज कार कारकुड आगे बैल करे पटवारी)

शब्द ३९८-सन्तो राह दुनो हम दीठा। हिन्दू तुरक हटा नहिं मानै स्वाद सबनको मीठा ॥ टे० ॥ हिन्दू बात एकादशी साधै दूध सिंघाडा सेती ॥ अनको त्यागे मन नहिं हटके वारन करै सगौती ॥ तुरुक रोजा निमाज गुजारै बिसमिल बांग पुकारै। उनकी भिस्त कहांसे होइहैं सांझै मुरगी मारैं ॥ हिंदूकी दया मेहर तुरकनकी दोनों घटसो त्यागी। वे हलाल वे झटका मारैं आगि दुनों घर लागी। हिंदू तुरुककी एक राह है सतगुरु इहै बताई। कहै कबीर सुनो हो संतो राम न कहौ खुदाई ॥ १० ॥

शब्द ३९९-संतो पांडे निपुन कसाई। बकरा मारि भैंसापर धावै दिलमें दरद न आई ॥ टे० ॥ करि अस्नान तिलक दै बैठे विधि सो देवि पुजाई। आतम राम पलकसो विनशे रुधिरकी नदी बहाई ॥ अति पुनीत ऊंचे कुल कहिये सभा माहि अधिकाई। इनते दिच्छा सब कोई मांगे हंसि आवै मोहिं भाई ॥ पाप कटनको कथा सुनावै कर्म करावै नीचा। बूड़त दोऊ परस्पर देखा गहे हाथ जम घीचा ॥ गाय बधे तेहि तुरका कहिये

उनते क्या वे छोटा। कहहिं कवीर सुनो हो संतो कलिके ब्राह्मण खोटा ॥ ११ ॥

शब्द ४००–संतो मते मात जन रंगी। पीवत प्याला प्रेम सुधारस मतवाले सतसंगी ॥ टे० ॥ अरध उरध लै भाठी रोपी ब्रह्म अग्नि उदगारी। मूंदे मदन कर्म कटि कस्मल संतत चुवै अगारी ॥ गोरख दत्त वशिष्ठ व्यास कवि नारद सुक मुनि जोरी, सभा बैठि शम्भू शनकादिक तहं फिरि अधर कटोरी ॥ अम्बरीष औ जाज्ञ (वल्क) जनक जड़ सेष सहस मुख पाना। कहंलौं कहौं अनन्त कोटि लै अमहल महल दिवाना ॥ ध्रुव प्रह्लाद विभीषन माते माती शिवकी नारी। सगुन ब्रह्म माते वृन्दावन अजहुं न छूटि खुमारी ॥ सुर नर मुनि जेते पीर औलिया जिनरे पिया तिन जाना, कहैं कवीर गूंगेकी सक्कर क्यों कर करै बखाना ॥ १२ ॥

शब्द ४०१–राम तेरि माया द्वन्द्व मचावै गति मति वाकी समुझ परै नहिं सुर नर मुनिहिं नचावै ॥ टे० ॥ क्या सेमरकी साखा बढये फूल अनूपम बानी। केतिक चात्रिक लाग रहे हैं चाखत रुवा उडानी ॥ कहा खजूर बडाई तेरी फल कोई नहिं पावै। ग्रीषम रितु जब आय तुलानी छाया काम न आवै ॥ अपना चतुर औरको सिखवै कामिनि कनक स्यानी। कहहिं कवीर सुनो हो सन्तो राम चरण रति मानी ॥ १३ ॥

शब्द ४०२–रामरा संशय गांठ न छूटै, ताते पकरि जम लूटै, ॥ टे० ॥ होय मिसकीन कुलीन कहावै तुम जोगी सन्यासी। ज्ञानी गुनी सूर कवि दाता ई मति काहु न नासी ॥ सुम्रिति वेद पुरान पढैं सब अनुभव भाव न दरसै। लोह हिरन्य होय धौं कैसे जो नहिं पारस परसै ॥ जियत न तरे मुयेका तरिहो जियतै

जो न तरै। गहि परतीति कीन जिन जासों सोई तहँ मरै॥ जो कछु कियो ज्ञान अज्ञाना सोई समुझ स्याना। कहैं कवीर तासों का कहिये देखत दृष्टि भुलाना ॥ १४ ॥

शब्द ४०३-रामरा चली बिनावन माहो। घर छोडे जात जोलाहो ॥ टे० ॥ गज नौ गज दस गज उनइसकी पुरिया एक तनाई। सात सूत नौ गाड़ बहत्तरि पाट लाग्यु अधिकाई॥ तापट तूल न गजन अमाई पैसन सेर अढाई। तामें घटे बढे रतिओ नहीं करकच करध रहाई॥ तिन उठि बैठ खसम सो बरबस तापर लाग्यु तिहाई। भीनी पुरिया काम न आवे जोलहा चला रिसाई॥ कहैं कवीर सुनो हो सन्तो जिन यह सृष्टि उपाई, छाड़ि पसार राम भजु बौरे भवसागर कठिनाई ॥ १५ ॥

शब्द ४०४-रामरा झीझी जंतर बाजै। कर चरन बिहूना राजे ॥ टे० ॥ कर विनु बाजे सुने सरवन विनु सरवनै सरोता होई। पाटन स्ववस सभा विनु अवसर बूझे मुनि जन लोई॥ इंद्रि विनु भोग स्वाद जिह्वा विनु अछय पिंड विहूना। जागत चोर मंदिर तहँ मूसे खम्भ अछत घर सूना॥ बीज विनु अंकुर पेड़ विनु तरुवर विनु फूले फल फलिया। बांझके कोख पुत्र अवतरिया विनु पग तरुवर चढिया॥ मसि विनु द्वाइत कलम विनु कागज विनु अच्छर सुधि होई। सुधि विनु सहज ज्ञान विनु ज्ञाता कहैं कवीर जन सोई॥ १६ ॥

शब्द ४०५-राम गाइ औरन समुझावे, हरि जाने विनु विकल फिरै ॥ टे० ॥ जा मुख वेद गायत्री उचरे तासु वचन संसार तरै॥ जाके पांव जगत उठि लागे सो ब्राह्मन जिव बद्ध करै॥ अपना ऊंच नीच घर भोजन घीन कर्म करि उदर भरै। ग्रहन अमावस ढुकि ढुकि मांगै कर दीपक लिये कूप परै॥ एकादशी व्रतौ

नहिं जानै भूत प्रेत हठि हृदय धरै। तजि कपूर गांठी विष बांधै ज्ञान गंवाय मुग्ध फिरै ॥ छीजै साहु चोर प्रतिपालै संत जनन की कूट करै। कहहिं कबीर जिह्वाके लम्पट यहि विधि प्रानी नरक परै ॥ १७ ॥

शब्द ४०६-रामगुन न्यारो न्यारो न्यारो। अबुझा लोग कहां लौ बूझैं बूझनहार विचारो। केते रामचन्द्र तपसी सो जिन यह जग विटमाया ॥ केते कान्ह भये मुरलीधर तिन भी अन्त न पाया॥ केतिक सिध साधक संन्यासी जिन बनबास बसाया॥ केते मुनि जन गोरख कहिये तिन भी अंत न पाया ॥ जाकी गति ब्रह्मै नहिं पाई शिव शनकादिक हारे। ताके गुन नर कैसे पैहो कहे कबीर पुकारे ॥ १८ ॥

शब्द ४०७-ए तत राम जपो हो प्रानी तुम बूझा अकथ कहानी। जाको भाव होत हरि ऊपर, जागत रैन बिहानी॥टे०॥ डाइनि डारे सोनहा डोरे सिंह रहे बन घेरे। पांच कुटुम्ब मिलि जूझन लागे बाजन बाज घनेरे ॥ रोहु मिरगा संशय बन हांके पारथ बाना मेलै ॥ शायर जरै सकल वन डाहे मच्छ अहेरा खेलै ॥ कहैं कबीर सुनो हो संतो जो यह पद निरवारै। जो यह पदको गाइ विचारे आपु तरै अरु तारै ॥ १९ ॥

शब्द ४०८-कोइ राम रसिक रस पियहुगे सुख जियहुगे ॥ टे० ॥ फल अंकृतै बीज नहिं बोकला सुक पंछी रस खाई। चुवै न बुंद अंग नहिं भीजै दास भँवर सँग लाई॥ निगम रसाल चारि फल लागै तामें तीन समाई। एकहै दूरि चहै सब कोई जतन जतन कोई पाई ॥ गयउ बसंत ग्रीषम ऋतु आई बहुरि न तरुवरतर आवै। कहै कबीर स्वामी सुख सागर राम मगन ह्वै पावै ॥ २० ॥

शब्द ४०९-राम न रमसि कौन दंड लागा। मरि जैबेका करिबे अभागा ॥ टे० ॥ कोइ तीरथ कोइ मुंडित केशा। पाखंड भरम मन्त्र उपदेशा ॥ विद्या वेद पढि कर हंकारा। अन्तकाल मुख फांकै छारा ॥ दुखित सुखिन सब कुटुम्ब जिवैवै। मरन बेर अकसर दुख पैवै। कहँ कबीर यह कलि है खोटी। जो रह करवा निकसै टोटी ॥ २१ ॥

शब्द ४१०-अवधू छोडो मन विस्तारा। सौ पद गहु जाहि ते सद्गति पार ब्रह्म ते न्यारा ॥ टे० ॥ नहीं महादेव नहीं महम्मद हरि हजरत तब नाहीं। आदम ब्रह्मा नहीं तब होते नहीं धूप नहीं छाहीं ॥ असी सहस पैगम्बर नाहीं सहस अठासी मूनी। चन्द्र सूर तारा गन नाहीं मच्छ कच्छ नहिं दूनी ॥ वेद किताब सुम्रिति नहिं संजम नहिं जमन परसाई। बांग नेमाज कलमा नहिं होते रामों नहीं खुदाई ॥ आदि अन्त मन मध्य न होते आतत पवन न पानी। लख चौरासी जीव जन्तु नहिं साखी शब्द न बानी॥ कहैं कबीर सुनो हो अवधू आगे करहु विचारा। पूरनब्रह्म कहांते प्रगटे किरतम किन उपचारा ॥ २२ ॥

शब्द ४११-अबधू कुदरतकी गति न्यारी। रंक निवाज करै वह राजा राजा भूपति करै भिखारी ॥ टे० ॥ येते लौंगहि फल नहिं लागै चन्दन फूल न फूले। मच्छ शिकारी रमैं जंगलमें सिंह समुद्रहि झूलै ॥ रेंडा रूख भया मल्यागिरि चहुँ दिशि फूटी बासा। तीन लोक ब्रह्मंड खंडमें देखै अन्ध तमाशा ॥ पंगुल मेरु सुमेरु उलंघै त्रिभुवन मुक्ता डोलै। गुंगा ज्ञान विज्ञान परगासै अनहद बानी बोलै ॥ बांधि अकाश पताल पठावै शेष सरगपर राजै। कहैं कबीर राम है राजा जो कछु करै सो छाजै ॥२३॥

शब्द ४१२-अवधू सो जोगी गुरु मेरा। जो ई पदको करै

निवेरा ॥ टे० ॥ तरुवर एक मूल बिन ठाढो बिन फूले फल लागा । साखा पत्र कछू नहिं वाके अष्ट गगन मुख जागा ॥ पौ विन पत्र करह बिन तुम्बा बिनु जिह्वा गुन गावै । गावन हारके रूप न रेखा सतगुरु होइ लखावै ॥ पंछिक खोज मीनको मारग कहैं कबीर दोउ भारी । अपरम पार पार पुरुषोत्तम मूरतिकी बलिहारी ॥ २४ ॥

शब्द ४१३–अवधू ओ तत रावल राता । नाचै बाजन बाज बराता ॥ टे० ॥ मौरके माथे दुलहा दीन्हो अकथा जोर कहाता । मडवक चारन समधी दीन्हो पुत्र विवाहल माता ॥ दुलहिन लीप चौक बैठाये निरभय पद परभाता । भातहिं उलटि बरातहिं खायो भली बनी कुशलाता ॥ पाणि ग्रहण भये भव मंड्यो सुषुमुनि सुरति समाता ॥ कहैं कबीर सुनो हो संतो बूझो पंडित ज्ञाता ॥ २५ ॥

शब्द ४१४–कोइ विरला दोस्त हमारा भाइ रे बहुत का कहिये । गांठन भजन संवारे सोई ज्यों राम रखे त्यों रहिये ॥टे०॥ आसन पवन जोग श्रुति सुमृति ज्योतिष पढि बैलाना। छौ दरशन पाखंड छानवे ये कल काहु न जाना ॥ आलम दुनी सकल फिरि आये या कल जीव न आना । ताही करिके जगत उठावे मनमें मनन समाना॥ कहैं कबीर जोगी औ जंगम फीकी उनकी आशा । रामै नाम रटे ज्यों चात्रिक निश्चय भगति निवाशा ॥ २६ ॥

शब्द ४१५–भाई अद्भुत रूप अनूप कथा है कहौं तोको पतियाई । जहँ जहँ देखों तहँ तहँ सोई सब घट रह्यो समाई ॥टे०॥ लच्छ विनु सुख दरिद्र विनु दुख है नींद विना सुख सोवै॥ जस विनु ज्योति रूप विनु आशिक रतन विहूना रोवै ॥ भरम विनु

ज्ञान मनै विनु निरखै रूप बिना बहु रूपा। थिति बिनु सुरति रहस बिनु आनंद ऐसो चरित अनूपा॥ कहै कबीर जगत बिनु (हरि) मानिक देखौ चित अनुमानी। परि हरि लाभै लोग कुटुम्ब सब भजहुँ न शारंग पानी॥ २७॥

शब्द ४१६-भाइरे गैया एक विरंचि दियो है भार अभर भौ भाई। नौ नारीको पानि पियति है तिरषा तऊ न बुताई॥टे०॥ कोठा बहत्तरि औ लौ लाय वज्र केवांर लगाई। खूटा गाडि डोरी दृढ बांधो तैयो तोरि पराई॥ चारि वृक्ष छौ साख वाके पत्र अठारह भाई एतिक लै गैया गम कीन्हो गैया अति हर-हाई ई सातौ अवरन है सातौ नौ औ चौदह भाई। एतिक गैया खाय बढायो गैया तउ न अघाई॥ घूंटामें राती है गैया स्वेत सींग है भाई। अवरन बरन कछू नहिं वाके भच्छ अभच्छौ खाई॥ ब्रह्मा विष्णु खोजिकै आये शिव शनकादिक भाई॥ सिद्ध अनंत वहि खोज परे हैं गैया किनहु न पाई॥ कहैं कबीर सुनो हो सन्तो जो या पद अरथाई। जो या पदको गाइ विचरिहैं आगे ह्वै तरि जाई॥ २८॥

शब्द ४१७-भाई रे नयन रसिक जो जागे। पारब्रह्म अविगत अविनाशी कैसेहुके मन लागे॥टेक॥ अमली लोग खुमारी तृष्ना कतहुं सन्तोष न पावे। काम क्रोध दोनों मतवाले माया भरि भरि प्यावै॥ ब्रह्म कलाल चढाइनि भाठी लै इन्द्री रस चाखै। संगहि पोच है ज्ञान पुकारै चतुर होइ सो नाखै॥ संकट सोच पोच या कलिमों बहुतक व्याधि शरीरा। जहंवां धीर गँभीर अति निर्मल तहँ उठि मिलहु कवीरा॥ २९॥

शब्द ४१८-भाई रे दुइ जगदीश कहांते आया, कहु कौने भरमाया। अल्लाः राम करीम केशव हरि हज़रत नाम धराया

॥ टे० ॥ गहना एक कनक ते गहना तामें भाव न दूजा । कहन सुननको दुइ करि थाये यक निमाज़ यक पूजा ॥ वही महादेव वही महम्मद ब्रह्मा आदम कहिये। कोइ हिन्दू कोइ तुरुक कहावै एक जमींपर रहिये ॥ वद किताब पढ़ैं वे खुतबा वे मोलना वे पांडे । बिगत विगतके नाम धरावे यक माटीके भांडे ॥ कहैं कवीर वै दोनों भूले रामहि किनहु न पाया। वे खसिया वे गाय कटावैं बादै जनम गँवाया ॥ ३० ॥

शब्द ४१९–हंसा संशय छूरी कुहिया । गैया पियै बछरुवै दुहिया ॥ टेक ॥ घर घर सावज खेलै अहेरा पारथ वोटा लेई । पानी माँहिं तलफि गै भूभुरि धूरि हिलोरा देई ॥ धरती बरसे बादल भीजै भीट भया पैराऊ। हंस उड़ाने ताल सुखाने चहले बीधा पाऊ ॥ जौ लगि कर डोलै पग चलई तौ लगि आश न कीजै। कहहिं कवीर जेहि चलत न दीखै तासु बचन का लीजै॥३१॥

शब्द ४२०–हंसा हो चित चेतु सबेरा । इन्ह परपंच कयल बहुतेरा॥ टेक॥ पाखंड रूप रच्यो इन्ह त्रिगुन तेहि पाखंड भूलल संसारा। घरको खसम बधिक भौ राजा परजा काधौं करै विचारा॥ भगति न जानै भगत कहावै तजि अमृत विषके लिय सारा । आगे बडे ऐसेहि बूड़े तिनहुं न मानत कहा हमारा॥ कहल हमारा गांठी बांधो निशि बासर रहिहहु हुशियारा। ये कलिके गुरु बड परपंची डारि ठगोरी सब जग मारा ॥ वेद किताब दोय फन्द पसारा ते फन्दे परु आप बिचारा। कहैं कवीर ते हंस न विछुरे जेहि मै मिलों छोडावन हारा ॥ ३२ ॥

शब्द ४२१–हंसा प्यारे सरवर ते जे जाय॥ टे०॥ जेहि सरवर बिच मोतिया चुगते बहु बिधि केलि कराय॥ सूखे ताल पुरइनि

जल छोडे कमल गयो कुंभिलाय। कहैं कबीर जो अबकी बिछरे बहुरि मिलै कब आय ॥ ३३ ॥

शब्द ४२२-हरि जन हंस दशा लिये डोलैं। निर्मल नाम चुनि चुनि बोलैं ॥ टे० ॥ मुकताहल लिये चोंच लोभावैं। मौन रहै कि हरिगुन गावैं ॥ मानसरोवर तटके बासी। राम चरन चित अन्त उदासी ॥ काग बुद्धि निकट नहिं आवै। प्रति दिन हंसा दरशन पावै॥ नीर छीर को करै निबेरा। कहँ कबीर सोई जन मेरा ॥३४॥

शब्द ४२३-हरि मोर पीव मैं राम की बहुरिया। राम मोर बडो मैं तन की लहुरिया ॥ टे० ॥ हरि मोर रहँटा मैं रतन पिउरिया। हरि को नाम लै कातल बहुरिया ॥ छः मास ताग वरष दिन कुकुरी। लोग कहल भल कातल बपुरी ॥ कहैं कबीर सूत भल काता। रहँटा न हाय मुकति कर दाता ॥ ३५ ॥

शब्द ४२४-हरि ठग ठगत ठगौरी लाई। हरि वियोग कस जियहु रे भाई ॥ टे० ॥ को काको पुरुष कवन काकि नारी। अकथ कथा जम जाल पसारी ॥ को काको पुत्र कवन काको बापा। को रे मरै को सहै सन्तापा ॥ ठगि ठगि मूल सबन को लीन्हाँ। राम ठगौरी विरलै चीन्हाँ ॥ कहँ कबीर ठग सो मन माना। गई ठगौरी ठग पहिचाना ॥ ३६ ॥

शब्द ४२५-हरि ठग ठगत सकल जग डोले। गवन करत मोसे मुखहु न बोले ॥ टे० ॥ बालापनके मीत हमारे। हमें छोडि कहँ चले सकारे॥ तुम अहु पुरुष हौं नारि तुम्हारी। तुम्हरी चाल पाहनहूंते भारी॥ माटिक देह पवनको शरीरा। हरि ठग ठग सो डरल कबीरा ॥ ३७ ॥

शब्द ४२६-हरि विनु भरम बिगुरन गन्दा। जहं जहं गये अपनपौ खोये तेहि फंदे बहु फन्दा ॥ टे० ॥ जोगी कहै जोग है नीको

द्वितिया और न भाई। चुंडित मुंडित मौन जटाधरि तिनहुं कहां सिधि पाई॥ ज्ञानी गुनी सूर कवि दाता ये जो कहहिं बड हमहीं। जहंसे उपजे तहहिं समाने छूटि गये सब तबहीं॥ बाँये दहिने तजो बिकारै निजु कै हरिपद गहिया। कहें कवीर गुंगे गुर खाया पूछे सो का कहिया॥ ३८॥

शब्द ४२७-ऐसे हरि सो जगत लरतु है। पंडुर कतहुं गरुढ धरतु है॥टे०॥ मूस विलारी कैसनि हेतू। जम्बुक कर केहरि सो खेतू॥ अचरज यक देखा संसारा। सोनहा खेद कुंजर असवारा॥ कह कवीर सुनो संतो भाई। यह संधी कोइ बिरले पाई॥ ३९॥

शब्द ४२८-पंडित बाद बदौ सो झूठा। रामके कहे जगत गति पावै खांड कहै मुख मीठा॥टेक॥ पावक कहे पांव जो दाहे जल कहै तिरषा बुझाई। भोजन कहे भूख जो भाजे तो दुनिया तरि जाई॥ नरके संग सुवा हरि बोलै हरि प्रताप नहिं जानै। जो कबहूं उडि जाय जंगलको तौ हरि सुरति न आनै*॥ बिनु देखे विनु अरस परसके नाम लिये का होई। धनके कहे धनिक जो हो तो निर्धन रहत न कोई॥ सांची प्रीति विषय माया सों हरि भगतनकी हांसी। कह कवीर यक नाम भजे विनु बांधे जमपुर जासी॥ ४०॥

शब्द ४२९-पण्डित देखौ मनमों जानी। कहुधौं छूत कहांते उपजी तबहि छूति तुम मानी॥टेक॥ नादे बिन्दु रुधिर यक संगे घटहीमें घट सज्जै। अष्ट कमलकी पुहुमी आई यह छूति कहांते उपज्जै॥ लख चौरासी बहुत बासना सो सब सरि भौ मांटी। एकै पाट सकल बैठारे सींच लेत धौं काटी॥ छूतिहिं जेवन छूतिहिं

* देखो सुवाबत्तीसी।

अचवन छूतिहि जग उपजाया। कह कबीर ते छूति बिवर्जित जाके संग न माया ॥ ४१ ॥

शब्द ४३०-पंडित सोधि कहहु समुझाई। जाते आवागमन नशाई ॥ अर्थ धर्म औ काम मोक्ष फल कौन दिशा बस भाई ॥ टेक ॥ उत्तर दछिन पूरब पच्छिम सरग पतालके माही। विन गोपाल ठौर नहिं कतहूं नरक जात धौं काही॥ अनजानेको नरक सरग है हरि जानेको नाहीं। जेहि डरको सब लोक डरतु है सो डर हमरे नाहीं॥ पापपुन्यकी शंका नाहीं सरग नरक नहिं जाहीं। कहैं कबीर सुनो हो संतो जहँ पद तहां समाहीं ॥ ४२ ॥

शब्द ४३१-पंडित मिथ्या करो विचारा। ना ह्वां सृष्टि न सिरजनहारा ॥ टेक ॥ थूल स्थूल पवन नहिं पावक रवि शशि धरनि न नीरा। ज्योति स्वरूपी काल न उहवां बचन न आहि शरीरा ॥ धरम करम कछुवो नहिं उहवां ना कछु मंत्र न पूजा। संजम सहित भाव नहिं एको सो तो एक न दूजा ॥ गोरख राम एको नहि उहवां ना वहिं भेद विचारा। हरि हर ब्रह्म नहीं शिव सकती तिरथौ नहीं अचारा ॥ माय बाप गुरु जाके नाहीं सो दूजा कि अकेला। कह कबीर जो अबकी समझैं सोइ गुरू हम चेला ॥ ४३ ॥

शब्द ४३२-बूझहु पंडित करहु विचारी, पुरुष अहे कि नारी ॥ टेक ॥ ब्राह्मन केरे ब्रह्मनी होती जोगी के घर चेली। कलमां पढि पढि भई तुरकिनी कलिमें रहै अकेली॥ वर नहिं वरै व्याह नहिं करई पुत्र जनम होनिहारी। कारे मूडे एक नहिं छाडे अबहूं आदि कुवांरी। मायिक न रहै जाइ न ससुरे सांई संग न सोवे॥ कह कबीर वे जुग जुग जीवे जाति पांति कुल खोवे ॥ ४४ ॥

शब्द ४३३-कौन मुआ कहु पंडित जना। सो समुझाय कहौ

मोहि सना ॥ टे० ॥ मूये ब्रह्मा विष्नु महेशा । पार्वती सुत भये गनेशा ॥ मूये चन्द्र मुये रवि केता । मुये हनुमत जिन बांधी सेता॥ मूये कृष्ण मुये करतारा। यक न मुआ जो सिरजन हारा॥ कहैं कवीर मुआ नहिं सोई। जाको आवागमन न होई॥ ४५॥

शब्द ४३४-पंडित अचरज यक बड़ होई। यक मरमुये अन्न नहिं खाई यक मर सीझ रसोई॥टे०॥ करि अस्नान तिलक करि बैठे नौ गुण कांध जनेऊ। हांडी हाड हाड थारी मुख अब षट करम बनेऊ ॥ धरम कथे जहं जीव बधे तहं अकरम कर मेरे भाई । जो तोहरेको ब्राह्मन कहिय तौ केहि कहिय कसाई॥ कह कवीर सुनो हो संतो भरम भूलि दुनियाई। अपरम पार पार पुरुषोत्तम यह गति विरलै पाई ॥ ४६ ॥

शब्द ४३५-पंडित बूझ पियो तुम पानी । जा माटीके घरमें बैठे तामें सृष्टि समानी॥ छप्पन कोटि जादव जहं विनशे मुनि जन सहस अठासी। परग परग पैगम्बर गाडे ते सरि माटी मासी ॥ मच्छ कच्छ घरियार वियाने रुधिर नीर जल भरिया। नदिया नीर नरक बहि आवै पशु मानुष सब सरिया ॥ हाड झरी झरि गूद गली गलि दूध कहांते आयो। सो तुम पांडे जेवन बैठे मटिअहि छूत लगायो ॥ बेद किताब छोड दिहु पांडे ई सब मनके करमा। कहैं कवीर सुनो हो पांडे ई सब तुम्हरे धरमां॥४७॥

शब्द ४३६-पंडित देखौ हृदय विचारी । कौन पुरुष को है नारी॥टे०॥ सहज समाना घट घट बोलै वाको चरित अनूपा। वाको नाम का कहि लीजे ना वहि वरन न रूपा ॥ तैं मैं क्या करै नर बौरे क्या तेरा क्या मेरा। राम खुदाय सकति शिव एकै कहु धौ काहि निवेरा ॥ बेद पुरान कुरान कितेबा नाना भांति बखानी । हिन्दू तुरुक जैन औ जोगी एकल काहु न जानी ॥

छः दरशनमें जे परवाना तासु नाम मन माना। कहै कवीर हमहीं हैं बौरे ई सब खलक स्याना ॥ ४८ ॥

शब्द ४३७-बुझ बुझ पंडित पद निर्बाना। सांझ परे कहंवा बस भाना ॥ टे० ॥ नीच ऊंच पर्वत ढेल न भीत। विन गायन तहवां उठ गीत ॥ ओस न प्यास मन्दिर नहिं जहंवां। सहस्रौ धेनु दुहावै तहवां॥ निते अमावस नित संक्रांती। नित नित नव ग्रह बैठे पांती॥ मैं तोहि पूछौं पंडित जना। हृदया ग्रहन लागु केहि खना ॥ कह कवीर इतनो नहिं जान। कौन शब्द गुरु लागा कान ॥ ४९ ॥

शब्द ४३८-बुझ बुझ पंडित विरवा न होई। अध बस पुरुष अधा बस जोई ॥ टे०॥ बिरवा एक सकल संसारा। सरग शीश जर गैल पतारा॥ बारह पखुरी चौबिस पाता। घन बरोह लागी चहुं घाता ॥ फले न फूले वाकि है बानी। रैन दिवस विकार चुव पानी ॥ कह कवीर कछु अछलो न जहिया। हरि विरवा प्रतिपालत तहिया ॥ ५० ॥

शब्द ४३९-बुझ बुझ पंडित मन चित लाय। कबहिं भरल वहे कबहि सुखाय ॥ टे० ॥ खन ऊबे खन डूबे खन अवगाह। रतन न मिले पाव नहिं थाह ॥ नदिया नाहिं सरस बहे नीर। मच्छ न मरे केवट रहे तीर ॥ पोहकर नहीं बांधल तहं घाट। पुरइनि नहीं कमल महि बाट॥ कहें कवीर यह मनका धोखा। बैठा रहै चला चह चोखा ॥ ५१ ॥

शब्द ४४०-बूझ लीजे ब्रह्म ज्ञानी। घुरि घुरि बरषा बरषावै परिया बुंद न पानी ॥ टे० ॥ चीटीके पग हस्ती बांधे छेरी बीगै खायो। उदधि मांहते निकसि छांछरी चौड़े गेह करायो॥ मेढुक सर्प रहै इक संगे बिल्ली स्वान बियाही। नित उठि सिंह सियार सों

डरपै अद्भुत कथो न जाही ॥ (कौने) संशय मृगा तन वन घेरे पारथ बाना मेलै। शायर जरै सकल वन डाहै मच्छ अहेरा खेलै ॥ कह कबीर यह अद्भुत ज्ञाना को यहि ज्ञानहि बूझै। विनु पंखै उड़ि जाय अकाशै जीवहि मरन न सूझै ॥ ९२ ॥

शब्द ४४१–वह बिरवा चीन्है जो कोय। जरा मरन रहितै तन होय ॥ टे० ॥ बिरवा एक सकल संसारा। पेड एक फूटल तिन डारा ॥ मध्यके डार चारि फल लागा। साखा पत्र गनत को बागा ॥ वेलि एक त्रिभुवन लपटानी। बांधे ते छूटिहिं नहिं प्रानी ॥ कहहिं कबीर हम जात पुकारा। पंडित होय सो करै विचारा ॥ ९३ ॥

शब्द ४४२–साईंके संग सासुर आई। संग न सूती स्वाद न मानी गौ जौबन सपनेकी नाईं ॥ टे० ॥ जना चार मिलि लगन सोधाई जना पांच मिलि मंडप छाई। सखी सहेली मंगल गावै दुख सुख माथे हरदि चढाई ॥ नाना रूप परी मन भांवरि गांठी जोरि भई पतियाई। अरधैं दै दै चली सुवासिनि चौकहि रांड भई संग सांई ॥ भयो विवाह चली बिन दूलह बाट जात समधी समझाई। कहै कबीर हम गौने जैबे तरव कन्त लै तूर बजाई ॥ ९४ ॥

शब्द ४४३–नलको ढाढस देखो आई। कछु अकथ कथा है भाई ॥ टे० ॥ सिंहसारदूल यक हर जोतिनि सीकस बोइन धाना। बनकी भुलइया चाखुर फेरे छागर भये किसाना ॥ छेरी बाघहि व्याह होत है मंगल गावै गाई। बनके रोझ धै दाइज दीन्हों गोह लोकंदै जाईं ॥ कागा कपडा धोवन लागे बकुला किररे दांता। मांछी मूँड मुडावन लागी हमहूं जाब बराता ॥ कहहि कबीर सुनो हो सन्तो जो यह पद अर्थावै। सोई पंडित सोई ज्ञाता सोई भक्त कहावै ॥ ९५ ॥

शब्द ४४४–नलको नहिं परतीति हमारी। झूठे बनिज कियो

झूठे सन पूंजी सबै मिलि हारी ॥ टेक ॥ षट दरशन मिलि पंथ चलायो तिरदेवा अधिकारी। राजा देश बडो परपंची रैयत रहत उजारी ॥ इतते उतरहु उतते उतरहु जमकी साट सवारी । ज्यों कपि डोर बांधि बाजीगर अपने खुशी परारी॥ यहै पैठ उतपति परलयको विषया सबै विकारी। जैसे स्वान अपावन राजी त्यों लागी संसारी॥ कहैं कवीर यह अद्भुत ज्ञाना मानो बात हमारी। अजहूं लेहुं छोडाय कालसों जो घट सुरति संभारी ॥ ९६॥

शब्द ४४५–न हरि भजसि न आदत छूटी । शब्दै समुझि सुधारत नाहीं अंधरे भये हियेकी फूटी ॥ टे० ॥ पानी माहि पषानकी रेखा ठोंकत उठै भभूका। सहस घडा नितहीं जल ढारै फिर सूखेका सूखा॥ सेते सेते सेत अंग भौ सैन बढो अधिकाई। जो सन्निपात रोगि यहि मारै सो साधुन सिधि पाई ॥ अनहद कहत कहत जग विनसे अनहद सृष्टि समानी । निकट पयाना जमपुर धावै बोलहि एकै बानी॥ सतगुरु मिलै बहुत सुख लहिया सतगुरु शब्द सुधारै । कहैं कवीर सो सदा सुखारी जो यहि पदहिं विचारै ॥ ९७ ॥

शब्द ४४६–नरहर लागी दाव विकार विन ईंधन मिलै न बुझावन हारा। मैं जानों तोही ते व्यापै जरत सकल संसारा॥टे०॥ पानी माहिं अग्निको अंकुर मिलन बुझावन पानी । एक न जरै जरै नौ नारी जुगति न काहू जानी ॥ सहर जरै पहरू सुख सोवै कहै कुशल घर मेरा । पुरिया जरै वस्तु निज उबरै बिकल राम रंग तेरा॥ कुबिजा पुरुष गले यक लागी पूजि न मनकी साधा। करत बिचार जनम गौ खीसा ई तन रहत असाधा॥ जानि बूझ जे कपट करत है तेहि अस मन्द न कोई। कहे कवीर सब नारि रामकी मोते और न होई ॥ ९८ ॥

शब्द ४४७-माया महा ठगनी हम जानी। निरगुन फांस लिये कर डोलै बोलै मधुरी बानी ॥ टेक ॥ केशवके कमला ह्वै बैठी शिवके भवन भवानी। पंडाके मूरति ह्वै बैठी तीरथमें भइ पानी॥ जोगीके जोगिन ह्वै बैठी राजाके घर रानी। काहूके हीरा ह्वै बैठी काहूके कौडी कानी॥ भगतनके भगतिन ह्वै बैठी ब्रह्माके ब्रह्मानी। कहै कबीर सुनो हो संतो यह सब अकथ कहानी ॥ ५९ ॥

शब्द ४४८-माया मोह मोहित कीन्हा। ताते ज्ञान रतन हरि लीन्हा ॥ टेक ॥ जीवन ऐसो सपना जैसो जीवन सपन समाना। सबद गुरु उपदेश दियो तैं छाड्यो परम निधाना॥ जोतिहिं देखि पतंग हुलसै पशु नहिं पेखै आगी। काम क्रोध नल मुग्ध परे हैं कनक कामिनि लागी॥ सय्यद सेख किताब नीरेखे पंडित शास्त्र बिचारै। सत गुरुके उपदेश विना तुम जानिकै जीवहि मारै॥ करौ विचार बिकार पीर हरौ तरन तारनै सोई। कह कबीर भगवंत भजन करु द्वितिया और न कोई ॥ ६० ॥

शब्द ४४९-मरिहौ रे तन कालै करिहौ। प्राण छुटै बाहर लै धरिहौ ॥टे०॥ काया बिगुरचनि अनवनि बाटी। कोइ जारै कोइ गाडै माटी॥ हिंदू लै जारै तुरुक लै गाडै। यहि बिधि अन्त दुनौ घर छाडै॥ करम फांस जम जाल पसारा। ज्यों धीमर मछरी गहि मारा॥ राम विना नल ह्वैहो कैसा। बाट माझ गोबरौरा जैसा॥ कह कबीर पाछे पछतैहो। या घरसे जब वा घर जैहो ॥ ६१ ॥

शब्द ४५०-माइ मैं दूनो कुल उजियारी। बारह खसम नैहरै खायो सोरह खायो ससुरारी ॥ टेक ॥ सासु ननद मिलि पटिया बांधल भंसुरा परलौ गारी। जारों मांग मैं तासु नारि की सखिर रचल हमारी॥ जनाँ पांच कोखियामें राखों औ राखों दुइ चारी। पार परोसिनि करों कलेवा संगहिं बुधि महतारी॥ सहजे बपुरी

सेज बिछायो सुतलों पांव पसारी। आउं न जाउं मरों नहिं जीवों साहब मेटल गारी॥ एक नाम मैं निज के गहिल्यो तो छूटल संसारी। एक नाम मैं बदिकै लेखौ कहै कबीर पुकारी॥ ६२॥

शब्द ४५१-मैं कासों कहौं को सुने को पतियाय। फुलवाके छुवत भँवर मरि जाय॥ टेक॥ गगन मँडल बिच फुल यक फूला। तर भो डार ऊपर भो मूला॥ जोतिय न बोइये सिचिय न सोइ। बिन डार बिन पात फुल यक होइ॥ फुल भल फुलल मालिनि भल गांथल। फुलवा विनसि गयल भवँर निरासल॥ कह कवीर सुनो सन्तो भाई। पंडित जन फुल रहे लुभाई॥ ६३॥

शब्द ४५२-जोलहा हो बिनहु हहिमाना। जाके सुर नर मुनि धरै ध्याना॥ टेक॥ ताना तनै को अउठा लीन्हे चर्खी चारिहु बेदा। सर खूंटी इक राम नरायण पूरन परगटे भेदा॥ भवसागर यक कठवत कीन्हो तामें माडी सानी। माडीको तन माडि रह्यो है माड़ी विरला जानी॥ त्रिभुवन नाथ जो मंज्जन लागे स्याम मुरार या दीना। चांद सूर दोय गोडा कीन्हो मांझ दीप किय तीना॥ पाई करिके भरना लीन्हों वे बान्धैको रामा। वय भरी तिहुं लोके बांधैं कोइ न रहै उबामा॥ तीन लोक यक करिगह कीन्हो दिग मग कीन्हो ताना। आदि पुरुष वैठावन बैठे कविरा ज्योति समाना॥ ६४॥

शब्द ४५३-जोगिया फिर गयो नगर मझारी। जाय समान पांच जहँ नारी॥ टेक॥ गये देशांतर कोई न बतावे। जोगिया बहुरि गुफा नहिं आवे॥ जरिगौ कंथ ध्वजा गौ टूटी। भजिगो दंड खपर गौ फूटी॥ कह कवीर यह कलि है खोटी। जो रह करवा निकसे टोटी॥ ६५॥

शब्द ४५४-जोगियाकी नगरि बसै मत कोई। जो रे बसै सो जोगिया होई॥ टे०॥ वहि जोगियाको उल्टा ज्ञाना। कारा चोला नाहिं म्याना॥ प्रकट सो कंथा गुप्ता धारी। तामें मूल सजीवनि भारी॥ वा जोगियाकी जुगुति जो बूझै। राम रमै सो त्रिभुवन सूझै॥ अमृत बेली छन छन पीवै। कह कबीर सो जुग जुग जीवै ६६॥

शब्द ४५५-जोपै बीजरूप भगवाना। तौ पंडितका बूझौ आना ॥ टे०॥ कहँ मन कहां बुद्धि अहंकारा। रज सत तम गुन तीन प्रकारा॥ विष अमृत फल फूल अनेका। बहुधा वेद कहै तरवेका॥ कह कबीर ते मैं का जानों। को धौं छूटल को अरुझानो॥ ६७॥

शब्द ४५६-जो चरखा जरि जाय बढैया ना मरै। मैं कातों सूत हजार चरुखला ना जरै॥ टे०॥ बाबा ब्याह करायदे अच्छा बरहि तकाडु। अच्छा बर जो ना मिलै तुमहिं मोहिं विवाहु॥ प्रथमै नगर पहुंचते परिगो शोक सन्ताप। एक अचंभो हौं देखा बेटी व्याहै बाप॥ समधीके घर समधी आयो आयो बहुको भाइ। गोड चूल्हौने दै रहे चरखा दियो दिढाइ॥ देवलोक मरि जाहिंगे एक न मरै बढाय। यह मन रंजन कारने चरखा दियो दिढाय कह कबीर संतो सुनौ चरखा लखै न कोई। जाको चरखा लखि परा आवागमन न होई॥ ६८॥

शब्द ४५७-जंत्री जंत्र अनूपम बाजै। वाके अष्ट गगन मुख गाजै॥ टे०॥ तूही गाजै बाजै तुही लिये कर डोलै। एक शब्दमें राग छत्तीसो अनहद बानी बोलै॥ मुखको नाल सरवनको तुम्बा सतगुरु साज बनाया। जिह्वा तार नासिका चरही माया मोम लगाया॥ गगन मंडल मां भौ उजियारा उल्टा फेर लगाया॥ कह कबीर जन भये विवेकी जिन जंत्री मन लाया॥ ६९॥

शब्द ४५८-जस मांसु नलकी तस मांसु पशुकी रुधिर रुधिर

यक सारा जी । पशुको मांस भखे सब कोई नलहिं न भखै सियारा जी ॥ टे० ॥ ब्रह्मकुलाल मेदिनि भरिया उपजि बिनसि कित गइया जी। मांस मछरिया जोपै खैया जो खेतनमें बोइया जी ॥ माटीको करि देवी देवा जीव काटि काटि देइया जी । जो तेरा है सांचा देवा खेत चरत किन लइया जी॥ कहैं कबीर सुनो हो सन्तो राम नाम नित लैया जी । जो कटु कियो जिह्वाके स्वारथ बदल पराया देइया जी ॥ ७० ॥

शब्द ४५९-चात्रिक कहां पुकारै दूरी । सो जल जगत रहा भरपूरी ॥ टे० ॥ जेहि जल नाद बिन्दुका भेदा । षट कर्म सहित उपान्यो वेदा ॥ जेहि जल जीव सीवका बासा । सो जल धरनि अमर प्रकाशा ॥ जेहि जल उपजे सकल शरीरा । सो जल भेद न जान कबीरा ॥ ७१ ॥

शब्द ४६०-चलहु का टेढो टेढो टेढो । दसौं द्वार नरकमें बूडे तू गंधीको वेढो॥टे०॥ फूटे नैन हृदय नहिं सूझे मति एको नहिं जानी। काम क्रोध तृष्णाके मारे बूडि मुये विन पानी॥ जारे देह भसम ह्वै जाई गाडे क्रीम किट खाई। सूकर स्वान कागके भोजन तनकी यहै बडाई ॥ चेत न देखु मुगुध नल बौरे तूते काल न दूरी । कोटिन जतन करै बहुतेरे तनकी अवस्था धूरी ॥ बालूके घरवामें बैठे चेतत नाहिं अजाना। कह कबीर यक राम भजे विन बूडे बहुत स्ययाना ॥ ७२ ॥

शब्द ४६१-फिरहु क्या फूले फूले फूले। जो दस मास उरध मुख झूले सो दिन काहेक भूले ॥ टे० ॥ ज्यों माखी स्वादै लहि विहरै सोचि सोचि धन कीना । त्योंही पीछे लेहु लेहु कर भूत रहनि कछु दीना॥ देहरी लौं बर नारी संग है आगे संग सहेला। मृतक थान संग दियो खटोला फिर पुनि हंस अकेला ॥ जारे

देह भसम है जाई गाडे माँटी खाई। काँचे कुम्भ उदक जो भरिया तनकी इहै बडाई॥ राम न रमसि मोहमें माते परचो काल वश कूवा। कह कवीर नल आप बँधायो ज्यों नलनी भरम सूवा॥७३॥

शब्द ४६२–जोगिया ऐसो है बदकरनी। जाके गगन अकाश न धरनी॥ टे०॥ हाथ न वाके पाँव न वाके रूप न रेखा। विना हाट हटवाई लावै करै बयाई लेखा॥ करम न वाके धरम न वाके जोग न वाके जुगती। सिंगी पत्र कछुव नहिं वाके काहेक माँगे भुगती॥ तै मोहि जाना मैं तोहि जाना मैं तोहि माह समाना। उत्पति परलय एक नहिं होती तब कहुं कौन को ध्याना॥ जोगिया एक आनि किय ठाढो राम रहा भरि पूरी। औषधि मूल कछुव नहिं वाके राम सजीवनि मूरी॥ नटवत बाजी पेखनी पेखै बाजी गरकी बाजी। कहै कवीर सुनो हो संतो भई सो राज विराजी॥७४॥

शब्द ४६३–ऐसो भरम विगुरचिन भारी। वेद किताब दीन औ दोजख को पुरुष को नारी॥ माटीको घट साज बनाया नादे बिंद समाना। घट विनशे क्या नाम धरहुगे अहमक खोज भुलाना॥ एकै हाड़ त्वचा मल मूत्रा रुधिर गूद यक मूद्रा। यक बिन्दु ते सृष्टि रच्यो है को ब्राह्मन को शूद्रा॥ रजोगुनि ब्रह्म तमोगुनि शंकर सतोगुनी हरि सोई। कहैं कवीर राम रमि रहियो हिन्दू तुरुक न कोई॥ ७५॥

शब्द ४६४–आपनपौ आपहिं विसरचो। जैसे सोनहा कांच मंदिलमें भरमत भूंकि मरचो॥ टे०॥ ज्यों केहरि वपु निरखि कूप जल प्रतिमा देखि परचो। ऐसेहि मदगज फटिक शिलापर दसनन आनि अरचो॥ मरकट मूठी स्वाद न विहुरै घर घर नटत फिरचो। कह कवीर नलनीके सुवना तोहि कौने पकरचो॥७६॥

शब्द ४६५–आपन आश कियो बहुतेरा। काहु न मरम पाव

हरि केरा ॥ टे० ॥ इन्द्री कहां करै विसरामा । सो कहँ गये जो कहते रामा ॥ सो कहँ गये होत स्यान । होय मृतक यहि पदहि समान ॥ रामानन्द रामरस छाके । कह कवीर हम कहि कहि थाके ॥ ७७ ॥

शब्द ४६६-अब हम जाना हो हरि बाजीको खेल । डंक बजाय देखाय तमाशा बहुरि सो लेत सकेल॥टे०॥ हरि बाजी सुर नर मुनि जहँडे माया चेटक लाया । धरमें डारि सबन भरमाया हृदया ज्ञान न आया ॥ बाजी झूठ बाजीगर सांचा साधुनकी मति ऐसी। कहहिं कवीर जिन जैसी समुझी ताकी गति भइ तैसी॥७८

शब्द ४६७-कहो हो अम्बर कासों लागा । चेतन हारे चेतु सुभागा ॥ अम्बर मध्ये दीसै तारा । यक चेतै दूजे चेतवन हारा ॥टे०॥ जेहि खोजै सो उहवां नाहीं। सो तो आहि अमरपद माहीं॥ कह कवीर पद बूझे सोइ । मुख हृदया जाके यक होई ॥७९॥

शब्द ४६८-बन्दे करिले आप निवेरा । आप जियत लखु आप ठवर करु मुये कहां घर तेरा ॥ टेक ॥ यहि अवसर नहिं चेतौ प्रानी अन्त कोई नहीं तेरा । कहैं कवीर सुनो हो संतो कठिन कालको घेरा ॥ ८० ॥

शब्द ४६९-रहु ररां मम्माकी भांती हो सब संत उधारन चूनरी ॥टे०॥ बालमीकि बन बोइया चूनि लिया शुकदेव। कर्म बेनौरा ह्वै रह्यो सुत काते जयदेव ॥ तीन लोक ताना तनो ब्रह्मा विष्णु महेश। नाम लेत मुनि हारिया सुरपति सकल नरेश॥ विन जिह्वा गुन गाइया विन वस्तीका गेह। सूने घरका पाहुना तासों लावे नेह ॥ चार वेद कैडा कियो निरंकार किय रास । विनै कवीरा चूनरी पहिरै हरिके दास ॥ ८१ ॥

शब्द ४७०–तुम यहि विधि समझो लोई। गोरी मुख मंदिर बजोई॥ टेक॥ एक सगुन षट चक्रहिं बेधै बिनु वृषभ कोल्हू मांजे। ब्रह्मै पकरि अग्निमां होमैं मच्छ गगन चढि गाजे॥ निते अमावस निते ग्रहन होय राहु ग्रास नित दीजे। सुरभा भच्छन करैं बेद मुख घर बरसैं तन छीजे॥ पहुमिक पानी अम्मर भरिया यह अचरज को कीजे। त्रिकुटि कुंडल मध मन्दिर बाजे औघट अम्बर भीजे॥ कहै कबीर सुनो हो संतो जोगिन सिद्धी प्यारी। सदा रहै सुख संजम अपने बसुधा आदि कुंवारी॥ ८२॥

शब्द ४७१–भुला बे अहमक नादाना। तुम हरदम रामहिं ना जाना॥ टे०॥ बरबस आनिके गाय पछारी गला काट जिव आप लिया। जीता जीव मुरदा करि डारै तिसको कहत हलाल किया॥ जाहि माँसुको पाक कहत हैं ताकी उतपति सुनु भाई। रज वीरज सो माँस उपानी मासु नापाक जो तुम खाई॥ अपनो दोष कहत नहिं अहमक कहत हमारे बडेन किया। उसकी खून तुम्हारी गर्दन जिन तुमको उपदेश दिया॥ सियाहा गई सफेदी आई दिल सफेद अजहूं न हुआ। रोजा निमाज बांग क्या कीजे हुजरे भीतर बैठि मुआ॥ पंडित वेद पुरान पढै मुलना पढै सो कुराना। कह कबीर वे नरक गये जिन हरदम रामहिं ना जाना॥८३॥

शब्द ४७२–काजी तुम कौन किताब बखाना। झंखत बकत रहौ निशि बासर मति एकौ नहिं जाना॥ टे०॥ सकति न मानै सुनति करत हौ मैं न बदोंगा भाई। जो खोदाय तुव सुनति करत तो आप काटि किन आई॥ घालि जनेऊ ब्राह्मन होना मेहरीको क्या पहिराया। वो तो जन्मकी शूद्रिन परोसा सो तुम पांडे क्यों खाया॥ हिन्दू तुरुक कहांते आये किन यह राह चलाई। दिलमें खोजु खोज दिलहीमें भिस्त कहां किन पाई॥ ८४॥

शब्द ४७३-भूला लोग कहै घर मेरा। जा घरवामें फूला डोलै सो घर नाहीं तेरा ॥ टे० ॥ हाथी घोडा बैल बाहनो संग्रह कियो घनेरा। बस्तीमेंसे दियो खदेरी जंगल कियो बसेरा॥ गांठी बांध खरच नहिं पठयो बहुरि कियो नहिं फेरा। बीबी बाहर हिरम महलमें बीच मियांको डेरा॥ नौ मन सूत अरुझि नहिं सुरझै जनम जनम अरुझेरा। कहैं कबीर सुनो हो संतो यहि पदका करो निवेरा॥ ८५॥

शब्द ४७४-कबिरा तेरो घर कंदलामें यह जग रहत भुलाना। गुरुकी कही करत नहिं कोई अमहल महल दिवाना ॥ टेक ॥ सकल ब्रह्ममें हंस कबीरा काग न चोंच पसारा। मनमत कर्म धरे सब देही नाद बिंदु विस्तारा॥ सकल कबीरा बोले बानी पानीमो घर छाया। लूटि अनन्त होत घट भीतर घटका मरम न पाया॥ कामिनि रूपी सकल कबीरा मिरगा चरिन्दा होई। बड़ बड़ ज्ञानी मुनिवर थाके पकरि सकै नहिं कोई॥ ब्रह्मा वरुन कुबेर पुरंदर पीपा प्रह्लाद चाखा। हिरनाकुश नख उदर विदारा तिनहुक काल न राखा॥ गोरख ऐसो दत्त दिगम्बर नाम देव जयदेव दासा। उनकी खबर कहत नहिं कोई कहां कियो है बासा॥ चौपर खेल होत घट भीतर जन्मके पासा ढारा। दम दमकी कोइ खबरि न जाने करि न सकै निरुआरा॥ चारि दिशा महिमंड रच्यो है रूम साम विच डिल्ली। ता ऊपर कछु अजब तमाशा मारे है जम किल्ली॥ सकल अवतार जासु महि मंडल अनंत खडो कर जोरे। अद्भुत अगम अथाह रच्यो है ई सब शोभा तोरे॥ सकल कबीरा बोलै बीरा अजहूं हो हुशियारा। कहैं कबीर गुरु सिकली दरपन हरदम करो पुकारा॥ ८६॥

शब्द ४७५–कविरा तेरो घर कन्दलामें मनै अहेरा खेले। वपुवारी आनन्द मिरगा रुची रुची सर मेले॥ टेक॥ चेतन रावल पावन खंडा सहजहिं मूलै बांधे। ध्यान धनुष धरि ज्ञान बान बन जोगसार सर साधे॥ षट चक्र वेधि कमल वेध्यो जब जाय उजारी कीन्हा। काम क्रोध अरु लोभ मोह ये हांकि साउजन दीन्हा॥ गगन मध्य रोक्यो सो द्वारा जहां दिवस नहिं राती। दास कवीर जाय सो पहुंच्यो सब बिछुरचो संग संघाती॥८७॥

शब्द ४७६–सावज न होई भाइ सावज न होइ। वाको माँस भखै सब कोइ॥ टेक॥ सावज एक सकल संसारा अविगत वाकी बाता। पेट फारि जो देखिय रे भाई आहि करेज न आंता॥ ऐसी बाकी माँसु रे भाई पल पल मासु बिकाई। हाड गोड लै धूरि पवारे आगि धुवां नहिं खाई॥ शिर औ सींग कछू नहिं बाके पूछ कहां वह पाई। सब पंडित मिलि धनधे परिया कवीर बनौरी गाई॥ ८८॥

शब्द ४७७–सुभागे केहि कारन लोभ लागे रतन जनम खोयो। पूरब जनम भूमिके कारन बीज काहेको बोयो॥ टेक॥ पानीसे जिन पिंडे साजे अग्निहिं कुंड रहाया। दसै मास माताके गरभ कढि बहुरि लागिलि माया॥ बालकसे पुनि ब्रिध हुआ है होनी रही सो होवे। जब जम ऐहैं बांधि लै जैहैं नयन भरीभरि रोये॥ जीवनके जनि आशा राखो काल गहेहै स्वासा। बाजी है संसार कवीरा चित चेति ढारो पासा॥ ८९॥

शब्द ४७८–संत महंतो सुमिरो सोई जो काल फांस ते बांचा होई॥ टे०॥ दत्तात्रेय भरम नहिं जाना मिथ्या स्वाद भुलाना। सलिला मथके घृतिको काढ्यो ताहि समाधि समाना॥ गोरख पवन रखै नहिं जाना जोग जुगति अनुमाना। रिद्धि सिद्धि संजम

बहुतेरा पारब्रह्म नहिं जाना ॥ बसिष्ठ सिष्ट विद्या सम्पूरण राम ऐसे शिष्य साखा । जाहि रामको करता कहिये तिनहुंको काल न राखा ॥ हिन्दू कहै हमै ले जरवै तुरुक कहै मोर पीर । दूनौ आइ दीनमों झगरैं ठाढे देखैं हंस कबीर ॥ ९० ॥

शब्द ४७९-जो देखा सो दुखिया देखा तन धरि सुखी न देखा उदय अस्तकी बात कहत हौं ताकर करहु विवेखा ॥ टेक ॥ बाटे बाटे सब कोइ दुखिया क्या गिरही वैरागी । शुक्राचार्य दुखहींके कारन गरभै माया त्यागी ॥ जोगी दुखिया जंगम दुखिया तापसको दुख दूना । आशा तृष्ना सब घट व्यापै कोइ महल नहिं सूना ॥ साच कहौं तो सबै जग खीझै झूठ कहो नहिं जाई । कह कबीर तेई भे दुखिया जित यह राह चलाई ॥ ९१ ॥

शब्द ४८०-ता मनको चिन्हो रे भाई । तन छूटै मन कहां समाई ॥ टे० ॥ सनक सनन्दन जयदेव नामा । अम्बरीष प्रहलाद सुदामा ॥ भक्त सही मन उनहूं न जाना । भगति हेतु मन उनहुं न ज्ञाना ॥ भरथरि गोरख गोपी चंदा । ता मन मिलि मिलि कियो आनन्दा ॥ जा मनको कोइ जान न भेवा । ता मन मगन भये शुकदेवा ॥ एकल निरंजन सकल शरीरा । तासे भ्रमि भ्रमि रहल कबीरा ॥ ९२ ॥

शब्द ४८१-बाबू ऐसो है संसार तिहारो ये कलि है व्यवहारा । को अब अनख सहै प्रति दिनको नाहिं न रहनि हमारा ॥ टे० ॥ सुमृति सुभाव सबै कोइ जानै हृदया तत्त्व न बूझै । निरजिव आगे सरजिव थापै लोचन कछुव न सूझै ॥ तजि अमृत विष काहे को अंचवै गांठी बांधो खोटा । चोरनको दिये पाट सिंहासन साहुनको कीन्हो ओटा ॥ कह कबीर झूठे मिलि झूठा ठगहीं ठग व्यवहारा । तीन लोक भरि पूरि रहो है नाहीं है पतियारा ॥ ९३ ॥

शब्द ४८२-कहौ निरंजन कवनी वानी। हाथ पांव मुख सरवन नहिं जिह्वा का कहि जपहु हो प्रानी ॥ टेक ॥ जोतिहिं जोति जोति जो कहिये जोति कौन सहिदानी। जोतिहि जोति जोति दै मारै तब कहं जोति समानी ॥ चार वेद ब्रह्मा निज कहिया तिनहु न या गति जानी। कहैं कवीर सुनो हो संतो बूझहु पंडित ज्ञानी ॥ ९४ ॥

शब्द ४८३-को अस करै नगर कोतवलिया। मास फैलाय गिध रखवरिया॥ मूस भौ नाव मंजार कँडहरिया। सोवै दादुर सरप पहरिया ॥ बैल बिलाय गाय भइ बांझा। बछवै दुहिया तिन नित सांझा ॥ नित उठि सिंह सियार सो जूझै। कविरके पद जन विरला बूझै ॥ ९५ ॥

शब्द ४८४-का कहिये रोवहुगे बहु तेरा। बहुतक गये फिरै नहिं फेरा ॥ टे० ॥ हम रोया तब तै न संभारा। गरभवासकी बात बिचारा ॥ अब तैं रोया क्या तैं पाया। केहि कारन तैं मोहि रोवाया ॥ कहै कवीर सुनो नर लोई। कालके वसहिं परौ मत कोई ॥ ९६ ॥

शब्द ४८५-अल्लह राम जिव तेरी नाई। जन पर मेहर होहु तुम साईं ॥टे०॥ का मूडी भूमि शिर नाये का जल देह नहाये। खून करै मिसकीन कहावै अवगुन रहै छिपाये ॥ क्या भो वज्जू मज्जन कीन्हे का मसजिद शिर नाये। हृदया कपट निमाज गुजारै कहा भौ मक्का जाये॥ हिंदू एकादशि चौविस रोजा मुसलिम तीस बनाये। ग्यारह मास कहो किन टारो, एकहि माहिं समाये ॥ पूरब दिशा हरिको बासा, पच्छिम अल्लह मुकामा। दिलमें खोज दिलैमें देखो, यहैं करीमा रामा ॥ जो खुदाय मसजिद बसतु है, और मुलुक केहि केरा। तीरथ मूरत राम

निवासी, दुहुमें किनहु न हेरा ॥ बेद कितेब कहो किन झूठा, झूठा जो न विचारे। सब घट एक एक करि लेखे, भौ दूजा करि मारै ॥ जेते औरत मरद उपाने, सो सब रूप तुम्हारा । कबीर पोगरा अलह रामका, सो गुरु पीर हमारा ॥ ९७ ॥

शब्द ४८६–आव बे आव मुझे हरिको नामा । और सकल तजु कौने कामा॥ टेक ॥ कहँ तब आदम कहँ तब हौआ । कहँ तब पीर पैगम्बर हुआ॥ कहँ तर जमी कहँ अशमाना। कहँ तव वेद किताब कुराना ॥ जिन दुनियामें रची मसीद । झूठे रोजा झूठी ईद ॥ सांच एक अल्लहको नामा । ताको नय नय करहु सलामा ॥ कहु धौं बिहिस्त कहाँ ते आई । किसके कहे तुम छुरी चलाई ॥ करता किरतम बाजी लाई। हिंदू तुरुक दुई राह चलाई ॥ कहाँ तब दिवस कहँ तब राती । कहँ तव किरतिमकी उत्पाती ॥ नहिं वाकि जात नहिं वाकि पाँती । कहहि कबीर वाके दिवस न राती ॥ ९८ ॥

शब्द ४८७–अब कहँ चलेहु अकेले मिता । उठि किन करहु घरहुकी चिंता॥टे०॥ खीर खांड घृत पिंड सँवाँरा । सो तन लै बाहर करि डारा॥ जेहि शिर रचि रचि बाँधो पागा । सो शिर रतन बिडारहिं कागा॥ हाड जरै जस लकडी झूरी। केस जरै जस त्रिनकी कूरी॥ आवत संग न जात संघाती। काह भये दल बाँधे हाती॥ मायाके रस लेहु न पाया। अंतर जम बिलारि होय आया॥ कह कबीर नल अजहुँ न जागा। जमका मोगरा मध शिर लागा॥९९॥

शब्द ४८८–देखो लोगो हरिकि सगाई। माय धरै पुत धिया संग जाई ॥टे०॥ सासु ननद मिलि अदल चलाई। मादरियाके घर बैठी आई ॥ हम बहनोई राम मोर सारा । हमहीं बाप हरि पुत्र हमारा॥ कहै कबीर हरिके बूता। राम रमे ते कुकरिक पूता १००॥

शब्द ४८९—देखि देखि जिय अचरज होई। यह पद बूझे बिरला कोई ॥ टे० ॥ धरती उलटि अकाशे जाई। चींटीके मुख हस्ति समाई ॥ बिन पवने जहँ परबत ऊडे। जिया जंतु सब बिरछा बूडे ॥ सूखे सरवर उठै हिलोल। बिनु जल चकवा करै कलोल ॥ बैठा पंडित पढै पुरान। बिन देखे का करै बखान ॥ कहहिं कबीर जो पदको जान। सोई संत सदा परमान ॥१०१॥

शब्द ४९०—हो दारि की ले देहुँ तोहि गारी। तुम समुझ सुपंथ बिचारी ॥ टेक ॥ घरहुके नाह जो अपना। तिनहूँ सो भेट न सपना॥ ब्राह्मन औ क्षत्री बानी। तिनहू कहल न मानी॥ जोगी औ जंगम जेते। आपु गये हैं ते ते॥ कहहिं कबीर इक जोगी। भरमि भरमि भौ भोगी॥ १०२ ॥

शब्द ४९१—लोगो तुम मतिके भोरा। ज्यों पानीमें पानी मिलिगौ, ज्यों ढुरि मिले कबीरा ॥ टे० ॥ जो मैथिलको सच्चा बास। तो मरन होय मगहर पास॥ मगहर मरै मरन नहिं पावै। अनत मरै तो राम लजावै॥ का काशी का मगहर उस्सर, (जोपै) हिरदय राम बसु मोरा। जो काशी तन तजै कबीरा, रामे कौन निहोरा ॥ १०३ ॥

शब्द ४९२—कैसे के तरो नाथ कैसे के तरो, अब बहु कुटिल भरो ॥ टेक ॥ कैसी तेरी सेवा पूजा, कैसो तेरो ध्यान। ऊपर ऊजर देखो, बग अनुमान ॥ भाव तो भुवंगम देखो, अति बिभिचारी॥ सुरति सचान तेरी, मति तो मंजारी॥ अतिरे बिरोधी देखो, अतिरे दिवाना। छौ दरशन देखो, भेष लपटाना॥ कहहिं कबीर सुनो नल बंदा। डाइन डिम्भ सकल जग खंदा ॥१०४॥

शब्द ४९३—यह भरम भूत सकल जग खाया। जिन जिन

पूजा तिन जहंडाया ॥ टेक ॥ अंड न पिंड प्रान नहिं देहा । काटि काटि जिव केतिक एहा ॥ बकरी मुर्गी कीन उछेहा । आगिल जनम उन अवर लेहा ॥ कहहिं कवीर सुनो जन लोई । भुतवाके पुजले भुतवे होई ॥ १०५ ॥

शब्द ४९४-भँवर उड़े बग बैठे आया । रैन गयी दिवसो चलि जाया ॥ हल हल कांपे बाला जीव । ना जानो का करिहै पीव ॥ कांचे बासन टिकै न पानी । उडिगौ हंस काया कुंभिलानी ॥ काग उडावत भुजा पिरानी । कह कवीर यह कथा सिरानी ॥ १०६ ॥

शब्द ४९५-खसम विनु तेलिके बैल भयो । बैठत नाहिं साधुकी संगति, नाधे जनम गयो ॥ टेक ॥ बहि बहि मरै पचै निज स्वारथ, जमके दंड सहो । धन दारा सुत राज काज हित, माथे भार गहो ॥ खसमहिं छाडि विषय रंग माते, पापके बीज बयो । झूठ मुकुति नर आशु जिवनकी, प्रेतको जूठ खयो ॥ लख चौरासी जीव जोइनमें शायर जात बहो ॥ कहहिं कवीर सुनो हो संतो, स्वानकी पूंछ गहो ॥ १०७ ॥

शब्द ४९६-अब हम भैल बहिर जल मीना । पूरब जनम तप कामद कीना ॥ टे० ॥ तब मैं अछलों बन बैरागी । तजलौं कुटुम्ब राम रट लागी ॥ तजलों काशी मैं मति भोरी । प्राननाथ कहु को गति मोरी ॥ हम चलि गैलौं तुम्हरी सरना । कतहुँ न देखलौं हरिजिको चरना ॥ हमहिं कुसेवक कि तुमहिं अयाना । दुइ महँ दोष काहि भगवाना ॥ हम चलि गैल तुम्हारे पासा । दास कवीर भल कैल निराशा ॥ १०८ ॥

शब्द ४९७-लोग बोले दुरि गये कवीर । या मति कोइ जानै धीर ॥ टेक ॥ दशरथ सुत तिहुँ लोकहिं जाना । राम नामको मरनमें आना ॥ जेहि जिय जान परा जस लेखा । रजुको कहै

उरगको पेखा ॥ जदपि फल उत्तम गुन जाना । हरिहिं छोडि मन मुकुति अनुमाना ॥ हरि अधार जस मीनहिं नीरा । और जतन कछु कहै कबीरा ॥ १०९ ॥

शब्द ४९८–अपनो करम न मेंटो जाई । करमक लिखा मिटै धौं कैसे, जो जुग कोटि सिराई ॥ टेक ॥ गुरु वसिष्ठ मिलि लगनसो धाई, सूरज मंत्र इक दीन्हा । जो सीता रघुनाथ ब्याही, पल इक संचु न कीन्हा ॥ नारद मुनिको वदन छिपायो, कीन्हों कपिको रूपा । शिशुपालहुकी भुजा उपारी, आपन बौध सरूपा ॥ तीन लोकके करता कहिये, बाल बधो बरियाई । एक समय ऐसी बनि आई, उनहूं औसर पाई ॥ पारवताको बांझ न कहिये, ईश न कहिय भिखारी । कह कबीर करताकी बातें, करमकी बात नियारी ॥ ११० ॥

शब्द ४९९–है कोइ गुरुज्ञानी जगत महं, उलटि बेद को बूझे । पानीमें पावक जरै अन्धे आंखी सूझे ॥ टे० ॥ गइया तो नाहरको खायी, हरना खायो चीता । कागा लंगरे फादिके, बटेरन बाजै जीता ॥ मूसा तो मंजारहिं खायो, सियारे खायो स्वाना । आदि को ऊ देश जाने, तासो बैसै बाना ॥ एकहि दादुर सो खायो, पांचों जे भुवंगा । कहैं कबीर पुकारि के, है दोऊ यक संगा ॥ १११ ॥

शब्द ५००–झगरा इक बढो जिय जान । जो निरुवारे सो निरबान ॥ टेक ॥ ब्रह्म बडा कि, जहँ ते आया । बेद बडा कि, जिन उपजाया ॥ ई मन बडा कि, जिहिं मन आना । राम बडा कि, रामहिं जाना ॥ भरमि भरमि कबिरा, फिरै उदास । तीरथ बडा कि, तिर थक दास ॥ ११२ ॥

शब्द ५०१–झूठे जनि पतियावहु हो, सुनु संत सुजाना । घटहीमें ठग पूर है, मत खोवहु अजाना ॥ टेक ॥ झूठेका मंडान है,

धरती अशमाना। दसहूं दिशा जाके फन्द है, जिव घेरे आना॥ जोग जग तप संजमा, तीरथ बरत दाना। नौधा वेद कितेब है, झूठेका बाना॥ काहूके बचनहिं फुरे, काहू करमाती। मान बडाई ले रहे, हिन्दू तुरुक दुइ जाती॥ बात कथे अशमानकी, मुद्दत नियरानी। बहुत खुदी दिल राखते, बूड़े विनु पानी॥ कहै कवीर कासों कहौं, सकलो जिव अन्धा। सांचे सो भागे फिरे, झूठेसो बन्धा॥ ११३॥

शब्द ५०२–सार शब्दसे बाँचि है, मानहु इतवारा हो॥टेक॥ आदि पुरुष इक वृक्ष है, निरंजन डारा हो। त्रिदेवा साखा भये, पत्ता संसारा हो॥ ब्रह्मा वेद सही कियो, शिव जोग पसारा हो। विष्णु माया उतपति किया, उर ले बेवहारा हो॥ तीन लोक दशहुँ दिश, जम रोकिन द्वारा हो। कीर होय सब जीयरा, लीन्हे विषको चारा हो॥ जोति सरूपी हाकिमा, जिन अमल पसारा हो। करमकी बंसी लायके, पकरो जग सारा हो॥ अमल मिटाऊ तासुका, पठवौं भव पारा हो। कह कवीर निरभय करों, परखो टकसारा हो॥ ११४॥

शब्द ५०३–संतो ऐसी भूल जग मांहीं। जाते जीव मिथ्यामें जाहीं॥ टे०॥ पहिले भूले ब्रह्म अखंडित, झाईं आपुहि मानी। झाईं मानत इच्छा कीन्हा, इच्छातें अभिमानी॥ अभिमानी करता होय बैठे, नाना पंथ चलाया। वोही भूलमें सब जग भूले, भूलक मरम न पाया॥ लख चौरासी भूलते कहिये, भूलहिं जग विटमाया। जो है सनातन सोई भूला, अब सोइ भूलहिं खाया॥ भूल मिटै गुरु मिलै पारखी, पारख देइ लखाई। कहहिं कवीर भूलकी औषध, पारख सबकी भाई॥ ११५॥

इति बीजकका शब्द॥ ११५॥

शब्द ५०४—कर नैनों दीदार महलमें प्यारा है ॥ ८० ॥ काम क्रोध मद लोभ बिसारो, शील सँतोष छिमा सत धारो। मद मांस मिथ्या तजि डारो, हो ज्ञान घोडे असवार भरम से न्यारा है॥ १॥ धोती नेती बस्ती पाओ, आसन पदम जुगतसे लाओ। कुम्भक कर रेचक करवाओ, पहिले मूल सुधार कारज हो सारा है ॥ २ ॥ मूल कँवल दल चतुर बखानो, कलिंग जाप लाल रंग मानो। देव गनेश तहँ रोपा थानो, रिध सिध चँवर ढुलारा है ॥ ३ ॥ स्वाद चक्र षट दल विस्तारो, ब्रह्म सावित्री रूप निहारो। उलटि नागिनी का सिर मारो, तहाँ शब्द ओंकारा है॥ ४॥ नाभी अष्ट कमल दल साजा, सेत सिंहासन बिष्णु बिराजा। हिरिंग जाप तासु मुख गाजा, लछमी शिव आधारा है ॥ ५ ॥ द्वादश कमल हृदयके माहीं, जंग गौर शिव ध्यान लगाई। सोहं शब्द तहाँ धुन छाई, गन करै जैजैकारा है॥६॥ दो दल कमल कंठ के माहीं, तेही मध बसे अविद्या बाई। हरि हर ब्रह्मा चँवर ढुराई, जहँ श्रींग नाम उचारा है ॥ ७॥ तापर कंज कमल है भाई, बग भौंरा दुइ रूप लखाई। निज मन करत तहाँ ठकुराई, सो नैनन पिछवारा है॥८॥ कमलन भेद किया निर्वारा, यह सब रचना पिंड मँझारा। सतसँग कर सतगुरु शिर धारा, वह सत नाम उचारा है ॥ ९ ॥ आँख कान मुख बन्द कराओ, अनहद झिंगा शब्द सुनाओ। दोनों तिल इक तार मिलाओ, तब देखो गुलजारा है ॥ १० ॥ चंद सूर एक घर लाओ, सुषमन सेती ध्यान लगाओ। तिरबेनीके संधि समाओ, भोर उतर चल पारा है॥ ११ ॥ घंटा शंख सुनो धुन दोई, सहस्र कमल दल जगमग होई। ता मध करता निरखो सोई, बंकनाल धस पारा है ॥ १२ ॥ डाकिनी बहु किलकारे,

जम किंकर धर्म दूत हकारे। सत्तनाम सुन भागे सारें, जब सतगुरु नाम उचारा है॥१३॥ गगन मँडल बिच उर्धमुख कुइया, गुरुमुख साधू भर भर पीया। निगुरे प्यास मरे बिन कीया, जाके हिये अँधियारा है॥ १४॥ त्रिकुटी महलमें विद्या सारा, धनहर गरजे बजे नगारा। लाल बरन सूरज उजियारा, चतुर कमल मंझार शब्द ओंकारा है॥ १५॥ साध सोई जिन यह गढ लीन्हा, नौ दरवाजे परगट चीन्हा। दसवाँ खोल जाय जिन दीन्हा, जहाँ कुलुफ रहा मारा है॥१६॥ आगे सेत सुन्न है भाई, मानसरोवर पैठि अन्हाई। हंसन मिलि हंसा होई जाई, मिले जो अमी अहारा है॥१७॥ किंगरी सारंग बजे सितारा, अच्छर ब्रह्म सुन्न दरबारा। द्वादस भानु हंस उँजियारा, षट दल कमल मँझार शब्द ररंकारा है॥ १८॥ महा सुन्न सिंध बिषमी घाटी, बिन सतगुरु पावै नहिं बाटी। व्याघर सिंह सरप बहु काटी, तहँ सहज अचिंत पसारा है॥१९॥ अष्ट दल कमल पारब्रह्म भाई, दहिने द्वादश अचिंत रहाई। बायें दस दल सहज समाई, यो कमलन निरवारा है॥ २०॥ पाँच ब्रह्म पांचों अँड बीनो, पाँच ब्रह्म निःअच्छर चीन्हों। चार मुकाम गुप्त तहँ कीन्हो, जा मध बंदीवान पुरुष दरबारा है॥ २१॥ दो पर्वतके संध निहारो भँवर गुफातें संत पुकारो। हंसा करते केल अपारो, तहाँ गुरन दर्बारा है॥२२॥ सहस अठासी दीप रचाये, हीरे पन्ने महल जड़ाये। मुरली बजत अखंड सदा ये, तहँ सोहं झनकारा है॥२३॥ सोहं हद्द तजी जब भाई, सत्तलोककी हद्द पुनि आई। उठत सुगंध महा अधिकाई, जाको वार न पारा है॥ २४॥ षोडस भानु हंसको रूपा, बीना सत धुन बजे अनूपा। हंसा करत चँवर शिर भूपा, सत्त पुरुष दर्बारा है॥२५॥ कोटिन भानु उदय जो होई, एते ही पुनि चंद्र

लखोई। पुरुष रोम सम एक न होई, ऐसा पुरुष दिदारा है॥२६॥ आगे अलख लोक है भाई, ऐसा अलख पुरुषकी तहँ ठकुराई। अरबन सूर रोम सम नाहीं, ऐसा अलख निहारा है ॥ २७ ॥ ता पर अगम महल इक साजा अगम पुरुष ताहिको राजा। खरबन सूर रोम इक लाजा, ऐसा अगम अपारा है ॥ २८ ॥ ता पर अकह लोक है भाई, पुरुष अना मय तहां रहाई। जो पहुँचा जानेगा वाही, कहन सुनन ते न्यारा है ॥२९॥ काया भेद किया निरुवारा, यह सब रचना पिंड मँझारा। माया अविगत जाल पसारा, सो कारीगर भारा है॥३०॥ आदि माया कीन्ही चतुराई, झूठी बाजी पिंड दिखाई। अवगति रचन रची अँड माहीं, ताका प्रतिबिंब डारा है ॥ ३१ ॥ शब्द बिहंगम चाल हमारी, कहैं कबीर सतगुरु दइ तारी। खुले कपाट शब्द झनकारी, पिंड अंडके पार सो देश हमारा है ॥ ३२ ॥

शब्द ५०५–कर नैनों दीदार यह पिंडसे न्यारा है। तू हिरदे सोच बिचार यह अंड मँझारा है ॥ टेक ॥ चोरी जारी निंदा चारो, मिथ्या तज सतगुरु शिर धारो। सतसँग कर सत नाम उचारो, तब सनमुख लहो दिदारा है ॥ १ ॥ जे जन ऐसी करी कमाई, तिनकी फैल जग रोशनाई। अष्ट प्रमान जगह सुख पाई, तिन देखा अंड मँझारा है ॥ २ ॥ सोई अंडको अवगत राई, अमर कोट अकह नकल बनाई। शुद्ध ब्रह्म पद तहं ठहराई, सो नाम अनामी धारा है॥ ३ ॥ सातवीं सुन्न अंडके माहीं, झिलमिलाहटकी नकल बनाई। महा काल तहँ आन रहाई, सो अगम पुरुष उच्चारा है ॥ ४ ॥ छठवीं सुन्न जो अंड मँझारा, अगम महलकी नकल सुधारा। निरगुन काल तहाँ पग धारा, सो अलख पुरुष कहु न्यारा है ॥ ५ ॥ पंचम सुन्न जो अंडके माहीं, सत्त-

लोककी नकल बनाई। माया सहित निरंजन राई, सो सत्त पुरुष दीदारा है ॥६॥ चौथी सुन्न अंडके माहीं, पद निरबानकी नकल बनाई। अविगत कला है सतगुरु आई। सो सोहं पद सारा है ॥७॥ तीजी सुन्नका सुनो बडाई, एक सुन्नके दोय बनाई। ऊपर महा सुन्न अधिकाई, नीचे सुन्न पसारा है ॥ ८ ॥ सतवीं सुन्न महाकाल रहाई, तासु कला महासुन्न समाई। पारब्रह्म कर थाप्यो ताही, सो निःअच्छर सारा है॥९॥ छठवीं सुन्न जो निरगुन राई, तासु कला या सुन्न समाई। अच्छर ब्रह्म कहैं पुनि ताही, सोई शब्द ररंकारा है ॥ १० ॥ पंचम सुन्न निरंजन राई, तासु कला दूजी सुन छाई। पुरुष प्रकिरती पदवी पाई, शुद्ध सरगुन बचन पसारा है ॥ ११ ॥ पुरुष प्रकृति दूजी सुन माहीं, तासु कला परथम सुन आई। जोत निरंजन नाम धराई, सरगुन स्थूल पसारा है॥ १२॥ परथम सुन्न जो जोत रहाई, ताकी कला अविद्या बाई। पुत्रन सँग पुत्री उपजाई, यह सिंध बैराट पसारा है ॥ १३ ॥ सतवें अकाश उतर पुनि आई, ब्रह्मा विष्णु समाधि जगाई। पुत्रन सँग पुत्री परनाई, यह श्रृंग नाम उचारा है ॥ १४ ॥ छठे अकाश शिव अवगति भौरा, जंग गौर रिधि करती चौरा। गिरि कैलाश गन करते सोरा, तहँ सोहं शिर मौरा है ॥ १५ ॥ पंचम अकाशमें बिष्नु बिराजे, लछमी सहित सिंहासन गाजे। हिरिंग बैकुंठ भगत समाजे, जिन भक्तन कारज सारा है ॥१६॥ चौथे अकाश ब्रह्मा बिस्तारा, सावित्री सँग करत बिहारा। ब्रह्म रिधि ओं पद सारा, यह जग सिरजनहारा है ॥ १७ ॥ तीजे अकाश रहे धर्म राई, नरक स्वर्ग जिन लीन्ह बनाई। करमन फल जीवन भुगताई, ऐसा अदल पसारा है ॥ १८ ॥ दूजे अकाश मैं इन्द्र रहाई, देव मुनी बासा तहँ पाई। रंभा करती निरत सदाई,

कलिंग शब्द उच्चारा है ॥ १९ ॥ प्रथम अकाश मृत्यु है लोका, मरन जनम का नित जहँ धोखा । सो हंसा पहुँचे सत लोका, जिन सतगुरु नाम उचारा है ॥२०॥ चौदह तबक किया निरवारा, अब नीचेका कहों सुनो बिचारा, सात तबक में छः रखवारा । भिन भिन सुनो पसारा है ॥ २१ ॥ शेष धौल बाराह कहाई, मीन कच्छ औ कुरम रहाई । सो छः रहे सातके माहीं, यह पाताल पसारा है ॥ २२ ॥

गजल कव्वाली आरम्भ । *

कव्वाली १–मेरी नैया पडी भवसागरमें, सतगुरु इसे पार लगा देना । ये आधि औ व्याधि सतावही इनसे प्रभु मोहि बचा लेना ॥ मैं शिष्य तो आपका कहलाया, नहिं करम धरम कुछ बनि आया। करुणा निधान कीजे दाया, दिलसे मेरा दोष हटा देना ॥ पापी हूँ पतित मलीन हूँ मैं, सब भांति लाचार औ दीन हूँ मैं । साहब बस तेरे आधीन हूँ मैं, तारो अब चाहे डुबा देना ॥ बिनतीपे मेरी ध्यान धरो, संकटको मेरे अब बेग हरो । मेरे शुद्ध अचार विचार करो, मेरी बिगडी समयको बना देना॥ सतज्ञान प्रदान मुझे करदो, बल बुद्धी दे निरभय करदो । मेरे पापोंको परलय करदो, मुझे कदमोंमें अपने बुला लेना॥ दुख हरन तुम्हारा नाम भि है, भगवानको आपसे काम भि है,। जहां क्लेश तहां आराम भि है, इनसे परे मोक्ष दिला देना ॥ १ ॥

कव्वाली २–दीन दयाल दया करके मुझे चरनकी शरण बुला

---

* यहांसे लेकर अगले चार गजल कव्वाली इन्दौर कबीर मंदिरके सेवक भगवान प्रसादका बनाया है ।

लेना। खट खट झंझट इस दुनियांकी, बिलकुलही मेरि छुड़ा देना॥ मुझे कर्म कुलालने है घेरा, चोरासी योनिनमें गेरा। अब मिला है नरतनमें डेरा, इससे प्रभु पार लगा देना॥ शुद्ध अंतःकरण होवे मेरा, नित उठ मैं ध्यान धरूं तेरा। हे नाथ यही चाहता चेरा, मुझे ऐसीही बुद्धी सदा देना॥ चित चंचल निश्चल हो जावे, गुरू जिससे पूजा पाठ कुछ बन आवे। सब विषय भोगसे अलगावे, मेरे मनको शुद्ध बना देना॥ मेरे कार्य्य न कोई पापके हो, नित भजन कीरतन आपके हो। मेरे नाश दुख त्रिप तापके हो, मेरा आवागमन मिटा देना॥ मुझे अहंकार एक आपका हो, भगवान कहें नजर आपका हो। मेरा सुमिरन अजपा जापका हो, मुझे अपनेमें आप मिला लेना॥ २॥

कव्वाली ३–मेरि विनय सुनो करुना निधान, मुझे चरनोंका दास बना लेना। मैं फंसा मोह पापमें आन, कर कृपा जरा सुलझा देना॥ कर कृपा आपने दी काया, शुभ कार्य्य करनेको फरमाया। नहीं मुझसे कुछ भी बन आया, इस दोषको मेरे भुला देना॥ निशि दिन मैं करूंगा भजन तेरा, ये वादा है बेशक मेरा। यहां आतेही मोहने घेरा, जिससे दुःख पड़ा सदा सहना॥ हूँ महा मूर्ख अवगुनकी खान, विषयोंसे लीन पापी महान। कर दया दृष्टि दो भक्ति दान, मेरे मनका मैल छुड़ा देना॥ तुम्हें नेति २ कहें चारों वेद, नहीं ऋषी मुनी कोई पाता भेद। ये सुनके मुझे है बडा खेद, मेरे संशयको नाथ मिटा देना॥ व्याकुल हो टेरता तुम्हें भगवान, होकर दयाल दो दरस आन। मुझे दीन दुखी मति हीन जान, कहिं चितसे न अपने भुला देना॥ ३॥ अरे मान मान मन मूढ मान, मुझे भजन प्रभूका करने देना।

क्यों करे रात दिन परेशान, जरा भवसे मुझे तरने देना ॥ पड़ तेरे संग अती दुख पाया, तूने जहां तहां मुझे भटकाया । अब हुई कुछ उस प्रभूकी दाया, मुझे ध्यान उसीका धरने देना । है चित चंचल बड़ा बेइमान, पल २ में रचे नित नयी तोफान । नहीं धरन देत मोहिं नेक ध्यान, उसको भी मुझे हरने देना ॥ लिया अंतःकरणको मैंने जान, जहां वसेहो तुम सब आन आन । है बुद्धी बिचारी अभी नदान, जरा विवेकमें इसे परने देना ॥ मेरेही बल बने पहलवान, मेराही बुरा चाहते हैवान। अभी तोड दूंगा मैं सबका मान, नहीं कार्य्य मेरा सरने देना॥ भगवानदास गुरु ज्ञान पाय, ये खुदी करन लगते सहाय । बिन भगती सदा जीव गोते खाय, मुझे चरन गुरुके पडने देना ॥ ४ ॥

इति गजल कव्वाली ।

अथ सुआ बत्तीसी प्रारम्भः ॥

(भय्या भगवती दासके ब्रह्मविलाससे)

दोहा–नमस्कार जिन देवको, करों दुइ कर जोर ।
सुवा बत्तीसी सुरस मैं, कहूं अरिन दल मोर ॥ १ ॥
आतम सुआ सु गुरु बचन, पढत रहै दिन रैन ।
करत काम अघरीतिके, यह अचरज लख नैन ॥ २ ॥
सुगुरु पढावे प्रेमसो, यह पढत मन लाय ।
घटके पट जो ना खुले, सबहिं अकारथ जाय ॥ ३ ॥
(साखी–गुरु बिचारा क्या करे, शिष्यहिंमें है चूक ।
शब्द बान बेधे नहीं, बाँ बजावे फूंक ॥
गुरु विचारा क्या करै, कहै न खुलै कपाट ।
स्वान चौक बैठायके, फिरि फिरि ऐपन चाट ॥)

बीजक ॥

चौपाई-सुवा पढायो सुगुरु बनाय। करम बनहिं जिन जइयो भाय ॥ भूले चूके कबहुं जो जाहु। लोभ नलनिपे दगा न खाहु ॥ ४ ॥ दुर्जन मोह दगाके काज। बांधी नलनी तर धर नाज ॥ तुम मति बैठहु सुवा अजान। नाज विषय सुख लहिं तिहिं थान ॥५॥ जो बैठहु तो पकडि न रहियो। जो पकडो तो दिढ मति गहियो ॥ जो दिढ गहो तो उलटि न जइयो। जो उलटो तो तजि भगि जइयो ॥ ६ ॥ यहि विधि सुवा पढायो नित्त। सुवटा पढिके भयो बिचित्त ॥ पढत रहै निशि दिन यह बैन। सुनत लहै सब प्रानी चैन ॥ ७ ॥ इक दिन सुवटे आई मने। गुरु संगति तजि भजिगे बनै ॥ बनमें लोभ नलनि अति बनी। दुर्जन मोह दगाको तनी ॥ ८ ॥ ता तरु विषय भोग अन धरे। सुवटे जान्यो ये सुख खरे ॥ उतरे विषय सुखनिके काज। बैठि नलनिपै बिलसै राज ॥ ९ ॥ बैठो लोभ नलनिपे जबै। विषय स्वाद रस लटके तबै ॥ लटकत तरे उलटिगे भाव। तर मूंडी ऊपरभै पाँव ॥ १० ॥ नलनि दिढ पकरे पुनि रहै। मुखते बचन दीनता कहै॥ कोउ न बनमें छुडावनहार। नलनी पकरहिं करहिं पुकार ॥ ११ ॥ पढन रहै गुरुके सब बैन। जे जे हितकर सिखये ऐन॥ सुवटा बनमें उड़ि जनि जाहु। जाहु तो भूलि खता मति खाहु॥१२॥ नलिनीके मति जइयो तीर। जाहु तो तहाँ न बैठो कीर ॥ जो बैठो तो दिढ मति गहो। जो दिढ गहो तो पकरि मत रहो ॥ १३ ॥ जो पकरो तो चुगा न खैहो। जो खाओ तो उलटि न जैहो ॥ जो उलटो तो तजि भगि जैहो। इतनी सीख हृदयमें लहिहो॥१४॥ ऐसे बचन पढत पुनि रहै। लोभ नलनि तजि भजो न चहै ॥ आयो दुर्जन दुर्मति रूप। पकडि लयो

सुवटा सुन्दर भूप ॥ १५ ॥ डारे दुखके जाल मंझार । सो दुख कहत न आवे पार ॥ भूख प्यास बहु संकट सहै । परबस परे महा दुख लहै ॥ १६ ॥ सुवटाकी सुधि बुधि सब गयी । यह तो बात और कछु भयी ॥ आय परे दुख सागर माहिं । अब इतते कितको भगि जाहिं ॥ १७ ॥ केतो काल गयो इह ठौर । सुवटे जियमें ठानी और ॥ यह दुख जाल कटै किहि भांति । ऐसी मनमें उपजी खांति ॥ १८ ॥ रात दिना प्रभु सुमिरन करे । पाप जाल काटन चित धरे ॥ क्रम क्रम कर काटचो अघ जाल । सुमिरन फल भयो दीनदयाल ॥ १९ ॥ अब इतते जो भजिके जाऊँ । तो नलनी पर बैठि न खाऊँ ॥ पायो दाव भजो ततकाल । तजि दुर्जन दुर्गति जंजाल ॥ २० ॥ आये उडत बहर बन माहिं । बैठे नर भव द्रुमकी छांहिं ॥ तित इक साधु महा मुनिराय । धर्म देशना देत सुभाय ॥ २१ ॥ यह संसार कर्म बन रूप । ता महिं चेतन सुवा अनूप ॥ पढत रहे गुरु बचन विशाल । तौहु न अपनी करै संभाल ॥ २२ ॥ लोभ नलनि पर बैठे जाय । बिषय स्वाद रस लटके आय ॥ पकरहिं दुर्जन दुर्गति परै । तामें दुख बहुत जिय भरै ॥ २३ ॥ सो दुख कहत न आवे पार । जानत जिन वर ज्ञान मंझार ॥ सुनते सुवटा चौक्यो आप । यहि तो मोहिं परचो सब पाप ॥ २४ ॥ ये दुख तो सब मैंही सहे । जो मुनिवरने मुखते कहे ॥ सुवटा सोचै हिये मंझार । ये गुरु सांचे तारन हार ॥ २५ ॥ मैं शठ फिरचो करम बन माहिं । ऐसे गुरु कहिं पाये नाहिं ॥ अब मो पुन्य उदय कछु भयो । सांचे गुरुके दरशन लयो ॥ २६ ॥ गुरुकी गुन स्तुति बारम्बार । सुमिरे सुवटा हिये मंझार ॥ सुमिरन आप पाप भजि गयो । घटके पट खुलि सम्यक्

थयो॥२७॥ समकित होत लखि सब बात। यह मैं यह पर द्रव्य विख्यात॥ चेतनके गुन निज महिं धरे। पुद्गल रागादिक परिहरे ॥२८॥ आप मगन अपने गुन मांहि। जनम मरन भय जियकी नाहिं॥ सिंह समान निहारत हिये। कर्म कलंक सबहीं तजि दिये ॥२९॥ ध्यावत आप माहिं जगदीश। दुहुं पद एक विराजत ईश॥ यहि विधि सुवटा ध्यावत ध्यान। दिन दिन प्रति प्रगटत कल्यान ॥३०॥ अनुक्रम शिव पद जिवको भयो। सुख अनन्त विलसत नित नयो॥ सत संगति सबको सुख देय। जो कछु हियमें ज्ञान धरेय ॥ ३१ ॥ केवलि पद आतम अनुभूत । घट घट राजत ज्ञान संजूत ॥ सुख अनंत विलसे जिय सोय । जाके निज पद परगट होय॥३२॥ सुआ बतीसी सुनहु सुजान। निज पद प्रगटत परम निधान॥ सुख अनंत विलसहु ध्रुव नित्त। भय्याकी विनती धर चित्त ॥ ३३ ॥ सम्वत् सत्रह त्रेपन माहिं। आश्विन पहिले पच्छ कहाहिं॥ दसमी दशा दिशा परगास। गुरु संगति ते शिव सुख भास ॥ ३४ ॥

इति श्री आत्मनिष्ठ परमार्थीवैद्य कबीराश्रमाचार्य्य स्वामी श्रीयुगलानन्द विहारी द्वारा संग्रहीत कबीरपंथी शब्दावली छः खण्डका प्रथम भाग समाप्त ।। शुभम् ।।

सत्यनाम ।

शब्दार्थ चिन्तामणि कोष का उपक्रम ।।

सद्गुरु कबीर साहबकी सर्ववाणी अध्यात्मतत्त्वके उपदेशोंसे भरी पडी है। अध्यात्मतत्त्वके सच्चे जिज्ञासुओंके लिये, यदि वह सच्चा अधिकारी है, तो उसे, आधी साखीमें ही सार मिल जाता है, जैसा सद्गुरुने कहा है—

आधी साखी सिर खडे, जो निरुवारी जाय ।
क्या पंडित क्या पोथिया, रात दिवस मिलि गाय ।।

किन्तु वर्तमान कालमें अधिकारियोंके कमी और साधारण लोगोंकी वृत्ति बहिर मुख होनेके कारण तथा श्रद्धा भक्तिके अभावसे, साधारण वाणियोंमें भी लोगोंको सन्देह रहा करता है और उसके ही समझने उनकी बुद्धि असमर्थ होती है। तब गूढ वाणियोंमें वह बहिरमुख वृत्तिकैसे परवेश कर सकती है। इतना होने पर भी साम्प्रदायिक पक्षपातके कारण अथवा रिवाजके कारण, लोगोंकी प्रवृत्ति वाणियों के संग्रह करने और कभी कभी जमाव आदिके अवसर पर वाणियोंको बांचने गाने और बचन विलास-(सत्संग) की आवश्यकता तो पडती ही है। अथवा जो लोग श्रद्धापूर्वक कुछ जानने और पानेकी अभिलाषासे वाणियोंका पाठ करते हैं उन्हें भी अर्थ करने और समझने में बडी कठिनाइया उपस्थित होती हैं। क्योंकि कबीर साहबकी वाणीमें अनन्त ऐसे सांकेतिक शब्द भरे पडे हैं जिनको भेदी बिना जानना अत्यन्त कठिन है। यथार्थ बात तो यह है कि संसारकी किसी भी वाणीका अर्थ उस वाणीके यथार्थ रहस्य ज्ञाताके बिना समझाये समझमें आना अत्यन्त दुस्तर है तथापि मनुष्य मनन शील प्राणी हैं, सबको अपनी बुद्धिद्वारा समझनेकी अभिलाषा रहा करती है। इन्ही सब बातोंका विचार कर जब मैंने प्रथम बार सम्वत् १९५४ वि. में लखनौ में मूल बीजक छपवाया था तब "गुढार्थ चिन्तामणि कोष" के नामसे सांकेतिक शब्दोंके स्पष्टीकरणका कोष दे दिया था। अब इस शब्दावलीमें भी अनन्त शब्द ऐसे आये हैं जिनको समझने के लिये इस कोषको यहां देनेकी आवश्यकता थी, इसलिये यह कोष यहां दे दिया है। यद्यपि मेरा विचार था कि, इस कोषको नये सिरेसे सुधारकर अकरादि अनुक्रम से नियम पूर्वक ठीक करकेही दोबारा प्रकाशित किया जाय किन्तु कितने अनिवार्य्यकारणों तथा छापनेवाले प्रेसकी शीघ्र ग्रन्थको पूर्ण करनेकी आतुरताके कारण से वैसा नहीं कर सका, इसलिये पहली छपी हुई प्रति ज्यों की त्यों दे दिया है। एक प्रकारसे यह भावीही थी, जैसे शब्दावली अधूरी रही है वैसे, कोषभी अधूराही रहा है। सद्गुरुकी दया दृष्टि होगी तो कबीरधर्मदर्शन ग्रन्थ मालाकी किसी मालिकामें यह कोष संशोधित और वर्द्धित रूपमें प्रकाशित किया जायगा, तबतक पाठकोंको इसीसे संतोष मानना चाहिये।

सर्व सत्यके जिज्ञासुओंका परमार्थी मित्र-

कबीराश्रमाचार्य परमार्थी वैद्य,

आत्मनिष्ठ-श्रीयुगलानन्द विहारी,

कबीराश्रम पो० खरसिया स्टेशन,

जि० बिलासपुर सी. पी.

सत्यनाम सत्यकबीर

अथ गूढार्थ चिंतामणि कोष

कवीराश्रमाचार्य्य परमार्थी वैद्य

भारत पथिक स्वामी

श्रीयुगलानन्दविहारी विरचित ।।

द्विविध शब्द ।

गुरु	शिष्य	ब्रह्म	माया	ईश्वर	जगत्
चैतन	जड	सुख	दुःख	पुण्य	पाप
स्वर्ग	नरक	गुण	दोष	देवता	राक्षस
दयाल	काल	कारण	कार्य्य	निमित्त	उपादान
रक्षक	भक्षक	दक्षिण	वाम	शुद्ध	मलिन
मुख्य	गौण	विशेष	सामान्य	समष्टि	व्यष्टि
विक्षेप	आवरण	स्थिर	चञ्चल	निराकार	साकार
सुगन्ध	दुर्गंध	अपरा	परा	वक्ता	श्रोता
दैवी	आसुरी	आधि	व्याधि	निर्गुण	सगुण
शीव	जीव	स्वामी	सेवक	पिता	पुत्र
पुरुष	स्त्री	नर	नारी	पुरुष	प्रकृति
जन्म	मरण	दिन	रात्रि	प्रकाश	अन्धकार
एक	अनन्त	चतुर	मूर्ख	राग	द्वेष
स्तुति	निन्दा	जीव	शिव	काम	क्रोध

परस्पर विरुद्ध तथा भय संयुक्त द्विविध पदार्थ ।।

विद्या	वाद	तप	क्षय	द्रव्य	राजा, चोर
भोग	रोग	काया	काल	साधन	इन्द्री
योग	विषय	स्वर्गवासी	अवधि	मंत्र	यन्त्र
यन्त्र	तंत्र	तंत्र	सिद्ध	सिद्ध	माया
माया	ज्ञान	सज्जन	दुर्जन	मित्र	शत्रु
मिलना	विछुरना	आना	जाना	पंडित स्तुति	निन्दा
मूर्ख	मार	युद्ध	समाधान	कुल	अति नारि
कर्म	अकर्म	उपासना	विक्षेप	ज्ञान	अज्ञान

सत्यवादी	पाखण्ड	आस्तिक	नास्तिक,	शुक्ल	कृष्ण
मित्र	शत्रु	महावाक्य	अवांतर वाक्य.	प्रकाश	अन्धकार
निर्विकल्प	सविकल्प	निरंजन	अंधा	शीत	उष्ण
सूक्ष्म	स्थूल	जंगम	स्थावर		
खुदा	बन्दा	कादिर	कुदरत		
आदम	हव्वा	खास	आम	इनसान	हैवान

॥ त्रैयविधि ॥

ओंकार मात्रा	अ	उ	म
	क्षर	अक्षर	निः अक्षर
	हिरण्यगर्भ	ईश्वर	विराट
	विश्व	तैजस	प्राज्ञ
देव	ब्रह्मा	विष्णु	महेश
	विवेक	वैराग्य	गुरुभक्ति
गुण	रजोगुण	सतोगुण	तमोगुण
शरीर	स्थूल	सूक्षम	कारण
	नाम	रूप	गुण
काल	भूत	वर्तमान	भविष्य
क्रिया	उत्पत्ति	पालन	नाश
अर्थ	स्वार्थ	परमार्थ	निरर्थ
अवस्था	जाग्रत	स्वप्न	सुषुप्ति
वेदकांड	कर्म	उपासना	ज्ञान
	कर्म	धर्म	मति
महावाक्य ,, (सा. वे.)	तत्	त्वं	असि
,, (ऋग्वेद)	अहं	ब्रह्म	अस्मि
,, (यजुर्वेद)	अयं	आत्मा	ब्रह्म
,, (अथर्वणवेद)	प्रज्ञान	आनंद	ब्रह्म
नाडी	इंगला	पिंगला	सुषुम्णा
	यमुना	गंगा	सरस्वती
प्राणायाम	रेचक	पूरक	कुम्भक
दोष	वायु	पित्त	कफ
लोक	मृत्युलोक	स्वर्ग	पाताल
प्रारब्ध	इच्छा	अनिच्छा	स्वइच्छा
लक्षण (दोष)	अव्याप्ति	अतिव्याप्ति	असंभव
गुरु	माता	पिता	आचार्य्य
वादादि	वाद	जल्प	वितंडा
वायु	शीतल	मंद	सुगंध
ताप	आध्यात्मिक	आधिभौतिक	आधि दैविक

कर्म	संचित	प्रारब्ध	क्रियमाण
श्रोता	मुक्त	मुमुक्षु	विषयी
मनुष्य	ज्ञानी	विषयी	पामर
अवस्था (शरीर)	बाल	युवा	वृद्ध
लिंग	स्त्री	पुरुष	नपुंसक
सम्बन्ध	संयोग	समवाय	तादात्म्य
त्रिपुटी	ज्ञाता	ज्ञान	ज्ञेय-
	ध्याता	ध्यान	ध्येय
	द्रष्टा	दर्शन	दृश्य
	कर्ता	क्रिया	कर्म
	नाद	बिंद	कला
	अध्यात्म	अधिभूत	अधिदैव
ज्ञानप्रतिबंधक	संशय	असंभावना	विपरीतभावना
ज्ञानसाधक	ज्ञान	वैराग	उपशम
	हेतु	स्वरूप	फल
	अस्ति	भांती	प्रिय
कारणवाद	आरंभ	परिणाम	विवर्त
सृष्टि	पारमार्थिक	व्यावहारिक	प्रातिभासिक
आनन्द	ब्रह्मानंद	विषयानंद	वासनानंद
आत्मा	ज्ञानात्मा	महानात्मा	शांतात्मा
भेद आत्माका	मिथ्यात्मा	गौणआत्मा	मुख्यआत्मा
अन्तःकरण दोष ,	मल	विक्षेप	आवरण
वेष	तिलक	माला	लंगोट

॥ चतुरविधि ॥

१ देवता	ब्रह्मा	विष्णु	रुद्र	ओंकार
२ अवस्था	जाग्रत	स्वप्न	सुषुप्ति	तुरीय।
	नासूत	मलकूत	जबरूत	लाहूत
शरीर	स्थूल	सूक्ष्म	कारण	महाकारण
अभिमानी (व्यष्टि)	विश्व	तैजस	प्राज्ञ	प्रत्यक्ष
,, (समष्टि)	विराट्	हिरण्यगर्भ	ईश्वर	ब्रह्म
आकाश	घटाकाश	जलाकाश,	मेघाकाश	महाकाश
चैतन्यअवस्था	कूटस्थ	जीव	ईश्वर	ब्रह्म
वेद	ऋग्वेद	यजुर्वेद	सामवेद	अथर्ववेद
किताब	जंबूर	तौरेत	बायबुल	कुरान
अपवेद	आयुर्वेद	धनुर्वेद	गांधर्व	स्थापत्य
अनुबंध	अधिकारी	विषय	प्रयोजण	संबंध
साधन	विवेक	वैराग	षटसंपति	मुमुक्षता

प्रथम विवेक विराग पुनि, क्षमादि षट सम्पत्ति।
कही चतुर्थ मुमुक्षता, ये सब साधनसत्ति ॥ १२ ॥

साधन (अंतरंग)	श्रवण	मनन	निदिध्यासन	साक्षात्कार
भक्त	आर्त	विज्ञासु	अर्थार्थी	ज्ञानी
पुरुषार्थ	अर्थ	धर्म	काम	मोक्ष
आश्रम	ब्रह्मचर्य	गार्हस्थ	वानप्रस्थ	संन्यास
वर्ण	ब्राह्मण	क्षत्री	वैश्य	शूद्र
	शेख	सय्यद	मुगल	पठान
मोक्षद्वारपाल	शम	संतोष	विचार	सत्संग

मोक्ष द्वारपालकचतुर, शम संतोष विचार।
चौथो सत्संगति धरम, महापूज्य निर्धार॥

संन्यास	कुटिचर	वहूदक	हंस	परमहंस
भूमिका	क्षिप्रा	अनागत	सूलिश्रृता	सुलीनता
अन्तःकरण	मन	बुद्धि	चित	अहंकार
खानि	जरायुज	अण्डज	उद्भिज्ज	स्वेदज
चित्तनिरोध-उपाय.	अध्यात्म-विद्या.	साधूसंग,	वासनात्याग,	प्राणायाम,
स्पर्श	शीत	उष्ण	कोमल	कठिन
युग	सतयुग	त्रेता	द्वापर	कलियुग
शरीर अवस्था	बाल	किशोर	युवा	वृद्ध
	वौना	नाटा	मझोला	लम्बा
वाणी भेद	परा	पश्यन्ती	मध्यमा	वैखरी
शब्द भेद	काल	संधि	झांइ	सार
अर्थ	शब्दार्थ	भावार्थ	व्यंग्यार्थ	ध्वन्यार्थ
सेना चतुरंगिणी	हाथी	रथ	पैदल	घोडा
नीति मार्ग	साम	दान	दण्ड	भेद
रिपु	काम	क्रोध	लोभ	मोह
मुक्ति	सालोक	सामीप्य	सारूप्य	सायुज्य
मनुष्य लक्षण	दया	शील	विचार	शौर्य्य
सनकादिक	सनक	सनन्दन	सनत्कुमार	सनातन
यार ४	अबुबक्	उमर	उसामन	अली
मार्ग (हिन्दूधर्म)	कर्म	उपाशना	योग	ज्ञान
मार्ग (मुसलमानी)	शरीयत	तरीकत	मारफत	हकीकत
आधार चक्र अक्षर	व	ष	श	ह
स्त्री भेद	पद्मिनी	चित्रनी	शंखनी	हस्तिनी
पुरुष भेद	शशा	मृगा	घोडा	खर
	उत्तम	मध्यम	लघु	निकृष्ट

ज्ञान परीक्षा	निरालम्ब	निर्भ्रम	निर्वासनिक	निर्विकार
विचार परीक्षा	निर्मोह	निर्बंध	निर्हिंसक	निर्वाण
विवेक परीक्षा	सावधान	सर्वगी	सारग्राही	संतोषी
परम संतोष परीक्षा	अयाचक	अमानी	अपक्षीक	स्थिर
सहज परीक्षा	निष्प्रपंच	निःतरंग	निर्लिप्त	निष्कर्म
निर्वैर परीक्षा	सुहृदता	सुखदाई	शीतलताई	सुमति
शून्य परीक्षा	शीलवंत	सुबुद्धि	सत्यवादी	ध्यानसमाधि
सन्ध्या	प्रातः	मध्याह्न	सांझ	मध्यरात्री
दिशा	पूर्व	पश्चिम	उत्तर	दक्षिण
विष्णु आयुध	शंख	चक्र	गदा	पद्म
संमप्रदा	श्रीसम्प्रदा	शिवसम्प्रदा	ब्रह्मसम्प्रदा	सनकादिक
आचार्य्य	रामानुज	विष्णुस्वामी,	माधवानंद,	निम्बार्कस्वामी
पृथ्वीके खण्ड	एशिया	अफरिका	योरप	अमेरिका

शंकराचार्य्य निर्मित मठ १ गोवर्धन मठ पूर्व जगन्नाथपुरीमें ।। २ शारदा मठ पश्चिम द्वारकामें ।। ३ जोशी मठ उत्तर बद्रिकाश्रममें ।। श्रृंगेरी मठ दक्षिण रामेश्वर ४ ।।

विवेंकियों के जाननेयोग्य ।। १ हेय ।। २ ज्ञेय ३ आप्य ।। ४ पाक्य ।।

कबीरसाहबके ४ नाम ।। सतसुकृत सतयुगमें ९ मुनिन्द्र त्रेतामें । करुणामय द्वापरमें कबीर कलियुगमें ।।

चारगुरु ४ । १ धर्मदास सा. २ चतुर्भुज ३ बकेजी ४ सहतेजी ।

।। पदार्थ पंचविधि ।।

।। हंस देहके तत्व आदिक वर्णन ।।

तत्व सांच धीरता, दया, शील, विचार,

ई पांचो हैं तत्व सो, संगी हंसा केर।
साधु गुरुमत गहन मन, कल्पित सृष्टि हेर ।।
अब प्रकृति पच्चीसको, कहौ सुनहु परसंग।
पांच पांचते पांचई, जेहि बिधि वाढो अंग ।।

प्रकृति (सॉचकी) निर्णयता, निर्विन्दता, प्रकाशता, थीरता, क्षमता ।।

प्रकृति (धैर्य्यकी) मिथ्या त्यागन, सत्यग्रहण, निःसंदेहता, हंता नाशन, अवलता ।।

प्रकृति (दयाकी) अद्रोहता, समता, मैत्री, अभयता, अभेदता ।।

प्रकृति (शीलकी) सहनशीलता (तितिक्षा) प्रियवचन बोलना, बुद्धिकी शांतता, परख प्रत्यक्ष प्रकट सुखमें निर्लेपता, (दुःख सुखमें समबुद्धि रख आनन्दमें रहना,) ।।

प्रकृति विचारकी —अस्ति नास्ति पदका विलगाना, (विवेक) यथार्थ ग्रहण व्यवहार शुद्ध सतोगुणी चाल रखना, परख या टकसार (सर्वका पारख करना तथा विना पारख ग्रहण नहीं करना) ।। वेद

कुरान आदिसे लेकर सर्व महात्माओं विद्वानोंकी वाणीका यथाशक्ति अभ्यास करके बोध प्राप्त करना और उसके आशयको समझना ।।

इहि पांचोंकी पंचधा, भेद प्रकृति पच्चीस ।
हंह देहकी तत्व प्रकृति, बूझो विस्वावीस ।।

अहंकारके पांच मुख—१ प्रथम मुख विश्व, कर्म काण्डका प्रकाशक ।। २ तैजस, योग, काण्डका प्रकाशक ।। ३ प्राज्ञ उपासना कांडका प्रकाशक ४ प्रत्यक्ष आत्मा ज्ञान काण्डका प्रकाशक ।। ५

।। अद्वैत विज्ञानका प्रकाशक ।।

तन्मात्रा	शब्द,	स्पर्श.	रूप:	रस,	गंध.
तत्व	आकाश,	वायु	अग्नि,	जल,	पृथ्वी.
ज्ञान इन्द्री	श्रवण,	त्वचा,	नेत्र,	जिह्वा	नासा.
कर्म इन्द्री	वाक्,	पाणि (हस्त)	पाद पायु,	गुदा.	उपस्थ.
वायु स्थूल	व्यान,	समान,	उदान,	प्राण,	अपान.
वायु सूक्ष्म	धनञ्जय,	किंकरा,	कूर्म,	नाग,	देवदत्त.
वाणी (अवस्था)	शून्य,	परा,	पश्यन्ती,	मध्यमा,	बैखरी.
आकाशकी प्रकृती १	शिराकाश	कंठाकाश,	हृदयाकाश,	उदराकाश	कटचाकाश
सूक्ष्मप्रकृति ,, लोभ	काम	क्रोध	मोह,	भय,	
वायुकी ,, फैलना,	बलकरना,	उठना,	चलना,	संकोचन.	
अग्निकी ,, निद्रा	प्यास,	भूख,	क्रांति,	आलस्य.	
जलकी ,, लार,	स्वेद,	मूत्र,	वीर्य,	रक्त.	
,,	मज्जा,	रक्त,	मूत्र,	मल.	
रक्त	विंदू	कफ,	मेद,	मूत्र.	
,, पृथ्वीकी–रोम,	त्वचा,	नाडी,	मांस,	अस्थि,	
,,	नाडी,	मांस,	त्वचा,	अस्थि,	
शरीर–कैवल्य	महाकारण	कारण	सूक्ष्म	स्थूल,	
कोश–अन्नमय,	प्राणमय,	मनोमय	विज्ञानमय,	आनन्दमय,	
भक्त–आर्त,	जिज्ञासू	अर्थार्थी,	विज्ञान,	निर्वास,	
कर्म–नित्य,	नैमित्तिक,	काम्य,	प्रायश्चित,	निषिद्ध,	
क्लेश–अविद्या,	अस्मिता,	राग,	द्वेष,	अभिनिवेश,	

दृष्टांत ५— (जगतके मिथ्यापने विषय बेदान्तानुसार) ।। १ शुक्तिविषय रजत, २ रज्जुविषय, सर्प ३ स्थाणु विषय पुरुष, ४ गगन विषय नीलता, ५ मरीचिका विषय जल ।।

नियम—शौच, संतोष. तप स्वाध्याय, ईश्वरप्रणिधान ।।

प्रलय—नित्य नैमिक्तिक, दिनप्रलय, महाप्रलय, आत्यंतिकप्रलय,

भेद ५—जीव ईश्वरका भेद, जीव जीवका भेद, जीव जडका भेद, ईश जडका भेद, जड जडका भेद,

भ्रम—भेद भ्रम, कर्तृत्वभ्रम, संग भ्रम, विकार भ्रम, सत्यत्वभ्रम ।

भ्रम निवर्तक दृष्टांत—बिम्बप्रतिम्बि, लोहित स्फटिक्, घटकाश रज्जू सर्प, कनक् कुंडल ।।

महायज्ञ—	देव,	ऋषि,	पितर,	मनुष्य,	भूत,
यम—	अहिंसा,	सत्य,	ब्रह्मचर्य,	अपरिग्रह,	अस्तेय,
योगभूमिका,	क्षेप,	विक्षेप,	मूढ,	एकाग्र,	निरोध,
पांच ब्रह्म.	सोहं,	ररकार,	ओंकार,	अकार,	पराशक्ति
पाण्डव पांच	युधिष्ठिर	भीम,	अर्जुन,	नकुल,	सहदेव
कन्या	अहल्या.	द्रोपदी,	तारा,	कुंती,	मंदोदरी
रामपंचायतन,	राम	जानकी	भरत	लक्ष्मण,	शत्रुहन
पंच मकार (तंत्रशास्त्रके)	मधु,	मांस,	मत्स्य,	मैथुन	मुद्रा

।। पदार्थ षड्विध ।।

आनादि पदार्थ ६ १ जीव २ ईश, ३ शुद्धचैतन, अविद्या, ४ चैतन, और अविद्याके सम्बन्ध, ५ तिनका परस्पर भेद ।।

अरिबर्ग,—काम	क्रोध	(द्वेष)	लोभ,	मोह,	मद	मत्सर,
अवस्था शरीरका—	शिशु,	कौमार,	पौगंड,	किशोर,	युवा,	जरा,
ईश्वरके गुण—	समग्रऐश्वर्य	समग्रधर्म,	समग्रयश	समग्रश्री,	समग्रज्ञान	संमग्रवैराग
ईश्वरके ज्ञान—	उत्पत्ति	प्रलय,	गति	आगति,	विद्या,	अविद्या,
उर्मि धर्म—	जन्म,	मरण,	क्षुधा,	तृषा,	हर्ष,	शोक,
कर्म नित्य—	स्नान,	जप,	होम,	अर्चन,	आतिथ्य,	वैश्वदेव
कौशिक (अन्नमय कोशकेपदार्थ)		वक,	मांस,	रुधिर,	मेद, मज्जा,	अस्ति,
प्रमाण—	प्रत्यक्ष	अनुमान,	उपमान,	शब्द,	अर्थापत्ति,	अनुपलब्धि
भ्रम—	कुल,	गोत्र,	जाति,	वर्ण,	आश्रम,	नाम
रस—	मधुर,	अम्ल,	लवण,	कटु,	कषाय	तिक्त,
लिंग—	उपक्रम	उपसंहार,	अभ्यास,	अपूर्वता, फल,	अर्थवाद,	उपपत्ति
विकार—	जन्म,	अस्तिता,	वृद्धिता	विपरिणामता,	अपक्षीयता,	विनाशना
वेदांत—	शिक्षा,	कल्प,	व्याकरण,	निरुक्त	छंद,	ज्योतिष
षट्संपत्ति—	शम,	दम,	उपरम,	तितिक्षा,	श्रद्धा,	समाधान

शास्त्र—१ सांख्य (कपिलकृत) २ योग पातांजल (पतंजलिकृत) ३ न्याय गौतमकृत) ४ पूर्वमिमांसा (जैमिनिकृत) ५ वैशेषिक (कणाद मुनिकृत) ६ वेदांत वा उत्तर मीमांसा (व्यास वा बादरायणकृत) ।।

स्वभाव प्राणीका—छाजन, भोजन, मैथुन, भय, निद्रा, मोह ।।

चक्र ६ आचारचक्र चार दल कमल, १ स्वाधिष्ठान चक्र छः दल कमल,
३ मणिपूरक चक्र १० दलकमल ४ अनाहतचक्र १२ दल, ५ बिशुद्धाख्य चक्र १६ दल, अज्ञाख्य पद्म अज्ञाख्यके २ दल ।।

दर्शनभेष—योगी,	जंगम,	सेवडा,	संन्यासी,	दर्वेश	ब्राह्मण ।।
जैनियोंके—द्रव्य	जीव,	बुद्धि,	आकाश,	कालस्वर्ग,	मोक्ष ।।
तंत्र क्रिया—मारण,	मोहन,	वशीकरण,	उच्चाटन,	स्तम्भन,	तारण ।।

न्यायोक्त जीव के छः विशेष गुण—१ बुद्धि, २ सुख, ३ दुख, ४ इच्छा, ५ द्वेष, ६ प्रयत्न

॥ सप्त विधि ॥

ऋषी— वशिष्ठ अत्रि, कश्यप, विश्वामित्र, भरद्वाज, जमदग्नि, गौतम

आवरण— जल, पवन, अग्नि आकाश अहंकार, महत्तत्व प्रकृति

ज्ञानभूमिका- शुभइच्छा, सुविचारण तनुमानसा, सत्वापत्ति, असंशक्ति, पदार्थभावनी, तुर्या

अज्ञानभू०—अशुचि जाग्रत, महाजाग्रत, जाग्रत स्वप्न, स्वप्न जाग्रत, स्वप्न, सुषप्ति,

बीज— ओं, श्रीं, रं, सौं, रौं, ह्रीं, क्लीं, ॥

अ, इ, उ, ए, व, म, ह,

कर्मादि ६—कर्म, उपासना, योग ज्ञान उत्पत्ति नाश

कर्म—यजन, याजन, अध्ययन अध्यापन, दान, प्रतिग्रह, मैथुन

उपास्य—शिव, विष्णु गणपति सूर्य्य शक्ति राम, कृष्ण ॥

योगप्रकार ॥ हठ, कुंडली, लाम्बका, तारक लय, अमनस्क, सांख्य ॥

उत्पत्ति—शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध, इच्छा, बासना ॥

स्थिति—अन्न पानी, घास, मिट्टी, पत्ती, फूल, फल ॥

लय (नाश)—पृथ्वी, वायू, जल, अग्नि, हाथ, पग, दांत ॥

दिनसात—शनिवार, रविवार, चंद्रवार, मंगलवार, बुधवार, गुरुवार, शुक्रवार, ॥

ऊपरके लोक—भुर, भुवर, स्वर, महर, जन, तप, सत्य ॥

नीचेके—अतल, वितल, सुतल, तलातल, रसातल, महातल, पाताल ॥

धातु—रस, रुधिर, मांस, मेद, मज्जा, अस्थि, रेत ॥

रूपरंग—शुक्ल, कृष्ण, पीत, रक्त, हरित, कपिल, चित्र ॥

॥ अष्ट विधि ॥

योगके अंग—यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि ।

सिद्धि—अणिमा, महिमा, लघिमा, गिरिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशित्व, वशित्व ॥

पाश—दया, शंका भय, लज्जा, निंदा, कुल, शील, धन, ॥

प्रकृति— पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, मन, वुद्धि, ॥

मैथुन-श्रवण, स्मरण, कीर्तन, चिंतन, एकांतवात करना, संकल्प दृढ, प्रयत्न, तन, प्राप्ति, ॥

मद— कुल, धन, रूप, प्यौवन, विद्या, तप, राज्य ॥

॥ नव विधि ॥

लिङ्ग शरीरके तत्व—श्रोत्र, त्वचा, चक्षु, जिह्वा, घ्राण, मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार ॥

ग्रह—सूर्य्य, चंद्र, बुध, अंगारक इत्यादि ॥

भक्ति—श्रवण, कीर्तन, स्मरण, चरणसेवन, अर्चन, वंदन, दास्य, सख्य, आत्मनिवेदन ॥

नवगुण ब्राह्मणके—धृति, क्षमा दम, अस्तेय, शौच, इद्रियनिग्रह, ज्ञान, विद्या, सत्य ॥

॥ दशविधि ॥

औतार मुख—१ १ मत्स्य, ३ कूर्म, ३ वराह, ४ नरसिंह, ५ वामन, ६ परशुराम, ७ राम, ८ कृष्ण, ९ बौद्ध, १० कलंकी ।

नाडिका और देवता-महाविद्यादश- १ काली, २ दुर्गा, ३ भुवना, ४ बगला, ५ मातंगी, ६ धूमा, ७ तारा
८ छिमस्ता, ९ त्रिपुरा, १० कमला, १ इडा (चंद्र) देवता हरि ।,
२ पिंगला (सूर्य), देवता ब्रह्मा ।। ३ सुषुमन मध्यमा, रुद, ।।
४ गांधारी, दक्षिण नेत्र, इन्द्र ।। ५ हस्त जिह्वा बाम नेत्र-वरुण ।।
६ पुष्प दक्षिण कर्ण ईश्वर ।। ७ यशस्विनी बामकर्ण—ब्रह्मा ।।
८ कुंहूं गुदा—पृथ्वी ९ अलम्बुषा मेढ्र सूर्य १० शंखिनी नाभी-चंद्र ।।

रस (कविताके) श्रृंगार, वीर, करुण, अद्‌भुत, हास्य, भयानक, बीभत्स, रौद्र शांति प्रेमभक्ती वा ज्ञान ।

।। एकादश विधि ।।

रुद्र —१० प्राण ग्यारहवां मन ।।

ज्ञान साधन— विवेक, वैराग, षट्सम्पति मुमुक्षता, गुरुसंपति, श्रवण, तत्वज्ञानाभ्यास मनन, निदि-ध्यासन, मनोनाश, वासना क्षय ।।

।। द्वादशविधि ।।

मास — चैत्र, वैशाखसे फालगुन तक ।।

आभारण ।। नुपूर, चूडी, हार, कंकण, अंगूठी, बाजूबंद वेसर बिरिया, टीका, शिशफूल, तागडी, (करधनी) कण्ठश्री ।।

द्वादश महावाक्य — तत त्वम, आदि ।।

तिलक १२ ।

ऊर्ध्व पुण्ड्र मस्तक, प्रथम, ब्रह्म रंध्र पुनि जोय ।
त्रितिय नेत्र दोउ कण्ठपुनि, उरनाभी फिर होय ।। १५ ।।
उर दोहु दिशि भुज दोऊ पुनि, तथा पृष्ठ प्रमाण ।
बरन वैष्णवके यही, द्वादश तिलक बखान ।। १६ ।।

इजील—बारह ।।

।। चतुर्दशविधि ।।

विद्या— १ ब्रह्मज्ञान, २ रसायन, ३ श्रुति, कथा, ४ वैद्यक, ५ ज्योतिष, ६ व्याकरण, ७ धनुर्विद्या, ८ जलतरना, ९ संगीत, १० नाटक, ११ अश्वारोहण, १२ कोकशास्त्र, १३ चोरी, १४ चतुरता ।।

।। चौदह मासूम मुसलमानी धर्म के ।।

इति संक्षेप गूढार्थ चिंतामणी कोष कवीराश्रमाचार्य्य स्वामी श्रीयुगलानन्द विहारी विरचित

।। समाप्त शुभम् ।।

खेमराज श्रीकृष्णदास

खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन,
बम्बई